परस्परोपग्रहो जीवानाम्

2

सचित्र श्री भगवती सूत्र

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

ILLUSTRATED SHRI BHAGWATI SUTRA

Pravartak Shri Amar Muni

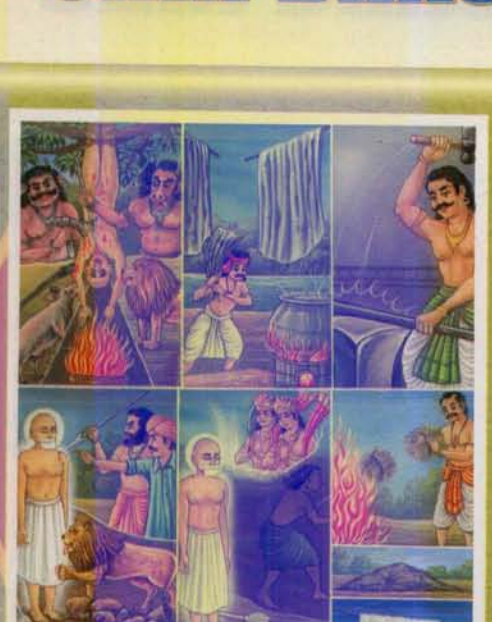

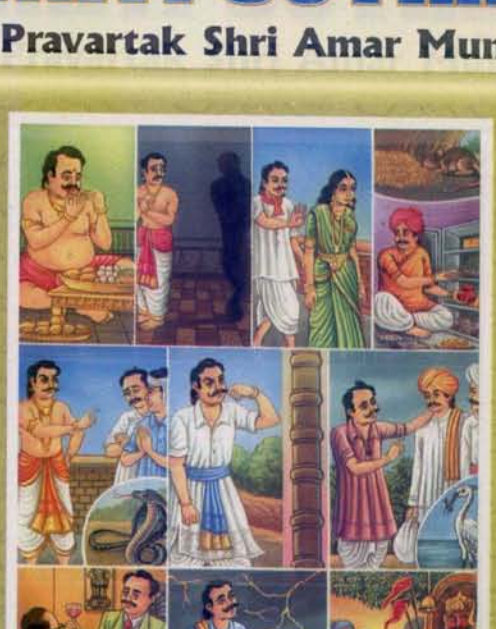

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रस्तुत आगम श्री भगवतीसूत्र

जैन आगमों में सर्वाधिक महत्त्व प्राप्त विशालकाय आगम का नाम है **श्री भगवती सूत्र**। प्रसिद्ध है, कि इसमें जैन तत्त्वविद्या से सम्बन्धित विविध विषयों के ३६ हजार प्रश्नों का भगवान महावीर द्वारा प्रदत्त युक्ति पूर्ण समाधान है। ज्ञान-विज्ञान की अनेक शाखाओं के रहस्य पूर्ण सिद्धान्तों का वर्णन इस आगम में उपलब्ध है।

माना जाता है, विश्वविद्या की ऐसी कोई भी शाखा नहीं होगी, जिसकी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में चर्चा इस आगम में नहीं हो। दर्शन, अध्यात्म-विद्या, पुद्गल व परमाणु सिद्धान्त आदि सैकड़ों महत्त्वपूर्ण विषयों का वर्णन तथा उनका अनेकान्त शैली में समाधान इस आगम के अनुशीलन से प्राप्त हो जाता है।

आगमों के गम्भीर अध्येता प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी ने टीका व अन्य अनेक ग्रन्थों के आधार पर इस आगम के गम्भीर विषयों का अपनी सरल सारपूर्ण शैली में विवेचन प्रस्तुत कर 'सागर' को 'गागर' में भरने का प्रयत्न किया है।

इस आगम का प्रकाशन लगभग ६ भाग में सम्पन्न होने की सम्भावना है। प्रथम भाग प्रकाशित हो चुका है। जिसमें प्रथम शतक से चतुर्थ शतक तक लिया गया है। इस द्वितीय भाग में पंचम शतक से सातवें शतक तक सम्पूर्ण तथा आठवें शतक का प्रथम उद्देशक लिया गया है।

This Agam Bhagavati Sutra

The most important and voluminous among the Jain Agams is **Shri Bhagavati Sutra**. It is well known that this work contains logical answers given by Bhagavan Mahavir to 36,000 questions on a variety of ontological topics. This Agam contains discussions about many important and obsours principles from many branches of knowledge and special studies.

It is believed that there is no branch of universal knowledge that has not been discussed directly or indirectly in this Agam. Information about numberous subjects including philosphy, spiritualism, matter and particle theory can be acquired by studying this Agam.

Pravartak Shri Amar Muni ji, a profound scholar of Agams, has tried to condense a sea in a drop by presenting the complex topics of this Agam in a simple and lucid style with the help of commentaries and many other reference works.

This voluminous Agam as expected to be completed in six volumes. This is the second volume. The first volume contains one to four Shataks. The second volume contains five to seven Shataks complete and first Uddeshak of the eighth Shatak.

- भगवान महावीर ने जिन शाश्वत सत्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया, वे आज के वैज्ञानिक युग में सर्वाधिक प्रासंगिक है। जैसे—किसी भी वस्तु को सर्वांग दृष्टि से समझने के लिए अनेकान्तदृष्टि और उसका सम्यक् स्वरूप कथन करने के लिए नय-निक्षेप की सापेक्षिक स्याद्वाद वचन-प्रणाली।
- धर्म, अधर्म, जीव, अजीव, पुद्गल-स्वरूप, परमाणु, लेश्या, तप-विधान, गति-सहायक द्रव्य धर्मास्तिकाय, कालचक्र-परिवर्तन का वर्णन, कर्म-सिद्धान्त, वनस्पति में जीव, पर्यावरण, मनोवर्गणा का स्वरूप, विभिन्न जीव योनियाँ आदि विषयों में हो रहे जीव-विज्ञान व भौतिक-विज्ञान सम्बन्धी अधुनातन अनुसंधान इन सबकी सत्यता सिद्ध करते हैं।
- भगवान महावीर के इन शाश्वत सिद्धान्तों को उन्हीं की भाषा व प्रतिपादन शैली में पढ़ने-समझने के लिए सचित्र **भगवतीसूत्र**, मूल अर्धमागधी, हिन्दी तथा अंग्रेजी अनुवाद के साथ आपके हाथों में प्रस्तुत है।

- The eternal and true principles Bhagavan Mahavir propagated are completely relevant in the modern scientific world. One example is the non-absolutistic viewpoint (Anekantavaad) to fully understand a thing and the relative methodology of Syadvad using naya and nikshep (standpoint and attribution) to realistically describe a thing.
- Virtue, vice, soul, non-soul, matter and its form, ultimate particle, soul complexion, codes of austerity, entity of motion, time-cycle and its changes, theory of karma, life in plants, environment, classification of mind and its activities, different genuses of life are being confirmed and authenticated by the latest researches in biology and physics.
- We place in your hands Illustrated **Bhagavati Sutra** (original Ardhamagadhi text with Hindi and English translations, elaboration and multicolored illustrations) to enable you to read and understand these eternal principles of Bhagavan Mahavir in his own language and style.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सचित्र श्री भगवती सूत्र

भाग-२

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

ILLUSTRATED SHRI BHAGWATI SUTRA

PART-2

Pravartak Shri Amar Muni

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सादर भेंट

सप्रेम भेंट

जय आत्म

जय पद्म

जय अमर

जैनागम रत्नाकर आचार्य सम्राट पू. श्री आत्मा राम जी म. एवं राष्ट्र सन्त उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्म चन्द्र जी म. की पुण्य स्मृति में शासन शिरोमणि साहित्य सम्राट जैन धर्म दिवाकर प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. द्वारा संपादित एवं पद्म प्रकाशन द्वारा विश्व में प्रथम बार प्रकाशित (सचित्र, मूल, हिन्दी, इंगलिश अनुवाद सहित) जैनागमों का सैट सादर सप्रेम भेंट ।

-: भेंट कर्ता :-

पद्म प्रकाशन

कार्यालय :- पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली - 110040 (भारत)

संपर्क सूत्र :- श्री शिव कुमार जैन (मंत्री) मोबः 098101-64071, 011-22783740

Website : www.jainvision.com E-mail : padamparkashan@gmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम गणधर भगवत् सुधर्मा-स्वामी प्रणीत पंचम अंग

सचित्र
श्री भगवती सूत्र (व्याख्याप्रज्ञप्ति)
(द्वितीय खण्ड)

मूल पाठ, हिन्दी-अंग्रेजी भावानुवाद, विवेचन तथा रंगीन चित्रों सहित

❖ प्रधान सम्पादक ❖

जैनधर्म दिवाकर अध्यात्म युगपुरुष

प्रवर्तक श्री अमर मुनि जी महाराज

❖ सह-सम्पादक ❖

श्रीचन्द सुराना 'सरस'

पद्म प्रकाशन

पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. सा. द्वारा सम्प्रेरित सचित्र आगममाला का उन्नीसवाँ पुष्प

- सचित्र श्री भगवती सूत्र (व्याख्याप्रज्ञप्ति)
  [द्वितीय खण्ड]

- *प्रधान सम्पादक*
  जैनधर्म दिवाकर अध्यात्म युगपुरुष
  प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी महाराज

- *सह-सम्पादक*
  श्रीचन्द सुराना 'सरस'

- *अंग्रेजी अनुवादक*
  सुरेन्द्र बोथरा, जयपुर

- *प्रथमावृत्ति*
  वि. सं. २०६३, चैत्र
  ईस्वी सन् २००६, अप्रैल

- *चित्रांकन*
  डॉ. त्रिलोक शर्मा

- *प्रकाशक एवं प्राप्ति-स्थान*
  पद्म प्रकाशन
  पद्म धाम, नरेला मण्डी, दिल्ली-११० ०४०

- *मुद्रक एवं वितरक*
  संजय सुराना
  श्री दिवाकर प्रकाशन
  ए-७, अवागढ़ हाउस, एम. जी. रोड, आगरा-२८२ ००२
  दूरभाष : (०५६२) २८५११६५

- *मूल्य*
  छह सौ रुपया मात्र (६००/- रुपये)

© *सर्वाधिकार* : पद्म प्रकाशन, दिल्ली

Website : /http/jainvision.com
eMail : padamprakashan@gmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

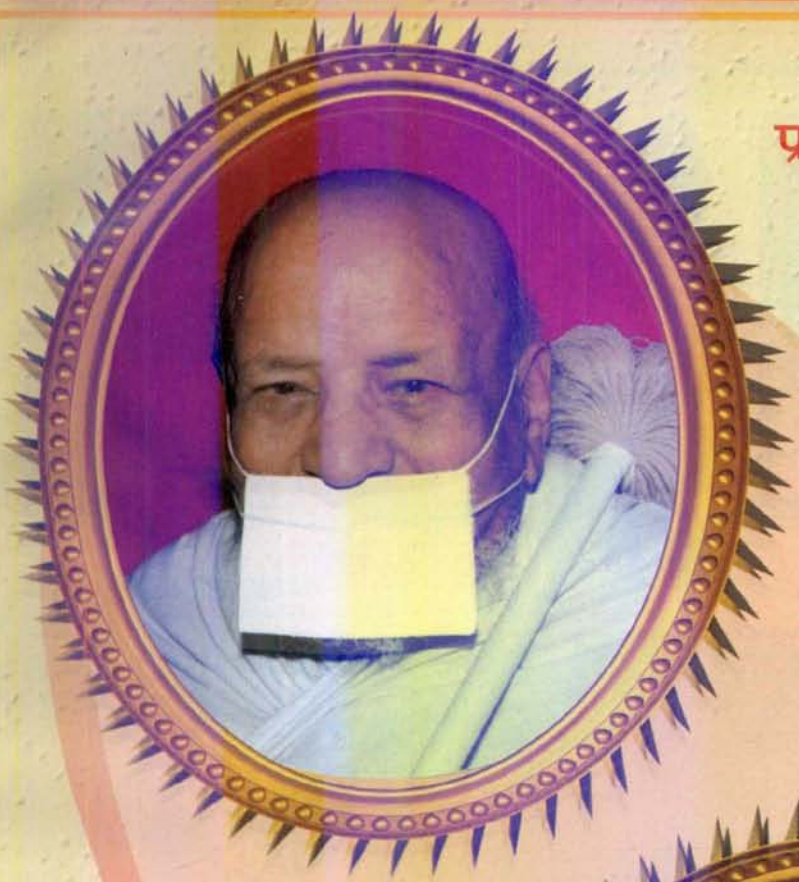

राष्ट्रसन्त, उत्तर भारतीय
प्रवर्त्तक अनन्त उपकारी
पूज्य गुरुदेव
भण्डारी
श्री पद्मचन्द्र जी
महाराज
की
पुण्य स्मृति में
सादर सविनय भेंट

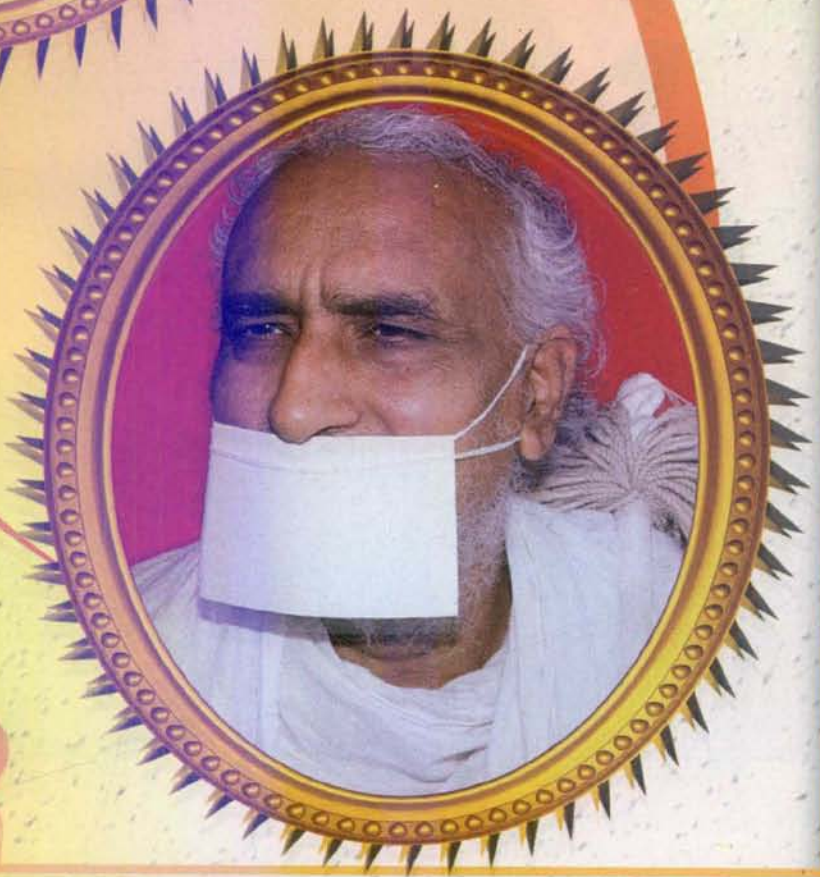

अमर मुनि
(प्रवर्त्तक)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुत सेवा में सहयोग दाता

ला. किशोरचन्द जी जैन
मानसा

ला. पन्नालाल जी जैन
मानसा

ला. फकीरचन्द जी जैन
मानसा

डॉ. श्री के. आर. सिंगला
मानसा

श्री अरविंद सिंगला
मानसा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुत सेवा में सहयोग दाता

श्रीमती सुमित्रा देवी जैन
सोनीपत

ला. शामलालजी जैन
शास्त्री नगर, दिल्ली

श्री अभयकुमार जी रेणु जैन
दिल्ली

श्री ज्ञातनंदनजी अंगूरीदेवी जैन
रोहिणी, दिल्ली

श्री कृष्ण लालजी रामप्यारी मित्तल
पदमपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुत सेवा में सहयोग दाता

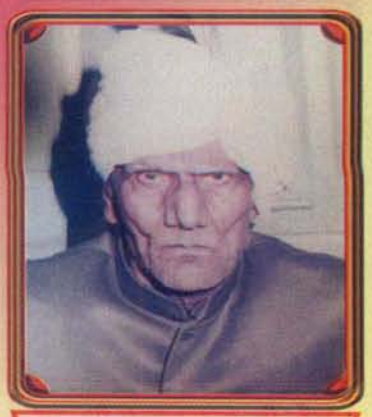

ला. श्री कबूलचन्द जी जैन
पद्मपुर

ला. श्री बाबूराम जैन
(पूर्व प्रधान जैन सभा) गिदड़बाहा

डॉ. श्री मौजीराम जी जैन, श्रीमती पुष्पा जैन
सैनिक फार्म, दिल्ली

श्री बाबर जैन (भट्टे वाले)
मानसा

श्री राजपाल जैन
सोनीपत

श्री दिवानचंद जैन
दीपक मैडीकोज, गिदड़बाहा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

THE FIFTH ANGA WRITTEN BY THE FIFTH GANADHAR SHRI SUDHARMA SWAMI

ILLUSTRATED

SHRI BHAGAVATI SUTRA
(VYAKHYA PRAJNAPTI)

(SECOND VOLUME)

Original Text with Hindi and English Translations, Elaboration and Multicoloured Illustrations

❖ EDITOR-IN-CHIEF ❖

Jain Dharma Diwakar Adhyatma Yugapurush
Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj

❖ ASSOCIATE-EDITOR ❖

Srichand Surana 'Saras'

PADMA PRAKASHAN
PADMA DHAM, NARELA MANDI, DELHI-110 040

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

THE NINETEENTH NUMBER OF THE ILLUSTRATED AGAM SERIES INSPIRED BY UTTAR BHARATIYA PRAVARTAK GURUDEV BHANDARI SHRI PADMACHANDRA JI M. S.

- ILLUSTRATED SHRI BHAGAVATI SUTRA (VYAKHYA PRAJNAPTI) [Second Volume]

- *Editor-in-Chief*
  Jain Dharma Diwakar Adhyatma Yugapurush
  Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj

- *Associate-Editor*
  Srichand Surana 'Saras'

- *English Translator*
  Surendra Bothara, Jaipur

- *First Edition*
  Chetra, 2063 V.
  April, 2006 A.D.

- *Illustrator*
  Dr. Trilok Sharma

- *Publisher and Distributor*
  Padma Prakashan
  Padma Dham, Narela Mandi, Delhi-110 040

- *Printer's & Distributor*
  Sanjay Surana
  Shree Diwakar Prakashan
  A-7, Awagarh House, M.G. Road, Agra-282 002
  Phone : (0562) 2851165

- *Price*
  Six Hundred Rupees only (Rs. 600/-)

© *Copyright* : Padma Prakashan, Delhi
Website : /http/jainvision.com
eMail : padamprakashan@gmail.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

सन् १९९२ में हमने सर्वप्रथम श्री उत्तराध्ययनसूत्र का सचित्र हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद के साथ प्रकाशन किया था। तब हमारा यह प्रथम प्रयास, एक नया प्रयोग था। क्योंकि इसके पहले इस आगम का अंग्रेजी अनुवाद तो प्रकाशित हो चुका था, परन्तु उसके विषयों को स्पष्ट करने वाले भावपूर्ण चित्रों सहित ३२ आगमों में से किसी भी आगम का प्रकाशन नहीं हुआ था। हमारा यह प्रयोग शत-प्रतिशत सफल रहा। जिनवाणी के श्रद्धालु पाठकों ने उसका भरपूर स्वागत किया और इसकी माँग आने लगी। प्रोत्साहित होकर उ. भा. प्रवर्त्तक स्वर्गीय गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. सा. ने अपने विद्वान् शिष्य श्री अमर मुने जी म. को आज्ञा प्रदान की कि आगमों का अंग्रेजी अनुवाद तथा चित्रों सहित प्रकाशन कार्य आप प्रारम्भ करो। अंग्रेजी भाषी जनता में आज भी ज्ञान-पिपासा अधिक है। विदेशी विद्वान् जैनधर्म की मान्यताओं को बड़ी गम्भीरतापूर्वक पढ़ते हैं और उनसे अनेक नये-नये सत्य-तथ्य उद्घाटित करने का प्रयास करते हैं।

अपने पूज्य गुरुदेव का मंगल आशीर्वाद तथा प्रोत्साहन प्राप्त कर हमारे श्रद्धेय श्री अमर मुनि जी म. ने गुरुदेव की भावनाओं को मूर्त रूप देने का दृढ़ संकल्प किया। इस कार्य में अनेक विकल्प व बाधाएँ भी आईं, परन्तु दृढ़ संकल्प सभी विकल्पों की दीवारें तोड़ता हुआ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता ही चला गया। आज निरन्तर १४ वर्षों के प्रयास में हमने १९ आगमों का सचित्र अंग्रेजी भाषान्तर के साथ प्रकाशन किया है और सर्वत्र इस अभिनव कार्य की प्रशंसा हो रही है। शास्त्र नाम से डरने वाले भी अब शास्त्रों को पढ़ने लगे हैं। अपने घरों की लाइब्रेरी में इसका संग्रह करने लगे हैं। आज 'आगम' के प्रति जिज्ञासा और जन श्रद्धा बढ़ रही है।

आगम प्रकाशन का यह ऐतिहासिक कार्य अब अपने लक्ष्य के निकट पहुँच रहा है। हमें दृढ़ विश्वास है कि हम इसी गति से प्रगति करते हुए शीघ्र ही अपने लक्ष्य को प्राप्त करेंगे।

गत वर्ष श्री भगवती सूत्र का प्रथम भाग (शतक १ से ४) तक प्रकाशित हुआ था। इस द्वितीय भाग में शतक ५, ६, ७ तथा आठवें शतक के प्रथम उद्देशक तक लिए गये हैं। आगे की सामग्री तीसरे से छठे भाग तक में सम्पन्न होने की आशा है।

इस आगम के अनुवाद आदि कार्यों में गुरुदेव के अन्तेवासी शिष्य श्री वरुण मुनि जी पूरी निष्ठा के साथ जुड़े हैं। साथ ही आगम साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' तथा अंग्रेजी अनुवाद करने वाले श्री सुरेन्द्र कुमार जी बोथरा भी पूर्ण मनोयोगपूर्वक जुटे हैं। आगममाला का यह १९वाँ पुष्प पाठकों के हाथों में प्रस्तुत करते हुए हमें प्रसन्नता है।

इसके प्रकाशन में अनेक उदारमना गुरुभक्त सुश्रावकों ने सदा की भाँति अपने श्रद्धा पुष्प समर्पित कर जिनवाणी के प्रति अपना आध्यात्मिक अनुराग तथा गुरु-भक्ति का प्रदर्शन किया है। हम उन सबके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

महेन्द्रकुमार जैन
अध्यक्ष
पद्म प्रकाशन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

PUBLISHER'S NOTE

In the year 1992 we first of all published *Shri Uttaradhyayan Sutra* with Hindi and English translations. At that time it was our first effort and a new experiment. This is because till then only simple English translations had been published. Not a single out of the 32 *Agams* was published alongwith multi-coloured illustrations vividly explaining the discussed topics. Our experiment has been absolutely successful. It received heartiest welcome from the readers of the Word of the Jina and the demand increased. Encouraged by this, late Gurudev Uttar Bharatiya Pravartak Bhandari Shri Padma Chandra ji M. accorded permission to his able and scholarly disciple Shri Amar Muni ji M. to launch the project of publication of *Agams* with English translation and illustrations. The English readers have a greater thirst for ancient wisdom. Even foreign scholars study Jain beliefs with great interest and seriousness. They also endeavour to explore new interpretations in order to reveal hitherto unknown facts.

With the pious blessings and encouragement from his revered Guru Dev, revered Shri Amar Muni ji M. resolved to translate the ideas of Guru Dev into action. There were many problems and hurdles on this path but the resolve never diminished and, shattering all hurdles, the work progressed as planned. With unrelenting efforts of 14 years we have till date published 19 *Agams* with English translation and illustrations. This path-breaking work is being praised and commended all around. Those who were afraid to mention even the name of scriptures, not only have started reading them but also collecting them in their personal libraries. The reverence and curiosity for *Agams* is on the increase among masses.

This historical project of Agam publication is nearer its goal now. We are confident that progressing with the same zeal and speed we will soon reach our goal.

Last year we had published the first volume of *Shri Bhagavati Sutra* (Shatak 1 to 4). This second volume contains Shatak 5, 6, 7 complete and one Uddeshak of Shatak 8. Remaining portion of this voluminous Agam is expected to be completed in four more volumes (3 to 6).

Pujya Gurudev's able disciple Shri Varun Muni shares the responsibility of editing the *Agams* with all sincerity and devotion. We are getting sincere assistance of contributing scholars and experts of *Agam* literature like Shri Shrichand ji Surana 'Saras', who has been responsible for Prakrit and Hindi portion and Shri Surendra Kumar ji Bothara, who has been responsible for English portion. We are pleased to place this 19th number of *Illustrated Agam* series in the hands of our readers.

Many generous and devout guru-devotees from different areas have displayed their devotion for the Guru and scriptures through their generous contributions. We express our sincere gratitude for them all.

—Mahendra Kumar Jain
PRESIDENT
Padma Prakashan

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राग्वक्तव्य

जैन आगमों की स्वर्ण-मंजूषा का अमूल्य रत्न है **श्री भगवती सूत्र**। यह आकार की दृष्टि से सबसे बड़ा आगम है। साथ ही विषयों की विविधता और रोचकता में भी यह सबसे विशाल ज्ञान का सागर है। ज्ञान-विज्ञान की विविध शाखाओं का जितना सुन्दर तथा समुचित वर्णन इस आगम में है, वह सबसे महत्त्वपूर्ण है।

भगवती सूत्र के सम्बन्ध में प्रथम भाग की प्रस्तावना में मैंने विस्तारपूर्वक लिखा है। अतः यहाँ उसकी पुनरुक्ति करने की आवश्यकता नहीं है।

प्रस्तुत भाग में हमने पंचम शतक से आठवें शतक के प्रथम उद्देशक तक लिए हैं।

पाँचवें शतक के प्रारम्भ में ही सूर्य के उदय, अस्त, भ्रमण आदि की चर्चा है। आधुनिक विज्ञान की मान्यता के अनुसार यह विषय विवादास्पद हो सकता है, किन्तु भारतीय ज्योतिषशास्त्र और धर्मशास्त्र सभी सूर्य को अन्तरिक्ष में परिभ्रमण करते हुए मानते हैं और उनके गणित के अनुसार भी सूर्य का उदय-अस्त, ग्रहण आदि सब घटनाएँ बराबर यथासमय घटित हो रही हैं। इस कारण यह नहीं कहा जा सकता, कि वे मान्यताएँ गलत हैं। फिर भी इस विषय में विवादास्पद चर्चा छोड़कर हमने आगमिक मान्यता प्रस्तुत की है। इस शतक के अन्य अनेक विषय भी तत्त्वज्ञान, जीवविज्ञान, शब्द की शक्ति आदि की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। सातवें उद्देशक में परमाणु तथा स्कन्ध की चर्चा वर्तमान के परमाणु-विज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त मौलिक तथा ज्ञानवर्धक है। २५०० वर्ष पूर्व भगवान महावीर ने अपने प्रत्यक्ष दर्शन के आधार पर जिस परमाणु सम्बन्धी तत्त्वदर्शन का कथन किया था, वह आज के परिप्रेक्ष्य में अनेक ज्ञानवर्धक रोचक तथ्य प्रस्तुत करता है जो आधुनिक विज्ञान के समृद्ध कर सकते हैं।

छठा शतक तत्त्वज्ञान और कर्मविज्ञान की दृष्टि से विशेष पठनीय है। महावेदना, महानिर्जरा का प्रकरण आध्यात्मिक दृष्टि से विशेष मार्गदर्शक है। वेदना और कष्ट के समय यदि समभाव, तितिक्षा धारण की जाती है तो तीव्र वेदना की पीड़ानुभूति भी उतनी कष्टदायी नहीं होती और कर्मनिर्जरा की दृष्टि से वह विशेष लाभप्रद सिद्ध होती है। समता का यह दर्शन जीवन में आने वाले कष्टों की पीड़ानुभूति कम करके सहन करने की शक्ति जगाता है। स्वाध्याय के समय यह उद्देशक और तितिक्षा विशेष रूप से मनन करने योग्य है।

छठे शतक के पंचम उद्देशक में तमस्काय का वर्णन आज के विज्ञान द्वारा खोजे गये ब्लैक होल के साथ तुलना करने पर अनेक बातों की आश्चर्यजनक समानता प्रतीत होती है। तमस्काय का यह वर्णन प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में एकमात्र जैन आगमों में ही उपलब्ध होता है। ब्लैक होल के वर्णन के साथ इसकी तुलना, इस वर्णन की यथार्थता पर प्रकाश डालती है।

सातवें शतक में भी अनेक व्यावहारिक विषयों का बड़ा विशद वर्णन है। श्रमणों को आहारदान का लाभ, प्रत्याख्यान आदि में ज्ञान व अन्तर विवेक की प्रधानता, साता वेदनीय-असाता वेदनीय कर्मबंध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के कारण आदि विषय जीवन-दृष्टि को और जीवन-व्यवहार को उदात्त व निर्मल संवेदना-प्रधान करुणाशील बनाने की प्रेरणा प्रदान करता है।

आठवें शतक के प्रथम उद्देशक में पुद्गल के तीन प्रकार, उनका परिणमन आदि की चर्चा आध्यात्मिक दृष्टि में वैज्ञानिक दृष्टि का संपुट लिए हुए है।

अपने पाठकों को एक बात विशेष रूप में कहना चाहता हूँ कि आगमों को एकमात्र जिनवाणी के प्रति श्रद्धा की दृष्टि से न पढ़ें, परन्तु श्रद्धा के साथ ज्ञान-पिपासा व जीवन शोधन की दृष्टि भी रखें, तो स्वाध्याय का विशेष लाभ होगा।

सूत्र पाठ के भाषानुवाद के साथ जहाँ-जहाँ आवश्यकता हुई, वहाँ संक्षिप्त विवेचन भी हमने किया है। चूँकि बहुत से विषय बिना विवेचन किये पाठकों को समझ पाना बहुत कठिन होता। आगमकार ने अनेक स्थानों पर प्रज्ञापनासूत्र का सन्दर्भ देखने की सूचना देकर विषय को बहुत ही संक्षिप्त किया है। हमने प्रज्ञापनासूत्र का वह अंश सार रूप में यहाँ प्रस्तुत कर दिया है, ताकि पाठक को प्रज्ञापनासूत्र देखे बिना ही पूरा विषय समझने में सुविधा रहेगी।

इसके विवेचन में मेरे द्वारा पूर्व में किये गये भगवती सूत्र के विवेचन का काफी अंश लिया है, साथ ही पण्डित घेवरचन्द जी शास्त्री का हिन्दी विवेचन भी बहुत उपयोगी बना है। आचार्य महाप्रज्ञ जी द्वारा किया गया विवेचन भी हमने सामने रखकर यथावश्यक उसका उपयोग किया है। अतः उक्त सम्पादकों तथा प्रकाशकों के प्रति हार्दिक धन्यवाद ज्ञापन हमारा कर्त्तव्य होता है।

इस आगम का अनुवाद कार्य सम्पन्न होने के पश्चात् एक पृथक् भाग में पारिभाषिक शब्द-कोश परिशिष्ट रूप में प्रस्तुत करने का भी हम प्रयत्न कर रहे हैं।

इसके सम्पादन में सदा की तरह मेरे शिष्य श्री वरुण मुनि, श्रीचन्द जी सुराना 'सरस' तथा श्री सुरेन्द्र जी बोथरा ने पूर्ण सहयोग दिया है। इसी प्रकार प्रकाशन में भी जिन गुरुभक्तों ने अर्थ-सहयोग प्रदान किया है, उन सबके प्रति मैं हार्दिक धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

मेरे परम श्रद्धेय गुरुदेव उ. भा. प्रवर्त्तक, राष्ट्रसन्त भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. का आशीर्वाद पद-पद पर मेरा सम्बल रहा है। मैं उन परम उपकारी गुरुदेव के प्रति विनयावनत् हूँ।

आशा और विश्वास है अंग्रेजी अनुवाद के साथ सचित्र भगवती सूत्र अनेक दृष्टियों से नवीनता लिए सबके लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

जैन स्थानक,
मानसा

-प्रवर्त्तक अमर मुनि
(प्रवर्त्तक)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

PREFACE

Shri Bhagavati Sutra is the most precious gem in the golden casket of Jain *Agams*. It is the most voluminous among the available *Agams*. With its great variety of subjects and interesting narration, it is the largest ocean of knowledge. The complete and vivid discussions of various branches of general and specialized knowledge available in this *Agam* enhances its value and importance.

I have already written in details about *Bhagavati Sutra* in the preface to the first Volume, therefore, there is no need to repeat it here.

This volume starts with fifth *Shatak* and ends at the first *Uddeshak* of the eighth *Shatak*.

The fifth *Shatak* starts with the discussion about sunrise, sunset and the movement of the sun. This is one of the disputed topics according to modern science. But Indian astrology and religions accept the movement of the sun in the space. All events including sunset, sunrise, and eclipse occur exactly as predicted by calculations on this basis. Thus these beliefs cannot just be discarded as false. However, we have avoided any discussion on the disputes and presented the beliefs as mentioned in *Agams*. Many other topics in this *Shatak* are valuable in context of the contained original ideas and information on metaphysics, biology and acoustics. The edifying discussion on ultimate particles and their clusters provides new and important information related to modern particle physics. The information Bhagavan Mahavir revealed about ultimate particles with the help of his direct perception reveals interesting facts that may enrich the world of science.

The sixth *Shatak* is specially important for ontological discussions and for the *karma* theory. The topic of extensive suffering and extensive shedding of *karmas* is inspiring and revealing from the spiritual viewpoint. If tolerance and equanimity is attained while suffering pain and affliction, even extreme agony becomes tolerable and highly rewarding in terms of shedding of *karmas*. This philosophy of equanimity reduces the intensity of suffering torments and enhances the capacity to tolerate. While indulging in self study this chapter and the subject of tolerance dealt in it call for special attention.

The description of *Tamaskaaya* in the first *Uddeshak* of the sixth *Shatak* has surprising similarities with the black hole described in modern astronomy. In the ancient Indian literature this description of *Tamaskaaya* is unique to Jain scriptures. Comparison with black holes adds to the genuineness of this description.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The seventh *Shatak* also contains detailed discussions on numerous practical themes. Benefits of offering food to ascetics, importance of knowledge and sagacity in the act of renouncing, causes of bondage of pleasure and pain giving *karmas* and other such topics inspire one to acquire a generous, sensitive and compassionate view and way of life.

Three types of matter particles and their transformations are included in the discussions narrated in the first *Uddeshak* of the eighth *Shatak*. They add scientific angle to the spiritual inquiries.

I would like to convey an important message to the readers–Do not just read *Agams* simply because you have faith and belief in the Word of the Jina. Your study would be highly beneficial if you have the thirst for knowledge and the desire to cleanse your life.

With the literal translation of the original text we have added brief elaboration wherever needed. This is with the view that many topics are hard to understand for common readers. The author of the *Agam* has referred to *Prajnapana Sutra* for the sake of brevity. We have included the gist of those references from *Prajnapana Sutra*. This would facilitate the reader to understand the subject without turning pages of *Prajnapana Sutra*.

Large portions from my earlier commentary on *Bhagavati Sutra* have been taken in elaborations of this edition. The Hindi commentary by Pandit Ghevar Chand Shastri was also found to be very useful. Wherever needed, we have also referred to and used the detailed commentary by Acharya Mahaprajna. It is my duty to express gratitude for editors and publishers of the said works.

We are also trying to include a glossary of important technical terms as appendix in an additional volume after the main volumes are done.

As always, scholarly editors like Shri Shrichand Surana 'Saras', Shri Surendra Bothara have extended their fullest co-operation. Like before, many generous devotees have extended financial contributions to this pious project. They all deserve thanks and commendations.

The blessings of my revered teacher Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M. S. have provided me support at every step. I bow with all humbleness at my command to that great benefactor.

I hope that with English translation and a variety of new approaches, this volume of *Illustrated Bhagavati Sutra* will prove to be useful for all.

Jain Sthanak,
Mansa

—Pravartak Amar Muni
(Pravartak)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुक्रमणिका

पंचम शतक : प्रथम उद्देशक : रवि	३–२३
पंचम शतक की संग्रहणी गाथा	३
जम्बूद्वीप में सूर्यों का उदय-अस्त	५
जम्बूद्वीप में दिवस और रात्रि का कालमान	८
वर्षा ऋतु का प्रथम समय	१३
हेमन्त आदि ऋतुएँ और अयनादि	१५
सूर्य के उदय-अस्त तथा दिवस-रात्रि का विचार	१९

पंचम शतक : द्वितीय उद्देशक : अनिल	२४–३४
स्निग्ध पथ्यादि वायु	२४
वायु का स्वरूप	२७
ओदन आदि के शरीर	३०
लोह आदि के शरीर	३१
अस्थि आदि के शरीर	३२
लवणसमुद्र की स्थिति	३३

पंचम शतक : तृतीय उद्देशक : ग्रन्थिका	३५–४१
आयुबन्ध विषयक अन्यतीर्थिकों की मान्यताएँ	३५
आयुष्य सहित गति विचार	३८

पंचम शतक : चतुर्थ उद्देशक : शब्द	४२–७३
शब्द-श्रवण की सीमा	४२
छद्मस्थ व केवली का हँसना व निद्रा लेना	४५
हरिनैगमेषी की गर्भ-संहरण क्षमता	४९
गर्भ-संहरण का तरीका	५०
अतिमुक्तक मुनि	५१
दो देवों के मनोगत प्रश्न	५४
देवों को 'नो-संयत' कहना	५८
देवों की भाषा : अर्ध-मागधी	६०
छद्मस्थ और केवली का ज्ञान	६१
केवली के प्रकृष्ट मन, वचन को जानने-देखने में समर्थ वैमानिक देव	६४
अनुत्तरौपपातिक देवों की मनःशक्ति	६६
केवली इन्द्रियों से नहीं जानते-देखते	६९
केवली भगवान का अस्थिर काययोग	७०
चतुर्दश पूर्वधारी का लब्धि-सामर्थ्य	७२

पंचम शतक : पंचम उद्देशक : छद्मस्थ	७४–७८
क्या छद्मस्थ सिद्ध हो सकता है ?	७४
एवम्भूत-अनेवम्भूतवेदना	७४
अवसर्पिणी में हुए कुलकर आदि	७७

पंचम शतक : छठा उद्देशक : आयुष्य	७९–९८
अल्पायु और दीर्घायु के कारण	७९
विक्रेता और क्रेता को लगने वाली क्रियाएँ	८१
अग्निकाय : महाकर्म या अल्पकर्म	८६
धनुष चलाने से लगने वाली क्रियाएँ	८७
अन्यतीर्थियों की मिथ्या प्ररूपणा	९२
आधाकर्मादि आहार का फल	९३
आचार्य-उपाध्याय की गति	९६
मिथ्यादोषारोपणकर्ता के दुष्कर्मबन्ध	९७

पंचम शतक : सप्तम उद्देशक : एजन	९९–१३०
परमाणुपुद्गल का कम्पन	९९
परमाणुपुद्गलों में छेदन आदि	१०१
परमाणुपुद्गलादि के विभाग	१०४
परमाणुपुद्गलों की परस्पर स्पर्शना	१०७
परमाणुपुद्गलों की काल स्थिति	११२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विविध पुद्गलों का अन्तरकाल ११५
स्थानायु का अल्प-बहुत्व ११८
नैरयिक आरंभी और परिग्रही १२०
असुरकुमार आरंभी-परिग्रही १२१
बेइन्द्रिय आदि आरंभी-परिग्रही १२२
हेतु-अहेतु १२७

पंचम शतक : अष्टम उद्देशक : निर्ग्रन्थ १३१-१५०

निर्ग्रन्थीपुत्र और नारदपुत्र की चर्चा १३१
जीवों की वृद्धि-हानि १४०
चौबीस दण्डकों की वृद्धि-हानि और कालमान की प्ररूपणा १४१
जीवों में सोपचयादि चार भंग १४६

पंचम शतक : नवम उद्देशक : राजगृह १५१-१६५

राजगृह का स्वरूप १५१
उद्योत और अन्धकार १५२
नैरयिकादि में समय ज्ञान १५६
पार्श्वापत्य स्थविरों द्वारा पंचमहाव्रत धर्म स्वीकार १५९
उपसंहार रूप संग्रह गाथा १६५

पंचम शतक : दशम उद्देशक : चम्पा-चन्द्रमा १६६-१६६

छठा शतक : प्रथम उद्देशक : वेदना १६७-१७८

संग्रहणी गाथा १६७
वेदना एवं निर्जरा के सम्बन्ध में दृष्टान्त १६७
करण की अपेक्षा साता-असाता-वेदन १७३
जीवों में वेदना और निर्जरा १७७
उपसंहार रूप १७८

छठा शतक : द्वितीय उद्देशक : आहार १७९-१८०

आहार के सम्बन्ध में कथन १७९

छठा शतक : तृतीय उद्देशक : महास्रव १८१-२१९

संग्रहणी गाथाएँ १८१
प्रथम द्वार : महाकर्मा और अल्पकर्मा १८१
द्वितीय द्वार : वस्त्र और जीव के पुद्गलोपचय १८५
तृतीय द्वार : कर्मोपचय की सादि-सान्तता १८७
वस्त्र एवं जीवों की सादि-सान्तता १९०
चतुर्थ द्वार : अष्ट कर्मों की बन्धस्थिति १९२
स्त्री द्वार १९६
संयत द्वार १९७
सम्यग्दृष्टि द्वार १९८
संज्ञी द्वार १९९
भवसिद्धिक द्वार २००
दर्शन द्वार २०१
पर्याप्तक द्वार २०६
भाषक द्वार २०७
परित्त द्वार २०७
ज्ञान द्वार २०८
योग द्वार २०९
उपयोग द्वार २१०
आहारक द्वार २१०
सूक्ष्म द्वार २११
चरम द्वार २१२
वेदक जीवों का अल्प-बहुत्व २१७

छठा शतक : चतुर्थ उद्देशक : सप्रदेश २२०-२५०

प्रदेश द्वार : जीव-प्रदेश निरूपण २२०
आहारक द्वार २२३
भव्य द्वार २२६
संज्ञी द्वार २२६
लेश्या द्वार २२८
दृष्टि द्वार २३०
संयत द्वार २३२

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कषाय द्वार २३४
ज्ञान द्वार २३६
योग द्वार २३८
उपयोग द्वार २३९
वेद द्वार २४१
शरीर द्वार २४२
पर्याप्ति द्वार २४४
उपसंहार २४६
जीव और प्रत्याख्यान २४७
प्रत्याख्यान निबद्ध आयु २४८
उपसंहार गाथा २५०

छठा शतक : पंचम उद्देशक : तमस्काय २५१–२७२

तमस्काय क्या, कैसी है ? २५१
आठ कृष्णराजियाँ २६०

छठा शतक : छठा उद्देशक : भव्य २७३–२७९

पृथ्वियाँ और अनुत्तर विमान २७३
मारणान्तिक समुद्घात २७४

छठा शतक : सप्तम उद्देशक : शाली २८०–२९०

धान्यों की योनि–स्थिति २८०
गणनीय काल : मुहूर्त्त का मान २८२
औपमिक काल का स्वरूप २८४
उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी २८७
सुषम–सुषमाकालीन भारतवर्ष के भाव २८९

छठा शतक : अष्टम उद्देशक : पृथ्वी २९१–३०५

रत्नप्रभादि पृथ्वियों के नीचे २९१
देवलोकों के नीचे २९४
जीवों के आयुष्य का बन्ध २९८
असंख्यात द्वीप–समुद्र ३०३
द्वीप–समुद्रों के शुभ नाम ३०४

छठा शतक : नवम उद्देशक : कर्म ३०६–३१४

कर्मबन्ध के प्रकार ३०६
महर्द्धिक देवों की विकुर्वणा ३०७
देवों की जानने–देखने की क्षमता ३११

छठा शतक : दशम उद्देशक : अन्यतीर्थी ३१५–३२३

सुख–दुःख का प्रदर्शन सम्भव नहीं ३१५
जीव और प्राण का स्वरूप ३१७
जीवों की सुख–दुःख धारणा ३२०
नैरयिकादि का आहार ३२१
केवली अनिन्द्रिय होते हैं ३२२
उपसंहार की संग्रहणी गाथा ३२३

सप्तम शतक : प्रथम उद्देशक : आहार ३२४–३४९

उपोद्घात ३२४
अनाहार और सर्वाल्पाहार का काल ३२४
लोक के संस्थान ३२८
श्रमणोपासक की कितनी क्रिया ३२९
श्रमणोपासक का व्रत–प्रत्याख्यान ३३१
श्रमणों को दान देने का लाभ ३३२
कर्मरहित जीव की गति ३३४
दुःख की स्पृष्टता ३३८
अनगार को साम्परायिकी क्रिया ३३९
अंगारादि दोषयुक्त पान-भोजन ३४१
शस्त्रातीत आदि दोष ३४५

सप्तम शतक : द्वितीय उद्देशक : विरति ३५०–३६७

सुप्रत्याख्यानी और दुष्प्रत्याख्यानी ३५०
प्रत्याख्यान के भेद–प्रभेद ३५३
प्रत्याख्यानी–अप्रत्याख्यानी ३५७
संयत तथा प्रत्याख्यानी आदि का अल्प–बहुत्व ३६४
जीवों की शाश्वतता–अशाश्वतता ३६६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : तृतीय उद्देशक : स्थावर ३६८–३८३

वनस्पतिकायिक जीवों का आहारकाल ३६८
वनस्पतियों में अनन्तजीवत्व ३७१
लेश्या की अपेक्षा अल्पकर्म–महाकर्म ३७२
वेदना और निर्जरा ३७५
जीवों की शाश्वतता–अशाश्वतता ३८२

सप्तम शतक : चतुर्थ उद्देशक : जीव ३८४–३८५

षड्विध संसारसमापन्नक जीव ३८४

सप्तम शतक : पंचम उद्देशक : पक्षी ३८६–३८८

खेचर–पंचेन्द्रिय जीवों के भेद ३८६

सप्तम शतक : छठा उद्देशक : आयु ३८९–४०८

आयुष्य का बन्ध और वेदन ३८९
महावेदना–अल्पवेदना ३९१
अनाभोगनिर्वर्तित आयुष्य ३९३
कर्कश–अकर्कश वेदनीय ३९४
साता–असाता वेदनीय कर्म ३९६
भरत में दुःषम–दुःषम काल का प्रभाव ३९९
छठे आरे के मनुष्यों के आहार आदि ४०४

सप्तम शतक : सप्तम उद्देशक : अनगार ४०९–४२३

संवृत्त अनगार और क्रिया ४०९
काम–भोग सम्बन्धी विचारण ४१०
छद्मस्थ एवं केवली ४१७
अकाम वेदना का वेदन ४२०

सप्तम शतक : अष्टम उद्देशक : छद्मस्थ ४२४–४३०

छद्मस्थ सिद्ध नहीं होता ४२४
हाथी और कुंथुए के समान जीव ४२४
चौबीस दण्डकवर्ती जीवों द्वारा कृत पापकर्म दुःखरूप ४२५
संज्ञाओं के दस प्रकार ४२६
नैरयिकों की दस वेदनाएँ ४२८
अप्रत्याख्यानिकी क्रिया ४२८
आधाकर्म का फल ४२९

सप्तम शतक : नवम उद्देशक : असंवृत ४३१–४५२

असंवृत अनगार ४३१
महाशिलाकण्टक संग्राम ४३३
महाशिलाकण्टक संग्राम का स्वरूप ४३९
रथमूसल संग्राम ४४०
शक्र–चमरेन्द्र के सहयोग का हेतु ४४२
क्या युद्ध करते मरने पर स्वर्ग मिलता है? ४४३

सप्तम शतक : दशम उद्देशक : अन्ययूथिक ४५३–४६६

कालोदायी की चर्चा और प्रव्रज्या ४५३
पापकर्म और पुण्यकर्म ४५९
अग्नि को जलाने और बुझाने की क्रिया ४६३
अचित्त पुद्गलों का प्रकाश ४६५

अष्टम शतक : प्रथम उद्देशक : पुद्गल ४६७–५३६

संग्रहणी गाथा ४६७
पुद्गल परिणामों के तीन प्रकार ४६७
नौ दण्डकों द्वारा प्रयोग-परिणत पुद्गलों का निरूपण ४६९
प्रथम दण्डक ४६९
दूसरा दण्डक ४७८
तृतीय दण्डक ४८४

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्थ दण्डक ४८८
पंचम दण्डक ४९०
छठा दण्डक ४९२
सप्तम दण्डक ४९३
अष्टम दण्डक ४९४
नौवाँ दण्डक ४९५
मिश्रपरिणत पुद्गलों के नौ दण्डक ४९६
विस्रसापरिणत पुद्गलों के भेद-प्रभेद ४९७
एक द्रव्य के परिणमन की प्ररूपणा ४९८
कायप्रयोग-परिणत ५०३
दो द्रव्य के संयोग से निष्पन्न भंग ५२२
तीन द्रव्यों सम्बन्धी भंग ५२९
चार आदि द्रव्यों के संयोग से निष्पन्न भंग ५३२
परिणामों का अल्प-बहुत्व ५३५

परिशिष्ट ५३७-५९१

शब्दकोष ५३९
आगमों का अनध्यायकाल ५८०
प्रकाशित आगम सूची ५८५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

CONTENTS

Fifth Shatak (Chapter Five) : First Lesson : The Sun	**3-23**
Collative Verse	3
Rising and Setting of Suns in Jambudveep	5
Periodicity of Day and Night in Jambudveep	8
First Samaya of Monsoon Season	13
Seasons including Winter and Solstices	15
Sunset and Sunrise : Day and Night	19
Fifth Shatak (Chapter Five) : Second Lesson : Wind	**24-34**
Moist and Nourishing Wind	24
Nature of Winds	27
Bodies of Rice etc.	30
Bodies of Iron etc.	31
Bodies of Bones etc.	32
Dimensions of Lavan-Samudra	33
Fifth Shatak (Chapter Five) : Third Lesson : The Knot	**35-41**
Belief of Other Schools about Life-span Bondage	35
Life-span and Rebirth	38
Fifth Shatak (Chapter Five) : Fourth Lesson : Sound	**42-73**
Range of Hearing Sound	42
Sleep and Laughter of Chhadmasth and Kevali	45
Embryo Transplantation Capacity of Harinaigameshi	49
Procedure of Embryo Transfer	50
Ascetic Atimuktak	51
Silent Questions by Two Gods	54
Calling Gods Non-restrained	58
Language of Gods : Ardhamaagadhi	60
Knowledge of Chhadmasth and Kevali	61
Exalted Mind and Expression of Kevali	64
Mental Power of Anuttaraupapatik Gods	66
Kevali does not Know-see with Sense Organs	69
Vibrant Body of Omniscient	70
Special Powers of Chaturdash Purvadhar	72
Fifth Shatak (Chapter Five) : Fifth Lesson : The Unrighteous	**74-78**
Can Chhadmasth be Siddha ?	74
Evambhoot-anevambhoot Pain	74
Kulakars of the Avasarpini	77
Fifth Shatak (Chapter Five) : Sixth Lesson : Life-span	**79-98**
Causes of Short and Long Life-span	79
Involvement in Activities by Seller and Buyer	81
Fire-bodies : Intense and Mild Karmas	86
Activities in Shooting Arrows	87
False Heretic Tenets	92
Fruits of Taking Faulty Food	93
Destiny of Acharya and Upadhyaya	96
Bondage of Accusers	97

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Fifth Shatak (Chapter Five) : Seventh Lesson : Vibration 99-130

Vibration of Paramanu Pudgal 99
Piercing etc. in Ultimate Particles 101
Sections of Particles of Matter 104
Touching of Ultimate Particles of Matter 107
Life-span of Ultimate Particles of Matter 112
Intervening Period of Re-transformation 115
Maximum and Minimum Period of Existence 118
Sinful Activity and Possessiveness of Infernal Beings 120
Sinful Activity and Possessiveness of Asur Kumars 121
Two-sensed and Other Beings 122
Hetu-Ahetu 127

Fifth Shatak (Chapter Five) : Eighth Lesson : Ascetic 131-150

Discussions of Nirgrinthi-putra and Narad-putra 131
Increase and Decrease in Number of Jivas 140
Duration of Increase-decrease in Twenty Four Dandaks 141
Four Divisions including Sopachaya 146

Fifth Shatak (Chapter Five) : Ninth Lesson : Rajagriha 151-165

Description of Rajagriha 151
Light and Darkness 152
Awareness of Time 156
Acceptance of Five Great Vows by Parshvapatya Ascetics 159
Conclusive Collative Verse 165

Fifth Shatak (Chapter Five) : Tenth Lesson : The Moon in Champa 166-166

Sixth Shatak (Chapter Six) : First Lesson : Pain 167-178

Collative Verse 167
Examples of Pain and Shedding 167
Experience in Context of Karan 173
Suffering and Shedding in Jivas 177
Concluding Verse 178

Sixth Shatak (Chapter Six) : Second Lesson : Intake 179-180

Statement About Intake 179

Sixth Shatak (Chapter Six) : Third Lesson : Extensive Influx 181-219

Collative Verses 181
First Port : With More Karmas and with Less Karmas 181
Second Port : Acquisition of Matter by Cloth and Soul 185
Third Port : Acquisition of Karma with Beginning and End 187
Beginning and End of Cloth and Beings 190
Fourth Port : Duration of Bondage of Eight Karmas 192
Fifth Port : Stree (Female) 196
Sixth Port : Samyat (Restrained) 197
Seventh Port : Samyagdrishti (Righteous) 198
Eighth Port : Sanjni (Sentient) 199
Ninth Port : Bhavasiddhik (Worthy of Liberation) 200
Tenth Port : Darshan (Perception) 201
Eleventh Port : Paryaptak (Fully Developed) 206

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Twelfth Port : Bhashak (Capable of Speech) 207
Thirteenth Port : Paritta (Limited) 207
Fourteenth Port : Jnana (Knowledge) 208
Fifteenth Port : Yoga (Association) 209
Sixteenth Port : Upayog (Involvement) 210
Seventeenth Port : Ahaarak (Having Intake) 210
Eighteenth Port : Sukshma (Minute) 211
Nineteenth Port : Charam (Final) 212
Alpabahutva (Minimum-maximum) of Genderic Beings 217

Sixth Shatak (Chapter Six) : Fourth Lesson : With Sections 220-250

Pradesh Dvar (Port of Sections) : Soul-sections 220
Aharak Dvar (Port of Beings with Intake) 223
Bhavya Dvar (Port of the Worthy) 226
Sanjni Dvar (Port of the Sentient) 226
Leshya Dvar (Port of Soul-complexion) 228
Drishti Dvar (Port of Attitude) 230
Samyat Dvar (Port of the Restrained) 232
Kashaaya Dvar (Port of Passions) 234
Jnana Dvar (Port of Knowledge) 236
Yoga Dvar (Port of Association) 238
Upayoga Dvar (Door of Involvement) 239
Veda Dvar (Door of Gender) 241
Sharira Dvar (Port of the Body) 242
Paryapti Dvar (Door of Full Development) 244
Conclusion 246
Being and Renunciation 247
Life-span Determined by Pratyakhyan 248
Concluding Verse 250

Sixth Shatak (Chapter Six) : Fifth Lesson : Body of Darkness 251-272

What is Tamaskaaya ? 251
Eight Krishna-rajis 260

Sixth Shatak (Chapter Six) : Sixth Lesson : Worthy of Liberation 273-279

Hells and Anuttar Vimaan 273
Maranantik Samudghat 274

Sixth Shatak (Chapter Six) : Seventh Lesson : Shaali (Paddy) 280-290

Sprouting of Corn 280
Measurable Time : Muhurt 282
Metaphoric Units Time 284
Utsarpini-avasarpini 287
Bharat Varsh in Sukham-sukhama Ara 289

Sixth Shatak (Chapter Six) : Eighth Lesson : Prithvi (Worlds) 291-305

Below the Worlds 291
Below the Divine Realms 294
Life-span Bondage of Living Beings 298
Innumerable Islands and Seas 303
Names of Islands and Seas 304

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sixth Shatak (Chapter Six) : Ninth Lesson : Karma 306-314

Types of Karmic Bondage 306
Self-mutation by Gods with Great Opulence 307
Capacity of Gods to See and Know 311

Sixth Shatak (Chapter Six) : Tenth Lesson : Anyatirthi (Heretics) 315-323

Display of Pleasure and Pain 315
Soul and Life-force 317
Concept of Happiness and Sorrow 320
Intake of Infernal and Other Beings 321
Omniscient is Without Sense Organs 322
Conclusive Collative Verse 323

Seventh Shatak (Chapter Seven) : First Lesson : Ahaar (Intake) 324-349

Introduction 324
Period of Total and Partial Fasting 324
Structure of Lok 328
Activities of Shramanopasak 329
Abstainment of Shramanopasak 331
Benefits of Donation to Ascetics 332
Movement of a Karma-free Soul 334
Touch of Misery 338
Samparayiki Kriya of an Ascetic 339
Faulty Food 341
Faults including Shastrateet 345

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Second Lesson : Virati (Renunciation) 350-367

Right and Wrong Renunciation 350
Categories and Sub-categories of Renouncing 353
Renouncer and Non-renouncer 357
Comparative Numbers of Restrained and Renouncers 364
Eternality and Non-eternality of Beings 366

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Third Lesson : Sthavar (Immobile Beings) 368-383

Period of Intake by Plant-bodied Beings 368
Clusters of Infinite Souls in Plants 371
Leshya and Karma 372
Suffering and Shedding 375
Eternality and Non-eternality of Jivas 382

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Fourth Lesson : Jiva (Living Beings) 384-385

Six Kinds of Worldly Living Beings 384

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Fifth Lesson : Pakshi (Birds) 386-388

Kinds of Aerial Beings 386

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Sixth Lesson : Ayu (Life-span) 389-408

Bondage and Experiencing of Ayushya 389
Great and Little Pain 391
Life-span Bondage Unavares 393
Harsh and Mild Suffering 394
Pleasure and Pain Causing Vedaniya Karma 396
Epoch of Extreme Sorrow in Bharat 399
Food of the Humans of the Sixth Epoch 404

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Seventh Lesson : Anagaar (Homeless-ascetic) 409-423

Activities of a Samvrit Ascetic 409
Cerebral Experiences and Physical Experiences 410
Chhadmasth and Kevali 417
Involuntary Experience of Pain 420

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Eighth Lesson : Chhadmasth (The Unrighteous) 424-430

Unrighteous cannot be Siddha 424
Soul of Elephant and Insect 424
Sins are Misery 425
Ten Kinds of Inclinations 426
Ten Kinds of Pain of Infernal Beings 428
Activity of Non-renunciation 428
Consequence of Adhaakarma 429

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Ninth Lesson : Asamvrit (The Unrestrained) 431-452

Unrestrained Ascetic 431
Mahashilakantak Battle 433
Details of Mahashilakantak Battle 439
Rathmusal Battle 440
Cause of Help from Shakrendra and Chamarendra 442
Heaven on Death in War ? 443

Seventh Shatak (Chapter Seven) : Tenth Lesson : Anyayuthik (Heretics) 453-466

Discussions and Initiation of Kalodayi 453
Demeritorious Karmas and Meritorious Karmas 459
Lighting and Extinguishing Fire 463
Light from Inanimate Matter 465

Eighth Shatak (Chapter Eight) : First Lesson : Pudgala (Matter) 467-536

Collative Verse 467
Three Kinds of Matter 467
Conscious Transformation in Light of Nine Dandaks 469
First Dandak 469
Second Dandak 478
Third Dandak 484
Fourth Dandak 488
Fifth Dandak 490
Sixth Dandak 492
Seventh Dandak 493
Eighth Dandak 494
Ninth Dandak 495
Joint Transformation in Light of Nine Dandaks 496
Types of Naural Transformation 497
Transformation of One Substance 498
Transformation due to Conscious Physical Activity 503
Alternatives of Transformation of Two Substances 522
Alternatives of Transformation of Three Substances 529
Alternatives of Transformation of Four Substances 532
Comparative Numbers of Transformations 535

Appendix 537-591

Technical Terms 539
Inappropriate Time for Study of Agams 582
List of Published Agams 588

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ॐ नमो समणस्स भगवओ महावीरस्स

Om Namo Samanassa Bhagavao Mahavirassa

श्री भगवती सूत्र (२)

(श्री व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र)

SHRI BHAGAVATI SUTRA (2)

(SHRI VYAKHYAPRAJNAPTI SUTRA)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : प्रथम उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : FIRST LESSON

रवि RAVI (THE SUN)

- व्याख्याप्रज्ञप्ति–भगवती सूत्र का यह पंचम शतक है। इस शतक में सूर्य–चन्द्रमा की गति का परिमाण, उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी काल–चक्र, छद्मस्थ एवं केवली की ज्ञान–शक्ति, क्रियावाद, परमाणु विज्ञान, आयुष्य वृद्धि–हानि कुलकर आदि कई महत्त्वपूर्ण विषयों पर प्रकाश डाला गया है। इस शतक के भी दस उद्देशक हैं।
- This is the Fifth *Shatak* (Fifth Chapter) of *Vyakhyaprajnapti* (*Bhagavati Sutra*). In this Chapter light has been thrown on many important topics including the measures of the movement of the sun and the moon, the progressive and regressive time cycle (*Utsarpini-Avasarpini kaal-chakra*), potency of spiritual knowledge (*jnana-shakti*) of *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) and *Kevali* (omniscient), *Kriyavaad* (doctrine of endeavour), theory of ultimate particles (*paramanu vijnana*), increase and decrease of life-span and *Kulakar* (clan-founders). This chapter too has ten lessons (*uddeshaks*).

पंचम शतक की संग्रहणी गाथा COLLATIVE VERSE

१. चंप रवि १ अणिल २ गंठिय ३ सद्दे ४ छउमायु ५–६ एयण ७ णियंटे ८।

रायगिहं ९ चंपा–चंदिमा १० य दस पंचमम्मि सते॥१॥

१. (गाथा का अर्थ)–पाँचवें शतक में ये दस उद्देशक हैं–प्रथम उद्देशक में चम्पानगरी में सूर्य सम्बन्धी प्रश्नोत्तर हैं। द्वितीय उद्देशक में वायु सम्बन्धी प्ररूपणा है। तृतीय उद्देशक में जालग्रन्थी का उदाहरण देकर तथ्य का निरूपण किया है। चतुर्थ उद्देशक में शब्द सम्बन्धी प्रश्नोत्तर हैं। पंचम उद्देशक में छद्मस्थ के सम्बन्ध में एवं छठे उद्देशक में आयुष्य की वृद्धि–हानि सम्बन्धी निरूपण है। सातवें उद्देशक में पुद्गलों के एजन = कम्पन का वर्णन है। आठवें उद्देशक में निर्ग्रन्थी–पुत्र अनगार द्वारा पदार्थ–विषयक चर्चा है। नौवें उद्देशक में राजगृह नगर सम्बन्धी पर्यालोचन और दसवें उद्देशक में चम्पानगरी में वर्णित चन्द्रमा–सम्बन्धी प्ररूपणा है।

1. The fifth chapter has following ten lessons (*uddeshaks*)—The first lesson has questions and answers about the sun in Champa city. The second lesson has information about air (*vayu*). The third lesson describes knots in a net as analogy. The fourth lesson has questions and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

answers about sound (*shabd*). The fifth lesson has information about *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage). The sixth lesson describes increase and decrease of life-span. The seventh lesson contains description of vibration of matter particles. The eighth lesson narrates the description of matter given by ascetic Nirgranthi-putra. The ninth lesson has the description of Rajagriha city. The tenth lesson provides the description of the moon in Champa city.

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नगरी होत्था। वण्णओ। तीसे णं चंपाए नगरीए पुण्णभद्दे नामे चेइए होत्था। वण्णओ। सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया।

२. उस काल, उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी। उस चम्पानगरी के बाहर पूर्णभद्र नाम का चैत्य था। इनका वर्णन औपपातिक सूत्रानुसार समझें। (एक बार) वहाँ श्रमण भगवान महावीर स्वामी पधारे। यावत् परिषद् भगवान को वन्दन करने और उनका धर्मोपदेश सुनने के लिए गई, और धर्म श्रवण कर वापस लौट गई।

2. During that period of time there was a city called Champa. Description (as in *Aupapatik Sutra*). Outside Champa city there was a *Chaitya* (temple complex) called Purnabhadra. Description (of the *Chaitya*). (Once) Bhagavan Mahavir arrived there... and so on up to... People came out to pay homage and attend the discourse, after which they dispersed.

विवेचन : **चम्पानगरी : तब और अब**—औपपातिक सूत्र में चम्पानगरी का विस्तृत वर्णन मिलता है, तदनुसार प्राचीनकाल में 'चम्पा' ऋद्धियुक्त, शत्रुओं से अपराजित एवं समृद्ध नगरी थी। चम्पानगरी का इतिहास अति प्राचीन है, वहीं पर दधिवाहन राजा की पुत्री चन्दनबाला का जन्म हुआ था। पाण्डवकुलभूषण प्रसिद्ध दानवीर कर्ण ने इसी नगरी को अंगदेश की राजधानी बनाया था। बारहवें तीर्थंकर श्री वासुपूज्य स्वामी के पाँच कल्याणक इसी नगरी में हुए थे। महावीर-चरित्र के अनुसार अपने पिता श्रेणिक राजा की मृत्यु के शोक के कारण सम्राट् कोणिक मगध की राजधानी राजगृह में रह नहीं सकता था, इस कारण उसने वास्तुशास्त्रियों से परामर्श कर एक विशाल चम्पावृक्ष वाले स्थान को पसंद करके अपनी राजधानी के हेतु नवीन चम्पानगरी बसाई। दशवैकालिक सूत्र के रचयिता आचार्य शय्यंभव सूरि ने राजगृह से आये हुए अपने लघुवयस्क पुत्र मनक को इसी नगरी में दीक्षा दी थी और यहीं दशवैकालिक सूत्र की रचना की थी। इस नगरी के बंद हुए दरवाजों को महासती सुभद्रा ने अपने शील की महिमा से अपने कलंक निवारणार्थ कच्चे सूत की चलनी बाँधकर उसके द्वारा कुएँ में से पानी निकाला और तीन दरवाजों पर छींटा देकर उन्हें खोला था। चौथा दरवाजा ज्यों का त्यों बंद रखा था। परन्तु बाद में वि. सं. १३६० में लक्षणावती के हम्मीर और सुलतान समदनी ने शंकरपुर का किला बनाने हेतु उपयोगी पाषाणों के लिए इस दरवाजे को तोड़कर इसके कपाट ले लिये थे। वर्तमान में चम्पानगरी चम्पारन कस्बे के रूप में भागलपुर के निकटवर्ती एक जिला है। *(क) जिनप्रभसूरि रचित 'चम्पापुरीकल्प' (ख) हेमचन्द्राचार्य रचित महावीरचरित्र, सर्ग १२, श्लोक १८० से १८९ तक, (ग) आचार्य शय्यंभव सूरि रचित परिशिष्ट पर्व, सर्ग, ५, श्लोक ६८, ८०, ८५ (घ) भगवती सूत्र (टीकानुवाद टिप्पणयुक्त), खण्ड २, पृ. १४४।*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Champa city : then and now—Detailed description of Champa city is available in *Aupapatik Sutra*. According to that, the ancient Champa city was a grand and affluent city undefeated by enemies. It has a very long history going back to the hoary past. It was here that Chandan-bala, the daughter of King Dadhivahan was born. Benevolent Karna, the magnanimous Pandava, made this city the capital of his state Angadesh. The five auspicious events of the twelfth Tirthankar Shri Vaasupujya Swami took place in this very city. According to the biography of Bhagavan Mahavir, after the death of his father king Shrenik it became impossible for grief stricken Emperor Kunik to live in Rajagriha, the capital of Magadh empire. For this reason he constructed the new city of Champa around a huge Champa tree in consultation with expert architects. It was here that Acharya Shayyambhav initiated his infant son Manak, brought forth from Rajagriha, and wrote Dashavaikalik Sutra for him. With the power of her righteousness Mahasati Subhadra, in order to erase the blemish on her chastity, drew water from a well with a strainer tied to non-twined cotton thread and sprinkled on three closed gates of Champa city to open them. The fourth gate was kept closed. Later the *Hammir* and *Sultan* of Samdani demolished this gate to acquire stone slabs and door-flanges when he was constructing the fort of Shankarpur in 1360 V. At present it is a small township and district called Champaran near modern Bhagalpur. *[References—(a) Champapuri Kalp by Jinaprabh Suri; (b) Mahavir Charitra by Hemachandracharya (12/180-189); (c) Parishisht Parva by Acharya Shayyambhav Suri (5/68, 80, 85); (d) Bhagavati Sutra (translation of the Tika with foot notes)—Part 2, p. 144]*

जम्बूद्वीप में सूर्यों का उदय-अस्त **RISING AND SETTING OF SUNS IN JAMBUDVEEP**

३. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई णामं अणगारे गोयमे गोत्तेणं जाव एवं वयासी–

३. उस समय में श्रमण भगवान महावीर स्वामी के ज्येष्ठ अन्तेवासी (शिष्य) गौतमगोत्रीय इन्द्रभूति अनगार थे। उन्होंने इस प्रकार प्रश्न पूछा–

3. During that period of time Indrabhuti Anagar, the senior disciple of Bhagavan Mahavir... and so on up to... paid his homage and obeisance and submitted—

४. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे सूरिया उदीण–पाईणमुग्गच्छ पाईण–दाहिणमागच्छंति ? पाईण–दाहिणमुग्गच्छ दाहिण–पडीणमागच्छंति ? दाहिण–पडीणमुग्गच्छ पडीण–उदीणमागच्छंति ? पडीण–उदीणमुग्गच्छ उदीचि–पाईणमागच्छंति ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हंता, गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उदीण-पाईणमुग्गच्छ जाव उदीचि-पाईणमागच्छंति।

४. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में सूर्य क्या उत्तर-पूर्व-(ईशानकोण) में उदय होकर पूर्व-दक्षिण-(आग्नेयकोण) में अस्त होते (होने आते) हैं? अथवा आग्नेयकोण में उदय होकर दक्षिण-पश्चिम। (नैऋत्यकोण) में अस्त होते हैं? अथवा नैऋत्यकोण में उदय होकर पश्चिमोत्तर-(वायव्यकोण) में अस्त होते हैं, या फिर पश्चिमोत्तर-(वायव्यकोण) में उदय होकर उत्तर-पूर्व-(ईशानकोण) में अस्त होते हैं?

[उ.] हाँ, गौतम ! जम्बूद्वीप में सूर्य (उत्तर-पूर्व) (ईशानकोण) में उदित होकर अग्निकोण (पूर्व-दक्षिण) में अस्त होते हैं, यावत् पूर्वोक्त सम्पूर्ण कथन कहना चाहिए।

4. [Q.] *Bhante* ! In the continent called Jambudveep do suns rise in the north-east (*Ishan Kone*) and set in the south-east (*Agneya Kone*) ? Or do they rise in the south-east (*Agneya Kone*) and set in the south-west (*Nairitya Kone*) ? Or do they rise in the south-west (*Nairitya Kone*) and set in the north-west (*Vayavya Kone*) ? Or do they rise in the north-west (*Vayavya Kone*) and set in the north-east (*Ishan Kone*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! In the continent called Jambudveep the suns rise in the north-east (*Ishan Kone*) and set in the south-east (*Agneya Kone*), ... and so on up to... the whole question should be repeated as answer in affirmative.

५. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दाहिणड्ढे दिवसे भवति तया णं उत्तरड्ढे दिवसे भवति ? जया णं उत्तरड्ढे दिवसे भवति तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे दिवसे जाव राई भवति।

५. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में दिन होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी दिन होता है? और जब जम्बूद्वीप के उत्तरार्द्ध में दिन होता है, तब क्या मेरु पर्वत से पूर्व-पश्चिम में रात्रि होती है?

[उ.] हाँ, गौतम ! (यह इसी तरह होता है; अर्थात्-) जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में दिन होता है, तब पूर्व-पश्चिम भाग में रात्रि होती है।

5. [Q.] *Bhante* ! When it is day in the southern half of Jambudveep, is it also day in the northern half of Jambudveep ? And when there is day in the northern half of Jambudveep, is there night on the east and west of the Meru mountain ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that; which means—) When there is day in the northern half of Jambudveep, it is night on the east and west of the Meru mountain ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं दिवसे भवति तया णं पच्चत्थिमेणं वि दिवसे भवति ? जया णं पच्चत्थिमेणं दिवसे भवति तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं दिवसे जाव राई भवति।

६. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से पूर्व में दिन होता है, तब क्या पश्चिम में भी दिन होता है ? और जब पश्चिम में दिन होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से उत्तर-दक्षिण दिशा में रात्रि होती है ?

[उ.] गौतम ! हाँ, इसी प्रकार से होता है; अर्थात् जब जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत से पूर्व में दिन होता है, तब उत्तर-दक्षिण भाग में रात्रि होती है।

6. [Q.] *Bhante* ! When it is day on the east of the Meru mountain, is it also day on the west of Meru mountain ? And when there is day on the east of the Meru mountain, is there night on the south and north of the Meru mountain in Jambudveep ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that; which means—) When there is day on the east of Meru mountain in Jambudveep, it is night on its north and south.

विवेचन : सूर्य के उदय-अस्त का व्यवहार : यहाँ जो दिशा, विदिशा या समय की दृष्टि से सूर्य का उदय-अस्त बताया गया है, वह सब व्यवहार दर्शकों की दृष्टि की अपेक्षा से बताया है, क्योंकि समग्र भूमण्डल पर सूर्य के उदय-अस्त का समय या दिशा-विदिशा (प्रदेश) नियत नहीं है। वह क्षेत्र सापेक्ष है। वास्तव में देखा जाए तो सूर्य तो सदैव भूमण्डल पर विद्यमान रहता है, किन्तु जब सूर्य के समक्ष किसी प्रकार की आड़ (ओट या व्यवधान) आ जाती है, तब (उस समय) उस देश (उस दिशा-विदिशा) के लोग उक्त सूर्य को देख नहीं पाते, तब उस देश के लोग इस प्रकार का व्यवहार करते हैं-'अब सूर्य अस्त हो गया है।' जब सूर्य के सामने किसी प्रकार की आड़ नहीं होती, तब उस देश (दिशा-विदिशा) के लोग सूर्य को देख पाते हैं और वे इस प्रकार का व्यवहार करते हैं-'अब (इस समय) सूर्य उदय हो गया है।' एक आचार्य ने कहा है-"सूर्य प्रति समय ज्यों-ज्यों आकाश में आगे गति करता जाता है, त्यों-त्यों निश्चित ही इस तरफ रात्रि होती जाती है। इसलिए सूर्य की गति पर ही उदय-अस्त का व्यवहार निर्भर है।" इस प्ररूपणा के अनुसार इस मान्यता का स्वतः निराकरण हो जाता है कि 'सूर्य पश्चिम की ओर के समुद्र में प्रविष्ट होकर पाताल में चला जाता है, फिर पूर्व की ओर के समुद्र पर उदय होता है।'

एक ही समय में दो दिशाओं में दिवस कैसे ?—जम्बूद्वीप में सूर्य दो होते हैं। जब एक सूर्य मेरु पर्वत की उत्तर दिशा में होता है, तब दूसरा सूर्य मेरु पर्वत की दक्षिण दिशा में होता है। उस समय मेरु पर्वत की उत्तर और दक्षिण दिशा में दिन होता है। मेरु पर्वत की पूर्व और पश्चिम दिशा में रात्रि होती है। जब मेरु की पूर्व और पश्चिम दिशा में दिन होता है, तब उत्तर-दक्षिण दिशा में रात्रि होती है। इसलिए एक ही समय में दो दिशाओं में दिवस होता है और दो दिशाओं में रात्रि होती है। विशेष स्पष्टता के लिए मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते सूर्य का संलग्न चित्र देखें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Sunrise and sunset—The rising and setting of the sun in terms of directions or time is with reference to the general observer because the time and direction of sunset and sunrise is not fixed for every point on the earth. In fact the sun is always present over the globe but when there is some kind of obstruction covering some area or direction, people of that area are unable to see the sun. It is then that they say—"The sun has set now." When there is no such obstruction and people are able to see the sun they say—"The sun has risen now." Some *Acharya* has said—"As the sun moves forward in the sky every moment, night approaches to its rear. That is why the rising and setting of the sun is dependent on the movement of the sun." This automatically explains the traditional belief that the sun enters the western sea and sinks into the underworld (*paataal*) to rise once again from the eastern sea.

Day in two directions at the same time ?—Jambudveep has two suns. When one sun is to the north of Meru mountain the other is to its south. At that time it is day on the northern as well as southern directions and it is night on the eastern and western directions of the Meru. When it is day on the eastern and western directions of the Meru it is night on the northern and southern directions of the Meru. That is why there is day in two directions and night in two directions at the same time. For further clarity see the illustration showing the suns moving around Meru mountain.

जम्बूद्वीप में दिवस और रात्रि का कालमान **PERIODICITY OF DAY AND NIGHT IN JAMBUDVEEP**

७. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ तया णं उत्तरड्ढे वि उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ ! जया णं उत्तरड्ढे उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं जहन्निया दुवालसमुहुत्ता राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे जाव दुवालसमुहुत्ता राई भवइ।

७. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप नामक द्वीप के दक्षिणार्द्ध में उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी उत्कृष्ट (सबसे बड़ा) अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है ? और जब उत्तरार्द्ध में उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब क्या जम्बूद्वीप में पर्वत से पूर्व-पश्चिम में जघन्य (छोटी से छोटी) बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (यह इसी तरह होती है। अर्थात्-) जब जम्बूद्वीप में १८ मुहूर्त्त का दिन ··· यावत् ··· बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

7. [Q.] *Bhante* ! In the southern half of the continent named Jambudveep, when the maximum length of the day is 18 Muhurts then

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बृहत्संग्रहणी चित्र ३७/३८ के आधार पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-१

Illustration No. 1

दिन-रात की हानि-वृद्धि

जम्बूद्वीप में दो सूर्य तथा दो चन्द्र निरन्तर गति करते हैं। जम्बूद्वीप के ४५-४५ हजार योजन क्षेत्र (लम्बाई) में एक-एक सूर्य प्रकाश करता है। जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मण्डल (सबसे भीतर का मण्डल) में होता है तब १८ मुहुर्त का दिन तथा १२ मुहुर्त की रात (कर्क संक्रान्ति का प्रथम दिन) अर्थात् संवत्सर का सबसे बड़ा दिन १४ घण्टा ९ मिनट तथा सबसे छोटी रात होती है। अर्थात् ३० मुहुर्त के दिन-रात का ६ भाग प्रकाश क्षेत्र और ४ भाग अंधकार क्षेत्र होता है। इस समय मेरु के पास सूर्य का प्रकाश क्षेत्र ९४८६$\frac{९}{१०}$ रहता है, वह क्रमशः वृद्धि पाता हुआ समुद्र की तरफ का प्रकाश क्षेत्र ९४५२६$\frac{४२}{६०}$ तथा अंधकार क्षेत्र ६३०१९$\frac{४८}{६०}$ एवं पूर्व-पश्चिम का किरण विस्तार ४७२६३$\frac{३१}{६०}$ हो जाता है। कर्क संक्रान्ति का यह प्रथम दिन आषाढ़ मास में आता है। फिर क्रमशः सूर्य सर्व बाह्यमण्डल की ओर प्रयाण करता है। तब उसका प्रकाश क्षेत्र क्रमशः घटता जाता है। अंधकार क्षेत्र बढ़ता जाता है।

जब सूर्य दक्षिणायन से उत्तरायण में प्रवेश करता है अर्थात् सर्व बाह्य मण्डल के १८३वें मण्डल में गति करता है, तब सबसे बड़ी १८ मुहुर्त की रात तथा सबसे छोटा १२ मुहुर्त का दिन होता है। यह मकर संक्रान्ति का प्रथम दिन होता है। इस समय मेरु के पास का प्रकाश विस्तार ६३२४$\frac{६}{१०}$ तथा अंधकार क्षेत्र ९४८६$\frac{९}{१०}$ होता है। जब दोनों सूर्य सर्व बाह्य मण्डल में आते हैं, तब समुद्र की तरफ का प्रकाश क्षेत्र ६३६६३ योजन तथा अंधकार क्षेत्र ९५४९४$\frac{९}{२}$ योजन होती है।

प्रस्तुत चित्र में जम्बूद्वीप-लवण समुद्र में सूर्य का भ्रमण क्षेत्र दर्शाया है। यह चित्र बृहत्संग्रहणी आचार्य श्री यशोदेवसूरि कृत हिन्दी विवेचन के आधार से साभार लिया है।

-(शतक ५, उ. १, सूत्र ७-१३ तक)

LONGER AND SHORTER DAYS AND NIGHTS

Two suns and two moons continuously move around Jambudveep. Each of these suns covers an area of Jambudveep defined by 45 thousand Yojan long section of its circumference. When the sun is in its innermost orbit the day is 18 Muhurt long and the night is 12 Muhurt long. This is the day the sun enters the Cancer sign of the Zodiac (Kark Sankranti). It is the longest day (14 hours 9 minutes) of the year and the shortest night. This means that one sixth of the total 30 Muhurt span of the day has light and one fourth part has darkness. At this time the area covered by sunlight near Meru mountain is 9486$\frac{9}{10}$ Yojans and the corresponding area of darkness is 6324$\frac{6}{10}$ Yojans. It gradually increases and becomes 94526$\frac{42}{60}$ Yojans near the cost of Lavan Samudra, where the corresponding area of darkness becomes 63019$\frac{48}{60}$. This first day of Kark Sankranti falls in the month of Ashadh. Then the sun starts moving towards its outermost orbit and gradually the area covered by sunlight diminishes whereas the area of darkness expands.

Then the sun starts shifting back from the southern to the northern solstice it is moving in the outermost orbit, the 183rd. At that time the night is longest (18 Muhurt) and the day is shortest (12 Muhurt). This is the first day of the sun entering the Capricorn sign of the Zodiac (Makar Sankranti). At this time the area covered by sunlight near Meru mountain is 6324$\frac{6}{10}$ Yojans and the corresponding area of darkness is 9486$\frac{1}{10}$ Yojans. It gradually increases and becomes 63663 Yojans near the cost of Lavan Samudra where the corresponding area of darkness becomes 95494$\frac{1}{2}$.

—Shatak 5, lesson-1, Sutra-7 to 13

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

is the maximum length of the day 18 Muhurts in the northern half too ? And when the maximum length of the day is 18 Muhurts in the northern half then is the night in the region east and west of the Meru mountain in Jambudveep shortest, of twelve Muhurt duration ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—) In the southern half of the continent named Jambudveep... and so on up to... twelve Muhurt duration.

८. [प्र.] जया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पुरत्थिमेणं उक्कोसए अट्ठारस जाव तया णं जंबुद्दीवे दीवे पच्चत्थिमेण वि उक्कोसेणं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति ? जया णं पच्चत्थिमेणं उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति तदा णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे उत्तर-दाहिणे दुवालसमुहुत्ता जाव राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव भवति।

८. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से पूर्व में उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के पश्चिम में भी उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है ? और भगवन् ! जब पश्चिम में उत्कृष्ट अठारह मुहूर्त्त का दिवस होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के उत्तर में जघन्य बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यह इसी तरह-यावत् ··· होता है।

8. [Q.] *Bhante* ! When the maximum length of the day is 18 Muhurts in the region east of the Meru mountain in Jambudveep then is the maximum length of the day 18 Muhurts in the region west of the Meru mountain too ? And when the maximum length of the day is 18 Muhurts in the east then is the night in the northern region of Jambudveep shortest, of twelve Muhurt duration ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—)... and so on up to... twelve Muhurt duration.

९. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दाहिणड्ढे अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति तया णं उत्तरे अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति ? जया णं उत्तरे अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं सातिरेगा दुवालसमुहुत्ता राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे जाव राई भवति।

९. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में अठारह मुहूर्त्तानन्तर (मुहूर्त्त से कुछ कम) का दिवस होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिवस होता है ? और जब उत्तरार्द्ध में अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब क्या जम्बूद्वीप में मन्दर पर्वत से पूर्व-पश्चिम दिशा में सातिरेक (कुछ अधिक) बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हाँ, गौतम ! यह इसी तरह होती है; अर्थात्–जब जम्बूद्वीप के ... यावत् रात्रि होती है।

9. [Q.] *Bhante* ! In the southern half of the continent named Jambudveep, when the day is slightly less than 18 Muhurts (*Muhurtantar*) long then in the northern half too is the day slightly less than 18 Muhurts long ? And when the day is slightly less than 18 Muhurts long in the northern half then is the night in the region east and west of the Meru mountain in Jambudveep slightly more than (*satirek*) twelve Muhurts long ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—) In the southern half of the continent named Jambudveep... and so on up to... slightly more than twelve Muhurts long.

१०. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति तया णं पच्चत्थिमेणं अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति ? जया णं पच्चत्थिमेणं अट्ठारसमुहुत्ताणंतरे दिवसे भवति तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं साइरेगा दुवालसमुहुत्ता राइ भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव भवति।

१०. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के मन्दराचल से पूर्व में अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब क्या पश्चिम में भी अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है? और जब पश्चिम में अठारह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब क्या जम्बूद्वीप में मेरुपर्वत से उत्तर–दक्षिण में सातिरेक बारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (यह इसी तरह) यावत् ..... होती है।

10. [Q.] *Bhante* ! When the day is slightly less than 18 Muhurts long in the region east of the Meru mountain in Jambudveep then is the day slightly less than 18 Muhurts long in the region west of the Meru mountain too ? And when the day is slightly less than 18 Muhurts long in the east then is the night in the northern region of Jambudveep shortest, slightly more than twelve Muhurts long ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—)... and so on up to... twelve Muhurts long.

११. एवं एएणं कमेणं ओसारेयव्वं–सत्तरसमुहुत्ते दिवसे, तेरसमुहुत्ता राई। सत्तरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे, सातिरेगा तेरसमुहुत्ता राई। सोलसमुहुत्ते दिवसे, चोद्दसमुहुत्ता राई। सोलसमुहुत्ताणंतरे दिवसे, सातिरेगा चोद्दसमुहुत्ता राई। पन्नरसमुहुत्ते दिवसे, पन्नरसमुहुत्ता राई। पन्नरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे, सातिरेगा पन्नरसमुहुत्ता राई। चोद्दसमुहुत्ते दिवसे, सोलसमुहुत्ता राई। चोद्दसमुहुत्ताणंतरे दिवसे, सातिरेगा सोलसमुहुत्ता राई। तेरसमुहुत्ते दिवसे, सत्तरसमुहुत्ता राई। तेरसमुहुत्ताणंतरे दिवसे, सातिरेगा सत्तरसमुहुत्ता राई।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. इसी प्रकार इस क्रम से दिवस का परिमाण बढ़ाना-घटाना और रात्रि का परिमाण घटाना-बढ़ाना चाहिए। यथा-जब सत्रह मुहूर्त्त का दिवस होता है, तब तेरह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब सत्रह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब सातिरेक तेरह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब सोलह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब चौदह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब सोलह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब सातिरेक चौदह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब पन्द्रह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब पन्द्रह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब पन्द्रह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब सातिरेक पन्द्रह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब चौदह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब सोलह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब चौदह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब सातिरेक सोलह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब तेरह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब सत्रह मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब तेरह मुहूर्त्तानन्तर का दिन होता है, तब सातिरेक सत्रह मुहूर्त्त की रात्रि होती है।

11. In the same way the length of the day and the night should be reduced and increased respectively in the following order—When the day is seventeen Muhurts long, the night is thirteen Muhurts long. When the day is slightly less than seventeen Muhurts long, the night is slightly more than thirteen Muhurts long. When the day is sixteen Muhurts long, the night is fourteen Muhurts long. When the day is slightly less than sixteen Muhurts long, the night is slightly more than fourteen Muhurts long. When the day is fifteen Muhurts long, the night is fifteen Muhurts long. When the day is slightly less than fifteen Muhurts long, the night is slightly more than fifteen Muhurts long. When the day is fourteen Muhurts long, the night is sixteen Muhurts long. When the day is slightly less than fourteen Muhurts long, the night is slightly more than sixteen Muhurts long. When the day is thirteen Muhurts long, the night is seventeen Muhurts long. When the day is slightly less than thirteen Muhurts long, the night is slightly more than seventeen Muhurts long.

१२. [प्र.] जया णं जंबुद्दीवे दाहिणड्ढे जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति तया णं उत्तरड्ढे वि ? जया णं उत्तरड्ढे तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमे-पच्चत्थिमे णं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमः ! एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव राई भवति।

१२. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से दक्षिणार्द्ध में जघन्य बारह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी (इसी तरह) होता है ? और जब उत्तरार्द्ध में भी इसी तरह होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से पूर्व और पश्चिम में उत्कृष्ट (सबसे बड़ी) अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! इसी (पूर्वोक्त) प्रकार से सब कहना चाहिए, यावत्··· रात्रि होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12. **[Q.]** *Bhante* ! In the southern half of the continent named Jambudveep, when the day is shortest or twelve Muhurts long then in the northern half too is the day twelve Muhurts long ? And when it is so in the northern half then is the night in the region east and west of the Meru mountain in Jambudveep is longest or eighteen Muhurts long ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—) In the southern half of the continent named Jambudveep... and so on up to... eighteen Muhurts long.

१३. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं जहन्नए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवति तया णं पच्चत्थिमेण वि ? जया णं पच्चत्थिमेणं वि तया णं जंबुद्दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव राई भवति।

१३. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से पूर्व में जघन्य (सबसे छोटा) बारह मुहूर्त्त का दिन होता है, तब क्या पश्चिम में भी इसी प्रकार होता है ? और जब पश्चिम में इसी तरह होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत के उत्तर और दक्षिण में उत्कृष्ट (सबसे बड़ी) अठारह मुहूर्त्त की रात्रि होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यह इसी तरह यावत् ··· रात्रि होती है।

13. **[Q.]** Bhante ! When the day is shortest or twelve Muhurts long in the region east of the Meru mountain in Jambudveep then is the day shortest or twelve Muhurts long in the region west of the Meru mountain too ? And when it is so in the east then is the night in the northern region of Jambudveep longest or eighteen Muhurts long ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—)... and so on up to... eighteen Muhurts long.

विवेचन : दिन और रात्रि की कालगणना का सिद्धान्त—जैन सिद्धान्त के अनुसार दिन और रात्रि मिलाकर दोनों कुल ३० मुहूर्त्त (= २४ घंटा) के होते हैं। दक्षिण और उत्तर में दिन का उत्कृष्ट मान १८ मुहूर्त्त = (१४ घण्टा, २४ मिनट) का होगा तो पूर्व और पश्चिम में रात्रि १२ मुहूर्त्त = (९ घण्टा, ३६ मिनट) की होगी। यदि रात्रि पूर्व व पश्चिम में उत्कृष्टतः १८ मुहूर्त्त की होगी तो दक्षिणार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में जघन्य १२ मुहूर्त्त का दिन होगा, इसी तरह पूर्व-पश्चिम में जघन्य १२ मुहूर्त्त का दिन होगा तो उत्तर एवं दक्षिण में रात्रि उत्कृष्ट १८ मुहूर्त्त की होगी। यदि दक्षिणार्द्ध, उत्तरार्द्ध अथवा पूर्व और पश्चिम में १८ मुहूर्त्तानन्तर का दिन होगा तो पूर्व और पश्चिम में अथवा उत्तर और दक्षिण में रात्रि सातिरेक १२ मुहूर्त्त की होगी।

तात्पर्य यह है कि ३० मुहूर्त्त अहोरात्र में से दिवस का जितना भाग बढ़ता या घटता है, उतना ही भाग, रात्रि का घटता या बढ़ता जाता है। सूर्य के कुल १८४ मण्डल हैं। उनमें से जम्बूद्वीप में ६५ और लवणसमुद्र में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शेष ११९ मण्डल हैं। जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर (सबसे भीतर वाले) मण्डल में होता है, तब १८ मुहूर्त्त का दिन होता है और १२ मुहूर्त्त की रात्रि होती है। जब सूर्य बाहरी मण्डल से आभ्यन्तर मण्डल की ओर आता है, तब क्रमशः प्रत्येक मण्डल में दिवस बढ़ता जाता है और रात्रि घटती जाती है; और जब सूर्य आभ्यन्तर मण्डल से बाहरी मण्डल की ओर प्रयाण करता है, तब प्रत्येक मण्डल में डेढ़ मिनट से कुछ अधिक रात्रि बढ़ती जाती है तथा दिन उतना ही घटता जाता है। जब सूर्य सर्वाभ्यन्तर मण्डल से निकलकर उसके पास वाले दूसरे मण्डल में जाता है, तब मुहूर्त्त के $\frac{२}{६१}$ भाग कम अठारह मुहूर्त्त का दिन होता है, जिसे शास्त्र में 'अष्टादश-मुहूर्त्तानन्तर' कहते हैं, क्योंकि यह समय १८ मुहूर्त्त का दिन होने के तुरन्त बाद में आता है।

Elaboration—The theory of measuring day and night—According to the Jain theory the total length of day and night is 30 Muhurts (24 hours). When the maximum length of the day in south and north is 18 Muhurts (14 hours and 24 minutes) the night in east and west is 12 Muhurts (9 hours and 36 minutes) long. If the night is longest or 18 Muhurts in east and west the day in north and south is shortest or 12 Muhurts. In the same way if the day is shortest or 12 Muhurts in east and west the night in north and south is longest or 18 Muhurts. If the day is slightly less than 18 Muhurts long in north-south or east-west than the night is slightly more than 12 Muhurts long in east-west or north-south.

In other words out of the total 30 Muhurts of day-night, the increase in the length of the day corresponds to the decrease in the length of the night and vice versa. The sun has a total of 184 *mandals* or orbits. Of these 65 are in Jambudveep and remaining 119 in the Lavan Samudra. When the sun is in the innermost *mandal* the day is 18 Muhurts long and the night is 12 Muhurts long. When the sun moves inward from the outermost *mandal* the length of the day increases and that of the night decreases with every *mandal*. When the sun moves outward from the innermost *mandal* the night increases by slightly more than one and a half minute per *mandal*; and the day decreases by the same span of time. When the sun shifts from the innermost *mandal* to the next one length of the day becomes $\frac{2}{61}$ part less than 18 Muhurts. This fraction is called Ashtadash Muhurtantar (slightly less than 18 Muhurts) because this immediately follows the maximum length of the day, 18 Muhurts.

वर्षा ऋतु का प्रथम समय FIRST SAMAYA OF MONSOON SEASON

१४. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जति तया णं उत्तरड्ढे वि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ ? जया णं उत्तरड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं अणंतरपुरक्खडसमयंसि वासाणं पढमे समए पडिवज्जति ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे वासाणं पढमे समए पडिवज्जति, तह चेव जाव पडिवज्जति।

१४. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में वर्षा (ऋतु) (चौमासे के मौसम) का प्रथम समय होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी वर्षा (ऋतु) का प्रथम समय होता है ? और जब उत्तरार्द्ध में वर्षा ऋतु का प्रथम समय होता है, तब जम्बूद्वीप में मन्दर पर्वत से पूर्व-पश्चिम में वर्षा ऋतु का प्रथम समय अनन्तर-पुरस्कृत समय में होता है ? (अर्थात् जिस समय में दक्षिणार्द्ध में वर्षा ऋतु का प्रारम्भ होता है, उसी समय के तुरन्त पश्चात् दूसरे समय में मन्दर पर्वत से पूर्व-पश्चिम में वर्षा ऋतु प्रारम्भ होती है ?)

[उ.] हाँ, गौतम ! (यह इसी तरह होता है। अर्थात्-) जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में वर्षा (ऋतु) का प्रथम समय होता है, तब उत्तरार्द्ध में भी (पूर्व-पश्चिम का कथन) उसी तरह यावत् होता है।

14. [Q.] *Bhante* ! In the southern half of the continent named Jambudveep, when it is the first Samaya of the monsoon season then in the northern half too is it the first moment of the monsoon season ? And when it is the first Samaya of the monsoon season in the northern half then in the region east and west of the Meru mountain in Jambudveep does the first Samaya of the monsoon season commence at *Anantar-puraskrit* Samaya (the Samaya following the first Samaya of the monsoon season in the northern half) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—) In the southern half of the continent named Jambudveep... and so on up to... commence at *Anantar-puraskrit* Samaya.

१५. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं वासाणं पढमे समए पडिवज्जति तया णं पच्चत्थिमेणं वि वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ ? जया णं पच्चत्थिमेणं वासाणं पढमे समए पडिवज्जइ तया णं जाव मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं अणंतरपच्छाकडसमयंसि वासाणं पढमे समए पडिवन्ने भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव पडिवन्ने भवति।

१५. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत से पूर्व में वर्षा (ऋतु) का प्रथम समय होता है, तब पश्चिम में भी क्या वर्षा (ऋतु) का प्रथम समय होता है ? और जब पश्चिम में वर्षा (ऋतु) का प्रथम समय होता है, तब यावत् मेरु पर्वत से उत्तर दक्षिण में वर्षा (ऋतु) का प्रथम समय अनन्तर-पश्चात्कृत समय में होता है ? (अर्थात् मन्दर पर्वत से पश्चिम में वर्षा ऋतु प्रारम्भ होने के प्रथम समय पहले एक समय में वहाँ (मन्दर पर्वत के) उत्तर-दक्षिण में वर्षा प्रारम्भ हो जाती है ?)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हाँ, गौतम ! (इसी तरह होता है। अर्थात्–) जब जम्बूद्वीप में मेरु पर्वत से पूर्व में वर्षा ऋतु प्रारम्भ होती है, तब पश्चिम में भी इसी प्रकार यावत् उत्तर–दक्षिण में वर्षा ऋतु का प्रथम समय अनन्तर–पश्चात्कृत समय में होता है, इसी तरह सारा वक्तव्य कहना चाहिए।

15. [Q.] *Bhante* ! When it is the first Samaya of the monsoon season in the region east of the Meru mountain in Jambudveep then is it the first Samaya of the monsoon season in the region west of the Meru mountain too ? And when it is the first Samaya of the monsoon season in the west then does the first Samaya of the monsoon season in the north-south region of Jambudveep commence at *Anantar-pashchaatkrit* Samaya (the Samaya preceding the first Samaya of the monsoon season in the western half) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that, which means—) In the southern half of the continent named Jambudveep... and so on up to... commence at *Anantar-pashchaatkrit* Samaya.

१६. एवं जहा समएणं अभिलावो भणिओ वासाणं तहा आवलियाए १, वि भाणियव्वो २, आणापाणूण वि ३, थोवेण वि ४, लवेण वि ५, मुहुत्तेण वि ६, अहोरत्तेण वि ७, पक्खेण वि ८, मासेण वि ९, उउणा वि १०। एतेसिं सव्वेसिं जहा समयस्स अभिलाओ तहा भाणियव्वो।

१६. जिस प्रकार वर्षा ऋतु के प्रथम समय के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार वर्षा ऋतु के प्रारम्भ की प्रथम आवलिका के विषय में भी कहना चाहिए। इसी प्रकार आन–पान, स्तोक, लव, मुहूर्त्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु; इन सबके विषय में भी समय के अभिलाप की तरह कहना चाहिए।

16. What has been stated about the first Samaya of the monsoon season should also be repeated for the first Avalika of the monsoon season. In the same way it should also be repeated for (other units of time including) Aan-paan, Stok, Lava, Muhurt, Ahoratra (day-night), Paksha (fortnight), Maas (month), Ritu (season).

हेमन्त आदि ऋतुएँ और अयनादि SEASONS INCLUDING WINTER AND SOLSTICES

१७. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे हेमंताणं पढमे समए पडिवज्जति ?

[उ.] जहेव वासाणं अभिलावो तहेव हेमंताण वि २०, गिम्हाण वि ३०, भाणियव्वो जाव उऊ ए। एवं एए तिन्नि वि। एएसिं तीसं आलावगा भाणियव्वा।

१७. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में हेमन्त ऋतु का प्रथम समय होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी हेमन्त ऋतु का प्रथम समय होता है ? और जब उत्तरार्द्ध में हेमन्त ऋतु का प्रथम समय होता है, तब क्या जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से पूर्व–पश्चिम में हेमन्त ऋतु का प्रथम समय अनन्तर पुरस्कृत समय में होता है ? इत्यादि प्रश्न हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हे गौतम ! इस विषय का सारा वर्णन वर्षा ऋतु के (अभिलाप) कथन के समान जान लेना चाहिए। इसी तरह ग्रीष्म ऋतु का भी वर्णन कह देना चाहिए। हेमन्त ऋतु और ग्रीष्म ऋतु के प्रथम समय की तरह उनकी प्रथम आवलिका, यावत् ऋतुपर्यन्त सारा वर्णन कहना चाहिए। इस प्रकार वर्षा ऋतु, हेमन्त ऋतु और ग्रीष्म ऋतु; इन तीनों का एक सरीखा वर्णन है। इसलिए इन तीनों के तीस आलापक होते हैं।

17. [Q.] *Bhante* ! In the southern half of the continent named Jambudveep, when it is the first Samaya of the winter season then in the northern half too is it the first moment of the winter season ? And when it is the first Samaya of the winter season in the northern half then in the region east and west of the Meru mountain in Jambudveep does the first Samaya of the winter season commence at *Anantar-puraskrit* Samaya ? (and other such questions)

[Ans.] Gautam ! All the aforesaid details about monsoon season should be repeated here. In the same way it should be repeated for the summer season. Like the first Samayas of winter and summer seasons the details should be repeated for other units of time from Avalika to season. Thus the details about all the three seasons—monsoon, winter and summer—are same and are stated in thirty statements (alaapak).

१८. [प्र.] जया णं भंते ! जंबुद्दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणड्ढे पढमे अयणे पडिवज्जति तया णं उत्तरड्ढे वि पढमे अयणे पडिवज्जइ ?

[उ.] जहा समएणं अभिलावो तहेव अयणेण वि भाणियव्वो जाव अणंतरपच्छाकडसमयंसि पढमे अयणे पडिवन्ने भवति।

१८. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप के मन्दर पर्वत से दक्षिणार्द्ध में जब प्रथम 'अयन' होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी प्रथम 'अयन' होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार समय के विषय में आलापक कहा, उसी प्रकार 'अयन' के विषय में भी कहना चाहिए; यावत् उसका प्रथम समय अनन्तर पश्चात्कृत समय में होता है; इत्यादि सारा वर्णन कहना चाहिए।

18. [Q.] *Bhante* ! In the southern half of the continent named Jambudveep, when it is the period of the first solstice (*Ayan*) then in the northern half too is it the period of the first solstice (*Ayan* or half year) ?

[Ans.] Gautam ! The statement about Samaya should be repeated for solstice too... and so on up to... commence at *Anantar-puraskrit* Samaya.

१९. जहा अयणेणं अभिलावो तहा संवच्छरेण वि भाणियव्वो, जुएण वि, वाससएण वि, वाससहस्सेण वि, वाससयसहस्सेण वि, पुव्वंगेण वि, पुव्वेण वि, तुडियंगेण वि, तुडिएण वि, एवं पुव्वंगे,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुव्वे, तुडियंगे, तुडिए, अडडंगे, अडडे, अववंगे, अववे, हूहूयंगे, हूहूए, उप्पलंगे, उप्पले, पउमंगे, पउमे, णलिणंगे, णलिणे, अत्थणिउरंगे, अत्थणिउरे, अउयंगे, अउए, णउयंगे, णउए, पउयंगे, पउए, चूलियंगे, चूलिए, सीसपहेलियंगे, सीसपहेलिया, पलिओवमेण, सागरोवमेण वि भाणियव्वो।

१९. जिस प्रकार 'अयन' के सम्बन्ध में कहा; उसी प्रकार 'संवत्सर' के विषय में भी कहना चाहिए। तथैव युग, वर्षशत, वर्षसहस्र, वर्षशतसहस्र, पूर्वांग, पूर्व, त्रुटितांग, त्रुटित, अटटांग, अटट, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनूपुरांग, अर्थनूपुर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका, पल्योपम और सागरोपम; (इन सब) के सम्बन्ध में भी (पूर्वोक्त प्रकार से) कहना चाहिए।

19. As has been said about solstice (*Ayan*) so should be repeated for Samvatsar. So also for Yug, Varshashat, Varshasahasra, Varshashatsahasra, Purvanga, Purva, Trutit, Atatanga, Atata, Avavanga, Avava, Huhukanga, Huhuka, Utpalanga, Utpala, Padmanga, Padma, Nalinanga, Nalina, Arthanupuranga, Arthanupura, Ayutanga, Ayut, Nayutanga, Nayuta, Prayutanga, Prayuta, Chulikanga, Chulika, Sheershaprahelikanga, Sheershaprahelika, Palyopam and Sagaropam.

२०. [प्र.] **जया णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दाहिणड्ढे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जति तया णं उत्तरड्ढे वि पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ ? जया णं उत्तरड्ढे वि पडिज्जइ तया णं जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं णेवत्थि ओसप्पिणी, णेवत्थि उस्सप्पिणी, अवट्ठिए णं तत्थ काले पण्णत्ते समणाउसो !**

[उ.] **हंता, गोयमा ! तं चेव उच्चारेयव्वं जाव समणाउसो !**

२०. [प्र.] भगवन् ! जब जम्बूद्वीप नामक द्वीप के दक्षिणार्द्ध में प्रथम अवसर्पिणी (अवसर्पिणी का प्रथम आरा) होती है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी प्रथम अवसर्पिणी होती है ? और जब उत्तरार्द्ध में प्रथम अवसर्पिणी होती है, तब क्या जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम में अवसर्पिणी नहीं होती ? उत्सर्पिणी नहीं होती ? किन्तु हे आयुष्मान् श्रमणपुंगव ! क्या वहाँ अवस्थित (स्थिर) काल कहा गया है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! इसी तरह होता है। यावत् (श्रमणपुंगव ! तक) पूर्ववत् सारा वर्णन कह देना चाहिए।

20. [Q.] *Bhante* ! In the southern half of the continent named Jambudveep, when it is the first *Avasarpini* (the first epoch of the regressive cycle of time) then in the northern half too is it the first *Avasarpini* ? And when it is the first *Avasarpini* in the northern half then in the region east and west of the Meru mountain in Jambudveep is there neither *Avasarpini* nor *Utsarpini* but *Avasthit Kaal* (changeless time in context of conditions), O Long lived *Shraman* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that—)... and so on up to... O Long lived *Shraman*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. जहा ओसप्पिणीए आलावओ भणिओ एवं उस्सप्पिणीए वि भाणियव्वो।

२१. जिस प्रकार अवसर्पिणी के विषय में कथन किया (आलापक कहा) है, उसी प्रकार उत्सर्पिणी के विषय में भी कहना चाहिए।

21. Gautam ! As has been said about *Avasarpini* so should also be repeated for *Utsarpini* (progressive cycle of time).

विवेचन : विविध कालमानों की व्याख्या—ऊऊ = ऋतु। ऋतु भी एक प्रकार का कालमान है। वर्षभर में यों तो ६ ऋतुएँ मानी जाती हैं—बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर। परन्तु यहाँ तीन ऋतुओं का नामोल्लेख किया गया है, इसलिए चार-चार महीने की एक-एक ऋतु मानी जानी चाहिए। **अणंतर-पुरक्खडसमयंसि** = दक्षिणार्द्ध में प्रारम्भ होने वाली वर्षा ऋतु प्रारम्भ की अपेक्षा अनन्तर (तुरन्त पूर्व) भविष्यत्कालीन समय को **अनन्तरपुरस्कृत** समय कहते हैं। **अणंतरपच्छाकडसमयंसि** = पूर्व और पश्चिम महाविदेह में प्रारम्भ होने वाली वर्षा ऋतु प्रारम्भ की अपेक्षा अनन्तर (तुरन्त बाद के) अतीतकालीन समय को **अनन्तर पश्चात्कृत** समय कहते हैं। समय से लेकर ऋतु तक काल के १० भेद होते हैं—(१) **समय** (काल का सबसे छोटा भाग), (२) **आवलिया** (असंख्यात समय), (३) **आणापाणू** (**आनपान** = उच्छ्वास-निःश्वास), (४) **थोवं** (स्तोक—सात आनप्राणों का), (५) **लव** (सात स्तोकों का), (६) **मुहुत्तं** (मुहूर्त्त = ७७ लव, अथवा ३,७७३ श्वासोच्छ्वास, या ४८ मिनट का), (७) **अहोरत्तं** (अहोरात्र—३० मुहूर्त्त का), (८) **पक्खं** (पक्ष = १५ दिन-रात का), (९) **मासं** (मास—दो पक्ष का एक महीना) उऊ (ऋतु—दो मास की एक ऋतु)। **अयणं** (अयन = तीन ऋतुओं का), **संवच्छरं** (दो अयन का), **जुए** (युग = पाँच संवत्सर का), **वाससतं** (सौ वर्ष), **वाससहस्सं** (हजार वर्ष), **वाससतसहस्सं** (एक लाख वर्ष), **पुव्वंग** (८४ लाख वर्षों का), **पुव्वं** (८४ लाख को ८४ लाख से गुणा करने से जितने वर्ष हों, उतने वर्षों का एक पूर्व), **तुडियंगं** (एक पूर्व को ८४ लाख से गुणा करने से एक त्रुटितांग), **तुडिए** (एक त्रुटितांग को ८४ लाख से गुणा करने पर एक त्रुटित), इसी प्रकार पूर्व-पूर्व की राशि को ८४ लाख से गुणा करने पर उत्तर-उत्तर की समय राशि क्रमशः बनती है। वह इस प्रकार है—अटटांग, अटट, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनुपूरांग, अर्थनुपूर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका (१९४ अंकों की संख्या), पल्योपम और सागरोपम (ये दो गणना के विषय नहीं हैं, उपमा के विषय हैं, उन्हें उपमाकाल कहते हैं।)

अवसर्पिणी—यह काल दस कोड़ाकोड़ी सागरोपम का होता है। इसके ६ विभाग (आरा) होते हैं। एक प्रकार से यह अर्द्ध-काल-चक्र है। **उत्सर्पिणी**—यह काल भी दस कोड़ाकोड़ी सागरोपम का होता है। इसके भी ६ विभाग (आरा) होते हैं। दोनों मिलकर एक काल-चक्र होता है। अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल-चक्र का प्रवर्तन केवल ५ भरत तथा ५ ऐरवत क्षेत्र में ही होता है।

Elaboration—Various units of time—Uu (Ritu or season) is also a kind of unit of time. Generally there are said to be six seasons in a *year*—*Vasant* (spring), *Grishma* (summer), *Varsha* (monsoon), *Sharad* (autumn), *Hemant* (cold) and *Shishir* (winter). But here only three seasons have been mentioned making them four months long each. *Anantar-purakkhadasamayamsi* = *Anantar-puraskrit* Samaya or the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Samaya following the first Samaya of the monsoon season in the northern half). *Anantar-pachchhakadasamayamsi = Anantar-pashchaatkrit* Samaya or the Samaya preceding the first Samaya of the monsoon season in the western half. Starting from Samaya there are ten units of time up to Ritu—Samaya (the smallest indivisible unit of time; something even beyond nanosecond), Avalika (innumerable Samayas), Aan-pran (one exhalation and inhalation), Stoka (seven Aan-pran), Lava (seven Stoka), Muhurt (77 Lava or 3773 Aan-pran or 48 minutes), Ahoratra (30 Muhurts; day and night), Paksha (15 Ahoratra), Maas (30 Ahoratra; month), Ritu (two months). The units of time after this are—three Rituṁs make one Ayan (the time from one solstice to another; six months), two Ayans make one Samvatsar (year), five Samvatsars make one Yug, and twenty Yugs make one Varshashat (century). Ten Varshashat make one Varshasahasra (millennium), and one hundred Varshasahasra make one Varshashatsahasra. 8.4 million Varsh make one Purvanga, 8.4 million Purvangas make one Purva, 8.4 million Purvas make one Trutitanga, 8.4 million Trutitanga make one Trutit, 8.4 million Trutit make one Adadanga, 8.4 million Adadanga make one Adada, 8.4 million Adada make one Avavanga, 8.4 million Avavanga make one Avava, 8.4 million Avava make one Huhukanga, 8.4 million Huhukanga make one Huhuka, the same process continues to include Utpalanga, Utpala, Padmanga, Padma, Nalinanga, Nalina, Arthanupuranga, Arthanupura, Ayutanga, Ayut, Nayutanga, Nayuta, Prayutanga, Prayuta, Chulikanga, Chulika, and still further 8.4 million Chulika make one Sheershaprahelikanga, and 8.4 million Sheershaprahelikanga make one Sheershaprahelika (a number having 194 digits). Palyopam and Sagaropam are metaphoric units of time and are not countable.

Avasarpini—This is ten *Kodakodi* Sagaropam long. It has six divisions or epochs (*Aara* or spokes). Although called regressive cycle of time it is in fact half-cycle. *Utsarpini*—this too is ten *Kodakodi* Sagaropam long and has six divisions or epochs (*Aara* or spokes). Both combined make one cycle of time. This progressive and regressive cycle of time is applicable only to five Bharat and five Airavat areas.

सूर्य के उदय–अस्त तथा दिवस–रात्रि का विचार SUNSET AND SUNRISE : DAY AND NIGHT

२२. [प्र. १] लवणे णं भंते ! समुद्दे सूरिया उदीण–पाईणमुग्गच्छ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] जच्चेव जंबुद्दीवस्स वत्तव्वया भणिया सच्चेव सव्वा अपरिसेसिया लवणसमुद्दस्स वि भाणियव्वा, नवरं अभिलावो इमो जाणियव्वो–'जया णं भंते ! लवणे समुद्दे दाहिणड्ढे दिवसे भवइ तया णं लवणे समुद्दे पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं राई भवति ? एतेणं अभिलावेणं नेयव्वं–

२२. [प्र. १] भगवन् ! लवणसमुद्र में सूर्य ईशानकोण में उदय होकर अग्निकोण में जाते हैं? इत्यादि सारा प्रश्न पूछना चाहिए।

[उ.] गौतम ! जम्बूद्वीप में सूर्यों के सम्बन्ध में जो वक्तव्यता कही गई है, वह सम्पूर्ण वक्तव्यता यहाँ लवणसमुद्रगत सूर्यों के सम्बन्ध में भी कहनी चाहिए। विशेष बात यह है कि इस वक्तव्यता में पाठ का उच्चारण इस प्रकार करना चाहिए–"भगवन् ! जब लवणसमुद्र के दक्षिणार्द्ध में दिन होता है,' इत्यादि सारा कथन उसी प्रकार कहना चाहिए, यावत् 'तब लवणसमुद्र के पूर्व-पश्चिम में रात्रि होती है।' इसी अभिलाप द्वारा सब वर्णन जान लेना चाहिए।

22. [Q. 1] *Bhante* ! In the Lavan Samudra (Salt Sea) do suns rise in the north-east (*Ishan Kone*) and set in the south-east (*Agneya Kone*) ? (Repeat the complete question as asked in case of Jambudveep.)

[Ans.] Gautam ! What has been stated about the suns of Jambudveep should be repeated here verbatim about suns of Lavan Samudra. The difference is that the statement should be recited as—'*Bhante* ! In Lavan Samudra when there is day in the southern half... and so on up to... then there is night in the eastern and western parts of Lavan Samudra. ' This way the whole description should be narrated.

[प्र. २] जया णं भंते ! लवणसमुद्दे दाहिणड्ढे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जति तया णं उत्तरड्ढे वि पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ ? जया णं उत्तरड्ढे पढमा ओसप्पिणी पडिवज्जइ तया णं लवणसमुद्दे पुरत्थिम–पच्चत्थिमेणं नेवत्थि ओसप्पिणी, णेवत्थि उस्सप्पिणी समणाउसो !

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव समणाउसो !

[प्र. २] भगवन् ! जब लवणसमुद्र के दक्षिणार्द्ध में प्रथम अवसर्पिणी होती है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी प्रथम अवसर्पिणी होती है ? और जब उत्तरार्द्ध में प्रथम अवसर्पिणी होती है, तब क्या लवणसमुद्र के पूर्व-पश्चिम में अवसर्पिणी नहीं होती ? उत्सर्पिणी नहीं होती ? किन्तु हे दीर्घजीवी श्रमणपुंगव ! क्या वहाँ अवस्थित (अपरिवर्तनीय) काल होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (यह इसी तरह होता है।) अर्थात् वहाँ अवस्थित काल कहा गया है।

[Q. 2] *Bhante* ! In the southern half of Lavan Samudra, when it is the first *Avasarpini* (the first regressive cycle of time) then in the northern half too is it the first *Avasarpini* ? And when it is the first *Avasarpini* in the northern half then in the region east and west of the Lavan Samudra is there neither *Avasarpini* nor *Utsarpini* but *Avasthit Kaal* (changeless time), O Long lived *Shraman* ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that—)... and so on up to... *Avasthit Kaal* (changeless time), O Long lived *Shraman*.

२३. [प्र.] धायइसंडेणं भंते ! दीवे सूरिया उदीण–पाईणमुग्गच्छ···?

[उ.] जहेव जंबुद्दीवस्स वत्तव्वया भणिया सच्चेव धायइसंडस्स वि भाणियव्वा, नवरं इमेणं अभिलावेणं सव्वे आलावगा भाणियवा–जया णं भंते !

[प्र.] धायईसंडे दीवे दाहिणड्ढे दिवसे भवति तया णं उत्तरड्ढे वि ? जया णं उत्तरड्ढे वि तया णं धायइसंडे दीवे मंदराणं पव्वयाणं पुरत्थिम–पच्चत्थिमेणं राई भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! एवं जाव राई भवति।

२३. [प्र. १] भगवन् ! धातकीखण्ड द्वीप में सूर्य, ईशानकोण में उदय होकर क्या अग्निकोण में अस्त होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

[उ.] हे गौतम ! जिस प्रकार की वक्तव्यता जम्बूद्वीप के सम्बन्ध में कही गई है, उसी प्रकार की सारी वक्तव्यता धातकीखण्ड के विषय में भी कहनी चाहिए। परन्तु विशेष यह है कि इस पाठ का उच्चारण करते समय सभी आलापक इस प्रकार कहने चाहिए।

[प्र. २] भगवन् ! जब धातकीखण्ड के दक्षिणार्द्ध में दिन होता है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी दिन होता है ? और जब उत्तरार्द्ध में दिन होता है, तब क्या धातकीखण्ड द्वीप के मन्दर पर्वतों से पूर्व-पश्चिम में रात्रि होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! यह इसी तरह (होता है।) यावत् रात्रि होती है।

23. [**Q. 1**] *Bhante* ! In the Dhataki Khand continent do suns rise in the north-east (*Ishan Kone*) and set in the south-east (*Agneya Kone*) ? (Repeat the complete question as asked in case of Jambudveep.)

[**Ans.**] Gautam ! What has been stated about the suns of Jambudveep should be repeated here verbatim about suns of Dhataki Khand continent. The difference is that the name should be changed. This way the whole description should be narrated.

[**Q. 2**] *Bhante* ! When it is day in the southern half of Dhataki Khand, is it also day in its northern half ? And when there is day in the northern half of Dhataki Khand, is there night on the east and west of the Mandar mountain in Dhataki Khand ?

[**Ans.**] Yes, Gautam ! (It is like that)... and so on up to... there is night on the east and west of the Mandar mountain ?

२४. [प्र.] जया णं भंते ! धायइसंडे दीवे मंदराणं पव्वयाणं पुरत्थिमेणं दिवसे भवति तया णं पच्चत्थिमेणं वि ? जया णं पच्चत्थिमेण वि तया णं धायइसंडे दीवे मंदराणं पव्वयाणं उत्तरदाहिणेणं राई भवति ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव भवति। एवं एएणं अभिलावेणं णेयव्वं जाव०।

२४. [प्र.] भगवन् ! जब धातकीखण्ड द्वीप के मन्दर पर्वतों से पूर्व में दिन होता है, तब क्या पश्चिम में भी दिन होता है? और जब पश्चिम में दिन होता है, तब क्या धातकीखण्ड द्वीप के मन्दर पर्वतों से उत्तर-दक्षिण में रात्रि होती है?

[उ.] हाँ, गौतम ! (यह इसी तरह होता है), यावत् (रात्रि) होती है और इसी अभिलाप से जानना चाहिए, यावत्-

24. [Q.] *Bhante* ! When it is day on the east of the Mandar mountain, is it also day on the west of Mandar mountain ? And when there is day on the east of the Mandar mountain, is there night on the south and north of the Mandar mountain in Dhataki Khand ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that; which means—) there is night on its north and south. The rest should be repeated like this.

२५. [प्र.] जया णं भंते ! दाहिणड्ढे पढमा ओसप्पिणी तया णं उत्तरड्ढे, जया णं उत्तरड्ढे तया णं धायइसंडे दीवे मंदराणं पव्वयाणं पुरत्थिम-पच्चत्थिमेणं णेवत्थि ओसप्पिणी जाव समणाउसो !

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव समणाउसो !

२५. [प्र.] भगवन् ! जब दक्षिणार्द्ध में प्रथम अवसर्पिणी होती है, तब क्या उत्तरार्द्ध में भी प्रथम अवसर्पिणी होती है? और जब उत्तरार्द्ध में प्रथम अवसर्पिणी होती है, तब क्या धातकीखण्ड द्वीप के मन्दर पर्वतों से पूर्व-पश्चिम में भी अवसर्पिणी नहीं होती? यावत् उत्सर्पिणी नहीं होती? परन्तु आयुष्मान् श्रमणवर्य ! क्या वहाँ अवस्थितकाल होता है?

[उ.] हाँ, गौतम ! (यह इसी तरह होता है), यावत् हे आयुष्मान् श्रमणवर्य ! वहाँ अवस्थित काल होता है।

25. [Q.] *Bhante* ! In the southern half, when it is the first *Avasarpini* (the first regressive cycle of time) then in the northern half too is it the first *Avasarpini* ? And when it is the first *Avasarpini* in the northern half then in the region east and west of the Mandar mountain in Dhataki Khand is there neither *Avasarpini* nor *Utsarpini* but *Avasthit Kaal* (changeless time), O Long lived *Shraman* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! (It is like that—)... and so on up to... *Avasthit Kaal* (changeless time), O Long lived *Shraman.*

२६. जहा लवणसमुद्दस्स वत्तव्वया तहा कालोदस्स वि भाणियव्वा, नवरं कालोदस्स नामं भाणियव्वं।

२६. जैसे लवणसमुद्र के विषय में वक्तव्यता कही, वैसे कालोद (कालोदधि) के सम्बन्ध में भी कह देनी चाहिए। विशेष इतना ही है कि वहाँ लवणसमुद्र के स्थान पर कालोदधि का नाम कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

26. As has been stated about Lavan Samudra so should be repeated for Kaalod (Kaalodadhi Sea). The only difference being that instead of Lavan Samudra Kaalodadhi should be said.

२७. [प्र.] अब्भिंतरपुक्खरद्धे णं भंते ! सूरिया उदीण–पाईणमुग्गच्छ जहेव धायइसंडस्स वत्तव्वया तहेव अब्भिंतरपुक्खरद्धस्स वि भाणियव्वा ?

[उ.] नवरं, अभिलावो जाणेयव्वो जाव तया णं अब्भिंतरपुक्खरद्धे मंदराणं पुरत्थिम–पच्चत्थिमेणं नेवत्थि ओसप्पिणी नेवत्थि उस्सप्पिणी, अवट्ठिते णं तत्थ काले पन्नत्ते समणाउसो !

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ पंचमसयए पढमो उद्देसओ समत्तो ॥

२७. [प्र.] भगवन् ! आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध में सूर्य ईशानकोण में उदय होकर अग्निकोण में अस्त होते हैं ? इत्यादि प्रश्न ?

[उ.] जिस प्रकार धातकीखण्ड की वक्तव्यता कही गई, उसी प्रकार आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध की वक्तव्यता कहनी चाहिए। विशेष यह है कि धातकीखण्ड के स्थान में आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध का नाम कहना चाहिए; यावत् आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध में मन्दर पर्वतों के पूर्व–पश्चिम में न तो अवसर्पिणी है और न ही उत्सर्पिणी है, किन्तु हे आयुष्मन् ! श्रमण ! वहाँ सदैव अवस्थित (अपरिवर्तनीय) काल कहा गया है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ! भगवन् ! यह इसी प्रकार है' यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

॥ पंचम शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

27. [Q.] *Bhante* ! In the inner Pushkarardh continent do suns rise in the north-east (*Ishan Kone*) and set in the south-east (*Agneya Kone*) ? And the following questions as aforesaid.

[Ans.] As has been stated about Dhataki Khand so should be repeated for inner Pushkarardh continent. The only difference being that instead of Dhataki Khand inner Pushkarardh should be said... and so on up to... in the region east and west of the Mandar mountain in inner Pushkarardh continent there is neither *Avasarpini* nor *Utsarpini* but *Avasthit Kaal* (changeless time), O Long lived *Shraman*.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE FIRST LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : द्वितीय उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : SECOND LESSON

अनिल ANIL (WIND)

स्निग्ध पथ्यादि वायु MOIST AND NOURISHING WIND

इस उद्देशक में चार प्रकार की वायु का तथा लवणसमुद्र आदि की लम्बाई-ऊँचाई का वर्णन है।

This chapter describes four kinds of wind and the dimensions of Lavan Samudra.

१. रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी–

२. [प्र.] अत्थि णं भंते ! ईसिं पुरेवाया, पच्छा वाया, मंदा वाया, महावाया वायंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

१. राजगृह नगर में यावत् (श्री गौतम स्वामी ने) भगवान से इस प्रकार पूछा–

२. [प्र.] भगवन् ! क्या **ईषत्पुरोवात** (ओस आदि से कुछ स्निग्ध या चिकनी व कुछ गीली हवा), **पथ्यवात** (वनस्पति आदि के लिए हितकर वायु), **मन्दवात** (धीमे-धीमे चलने वाली हवा) तथा **महावात** (तीव्र गति से चलने वाली, प्रचण्ड तूफानी वायु, झंझावात, या आँधी आदि) बहती हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! पूर्वोक्त वायु (हवाएँ) बहती हैं।

1. In Rajagriha city... and so on up to... (Shri Gautam Swami) submitted—

2. [Q.] *Bhante* ! Do these winds blow ?—*Ishatpurovaat* (moist breeze), *Pathyavaat* (wind healthy for vegetation), *Mandavaat* (zephyr or soft and gentle breeze) and *Mahavaat* (stormy wind; gale or tempest) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! The said winds blow.

३. [प्र.] अत्थि णं भंते ! पुरत्थिमेणं ईसिं पुरेवाया, पच्छा वाया, मंदा वाया, महावाया वायंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

३. [प्र.] भगवन् ! क्या पूर्व दिशा से ईषत्पुरोवात, पथ्यवात, मन्दवात और महावात बहती हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (उपर्युक्त समस्त वायु पूर्व दिशा में) बहती हैं।

3. [Q.] Do the *Ishatpurovaat* (moist breeze), *Pathyavaat* (wind healthy for vegetation) and *Mandavaat* (zephyr or soft and gentle breeze), *Mahavaat* (stormy wind; gale or tempest) blow in the east ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do (blow in the east).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. एवं पच्चत्थिमेणं, दाहिणेणं, उत्तरेणं, उत्तर-पुरत्थिमेणं, पुरत्थिम-दाहिणेणं, दाहिण-पच्चत्थिमेणं, पच्छिम-उत्तरेणं।

४. इसी तरह पश्चिम में, दक्षिण में, उत्तर में, ईशानकोण में, आग्नेयकोण में, नैऋत्यकोण में और वायव्यकोण में (पूर्वोक्त सब वायु बहती हैं।)

4. In the same way they (all the aforesaid winds) also blow in the west, south, north, north-east (*Ishan Kone*), south-east (*Agneya Kone*), south-west (*Nairitya Kone*) and south-east (*Vayavya Kone*).

५. [प्र.] जया णं भंते ! पुरित्थिमेणं ईसिं पुरेवाया पच्छावाया मंदावाया महावाया वायंति तया णं पच्चत्थिमेण वि ईसिं पुरेवाया० ? जया णं पच्चत्थिमेणं ईसिंपुरेवाया० तया णं पुरत्थिमेण वि ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जया णं पुरत्थिमेणं तदा णं पच्चत्थिमेण वि ईसिं, जया णं पच्चत्थिमेणं तदा णं पुरत्थिमेण वि ईसिं। एवं दिसासु, विदिसासु।

५. [प्र.] भगवन् ! जब पूर्व में ईषत्पुरोवात, पथ्यवात, मन्दवात और महावात बहती हैं, तब क्या पश्चिम में भी ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ बहती हैं ? और जब पश्चिम में ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं, तब क्या पूर्व में भी (वे हवाएँ) बहती हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जब पूर्व में ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ बहती हैं, तब वे सब पश्चिम में भी बहती हैं और जब पश्चिम में ईषत्पुरोवात आदि बहती हैं, तब वे सब हवाएँ पूर्व में भी बहती हैं। इसी प्रकार सब दिशाओं, विदिशाओं में भी उपर्युक्त कथन करना चाहिए।

5. [Q.] *Bhante* ! When the *Ishatpurovaat* (moist breeze), *Pathyavaat* (wind healthy for vegetation), *Mandavaat* (zephyr or soft and gentle breeze) and *Mahavaat* (stormy wind; gale or tempest) blow in the east, do they also blow in the west ? And when they blow in the west do they also blow in the east ?

[Ans.] Yes, Gautam ! When the aforesaid winds blow in the east, they also blow in the west; and when they blow in the west they also blow in the east. In the same way this statement should be repeated for all cardinal and intermediate directions.

६. *[प्र.] अत्थि णं भंते ! दीविच्चया ईसिं ?*

[उ.] हंता, अत्थि।

७. [प्र.] अत्थि णं भंते ! सामुद्दया ईसिं पुरेवाया ?

[उ.] हंता, अत्थि।

६. [प्र.] भगवन् ! क्या द्वीप में भी ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ होती हैं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हाँ, गौतम ! होती हैं।

७. [प्र.] भगवन् ! क्या समुद्र में भी ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ होती हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (समुद्र में भी ये सब हवाएँ) होती हैं।

6. [Q.] *Bhante* ! Do these winds also exist on continents ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

7. [Q.] *Bhante* ! Do these winds also exist on seas ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

८. [प्र. १] जया णं भंते ! दीविच्चया ईसिं पुरेवाया तया णं सामुद्दया वि ईसिं पुरेवाया, जया णं सामुद्दया ईसिं पुरेवाया तया णं दीविच्चया वि ईसिं पुरेवाया ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति जया णं दीविच्चया ईसिं पुरेवाया णो णं तया सामुद्दया ईसिं पुरेवाया, जया णं सामुद्दया ईसिं पुरेवाया णो णं तया दीविच्चया ईसिं पुरेवाया ?

[उ.] गोयमा ! तेसि णं वायाणं अन्नमन्नस्स विवच्चासेणं लवणे समुद्दे वेलं नायिक्कमति। से तेणट्ठेणं जाव वाता वायंति।

८. [प्र. १] भगवन् ! जब द्वीप में ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं, तब क्या समुद्र की भी ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं ? और जब समुद्र की ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं, तब क्या द्वीप की भी ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं ?

[उ.] हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ (शक्य) नहीं है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि जब द्वीप की ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ बहती हैं, तब समुद्र की ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ नहीं बहतीं और जब समुद्र की ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ बहती हैं, तब द्वीप की ईषत्पुरोवात आदि हवाएँ नहीं बहतीं ?

[उ.] गौतम ! ये सब वायु (हवाएँ) परस्पर व्यत्यासरूप से (एक-दूसरे के विपरीत, पृथक्-पृथक् तथा एक-दूसरे के साथ नहीं) बहती हैं। (जब द्वीप की ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं, तब समुद्र की वायु नहीं बहतीं और जब समुद्र की ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं, तब द्वीप की ये सब वायु नहीं बहतीं। इस प्रकार ये सब हवाएँ एक-दूसरे के विपरीत बहती हैं।) साथ ही, वे वायु लवणसमुद्र की वेला (ऊपर उठती लहरों या ज्वार-भाटा) का उल्लंघन नहीं करतीं। इस कारण यावत् वे वायु पूर्वोक्त रूप से बहती हैं।

8. [Q. 1] *Bhante* ! When the aforesaid winds blow on the continents, do they also blow on the seas; and when they blow on the seas do they also blow on the continents ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] No, Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that when the aforesaid winds blow on the continents, they do not blow on the seas; and when they blow on the seas they do not blow on the continents ?

[Ans.] Gautam ! These winds are different (different and opposite for continents and seas; which means that when these winds blow on the continent they either do not blow on the seas or blow in the opposite direction). Also these winds (on the Salt Sea) do not violate the limits of Lavan Samudra (Salt Sea). That is why they blow as aforesaid.

वायु का स्वरूप NATURE OF WINDS

९. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! ईसिं पुरेवाया पच्छावाया मंदावाया महावाया वायंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] कया णं भंते ! ईसिं पुरेवाया जाव वायंति ?

[उ.] गोयमा ! जया णं वाउयाए अहारियं रियंति तया णं ईसिं पुरेवाया जाव वायंति।

९. [प्र. १] भगवन् ! क्या ईषत्पुरोवात, पथ्यवात, मन्दवात और महावात बहती हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (ये सब) बहती हैं।

[प्र. २] भगवन् ! ईषत्पुरोवात आदि वायु कब बहती हैं ?

[उ.] गौतम ! जब वायुकाय अपने स्वभावपूर्वक गति करता है, तब ईषत्पुरोवात आदि वायु यावत् बहती हैं।

9. [Q. 1] *Bhante* ! Do the *Ishatpurovaat* (moist breeze), *Pathyavaat* (wind healthy for vegetation), *Mandavaat* (zephyr or soft and gentle breeze) and *Mahavaat* (stormy wind; gale or tempest) blow ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They all do.

[Q. 2] *Bhante* ! When these winds including *Ishatpurovaat* blow ?

[Ans.] Gautam ! Winds including *Ishatpurovaat* blow when air-bodied beings (*vayu-kaya*) indulge in their natural movement.

१०. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! ईसिं पुरेवाया ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] कया णं भंते ! ईसिं पुरेवाया ?

[उ.] गोयमा ! जया णं वाउयाए उत्तरकिरियं रियइ तया णं ईसिं पुरेवाया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. [प्र. १] भगवन् ! क्या ईषत्पुरोवात आदि वायु हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! हैं।

[प्र. २] भगवन् ! ईषत्पुरोवात आदि वायु (और भी) कब चलती हैं ?

[उ.] हे गौतम ! जब वायुकाय उत्तरक्रियापूर्वक (वैक्रियशरीर बनाकर) गति करती है, तब ईषत्पुरोवात आदि वायु बहती हैं।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Do the *Ishatpurovaat* (moist breeze) and other winds exist ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They all do.

[Q. 2] *Bhante* ! When these winds including *Ishatpurovaat* come into existence ?

[Ans.] Gautam ! Winds including *Ishatpurovaat* come into existence when air-bodied beings (*vayu-kaya*) indulge in movement by creating secondary transmuted body (*uttar-vaikriya sharira*).

११. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! ईसिं पुरेवाया ?

[उ.] हंता, अत्थि।

११. [प्र. १] भगवन् ! क्या ईषत्पुरोवात आदि वायु (ही) हैं (न) ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे (सब वायु ही) हैं।

11. [Q. 1] *Bhante* ! Are the *Ishatpurovaat* (moist breeze) etc. winds ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They are.

[प्र. २] कया णं भंते ! ईसिं पुरेवाया पच्छावाया० ?

[उ.] जया णं वाउकुमारा वाउकुमारीओ वा अप्पणो वा परस्स वा तदुभयस्स वा अट्ठाए वाउकायं उदीरेंति तया णं ईसिं पुरेवाया, ... जाव वायंति।

[प्र. २] भगवन् ! ईषत्पुरोवात, पथ्यवात आदि (और) कब (किस समय में) चलती हैं ?

[उ.] गौतम ! जब वायुकुमार देव और वायुकुमार देवियाँ, अपने लिए, दूसरों के लिए या दोनों के लिए वायुकाय की उदीरणा करते हैं, तब ईषत्पुरोवात आदि वायु यावत् .... चलती (बहती) हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! When these winds including *Ishatpurovaat* come into existence and blow ?

[Ans.] Gautam ! winds including *Ishatpurovaat* come into existence and blow when Vayu Kumar gods and goddesses fructify or precipitate (*udirana*) air-bodied beings (*vayu-kaya*) for themselves or others or both.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. [प्र.] वाउकाए णं भंते ! वाउकायं चेव आणमति वा पाणमति वा ?

[उ.] जहा खंदए तहा चत्तारि आलावगा नेयव्वा–अणेगसतसहस्स०। पुट्ठे उद्दाइ वा। ससरीरी निक्खमइ।

१२. [प्र.] भगवन् ! क्या वायुकाय वायुकाय को ही श्वासरूप में ग्रहण करता है और निःश्वासरूप में छोड़ता है ?

[उ.] गौतम ! इस सम्बन्ध में स्कन्दक परिव्राजक के उद्देशक में कहे अनुसार चार आलापक जानना चाहिए–यावत् (१) अनेक लाख बार मरकर, (२) स्पृष्ट हो (स्पर्श पा) कर, (३) मरता है, और (४) शरीर-सहित निकलता है।

12. [Q.] *Bhante* ! Do the air-bodied beings inhale and exhale air-bodied beings in there respiration ?

[Ans.] Gautam ! In this regard refer to the four statements in the Chapter on Skandak... and so on up to... (1) dies many hundred thousand times; (2) by being touched; (3) dies and (4) moves out with body.

विवेचन : उक्त १२ सूत्रों का निष्कर्ष इस प्रकार है–(१) ईषत्पुरोवात आदि चारों प्रकार की वायु चलती हैं। (२) ये सब सुमेरु से पूर्वादि चारों दिशाओं और ईशानादि चारों विदिशाओं में चलती हैं। (३) ये पूर्व में बहती हैं, तब पश्चिम में भी बहती हैं और पश्चिम में बहती हैं, तब पूर्व में भी। (४) द्वीप और समुद्र में भी ये सब वायु होती हैं। (५) किन्तु जब ये द्वीप में बहती हैं, तब समुद्र में नहीं बहतीं और समुद्र में बहती हैं, तब द्वीप में नहीं बहतीं, क्योंकि ये सब एक-दूसरे से विपरीत पृथक्-पृथक् बहती हैं, लवणसमुद्रीय वेला का अतिक्रमण नहीं करतीं। (६) ईषत्पुरोवात आदि वायु हैं और वे तीन समय में तीन कारणों से चलती हैं–(I) जब वायुकाय स्व-स्वभावपूर्वक गति करता है, (II) जब वह उत्तरवैक्रिय से वैक्रिय शरीर बनाकर गति करता है, तथा (III) जब वायुकुमार देव-देवीगण स्व, पर एवं उभय के निमित्त वायुकाय की उदीरणा करते हैं। (७) वायुकाय अचित्त हुए वायुकाय को ही श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करता-छोड़ता है।

द्वीपीय और समुद्रीय हवाएँ एक साथ नहीं बहतीं–इसका तात्पर्य यह है कि जिस समय अमुक प्रकार की ईषत्पुरोवात आदि वायु चलती है, तब उसी प्रकार की दूसरी ईषत्पुरोवात आदि वायु नहीं चलती। इसका कारण है–वायु के द्रव्यों का स्वभाव एवं सामर्थ्य ऐसा है कि वह समुद्र की वेला का अतिक्रमण नहीं करतीं। इसका आशय यह भी सम्भव है–ग्रीष्म ऋतु में समुद्र की ओर से आई हुई शीत (जल से स्निग्ध एवं ठण्डी) वायु जब चलती है, तब द्वीप की जमीन से उठी हुई उष्ण वायु नहीं चलती। शीत ऋतु में जब गर्म हवाएँ चलती हैं, तब वे द्वीप की जमीन से आई हुई होती हैं। यानी जब द्वीपीय उष्ण वायु चलती है, तब समुद्रीय शीत वायु नहीं चलती। समुद्र की शीतल और द्वीप की उष्ण दोनों हवाएँ परस्पर विरुद्ध तथा परस्पर उपघातक होने से ये दोनों एक साथ नहीं चलतीं अपितु उन दोनों में से एक ही वायु चलती है। *(स्कन्दक के प्रश्नोत्तर, शतक २, उ. १, देखें)*

Elaboration—The gist of these 12 aphorism is as follows—(1) Four types of winds including *Ishatpurovaat* blow. (2) They blow in all the four cardinal directions and intermediate directions of the Meru Mountain.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(3) When they blow in the east they also blow in the west and vice versa. (4) All these winds exist on continents as well as seas. (5) However, when they blow on the continents they do not blow on the seas and vice versa. This is because they are different and opposite. They also do not violate the boundaries of Lavan Samudra. (6) *Ishatpurovaat* etc. are winds and they blow for three different reasons at three different times—(a) when air-bodied beings move naturally; (b) when air-bodied beings indulge in movement by creating secondary transmuted body (*uttar-vaikriya sharira*); and (c) when Vayu Kumar gods and goddesses precipitate air-bodied beings for themselves or others or both. (7) Air-bodied beings inhale and exhale dead air-bodied beings only.

The continental and oceanic winds do not blow at the same time. This statement means that when one type of wind blows other type of wind does not. The reason for this is that the properties and capacity of the constituent matter of these winds is such that they do not violate the boundaries of the sea. Another interpretation of this could be that in the summer when the moist and cold wind from the sea blows, the hot winds coming from the land do not blow. In the winter when the hot winds blow they come from the land. In other words when continental hot winds blow, the oceanic cold winds do not. As the hot continental winds and cold oceanic winds are mutually opposed and destructive they do not blow at the same time, only one of them blows. *(Shandak; Shatak-2, lesson 1)*

ओदन आदि के शरीर **BODIES OF RICE ETC.**

१३. [प्र.] अह भंते ! ओदणे, कुम्मासे, सुरा, एए णं किंसरीरा ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! ओदणे, कुम्मासे, सुराए, य जे घणे दव्वे एए णं पुव्वभावपण्णवणं पडुच्च वणस्सतिजीवसरीरा, तओ पच्छा सत्थातीता सत्थपरिणामिया अगणिज्झामिया अगणिज्झूसिया अगणिसेविया, अगणिपरिणामिया अगणिजीवसरीरा इ वत्तव्वं सिया। सुराए य जे दवे दव्वे एए णं पुव्वभावपण्णवणं पडुच्च आउजीवसरीरा, तओ पच्छा सत्थातीआ जाव अगणिसरीरा ति वत्तव्वं सिया।

१३. [प्र.] भगवन् ! ओदन (चावल), कुल्माष (उड़द) और सुरा (मदिरा); इन तीनों द्रव्यों का शरीर किन जीवों का कहना चाहिए ?

[उ.] गौतम ! ओदन, कुल्माष और सुरा में जो घन (ठोस या कठिन) द्रव्य हैं, वे **पूर्वभाव–प्रज्ञापना** (पूर्वावस्था) की अपेक्षा से वनस्पतिजीव के शरीर हैं। उसके पश्चात् जब वे (ओदनादि द्रव्य) **शस्त्रातीत** (ऊखल, मूसल आदि शस्त्रों से कूटे जाकर पूर्व पर्याय से मुक्त) हो जाते हैं, **शस्त्र–परिणत** (शस्त्र लगने से नये रूप में परिवर्तित) हो जाते हैं; **अग्निध्यामित** (आग में जलाये गए एवं काले वर्ण के बने हुए),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अग्निझूषित (अग्नि से तप्त हो जाने से पूर्व स्वभाव से रहित) अग्निसेवित और अग्निपरिणामित (अग्नि में जल जाने से नये आकार में परिवर्तित) हो जाते हैं, तब वे द्रव्य अग्नि के शरीर कहलाते हैं तथा सुरा (मदिरा) में जो तरल पदार्थ है, वह पूर्वभाव-प्रज्ञापना (भूतपूर्व शरीर) की अपेक्षा से अप्कायिक जीवों का शरीर है और जब वह तरल पदार्थ (पूर्वोक्त प्रकार से) शस्त्रातीत यावत् अग्निपरिणामित हो जाता है, तब वह भाग, अग्निकाय-शरीर कहा जा सकता है।

13. [Q.] *Bhante* ! To what category of living beings do the bodies of rice (odan), *Kulmash* (*Udad*; a pulse) and wine (*Sura*) belong ?

[Ans.] Gautam ! The solid part of rice (*odan*), *Kulmash* (*Udad*; a pulse) and wine (*Sura*) are the bodies of plant-bodied beings in terms of their earlier or original state. After that when they are processed with implements (*shastrateet*), such as mortar and grinder; when they are mechanically transformed (*shastra-parinat*); when they are roasted in fire (*agnidhyamit*); when they loose their properties due to fire (*agnijhushit*); when they are cooked in fire (*agnisevit*) and when they are transformed by fire (*agniparinamit*) they are called bodies of fire-bodied beings. The liquid part of wine are the bodies of water-bodied beings in terms of their earlier or original state and when that liquid part is transformed by implements and fire, it is called bodies of fire-bodied beings.

लोह आदि के शरीर **BODIES OF IRON ETC.**

१४. [प्र.] अह णं भंते ! अये, तंबे, तउए, सीसए, उवले, कसट्टिया, एए णं किंसरीरा इ वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! अए तंबे, तउए, सीसए, उवले, कसट्टिया, एए णं पुव्वभावपण्णवणं पडुच्च पुढविजीवसरीरा, तओ पच्छा सत्थातीता जाव अगणिजीवसरीरा ति वत्तव्वं सिया।

१४. [प्र.] भगवन् ! लोहा, ताँबा, त्रपुष् (कलई या रांगा), शीशा, उपल (जला हुआ पत्थर-कोयला) और कसट्टिका (लोहे का काट-मैल); ये सब द्रव्य किन (जीवों के) शरीर कहलाते हैं ?

[उ.] गौतम ! लोहा, ताँबा, कलई, शीशा, कोयला और लोहे का काट; ये सब द्रव्य-पूर्व अवस्था की अपेक्षा से पृथ्वीकायिक जीवों के शरीर कहे जा सकते हैं और उसके बाद शस्त्रातीत यावत् शस्त्र-परिणामित होने पर ये अग्निकायिक जीवों के शरीर कहे जा सकते हैं।

14. [Q.] *Bhante* ! To what category of beings do the bodies of iron, copper, tin, lead, coal and rust belong ?

[Ans.] Gautam ! Iron, copper, tin, lead, coal and rust are the bodies of earth-bodied beings in terms of their earlier or original state. After that

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

when they are processed with implements and undergo transformation they may be called bodies of fire-bodied beings.

अस्थि आदि के शरीर BODIES OF BONES ETC.

१५. [प्र.] अह भंते ! अट्ठी अट्ठिज्झामे, चम्मे चम्मज्झामे, रोमे रोमज्झामे, सिंगे सिंगज्झामे, खुरे खुरज्झामे, नखे नखज्झामे, एते णं किंसरीरा ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठी, चम्मे, रोमे, सिंगे, खुरे नहे, एए णं तसपाणजीवसरीरा। अट्ठिज्झामे चम्मज्झामे रोमज्झामे सिंगज्झामे खुरज्झामे णहज्झामे, एए णं पुव्वभावपण्णवणं पडुच्च तसपाणजीवसरीरा, ततो पच्छा सत्थातीता जाव अगणित्ति वत्तव्वं सिया।

१५. [प्र.] भगवन् ! ये हड्डी, अस्थिध्याम (अग्नि से दूसरे स्वरूप को प्राप्त हड्डी और उसका जला हुआ भाग), चमड़ा, चमड़े का जला हुआ भाग, रोम, अग्नि ज्वलित रोम, सींग, अग्नि प्रज्वलित विकृत सींग, खुर, अग्नि प्रज्वलित खुर, नख और अग्नि प्रज्वलित नख; ये सब किन (जीवों) के शरीर कहे जा सकते हैं ?

[उ.] गौतम ! अस्थि (हड्डी), चमड़ा, रोम, सींग, खुर और नख; ये सब त्रस जीवों के शरीर कहे जा सकते हैं और जली हुई हड्डी, प्रज्वलित विकृत चमड़ा, जले हुए रोम, प्रज्वलित-रूपान्तर प्राप्त सींग, प्रज्वलित खुर और प्रज्वलित नख; ये सब पूर्वभावप्रज्ञापना (भूतपूर्व शरीर) की अपेक्षा से तो त्रस जीवों के शरीर, किन्तु उसके पश्चात् शस्त्रातीत यावत् अग्निपरिणामित होने पर ये अग्निकायिक जीवों के शरीर कहे जा सकते हैं।

15. [**Q.**] *Bhante* ! To what category of living beings do the bodies of bone, burnt bone, skin, burnt skin, pelt, burnt pelt, horn, burnt horn, hoof, burnt hoof, nail and burnt nail belong ?

[**Ans.**] Gautam ! Bone, skin, pelt, horn, hoof, nail these all are bodies of mobile beings (*tras jiva*). Burnt bone, burnt skin, burnt pelt, burnt horn, burnt hoof, burnt nail are the bodies of mobile beings in terms of their earlier or original state. After that when they are processed with implements... and so on up to... fire and undergo transformation they may be called bodies of fire-bodied beings.

१६. [प्र.] अह भंते ! इंगाले, छारिए, भुसे, गोमए एए णं किंसरीरा ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! इंगाले, छारिए, भुसे, गोमए, एए णं पुव्वभावपण्णवणाए एगिंदियजीवसरीरप्पओगपरिणामिया वि जाव पंचिंदियजीवसरीरप्पओगपरिणामिया वि, तओ पच्छा सत्थातीता जाव अगणिजीवसरीरा ति वत्तव्वं सिया।

१६. [प्र.] भगवन् ! अंगार (कोयला, जला हुआ ईंधन या अंगारा), राख, भूसा और गोबर; इन सबको किन जीवों के शरीर कहे जाएँ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! अंगार, राख, भूसा और गोबर (छाणा); ये सब पूर्वभाव प्रज्ञापना की अपेक्षा से (वनस्पतिकाय रूप) एकेन्द्रिय जीवों द्वारा अपने शरीर रूप से, प्रयोगों से–अपने व्यापार से अपने साथ परिणामित एकेन्द्रिय शरीर हैं, यावत् (यथासम्भव द्वीन्द्रिय से) पंचेन्द्रिय जीवों तक के शरीर भी कहे जा सकते हैं। पंचेन्द्रिय जीवों (पशुओं) के शरीर में द्वीन्द्रियादि जीव चले जाने से उनके शरीर प्रयोग से परिणामित होने से उन्हें द्वीन्द्रिय जीव से लेकर पंचेन्द्रिय जीव तक का शरीर कहा जा सकता है और तत्पश्चात् शस्त्रातीत यावत् अग्निकाय–परिणामित हो जाने पर वे अग्निकायिक जीवों के शरीर कहे जाते हैं।

16. [**Q.**] *Bhante* ! To what category of beings do the bodies of cinder (or other burning matter), ash, hay and cow-dung belong ?

[**Ans.**] Gautam ! In terms of their original state, cinder (or other burning matter), ash, hay and cow-dung all these are bodies and parts thereof of one-sensed beings... and so on up to... five-sensed beings transformed through their natural activities (also one to five-sensed beings entering the bodies of one to five sensed beings and getting transformed through the natural activities of those beings). After that when they are processed with implements... and so on up to... fire and undergo transformation they may be called bodies of fire-bodied beings.

विवेचन : सूत्र १३ से १६ तक के सूत्र परिणामवाद के सिद्धान्त के प्ररूपक हैं। वस्तु (द्रव्य अथवा जीव) जिस भाव में परिणत होती है, वह पूर्व भाव (पूर्व अवस्था) को छोड़कर तत्काल उत्तर अवस्था को प्राप्त हो जाती है।

Elaboration—Aphorisms 13-16 convey the theory of evolutionalism (parinam-vaad). When undergoing transformation a thing (matter or life) leaves its existing state and at once evolves into the secondary state.

लवणसमुद्र की स्थिति DIMENSIONS OF LAVAN-SAMUDRA

१७. [प्र.] लवणे णं भंते ! समुद्दे केवतियं चक्कवाल विक्खंभेणं पन्नत्ते ?

[उ.] एवं णेयव्वं जाव लोगट्ठिती लोगाणुभावे।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं जाव विहरति।

॥ पंचम सए : बिइओ उद्देसओ समत्तो ॥

१७. [प्र.] भगवन् ! लवणसमुद्र का चक्रवाल–विष्कम्भ (सब तरफ की चौड़ाई) कितना कहा है ?

[उ.] गौतम ! (लवणसमुद्र के सम्बन्ध में सारा वर्णन) पहले कहे अनुसार जान लेना चाहिए, यावत् लोकस्थिति लोकानुभाव तक (जीवाभिगमोक्त सूत्रपाठ) कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर भगवान गौतम स्वामी ... यावत् विचरण करने लगे।

17. [Q.] *Bhante* ! What is the circumference (*chakravaal-vishkambh*) of Lavan Samudra (Salt Sea) ?

[Ans.] Gautam ! Repeat the description as mentioned earlier (in *Jivabhigam Sutra*) up to location and nature of *Lok*.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : जीवाभिगम में लवणसमुद्र-सम्बन्धी वर्णन संक्षेप में-लवणसमुद्र का संस्थान गोतीर्थ, नौका, सीप-सम्पुट, अश्वस्कन्ध और वलभी (छप्पर) के जैसा, गोल चूड़ी के आकार का है। उसका चक्रवालविष्कम्भ २ लाख योजन का है तथा १५,८१,१३९ से कुछ अधिक उसका परिक्षेप (घेरा) है। उसका उद्वेध (गहराई) १ हजार योजन है। इसकी ऊँचाई १६ हजार योजन, सर्वाग्र १७ हजार योजन का है। इतने विस्तृत और विशाल लवणसमुद्र से अब तक जम्बूद्वीप क्यों नहीं डूबा, इसका कारण है-भरत और ऐरवत क्षेत्रों में स्वभाव से भद्र, विनीत, उपशान्त, मन्दकषाय, सरल, कोमल, जितेन्द्रिय, भद्र और नम्र अरिहन्त, चक्रवर्ती, बलदेव, चारण, विद्याधर, श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका एवं धर्मात्मा मनुष्य हैं, उनके प्रभाव से लवणसमुद्र जम्बूद्वीप को डुबाता नहीं है, यावत् जलमय नहीं करता यावत् इस प्रकार का लोक का स्वभाव भी है, यहाँ तक कहना चाहिए। *(जीवाभिगमसूत्र, प्रतिपत्ति ३, उद्देशक २, सूत्र १७३; लवणसमुद्राधिकार, पृ. ३२४-३२५)*

॥ पंचम शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Brief description of Lavan Samudra from *Jivabhigam Sutra*—The structure of Lavan Samudra is round like *gotirtha* (cow-shed), boat, oyster, horse's neck, thatched roof (round) or bangle. Its circumference (*chakravaal-vishkambh*) is 2,00,000 Yojans. The area covered is 15,81,139 Yojans. Its depth is 1,000 Yojans. Its average height is 16,000 Yojans. Its highest point is 17,000 Yojans. It is due to the influence of gentle, humble, serene, mild-passioned, simple, delicate, sense-conquered and polite souls like *Arihant*, *Chakravarti*, *Baladev*, *Chaaran*, *Vidyadhar*, *Shraman*, *Shramani*, *Shravak*, *Shravika* and other religious people living in Bharat and Airavat areas that such large and wide Lavan Samudra does not inundate Jambu continent... and so on up to... engulf it; also this is the nature of *Lok*. *(Jivabhigam Sutra 3/2/173; Lavansamudradhikar, pp. 324-325)*

● END OF THE SECOND LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : तृतीय उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : THIRD LESSON

ग्रन्थिका GRANTHIKA (THE KNOT)

आयुबन्ध विषयक अन्यतीर्थिकों की मान्यताएँ **BELIEF OF OTHER SCHOOLS ABOUT LIFE-SPAN BONDAGE**

१. [प्र.] अण्णउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति भासंति पण्णवेंति, परूवेंति,

से जहानामए जालगंठिया सिया आणुपुव्विगढिया, अणंतरगढिया, परंपरगढिया, अन्नमन्नढिया, अन्नमन्नगुरुयत्ताए, अन्नमन्नभारियत्ताए, अन्नमन्नगुरुयसंभारियत्ताए अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठति, एवामेव बहूणं जीवाणं बहूसु आजातिसहस्सेसु बहूइं आउयसहस्साइं आणुपुव्विगढियाइं जाव चिट्ठंति।

एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पडिसंवेदेइ, तं जहा—इहभवियाउयं च परभवियाउयं च; जं समयं इहभवियाउयं पडिसंवेदेइ तं समयं परभवियाउयं पडिसंवेदेइ, जाव से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया तं चेव जाव परभवियाउयं च; जे ते एवमाहंसु तं मिच्छा।

अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि से जहानामए जालगंठिया सिया जाव अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठति, एवामेव एगमेगस्स जीवस्स बहूहिं आजाइसहस्सेहिं, बहूइं आउयसहस्साइं आणुपुव्विगढियाइं जाव चिट्ठंति।

एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पडिसंवेदेइ। तं जहा—इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा, जं समयं इहभवियाउयं पडिसंवेदेइ नो तं समयं परभवियाउयं पडिसंवेदेइ, जं समयं परभवियाउयं पडिसंवेदेइ नो तं समयं इहभवियाउयं पडिसंवेदेइ।

पडिसंवेदेति। एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पडिसंवेदेइ, तं जहा—इहभवियाउयं वा, परभवियाउयं वा।

इहभवियाउयस्स पडिसंवेदणाए, नो परभवियाउयं पडिसंवेदेइ, परभवियाउयस्स पडिसंवेदणाए नो इहभवियाउयं।

१. [प्र.] भगवन् ! अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं, भाषण करते हैं, बतलाते हैं, प्ररूपणा करते हैं–

कि जैसा कोई (एक) जालग्रन्थि (गाँठें लगी हुई, जाल) हो, जिसमें क्रम से गाँठें दी हुई हों, एक के बाद दूसरी अन्तररहित (अनन्तर) गाँठें लगाई हुई हों, परम्परा से गूँथी हुई हों, परस्पर गूँथी हुई हों, ऐसी वह जालग्रन्थि परस्पर विस्तार रूप से, परस्पर भाररूप से तथा परस्पर विस्तार और भाररूप से, परस्पर संघटित रूप से यावत् रहती है, (अर्थात्–जाल तो एक है, लेकिन उसमें जैसे अनेक गाँठें संलग्न रहती हैं) वैसे ही बहुत–से जीवों के साथ क्रमशः हजारों–लाखों जन्मों से सम्बन्धित बहुत–से आयुष्य परस्पर क्रमशः गूँथे हुए हैं, यावत् परस्पर संलग्न रहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऐसी स्थिति में उनमें से एक जीव भी एक समय में दो आयुष्यों को वेदता (भोगता-अनुभव करता) है। यथा-एक ही जीव, इस भव का आयुष्य वेदता है और वही जीव, परभव का भी आयुष्य वेदता है। जिस समय इस भव के आयुष्य का वेदन करता है, उसी समय वह जीव परभव के आयुष्य का भी वेदन करता है; यावत् हे भगवन् ! यह (बात) किस प्रकार है ?

[उ.] गौतम ! उन अन्यतीर्थिकों ने जो यह कहा है कि.... यावत् एक ही जीव, एक ही समय में इस भव का और पर-भव का-दोनों का आयुष्य (एक साथ) वेदता है, उनका यह सब कथन मिथ्या है।

-"हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि-जैसे कोई एक जालग्रन्थि हो और वह यावत्...परस्पर संघटित (सामूहिक रूप से संलग्न) रहती है, इसी प्रकार क्रमपूर्वक बहुत-से सहस्रों जन्मों से सम्बन्धित, बहुत-से हजारों आयुष्य, एक-एक जीव के साथ शृंखला (साँकल) की कड़ी के समान परस्पर क्रमशः ग्रथित (गूँथे हुए) यावत् रहते हैं।

(ऐसा होने से) एक जीव एक समय में एक ही आयुष्य का प्रतिसंवेदन (अनुभव) करता है, जैसे कि-या तो वह इस भव का ही आयुष्य वेदता है, अथवा पर-भव का ही आयुष्य वेदता है। परन्तु जिस समय इस भव के आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है, उस समय पर-भव के आयुष्य का प्रतिसंवेदन नहीं करता, और जिस समय परभव के आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है, उस समय इस भव के आयुष्य का प्रतिसंवेदन नहीं करता।

इस भव के आयुष्य का वेदन करने से पर-भव का आयुष्य नहीं वेदा जाता और पर-भव के आयुष्य का वेदन करने से इस भव का आयुष्य नहीं वेदा जाता।

इस प्रकार एक जीव एक समय में एक ही आयुष्य का वेदन करता है; वह इस प्रकार, या तो इस भव के आयुष्य का, अथवा परभव के आयुष्य का।

1. [Q.] *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*), assert (*bhashanti*), elaborate (*prajnapayanti*) and propagate (*prarupayanti*) that—

Suppose there is a net in which knots have been tied one after another without a gap in a continuous series and tied to each other. And the said knotted net exists in its entire expanse, in its entire weight, in its entire expanse and weight, and its integrated form. (In other words the net is one but it is composed of numerous integrated knots.) In the same way hundreds of thousands of life-spans related to hundreds of thousands of births are progressively intertwined with each other... and so on up to... exist in integrated form.

In these conditions any one of these living beings lives and experiences two life-spans at the same time. Which means that the same being experiences the life-span (*ayushya*) of this birth (*bhava*) as well as

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

that of the next birth. When he experiences the life-span (*ayushya*) of this birth, at the same time he also experiences the life-span (*ayushya*) of the next birth... and so on up to... *Bhante* ! How is it so ?

[Ans.] Gautam ! According to you the *anyatirthiks* (heretics) say... and so on up to... the same being experiences the life-span (*ayushya*) of this birth (*bhava*) as well as that of the next birth. What they say is all false or wrong.

Gautam ! I say (*akhyanti*)... and so on up to... and propagate (*prarupayanti*) that—Suppose there is a net in which knots have been tied... and so on up to... its integrated form. In the same way hundreds of thousands of life-spans related to hundreds of thousands of births are progressively intertwined with each other... and so on up to... exist in integrated form.

In these conditions any one of these living beings lives and experiences only one life-span (*ayushya*) at any one given time. Which means that the same being either experiences the life-span (*ayushya*) of this birth (*bhava*) or that of the next birth. When he experiences the life-span (*ayushya*) of this birth at that time he does not experience the life-span (*ayushya*) of the next birth, and when he experiences the life-span (*ayushya*) of the next birth at that time he does not experience the life-span (*ayushya*) of this birth.

By experiencing the life-span (*ayushya*) of this birth one cannot experience the life-span (*ayushya*) of the next birth, and by experiencing the life-span (*ayushya*) of the next birth one cannot experience the life-span (*ayushya*) of this birth.

This way one being experiences the life span of one birth at any one given time. Which means he can either experience the life-span (*ayushya*) of this birth or that of the next birth.

विवेचन : अन्यतीर्थिकों की इस मान्यता का उल्लेख पतंजलि के योग दर्शन २/१३ में मिलता है। टीकाकार का स्पष्टीकरण है कि यदि सब जीवों के सब आयुष्य का संवेदन एक साथ हो तो एक जन्म में अनेक जन्मों के संवेदन का प्रसंग आ जायेगा। जो असंगत है। *(भगवती वृत्ति)*

Elaboration—This belief of other schools finds mention in Patanjali's *Yoga Sutra* (2/13). The commentator (*Tika*) explains that if all beings could experience life-spans of all their births at once, it would mean experiencing life-spans of many births in one birth, which is illogical and impractical. *(Bhagavati Vritti)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं साउए संकमति, निराउए संकमति ?

[उ.] गोयमा ! साउए संकमति, नो निराउए संकमति।

२. [प्र.] भगवन् ! जो जीव नैरयिकों में उत्पन्न होने वाला है, क्या वह जीव यहीं से आयुष्ययुक्त होकर नरक में जाता है, अथवा आयुष्यरहित होकर जाता है ?

[उ.] गौतम ! (जो जीव नैरयिकों में उत्पन्न होने वाला है) वह यहीं से आयुष्ययुक्त होकर नरक में जाता है, परन्तु आयुष्यरहित होकर नरक में नहीं जाता।

2. [Q.] *Bhante* ! The soul destined to be born among infernal beings goes to hell with a life-span (*ayushya*) acquired here or does it go without acquiring such life-span (*ayushya*) ?

[Ans.] Gautam ! The soul destined to be born among infernal beings goes to hell with a life-span (*ayushya*) acquired here and not without acquiring such life-span (*ayushya*).

३. [प्र.] से णं भंते ! आउए कहिं कडे ? कहिं समाइण्णे ?

[उ.] गोयमा ! पुरिमे भवे कडे, पुरिमे भवे समाइण्णे।

४. एवं जाव वेमाणियाणं दंडओ।

३. [प्र.] हे भगवन् ! उस जीव ने वह आयुष्य कहाँ बाँधा ? और उस आयुष्य-सम्बन्धी आचरण कहाँ किया ?

[उ.] गौतम ! उस (नारक) जीव ने वह आयुष्य पूर्वभव में बाँधा था और उस आयुष्य-सम्बन्धी आचरण भी पूर्वभव में किया था।

४. जिस प्रकार यह बात नैरयिक के विषय में कही गई है, इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक सभी दण्डकों के विषय में कहनी चाहिए।

3. [Q.] *Bhante* ! Where did that soul acquire the bondage of that life-span (*ayushya*) ? And where did it indulge in the conduct responsible for this bondage ?

[Ans.] Gautam ! That soul acquired the bondage of that life-span (*ayushya*) during its previous birth. And it indulged in the conduct responsible for this bondage also during its previous birth.

4. As has been said about infernal beings so should be repeated here for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to Vaimaniks.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. [प्र.] से नूणं भंते ! जे जं भविए जोणिं उववज्जित्तए से तमाउयं पकरेइ, तं जहा–नेरइयाउयं वा जाव देवाउयं वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जे जं भविए जोणिं उववज्जित्तए से तमाउयं पकरेइ, तं जहा–नेरइयाउयं वा, तिरि–मणु–देवाउयं वा। नेरइयाउयं पकरेमाणे सत्तविहं पकरेइ, तं जहा–रयणप्पभापुढविनेरइयाउयं वा जाव अहेसत्तमापुढविनेरइयाउयं वा। तिरिक्खजोणियाउयं पकरेमाणे पंचविहं पकरेइ, तं जहा–एगिंदियतिरिक्खजोणियाउयं वा, भेओ सव्वो भाणियव्वो।

मणुस्साउयं दुविहं। देवाउयं चउविहं।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

॥ पंचम सए : तइओ उद्देसओ समत्तो ॥

५. [प्र.] भगवन् ! जो जीव जिस योनि में उत्पन्न होता है, क्या वह जीव, उस योनि सम्बन्धी आयुष्य बाँधता है ? जैसे कि जो जीव नरकयोनि में उत्पन्न होने योग्य होता है, क्या वह नरकयोनि का आयुष्य बाँधता है, यावत् देवयोनि में उत्पन्न होने योग्य जीव क्या देवयोनि का आयुष्य बाँधता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जो जीव जिस योनि में उत्पन्न होने योग्य होता है, वह जीव उस योनि–सम्बन्धी आयुष्य को बाँधता है। जैसे कि नरकयोनि में उत्पन्न होने योग्य जीव नरकयोनि का आयुष्य बाँधता है, तिर्यञ्चयोनि में उत्पन्न होने योग्य जीव तिर्यञ्चयोनि का आयुष्य बांधता है, मनुष्ययोनि में उत्पन्न होने योग्य जीव मनुष्ययोनि का आयुष्य बाँधता है यावत् देवयोनि में उत्पन्न होने योग्य जीव देवयोनि का आयुष्य बाँधता है।

जो जीव नरक का आयुष्य बाँधता है, वह सात प्रकार की नरकभूमि में से किसी एक प्रकार की नरकभूमि सम्बन्धी आयुष्य बाँधता है। यथा–रत्नप्रभा (प्रथम नरक) पृथ्वी का आयुष्य अथवा यावत् अधःसप्तमपृथ्वी (सप्तम नरक) का आयुष्य बाँधता है। जो जीव तिर्यञ्चयोनि का आयुष्य बाँधता है, वह पाँच प्रकार के तिर्यञ्चों में से किसी एक प्रकार का तिर्यञ्च–सम्बन्धी आयुष्य बाँधता है। यथा–एकेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनि का आयुष्य इत्यादि। तिर्यञ्च के सभी भेद–विशेष विस्तृत रूप से यहाँ कहने चाहिए।

जो जीव मनुष्य–सम्बन्धी आयुष्य बाँधता है, वह दो प्रकार के मनुष्यों में से किसी एक प्रकार के मनुष्य–सम्बन्धी आयुष्य को बाँधता है, (यथा–सम्मूर्च्छिम मनुष्य का, अथवा गर्भज मनुष्य का।) जो जीव देव–सम्बन्धी आयुष्य बाँधता है, तो वह चार प्रकार के देवों में से किसी एक प्रकार के देव का आयुष्य बाँधता है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है;' यों कहकर यावत् विचरते हैं।

5. [Q.] *Bhante* ! Does a soul born in a particular genus (*yoni*) acquire the bondage of life-span (*ayushya*) for that particular genus. For example, does the soul destined to the infernal world acquire the bondage of life-span (*ayushya*) of the infernal genus... and so on up to...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the soul destined to the divine world acquire the bondage of life-span (*ayushya*) of the divine genus.

[Ans.] Yes, Gautam ! A soul born in a particular genus (*yoni*) acquires the bondage of life-span (*ayushya*) for that particular genus. For example, the soul destined to the infernal world acquires the bondage of life-span (*ayushya*) of the infernal genus, the soul destined to the animal world (*tiryanch yoni*) acquires the bondage of life-span (*ayushya*) of the animal genus, the soul destined to the human world acquires the bondage of life-span (*ayushya*) of the human genus... and so on up to... the soul destined to the divine world acquires the bondage of life-span (*ayushya*) of the divine genus.

The soul acquiring the bondage of infernal life-span (*ayushya*) does that for life-span (*ayushya*) related to any one of the seven infernal worlds—the life-span (*ayushya*) of Ratnaprabha Prithvi (the first hell)... and so on up to... Adhah Saptam Prithvi (the seventh hell). The soul acquiring the bondage of animal life-span (*ayushya*) does that for life-span (*ayushya*) related to any one of the five animal genuses—the life-span (*ayushya*) of one sensed animal genus (*ekendriya tiryanch yoni*) etc. Here all classes of animals should be stated in details.

The soul acquiring the bondage of human life-span (*ayushya*) does that for life-span (*ayushya*) related to any one of the two human genuses (*sammurchhim* or of asexual origin and *garbhaj* or of placental origin). The soul acquiring the bondage of divine life-span (*ayushya*) does that for life-span (*ayushya*) related to any one of the four divine genuses.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : निष्कर्ष–इन तीन सूत्रों का निष्कर्ष यह है कि जीव पर–भव की आयुष्य इस भव में ही बाँधते हैं, और उस आयुष्य–सम्बन्धी आचरण भी इसी भव का करते हैं। केवल चरमशरीरी जीव ही पर–भव का आयुष्य नहीं बाँधते।

आयुष्य बंध सम्बन्धी चार प्रकार के विकल्प आगम में बताये हैं–

(१) वर्तमान आयुष्य का तीसरा भाग शेष रहने पर अगले भव का आयुष्य बाँधता है। अथवा (२) नौवाँ भाग, (३) सत्ताईसवाँ भाग, तथा (४) वर्तमान आयुष्य के छह मास शेष रहने पर। अन्तराल गति में यदि जीव ऋजुगति से जाता है, तो उत्पत्ति स्थान तक पूर्वभव का आयुष्य साथ रहता है, वक्रगति में जाता है, तो प्रथम समय में पूर्वभव का तथा दूसरे समय में अगले जन्म का आयुष्य प्रारम्भ हो जाता है। *(भगवई भाष्य, भाग २, पृष्ठ १४६)*

॥ पंचम शतक : तृतीय उद्देशक समाप्त ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Gist—The gist of these aphorisms is that a soul acquires the bondage of the next life during this life itself. The conduct responsible for this bondage is also performed during this life. Only the souls with terminal bodies (*Charam Shariri* or those destined to liberation) do not acquire bondage of life-span (*ayushya*) of next birth.

Agams inform about the four alternatives of acquiring life-span (*ayushya*) bondage—

(1) The life-span (*ayushya*) bondage for the next birth is acquired when one third part of the present life span remains, or (2) one ninth part remains, or (3) one 27th part remains, or (4) only six months of the present life-span (*ayushya*) remains. In the intervening period of passage from one birth to the next, if the movement of the soul is straight (*riju gati*) the life-span of the current birth continues till the place of new birth. If its movement is oblique the present life-span extends up to the first Samaya of this oblique movement and the life-span (*ayushya*) of the next birth begins during the second Samaya of the oblique movement. *(Bhagavai Bhashya, Part-2, p. 146)*

● END OF THE THIRD LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : चतुर्थ उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : FOURTH LESSON

शब्द SHABD (SOUND)

शब्द–श्रवण की सीमा RANGE OF HEARING SOUND

१. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से आउडिज्जमाणाइं सद्दाइं सुणेति, तं जहा–संखसद्दाणि वा, सिंगसद्दाणि वा, संखियसद्दाणि वा, खरमुहिसद्दाणि वा, पोयासद्दाणि वा, परिपिरियासद्दाणि वा, पणवसद्दाणि वा, पडहसद्दाणि वा, भंभासद्दाणि वा, होरंभसद्दाणि वा, भेरिसद्दाणि वा, झल्लरिसद्दाणि वा, दुंदुभिसद्दाणि वा, तताणि वा, विततााणि वा, घणाणि वा, झुसिराणि वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! छउमत्थे णं मणूसे आउडिज्जमाणाइं सद्दाइं सुणेति, तं जहा–संखसद्दाणि वा जाव झुसिराणि वा।

१. [प्र.] भगवन् ! छद्मस्थ मनुष्य क्या बजाये जाते हुए वाद्यों के शब्दों को सुनता है ? यथा–शंख के शब्द, रणसींगे के शब्द, शंखिका (छोटे शंख) के शब्द, खरमुही (काहली नामक बाजे फौजी ढोल) के शब्द, पोता (बड़ी काहली) के शब्द, परिपीरिता (सूअर के चमड़े से मढ़े हुए मुख वाले एक प्रकार के बाजे सितार जैसा बाजा जिसके दोनों सिरों पर तुम्बे लगे रहते हैं) के शब्द, पणव (ढोलकी) के शब्द, पटह (ढोल) के शब्द, भंभा (छोटी भेरी) के शब्द, होरेभा (महाढका), भेरी (नगाड़ा, डंका), झल्लरी (झालर) के शब्द, दुन्दुभि के शब्द, तत (तांत बाजे वालों–वीणा आदि वाद्यों) के शब्द, वितत शब्द (ढोल आदि विस्तृत बाजों के शब्द), घन शब्द (ठोस बाजों–कांस्य, ताल आदि वाद्यों के शब्द), शुषिर शब्द (बीच में पोले बाजों–बिगुल, बाँसुरी, बंशी आदि के शब्द); इत्यादि बाजों के शब्दों को ?

[उ.] हाँ, गौतम ! छद्मस्थ मनुष्य बजाये जाते हुए शंख यावत्–शुषिर आदि (पूर्वोक्त) वाद्यों के शब्दों को सुनता है।

1. [Q.] *Bhante* ! Does a person with finite cognition (*chhadmasth*) hear the sound of musical instruments being played ? Instruments such as—sound of *Shankh* (conch-shell), sound of *Ranasingha* (war-horn), sound of *Shankhika* (small conch-shell), sound of *Kharamuhi* (small drum), sound of *Pota* (large drum), sound of *Paripirita* (a Sitar-like instrument with gourds at both ends), sound of *Panav* (small drum), sound of *Patah* (a large drum), sound of *Bhambha* (a type of drum), sound of *Horebha* (a type of drum), sound of *Bheri* (a large drum), sound of *Jhallari* (cymbal), sound of *Dundubhi* (a type of drum), sound of *tat* (stringed instruments), sound of *vitat* (percussion instruments), sound of *ghan* (gong like solid instruments), sound of *shushir* (wind instruments) and other musical instruments ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Yes, Gautam ! A person with finite cognition (*chhadmasth*) hears the sound of the aforesaid musical instruments, such as—sound of *Shankh* (conch-shell)... and so on up to... sound of *shushir* (wind instruments) being played.

२. [प्र.] ताइं भंते ! किं पुट्ठाइं सुणेति ? अपुट्ठाइं सुणेति ?

[उ.] गोयमा ! पुट्ठाइं सुणेति, नो अपुट्ठाइं सुणेति, जाव णियमा छद्दिसिं सुणेति।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या वह (छद्मस्थ) उन (पूर्वोक्त वाद्यों के) शब्दों को स्पृष्ट होने (कानों से स्पर्श किये जाने–टकराने) पर सुनता है, या अस्पृष्ट होने (कानों से स्पर्श न करने–न टकराने) पर भी सुन लेता है ?

[उ.] गौतम ! छद्मस्थ मनुष्य (उन वाद्यों) के स्पृष्ट (कानों से स्पर्श किये गए–टकराए हुए) शब्दों को सुनता है, अस्पृष्ट शब्दों को नहीं सुनता; यावत् नियम से पूर्वादि छह दिशाओं से आए हुए स्पृष्ट शब्दों को सुनता है।

2. [Q.] *Bhante* ! Does he (a *chhadmasth*) hear only those sounds (of the said instruments) that strike his ears (*sprisht*) ? Or does he hear even those that do not strike (*asprisht*) ?

[Ans.] Gautam ! He (a *chhadmasth*) hears only those sounds (of the said instruments) that strike his ears (*sprisht*) and not those that do not strike... . and so on up to... as a rule he hears sound coming from all the six directions.

३. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से किं आरगयाइं सद्दाइं सुणेइ ? पारगयाइं सद्दाइं सुणेइ ?

[उ.] गोयमा ! आरगयाइं सद्दाइं सुणेइ, नो पारगयाइं सद्दाइं सुणेइ।

३. [प्र.] भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य आरगत (इन्द्रिय विषय की सीमा में आये हुए) शब्दों को सुनता है, अथवा पारगत (इन्द्रिय विषय से दूर रहे हुए) शब्दों को सुनता है ?

[उ.] गौतम ! (छद्मस्थ मनुष्य) आरगत शब्दों को सुनता है, किन्तु पारगत शब्दों को नहीं सुन पाता।

3. [Q.] *Bhante* ! Does he (a *chhadmasth*) hear only those sounds that are within the range of his sense organs (*aargat*) ? Or does he hear even those that are beyond the range of his sense organs (*paargat*) ?

[Ans.] Gautam ! He (a *chhadmasth*) hears only those sounds that are within the range of his sense organs (*aargat*) and not those that are beyond the range of his sense organs (*paargat*).

४. [प्र. १] जहा णं भंते ! छउमत्थे मणुस्से आरगयाइं सद्दाइं सुणेइ, नो पारगयाइं सद्दाइं सुणेइ, तहा णं भंते ! केवली किं आरगयाइं सद्दाइं सुणेइ, नो पारगयाइं सद्दाइं सुणेइ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! केवली णं आरगयं वा पारगयं वा सव्वदूरमूलमणंतियं सद्दं जाणइ पासइ।

[प्र. २] से केणट्ठेणं तं चेव केवली णं आरगयं वा जाव पासइ ?

[उ.] गोयमा ! केवली णं पुरत्थिमेणं मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ; एवं दाहिणेणं पच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं, उड्ढं, अहे मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ, सव्वं जाणइ केवली, सव्वं पासइ केवली, सव्वतो जाणइ पासइ, सव्वकालं जाणइ पासइ, सव्वभावे जाणइ केवली, सव्वभावे पासइ केवली, अणंते नाणे केवलिस्स, अणंते दंसणे केवलिस्स, निव्वुडे नाणे केवलिस्स, निव्वुडे दंसणे केवलिस्स। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ।

४. [प्र. १] भगवन् ! जैसे छद्मस्थ मनुष्य आरगत शब्दों को सुनता है, किन्तु पारगत शब्दों को नहीं सुनता; वैसे ही, क्या केवली (केवलज्ञानी) भी आरगत शब्दों को ही सुन पाता है, पारगत शब्दों को नहीं सुन पाता ?

[उ.] गौतम ! केवली मनुष्य तो आरगत, पारगत अथवा समस्त दूरवर्ती (दूर तथा अत्यन्त दूर के) और निकटवर्ती (निकट तथा अत्यन्त निकट के) अनन्त (अन्तरहित) शब्दों को जानता और देखता है।

[प्र. २] भगवन् ! इसका क्या कारण है कि केवली मनुष्य आरगत, पारगत अथवा यावत् सभी प्रकार के (दूरवर्ती, निकटवर्ती) अनन्त शब्दों को जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! केवली (सर्वज्ञ) पूर्व दिशा की मित वस्तु को भी जानता-देखता है, और अमित वस्तु को भी जानता-देखता है; इसी प्रकार दक्षिण दिशा, पश्चिम दिशा, उत्तर दिशा, ऊर्ध्व दिशा और अधो दिशा की मित वस्तु को भी जानता-देखता है तथा अमित वस्तु को भी जानता-देखता है। केवलज्ञानी सब जानता है और सब देखता है। केवली सर्वतः (सब ओर से) जानता-देखता है, केवली सर्वकाल में, सर्वभावों (पदार्थों) को जानता-देखता है। केवलज्ञानी (सर्वज्ञ) के अनन्त ज्ञान और अनन्त दर्शन होता है। केवलज्ञानी का ज्ञान और दर्शन निरावरण (सभी प्रकार के आवरणों से रहित) होता है।

हे गौतम ! इसी कारण से ऐसा कहा गया है कि केवली मनुष्य आरगत और पारगत शब्दों को, यावत् सभी प्रकार के दूरवर्ती और निकटवर्ती शब्दों को जानता-देखता है।

4. [Q. 1] *Bhante* ! As a *chhadmasth* hears only those sounds that are within the range of his sense organs (*aargat*) but not those that are beyond the range of his sense organs (*paargat*), in the same way does an omniscient (*Kevali*) hear only those sounds that are within the range of his sense organs (*aargat*) ? Or does he hear even those that are beyond the range of his sense organs (*paargat*) ?

[Ans.] Gautam ! An omniscient (*Kevali*) knows and sees the sounds that are within the range of his sense organs (*aargat*), beyond the range of his sense organs (*paargat*), and all sounds far and near... and so on up to... infinite (endless) kinds of sounds.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Q. 2] *Bhante* ! What is the reason that an omniscient (*Kevali* or *Keval-jnani*) knows and sees the sounds within and beyond the range of his sense organs (*paargat*), ... and so on up to... infinite (endless) kinds of sounds ?

[Ans.] Gautam ! The omniscient (*Kevali*) knows and sees all finite (*mit*) things as well as infinite (*amit*) things in the east. In the same way he sees all finite things as well as infinite things in the south, west, north, zenith and nadir. The omniscient (*Kevali*) knows all and sees all. The omniscient (*Kevali*) knows and sees from all angles (*sarvatah*), in all periods (*sarvakaal*), and in all modes (*sarvabhaava*). The omniscient (*Kevali*) is endowed with infinite knowledge (*jnana*) and infinite perception (*darshan*). The knowledge and perception of the omniscient (*Kevali*) is free of any and all veils.

O Gautam ! That is why it is said that an omniscient (*Kevali* or *Keval-jnani*) knows and sees the sounds within and beyond the range of his sense organs (*paargat*), ... and so on up to... infinite (endless) kinds of sounds ?

विवेचन : मूल सूत्र में छद्मस्थ के लिए 'सुणेइ' क्रियापद का प्रयोग किया गया है जबकि केवली के लिए 'जाणइ पासइ' पद का प्रयोग किया है। इस भेद का कारण यह है कि छद्मस्थ जीव कान से शब्द सुनता है किन्तु केवली शब्द को कान से नहीं सुनते, केवलज्ञान-दर्शन से ही जानते-देखते हैं।

Elaboration—In the original text the verb *sunei* (hear) has been used for a *chhadmasth* but for the omniscient (*Kevali*) the verb *janai-pasai* (knows and sees) has been used. The reason for this difference is that a *chhadmasth* hears sound through the sense organ of hearing, whereas the omniscient (*Kevali*) does not do so, he only acquires (knows and sees) sounds through his all enveloping knowledge and perception.

छद्मस्थ व केवली का हँसना व निद्रा लेना SLEEP AND LAUGHTER OF CHHADMASTH AND KEVALI

५. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से हसेज्ज वा ? उस्सुयाएज्ज वा ?

[उ.] हंता, हसेज्ज वा, उस्सुयाएज्ज वा।

५. [प्र.] भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य हँसता तथा उत्सुक होता है ?

[उ.] गौतम ! हाँ, छद्मस्थ मनुष्य हँसता तथा उत्सुक होता है।

5. [Q.] *Bhante* ! Does a person with finite cognition (*chhadmasth*) laugh and get inquisitive ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He laughs and gets inquisitive.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. [प्र. १] जहा णं भंते ! छउमत्थे मणुस्से हसेज्ज वा उस्सुयाएज्ज तहा णं केवली वि हसेज्ज वा, उस्सुयाएज्ज वा ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! जाव नो णं तहा केवली हसेज्ज वा, उस्सुयाएज्ज वा ?

[उ.] गोयमा ! जं णं जीवा चरित्तमोहणिज्जकम्मस्स उदएणं हसंति वा उस्सुयायंति वा, से णं केवलिस्स नत्थि, से तेणट्ठेणं जाव नो णं तहा केवली हसेज्ज वा, उस्सुयाएज्ज वा।

६. [प्र. १] भगवन् ! जैसे छद्मस्थ मनुष्य हँसता है तथा उत्सुक होता है, वैसे क्या केवली भी हँसता और उत्सुक होता है ?

[उ.] गौतम ! छद्मस्थ मनुष्य की तरह केवली न तो हँसता है और न उत्सुक होता है।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि केवली मनुष्य (छद्मस्थ की तरह) न तो हँसता है और न उत्सुक होता है ?

[उ.] गौतम ! जीव, चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से हँसते हैं या उत्सुक होते हैं, किन्तु वह केवली भगवान के नहीं है; (उनके चारित्रमोहनीय कर्म का क्षय हो चुका है।) इस कारण से यह कहा जाता है कि जैसे छद्मस्थ मनुष्य हँसता है अथवा उत्सुक होता है, वैसे केवली मनुष्य न तो हँसता है और न ही उत्सुक होता है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! As a person with finite cognition (*chhadmasth*) laughs and gets inquisitive, likewise does the omniscient (*Kevali*) too laugh and get inquisitive ?

[Ans.] No, Gautam ! He does not.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so that the omniscient (*Kevali*) neither laughs nor gets inquisitive (like a *chhadmasth*) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings laugh and get inquisitive due to fruition of *Chaaritra Mohaniya karmas* (conduct deluding *karmas*) but the omniscient (*Kevali*) is devoid of these (his conduct deluding *karmas* have already been shed). That is why it is said... and so on up to... the omniscient (*Kevali*) neither laughs nor gets inquisitive (like a *chhadmasth*).

७. [प्र.] जीवे णं भंते ! हसमाणे वा उस्सुयमाणे वा कति कम्मपगडीओ बंधति ?

[उ.] गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा।

८. एवं जाव वेमाणिए।

९. पोहत्तिएहिं जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [प्र.] भगवन् ! हँसता हुआ या उत्सुक होता हुआ जीव कितनी कर्मप्रकृतियों को बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! सात प्रकार के अथवा आठ प्रकार के कर्मों को बाँधता है।

८. इसी प्रकार (नैरयिक से लेकर) वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डकों के लिए (ऐसा आलापक) कहना चाहिए।

९. जब उपर्युक्त प्रश्न बहुत जीवों की अपेक्षा पूछा जाए, तो उसके उत्तर में समुच्चय जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर कर्मबन्ध से सम्बन्धित तीन भंग (विकल्प) कहने चाहिए।

7. [Q.] *Bhante* ! While laughing and getting inquisitive how many types of *karma* species does a living being bind ?

[Ans.] Gautam ! He binds seven or eight types of *karma* species.

8. The same (statement with respect to singular) should be repeated for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering from infernal beings) up to Vaimaniks.

9. When the said question is asked in context of many living beings (with respect to plural) three alternatives about bondage of *karmas* should be stated with the exception of 'all beings' and 'one-sensed beings'.

विवेचन : तीन भंग–पृथक्त्व सूत्रों (पोहत्तिएहिं) अर्थात् बहुवचन–सूत्रों (बहुत से जीवों) की अपेक्षा से पाँच एकेन्द्रियों में हास्यादि न होने से ५ स्थावरों के ५ दण्डकों को छोड़कर शेष १९ दण्डकों में कर्मबन्ध–सम्बन्धी तीन भंग होते हैं–(१) सभी जीव सात प्रकार के कर्म बाँधते हैं, (२) बहुत से जीव ७ प्रकार के कर्म बाँधते हैं और एक जीव ८ प्रकार के कर्म बाँधता है, (३) बहुत से जीव ७ प्रकार के कर्मों को और बहुत से जीव ८ प्रकार के कर्मों को बाँधते हैं। आयुकर्म के बन्ध के समय आठ कर्म और जब आयुकर्म न बँध रहा हो, तब सात कर्मों का बन्ध समझना चाहिए। *(वृत्ति पंत्राक २१७)*

Elaboration—The three alternatives—As the five types of one-sensed beings are devoid of the faculties of laughter and inquisitiveness these five *Dandaks* fall under exceptions. Same is true for a general statement about all beings. The remaining nineteen *Dandaks* have three alternatives about *karmic* bondage—(1) All beings bind seven types of *karmas*. (2) Many beings bind seven types of *karmas* and one being binds eight types of *karmas*. (3) Many beings bind seven types of *karmas* and many beings bind eight types of *karmas*. Eight types of *karmas* are bound when *karma* responsible for life-span (*ayushya*) is bound and seven types of *karmas* are bound when *karma* responsible for life-span (*ayushya*) is not bound. *(Vritti, leaf 217)*

१०. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणूसे निद्दाएज्ज वा ? पयलाएज्ज वा ?

[उ.] हंता, निद्दाएज्ज वा, पयलाएज्ज वा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. [प्र.] भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य निद्रा लेता है अथवा प्रचला नामक निद्रा लेता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! छद्मस्थ मनुष्य निद्रा लेता है और प्रचला निद्रा (खड़ा-खड़ा नींद) भी लेता है।

10. [Q.] *Bhante* ! Does a person with finite cognition (*chhadmasth*) sleep (*nidra*) ? And does he sleep standing (*prachala nidra*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A person with finite cognition (*chhadmasth*) sleeps (*nidra*) and he sleeps standing (*prachala nidra*) also.

११. जहा हसेज्ज वा तहा, नवरं दरिसणावरणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं निद्दायंति वा, पयलायंति वा। से णं केवलिस्स नत्थि। अन्नं तं चेव।

११. जिस प्रकार हँसने (और उत्सुक होने) के सम्बन्ध में प्रश्नोत्तर बतलाए गए हैं, उसी प्रकार निद्रा और प्रचला-निद्रा के सम्बन्ध में (छद्मस्थ और केवली मनुष्य के विषय में) प्रश्नोत्तर जान लेने चाहिए। विशेष यह है कि छद्मस्थ मनुष्य दर्शनावरणीय कर्म के उदय से निद्रा अथवा प्रचला निद्रा लेता है, जबकि केवली भगवान के वह दर्शनावरणीय कर्म नहीं हैं; इसलिए केवली न तो निद्रा लेता है, न ही प्रचला-निद्रा लेता है। शेष सब पूर्ववत् समझना चाहिए।

11. The statements about laughing (and being inquisitive) should be repeated here about *nidra* and *prachala nidra*. The difference is that a *chhadmasth* sleeps due to fruition of perception deluding *karmas* (*Darshanavaraniya karma*), whereas the omniscient (*Kevali*) is free of perception deluding *karmas*, therefore he neither sleeps nor sleeps standing. All other details are as aforesaid.

१२. [प्र.] जीवे णं भंते ! निद्दायमाणे वा पयलायमाणे वा कति कम्मपगडीओ बंधति ?

[उ.] गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा।

१२. [प्र.] भगवन् ! निद्रा लेता हुआ अथवा प्रचला निद्रा लेता हुआ जीव कितनी कर्मप्रकृतियों को बंध करता है ?

[उ.] गौतम ! निद्रा अथवा प्रचला निद्रा लेता हुआ जीव सात कर्मों की प्रकृतियों का, अथवा आठ कर्मों की प्रकृतियों का बन्ध करता है।

12. [Q.] *Bhante* ! While taking *nidra* and *prachala nidra* how many types of *karma* species does a living being bind ?

[Ans.] Gautam ! He binds seven or eight types of *karma* species.

१३. एवं जाव वेमाणिए।

१४. पोहत्तिएसु जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. इसी तरह (एकवचन की अपेक्षा से) (नैरयिक से लेकर) वैमानिक-पर्यन्त (चौबीस ही दण्डकों के लिए) कहना चाहिए।

१४. जब उपर्युक्त प्रश्न बहुवचन (बहुत-से जीवों) की अपेक्षा से पूछा जाए, तब (समुच्चय) जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर [शेष १९ दण्डकों में] कर्मबन्ध-सम्बन्धी पूर्वोक्त तीन भंग कहने चाहिए।

13. The same (statement with respect to singular) should be repeated for all the twenty four *Dandaks* (places of suffering from infernal beings) up to Vaimaniks.

14. When the said question is asked in context of many living beings (with respect to plural) three alternatives about bondage of *karmas* should be stated with the exception of 'all beings' and 'one-sensed beings' (for the remaining nineteen *Dandaks*).

हरिनैगमेषी की गर्भ-संहरण क्षमता EMBRYO TRANSPLANTATION CAPACITY OF HARINAIGAMESHI

१५. [प्र.] हरी णं भंते ! नेगमेसी सक्कदूते इत्थीगब्भं साहरमाणे किं गब्भाओ गब्भं साहरति गब्भाओ जोणिं साहरइ ? जोणीओ गब्भं साहरति ? जोणीओ जोणिं साहरइ ?

[उ.] गोयमा ! नो गब्भाओ गब्भं साहरति, नो गब्भाओ जोणिं साहरति, नो जोणीओ जोणिं साहरति, परामुसिय परामुसिय अव्वाबाहेणं अव्वाबाहं जोणीओ गब्भं साहरइ।

१५. [प्र.] भगवन् ! इन्द्र (शक्र) का दूत हरिनैगमेषी देव जब स्त्री के गर्भ का संहरण करता है, तब क्या वह (१) एक गर्भाशय से गर्भ को उठाकर दूसरे गर्भाशय में रखता है ? (२) या गर्भ को लेकर योनि द्वारा दूसरी (स्त्री) के उदर में रखता है ? अथवा (३) योनि से (गर्भ को बाहर निकालकर दूसरी स्त्री के) गर्भाशय में रखता है ? या फिर (४) योनि द्वारा गर्भ को बाहर निकालकर (वापस उसी तरह) योनि द्वारा ही (दूसरी स्त्री के उदर में) रखता है ?

[उ.] हे गौतम ! वह हरिनैगमेषी देव, एक गर्भाशय से गर्भ को उठाकर दूसरे गर्भाशय में नहीं रखता; गर्भाशय से गर्भ को लेकर उसे योनि द्वारा दूसरी स्त्री के उदर में नहीं रखता; यथा योनि द्वारा गर्भ को (पेट में से) बाहर निकालकर (वापस उसी तरह) योनि द्वारा दूसरी स्त्री के पेट में नहीं रखता; परन्तु अपने हाथ से गर्भ को स्पर्श करके, उस गर्भ को कुछ पीड़ा (बाधा) न हो, इस तरीके से उसे योनि द्वारा बाहर निकालकर दूसरी स्त्री के गर्भाशय में रख देता है।

15. [Q.] *Bhante* ! When Harinaigameshi god, the emissary of Indra (Shakra), transfers an embryo from a woman's womb, does he (1) take it out (directly) from one womb and place it in another womb ? (2) Or does he take it out (directly) from one womb and place it in another womb through the uterus ? (3) Or does he take it out from one womb through the uterus and place it (directly) in another womb ? (4) Or does he take it

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

out from one womb through the uterus and place it in another womb also through the uterus ?

[Ans.] Gautam ! Harinaigameshi god does not lift an embryo from one womb and place it in another womb, nor does he take it out from one womb and place it in another womb through the uterus, nor does he take it out from one womb through the uterus and place it in another womb also through the uterus. Instead, he takes it out from one womb through the uterus, by touching the embryo with his hands, and places it (directly) in the womb of another woman without causing any pain to the embryo in the process.

गर्भ-संहरण का तरीका **PROCEDURE OF EMBRYO TRANSFER**

१६. [प्र.] पभू णं भंते ! हरिणेगमेसी सक्कस्स दूते इत्थीगब्भं नहसिरंसि वा रोमकूवंसि वा साहरित्तए वा नीहरित्तए वा ?

[उ.] हंता, पभू, नो चेव णं तस्स गब्भस्स किंचि वि आबाहं वा विबाहं वा उप्पाएज्जा, छविच्छेदं पुण करेज्जा, एसुहुमं च णं साहरिज्ज वा, नीहरिज्ज वा।

१६. [प्र.] भगवन् ! क्या शक्र का दूत हरिनैगमेषी देव, स्त्री के गर्भ को नखाग्र (नख के सिरे) द्वारा, अथवा रोमकूप (छिद्र) द्वारा गर्भाशय में रखने या गर्भाशय से निकालने से समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! हरिनैगमेषी देव उपर्युक्त रीति से कार्य करने में समर्थ है। (किन्तु ऐसा करते हुए) वह देव उस गर्भ को थोड़ी या बहुत, किञ्चित् मात्र भी पीड़ा नहीं पहुँचाता। हाँ, वह उस गर्भ का छविच्छेद (शरीर का छेदन-भेदन) करता है, और फिर उसे बहुत सूक्ष्म करके अंदर रखता है, अथवा इसी तरह अंदर से बाहर निकालता है।

16. [Q.] *Bhante* ! Is Harinaigameshi god, the emissary of Indra (Shakra), capable of taking out or putting in an embryo from the womb of a woman with the tip of his nail or through the pores ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He is capable of doing so. But while doing so he does not cause any pain, less or more or even slightest. Although he cuts and separates the embryo at the time of taking out and putting in, but he does that with great precision.

विवेचन : हरिनैगमेषी देव का संक्षिप्त परिचय-'हरि', इन्द्र को कहते हैं-हरि = इन्द्र के, **नैगम** = आदेश को जो मानता है, वह **हरिनैगमेषी**, नामक देव। शक्रेन्द्र की पदाति (पैदल) सेना का वह नायक तथा शक्रदूत है। शक्रेन्द्र की आज्ञा से उसी ने भगवान महावीर की माता त्रिशलादेवी के गर्भ में देवानन्दा ब्राह्मणी के गर्भ से भगवान महावीर के गर्भ को संहरण करके स्थापित किया था। भगवतीसूत्र के अतिरिक्त हरिनैगमेषी द्वारा गर्भापहरण का वृत्तान्त अन्तकृद्दशांग (अ. ७) में, आचारांग भावना अध्ययन चूलिका में, तथा कल्पसूत्र में भी उल्लिखित है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्भसंहरण के चारों प्रकारों में से तीसरा प्रकार ही स्वीकार्य–मूल पाठ में गर्भापहरण के ४ तरीके विकल्प रूप में उठाए गये हैं, किन्तु हरिनैगमेषी द्वारा योनि द्वारा गर्भ को निकालकर दूसरी स्त्री के गर्भाशय में रखना–लोकप्रसिद्ध तीसरा तरीका ही अपनाया जाता है, क्योंकि यह लौकिक प्रथा है कि कोई भी गर्भ स्वाभाविक रूप से योनि द्वारा ही बाहर आता है।

Elaboration—Brief introduction of Harinaigameshi god—Hari is a name of Indra and *naigam* means command. He who follows the command of Indra is called Harinaigameshi. He is the commander of the army of foot-soldiers of Indra and also his emissary. It was he who transferred the embryo form of Bhagavan Mahavir from the womb of Devananda Brahmani to that of mother Trishala Devi at the command of Shakrendra. Besides *Bhagavati Sutra* the description of embryo transfer by Harinaigameshi is also available in *Antakriddashanga* (Chapter 7), *Acharanga* (*Chulika* of *Bhaavana Adhyayan*) and *Kalpa Sutra*.

The methods of embryo transfer—In the original text four alternative methods of embryo transfer have been stated. But Harinaigameshi employs the third method which is most suitable and traditionally accepted because the natural path of a fetus coming out of the womb is through the uterus.

अतिमुक्तक मुनि ASCETIC ATIMUKTAK

१७. [१] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी अइमुत्ते णामं कुमारसमणे पगइभद्दए जाव विणीए।

१७. [१] उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी अतिमुक्तक नामक कुमारश्रमण (बालवय में दीक्षित) थे। वे प्रकृति से भद्र यावत् विनीत थे।

17. [1] *Bhante* ! During that period of time Shraman Bhagavan Mahavir had a young (*kumar-shraman* or initiated in adolescence) disciple named Atimuktak who was by nature gentle... and so on up to... polite.

[२] तए णं से अइमुत्ते कुमारसमणे अन्नया कयाइ महावुट्ठिकायंसि निवयमाणंसि कक्खपडिग्गह–रयहरणमायाए बहिया संपट्ठिए विहाराए।

[२] (दीक्षित होने के) पश्चात् वह अतिमुक्तक कुमारश्रमण किसी दिन महावृष्टिकाय (मूसलाधार वर्षा) पड़ रही थी, तब काँख = (बगल) में अपना रजोहरण तथा (हाथ में, झोली में) पात्र लेकर बाहर विहार (स्थण्डिल भूमिका में बड़ी शंका निवारण) के लिए गये।

[2] One day (after getting initiated) that Kumar-shraman Atimuktak went out to relieve himself (at the allotted place) when it was raining

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

heavily. He carried his ascetic-broom (*rajoharan*) tucked in his arm-pit, and bowl (in a bag in his hand).

[३] तए णं से अइमुत्ते कुमारसमणे वाहयं वहमाणं पासति, पासित्ता मट्टियापालिं बंधति, बंधित्ता 'णाविया मे णाविया मे, णाविओ विव णावमयं पडिग्गहं, उदगंसि कट्टु पव्वाहमाणे पव्वाहमाणे अभिरमति।

[३] तत्पश्चात् (बाहर जाते हुए) उस अतिमुक्तक कुमारश्रमण ने (मार्ग में) बहता हुआ पानी का एक छोटा-सा नाला देखा। उसे देखकर उसने उस नाले के दोनों ओर मिट्टी की पाल बाँधी। इसके पश्चात् नाविक जिस प्रकार अपनी नौका पानी में छोड़ता है, उसी प्रकार उसने भी अपने पात्र को नौकारूप मानकर, पानी में छोड़ा। फिर 'यह मेरी नाव है, यह मेरी नाव है,' यों पात्र रूपी नौका को पानी में प्रवाहित करते (तिराते हुए) क्रीड़ा करने (खेलने) लगे।

[3] On the way Kumar-shraman Atimuktak saw a small stream of flowing water. On seeing this he raised earthen dams on two sides across the stream. After that he floated his pot on water, like a sailor does his boat, considering his pot to be a boat. He then started playing around with that pot-boat floating on water surface and uttering—"This is my boat ! This is my boat !"

[४] तं च थेरा अद्दक्खु। जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी अइमुत्ते णामं कुमारसमणे, से णं भंते ! अइमुत्ते कुमारसमणे कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिहिति जाव अंतं करेहिति ?

'अज्जो !' ति समणे भगवं महावीरे ते थेरे एवं वयासी—एवं खलु अज्जो ! ममं अंतेवासी अतिमुत्ते णामं कुमारसमणे पगइभद्दए जाव विणीए, से णं अइमुत्ते कुमारसमणे इमेणं चेव भवग्गहणेणं सिज्झिहिइ जाव अंतं करेहिइ। तं मा णं अज्जो ! तुब्भे अइमुत्तं कुमारसमणं हीलेह निंदह खिंसह गरहह अवमन्नह। तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! अइमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगिण्हह, अगिलाए उवगिण्हइ अगिलाए भत्तेणं पाणेणं विणयेणं वेयावडियं करेह। अइमुत्ते णं कुमारसमणे अंतकरे चेव, अंतिमसरीरिए चेव।

[५] तए णं थेरा भगवंतो समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ता समाणा समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, अतिमुत्तं कुमारसमणं अगिलाए संगिण्हंति जाव वेयावडियं करेंति।

[४] इस प्रकार नौका चलाते हुए उस अतिमुक्तक कुमारश्रमण को स्थविरों ने देखा। स्थविर (अतिमुक्तक कुमारश्रमण को कुछ भी कहे बिना) जहाँ श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहाँ आए और निकट आकर उन्होंने उनसे पूछा—

भगवन् ! आप देवानुप्रिय का अन्तेवासी (शिष्य) जो अतिमुक्तक कुमारश्रमण है, वह कितने भव (जन्म) ग्रहण करके सिद्ध होगा, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करेगा ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतिमुक्तक कुमार श्रमण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-२

Illustration No. 2

अतिमुक्तक मुनि

पोलासपुर नगर के महाराजा विजय और उनकी महारानी श्रीदेवी के पुत्र अतिमुक्तक कुमार भगवान महावीर के पास दीक्षित हुए थे।

दीक्षित होने के पश्चात् एक दिन बाल मुनि अतिमुक्तक महावर्षा होने पर स्थविर श्रमणों के साथ पात्र एवं रजोहरण लेकर स्थण्डिल भूमि को गये। वहाँ मार्ग में बरसाती पानी का एक छोटा नाला बहता देखकर उन्होंने नाले के दोनों ओर मिट्टी की पाल बाँधी। उसके पश्चात् अपना पात्र नौका की भाँति पानी में तिराने लगे और बाल सुलभ मन से हर्षित होकर कहने लगे। "देखो मेरी नाव तैर रही है। देखो मेरी नाव····· "

बाल मुनि की क्रीड़ा देखकर स्थविर श्रमण अप्रसन्न होकर बिना कुछ कहे भगवान महावीर के पास आये।

भगवान महावीर स्वामी ने उन्हें बताया कि अतिमुक्तक महाश्रमण चरमशरीरी है। वह इसी भव में सिद्ध होगा। इसलिए उसे डाँटों, झिड़को मत। उसे अग्लानभाव से स्वीकार करो और उसकी वैयावच्च करो।

श्रमण महावीर का इस प्रकार कथन सुनकर स्थविर श्रमणों ने भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और अतिमुक्तक मुनि को अग्लानभाव (प्रसन्नतापूर्वक) से स्वीकार किया और उसकी वैयावच्च करने लगे।

(शतक ५, उ. ४, सूत्र ३-५)

ASCETIC ATIMUKTAK

Prince Atimuktak, the son of King Vijaya and queen Shridevi of Polaspur city, was initiated by Bhagavan Mahavir.

After initiation, one day child-ascetic Atimuktak went out to relieve himself along with senior ascetics. It was raining heavily. The child ascetic was carrying his ascetic-broom and bowl. On the way he saw a small stream of rain water. He stopped and raised earthen dams on two sides. He then flouted his bowl on water surface and play fully enjoyed the act uttering—"See my boat ! Hey, it floats !"

At this the senior ascetics were annoyed. But without saying anything they returned to Bhagavan Mahavir.

Bhagavan Mahavir told them that great ascetic Atimuktak was in his last rebirth and was going to a Siddha at the end of this birth only. Therefore he should not be reprimanded or insulted. He should be supported gladly and provided all hospitality.

Hearing this from Bhagavan Mahavir the senior ascetics paid homage to him and gladly supported Atimuktak muni and provided him all care.

—Shatak 5, lesson-4, Sutra 3-5

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'हे आर्यो !' इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर स्वामी उन स्थविरों को सम्बोधित करके कहने लगे–'आर्यो ! मेरा अन्तेवासी (शिष्य) जो प्रकृति से भद्र यावत् विनीत है; वह अतिमुक्तक कुमारश्रमण इसी भव से सिद्ध होगा, यावत् सब दुःखों का अन्त करेगा। अतः हे आर्यो ! तुम अतिमुक्तक कुमारश्रमण की हीलना मत करो, न ही उसे झिड़को (डाँटो या खिंसना करो), न ही गर्हा (बदनामी) और न ही अवमानना (अपमान) करो। किन्तु हे देवानुप्रियो ! तुम अग्लानभाव से (प्रसन्नतापूर्वक) अतिमुक्तक कुमारश्रमण को स्वीकार करो, अग्लानभाव से उसको अवलम्बन (सहारा) दो और अग्लानभाव से आहार-पानी से विनय सहित उसकी वैयावच्च (सेवा-शुश्रूषा) करो; क्योंकि अतिमुक्तक कुमारश्रमण (इसी भव में सब कर्मों का) अन्त करने वाला है, और चरमशरीरी है।'

[५] श्रमण भगवान महावीर स्वामी द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर उन स्थविर भगवन्तों ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दना-नमस्कार किया। फिर उन स्थविर मुनियों ने अतिमुक्तक कुमारश्रमण को अग्लानभाव से स्वीकार किया और यावत् वे उसकी वैयावच्च करने लगे। *(विस्तृत वर्णन अन्तकृद्दशा सूत्र ६/१५ में देखें)*

[4] Some senior ascetics (*sthavirs*) saw Kumar-shraman Atimuktak playing with his pot-boat. The senior ascetics (without telling anything to Kumar-shraman Atimuktak) came where Shraman Bhagavan Mahavir was seated and submitted—

Bhante ! After how many rebirths, O beloved of gods, your disciple Kumar-shraman Atimuktak will become *Siddha*... and so on up to... end all miseries.

"O Noble ones !" Addressing the senior ascetics thus, Shraman Bhagavan Mahavir said—"Noble ones ! My disciple Kumar-shraman Atimuktak, who is by nature gentle... and so on up to... polite, will become *Siddha*... and so on up to... end all miseries during this very birth. Therefore, O noble ones ! Do not treat him with contempt, do not reprimand, slander or insult him. Instead, you should accept Kumar-shraman Atimuktak gladly, support him gladly and gladly offer him hospitality by providing him food and water politely. Do this because Kumar-shraman Atimuktak is an *antakar* (terminator of the cycles of rebirth) and *charam-shariri* (in his terminal body or last birth).

[5] After being so advised by Shraman Bhagavan Mahavir those senior ascetics paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir. Then those senior ascetics accepted Kumar-shraman Atimuktak gladly... and so on up to... offered him hospitality politely. *(for detailed description refer to Illustrated Antakriddashanga Sutra)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. [१] तेणं कालेणं तेणं समएणं महासुक्काओ कप्पाओ महासामाणाओ विमाणाओ दो देवा महिड्ढीया जाव महाणुभागा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं पाउब्भूआ।

१८. [१] उस काल और उस समय में महाशुक्रकल्प से महासामान नामक महाविमान से दो महर्द्धिक यावत् महानुभाग देव श्रमण भगवान महावीर के पास उपस्थित हुए।

18. [1] During that period of time two gods, with great opulence... and so on up to... fortune, from Mahasaaman celestial vehicle in Mahashukra Kalp came to Shraman Bhagavan Mahavir.

[२] तए णं देवा समणं भगवं महावीरं वंदंति, नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं पुच्छंति–

[प्र.] कइ णं भंते ! देवाणुप्पियाणं अंतेवासिसयाइं सिज्झिहिंति जाव अंतं करेहिंति ?

[उ.] तए णं समणे भगवं महावीरे तेहिं देवेहिं मणसा पुट्ठे, तेसिं देवाणं मणसा चेव इमं एतारूवं वागरणं वागरेति–एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम सत्त अंतेवासिसयाइं सिज्झिहिंति जाव अंतं करेहिंति।

[२] तत्पश्चात् उन देवों ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमस्कार किया। वन्दन–नमस्कार करके उन्होंने मन से ही (मन ही मन) (श्रमण भगवान महावीर से) ऐसा प्रश्न पूछा–

[प्र.] 'भगवन् ! आपके कितने सौ शिष्य सिद्ध होंगे यावत् सर्व दुःखों का अन्त करेंगे ?'

तत्पश्चात् उन देवों द्वारा मन से पूछे जाने पर श्रमण भगवान महावीर ने उन देवों को भी मन से इस प्रकार का उत्तर दिया

[उ.] 'हे देवानुप्रियो ! मेरे सात सौ शिष्य सिद्ध होंगे, यावत् सब दुःखों का अन्त करेंगे।'

[2] After that those gods paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and asked in their mind (silently) this question (to Shraman Bhagavan Mahavir)—

[Q.] *Bhante* ! How many hundred of your disciples will become *Siddhas*... and so on up to... end all miseries ?

After that Shraman Bhagavan Mahavir replied in his mind (silently) the question asked by the gods in their mind (silently).

[Ans.] O beloved of gods ! Seven hundred of my disciples will become *Siddhas*... and so on up to... end all miseries.

[३] तए णं ते देवा समणेणं भगवया महावीरेणं मणसा पुट्ठेणं मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं वागरिया समाणा हट्ठतुट्ठा जाव हयहियया समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, णमंसित्ता मणसा चेव सुस्सूसमाणा णमंसमाणा अभिमुहा जाव पज्जुवासंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[३] इस प्रकार उन देवों द्वारा मन से पूछे गये प्रश्न का उत्तर श्रमण भगवान महावीर ने भी मन से ही इस प्रकार दिया, जिससे वे देव हर्षित, सन्तुष्ट हृदय वाले एवं प्रफुल्लित हुए। फिर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार करके मन से उनकी शुश्रूषा और नमस्कार करते हुए अभिमुख होकर पर्युपासना करने लगे।

[3] Thus Shraman Bhagavan Mahavir replied in his mind (silently) the question asked by the gods in their mind (silently). The gods were pleased, contented and delighted at this. Then they paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and commenced their mental worship (silently) facing him.

विवेचन : यहाँ प्रश्न होता है, मन तो ज्ञानावरण-दर्शनावरण क्षयोपशम से होने वाला ज्ञान है। केवली का ज्ञान क्षायिक होता है। फिर केवली को मन कैसे कहा गया है ? समाधान है-मन दो प्रकार का है-द्रव्य मन और भाव मन। द्रव्य मन पौद्गलिक है और भाव मन ज्ञानात्मक है। केवली में भाव मन नहीं होता, किन्तु द्रव्य मन का उपयोग करते हैं। *(भगवई भाष्य, भाग २, पृ. १६१)*

Elaboration—Here a question arises that the mental knowledge is acquired due to destruction-cum-pacification (*kshayopasham*) of knowledge and perception deluding *karmas* (*Jnanavaraniya* and *Darshanavaraniya karmas*) but the knowledge of *Kevali* is acquired due to destruction of these *karmas* (*kshayik*). Then why the term '*man*' (mind) is used with respect to Kevali. The reason is that '*man*' (mind) has two forms *dravya-man* and *bhaava-man*. *Dravya-man* (brain) is physical or physiological or constituted of matter, and *bhaava-man* (mind) is mental or psychological or constituted of knowledge. *Kevali* does not have *bhaava-man* (because his perception is direct or spiritual); however, he still has the *dravya-man* and he uses that. *(Bhagavai Bhashya, part-2, p. 161)*

१९. [१] तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूति णामं अणगारे जाव अदूरसामंते उड्ढंजाणू जाव विहरति।

१९. [१] उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी इन्द्रभूति नामक अनगार, जो न अति दूर और न ही अति निकट समीप में उकडू आसन से बैठे हुए पर्युपासना कर रहे थे।

19. [1] During that period of time the senior disciple of Shraman Bhagavan Mahavir was ascetic Indrabhuti, who was engaged in worship squatting neither very near nor very far.

[२] तए णं तस्स भगवओ गोयमस्स झाणंतरियाए वट्टमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-'एवं खलु दो देवा महिड्ढीया जाव महाणुभागा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाउब्भूया, तं नो खलु अहं ते देवे जाणामि कयरातो कप्पातो वा सग्गातो वा विमाणातो वा कस्स वा अत्थस्स अट्ठाए इहं हव्वमागता ?' तं गच्छामि णं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि जाव पज्जुवासामि, इमाइं च णं एयारूवाइं वागरणाइं पुच्छिस्सामि त्ति कट्टु एवं संपेहेति, संपेहित्ता उट्ठाए उट्ठेति, जाव जेणेव समणे भगवं महावीरे जाव पज्जुवासति।

[२] तत्पश्चात् ध्यानान्तरिका = (एक ध्यान की समाप्ति होने पर दूसरा ध्यान प्रारम्भ करने से पूर्व बीच के समय) में प्रवृत्त होते हुए भगवान गौतम के मन में इस रूप का अध्यवसाय उत्पन्न हुआ–'निश्चय ही महर्द्धिक यावत् महानुभाग (महाभाग्यशाली) दो देव, श्रमण भगवान महावीर स्वामी के निकट प्रकट हुए; किन्तु मैं तो उन देवों को नहीं जानता कि वे कौन से कल्प से या स्वर्ग से, कौन से विमान से और किस प्रयोजन से शीघ्र यहाँ आए हैं? अतः मैं भगवान महावीर के पास जाऊँ और वन्दन–नमस्कार करूँ; पर्युपासना करूँ और ऐसा करके मैं इन और इस प्रकार के उन–(मेरे मन में पहले उत्पन्न) प्रश्नों को पूछूँ। यों गौतम स्वामी ने विचार किया और अपने स्थान से उठे। फिर जहाँ श्रमण भगवान महावीर स्वामी विराजमान थे, वहाँ आए, उनकी पर्युपासना करने लगे।

[2] After concluding one course of meditation and before commencing the next (*dhyanantarika*), this thought came to his mind—'Indeed two gods, with great opulence... and so on up to... fortune have appeared before Shraman Bhagavan Mahavir. However, I do not know these gods, nor do I know from which *Kalp* or celestial vehicle they rushed here and for what purpose ? Therefore I should approach Bhagavan Mahavir, offer him homage and obeisance, duly worship him and put forth my said queries.' With these thoughts Gautam Swami got up from his seat, came where Shraman Bhagavan Mahavir was seated... and so on up to... commenced worship.

[प्र. ३] 'गोयमा !' इ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–से नूणं तव गोयमा ! झाणंतरियाए वट्टमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए। से नूणं गोयमा ! अट्ठे समट्ठे ?

[उ.] हंता, अत्थि।

तं गच्छाहि णं गोयमा ! एए चेव देवा इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं वागरेहिंति।

[प्र. ३] इसके पश्चात् श्रमण भगवान महावीर ने गौतम आदि अनगारों को सम्बोधित करके भगवान गौतम से इस प्रकार कहा–'गौतम ! ध्यानान्तरिका में वर्तते हुए तुम्हारे मन में इस प्रकार का अध्यवसाय उत्पन्न हुआ कि मैं देवों सम्बन्धी तथ्य जानने के लिए श्रमण भगवान महावीर की सेवा में जाकर उन्हें वन्दन–नमस्कार करूँ, उनकी पर्युपासना करूँ, उसके पश्चात् पूर्वोक्त प्रश्न पूछूँ, यावत् इसी कारण से जहाँ मैं हूँ वहाँ तुम मेरे पास शीघ्र आए हो। हे गौतम ! यही बात है न?''

[उ.] 'हाँ, भगवन् ! यह बात ऐसी ही है।'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गौतम ! तुम (अपनी शंका के निवारणार्थ उन्हीं देवों के पास) जाओ। वे देव ही इस प्रकार की जो भी बातें हुई थीं, तुम्हें बतायेंगे।'

[Q. 3] Addressing Gautam and others, Shraman Bhagavan Mahavir said as follows—"Gautam ! In between your courses of meditation (*dhyanantarika*) you had this thought in your mind—'To know about gods I should approach Bhagavan Mahavir, offer him homage and obeisance, duly worship him and put forth my said queries.' That is why you have rushed to where I am seated. Gautam ! Isn't that so ?"

[Ans.] Yes, *Bhante* ! Indeed, that is so.

"Gautam ! Go to those gods (to seek answers to your queries) and they will tell you all that transpired in this regard."

[४] तए णं भगवं गोयमे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे समणं भगवं महावीरं वंदति णमंसति, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव ते देवा तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

तए णं ते देवा भगवं गोयमं एज्जमाणं पासंति, पासित्ता हट्ठा जाव हयहियया खिप्पामेव अब्भुट्ठेंति, अब्भुट्ठित्ता खिप्पामेव पच्चुवागच्छंति, २ त्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छंति, २ त्ता जाव णमंसित्ता एवं वयासी–एवं खलु भंते ! अम्हे महासुक्काओ कप्पाओ महासामाणाओ विमाणाओ दो देवा महिड्ढिया जाव पादुब्भूआ। तए णं अम्हे समणं भगवं महावीरं वंदामो णमंसामो, २ त्ता मणसा चेव इमाइं एयारूवाइं वागरणाइं पुच्छामो–कइ णं भंते ! देवाणुप्पियाणं अंतेवासिसयाइं सिज्झिहिंति जाव अंतं करेहिंति ? तए णं समणे भगवं महावीरे अम्हेहिं मणसा पुट्ठे अम्हं मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं वागरेति–एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम सत्त अंतेवासीसयाइं जाव अंतं करेहिंति। तए णं अम्हे समणेणं भगवया महावीरेणं मणसा पुट्ठेणं मणसा चेव इमं एयारूवं वागरणं वागरिया समाणा समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो, २ त्ता जाव पज्जुवासामो त्ति कट्टु भगवं गोयमं वंदंति नमंसंति, २ त्ता जामेव दिसिं पाउब्भूआ तामेव दिसिं पडिगया।

[४] श्रमण भगवान महावीर द्वारा इस प्रकार की आज्ञा मिलने पर भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया और फिर जिस तरफ वे देव थे, उसी ओर जाने का संकल्प किया।

उधर उन देवों ने भगवान गौतम स्वामी को अपनी ओर आते देखा तो वे अत्यन्त हर्षित हुए यावत् उनका हृदय प्रफुल्लित हो गया। वे शीघ्र ही खड़े हुए, फुर्ती से उनके सामने गए और जहाँ गौतम स्वामी थे, वहाँ उनके पास पहुँचे। फिर उन्हें वन्दन-नमस्कार करके इस प्रकार बोले-'भगवन् !' महाशुक्रकल्प (सप्तम देवलोक) से, महासामान (महास्वर्ग) नामक महाविमान से हम दोनों महर्द्धिक यावत् महानुभाग देव यहाँ आये हैं। यहाँ आकर हमने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दन-नमस्कार किया और मन से ही इस प्रकार की ये बातें पूछीं कि-'भगवन् ! आप देवानुप्रिय के कितने सौ शिष्य सिद्ध होंगे यावत्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वदुःखों का अन्त करेंगे?' तब हमारे द्वारा पूछे जाने पर उन्होंने हमें मन से ही इस प्रकार का यह उत्तर दिया–'हे देवानुप्रियो ! मेरे सात सौ शिष्य सिद्ध होंगे, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करेंगे।' इस प्रकार मन से पूछे गए प्रश्न का उत्तर श्रमण भगवान महावीर द्वारा मन से ही प्राप्त करके हम अत्यन्त हृष्ट और सन्तुष्ट हुए यावत् हमारा हृदय उनके प्रति कृतज्ञ हो गया। अतएव हम श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमस्कार करके यावत् उनकी पर्युपासना कर रहे हैं।' यों कहकर उन देवों ने भगवान गौतम स्वामी को वन्दन–नमस्कार किया और वे दोनों देव जिस दिशा से प्रादुर्भूत हुए थे, उसी दिशा में वापस लौट गए।

[4] On getting this permission from Shraman Bhagavan Mahavir, Bhagavan Gautam paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and decided to approach the gods.

When the gods saw Bhagavan Gautam Swami approaching, they were pleased... and so on up to... delighted. They at once got up and hurried towards Gautam Swami. After paying him homage and obeisance they said—"*Bhante* ! We, two gods, with great opulence... and so on up to... fortune, from Mahasaaman celestial vehicle in Mahashukra Kalp came here. After that we paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and asked in our mind—'*Bhante* ! How many hundred of your disciples will become *Siddhas*... and so on up to... end all miseries ?' On being asked thus he replied in his mind—'O beloved of gods ! Seven hundred of my disciples will become *Siddhas*... and so on up to... end all miseries.' Thus on getting answer from Shraman Bhagavan Mahavir in his mind to the question asked by us in our mind we were extremely pleased and contented, and our hearts were filled with gratitude for him. Therefore we paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and are doing his worship." With these words those gods paid homage and obeisance to Bhagavan Gautam Swami and returned in the direction they had appeared from.

देवों को 'नो–संयत' कहना CALLING GODS NON-RESTRAINED

२०. [प्र.] 'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं जाव एवं वयासी–देवा णं भंते ! 'संजया' त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे। अब्भक्खाणमेयं देवाणं।

२१. [प्र.] देवाणं भंते ! 'असंजता' त्ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे। णिट्ठुरवयणमेयं देवाणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. [प्र.] देवाणं भंते ! 'संजयासंजया' ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे। असब्भूयमेयं देवाणं।

२३. [प्र.] से किं खाति णं भंते ! देवा ति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] गोयमा ! देवा णं 'नोसंजया' ति वत्तव्वं सिया।

२०. [प्र.] 'भगवन् !' इस प्रकार सम्बोधित करके भगवान गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार किया यावत् इस प्रकार पूछा-भगवन् ! क्या देवों को 'संयत' कहा जा सकता है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ (सम्यक्) नहीं है, (देवों को 'संयत' कहना) देवों के लिए अभ्याख्यान (मिथ्या आरोपित कथन) है।

२१. [प्र.] भगवन् ! क्या देवों को 'असंयत' कहना चाहिए ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ (भी) समर्थ नहीं है। देवों के लिए (असंयत) कहना निष्ठुर वचन है।

२२. [प्र.] भगवन् ! क्या देवों को 'संयतासंयत' कहना चाहिए ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ (भी) समर्थ नहीं है, देवों को 'संयतासंयत' कहना देवों के लिए असत्य वचन है।

२३. [प्र.] भगवन् ! तो फिर देवों को किस नाम से पुकारना चाहिए ?

[उ.] गौतम ! देवों को 'नोसंयत' कहा जा सकता है।

20. [Q.] "*Bhante* !" Addressing thus Bhagavan Gautam Swami paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir... and so on up to... and submitted—"*Bhante* ! Can gods be called 'restrained' (*samyat*) ?"

[Ans.] Gautam ! That is not true. To say so is incorrect.

21. [Q.] "*Bhante* ! Can gods be called 'unrestrained' (*asamyat*) ?"

[Ans.] Gautam ! That is not true. To say so is rude.

22. [Q.] "*Bhante* ! Can gods be called 'restrained-unrestrained' (*samyatasamyat*) ?"

[Ans.] Gautam ! That too is not true. To say so is a false statement for gods.

23. [Q.] "*Bhante* ! Then what should gods be called (in this regard) ?

[Ans.] Gautam ! Gods can be called non-restrained (*nosamyat*).

विवेचन : देवों के लिए 'नोसंयत' शब्द कहने का कारण—जिस प्रकार 'मृत' और 'दिवंगत' का अर्थ एक होते हुए भी 'मर गया' शब्द निष्ठुर (कठोर) वचन होने से 'स्वर्गवासी हो गया' ऐसे अनिष्ठुर (मृदु) शब्दों का प्रयोग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया जाता है वैसे ही यहाँ 'असंयत' शब्द के बदले 'नोसंयत' शब्द का प्रयोग किया गया है। यह यथार्थ मृदु वचन है। *(वृत्ति पत्रांक २११)*

Elaboration—Reason for using the term *nosamyat* for gods—although dead or deceased are factually correct terms for a person who has died, in common polite usage the term 'left or departed for heavenly abode' is used. In the same way *nosamyat* is the correct and polite term for *asamyat*. *(Vritti leaf 211)*

देवों की भाषा : अर्ध-मागधी LANGUAGE OF GODS : ARDHAMAAGADHI

२४. [प्र.] देवा णं भंते ! कयराए भासाए भासंति ? कतरा वा भासा भासिज्जमाणी विसिस्सति ?

[उ.] गोयमा ! देवा णं अद्धमागहाए भासाए भासंति, सा वि य णं अद्धमागहा भासा भासिज्जमाणी विसिस्सति।

२४. [प्र.] भगवन् ! देव कौन-सी भाषा बोलते हैं ? अथवा (देवों द्वारा) बोली जाती हुई कौन-सी भाषा विशिष्ट रूप होती है ?

[उ.] गौतम ! देव अर्ध-मागधी भाषा बोलते हैं, और बोली जाती हुई वह अर्ध-मागधी भाषा ही विशिष्ट रूप होती है।

24. [Q.] *Bhante* ! In what language do gods speak ? Or what is the special language spoken by them (gods) ?

[Ans.] Gautam ! Gods speak in Ardhamaagadhi language ? Being spoken by them (gods) Ardhamaagadhi has acquired the status of special language.

विवेचन : अर्ध-मागधी का स्वरूप—वृत्तिकार के अनुसार जो भाषा मगध देश में बोली जाती है, उसे मागधी कहते हैं। जिस भाषा में मागधी और प्राकृत आदि भाषाओं का मिश्रण हो गया हो, उसे अर्ध-मागधी भाषा कहते हैं। जिस भाषा में आधी मागधी भाषा हो और आधी दूसरी भाषाएँ मिश्रित हुई हों, वही अर्ध-मागधी भाषा है। अथवा प्राचीन आचार्यों की यह भी मान्यता है कि प्राकृत, संस्कृत, मागधी, पैशाची शोरसौनी और देशी अपभ्रंश जिसमें इन छहों भाषाओं का मिश्रण हो वह अर्द्ध-मागधी है। वह तीर्थंकरों की भाषा है, देवों की भी भाषा है तथा जन भाषा भी है। अतः संस्कृत से भी उसका महत्त्व अधिक है। *(वृत्ति पत्रांक २११)*

Elaboration—Ardha-maagadhi language—According to the commentator (*Vritti*) the language spoken in Magadh is called Maagadhi. The language that has mixture of Maagadhi, Prakrit and other languages is called Ardha-maagadhi. The language that has half (*ardha*) of Maagadhi and half of other languages is Ardhamaagadhi. The belief of ancient scholars is that the language that has mixture of Prakrit,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sanskrit, Maagadhi, Paishachi, Shaurseni and Deshi languages is called Ardhamaagadhi. As it is the language used by *Tirthankars*, gods, and masses it is more important than Sanskrit even. *(Vritti, leaf 221)*

छद्मस्थ और केवली का ज्ञान **KNOWLEDGE OF CHHADMASTH AND KEVALI**

२५. [प्र.] **केवली णं भंते ! अंतकरं वा अंतिमसरीरियं वा जाणति पासति ?**

[उ.] **हंता, गोयमा ! जाणति पासति।**

२५. [प्र.] भगवन् ! क्या केवली अन्तकर (कर्मों का अन्त करने वाले) को अथवा चरमशरीरी को जानता-देखता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह उसे जानता-देखता है।

25. [Q.] *Bhante* ! Does the omniscient (*Kevali*) know and see an *antakar* (rebirth-terminator) or *charam shariri* (terminal-bodied) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He knows and sees.

२६. [प्र. १] **जहा णं भंते ! केवली अंतकरं वा अंतिमसरीरियं वा जाणति पासति तहा णं छउमत्थे वि अंतकरं वा अंतिमसरीरियं वा जाणति पासति ?**

[उ.] **गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे, सोच्चा जाणति पासति पमाणतो वा।**

२६. [प्र. १] भगवन् ! जिस प्रकार केवली अन्तकर को, अथवा अन्तिमशरीरी को जानता-देखता है, क्या उसी प्रकार छद्मस्थ-मनुष्य भी अन्तकर को अथवा अन्तिमशरीरी को जानता-देखता है ?

[उ. १] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं, (अर्थात्-केवली की तरह छद्मस्थ अपने ही ज्ञान से नहीं जान सकता), किन्तु छद्मस्थ मनुष्य किसी से सुनकर अथवा प्रमाण द्वारा जानता-देखता है।

26. [Q. 1] *Bhante* ! As the omniscient (*Kevali*) knows and sees an *antakar* (rebirth-terminator) or *charam shariri* (terminal-bodied), in the same way does a *chhadmasth* (a person with finite cognition) also know and see an *antakar* (rebirth-terminator) or *charam shariri* (terminal-bodied) ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct (a *chhadmasth* cannot know and see directly of his own accord like a *Kevali*). He knows by hearing (from someone) or through validation (*pramaan*).

[प्र. २] **से किं तं सोच्चा ?**

[उ.] **सोच्चा णं केवलिस्स वा, केवलिसावयस्स वा, केवलिसावियाए वा, केवलिउवासगस्स वा, केवलिउवासियाए वा, तप्पक्खियस्स वा, तप्पक्खियसावगस्स वा, तप्पक्खियसावियाए वा, तप्पक्खियउवासगस्स वा, तप्पक्खियउवासियाए वा। से तं सोच्चा।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] भगवन् ! सुनकर (किसी से सुनकर) का अर्थ क्या है ?

[उ. २] हे गौतम ! केवली से, केवली के श्रावक, केवली के पास सुनने वाला, केवली की श्राविका, केवली के उपासक (सुनने के लक्ष्य के बिना केवली की उपासना), केवली की उपासिका, **केवली-पाक्षिक** = (स्वयंबुद्ध), केवली पाक्षिक के श्रावक, केवली-पाक्षिक की श्राविका, केवली पाक्षिक के उपासक अथवा केवली पाक्षिक की उपासिका से, इनमें से किसी भी एक से 'सुनकर' छद्मस्थ मनुष्य यावत् जानता और देखता है। यह है **'सोच्चा'**-'सुनकर' का अर्थ।

[Q. 2] *Bhante* ! What is the meaning of 'by hearing (from someone)' ?

[Ans.] A *chhadmasth* knows and sees by hearing from any one of these—omniscient (*Kevali*), male disciple of omniscient (*shravak*), female disciple of omniscient (*shravika*), male lay worshipper of omniscient (*upaasak*), female lay worshipper of omniscient (*upaasika*), self-enlightened omniscient (*Kevali-pakshik*), male disciple of self-enlightened omniscient (*shravak*), female disciple of self-enlightened omniscient (*shravika*), male lay worshipper of self-enlightened omniscient (*upaasak*), female lay worshipper of self-enlightened omniscient (*upaasika*). This is the meaning of 'by hearing (from someone)'.

[प्र. ३] से किं तं पमाणे ?

[उ.] पमाणे चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा-पच्चक्खे, अणुमाणे, ओवम्मे, आगमे। जहा अणुयोगद्दारे तहा णेयव्वं पमाणं जाव तेण परं नो अत्तागमे, नो अणंतरागमे, परंपरागमे।

[प्र. ३] भगवन् ! वह 'प्रमाण' क्या है ? कितने हैं ?

[उ. ३] गौतम ! प्रमाण चार प्रकार का है, यथा-(१) प्रत्यक्ष, (२) अनुमान, (३) औपम्य (उपमान), और (४) आगम। (ज्ञान-गुण-) प्रमाण के विषय में जिस प्रकार अनुयोगद्वारसूत्र में कहा गया है, उसी प्रकार यहाँ भी जान लेना चाहिए; यावत् न आत्मागम, न अनन्तरागम, किन्तु परम्परागम तक कहना चाहिए। *(सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र (२), सूत्र ४३६-४७०)*

[Q. 3] *Bhante* ! What is the meaning of validation (*pramaan*) ? (How many are they ?)

[Ans.] Gautam ! Validation (*pramaan*) are of four kinds—(1) *Pratyaksh* (direct experience or perceptual cognition), (2) *Anumaan* (inferential knowledge), (3) *Upamaan* (analogical knowledge), and (4) *Agam* (scriptural knowledge). What has been mentioned in *Anuyogadvar Sutra* about (*Jnana Guna* -) *Pramaan* should be repeated here... and so on up to... neither *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge) nor *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

but only *Paramparagam* (scriptural knowledge acquired through lineage). *(Illustrated Anuyogadvar Sutra-2, aphorism - 436-470)*

२७. [प्र.] केवली णं भंते ! चरमकम्मं वा चरमनिज्जरं वा जाणति, पासति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाणति, पासति।

२७. [प्र.] भगवन् ! क्या केवली मनुष्य चरम कर्म को अथवा चरम निर्जरा को जानता-देखता है ?

२७. [उ.] हाँ, गौतम ! केवली चरम कर्म को या चरम निर्जरा को जानता-देखता है।

27. [Q.] *Bhante* ! Does the omniscient (*Kevali*) know and see the last *karma* (*charam karma*) or last shedding (*charam nirjara*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! he knows and sees.

२८. [प्र.] जहा णं भंते ! केवली चरमकम्मं वा०, जहा णं अंतकरेणं वा आलावगो तहा चरमकम्मेणं वि अपरिसेसिओ णेयव्वो।

२८. [प्र.] भगवन् ! जिस प्रकार केवली चरम कर्म को या चरम निर्जरा को जाता-देखता है, क्या उसी तरह छद्मस्थ भी (उनको) यावत् जानता-देखता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार 'अन्तकर' के विषय में आलापक कहा था, उसी प्रकार 'चरम कर्म' का पूरा आलापक समझना चाहिए।

28. [Q.] *Bhante* ! As the omniscient (*Kevali*) knows and sees the last *karma* (*charam karma*) or last shedding (*charam nirjara*), in the same way does a *chhadmasth* (a person with finite cognition) also know and see them ?

[Ans.] Like the statement about *antakar*, the complete statement should be repeated for last shedding.

विवेचन : प्रमाण—चार प्रमाण तथा तीन प्रकार के आगम का विशेष अर्थ अनुयोगद्वार, भाग १ से जानना चाहिए। सूत्रों का गुम्फन करने वाले गणधरों के लिए सूत्र आत्मागम है, अर्थ का ज्ञान तीर्थंकरों से प्राप्त होता है। अतः गणधर के लिए अर्थ अनन्तरागम है, गणधरों के शिष्यों के लिए सूत्र व अर्थ दोनों ही परम्परागम हैं। **चरम कर्म एवं चरम निर्जरा**—चौदहवें गुणस्थानवर्ती शैलेशी (अयोगी) अवस्था के अन्तिम समय में जिस कर्म का अनुभव हो, उसे चरम कर्म तथा उसके अनन्तर समय में (शीघ्र ही) जो कर्म जीवप्रदेशों से झड़ जाते हैं, उसे चरम निर्जरा कहते हैं।

Elaboration—Pramaan—For the relevant meaning of four types of *pramaan* and three types of *Agam* refer to *Anuyogadvar Sutra*. For *Ganadhars*, compilers of scriptures (*Sutra*), the canons are *Atmagam* (self-acquired scriptural knowledge). As the meaning is given by *Tirthankar* it is *Anantaragam* (scriptural knowledge acquired in immediate succession) for *Ganadhars*. For the disciples of *Ganadhars*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

text and meaning both are *Paramparagam* (scriptural knowledge acquired through lineage). *Charam karma* and *charam nirjara*—The *karma* experienced at the last *Samaya* of the *Shaileshi* (mountain-like) state in the 14th *Gunasthaan* is called *charam karma* (last *karma*) in the next *Samaya* these *karmas* are shed from soul space-points, this process of shedding is called *charam nirjara* (last shedding.

केवली के प्रकृष्ट मन, वचन को जानने-देखने में समर्थ वैमानिक देव

EXALTED MIND AND EXPRESSION OF KEVALI

२९. [प्र.] केवली णं भंते ! पणीतं मणं वा, वइं वा धारेज्जा ?

[उ.] हंता, धारेज्जा।

३०. [प्र. १] जे णं भंते ! केवली पणीयं मणं वा वइं वा धारेज्जा तं णं वेमाणिया देवा जाणंति, पासंति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइया जाणंति पासंति, अत्थेगइया न जाणंति न पासंति।

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव न जाणंति न पासंति ?

[उ.] गोयमा ! वेमाणिया देवा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-माइमिच्छादिट्ठिउववन्नगा य, अमाईसम्मद्दिट्ठिउववन्नगा य। तत्थ णं जे ते माईमिच्छादिट्ठीउववण्णगा ते ण जाणंति ण पासंति; तत्थ णं जे ते अमाईसम्मदिट्ठीउववण्णगा ते णं जाणंति, पासंति। [से केणट्ठेणं एवं वुच्चइ-अमाईसम्मदिट्ठी जाव-पासंति ? गोयमा ! अमाईसम्मदिट्ठी दुविहा पण्णत्ता-अणंतरोववण्णगा य, परंपरोववण्णगा य; तत्थ णं अणंतरोववण्णगा ण जाणंति, परंपरोववण्णगा जाणंति। से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-परंपरोववण्णग जाव-जाणंति ? गोयमा ! परंपरोववण्णगा दुविहा पण्णत्ता-पज्जत्तगा य, अपज्जत्तगा य; पज्जत्तगा जाणंति, अपज्जत्तगा ण जाणंति।] एवं अणंतर-परंपर-पज्जत्ताऽपज्जत्ता य उवउत्ता अणुवउत्ता। तत्थ णं जे ते उवउत्ता ते जाणंति पासंति। से तेणट्ठेणं०, तं चेव।

२९. [प्र.] भगवन् ! क्या केवली भगवान प्रकृष्ट (प्रशस्त) मन और प्रकृष्ट वचन को धारण करते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! धारण करते हैं।

३०. [प्र. १] भगवन् ! केवली जिस प्रकार के प्रकृष्ट मन और प्रकृष्ट वचन को धारण करते हैं, क्या उसे वैमानिक देव जानते-देखते हैं ?

[उ.] गौतम ! कितने ही (वैमानिक देव उसे) जानते-देखते हैं, और कितने ही नहीं जानते-देखते।

[प्र. २] भगवन् ! कितने ही देव जानते-देखते हैं, और कितने ही नहीं जानते-देखते; ऐसा किस कारण से कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! वैमानिक देव दो प्रकार के हैं-यथा-मायी-मिथ्यादृष्टि रूप से उत्पन्न और अमायी सम्यग्दृष्टि रूप से उत्पन्न। [इन दोनों में से जो मायी-मिथ्यादृष्टि रूप से उत्पन्न हुए हैं, वे (वैमानिक देव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवली के प्रकृष्ट–मन–वचन को) नहीं जानते–देखते तथा जो अमायी–सम्यग्दृष्टि रूप से उत्पन्न हुए हैं, वे जानते–देखते हैं।

अमायी–सम्यग्दृष्टि वैमानिक देव जानते और देखते हैं, ऐसा कहने का क्या कारण है ?

हे गौतम ! अमायी–सम्यग्दृष्टि देव दो प्रकार के कहे गये हैं–यथा–अनन्तरोपपन्नक और परम्परोपपन्नक। इनमें जो अनन्तरोपपन्नक हैं, वे नहीं जानते और नहीं देखते हैं और जो परम्परोपपन्नक हैं, वे जानते और देखते हैं।

हे भगवन् ! 'परम्परोपपन्नक देव जानते और देखते हैं'–ऐसा कहने का क्या कारण है ?

हे गौतम ! परम्परोपपन्नक देव दो प्रकार के कहे गये हैं–पर्याप्त और अपर्याप्त। जो पर्याप्त हैं, वे जानते और देखते हैं और जो अपर्याप्त हैं, वे नहीं जानते और नहीं देखते हैं।'

इसी तरह अनन्तरोपपन्नक–परम्परोपपन्नक, पर्याप्त–अपर्याप्त, एवं उपयोगयुक्त (उपयुक्त)–उपयोगरहित (अनुपयुक्त) इस प्रकार के वैमानिक देवों में से जो उपयोगयुक्त वैमानिक देव हैं, वे ही (केवली के प्रकृष्ट मन एवं वचन को) जानते–देखते हैं। इसी कारण से ऐसा कहा गया है कि कितने ही वैमानिक देव जानते–देखते हैं, और कितने ही नहीं जानते–देखते।

29. [Q.] *Bhante* ! Does the omniscient (*Kevali*) hold an exalted mind and expression (*vachan*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He does.

30. [Q. 1] *Bhante* ! Do the Vaimanik gods know and see that the omniscient (*Kevali*) holds an exalted mind and expression (*vachan*) ?

[Ans.] Gautam ! Some of them know and see and some do not know and see.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so that some of them know and see and some do not know and see ?

[Ans.] Gautam ! Vaimanik gods are of two types—Born as deceitful and unrighteous (*maayi-mithyadrishti*) and deceit-free and righteous (*amaayi-samyagdrishti*). Of these those born as deceitful and unrighteous (*maayi-mithyadrishti*) do not know and see (the exalted mind and expression of *Kevali*) and deceit-free and righteous (*amaayi-samyagdrishti*) do know and see.

Why is it said that deceit-free and righteous (*amaayi-samyagdrishti*) gods do know and see ?

Gautam ! Deceit-free and righteous (*amaayi-samyagdrishti*) gods are of two kinds—those born continuously without a time gap (*anantaropapannak*) and those born with a gap of time

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*paramparopapannak*). Of these those born continuously without a time gap (*anantaropapannak*) do not know and see and those born with a gap of time (*paramparopapannak*) do know and see.

Bhante ! Why is it said that gods born with a gap of time (*paramparopapannak*) do know and see ?

Gautam ! gods born with a gap of time (*paramparopapannak*) are of two kinds—fully developed (*paryapt*) and underdeveloped (*aparyapt*). Of these those who are fully developed (*paryapt*) know and see and the underdeveloped (*aparyapt*) do not know and see.

Like this, out of the *anantaropapannak-paramparopapannak*, *paryapt-aparyapt* and *upayogayukta* (with a tendency to use knowledge)-*upayogarahit* (without a tendency to use knowledge) Vaimanik gods only those who have a tendency to use knowledge (*upayogayukta*) know and see (the exalted mind and expression of *Kevali*). That is why it is said that some of the Vaimanik gods know and see and some do not know and see.

विवेचन : जो वैमानिक देव मायी–मिथ्यादृष्टि हैं, उनके सम्यग्ज्ञान नहीं होता, अमायी–सम्यग्दृष्टि वैमानिकों में से जो अनन्तरोपपन्नक–(जिसे जन्म लिए एक ही समय हुआ है) होते हैं, उन्हें भी ज्ञान नहीं होता, तथा परम्परोपपन्नक–(जिसे जन्म लिए एक समय से अधिक हो गया है) वैमानिकों में भी जो अपर्याप्त होते हैं, उन्हें भी ज्ञान नहीं होता, इसी प्रकार जो पर्याप्त वैमानिक देव हैं, उनमें जो सम्यग्दृष्टि, उपयोगयुक्त होता है, वही केवली के प्रकृष्ट मन–वचन को जान–देख सकता है, उपयोगरहित नहीं।

Elaboration—The deceitful and unrighteous (*maayi-mithyadrishti*) Vaimanik gods are devoid of right knowledge (*samyak-jnana*). Of the deceit-free and righteous (*amaayi-samyagdrishti*) Vaimaniks those who are born continuously without a time gap (*anantaropapannak*) are also devoid of right knowledge. Also among those born with a gap of time (*paramparopapannak*) those who are not fully developed (*aparyapt*) do not have right knowledge. In the same way among the fully developed (*paryapt*) Vaimanik gods only those who are righteous and endowed with the tendency to use knowledge can know and see the exalted mind and expression of *Kevali*, not those who are not endowed with the tendency to use knowledge.

अनुत्तरौपपातिक देवों की मनःशक्ति MENTAL POWER OF ANUTTARAUPAPATIK GODS

३१. [प्र. १] पभू णं भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया चेव समाणा इहगएणं केवलिणा सद्धिं आलावं वा संलावं वा करेत्तए ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हंता, पभू।

३१. [प्र. १] भगवन् ! क्या अनुत्तरौपपातिक (अनुत्तरविमानों में उत्पन्न हुए) देव अपने स्थान पर रहे हुए ही, (मनुष्यलोक में) रहे हुए केवली के साथ आलाप–(एक बार बातचीत) और संलाप–(बार-बार बातचीत) करने में समर्थ हैं ?

[उ.] गौतम ! हाँ, (वे ऐसा करने में) समर्थ हैं।

31. [Q. 1] *Bhante* ! Are the Anuttaraupapatik gods (those born in Anuttar *vimaans*) capable of communicating (*aalaap*) and discussing (*samlaap*) from there with the *Kevali* (omniscient) who is here (on the earth) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They are.

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव पभू णं अणुत्तरोववाइया देवा जाव करेत्तए ?

[उ.] गोयमा ! जं णं अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया चेव समाणा अट्ठं वा हेउं वा पसिणं वा कारणं वा वागरणं वा पुच्छंति, तं णं इहगए केवली अट्ठं वा जाव वागरणं वा वागरेति। से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि अनुत्तरौपपातिक देव आलाप और संलाप करने में समर्थ हैं ?

[उ.] हे गौतम ! अनुत्तरौपपातिक देव अपने स्थान पर रहे हुए ही, जो अर्थ, हेतु, प्रश्न, कारण अथवा व्याकरण (व्याख्या) पूछते हैं, उसका उत्तर यहाँ रहे हुए केवली भगवान देते हैं। इस कारण से यह कहा गया है कि अनुत्तरौपपातिक देव यावत् आलाप-संलाप करने में समर्थ हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that Anuttaraupapatik gods... and so on up to... are capable of communicating and discussing (with the *Kevali*).

[Ans.] Gautam ! When the Anuttaraupapatik gods from their celestial vehicles ask some meaning, cause, question, reason or grammar (elaboration) then *Kevali Bhagavan* provides them the answer from here. That is why it is said that Anuttaraupapatik gods... and so on up to... are capable of communicating and discussing (with the *Kevali*).

३२. [प्र. १] जं णं भंते ! इहगए चेव केवली अट्ठं वा जाव वागरेइ तं णं अणुत्तरोववाइया देवा तत्थगया चेव समाणा जाणंति, पासंति ?

[उ.] हंता, जाणंति पासंति।

३२. [प्र. १] भगवन् ! केवली भगवान यहाँ रहे हुए जिस अर्थ, यावत् व्याकरण का उत्तर देते हैं, क्या उस उत्तर को वहाँ रहे हुए अनुत्तरौपपातिक देव जानते-देखते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे जानते-देखते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

32. [Q. 1] *Bhante* ! Are the Anuttaraupapatik gods capable of knowing and seeing the answers provided by *Kevali Bhagavan* to the meaning... and so on up to... grammar asked by them ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They are.

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव पासंति ?

[उ.] गोयमा ! तेसि णं देवाणं अणंताओ मणोदव्ववग्गणाओ लद्धाओ पत्ताओ अभिसमन्नागताओ भवंति। से तेणट्ठेणं जं णं इहगते केवली जाव पासंति त्ति।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से (कहा जाता है कि वहाँ रहे हुए अनुत्तरौपपातिक देव, यहाँ रहे हुए केवली के द्वारा प्रदत्त उत्तर को) जानते-देखते हैं ?

[उ.] गौतम ! उन देवों को अनन्त मनोद्रव्य-वर्गणा उपलब्ध हैं, प्राप्त हैं, अभिसमन्वागत (अभिमुख समानीत) हैं। इस कारण से यहाँ विराजित केवली भगवान द्वारा कथित अर्थ, हेतु आदि को वे वहाँ रहे हुए ही जान-देख लेते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that (Anuttaraupapatik gods capable of knowing and) seeing (the answers provided by *Kevali Bhagavan* to the meaning... and so on up to... grammar asked by them).

[Ans.] Gautam ! Those gods possess and have at their command an infinite *manodravya-vargana* (units of mental or neuronic capacity). That is why they know and see the meaning... and so on up to... grammar asked by them provided by *Kevali Bhagavan* from here).

३३. [प्र.] अणुत्तरोववाइया णं भंते ! देवा किं उदिण्णमोहा उवसंतमोहा खीणमोहा ?

[उ.] गोयमा ! णो उदिण्णमोहा, उवसंतमोहा, नो खीणमोहा।

३३. [प्र.] भगवन् ! क्या अनुत्तरौपपातिक देव उदीर्णमोह हैं, उपशान्तमोह हैं, अथवा क्षीणमोह हैं ?

[उ.] गौतम ! वे उदीर्णमोह नहीं हैं, उपशान्तमोह हैं, क्षीणमोह नहीं हैं।

33. [Q.] *Bhante* ! Are the Anuttaraupapatik gods with fruited attachment (*udirna moha*), pacified attachment (*upashant moha*) or destroyed attachment (*ksheen moha*) ?

[Ans.] Gautam ! They are not with fruited attachment (*udirna moha*) but with pacified attachment (*upashant moha*) and also not with destroyed attachment (*ksheen moha*).

विवेचन : अनुत्तरौपपातिक देवों का मनोद्रव्य-सामर्थ्य-अनुत्तरौपपातिक देवों के अवधिज्ञान का विषय सम्भिन्न-लोकनाड़ी-(लोकनाड़ी से कुछ कम) है। जो अवधिज्ञान लोकनाड़ी का ग्राहक (ज्ञाता) होता है, वह असीम मनोवर्गणा का ग्राहक होता ही है; क्योंकि जिस अवधिज्ञान का विषय लोक का संख्येय भाग होता है,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह भी मनोद्रव्य का ग्राहक होता है, तो फिर जिस अवधिज्ञान का विषय सम्भिन्न लोकनाड़ी है, वह मनोद्रव्य का ग्राहक हो, इसमें सन्देह ही क्या? इसलिए अनुत्तरविमानवासी देवों का मनोद्रव्यसामर्थ्य असीम है।

पीछे बताया जा चुका है कि केवली के ज्ञानात्मक भाव मन नहीं होता, किन्तु उपयोग रूप मानसिक प्रवृत्ति होती है। केवली जब कुछ कहना चाहते हैं, तब उनके आत्म-प्रदेशों का स्पन्दन होता है। उससे मनोद्रव्य वर्गणा (मानसिक पुद्गल स्कन्धों) का ग्रहण होता है। उन पुद्गलों को अनुत्तर विमान के देव ग्रहण कर जान लेते हैं।

अनुत्तरौपपातिक देव उपशान्त मोह हैं--अनुत्तरौपपातिक देवों के वेदमोहनीय का उदय उत्कट नहीं होता, इसलिए वे उदीर्णमोह नहीं हैं; वे क्षीणमोह भी नहीं, क्योंकि उनमें क्षपक श्रेणी का अभाव है; किन्तु उनमें मैथुन का कथमपि सद्भाव न होने से तथा वेदमोहनीय अनुत्कट होने से वे 'उपशान्तमोह' कहे गये हैं। *(वृत्ति, पत्राक २२३)*

Elaboration—Infinite mental capacity of Anuttaraupapatik gods—The range of the *avadhi-jnana* of Anuttaraupapatik gods covers *sambhinna-lokanaadi* (slightly less than the central spine of the lok). The *avadhi-jnana* capable of knowing the central spine of the Lok involves infinite units of mental capacity. This is because even the *avadhi-jnana* capable of knowing countable fraction of Lok involves infinite mental capacity. Thus there can be no doubt that the *avadhi-jnana* capable of knowing the central spine of the Lok involves infinite units of mental capacity. That is why the mental capacity of gods dwelling in Anuttar *vimaans* is unlimited.

It has already been stated that *Kevali* does not have *bhaava-man* (psychological mind). He only has a tendency for mental activity. When a *Kevali* desires to utter something his soul-spacepoints vibrate. This creates vibrations in the mental or neuronic matter particles. The gods of Anuttar *vimaans* have the capacity to receive and understand these vibrations.

Upashant Moha—Anuttaraupapatik gods do not have enough intensity of fruition of experienceable attachment (*vedamohaniya*), therefore they are not with fruited attachment. They are also not with destroyed attachment because they are not on the path of destruction of karmas (*kshapak shreni*). As they are devoid of the sexual desires and intense attachment they are said to be with pacified attachment. *(Vritti, leaf 223)*

केवली इन्द्रियों से नहीं जानते-देखते KEVALI DOES NOT KNOW-SEE WITH SENSE ORGANS

३४. [प्र. १] केवली णं भंते ! आयाणेहिं जाणइ, पासइ ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३४. [प्र. १] भगवन् ! क्या केवली भगवान आदानों (इन्द्रियों) से जानते और देखते हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

34. [Q. 1] *Bhante* ! Does *Kevali Bhagavan* know and see with the help of sense organs (*aadaan* or *indriya*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव केवली णं आयाणेहिं न जाणति, न पासति ?

[उ.] गोयमा ! केवली णं पुरत्थिमेणं मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ जाव निव्वुडे दंसणे केवलिस्स। से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से केवली भगवान इन्द्रियों से नहीं जानते-देखते ?

[उ.] गौतम ! केवली भगवान पूर्व दिशा में मित (सीमित) भी जानते-देखते हैं, अमित (असीम) भी जानते-देखते हैं, यावत् केवली भगवान का (ज्ञान और) दर्शन निरावरण है। इस कारण से कहा गया है कि वे इन्द्रियों से नहीं जानते-देखते। (अपितु प्रत्यक्ष ज्ञान से जानते-देखते हैं)

[Q. 2] *Bhante* ! What are the reasons that *Kevali Bhagavan* does not know and see with the help of sense organs ?

[Ans.] Gautam ! *Kevali Bhagavan* knows and sees limited (*mit*) as well as unlimited (*amit*) in the east... and so on up to... the knowledge and perception of *Kevali Bhagavan* is totally free of any veils. That is why it is said that *Kevali Bhagavan* does not know and see with the help of sense organs. (In fact, he knows and sees directly.)

केवली भगवान का अस्थिर काययोग VIBRANT BODY OF OMNISCIENT

३५. [प्र. १] केवली णं भंते ! अस्सिं समयंसि जेसु आगासपदेसेसु हत्थं वा पायं वा बाहं वा ऊरुं वा ओगाहित्ता णं चिट्ठति, पभू णं भंते ! केवली सेयकालंसि वि तेसु चेव आगासपदेसेसु हत्थं वा जाव ओगाहित्ताणं चिट्ठित्तए ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

३५. [प्र. १] भगवन् ! केवली भगवान इस समय (वर्तमान) में जिन आकाश-प्रदेशों पर अपने हाथ, पैर, बाहू और उरू (जंघा) को अवगाहित (स्पर्श) करके रहते हैं, क्या श्रेयकाल-(भविष्यकाल) में भी वे उन्हीं आकाशप्रदेशों पर अपने हाथ आदि को अवगाहित करके रह सकते हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

35. [Q. 1] *Bhante* ! Does *Kevali Bhagavan*, who occupies certain space-points with his hands, legs, arms and thighs at the present moment,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐

continue to occupy the same space-points with his hands etc. in the future (*shreya kaal*) as well ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! जाव केवली णं अस्सिं समयंसि जेसु आगासपदेसेसु हत्थं वा जाव चिट्ठति नो णं पभू केवली सेयकालंसि वि तेसु चेव आगासपदेसेसु हत्थं वा जाव चिट्ठित्तए ?

[उ.] गोयमा ! केवलिस्स णं वीरियसजोगद्दव्वयाए चलाइं उवगरणाइं भवंति चलोवकरणट्ठयाए य णं केवली अस्सिं समयंसि जेसु आगासपदेसेसु हत्थं वा जाव चिट्ठति णो णं पभू केवली सेयकालंसि वि तेसु चेव जाव चिट्ठित्तिए। से तेणट्ठेणं जाव वुच्चइ--केवली णं अस्सिं समयंसि जाव चिट्ठित्तए ?

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है कि केवली भगवान इस समय में जिन आकाशप्रदेशों पर अपने हाथ आदि को यावत् अवगाढ़ करके रहते हैं, भविष्यकाल में वे उन्हीं आकाशप्रदेशों पर अपने हाथ आदि को यावत् अवगाढ़ करके रहने में समर्थ नहीं हैं ?

[उ.] गौतम ! केवली भगवान का जीवद्रव्य वीर्यप्रधान योग वाला होता है, (योगों की चंचलता के कारण) उनके हाथ आदि उपकरण (अंगोपांग) चलायमान (अस्थिर) होते हैं। हाथ आदि अंगों के चलित होते रहने से वर्तमान (इस) समय में जिन आकाशप्रदेशों में केवली भगवान अपने हाथ आदि को अवगाहित करके रहे हुए हैं, उनहीं आकाशप्रदेशों पर भविष्यकाल में वे हाथ आदि को अवगाहित करके नहीं रह सकते। इसी कारण से यह कहा गया है कि केवली भगवान इस समय में जिन आकाशप्रदेशों पर अपने हाथ, पैर यावत् उरू को अवगाहित करके रहते हैं, उस समय के पश्चात् आगामी समय में वे उन्हीं आकाशप्रदेशों पर अपने हाथ आदि को अवगाहित करके नहीं रह सकते।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that *Kevali Bhagavan*, who occupies certain space-points with his hands... and so on up to... thighs at the present moment, cannot continue to occupy the same space-points in the future (*shreya kaal*) as well ?

[Ans.] The soul entity (*jiva dravya*) of *Kevali Bhagavan* is with potency-predominated (*virya-pradhaan*) association (*yoga*). His hands and other body-parts are vibrant (due to the dynamism of this association). Due to this vibration of hands and other parts of the body it is not possible that his hands and other parts continue to occupy the same space-points, that they occupy at present, in the future as well. That is why it is said that *Kevali Bhagavan*, who occupies certain space-points with his hands... and so on up to... thighs at the present moment, cannot continue to occupy the same space-points in the future (*shreya kaal*) as well.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. [प्र. १] पभू णं भंते ! चोद्दसपुव्वी घडाओ घडसहस्सं, पडाओ पडसहस्सं, कडाओ कडसहस्सं, रहाओ रहसहस्सं, छत्ताओ छत्तसहस्सं, दंडाओ दंडसहस्सं अभिनिव्वत्तिता उवदंसेत्तए ?

[उ.] हंता, पभू।

३६. [प्र. १] भगवन् ! क्या चतुर्दशपूर्वधारी (श्रुतकेवली) एक घड़े में से हजार घड़े, एक वस्त्र में से हजार वस्त्र, एक कट (चटाई) में से हजार कट, एक रथ में से हजार रथ, एक छत्र में से हजार छत्र और एक दण्ड में से हजार दण्ड करके दिखलाने में समर्थ हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वे ऐसा करने में समर्थ हैं।

36. [Q. 1] *Bhante* ! Is a *Chaturdash Purvadhar* (scholar of fourteen *Purvas*) capable of displaying one thousand pitchers from just one pitcher, one thousand apparels from just one apparel, one thousand mats from just one mat, one thousand chariots from just one chariot, one thousand umbrellas from just one umbrella and one thousand staffs from just one staff ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He is capable of doing that.

[प्र. २] से केणट्ठेणं पभू चोद्दसपुव्वी जाव उवदंसेत्तए ?

[उ.] गोयमा ! चउद्दसपुव्विस्स णं अणंताइं दव्वाइं उक्करियाभेदेणं भिज्जमाणाइं लद्धाइं पत्ताइं अभिसमन्नागयाइं भवति। से तेणट्ठेणं जाव उवदंसित्तए।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ पंचमे सए : चउत्थो उद्देसओ समत्तो ॥

[प्र. २] भगवन् ! चतुर्दशपूर्वधारी (एक घट में से एक हजार घट यावत् करके दिखलाने में) कैसे समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! चतुर्दशपूर्वधारी श्रुतकेवली ने उत्करिकाभेद द्वारा भेदे जाते हुए अनन्त द्रव्यों को लब्ध किया है, प्राप्त किया है तथा अभिसमन्वागत किया है। इस कारण से वह उपर्युक्त प्रकार से एक घट से हजार घट आदि करके दिखलाने में समर्थ है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

[Q. 2] *Bhante* ! How a *Chaturdash Purvadhar* is so capable (of displaying one thousand pitchers from just one pitcher... and so on up to... one thousand staffs from just one staff) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुद्गल भेद के पाँच प्रकार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-३

Illustration No. 3

पुद्गल भेद के पाँच प्रकार

चतुर्दश पूर्वधारी का लब्धि सामर्थ्य–चतुर्दश पूर्वधारी श्रुत केवली में लब्धिजन्य सामर्थ्य को उदाहरण देकर बताया है कि वह उत्कटिका भेद से पुद्गल द्रव्यों को भेदता हुआ, एक ही दण्ड (या घट, छत्र, रथ आदि) के हजार रूप दिखलाने में समर्थ होता है।

पुद्गलों के भेद पाँच प्रकार के होते हैं-

(१) **खण्ड भेद**–जैसे, मिट्टी के ढेले को फैंकने से उसके टुकड़े-टुकड़े हो जाना।

(२) **प्रतर भेद**–जैसे अभ्रक या भोजपत्र आदि की परत पर परत रहती है। उसी प्रकार पुद्गलों का समवाय प्रतर भेद हैं।

(३) **चूर्णिका भेद**–जिस प्रकार गेहूँ, चना आदि के दाने चक्की में पिसे जाने पर उसका बारीक चूर्ण हो जाता है। यह चूर्णिका भेद है।

(४) **अनुतटिका भेद**–तालाब आदि में या सूखी धरती पर दरारें पड़ जाने से जो भेद दिखाई देता हैं, वह।

(५) **उत्करिकाभेद**–एरण्ड की फली या मूँग फली आदि सूखने पर, अपने आप फटकर उनका बीज स्वाभाविक रूप में ऊपर उछलता है। इस प्रकार के भेद को उत्करिका भेद कहा जाता है। श्रुतकेवली का लब्धिजन्य सामर्थ्य उत्करिका भेद से भिन्न पदार्थ की तरह होता है।

-शतक ५, उ. ४, सूत्र ३३ (या ३६)

FIVE KINDS OF BREAKING OF MATTER

A Chaturdash Purvadhar acquires the special power of disintegrating infinite substances by the process of utkarika-bhed and thereby he is capable of displaying one thousand images of a single stick (or pitcher, umbrella, chariot etc.).

Breaking of matter is done five ways—

(1) **Khand-bhed**—Breaking into pieces when a lump of sand is thrown.

(2) **Pratar-bhed**—Breaking into layers, as it happens with mica or palm leaves.

(3) **Churnika-bhed**—Crushing or grinding into powder form as it happens when grains like wheat and sesame are ground.

(4) **Anutatika-bhed**—Splitting into cracks as it happens when moist earth dries up.

(5) **Utkarika-bhed**—Natural disintegration from one to many as it happens when an Erand or other seed splits. The special power of a Shrut Kevali is like disintegrating infinite substances by the process of utkarika-bhed.

—Shatak 5, lesson-4, Sutra- 36 (2)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! A *Chaturdash Purvadhar* has acquired (*labdh*), possesses (*prapt*) and has at his command (*abhisamnvagat*) infinite substances (*dravya*) being disintegrated by the process of *utkarika-bhed*. That is why he is so capable (of displaying one thousand pitchers from just one pitcher... and so on up to... one thousand staffs from just one staff).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : उत्करिकाभेद का स्वरूप–पुद्गलों को पाँच प्रकार से खण्डित (भिन्न–टुकड़े–टुकड़े) किया जाता है। इन्हें 'पुद्गलों के भेद' कहते हैं, वे पाँच प्रकार हैं–(१) खण्डभेद, (२) प्रतरभेद, (३) चूर्णिकाभेद, (४) अनुतटिकाभेद, और (५) उत्करिकाभेद। जैसे ढेले को फैंकने पर उसके टुकड़े–टुकड़े हो जाते हैं, इसी तरह पुद्गलों के भेद को **'खण्डभेद'** कहते हैं। एक तह के ऊपर दूसरी तह का होना **'प्रतरभेद'** कहलाता है। जैसे–अभ्रक (भोडल) भोजपत्र आदि में प्रतरभेद पाया जाता है। तिल, गेहूँ, आदि के पिस जाने पर भेद होना **'चूर्णिकाभेद'** कहलाता है। तालाब आदि में फटी हुई दरार के समान पुद्गलों के भेद को **'अनुतटिकाभेद'** तथा एरण्ड या मूँगफली का बीज जैसे उछलता है, वैसे एक परमाणु स्कन्ध से दूसरे परमाणु स्कन्ध का चटककर उछलना **'उत्कारिकाभेद'** है। (प्रज्ञापना वृत्ति, पद ११)

लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत की व्याख्या–**लब्ध** = लब्धि–विशेष द्वारा ग्रहण करने योग्य बनाये हुए। **प्राप्त** = लब्धि–विशेष द्वारा ग्रहण किये हुए। **अभिसमन्वागत** = घटादि रूप से परिणमाने के लिए प्रारम्भ किये हुए।

॥ पंचम शतक : चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Utkarika-bhed—Breaking or disintegrating of matter is done five ways. This process is called *pudgala-bhed*—(1) *Khand-bhed*, (2) *Pratar-bhed*, (3) *Churnika-bhed*, (4) *Anutatika-bhed*, and (5) *Utkarika-bhed*. Breaking into pieces as it happens when a lump of matter is thrown is called *Khand-bhed*. Breaking into layers as it happens with mica or palm leaves is called *Pratar-bhed*. Crushing or grinding into powder form as it happens when grains like wheat and sesame are ground is called *Churnika-bhed*. Splitting into cracks as it happens when moist earth (river-bed or pond-bed) dries up is called *Anutatika-bhed*. Natural disintegration from one to many as it happens when an Erand or other seeds split is called *Utkarika-bhed*. *(Prajnapana Vritti, 11)*

Labdh—acquired some special powers. *Prapt*—possessed some special power. *Abhisamanvagat*—have at one's command some special power.

● END OF THE FOURTH LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : पंचम उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : FIFTH LESSON

छद्मस्थ CHHADMASTH (THE UNRIGHTEOUS)

क्या छद्मस्थ सिद्ध हो सकता है ? CAN CHHADMASTH BE SIDDHA ?

१. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणूसे तीयमणंतं सासयं समयं केवलेणं संजमेणं···· सिज्झिंसु···· ?

[उ.] जहा पढमसए चउत्थुद्देसे आलावगा तहा नेयव्वं जाव 'अलमत्थु' त्ति वत्तव्वं सिया।

१. [प्र.] भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य शाश्वत, अनन्त, अतीतकाल (भूतकाल) में केवल संयम द्वारा सिद्ध हुआ है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार प्रथम शतक के चतुर्थ उद्देशक में कहा है, वैसा ही आलापक यहाँ भी कहना चाहिए; (और वह) यावत् 'अलमस्तु' कहा जा सकता है; यहाँ तक कहना चाहिए।

1. **[Q.]** *Bhante* ! Has a person with finite cognition (*chhadmasth*) become *Siddha* in the eternal limitless past only through ascetic-discipline (*samyam*) ?

[Ans.] Gautam ! As has been stated in the fourth lesson of the first chapter should be repeated here... and so on up to... perfect (*almastu*).

विवेचन–प्रथम शतक के चतुर्थ उद्देशक, सूत्र १५९–१६३ में कहा गया कि केवलज्ञानी हुए बिना कोई भी व्यक्ति सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, सर्वदुःखान्तकर, परिनिर्वाण प्राप्त, उत्पन्न ज्ञान–दर्शनधर, जिन, अर्हत् केवली और 'अलमस्तु' नहीं हो सकता।

Elaboration—In aphorisms 159-163 of the fourth lesson of the first chapter it has been mentioned that without becoming omniscient no person can become perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), end all miseries, and attain nirvana or get endowed with right knowledge and perception to become Arhant, Jina, or Kevali (omniscient) and perfect (*almastu*).

एवम्भूत–अनेवम्भूतवेदना EVAMBHOOT-ANEVAMBHOOT PAIN

२. [प्र. १] अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवेंति सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे जीवा सव्वे सत्ता एवंभूयं वेदणं वेदेंति, से कहमेयं भंते ! एवं···· ?

[उ.] गोयमा ! जं णं अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव वेदेंति, जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु। अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि, अत्थेगइया पाणा भूया जीवा सत्ता एवंभूयं वेदणं वेदेंति, अत्थेगइया पाणा भूया जीवा सत्ता अणेवंभूयं वेदणं वेदेंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. [प्र. १] भगवन् ! अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं कि समस्त प्राण, समस्त भूत, समस्त जीव और समस्त सत्त्व, एवंभूत-(जिस प्रकार कर्म बाँधा है, उसी प्रकार) वेदना वेदते (भोगते = अनुभव करते) हैं, भगवन् ! यह ऐसा कैसे है ?

[उ.] गौतम ! वे अन्यतीर्थिक जो इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि सर्व प्राण, भूत, जीव और सत्त्व एवंभूत वेदना वेदते हैं, उन्होंने यह मिथ्या कथन किया है। हे गौतम ! मैं यों कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि कितने ही प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, एवंभूत वेदना वेदते हैं और कितने ही प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, अनेवंभूत-(जिस प्रकार से कर्म बाँधा है, उससे भिन्न प्रकार से) वेदना वेदते हैं।

2. [Q. 1] *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that all *praan* (two to four sensed beings; beings), *bhoot* (plant bodied beings; organisms), *jiva* (five sensed beings; souls), and sattva (immobile beings; entities) suffer *evambhoot* (according to acquired *karmas*) pain. *Bhante* ! How is it so ?

[Ans.] Gautam ! What the people of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that all *praan* (two to four sensed beings), *bhoot* (plant bodied beings), *jiva* (five sensed beings), and *sattva* (immobile beings) suffer pain according to acquired *karmas* (*evambhoot*), is all incorrect. O Gautam ! What I say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) is that some *praan*, *bhoot*, *jiva*, and *sattva* suffer *evambhoot* (according to acquired karmas) pain and some *praan*, *bhoot*, *jiva*, and *sattva* suffer *anevambhoot* (not according to acquired *karmas*).

[प्र. २] से केणट्ठेणं अत्थेगइया० तं चेव उच्चारेयव्वं ?

[उ.] गोयमा ! जे णं पाणा भूया जीवा सत्ता जहा कडा कम्मा तहा वेदणं वेदेंति ते णं पाणा भूया जीवा सत्ता एवंभूयं वेदणं वेदेंति। जे णं पाणा भूया जीवा सत्ता जहा कडा कम्मा नो तहा वेदणं वेदेंति ते णं पाणा भूया जीवा सत्ता अणेवंभूयं वेदणं वेदेंति। से तेणट्ठेणं० तहेव।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है, कि कितने ही प्राण, भूत आदि एवंभूत और कितने ही अनेवंभूत वेदना वेदते हैं ?

[उ.] गौतम ! जो प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, जिस प्रकार स्वयं ने कर्म किये हैं, उसी प्रकार वेदना वेदते (उसी प्रकार उदय में आने पर भोगते-अनुभव करते) हैं, वे प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, एवंभूत वेदना वेदते हैं किन्तु जो प्राण, भूत, जीव और सत्त्व जिस प्रकार कर्म किये हैं, उसी प्रकार वेदना नहीं वेदते (भिन्न प्रकार से वेदन करते हैं। वे प्राण, भूत, जीव और सत्त्व) अनेवंभूत वेदना वेदते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं। इसी कारण से ऐसा कहा जाता है कि कतिपय प्राण भूतादि एवंभूत वेदना वेदते हैं और कतिपय प्राण भूतादि अनेवंभूत वेदना वेदते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! For what reason is it said that some *praan*, *bhoot* (etc.) suffer *evambhoot* (according to acquired *karmas*) pain and some *praan*, *bhoot* (etc.) suffer *anevambhoot* (not according to acquired *karmas*) ?

[Ans.] Gautam ! Those *praan*, *bhoot*, *jiva*, and *sattva* who suffer pain according to acquired *karmas* (sufferance caused due to natural fruition of acquired *karmas*) are said to be suffering *evambhoot* pain but those *praan*, *bhoot*, *jiva*, and *sattva* who do not suffer pain according to acquired *karmas* are said to be suffering *anevambhoot* pain. That is why it is said that some *praan*, *bhoot* (etc.) suffer *evambhoot* (according to acquired *karmas*) pain and some *praan*, *bhoot* (etc.) suffer *anevambhoot* (not according to acquired *karmas*).

३. [प्र. १] नेरइया णं भंते ! किं एवंभूतं वेदणं वेदेंति ? अणेवंभूयं वेदणं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया णं एवंभूयं पि वेदणं वेदेंति, अणेवंभूयं पि वेदणं वेदेंति।

३. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक क्या एवंभूत वेदना वेदते हैं, अथवा अनेवंभूत वेदना वेदते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक एवंभूत वेदना भी वेदते हैं और अनेवंभूत वेदना भी वेदते हैं।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Do infernal beings (*nairayik*) suffer *evambhoot* (according to acquired *karmas*) pain or *anevambhoot* (not according to acquired *karmas*) pain ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings (*nairayik*) suffer *evambhoot* (according to acquired *karmas*) pain as well as *anevambhoot* (not according to acquired *karmas*) pain.

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ? तं चेव।

[उ.] गोयमा ! जे णं नेरइया जहा कडा कम्मा तहा वेदणं वेदेंति ते णं नेरइया एवंभूयं वेदणं वेदेंति। जे णं नेरइया जहा कडा कम्मा णो तहा वेदणं वेदेंति ते णं नेरइया अणेवंभूयं वेदणं वेदेंति। से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ? (पूर्ववत् सारा पाठ यहाँ कहना चाहिए।)

[उ.] गौतम ! जो नैरयिक अपने किये हुए कर्मों के अनुसार वेदना वेदते हैं वे एवंभूत वेदना वेदते हैं और जो नैरयिक अपने किये हुए कर्मों के अनुसार वेदना नहीं वेदते; (अपितु भिन्न प्रकार से वेदते हैं) वे अनेवंभूत वेदना वेदते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! For what reason is it said that... and so on up to... pain ?

[Ans.] Gautam ! Those infernal beings (*nairayik*) who suffer pain according to acquired *karmas* are said to be suffering *evambhoot* pain

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

but those infernal beings (*nairayik*) who do not suffer pain according to acquired *karmas* (but in some different way) are said to be suffering *anevambhoot* pain.

४. एवं जाव वेमाणिया। संसारमंडलं नेयव्वं।

४. इसी प्रकार यावत् वैमानिक--(दण्डक) पर्यन्त संसारमण्डल (संसारी जीवों के समूह) के विषय में जानना चाहिए।

4. The same is true for all beings of the world (*samsar mandal*) up to Vaimaniks.

विवेचन : एवंभूतवेदन और अनेवंभूतवेदन का रहस्य--जिन प्राणियों ने जिस प्रकार से कर्म बाँधे हैं, उन कर्मों के उदय आने पर वे उसी प्रकार से असाता आदि वेदना भोग लेते हैं, उनका वह वेदन **एवंभूतवेदना वेदन** है, किन्तु जो **प्राणी** जिस प्रकार से कर्म बाँधते हैं, उसी प्रकार से उनके फलस्वरूप वेदना नहीं वेदते, उनका वह वेदन--**अनेवंभूतवेदना वेदन** है। जैसे--कई व्यक्ति दीर्घकाल में भोगने योग्य आयुष्य आदि कर्मों की उदीरणा करके अल्पकाल में ही भोग लेते हैं, उनका वह वेदन अनेवंभूतवेदना वेदन कहलायेगा। अन्यथा, अपमृत्यु (अकालमृत्यु) का अथवा युद्ध आदि में लाखों मनुष्यों का एक साथ एक ही समय में मरण कैसे संगत होगा !

आगमोक्त सिद्धान्त के अनुसार जिन जीवों के जिन कर्मों का स्थितिघात, रसघात, प्रकृतिसंक्रमण आदि हो जाते हैं, वे अनेवंभूतवेदना वेदते हैं, किन्तु जिन जीवों के स्थितिघात, रसघात आदि नहीं होते, वे एवंभूतवेदना वेदते हैं। *(वृत्ति पत्रांक २२५)*

Elaboration—Explanation about evambhoot and anevambhoot— Those living beings who suffer pain according to acquired *karmas* (pleasure or pain giving) are said to be suffering *evambhoot* pain. Those beings who do not suffer pain according to acquired *karmas* but in some different way are said to be suffering *anevambhoot* pain. For example, if some person fructifies the long life-span determining and other *karmas* prematurely and experiences them in a reduced period, such sufferance is called *anevambhoot* sufferance. As otherwise there could be no explanation for untimely deaths or deaths of hundreds of individuals at the same time in a war.

According to the doctrine mentioned in the *Agams* the living beings who undergo change or reduction in duration and intensity of *karmas* as well as transformation of the species of *karmas* experience *anevambhoot* sufferance. Those beings who do not undergo such change or transformation experience *evambhoot* sufferance. *(Vritti, leaf 225)*

अवसर्पिणी में हुए कुलकर आदि KULAKARS OF THE AVASARPINI

५. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! इह भारहे वासे इमीसे उस्सप्पिणीए समाए कइ कुलगरा होत्था ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! सत्त।

[एवं चेव तित्थयरमायरो, पियरो, पढमा सिस्सिणीओ, चक्कवट्टिमायरो, इत्थिरयणं, बलदेवा, वासुदेवा, वासुदेवमायरो, पियरो, एएसिं पडिसत्तू जहा समवाए णामपरिवाडीए तहा णेयव्वा।]

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ।

॥ पंचम सए : पंचमो उद्देसओ समत्तो ॥

५. [प्र.] भगवन् ! जम्बूद्वीप में, इस भारतवर्ष में, इस अवसर्पिणी काल में कितने कुलकर हुए हैं ?

[उ.] गौतम ! (इस अवसर्पिणी काल में) सात कुलकर हुए हैं।

[इसी तरह तीर्थंकरों की माता, पिता, प्रथम शिष्याएँ, चक्रवर्त्तियों की माताएँ, स्त्रीरत्न, बलदेव, वासुदेव, वासुदेवों के माता-पिता, प्रतिवासुदेव आदि का कथन जिस प्रकार 'समवायांगसूत्र' के नाम की परिपाटी में किया गया है, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए।]

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर यावत् विचरने लगे। [उक्त सभी नामों की सूची भगवती सूत्र, प्रथम भाग, पृष्ठ ४६१-४६३, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर में देखनी चाहिए।]

॥ पंचम शतक : पंचम उद्देशक समाप्त ॥

5. [Q.] *Bhante* ! What has been the number of Kulakars (clan-makers) in this Bharatvarsh in Jambudveep during this *Avasarpini* (regressive cycle of time) ?

[Ans.] There have been seven Kulakars (during this *Avasarpini*).

[In the same way the information about mothers, fathers and first female disciples of *Tirthankars*; mothers and consorts of *Chakravartis*; *Baladevs*, *Vasudevs*, parents of *Vasudevs*, *Prativasudevs* should be quoted as mentioned in the list of names from *Samavayanga*.] (The list of all these names can also be seen in *Bhagavati Sutra*, part-1, pp. 461-463, published by Agam Prakashan Samiti, Beawar.)

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE FIFTH LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : छठा उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : SIXTH LESSON

आयुष्य AYUSHYA (LIFE-SPAN)

अल्पायु और दीर्घायु के कारण CAUSES OF SHORT AND LONG LIFE-SPAN

१. [प्र.] कण्णं भंते ! जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ?

[उ.] गोयमा ! तिहिं ठाणेहिं, तं जहा–पाणे अइवाएत्ता मुसं वइत्ता, तहारूवं समणं वा माहणं वा अफासुएणं अणेसणिज्जेणं असण–पाण–खाइम–साइमेणं पडिलाभेत्ता, एवं खलु जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति।

२. [प्र.] कण्णं भंते ! जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ?

[उ.] गोयमा ! तिहिं ठाणेहिं–नो पाणे अइवाइत्ता, नो मुसं वइत्ता, तहारूवं समणं वा माहणं वा फासु–एसणिज्जेणं असण–पाण–खाइम–साइमेणं पडिलाभेत्ता, एवं खलु जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति।

१. [प्र.] भगवन् ! जीव अल्पायु रूप फल देने वाले कर्म किस कारण से बाँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन कारणों से जीव अल्पायु रूप फल देने वाले कर्म बाँधते हैं–(१) प्राणियों की हिंसा करके, (२) असत्य भाषण करके, और (३) तथारूप श्रमण या माहन को अप्रासुक, अनेषणीय अशन, पान, खादिम और स्वादिम–(रूप चतुर्विध आहार) देकर। इस प्रकार (तीन कारणों से) जीव अल्पायुष्क फल वाला कर्म बाँधते हैं।

२. [प्र.] भगवन् ! जीव दीर्घायु के कारणभूत कर्म कैसे बाँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन कारणों से जीव दीर्घायु के कारणभूत कर्म बाँधते हैं–(१) प्राणातिपात न करने से, (२) असत्य न बोलने से, और (३) तथारूप श्रमण और माहन को प्रासुक और एषणीय अशन, पान, खादिम और स्वादिम–(रूप चतुर्विध आहार) देने से। इस प्रकार (तीन कारणों) से जीव दीर्घायुष्क के (कारणभूत) कर्म का बन्ध करते हैं।

1. [Q.] *Bhante* ! How do living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining a short life-span ?

[Ans.] Gautam ! They do so for three reasons—(1) by harming or killing living beings, (2) by false speech and (3) by giving prohibited and unsuitable food of four kinds, namely staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), to ascetics conforming to the description in *Agams* (*tatharupa Shramans* and *Mahans*). That is

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

how (for three reasons) living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining a short life-span.

2. [Q.] *Bhante* ! How do living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining a long life-span ?

[Ans.] Gautam ! They do so for three reasons—(1) by not harming or killing living beings, (2) by avoiding false speech and (3) by giving permitted and suitable food of four kinds, namely staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), to ascetics conforming to the description in *Agams* (*tatharupa Shramans* and *Mahans*). That is how (for three reasons) living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining a long life-span.

३. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ?

[उ.] गोयमा ! पाणे अइवाइत्ता, मुसं वइत्ता, तहारूवं समणं वा माहणं वा हीलित्ता निंदित्ता खिंसित्ता गरहित्ता अवमन्नित्ता, अन्नतरेणं अमणुण्णेणं अपीतिकारएणं असण–पाण–खाइम–साइमेणं पडिलाभेत्ता, एवं खलु जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति।

४. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवा सुभदीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ?

[उ.] गोयमा ! नो पाणे अइवातित्ता, नो मुसं वइत्ता, तहारूवं समणं वा माहणं वा वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता अन्नयरेणं मणुण्णेणं पीइकारएणं असण–पाण–खाइम–साइमेणं पडिलाभेत्ता, एवं खलु जीवा सुभदीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति।

३. [प्र.] भगवन् ! जीव अशुभ दीर्घायु के कारणभूत कर्म किन कारणों से बाँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्राणियों की हिंसा करके, असत्य बोलकर एवं तथारूप श्रमण और माहन की हीलना, खिंसना–(लोगों के समक्ष झिड़कना, बदनाम करना), गर्हा (जनता के समक्ष निन्दा) एवं अपमान करके अमनोज्ञ और अप्रीतिकर अशन, पान, खादिम और स्वादिम (रूप चतुर्विध आहार) दे करके। इस प्रकार (इन तीन कारणों से) जीव अशुभ दीर्घायु के कारणभूत कर्म बाँधते हैं।

४. [प्र.] भगवन् ! जीव शुभ दीर्घायु का फल देने वाले कर्म किन कारणों से बाँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्राणिहिंसा न करने से, असत्य न बोलने से और तथारूप श्रमण या माहन को वन्दना–नमस्कार यावत् पर्युपासना करके मनोज्ञ एवं प्रीतिकारक अशन, पान, खादिम और स्वादिम देने (प्रतिलाभित करने) से। इस प्रकार जीव (इन तीन कारणों से) शुभ दीर्घायु फल देने वाले कर्म बाँधते हैं।

3. [Q.] *Bhante* ! How do living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining an ignoble long life-span ?

[Ans.] Gautam ! They do so for three reasons—(1) by harming or killing living beings, (2) by false speech and (3) by treating with contempt

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*heelana*), reprimanding (*khimsana*), slandering (*garha*) or insulting ascetics conforming to the description in *Agams* (*tatharupa Shramans* and *Mahans*) and giving them dislikeable and detestable food of four kinds, namely staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), to. That is how (for three reasons) living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining an ignoble long life-span.

4. [Q.] *Bhante* ! How do living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining a noble long life-span ?

[Ans.] Gautam ! They do so for three reasons—(1) by not harming or killing living beings, (2) by avoiding false speech and (3) by paying homage and obeisance, doing worship and giving likeable and pleasant food of four kinds, namely staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), to ascetics conforming to the description in *Agams* (*tatharupa Shramans* and *Mahans*). That is how (for three reasons) living beings (*jivas*) acquire the bondage of *karmas* determining a noble long life-span.

विवेचन–वृत्तिकार ने स्पष्ट किया है कि यहाँ मुख्य प्रसंग साधु को एषणीय-अनेषणीय आहार देने का है। अतः प्राणातिपात और मृषावाद का अर्थ सामान्य हिंसा व असत्य वचन नहीं होकर साधु को दान देने के लिए आहार आदि के निमित्त हिंसा करना और फिर असत्य बोलना कि "हमने आपके लिए कुछ नहीं किया।" इस प्रकार हिंसा और असत्य का सम्बन्ध भी अनेषणीय आहार से जुड़ा हुआ है। साधु को शुभभावपूर्वक, आदर-विनय के साथ शुद्ध आहार देना शुभ दीर्घायु का तथा इसके विपरीत आहार देना अशुभ अल्पायुष्य का कारण समझना चाहिए। *(वृत्ति पत्रांक २२७) विस्तार हेतु भगवती सूत्र हिन्दी विवेचन, भाग २, पृष्ठ ८४१–८४२ देखें)*

Elaboration—The commentator (*Vritti*) clarifies that this discussion is mainly in context of offering prohibited or permitted food to ascetics. Therefore 'harming of beings' and 'false speech' do not just carry their normal meaning. They also imply harming of beings in order to procure or prepare food for ascetics and then giving a false statement that all that was not done for them. Thus violence and falsity are connected with prohibited food. Offering food to ascetics with noble feeling, respect and modesty is the cause of a noble long life-span and opposite of that is cause of an ignoble long life-span. *(Vritti, leaf 227; for more details refer to Bhagavati Sutra Hindi Commentary part-2, pp. 841, 842)*

विक्रेता और क्रेता को लगने वाली क्रियाएँ INVOLVEMENT IN ACTIVITIES BY SELLER AND BUYER

५. [प्र.] गाहावइस्स णं भंते ! भंडं विक्किणमाणस्स केइ भंडं अवहरेज्जा, तस्स णं भंते ! तं भंडं अणुगवेसमाणस्स किं आरंभिया किरिया कज्जइ ? पारिग्गहिया, मायावत्तिया, अपच्चक्खाणकिरिया, मिच्छादंसणवत्तिया ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! आरंभिया किरिया कज्जइ, पारि०, माया०, अपच्च०, मिच्छादंसणकिरिया सिय कज्जति, सिय नो कज्जति। अह से भंडे अभिसमन्नागए भवइ तओ सेय पच्छा सव्वाओ ताओ पयणुई भवंति।

५. [प्र.] भगवन् ! भाण्ड (किराने का सामान) बेचते हुए किसी गृहस्थ का वह किराने का माल कोई अपहरण कर (चुरा) ले, फिर उस किराने के समान की खोज करते हुए उस गृहस्थ को, क्या आरम्भिकी क्रिया लगती है, या पारिग्रहिकी क्रिया लगती है ? अथवा मायाप्रत्ययिकी अप्रत्याख्यानिकी या मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया लगती है ?

[उ.] गौतम ! (चोरी हुए किराने को खोजते हुए पुरुष को) आरम्भिकी क्रिया लगती है, तथा पारिग्रहिकी, मायाप्रत्ययिकी एवं अप्रत्याख्यानिकी क्रिया भी लगती है, किन्तु मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया कदाचित् लगती है, और कदाचित् नहीं लगती। (किराने के सामान की खोज करते हुए) यदि चुराया हुआ सामान वापस मिल जाता है, तो वे सब (पूर्वोक्त) क्रियाएँ प्रतनु (अल्प-हल्की) हो जाती हैं।

5. [Q.] *Bhante* ! While selling *bhaand* (earthenware or groceries) a householder's such merchandise is stolen and then he starts searching them. In the process, is he liable of involvement in *arambhiki kriya* (sinful activity) or *parigrahiki kriya* (activity of possession) ? Or is he liable of involvement in *mayapratyayiki kriya* (activity of deceit) or *apratyakhyaniki kriya* (activity of non-renunciation) or *mithyadarshan-pratyayiki kriya* (activity of perverted faith) ?

[Ans.] Gautam ! He is (while doing so) liable of involvement in *arambhiki kriya* (sinful activity), *parigrahiki kriya* (activity of possession), *mayapratyayiki kriya* (activity of deceit) and *apratyakhyaniki kriya* (activity of non-renunciation). However, as regards *mithyadarshan-pratyayiki kriya* (activity of perverted faith), sometimes he is liable to involvement and sometimes not. While searching, if he recovers the stolen goods he is liable to involvement in all the said activities to a very mild degree.

६. [प्र.] गाहावइस्स णं भंते ! भंडं विक्किणमाणस्स कइए भंडं साइज्जेज्जा, भंडे य से अणुवणीए सिया, गाहावइस्स णं भंते ! ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जइ जाव मिच्छादंसणवत्त किरिया कज्जइ ? कइयस्स वा ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जइ जाव मिच्छादंसणवत्तिया किरिया कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! गाहावइस्स ताओ भंडाओ आरंभिया किरिया कज्जइ जाव अपच्चक्खाणिया। मिच्छादंसणवत्तिया किरिया सिय कज्जइ, सिय नो कज्जइ। कइयस्स णं ताओ सव्वाओ पयणुई भवंति।

६. [प्र.] भगवन् ! किराना बेचने वाले गृहस्थ से किसी व्यक्ति ने किराने का माल खरीद लिया, उस सौदे को पक्का करने के लिए खरीददार ने सत्यंकार-(बयाना या एडवांस) भी दे दिया, किन्तु वह (किराने का माल) अभी तक अनुपनीत-(ले जाया गया नहीं) है; (बेचने वाले के यहाँ ही पड़ा है)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(ऐसी स्थिति में) भगवन् ! उस भाण्डविक्रेता को उस किराने के माल से आरम्भिकी यावत् मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रियाओं में से कौन-सी क्रिया लगती है ?

[उ.] गौतम ! उस गृहपति को उस किराने के सामान से आरम्भिकी से लेकर अप्रत्याख्यानिकी तक चार क्रियाएँ लगती हैं। मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया कदाचित् लगती है और कदाचित् नहीं लगती। खरीददार को तो ये सब क्रियाएँ प्रतनु (हल्की) हो जाती हैं।

6. [Q.] *Bhante* ! A buyer has purchased some *bhaand* from a seller. In consideration of the deal, the buyer has also paid some advance (*satyankaar*) but the delivery has not yet been made (the goods are still lying with the seller). (In this situation) *Bhante* ! Is the seller liable to get involved in *arambhiki kriya* (sinful activity)... and so on up to... *mithyadarshan-pratyayiki kriya* (activity of perverted faith) ?

[Ans.] Gautam ! That householder is liable of involvement in four activities from *arambhiki kriya* (sinful activity) to *apratyakhyaniki kriya* (activity of non-renunciation). However, as regards *mithyadarshan-pratyayiki kriya* (activity of perverted faith), sometimes he is liable to involvement and sometimes not. And the buyer is liable to involvement in all the said activities only to a very mild degree.

७. [प्र.] गाहावइस्स णं भंते ! भंडं विक्किणमाणस्स जाव भंडे से उवणीए सिया, कइयस्स णं भंते ! ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जति जाव मिच्छादंसण किरिया कज्जइ ? गाहावतिस्स वा ताओ भंडाओ किं आरंभिया किरिया कज्जति जाव.... ?

[उ.] गोयमा ! कइयस्स ताओ भंडाओ हेट्ठिल्लाओ चत्तारि किरियाओ कज्जंति, मिच्छादंसणकिरिया भयणाए। गाहावइस्स णं ताओ सव्वाओ पयणुई भवंति।

७. [प्र.] भगवन् ! किराना बेचने वाले गृहस्थ के यहाँ से यावत् खरीददार उस किराने के माल को अपने यहाँ ले आया, (ऐसी स्थिति में) भगवन् ! उस खरीददार को उस (खरीदे हुए) किराने के माल से आरम्भिकी से लेकर मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी तक कितनी क्रियाएँ लगती हैं ? और उस विक्रेता गृहस्थ को इनमें से कितनी क्रियाएँ लगती हैं ?

[उ.] गौतम ! खरीददार को उस किराने के सामान से आरम्भिकी से लेकर अप्रत्याख्यानिकी तक चारों क्रियाएँ लगती हैं; मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया की भजना है; (अर्थात्-खरीददार यदि मिथ्यादृष्टि हो तो मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया लगती है, अगर वह मिथ्यादृष्टि न हो तो नहीं लगती)। विक्रेता गृहस्थ को तो (मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी क्रिया की भजना के साथ) ये सब क्रियाएँ प्रतनु (अल्प) होती हैं।

7. [Q.] *Bhante* ! A buyer has purchased some *bhaand* from a seller... and so on up to... and has brought home the goods. (In this situation) *Bhante* ! For these goods is the buyer liable to get involved in *arambhiki*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

kriya (sinful activity)... and so on up to... *mithyadarshan-pratyayiki kriya* (activity of perverted faith) ? And is the buyer liable to get involved in *arambhiki kriya* (sinful activity)... and so on up to... ?

[Ans.] Gautam ! For these goods that buyer is liable of involvement in four activities from *arambhiki kriya* (sinful activity) to *apratyakhyaniki kriya* (activity of non-renunciation). As regards *mithyadarshan-pratyayiki kriya* (activity of perverted faith) it is optional (*bhajana*) (this means he is liable if he is unrighteous and not if he is not). And the seller is liable of involvement in all the said activities (including optional involvement in *mithyadarshan-pratyayiki kriya*) only to a very mild degree.

८. [प्र.] गाहावइस्स णं भंते ! भंडं जाव धणे य से अणुवणीए सिया ?

[उ.] एयं पि जहा 'भंडे उवणीए' तहा नेयव्वं। चउत्थो आलावगो–धणे य से उवणीए सिया जहा पढमो आलावगो 'भंडे य से अणुवणीए सिया' तहा नेयव्वो। पढम–चउत्थाणं एक्को गमो। बितिय–तइयाणं एक्को गमो।

८. [प्र.] भगवन् ! भाण्ड–विक्रेता गृहस्थ से खरीददार ने माल खरीद लिया, किन्तु जब तक उस विक्रेता को उस माल का मूल्य रूप धन नहीं मिला, तब तक, हे भगवन् ! उस खरीददार को उस अनुपनीत धन से कितनी क्रियाएँ लगती हैं ? (साथ ही) उस विक्रेता को कितनी क्रियाएँ लगती हैं ?

[उ.] गौतम ! यह आलापक भी उपनीत भाण्ड (खरीददार द्वारा ले जाये जाने वाले किराने) के आलापक के समान समझना चाहिए। चतुर्थ आलापक–यदि धन उपनीत हो तो प्रथम आलाप, (जोकि अनुपनीत भाण्ड के विषय में कहा है) के समान समझना चाहिए। (सारांश यह है कि) पहला और चौथा आलापक समान है।

8. [Q.] *Bhante* ! The buyer has purchased the goods from the seller (but not made the payment), now till the payment has not been received by the seller, *Bhante* ! in how many activities is the buyer liable of involvement due to that unpaid amount ? Also in how many activities is the seller liable of involvement ?

[Ans.] Gautam ! In such a situation the position is similar to the fourth statement where the delivery of the goods has been taken. If the money has been given, the situation is similar to the first statement where the delivery of the goods has not yet been taken. (Which means that) Statements one and four are similar and statements two and three are similar.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : यहाँ क्रेता-विक्रेता के सम्बन्ध में छह विकल्पों से प्रश्न पूछे गये हैं। इन सूत्रों का सारांश इस प्रकार समझना चाहिए-

(१) किराना बेचने वाले का किराना (माल) कोई चुरा ले जाये तो उस किराने को खोजने में विक्रेता को आरम्भिकी आदि ४ क्रियाएँ लगती हैं। (२) यदि चुराया हुआ किराने का माल वापस मिल जाये तो विक्रेता को ये सब क्रियाएँ मन्द रूप में लगती हैं। (३) खरीददार ने विक्रेता से किराना (माल) खरीद लिया, उस सौदे को पक्का करने के लिए साई भी दे दी, किन्तु माल दुकान से उठाया नहीं, तब तक खरीददार को उस किराने-सम्बन्धी क्रियाएँ हल्के रूप में लगती हैं, जबकि विक्रेता को वे क्रियाएँ भारी रूप में लगती हैं। (४) विक्रेता द्वारा किराना खरीददार को सौंप दिये जाने पर वह उसे उठाकर ले जाता है, ऐसी स्थिति में विक्रेता को वे सब सम्भावित क्रियाएँ हल्के रूप में लगती हैं, जबकि खरीददार को भारी रूप में। (५) विक्रेता से खरीददार ने किराना खरीद लिया, किन्तु उसका मूल्यरूप धन विक्रेता को नहीं दिया, ऐसी स्थिति में विक्रेता को आरम्भिकी आदि चारों क्रियाएँ हल्के रूप में लगती हैं, जबकि खरीददार को वे ही क्रियाएँ भारी रूप में लगती हैं। और (६) किराने का मूल्यरूप धन खरीददार द्वारा चुका देने के बाद विक्रेता को धन-सम्बन्धी चारों सम्भावित क्रियाएँ भारी रूप में लगती हैं, जबकि खरीददार को वे सब सम्भावित क्रियाएँ प्रतनु-अल्प रूप में लगती हैं।

हल्के रूप में और भारी रूप में क्यों? (१) इसका समाधान है-चुराये हुए माल की खोज करते समय विक्रेता (व्यापारी) विशेष प्रयत्नशील होता है, इसलिए उसे सम्भावित क्रियाएँ भारी रूप में लगती हैं, किन्तु जब व्यापारी को चुराया हुआ माल मिल जाता है, तब उसका खोज करने का प्रयत्न बन्द हो जाता है, इसलिए वे सब सम्भावित क्रियाएँ हल्की हो जाती हैं। (२) विक्रेता के यहाँ खरीददार के द्वारा खरीदा हुआ माल पड़ा रहता है, वह उसका होने से तत्सम्बन्धित क्रियाएँ भारी रूप में लगती हैं, किन्तु खरीददार उस माल को उठाकर अपने घर ले जाता है, तब खरीददार को वे सब क्रियाएँ भारी रूप में और विक्रेता को हल्के रूप में लगती हैं। (३) किराने का मूल्य रूप धन जब तक खरीददार द्वारा विक्रेता को नहीं दिया गया है, तब तक वह धन खरीददार का है, अतः उससे सम्बन्धित क्रियाएँ खरीददार को भारी रूप में और विक्रेता को हल्के रूप में लगती हैं, किन्तु खरीददार खरीदे हुए किराने का मूल्य रूप धन विक्रेता को चुका देता है, उस स्थिति में विक्रेता को उस धन-सम्बन्धी क्रियाएँ भारी रूप में, तथा खरीददार को हल्के रूप में लगती हैं।

निष्कर्ष यह है कि वस्तु और धन जिसके अधिकार में होते हैं, उसको क्रिया 'सघन' लगती है, जिसके अधिकार में नहीं होते, उसको क्रिया प्रतनु होती है।

Elaboration—Six alternative questions have been asked here about buyer and seller. The gist of these aphorisms is as follows—

(1) If a merchandise of a seller is stolen and he starts searching then he is liable of involvement in four activities including *arambhiki kriya* (here *kriya* or activity means act and consequence in terms of *karmic* bondage). (2) If the stolen goods are recovered the seller is liable of involvement in all these activities to a very mild degree. (3) A buyer has purchased goods and paid some advance but has not taken the delivery; in such case the buyer is liable to mild involvement and the seller is liable to greater involvement in activities related to the goods. (4) After

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

the buyer has taken the delivery of the goods he is liable to greater involvement and seller to mild involvement. (5) If the buyer has purchased the goods but not paid the money then buyer is liable to greater involvement in activities including *arambhiki* related to that amount and the seller to a mild involvement. (6) When the buyer has paid the money he is liable to mild involvement and the seller to a greater involvement in all the four activities related to that amount.

Why mild and greater ?—(1) While searching for the stolen goods the seller makes special efforts, therefore he is liable to a greater involvement in the said activities. However, when he recovers the goods his efforts to search come to an end and consequently the involvement becomes mild. (2) As long as the sold goods remain with the seller, he owns them. This results in greater involvement but when the goods are taken away by the buyer, it is the buyer who is liable to greater involvement and seller to mild only. (3) As long as the money is not paid by the buyer it belongs to the buyer and he is liable to greater involvement in all activities related to the money but the seller to a mild one. But when the money is paid to the seller it is the seller who is liable to greater involvement and the buyer to a mild one.

The inference is that those who possess things or money are liable to greater involvement and those who do not are liable to mild involvement.

अग्निकाय : महाकर्म या अल्पकर्म **FIRE-BODIES : INTENSE AND MILD KARMAS**

९. [प्र.] अगणिकाए णं भंते ! अहुणोज्जलिए समाणे महाकम्मतराए चेव; महाकिरिय–महासव–महावेयणतराए चेव भवति। अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे वोक्कसिज्जमाणे वोच्छिज्जमाणे चरिमकालसमयंसि इंगालभूते मुम्मुरभूते छारियभूते, तओ पच्छा अप्पकम्मतराए चेव, अप्पकिरिया अप्पासव–अप्पवेदणतराए चेव भवति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! अगणिकाए णं अहुणोज्जलिते समाणे तं चं चेव।

९. [प्र.] भगवन् ! तत्काल प्रज्वलित अग्निकाय क्या महाकर्मयुक्त, तथा महाक्रिया, महास्रव और महावेदना से युक्त होता है ? और इसके पश्चात् समय–समय में प्रतिक्षण क्रमशः कम होता हुआ–बुझता हुआ तथा अन्तिम समय में (जब) अंगारभूत, मुर्मुरभूत, (भोभर–सा हुआ) और भस्मभूत (राख) हो जाता है (तब) क्या वह अग्निकाय अल्पकर्मयुक्त तथा अल्पक्रिया, अल्पास्रव, अल्पवेदना से युक्त होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! तत्काल प्रज्वलित अग्निकाय महाकर्मयुक्त होता है (और भस्मभूत होने के पश्चात्) यावत् अल्पवेदनायुक्त होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाक्रिया अल्प क्रिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-४

Illustration No. 4

महाक्रिया अल्पक्रिया तथा पाँच क्रियाएँ

महाक्रिया-अल्पक्रिया--अग्नि को प्रज्वलित करता हुआ व्यक्ति कर्मबन्ध की दृष्टि से महाक्रिया करने वाला है। प्रज्वलित अग्नि को बुझाना कर्मबन्ध की दृष्टि से अल्पक्रिया है। अग्नि जब राख हो जाती है तब वह कर्मादि रहित हो जाती है।

धनुष चलाने वाले को क्रिया--धनुष पर बाण चढ़ाकर बाण फैंक कर जीव वध करने तक की क्रिया में पाँचों क्रियाएँ इस क्रम से होती हैं।

(१) **कायिकी क्रिया**--बाण को हाथ से स्पर्श करना या हाथ में ग्रहण करना।

(२) **आधिकरणिकी**--बाण हाथ में लेकर धनुष पर चढ़ाना।

(३) **प्राद्वेषिकी**--किसी लक्ष्य को वेधने के लिए धनुष पर बाण चढ़ाकर डोरी कान तक खींचकर बाण को लक्ष्य पर छोड़ना।

(४) **पारितापनिकी**--(५) **प्राणातिपातिकी**--बाण छोड़कर किसी जीव आदि को परिताप पहुँचाना तथा उसकी घात कर देना।

धनुष पर बाण चढ़ाकर फैंकने वाला इन क्रियाओं से पाप का भागी होता है।

-शतक ५, उ. ६, सूत्र ९, १०

INTENSE AND MILD INVOLVEMENT AND FIVE ACTIVITIES

Intense and mild involvement—In context of bondage a person igniting fire is involved in act of intense bondage. To extinguish a fire is involvement in act of mild bondage. Finally when the fire turns into ash it does not entail any bondage of karmas.

Involvement in using a bow—Setting an arrow on the bow and launching it to kill an animal entails involvement in five activities in the following order—

(1) **Kaayiki (physical) activity**—to touch or pick an arrow.

(2) **Aadhikaraniki (activity of collecting instruments of violence)**—To place the so picked arrow on the bow.

(3) **Praadveshiki (activity of harbouring aversion)**—to draw the string of the bow, aim at an object and shoot the arrow.

(4) **Paaritapaniki (activity of inflicting pain)** and (5) **pranatipatiki (activity of killing a living being)**—to torment or kill a living being by launching the arrow.

A person shooting something with a bow and arrow gets involved in these sinful activities.

—Shatak-5, lesson-6, Sutra-9, 10

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. [**Q.**] *Bhante* ! Do fire-bodies (*agni-kaya*) just ablaze intense have *karmic* bondage (*maha-karma*), intense involvement in activities (*maha-kriya*), intense influx of *karmas* (*maha-asrava*) and intense pain (*maha-vedana*) ? And thereafter with passage of time, getting reduced every moment, when the fire gradually transforms into ember (*angaar*), cinder (*murmur*) and finally into ash, then do they have mild *karmic* bondage (*alp-karma*), mild involvement in activities (*alp-kriya*), mild influx of *karmas* (*alp-asrava*) and mild pain (*alp-vedana*) ?

[**Ans.**] Yes, Gautam ! Fire-bodies (*agni-kaya*) just ablaze have intense *karmic* bondage (*maha-karma*)... and so on up to... (after getting reduced into ash they have) mild pain (*alp-vedana*).

विवेचन : तत्काल प्रज्वलित होती हुई अग्नि बन्ध की अपेक्षा से ज्ञानावरणीय आदि महाकर्मबन्ध का कारण होने से 'महाकर्मतर' है। अग्नि का जलना एक प्रकार की क्रिया है। इसलिए यह महाक्रियातर है। वह नवीन कर्मों के ग्रहण करने में कारणभूत है। इसलिए वह महाआस्रवतर है। अग्नि लगने के पश्चात् होने वाली तथा उस कर्म (अग्निकाय से बद्ध कर्म) से उत्पन्न होने वाली पीड़ा के कारण अथवा परस्पर शरीर के 'संघात' (दबने) से होने वाली पीड़ा के कारण वह महावेदनातर है। जब प्रज्वलित हुई अग्नि क्रमशः बुझने लगती है, तब क्रमशः अंगार आदि अवस्था को प्राप्त होती हुई वह अल्पकर्मतर, अल्पक्रियातर, अल्पास्रवतर एवं अल्पवेदनातर हो जाती है। बुझते-बुझते जब वह भस्मावस्था को प्राप्त हो जाती है, तब वह कर्मादिरहित हो जाती है। *(वृत्ति पत्रांक २२९)*

Elaboration—In context of bondage, a fire just ablaze has intense bondage (*maha-karma*) because it causes bondage of intense *karmas* like *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring *karma*). Burning of fire is a kind of activity, therefore here it is an intense activity (*maha-kriya*). As it causes acquisition of new *karmas*, it has intense influx of *karmas* (*maha-asrava*). As the *karmic* bondage a fire causes as also a collision of bodies caused by conflagration are sources of great pain it has great pain (*maha-vedana*). When it gradually transforms into ember (*angaar*) and cinder (*murmur*), then it has mild *karmic* bondage (*alp-karma*), mild involvement in activities (*alp-kriya*), mild influx of *karmas* (*alp-asrava*) and mild pain (*alp-vedana*). Finally when it turns into ash it becomes free all these including *karmas*.

धनुष चलाने से लगने वाली क्रियाएँ ACTIVITIES IN SHOOTING ARROWS

१०. [प्र. १] पुरिसे णं भंते ! धणुं परामुसइ, परामुसित्ता, उसुं परमुसति, उसुं परामुसित्ता ठाणं ठाइ, ठाणं ठिच्चा आययकण्णाययं उसुं करेति, आययकण्णाययं उसुं करेत्ता उड्ढं वेहासं उसुं उव्विहति। तए णं से उसुं उड्ढं वेहासं उव्विहिए समाणे जाइं तत्थ पाणाइं भूयाइं जीवाइं सत्ताइं अभिहणइ वत्तेइ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेस्सेइ संघाएइ संघट्टेइ परितावेइ किलामेइ, ठाणाओ ठाणं संकामेइ, जीविआओ ववरोवेइ, तए णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे धणुं पुरामुसइ परामुसित्ता जाव उव्विहइ तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवायकिरियाए, पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे।

१०. [प्र. १] भगवन् ! कोई पुरुष धनुष को स्पर्श करता है, धनुष का स्पर्श करके बाण को स्पर्श करता है, बाण का स्पर्श करके (धनुष से बाण फैंकने के) स्थान पर से आसनपूर्वक बैठता है, उस स्थिति में बैठकर फैंके जाने वाले बाण को कान तक आयत करें–खींचे, खींचकर ऊँचे आकाश में बाण फैंकता है। ऊँचे आकाश में फैंका हुआ वह बाण, वहाँ आकाश में जिन प्राण, भूत, जीव और सत्त्व को सामने आते हुए मारे, उन्हें सिकोड़ दे, अथवा उन्हें ढक दे, उन्हें परस्पर श्लिष्ट कर (चिपका) दे, उन्हें परस्पर संहत (एकत्रित) करे, उनका संघट्टा–जोर से स्पर्श करे, उनको परिताप–संताप (पीड़ा) दे, उन्हें क्लान्त करे–थकाए, हैरान करे, एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटकाए, एवं उन्हें जीवन से रहित कर दे, तो हे भगवन् ! उस पुरुष को कितनी क्रियाएँ लगती हैं ?

[उ.] गौतम ! वह पुरुष धनुष का स्पर्श करके धनुष को ग्रहण करता यावत् बाण को फैंकता है, वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, परितापनिकी और प्राणातिपातिकी, इन पाँच क्रियाएँ से स्पृष्ट होता है। अर्थात् उसे पाँचों क्रियाएँ लगती हैं।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Suppose a person touches a bow, having picked it he touches an arrow, having picked it he sits in the correct posture (to shoot the arrow), having sat (and set the arrow on the bow-string) he draws the arrow to his ear, and having drawn the arrow he shoots it in the sky. The arrow so launched in the sky hits some *praan* (two to four sensed beings), *bhoot* (plant bodied beings), *jiva* (five sensed beings), and *sattva* (immobile beings); and makes them flinch or enshrouds them or makes them stick or cluster together or smacks them and tortures them, exhausts them, torments them, chases them from one place to another and deprives them of their life. In such case, *Bhante* ! In how many activities that person is liable to be involved ?

[Ans.] Gautam ! That person who touches a bow... and so on up to... shoots the arrow in the sky is touched by (liable of involvement in) all the five activities, namely *kaayiki* (physical activity), *aadhikaraniki* (activity of collecting instruments of violence), *praadveshiki* (activity of harbouring aversion), *paaritapaniki* (activity of inflicting pain) and *pranatipatiki* (activity of killing a living being).

[२] जेसिं पि य णं जीवाणं सरीरेहिंतो धणू निव्वत्तिए ते वि य णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] जिन जीवों के शरीरों से वह धनुष बना (निष्पन्न हुआ) है, वे जीव भी पाँच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

[2] The beings from whose bodies that bow has been made are also liable of involvement in all the five activities.

११. एवं धणुपुट्ठे पंचहिं किरियाहिं। जीवा पंचहिं। ण्हारू पंचहिं। उसू पंचहिं। सरे पत्तणे फले ण्हारू पंचहिं।

११. इसी प्रकार धनुष की पीठ भी पाँच क्रियाओं से स्पृष्ट होती है। जीव (डोरी) पाँच क्रियाओं से, ण्हारू (स्नायु) पाँच क्रियाओं से एवं बाण पाँच क्रियाओं से तथा शर, पत्र, फल और ण्हारू भी पाँच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

11. In the same way the body of the bow is also liable of involvement in all the five activities. Also liable of involvement are the bow-string (*jiva*) or catgut (*nharu*) in five, arrow in five and (its components) rod (*shar*), feathers (*patra*), blade or tip (*phal*) and catgut (*nharu*), each in five.

१२. [प्र.] अहे णं से उसू अप्पणो गुरुयत्ताए, भारियत्ताए, गुरुसंभारियत्ताए अहे वीससाए पच्चोवयमाणे जाइं तत्थ पाणाइं जाव जीवियओ ववरोवेइ, तावं च णं से पुरिसे कतिकिरिए ?

[उ.] गोयमा ! जावं च णं से उसू अप्पणो गुरुयत्ताए जाव ववरोवेति तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव चउहिं किरियाहिं पुट्ठे। जेसिं पि य णं जीवाणं सरीरेहिं धणू निव्वत्तिए ते वि जीवा चउहिं किरियाहिं। धणुपुट्ठे चउहिं। जीवा चउहिं। ण्हारू चउहिं। उसू पंचहिं। सरे, पत्तणे, फले ण्हारू पंचहिं। जे वि य से जीवा अहे पच्चोवयमाणस्स उवग्गहे चिट्ठंति ते वि य णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा।

१२. [प्र.] भगवन् ! जब वह बाण अपनी गुरुता से, अपने भारीपन से, अपनी गुरुसंभारता से स्वाभाविक रूप-(विस्रसा प्रयोग) से नीचे गिर रहा हो, तब (ऊपर से नीचे गिरता हुआ) वह (बाण) (बीच मार्ग में) प्राण, भूत, जीव और सत्त्व को जीवन से रहित कर देता है। तब उस बाण फैंकने वाले पुरुष को कितनी क्रियाएँ लगती हैं ?

[उ.] गौतम ! जब वह बाण अपनी गुरुता आदि से नीचे गिरता हुआ, यावत् जीवों को जीवनरहित कर देता है, तब वह (बाण फैंकने वाला) पुरुष कायिकी आदि चार क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से धनुष बना है, वे जीव भी चार क्रियाओं से, धनुष की पीठ चार क्रियाओं से; जीवा (डोरी) चार क्रियाओं से, ण्हारू चार क्रियाओं से, बाण पाँच क्रियाओं से, तथा शर, पत्र, फल और ण्हारू पाँच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं। 'नीचे' गिरते हुए बाण के अवग्रह (घेरे) में जो जीव आते हैं, वे जीव भी कायिकी आदि पाँच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

12. [Q.] *Bhante* ! When that arrow with its mass, with its weight and with its mass and weight is falling downwards in its natural course then it (arrow) hits some *praan* (two to four sensed beings), *bhoot* (plant

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

bodied beings), *jiva* (five sensed beings), and *sattva* (immobile beings)... and so on up to... deprives them of their life. In that case in how many activities the person who shot that arrow is liable to be involved ?

[Ans.] Gautam ! When that arrow with its mass, with its weight and with its mass and weight is falling downwards... and so on up to... deprives them of their life, then the person (who shot it) is touched by four activities including *kaayiki* (physical activity). The beings from whose bodies that bow has been made are also liable of involvement in four activities. The body of the bow is also liable of involvement in four activities. Also liable of involvement are the bow-string (*jiva*) or catgut (*nharu*) in four, arrow in five and (its components) rod (*shar*), feathers (*patra*), blade or tip (*phal*) and catgut (*nharu*), each in five. The beings afflicted by the falling arrow are also touched by five activities including *kaayiki*.

विवेचन : प्रस्तुत तीन सूत्रों (सूत्र १० से १२ तक) धनुष चलाने वाले व्यक्ति को तथा धनुष के विविध उपकरण (अवयव) जिन-जिन जीवों के शरीरों से बने हैं उनको बाण छूटते समय तथा बाण के नीचे गिरते समय होने वाली प्राणिहिंसा से लगने वाली क्रियाओं का निरूपण है।

एक व्यक्ति धनुष हाथ में लेकर बाण फैंकता है और उससे अनेक जीवों का उत्पीड़न व घात करता है-इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में उसे प्राणातिपातिकी आदि पाँचों क्रियाएँ लगती हैं तथा उस धनुष में प्रयुक्त बाण, डोरी आदि उपकरण जिन जीवों के शरीर से बने हैं उन जीवों को भी पाँचों क्रियाएँ लगती हैं, यह विषय प्रश्न योग्य है, क्योंकि उन जीवों का शरीर तो जड़ है, जीव कहीं अन्यत्र अन्य शरीर धारण कर चुका है, फिर उस जड़ शरीर से उसे प्राणातिपातिकी आदि क्रियाएँ कैसे लगेंगी ? यदि जड़ शरीर से ही क्रियाएँ लगती हैं, तो सिद्धों के त्यक्त शरीर से उन्हें भी क्रियाएँ लगनी चाहिए ?

इस प्रश्न का समाधान इस प्रकार दिया गया है कि उन जीवों ने मरते समय तक हिंसा आदि से विरति (निवृत्ति) नहीं की थी, हिंसा का त्याग नहीं करने से अविरति के परिणाम से युक्त थे, इस कारण उन्हें पाँचों क्रियाएँ लगती हैं। सिद्धों को क्रियाएँ इसलिए नहीं लगतीं, चूँकि उन्होंने कर्मबंध के हेतुभूत अविरति परिणाम का सर्वथा त्याग कर दिया था।

प्रश्न उठता है, फिर तो साधु को रजोहरणादि उपकरणों से जीव दया आदि होने पर उनके भूतपूर्व जीवों को पुण्यबंध भी होना चाहिए, परन्तु ऐसा नहीं होता, क्यों ? उत्तर है, पुण्यबन्ध तभी होता है, जब क्रिया में विवेक और शुभ अध्यवसाय संलग्न हो। जड़ शरीर में विवेक आदि नहीं होते। इसलिए उन्हें पुण्य का बंध भी नहीं होता।

इसके अतिरिक्त अपने भारीपन आदि के कारण जब बाण नीचे गिरता है, तब जिन जीवों के शरीर से वह बाण बना है, उन्हें पाँचों क्रियाएँ लगती हैं, क्योंकि बाणादि रूप बने हुए जीवों के शरीर तो उस समय मुख्यतया जीवहिंसा में प्रवृत्त होते हैं। जबकि धनुष की डोरी, धनुः पृष्ट आदि साक्षात् वधक्रिया में प्रवृत्त न होकर केवल निमित्तमात्र बनते हैं, इसलिए उन्हें चार क्रियाएँ लगती हैं। वृत्तिकार ने इस विषय को श्रद्धागम्य बताया है। *(वृत्ति पत्रांक २३०)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—In the aforesaid three aphorism (10 to 12) liability of involvement of an archer and the beings from whose bodies the bow and arrow have been made, in activities of violence at the time of shooting the arrow and its fall has been discussed.

When a person takes a bow and shoots an arrow harming and killing many living beings he is liable of involvement in all the five activities including *pranatipatiki kriya* (here *kriya* means act and consequence in terms of *karmic* bondage). The living beings from whose bodies the bow, arrow and other components have been made are also liable of involvement in all the five activities. This point raises a question—the bodies of those beings are life-less, the soul has taken rebirth at some other place, then can those souls be liable of involvement in the activities of the abandoned lifeless bodies ? If such liability is possible why the liberated souls should not be liable of involvement in activities through their abandoned bodies ?

The explanation given for this question is that the living beings from whose bodies the bows (etc.) are made were not detached from violence and other sinful activities. Because of this absence of detachment from sinful activities they are liable to such involvement. *Siddhas* (liberated souls) are not liable to such involvement because they are absolutely free of any attachment that causes bondage of *karmas*.

Another question is that as ascetics use their equipment, like ascetic-broom, in their pious activities, like protection of creatures, the beings from whose bodies these equipment were made would acquire bondage of meritorious *karmas*. But this does not happen, why ? The answer is that bondage of meritorious *karmas* takes place only when the action is accompanied by prudence and noble intent. A life-less body does not have these feelings, therefore there is no such bondage.

When the arrow falls due to its weight, the beings from whose bodies it is made are liable to involvement in all the five activities because the bodies of those beings, in the form of arrow, are mainly involved in killing of beings. As the bow-string and other components are only instrumental and not directly involved in the act of killing they are liable to involvement in only four activities. The commentator (*Vritti*) has assigned this subject to the domain of faith. *(Vritti, leaf 230)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. [प्र.] अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवेंति--से जहानामए जुवइं जुवाणे हत्थेणं हत्थे गेण्हेज्जा, चक्कस्स वा नाभी अरगाउत्ता सिया एवामेव जाव चत्तारि पंच जोयणसयाइं बहुसमाइण्णे मणुयलोए मणुस्सेहिं। से कहमेतं भंते ! एवं ?

गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया जाव मणुस्सेहिं, जे ते एवमाहंसु मिच्छा.। अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव एवामेव चत्तारि पंच जोयणसताइं बहुसमाइण्णे निरयलोए नेरइएहिं।

१३. [प्र.] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि जैसे कोई युवक अपने हाथ से युवती का हाथ पकड़े हुए हो, अथवा जैसे आरों से एकदम सटी हुई चक्र की नाभि हो, इसी प्रकार यावत् चार सौ–पाँच सौ योजन तक यह मनुष्यलोक मनुष्यों से ठसाठस भरा हुआ है। भगवन् ! यह प्ररूपणा क्या ठीक है ?

[उ.] हे गौतम ! अन्यतीर्थियों का यह कथन मिथ्या है। मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि चार सौ–पाँच सौ योजन तक नरकलोक, नैरयिक जीवों से ठसाठस भरा हुआ है।

13. [Q.] *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that this land of humans is tightly packed with human beings... and so on up to... four-five hundred *Yojans* just like a young man tightly holds the hand of a young woman or like the spokes of a wheel are tightly held by its axle. *Bhante* ! Is it so ?

[Ans.] Gautam ! This statement by heretics is wrong. I say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that the infernal world (*narak*) is tightly packed with infernal beings (*nairayiks*) up to four-five hundred *Yojans*.

१४. [प्र.] नेरइया णं भंते ! किं एगत्तं पभू विउव्वित्तए ? पुहत्तं पभू विकुव्वित्तए ?

[उ.] जाव जीवाभिगमे आलावगो तहा नेयव्वो जाव दुरहियासं।

१४. [प्र.] भगवन् ! क्या नैरयिक जीव, एकत्व (एकरूप) की विकुर्वणा करने में समर्थ हैं, अथवा बहुत्व (बहुत से रूपों) की विकुर्वणा करने में समर्थ हैं ?

[उ.] गौतम ! इस विषय में जीवाभिगमसूत्र में जिस प्रकार आलापक कहा है, उसी प्रकार का आलापक यहाँ भी 'दुरहियासं' शब्द तक कहना चाहिए।

14. [Q.] *Bhante* ! Are the infernal beings capable of transmutation into one form (*ekatva*) or many forms (*bahutva*) ?

[Ans.] In this regard the statement from *Jivabhigam Sutra* should be repeated here up to the word *durahiyasam* (unbearable).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : नैरयिकों की विकुर्वणा के सम्बन्ध में—जीवाभिगमसूत्र के आलापक का सार इस प्रकार है–रत्नप्रभा आदि नरकों में नैरयिक जीव एकरूप की भी विकुर्वणा करने में समर्थ है, बहुत से रूपों की भी। एकरूप की विकुर्वणा करते हैं, तब वे एक बड़े मुद्‌गर या मुसुंढि, करवत, शूल आदि शस्त्र और लकड़ी यावत् भिंडमाल के रूप की विकुर्वणा कर सकते हैं और जब बहुत से रूपों की विकुर्वणा करते हैं, तब मुद्‌गर से लेकर भिंडमाल तक बहुत-से शस्त्रों की विकुर्वणा कर सकते हैं। वे सब संख्येय होते हैं, असंख्येय नहीं। इसी प्रकार वे सम्बद्ध और सदृश रूपों की विकुर्वणा करते हैं, असम्बद्ध एवं असदृश रूपों की नहीं। इस प्रकार की विकुर्वणा करके वे एक-दूसरे के शरीर को अभिघात (चोट) पहुँचाते हुए वेदना की उदीरणा करते हैं। वह वेदना उज्ज्वल (तप), विपुल (सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त), प्रगाढ़, कर्कश (अनिष्टकर), कटुक, परुष (कठोर), निष्ठुर, चण्ड, तीव्र, दुर्ग, दुःखरूप और दुःसह होती है। *(जीवाभिगम सूत्र, प्रतिपत्ति ३, द्वितीय उद्देशक, नरकस्वरूपवर्णन, पृष्ठ ११७)*

Elaboration—About transmutation of infernal beings—The gist of the statement from *Jivabhigam Sutra* is as follows—In the hells like Ratnaprabha the infernal beings are capable of transmutation into one form as well as many. When they transmute into one form they can acquire form of a large mace or any other weapon (*musudhi*, *karavat*, *shool*, staff, *bhindamal* etc.). When they transmute into many forms they can acquire forms of many of these weapons. The number of these are countable and not innumerable. This way they transmute into related and similar forms and not otherwise. After acquiring these forms they hit each other and inflict pain. This pain is searing (*ujjval*), great (*vipul*; spread all over the body), deep (*pragadh*), harsh (*karkash*), bitter (*katuk*), hard (*parush*), cruel (*nishthur*), excruciating (*chand*), violent (*tivra*), gripping (*durg*), miserable (*duhkharupa*), and unbearable (duhsaha). [*Jivabhgam Sutra 3/2 (Description of Narak), p. 117*]

आधाकर्मादि आहार का फल FRUITS OF TAKING FAULTY FOOD

१५. [१] 'आहाकम्मं णं अणवज्जे' त्ति मणं पहारेत्ता भवइ, से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ नत्थि तस्स आराहणा।

[२] से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेति अत्थि तस्स आराहणा।

[३] एतेणं गमेणं नेयव्वं–कीयकडं, ठवियगं, रइयगं, कंतारभत्तं, दुब्भिक्खभत्तं, वद्दलियाभत्तं, गिलाणभत्तं, सिज्जातरपिंडं, रायपिंडं।

१५. [१] 'आधाकर्म (साधु के लिए बनाया हुआ भोजन, वस्त्र, भवन आदि) अनवद्य–निर्दोष है', इस प्रकार जो साधु मन में समझता है, वह यदि उस आधाकर्म–स्थान की आलोचना (तदनुसार प्रायश्चित्त) एवं प्रतिक्रमण किये बिना ही काल कर जाता है, तो उसके आराधना नहीं होती।

[२] वह (पूर्वोक्त प्रकार की धारणा वाला साधु) यदि उस (आधाकर्म–) स्थान की आलोचना एवं प्रतिक्रमण करके काल करता है, तो उसके आराधना होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[३] आधाकर्म के (पूर्वोक्त) दोनों आलापक के अनुसार ही **क्रीतकृत** (साधु के लिए खरीदकर लाया हुआ), **स्थापित** (साधु के लिए स्थापित करके रखा हुआ), **रचितक** (साधु के लिए मोदक के रूप में बाँधा हुआ) (औद्देशिक दोष का भेदरूप), **कान्तारभक्त** (अटवी में भिक्षुकों के निर्वाह के लिए तैयार किया हुआ आहार), **दुर्भिक्षभक्त** (दुष्काल के समय भिक्षुओं के लिए तैयार किया हुआ आहार), **वर्दलिकाभक्त** (आकाश में बादल छाये हों, घनघोर वर्षा हो रही हो, ऐसे समय में भिक्षुओं के लिए तैयार किया हुआ आहार), **ग्लानभक्त**--(रुग्ण के लिए बनाया हुआ आहार), **शय्यातरपिण्ड** (जिसकी आज्ञा से मकान में ठहरे हैं, उस व्यक्ति के यहाँ से आहार लेना), **राजपिण्ड** (राजा के लिए तैयार किया गया आहार) इन सब दोषों से युक्त आहारादि के विषय में (आधाकर्म-सम्बन्धी आलापक के समान ही) प्रत्येक के दो-दो आलापक कहने चाहिए।

15. [1] "*Adhakarma* (food specifically prepared for an ascetic) is faultless", if an ascetic believes this and if he dies without censuring (and duly atoning) and doing critical review (*pratikraman*), he is said to have not accomplished spiritual worship (*aradhana*).

[2] If he (the ascetic with aforesaid belief) dies after duly censuring (the fault of *adhakarma*) and doing critical review (*pratikraman*), he is said to have accomplished spiritual worship (*aradhana*).

[3] The two aforesaid statements regarding *adhakarma* should also be repeated for food with each of the following faults—*Kreetakrit* (purchased for *shramans*), *Sthapit* (food kept apart for the ascetic), *Rachitak* (made into balls or re-cooked specifically for an ascetic; a sub-type of *adhakarma*), *Kantarabhakt* (emergency food packed and taken along while crossing a difficult terrain), *Durbhiksh-bhakt* (food prepared for distributing to beggars and destitute during a drought), *Vardalikabhakt* (food prepared and kept for distributing during periods of heavy rain, floods and other such calamities), *Glaanabhakt* (food meant for the sick), *Shayyatar-pind* (food offered by the person who has provided place of stay) and *Raj-pind* (food from the royal kitchen).

१६. [१] 'आहाकम्मं णं अणवज्जे' त्ति बहुजणमज्झे भासित्ता सयमेव परिभुंजित्ता भवति, से णं तस्स ठाणस्स जाव अत्थि तस्स आराहणा। [२] एवं पि तह चेव जाव रायपिंडं।

१७. 'आहाकम्मं णं अणवज्जे' त्ति सयं अन्नमन्नस्स अणुप्पदावेत्ता भवति, से णं तस्स० एवं तह चेव जाव रायपिंडं।

१८. 'आहाकम्मं णं अणवज्जे' त्ति बहुजणमज्झे पन्नवइत्ता भवति, से णं तस्स जाव अत्थि आराहणा जाव रायपिंडं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. [१] आधाकर्म अनवद्य (निर्दोष) है, इस प्रकार जो साधु बहुत–से मनुष्यों के बीच में कहकर, स्वयं ही उस आधाकर्म–आहारादि का सेवन (उपभोग) करता है, यदि वह उस स्थान की आलोचना एवं प्रतिक्रमण किये बिना ही काल कर जाता है तो उसके आराधना नहीं होती, यावत् यदि वह उस स्थान की आलोचना–प्रतिक्रमण करके काल करता है, तो उसके आराधना होती है। [२] आधाकर्म–सम्बन्धी इस प्रकार के दोनों आलापक के समान क्रीतकृत से लेकर राजपिण्डदोष तक पूर्वोक्त प्रकार से प्रत्येक के दो–दो आलापक समझ लेने चाहिए।

१७. 'आधाकर्म अनवद्य है', इस प्रकार कहकर, जो साधु स्वयं परस्पर (भोजन करता है, तथा) दूसरे साधुओं को दिलाता है, किन्तु उस आधाकर्म दोषस्थान की आलोचना–प्रतिक्रमण किये बिना काल करता है तो उसके अनाराधना होती है, तथा आलोचनादि करके काल करता है तो उसके आराधना होती है। इसी प्रकार क्रीतकृत से लेकर राजपिण्ड तक पूर्ववत् यावत् अनाराधना एवं आराधना का कथन जान लेना चाहिए।

१८. 'आधाकर्म अनवद्य है', इस प्रकार जो साधु बहुत–से लोगों के बीच में प्ररूपणा (प्रज्ञापना) करता है, उसके भी यावत् आराधना नहीं होती, तथा वह यावत् जो आलोचना–प्रतिक्रमण करके काल करता है, उसके आराधना होती है। इसी प्रकार क्रीतकृत से लेकर यावत् राजपिण्ड तक पूर्वोक्त प्रकार से अनाराधना होती है, तथा यावत् आराधना होती है।

16. [1] "*Adhakarma* (food specifically prepared for an ascetic) is faultless", if an ascetic who so declares in a large gathering and consumes such food, and if he dies without censuring and doing critical review (*pratikraman*), he is said to have not accomplished spiritual worship (*aradhana*)... and so on up to... If he dies after duly censuring and doing critical review (*pratikraman*), he is said to have accomplished spiritual worship (*aradhana*). [2] The two aforesaid statements regarding *adhakarma* should also be repeated for food with each of the faults from *Kreetakrit* (purchased for *shramans*) to *Raj-pind* (food from the royal kitchen).

17. "*Adhakarma* (food specifically prepared for an ascetic) is faultless", if an ascetic who so declares, consumes such food, gets other ascetics offered such food, and if he dies without censuring and doing critical review (*pratikraman*), he is said to have not accomplished spiritual worship (*aradhana*)... and so on up to... If he dies after duly censuring and doing critical review (*pratikraman*), he is said to have accomplished spiritual worship (*aradhana*). The same is true for food with each of the faults from *Kreetakrit* (purchased for *shramans*) to *Raj-pind* (food from the royal kitchen).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

18. "*Adhakarma* (food specifically prepared for an ascetic) is faultless", if an ascetic who so declares in a large gathering... and so on up to... he is said to have not accomplished spiritual worship (*aradhana*)... and so on up to... if he dies after duly censuring and doing critical review (*pratikraman*), he is said to have accomplished spiritual worship (*aradhana*). The same is true for food with each of the faults from *Kreetakrit* (purchased for *shramans*) to *Raj-pind* (food from the royal kitchen).

विवेचन : उक्त चार सूत्रों का निष्कर्ष यह है कि आधाकर्म से लेकर राजपिण्ड तक में से किसी भी दोष का किसी भी रूप में मन-वचन-काया से सेवन करके अन्तिम समय में उस दोष की आलोचना-प्रतिक्रमण कर लेता है, तो वह आराधक होता है। उन दोषों की आलोचना-प्रतिक्रमणादि न करके काल करने वाला साधु विराधक। आधाकर्मादि दोष निर्दोष होने की मन में धारणा बना लेना, तथा निर्दोष होने की प्ररूपणा करना विपरीत श्रद्धानादिरूप दर्शन-विराधना है; इन्हें विपरीत रूप में जानना ज्ञान-विराधना है। तथा इन दोषों को निर्दोष कहकर स्वयं आधाकर्मादि आहारादि सेवन करना, तथा दूसरों को वैसा दोषयुक्त आहार दिलाना, चारित्र-विराधना है। *(वृत्ति पत्रांक २३१)*

Elaboration—The gist of the aforesaid four aphorisms is that if any fault related to food from *Adhakarma* to *Raj-pind* is committed in any way—by mind, speech and body—and the culprit duly censures and does critical review (*pratikraman*) before dying, he is supposed to have accomplished his spiritual practices. One who does not censure and do critical review (*pratikraman*) before dying, he is supposed not to have accomplished his spiritual practices. To have belief that the said faults including *adhakarma* are not faults and to declare so is contradicting established faith and thus a fault related to perception/faith (*darshan-viradhana*). To understand and know such contradiction is fault related to knowledge (*jnana-viradhana*) and to declare such food faultless, accept it and facilitate others accepting it is fault related to conduct (*chaaritra-viradhana*). *(Vritti, leaf 231)*

आचार्य-उपाध्याय की गति DESTINY OF ACHARYA AND UPADHYAYA

१९. [प्र.] आयरिय, उवज्झाए णं भंते ! सविसयंसि गणं अगिलाए संगिण्हमाणे अगिलाए उवगिण्हमाणे कतिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झति जाव अंतं करेति ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झति, अत्थेगइए दोच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झति, तच्चं पुण भवग्गहणं नातिक्कमति।

१९. [प्र.] भगवन् ! अपने विषय में-(सूत्र और अर्थ की वाचना-प्रदान करने में) गण (शिष्यवर्ग) को अग्लान (अखेद) भाव से सूत्रार्थ पढ़ाते हुए तथा अग्लानभावपूर्वक (खेदरहित, प्रसन्न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मन से) उन्हें संयम पालन में सहायता करते हुए आचार्य और उपाध्याय, कितने भव (जन्म) ग्रहण करके सिद्ध होते हैं, यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं ?

[उ.] गौतम ! कितने ही आचार्य–उपाध्याय उसी भव से सिद्ध होते हैं, कितने ही दो भव ग्रहण करके सिद्ध होते हैं, किन्तु तीसरे भव का अतिक्रमण नहीं करते।

19. [Q.] In how many births the *acharyas* and *upadhyayas*, who teach their disciples and help them follow ascetic-discipline without any reservations (or happily) in their respective fields, become *Siddhas*... and so on up to... end all misery ?

[Ans.] Gautam ! Some of the *acharya-upadhyayas* become *Siddhas* in that very birth and some do so after two births but in no case they go beyond the third birth.

मिथ्यादोषारोपणकर्ता के दुष्कर्मबन्ध BONDAGE OF ACCUSERS

२०. [प्र.] जे णं भंते ! परं अलिएणं असंतएणं अब्भक्खाणेणं अब्भक्खाति तस्स णं कहप्पगारा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! जे णं परं अलिएणं असतंएणं अब्भक्खाणेणं अब्भक्खाति तस्स णं तहप्पगारा चेव कम्मा कज्जंति, जत्थेव णं अभिसमागच्छति तत्थेव णं पडिसंवेदेति, ततो से पच्छा वेदेति।

सेवं भंते ! २ त्ति०।

॥ पंचमसए : छट्ठो उद्देसेओ समत्तो ॥

२०. [प्र.] भगवन् ! जो दूसरे पर सद्भूत का अपलाप (सत्य को छिपाना) और असद्भूत (असत्य) का आरोप करके असत्य मिथ्यादोषारोपण (अभ्याख्यान) करता है, उसे किस प्रकार के कर्म बँधते हैं।

[उ .] गौतम ! जो दूसरे पर सद्भूत का अपलाप और असद्भूत का आरोपण करके मिथ्या दोष लगाता है, उसके उसी प्रकार के कर्म बँधते हैं। वह जिस योनि में उत्पन्न होता है, वहाँ उन कर्मों को वेदता (भोगता) है और वेदन करने के पश्चात् उनकी निर्जरा करता है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरने लगे।

20. [Q.] *Bhante* ! What sort of *karmas* does the person who distorts truth, makes false accusations and puts false blames on others acquire ?

[Ans.] Gautam ! The person who distorts truth, makes false accusations and puts false blames on others acquires same sort of *karmas* (entailing similar accusations and blames). In whichever genus

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

he is born he experiences (the fruits of) those *karmas* and after suffering sheds them.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : ब्रह्मचारी को अब्रह्मचारी कहना, यह सद्भूत का अपलाप है, अचोर को चोर कहना असद्भूत दोष का आरोपण है। ऐसा करके किसी पर मिथ्या दोषारोपण करने से इसी प्रकार का फल देने वाले कर्मों का बन्ध होता है। कर्मशास्त्र अनुसार कर्म की शुद्धि के दो प्रकार हैं-(१) प्रायश्चित्त, और (२) उसके विपाक को भोगना। यहाँ दूसरा प्रकार बताया है। *(वृत्ति पत्रांक २३२)*

॥ पंचम शतक : छठा उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—To call a celibate a non-celibate is distorting truth. To call an upright person a thief is false accusation. To do that and put a false blame on someone causes bondage of *karmas* that give similar fruits. According to the theory of *karma* there are two ways of purification - (1) by atonement and (2) by suffering the fruits. Here the second option has been mentioned. *(Vritti, leaf 232)*

● END OF THE SIXTH LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : सप्तम उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : SEVENTH LESSON

एजन EJAN (VIBRATION)

परमाणुपुद्गल का कम्पन VIBRATION OF PARAMANU PUDGAL

१. [प्र.] परमाणुपोग्गले णं भंते ! एयइ वेयइ, चलइ, फंदइ, घट्टइ, खुब्भइ, उदीरइ तं तं भावं परिणमति ?

[उ.] गोयमा ! सिय एयति वेयति जाव परिणमति, सिय णो एयति जाव णो परिणमति।

१. [प्र.] भगवन् ! क्या परमाणुपुद्गल काँपता है, विशेष रूप से काँपता है ? चलन, स्पन्दन, प्रकम्पन, क्षोभ और उदीरणा करता है, उस-उस भाव में (विभिन्न परिणामों में) परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! परमाणुपुद्गल कदाचित् काँपता है, विशेष काँपता है, यावत् उस-उस भाव में परिणत होता है। कदाचित् नहीं काँपता, यावत् उस-उस भाव में परिणत नहीं होता।

1. [Q.] *Bhante* ! Does ultimate particle of matter (*paramanu pudgal*) vibrate (*ejan*), vibrate unusually (*vejan*), move (*chalan*), pulsate (*spandan*), quiver (*prakampan*), get agitated (*kshobh*) and precipitate (*udirana*) ? And get transformed accordingly (into different forms) ?

[Ans.] Gautam ! Sometimes ultimate particle of matter (*paramanu pudgal*) vibrates (*ejan*), vibrates unusually (*vejan*)... and so on up to... gets transformed accordingly. Sometimes it does not vibrate (*ejan*), vibrate unusually (*vejan*)... and so on up to... get transformed accordingly.

२. [प्र. १] दुपदेसिए णं भंते ! खंधे एयइ जाव परिणमइ ?

[उ.] गोयमा ! सिय एयइ जाव परिणमइ, सिय णो एयइ जाव णो परिणमइ; सिय देसे एयइ, देसे नो एयइ।

२. [प्र. १] भगवन् ! क्या द्विप्रदेशिक स्कन्ध काँपता है, यावत् उस-उस भाव में परिणत होता है ?

[उ.] हे गौतम ! कदाचित् कम्पित होता है, यावत् परिणत होता है, कदाचित् कम्पित नहीं होता, यावत् परिणत नहीं होता। कदाचित् एक देश (भाग) से कम्पित होता है, एक देश से कम्पित नहीं होता।

2. [Q. 1] *Bhante* ! Does an aggregate of two ultimate particles vibrate (*ejan*)... and so on up to... get transformed accordingly ?

[Ans.] Gautam ! Sometimes it vibrates (*ejan*)... and so on up to... gets transformed accordingly. Sometimes it does not vibrate (*ejan*)... and so on up to... get transformed accordingly. Sometimes one of its sections (*desh*)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

vibrates (*ejan*)... and so on up to... gets transformed accordingly and the other section does not vibrate (*ejan*)... and so on up to... get transformed accordingly.

[प्र. २] तिपदेसिए णं भंते ! खंधे एयइ ?

[उ.] गोयमा ! सिय एयइ १, सिय नो एयइ २, सिय देसे एयइ, नो देसे एयइ ३, सिय देसे एयइ नो देसा एयंति ४, सिय देसा एयंति नो देसे एयइ ५।

[प्र. २] भगवन् ! क्या त्रिप्रदेशिक स्कन्ध कम्पित होता है, यावत् परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! (१) कदाचित् कम्पित होता है; (२) कदाचित् कम्पित नहीं होता; (३) कदाचित् एक देश से कम्पित होता है और एक देश से कम्पित नहीं होता; (४) कदाचित् एक देश से कम्पित होता है और बहुत देशों से कम्पित नहीं होता; (५) कदाचित् बहुत देशों से कम्पित होता है और एक देश से कम्पित नहीं होता।

[Q. 2] *Bhante* ! Does an aggregate of three ultimate particles vibrate (*ejan*)... and so on up to... get transformed accordingly ?

[Ans.] Gautam ! (1) Sometimes it vibrates (*ejan*). (2) Sometimes it does not vibrate (*ejan*). (3) Sometimes one of its sections (*desh*) vibrates (*ejan*) and the other section does not vibrate (*ejan*). (4) Sometimes one of its sections (*desh*) vibrates (*ejan*) and not many other sections. (5) Sometimes many of its sections (*desh*) vibrate (*ejan*) and only one does not. (here *desh* means *pradesh* or ultimate particle of matter)

[प्र. ३] चउप्पएसिए णं भंते ! खंधे एयइ ?

[उ.] गोयमा ! सिय एयइ १, सिय नो एयइ २, सिय देसे एयइ णो देसे एयइ ३, सिय देसे एयइ णो देसा एयंति ४, सिय देसा एयंइ नो देसे एयइ ५, सिय देसा एयंति नो देसा एयंति ६।

जहा चउप्पदेसिओ तहा पंचपदेसिओ, तहा जाव अणंतपदेसिओ।

[प्र. ३] भगवन् ! क्या चतुष्प्रदेशिक स्कन्ध कम्पित होता है ?

[उ.] गौतम ! (१) कदाचित् कम्पित होता है; (२) कदाचित् कम्पित नहीं होता; (३) कदाचित् उसका एकदेश कम्पित होता है, कदाचित् एकदेश कम्पित नहीं होता; (४) कदाचित् एकदेश कम्पित होता है और बहुत देश कम्पित नहीं होते; (५) कदाचित् बहुत देश कम्पित होते हैं और एक देश कम्पित नहीं होता; (६) कदाचित् बहुत देश कम्पित होते हैं और बहुत देश कम्पित नहीं होते।

जिस प्रकार चतुष्प्रदेशी स्कन्ध के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार पंचप्रदेशी स्कन्ध से लेकर यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक (प्रत्येक स्कन्ध के लिए) कहना चाहिए।

[Q. 3] *Bhante* ! Does an aggregate of four ultimate particle vibrate (*ejan*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! (1) Sometimes it vibrates (*ejan*). (2) Sometimes it does not vibrate (*ejan*). (3) Sometimes one of its sections (*desh*) vibrates (*ejan*) and the other section does not vibrate (*ejan*). (4) Sometimes one of its sections (*desh*) vibrates (*ejan*) and not many other sections. (5) Sometimes many of its sections (*desh*) vibrate (*ejan*) and only one does not. (6) Sometimes many of its sections (*desh*) vibrate (*ejan*) and many do not.

What has been said about aggregate of four ultimate particles is also applicable to all aggregates of five to infinite ultimate particles.

विवेचन : पुद्गल की सबसे छोटी इकाई परमाणु है। दो परमाणुओं का योग द्विप्रदेशी स्कन्ध, यावत् तीन, चार आदि परमाणुओं के स्कन्ध से उतने ही प्रदेशी स्कन्ध बनते हैं। पुद्गलों में कम्पनादि क्रियाएँ कदाचित् होती हैं, कदाचित् नहीं होतीं। इस कारण परमाणुपुद्गल में कम्पन आदि विषयक दो भंग, द्विप्रदेशिक स्कन्ध में तीन भंग, त्रिप्रदेशिक स्कन्ध में, पाँच भंग और चतुष्प्रदेशी स्कन्ध से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक प्रत्येक स्कन्ध में कम्पनादि के छह भंग होते हैं।

Elaboration—The smallest single particle of matter is called *paramanu* or ultimate particle. An aggregate of two ultimate particles is called *dvipradeshiya skandh*. Aggregates of more ultimate particles are given the name of their respective numbers. Matter sometimes undergoes activities like vibration and sometimes does not. That is why there are two alternative situations with regard to action in a single *paramanu*, three in an aggregate of two, five in an aggregate of three and six in aggregates of four and more up to infinite.

परमाणुपुद्गलों में छेदन आदि PIERCING ETC. IN ULTIMATE PARTICLES

३. [प्र. १] परमाणुपोग्गले णं भंते ! असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा ?

[उ.] हंता, ओगाहेज्जा।

[प्र. २] से णं भंते ! तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमति।

४. एवं जाव असंखेज्जपएसिओ।

३. [प्र. १] भगवन् ! क्या परमाणुपुद्गल तलवार की धार या क्षुरधार (उस्तरे की धार) पर अवगाहन कर सकता है ?

[उ.] हाँ, अवगाहन कर सकता है।

[प्र. २] भगवन् ! उस धार पर अवगाहित होकर रहा हुआ परमाणुपुद्गल छिन्न या भिन्न हो जाता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। परमाणुपुद्गल में शस्त्र नहीं चल सकता।

४. इसी तरह (द्विप्रदेशी स्कन्ध से लेकर) यावत् असंख्यप्रदेशी स्कन्ध तक समझ लेना चाहिए। (निष्कर्ष यह है कि एक परमाणु से असंख्यप्रदेशी स्कन्ध तक शस्त्र से छिन्न भिन्न नहीं होता, क्योंकि कोई भी शस्त्र इसमें प्रविष्ट नहीं हो सकता।)

3. [Q. 1] *Bhante* ! Can *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) accommodate itself (*avagahana*) on the edge of a sword or a razor ?

[Ans.] Yes, it can accommodate.

[Q. 2] *Bhante* ! Can the *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) accommodated on that edge get cut into two (*chhedan*) or more pieces (*bhedan*) (by that edge) ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct. No weapon is effective on *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter).

4. The same holds good for (aggregates of two ultimate particles)... and so on up to... aggregate of innumerable ultimate particles. (Conclusion is that no weapon can subdivide a single ultimate particle or aggregates of up to innumerable ultimate particles because there is no weapon that can penetrate these.)

५. [प्र. १] अणंतपदेसिए णं भंते ! खंधे असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा ?

[उ.] हंता, ओगाहेज्जा।

५. [प्र. १] भगवन् ! क्या अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तलवार की धार पर या क्षुरधार पर अवगाहन कर सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह कर सकता है।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Can an aggregate of infinite *paramanu-pudgals* (ultimate particles of matter) accommodate itself (*avagahana*) on the edge of a sword or a razor ?

[Ans.] Yes, it can accommodate.

[प्र. २] से णं तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए छिज्जेज्ज वा, अत्थेगइए नो छिज्जेज्ज वा नो भिज्जेज्ज वा।

[प्र. २] भगवन् ! क्या तलवार की धार या क्षुरधार पर रहा हुआ अनन्तप्रदेशी स्कन्ध छिन्न या भिन्न हो सकता है ?

[उ.] गौतम ! कोई अनन्तप्रदेशी स्कन्ध छिन्न-भिन्न हो जाता है, और कोई छिन्न-भिन्न नहीं होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Q. 2] *Bhante* ! Can the aggregate of infinite *paramanu-pudgals* (ultimate particles of matter) accommodated on that edge get cut into two or more pieces (by that edge) ?

[Ans.] Gautam ! Some aggregate of infinite *paramanu-pudgals* (ultimate particles of matter) gets cut into two or more pieces and some does not.

६. एवं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं। तहिं णवरं 'झियाएज्जा' भाणियव्वं।

७. एवं पुक्खलसंवट्टगस्स महामेहस्स मज्झंमज्झेणं। तहिं 'उल्ले सिया'।

६. जिस प्रकार छेदन-भेदन के विषय में प्रश्नोत्तर किए हैं, उसी तरह से 'अग्निकाय के बीच में प्रवेश करता है'-इसी प्रकार के प्रश्नोत्तर एक परमाणुपुद्गल से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक के कहने चाहिए। किन्तु अन्तर इतना ही है कि जहाँ उस पाठ में सम्भावित छेदन-भेदन का कथन किया गया है, वहाँ इस पाठ में 'जलता है' इस प्रकार कहना चाहिए।

७. इसी प्रकार "पुष्कर-संवर्त्तक नामक महामेघ के मध्य में (बीचोंबीच) प्रवेश करता है" इस प्रकार के प्रश्नोत्तर (एक परमाणुपुद्गल से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक के) कहने चाहिए। किन्तु वहाँ सम्भावित 'छिन्न-भिन्न होता है' के स्थान पर यहाँ 'गीला होता या भीग जाता है', कहना चाहिए।

6. Like the questions and answers about *chhedan-bhedan* (cut and disintegrate) questions and answers with regard to a single ultimate particle of matter... and so on up to... aggregate of infinite ultimate particles 'entering a fire-body' should be stated. The difference being that 'burn' should be mentioned in place of options of 'cut and disintegrate'.

7. In the same way questions and answers with regard to a single ultimate particle of matter... and so on up to... aggregate of infinite ultimate particles 'entering the great cloud called Pushkar-samvartak' should be stated. The difference being that 'gets wet' should be mentioned in place of options of 'cut and disintegrate'.

८. एवं गंगाए महाणदीए पडिसोयं हव्वमागच्छेज्जा। तहिं विणिघायमावज्जेज्जा, उदगावत्तं वा उदगबिंदुं वा ओगाहेज्जा, से णं तत्थ परियावज्जेज्जा।

८. इसी प्रकार "गंगा महानदी के प्रतिस्रोत (विपरीत प्रवाह) में वह परमाणुपुद्गल आता है और प्रतिस्खलित होता है।' इस तरह के तथा 'उदकावर्त्त या उदकबिन्दु में प्रवेश करता है, और वहाँ वह (परमाणु आदि) विनष्ट होता है' (इस तरह के प्रश्नोत्तर पर परमाणुपुद्गल से लेकर अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक के कहने चाहिए।)

8. In the same way (questions and answers with regard to a single ultimate particle of matter... and so on up to... aggregate of infinite

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ultimate particles) it 'enters the great river Ganges against its flow and gets destroyed'. In the same way it 'enters a whirlpool or a drop of water and gets destroyed'.

विवेचन : छेदन–दो टुकड़े हो जाना। **भेदन**–विदारण हो या बीच में से चीरा जाना या खण्ड-खण्ड होना। परमाणुपुद्गल से लेकर असंख्यप्रदेशी स्कन्ध तक सूक्ष्म परिणाम वाला होने से उसका छेदन–भेदन नहीं हो पाता। किन्तु अनन्तप्रदेशी स्कन्ध बादर परिणाम वाला होने से कदाचित् छेदन–भेदन को प्राप्त हो जाता है, कदाचित् नहीं। इसी प्रकार अग्निकाय में प्रवेश करने तथा जल जाने आदि सभी प्रश्नों के उत्तर के सम्बन्ध में छेदन–भेदन आदि की तरह ही समझ लेना चाहिए। अर्थात् उत्तरों का स्पष्टीकरण कर लेना चाहिए।

उक्त वर्णन का सारांश यह है कि एक प्रदेशी से असंख्यप्रदेशी स्कन्ध तक छिन्न-भिन्न नहीं होता, अनन्तप्रदेशी स्कन्ध छिन्न–भिन्न होता भी है, और नहीं भी होता।

आधुनिक विज्ञान का पहले यह मत था कि परमाणु का विभाजन नहीं होता। किन्तु अब उसका विभाजन किया गया है। जैनदर्शन के अनुसार विज्ञानसम्मत अणु अनन्तप्रदेशी स्कन्ध है।

Elaboration—*Chhedan* means to break into two pieces. *Bhedan* means to tear apart or to break into many pieces. As *paramanu-pudgal* or ultimate particle of matter and its aggregates of up to innumerable numbers are extremely minute they cannot be divided into pieces. But the aggregates of infinite *pradeshas* (ultimate particles) are gross and thus sometimes divisible and sometimes not. The answers to questions regarding entering fire and water should be understood likewise.

The gist of the aforesaid description is that aggregates of one to innumerable ultimate particles are indivisible, whereas aggregates of infinite ultimate particles are divisible as well as indivisible.

Modern science initially maintained that atom was indivisible but now it has been divided. According to Jain philosophy the atom of modern science is an aggregate of infinite *paramanus*.

परमाणुपुद्गलादि के विभाग SECTIONS OF PARTICLES OF MATTER

९. [प्र.] परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सअड्ढे समज्झे सपदेसे ? उदाहु अणड्ढे अमज्झे अपदेसे ?

[उ.] गोयमा ! अणड्ढे अमज्झे अपदेसे, नो सअड्ढे नो समज्झे नो सपदेसे।

९. [प्र.] भगवन् ! क्या परमाणुपुद्गल स–अर्ध–(बराबर आधा भाग) स–मध्य–(मध्य सहित) और स–प्रदेश–(प्रदेशयुक्त) है, अथवा अनर्द्ध–(अर्ध–भागरहित), अमध्य–(मध्य भागरहित) और अप्रदेश–(प्रदेशरहित) हैं ?

[उ.] गौतम ! (परमाणुपुद्गल) अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश है, किन्तु स–अर्ध, समध्य और सप्रदेश नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

9. [Q.] *Bhante* ! Is *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) or without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) but never with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*).

१०. [प्र. १] दुप्पदेसिए णं भंते ! खंधे किं सअद्धे समज्झे सपदेसे ? उदाहु अणद्धे अमज्झे अपदेसे ?

[उ.] गोयमा ! सअद्धे अमज्झे, सपदेसे, णो अणद्धे णो समज्झे णो अपदेसे।

[प्र. २] तिप्पदेसिए णं भंते ! खंधे. पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! अणद्धे, समज्झे सपदेसे, णो सअद्धे, णो अमज्झे, णो अपदेसे।

जहा दुप्पदेसिओ तहा जे समा ते भाणियव्वा। जे विसमा ते जहा तिप्पएसिओ तहा भाणियव्वा।

१०. [प्र. १] भगवन् ! क्या द्विप्रदेशिक स्कन्ध स-अर्ध, स-मध्य और स-प्रदेश है, अथवा अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश है ?

[उ.] गौतम ! द्विप्रदेशी स्कन्ध स-अर्ध, अमध्य और स-प्रदेश है, किन्तु अनर्ध, स-मध्य और अप्रदेश नहीं है ?

[प्र. २] भगवन् ! क्या त्रिप्रदेशी स्कन्ध स-अर्ध, अमध्य और स-प्रदेश है, अथवा अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश है ?

[उ.] गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध अनर्ध है, स-मध्य है और सप्रदेश है; किन्तु स-अर्ध नहीं है, अमध्य नहीं है, और अप्रदेश नहीं है।

जिस प्रकार द्विप्रदेशी स्कन्ध के विषय में स-अर्ध आदि विभाग बतलाए गए हैं, उसी प्रकार सम संख्या वाले स्कन्धों के विषय में कहना चाहिए तथा विषम संख्या वाले स्कन्धों के विषयों में त्रिप्रदेशी स्कन्ध की भाँति कहना चाहिए।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Is an aggregate of two *pradeshas* (ultimate particle of matter) with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) or without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is with halves (*sa-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) but never without halves (*an-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and without sections (*a-pradesh*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Q. 2] *Bhante* ! Is an aggregate of three *pradeshas* (ultimate particle of matter) with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) or without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is without halves (*an-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) but never with halves (*sa-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*).

What has been stated about aggregates of two should be repeated for aggregates of even numbers. And what has been stated about aggregates of three should be repeated for aggregates of odd numbers.

[प्र. ३] संखेज्जपदेसिए णं भंते ! खंधे किं सअड्ढे पुच्छा ?

[उ.] गोयमा ! सिय सअद्धे अमज्झे, सपदेसे, सिय अणड्ढे समज्झे सपदेसे।

जहा संखेज्जपदेसिओ तहा असंखेज्जपदेसिओ वि अणंतपदेसिओ वि।

[प्र. ३] भगवन् ! क्या संख्यातप्रदेशी स्कन्ध सार्ध, समध्य और सप्रदेश है, अथवा अनर्ध, अमध्य और अप्रदेश है ?

[उ.] गौतम ! वह कदाचित् स–अर्ध होता है, अमध्य होता है, और स–प्रदेश है, और कदाचित अनर्ध होता है, स–मध्य होता है और सप्रदेश होता है।

जिस प्रकार संख्यातप्रदेशी स्कन्ध के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध और अनन्तप्रदेशी स्कन्ध के विषय में भी जानना चाहिए।

[Q. 3] *Bhante* ! Is an aggregate of countable *pradeshas* (ultimate particle of matter) with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) or without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! It is sometimes with halves (*sa-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*); and sometimes without halves (*an-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*).

What has been stated about aggregates of countable should be repeated for aggregates of innumerable as well as aggregates of infinite.

विवेचन : निष्कर्ष–परमाणुपुद्गल विशुद्ध रूप में अनर्ध (अविभाजित) अमध्य और अप्रदेश होते हैं। परन्तु जो द्विप्रदेशी जैसे सम संख्या (दो, चार, छह, आठ आदि संख्या) वाले स्कन्ध होते हैं, वे स–अर्ध, अमध्य और स–प्रदेश होते हैं, जबकि जो त्रिप्रदेशी जैसे विषम (तीन, पाँच, सात, नौ आदि एकी) संख्या वाले स्कन्ध होते हैं। वे अनर्ध, स–मध्य और स–प्रदेश होते हैं, इसी प्रकार संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी और अनन्तप्रदेशी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्कन्धों में जो समसंख्यकप्रदेशी होते हैं, वे स–अर्ध, अमध्य और स–प्रदेशी होते हैं, और जो विषम संख्यक–प्रदेशी होते हैं। वे अनर्द्ध, स–मध्य और स–प्रदेश होते हैं। भाव यह है कि जिस स्कन्ध के प्रदेश समान होते हैं, उसका अर्ध होता है या जिसके प्रदेश विषम होते हैं उसमें मध्य होता है। संख्येय, असंख्येय और अनन्तप्रदेशी स्कन्ध दोनों प्रकार के होते हैं।

Elaboration—Ultimate particle of matter is without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*). The aggregates of two and even numbers (four, six, eight and so on) are with halves (*sa-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*). The aggregates of three and odd numbers (three, five, seven and so on) are without halves (*an-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*). The aggregates of countable, innumerable and infinite numbers also follow the same rule—those of even numbers are with halves (*sa-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) and those of odd numbers are without halves (*an-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*). In other words the aggregates with even numbers have halves and those with odd numbers have a middle. Aggregates of countable, innumerable and infinite have both these classes.

परमाणुपुद्गलों की परस्पर स्पर्शना TOUCHING OF ULTIMATE PARTICLES OF MATTER

११. [प्र. १] परमाणुपोग्गले णं भंते ! परमाणुपोग्गलं पुसमाणे किं देसेणं देसं फुसति १ देसेणं देसे फुसति २ देसेणं सव्वं फुसति ३ देसेहिं देसं फुसति ४ देसेहिं देसे फुसति ५ देसेहिं सव्वं फुसति ६ सव्वेणं देसं फुसति ७ सव्वेणं देसे फुसति ८ सव्वेणं सव्वं फुसति ९ ?

[उ.] गोयमा ! नो देसेणं देसं फुसति, नो देसेणं देसे फुसति, नो देसेणं सव्वं फुसति, णो देसेहिं देसं फुसति, नो देसेहिं देसे फुसति, नो देसेहिं सव्वं फुसति, णो सव्वेणं देसं फुसति, णो सव्वेणं देसे फुसति, सव्वेणं सव्वं फुसति।

११. [प्र. १] भगवन् ! परमाणुपुद्गल, परमाणुपुद्गल को स्पर्श करता हुआ–(१) क्या एकदेश से एकदेश को स्पर्श करता है ?, (२) एकदेश से बहुत देशों को स्पर्श करता है ?, (३) अथवा एकदेश से सबको स्पर्श करता है ?, (४) अथवा बहुत देशों से एकदेश को स्पर्श करता है ?, (५) या बहुत देशों से बहुत देशों को स्पर्श करता है ?, (६) अथवा बहुत देशों से सभी को स्पर्श करता है ?, (७) अथवा सर्व से एकदेश को स्पर्श करता है ?, (८) या सर्व से बहुत देशों को स्पर्श करता है ?, अथवा (९) सर्व से सर्व को स्पर्श करता है ?

[उ.] गौतम ! (परमाणुपुद्गल परमाणुपुद्गल को) (१) एकदेश से एकदेश को स्पर्श नहीं करता, (२) एकदेश से बहुत देशों को स्पर्श नहीं करता, (३) एकदेश से सर्व को स्पर्श नहीं करता, (४) बहुत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देशों से एकदेश को स्पर्श नहीं करता, (५) बहुत देशों से बहुत देशों को स्पर्श नहीं करता, (६) बहुत देशों से सभी को स्पर्श नहीं करता, (७) न सर्व से एकदेश को स्पर्श करता है, (८) न सर्व से बहुत देशों को स्पर्श करता है, अपितु (९) सर्व से सर्व को स्पर्श करता है।

11. [Q. 1] *Bhante* ! When a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) touches another *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) does it touch—(1) one section (*desh*) by one section ? (2) many sections by one section ? (3) all sections (or whole) by one section ? (4) one section by many sections ? (5) many sections by many sections ? (6) all sections by many sections ? (7) one section by all sections ? (8) many sections by all sections ? or (9) all sections by all sections ?

[Ans.] Gautam ! (When a *paramanu-pudgal* touches another *paramanu-pudgal* it touches—(1) neither one section (*desh*) by one section, (2) nor many sections by one section, (3) nor all sections (or whole) by one section, (4) nor one section by many sections, (5) nor many sections by many sections, (6) nor all sections by many sections, (7) nor one section by all sections, and (8) nor many sections by all sections. But it touches (9) all sections by all sections.

[२] एवं परमाणुपोग्गले दुपदेसियं फुसमाणं सत्तम–णवमेहिं फुसति।

[३] परमाणुपोग्गले तिपदेसियं फुसमाणे निप्पच्छिमएहिं तिहिं पुसति।

[४] जहा परमाणुपोग्गलो तिपदेसियं फुसाविओ एवं फुसावेयव्वो जाव अणंतपदेसिओ।

[२] इसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करता हुआ परमाणुपुद्गल सातवें (सर्व से एकदेश का) अथवा नौवें (सर्व से सर्व का), इन दो विकल्पों से स्पर्श करता है।

[३] त्रिप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करता हुआ परमाणुपुद्गल (उपर्युक्त नौ विकल्पों में से) अन्तिम तीन विकल्पों (अर्थात्–(७) सर्व से एकदेश को, (८) सर्व से बहुत देशों को, और (९) सर्व से सर्व को स्पर्श करता है।)

[४] जिस प्रकार एक परमाणुपुद्गल द्वारा त्रिप्रदेशी स्कन्ध के स्पर्श करने का आलापक कहा है, उसी प्रकार एक परमाणुपुद्गल से चतुष्प्रदेशीस्कन्ध, पंचप्रदेशीस्कन्ध यावत् संख्यातप्रदेशी स्कन्ध, असंख्यातप्रदेशीस्कन्ध एवं अनन्तप्रदेशीस्कन्ध तक को स्पर्श करने का आलापक कहना चाहिए। (अर्थात्–एक परमाणुपुद्गल अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक को तीन विकल्पों से स्पर्श करता है।)

[2] In the same way a *paramanu-pudgal* touches an aggregate of two *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) according to either the seventh (one section by all sections) or the ninth alternative (all sections by all sections) (from among the aforesaid nine alternatives).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[3] A *paramanu-pudgal* touches an aggregate of three *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) according to either of the last three alternatives (from among the aforesaid nine alternatives). [Which means—(7) one section by all sections, (8) many sections by all sections and (9) all sections by all sections.]

[4] As has been stated about a *paramanu-pudgal* touching an aggregate of three *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) should be repeated for touching of aggregates of four, five... and so on up to... countable, innumerable and infinite numbers of ultimate particles. (In other words a *paramanu-pudgal* touches an aggregate of up to infinite *pradeshas* according to either of the aforesaid three alternatives.)

१२. [प्र. १] दुपदेसिए णं भंते ! खंधे परमाणुपोग्गलं पुसमाणे० पुच्छा ?

[उ.] ततिय–नवमेहिं फुसति।

[२] दुपएसिओ दुपदेसियं फुसमाणो पढम–तइय–सत्तम–णवमेहिं फुसति।

[३] दुपएसिओ तिपदेसियं फुसमाणो आइल्लएहि य पच्छिल्लएहि य तिहिं फुसति, मज्झिमएहिं तिहिं वि पडिसेहेयव्वं।

[४] दुपदेसिओ जहा तिपदेसियं फुसाविओ एवं फुसावेयव्वो जाव अणंतपदेसियं।

१२. [प्र. १] भगवन् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध परमाणुपुद्गल को स्पर्श करता हुआ किस प्रकार स्पर्श करता है ?

[उ.] (हे गौतम ! द्विप्रदेशी स्कन्ध परमाणुपुद्गल को) तीसरे और नौवे विकल्प से (अर्थात्–एकदेश से सर्व को, तथा सर्व से सर्व को) स्पर्श करता है।

[२] द्विप्रदेशी स्कन्ध, द्विप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करता हुआ, पहले, तीसरे, सातवें और नौवें विकल्प से स्पर्श करता है।

[३] द्विप्रदेशी स्कन्ध, त्रिप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करता हुआ आदिम तीन (प्रथम, द्वितीय और तृतीय) तथा अन्तिम तीन (सप्तम, अष्टम और नवम) विकल्पों से स्पर्श करता है। इसमें बीच के तीन (चतुर्थ, पंचम और षष्ठ) विकल्पों को छोड़ देना चाहिए।

[४] जिस प्रकार द्विप्रदेशी स्कन्ध द्वारा त्रिप्रदेशी स्कन्ध के स्पर्श आलापक कहा गया है, उसी प्रकार द्विप्रदेशी स्कन्ध द्वारा चतुष्प्रदेशी स्कन्ध, पंचप्रदेशी स्कन्ध यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध के स्पर्श का आलापक कहना चाहिए।

12. [Q. 1] *Bhante* ! When an aggregate of two *pradeshas* (ultimate particle of matter) touches a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter), how does it touch ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! (When an aggregate of two *pradeshas* touches another *paramanu-pudgal*) it touches according to either the third (all sections by one section) or the ninth (all sections by all sections) alternative.

[2] An aggregate of two *pradeshas* touches an aggregate of two *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) according to either of the first, third, seventh or the ninth alternative.

[3] An aggregate of two *pradeshas* touches an aggregate of three *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) according to either of the first three or the last three alternatives. The middle three alternatives (fourth, fifth and sixth) should be left alone.

[4] As has been stated about an aggregate of two *pradeshas* touching an aggregate of three *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) should be repeated for touching of aggregates of four, five... and so on up to... countable, innumerable and infinite numbers of ultimate particles.

१३. [प्र. १] तिपदेसिए णं भंते ! खंधे परमाणुपोग्गलं फुसमाणे० पुच्छा।

[उ.] ततिय-छट्ठ-नवमेहिं फुसति।

[२] तिपदेसिओ दुपदेसियं फुसमाणो पढमएणं, ततियएणं, चउत्थ-छट्ठ-सत्तम-णवमेहिं फुसति।

[३] तिपदेसिओ तिपदेसियं फुसमाणो सव्वेसु वि ठाणेसु फुसति।

[४] जहा तिपदेसिओ तिपदेसियं फुसाविओ एवं तिपदेसिओ जाव अणंतपएसिएणं संजोएयव्वो।

[५] जहा तिपदेसिओ एवं जाव अणंतपएसिओ भाणियव्वो।

१३. [प्र. १] भगवन् ! अब त्रिप्रदेशी स्कन्ध द्वारा परमाणुपुद्गल को स्पर्श करने के सम्बन्ध में पृच्छा है।

[उ.] गौतम् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध परमाणुपुद्गल को तीसरे, छठे और नौवें विकल्प से; (अर्थात्-एकदेश से सर्व को, बहुत देशों से सर्व को और सर्व से सर्व को) स्पर्श करता है।

[२] त्रिप्रदेशी स्कन्ध, द्विप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करता हुआ पहले, तीसरे, चौथे, छठे, सातवें और नौवें विकल्प से स्पर्श करता है।

[३] त्रिप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करता त्रिप्रदेशी स्कन्ध पूर्वोक्त सभी स्थानों (नौ ही विकल्पों) से स्पर्श करता है।

[४] जिस प्रकार त्रिप्रदेशी स्कन्ध द्वारा त्रिप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करने के सम्बन्ध में आलापक कहा गया है, उसी प्रकार त्रिप्रदेशी स्कन्ध द्वारा चतुष्प्रदेशी स्कन्ध, यावत् अनन्तप्रदेशी स्कन्ध को स्पर्श करने के सम्बन्ध में आलापक कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[५] जिस प्रकार त्रिप्रदेशी स्कन्ध के द्वारा स्पर्श के सम्बन्ध में (तेरहवें सूत्र के चार भागों में) कहा गया है, वैसे ही (चतुष्प्रदेशी स्कन्ध से) यावत् (अनन्तप्रदेशी स्कन्ध द्वारा परमाणुपुद्गल से लेकर) अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक को स्पर्श करने के सम्बन्ध में कहना चाहिए।

13. [Q. 1] *Bhante* ! Now the question is about an aggregate of three *pradeshas* (ultimate particle of matter) touching a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) ?

[Ans.] Gautam ! (When an aggregate of three *pradeshas* touches another *paramanu-pudgal*) it touches according to either the third (all sections by one section), the sixth (all sections by many sections) or the ninth (all sections by all sections) alternative.

[2] An aggregate of three *pradeshas* touches an aggregate of two *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) according to either of the first, third, fourth, sixth, seventh or the ninth alternative.

[3] An aggregate of three *pradeshas* touches an aggregate of three *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) according to all the aforesaid nine alternatives.

[4] As has been stated about an aggregate of three *pradeshas* touching an aggregate of three *pradeshas* (*paramanu-pudgal*) should be repeated for touching of aggregates of four, five... and so on up to... countable, innumerable and infinite numbers of ultimate particles.

[5] As has been stated (in first four sections of aphorism 13) about an aggregate of three *pradeshas* touching a *paramanu pudgal*... and so on up to... aggregates of four, five... and so on up to... countable, innumerable and infinite numbers of ultimate particles, should be repeated for touching of aggregates of four up to infinite numbers of ultimate particles.

विवेचन : परमाणु जब दूसरे परमाणु का स्पर्श करता है, तब वह आधे अंश से स्पर्श करता है या सर्वात्मना स्पर्श करता है ? प्रस्तुत सूत्र ११ में इन्हीं नौ विकल्पों को प्रश्न रूप में प्रस्तुत कर समाधान किया है, उनका सार इस प्रकार है–(१) एकदेश से एकदेश का स्पर्श, (२) एकदेश से बहुत देशों का स्पर्श, (३) एकदेश से सर्व का स्पर्श, (४) बहुत देशों से एक देश का स्पर्श, (५) बहुत देशों से बहुत देशों का स्पर्श, (६) बहुत देशों से सर्व का स्पर्श, (७) सर्व से एकदेश का स्पर्श, (८) सर्व से बहुत देशों का स्पर्श, और (९) सर्व से सर्व का स्पर्श। देश का अर्थ भाग है, और 'सर्व' का अर्थ है–सम्पूर्ण भाग।

सर्व से सर्व का स्पर्श–सर्व से सर्व को स्पर्श करने का अर्थ यह नहीं है कि दो परमाणु परस्पर मिलकर एक हो जाते हैं, परन्तु इसका अर्थ यह है कि दो परमाणु समस्त स्वात्मा द्वारा परस्पर एक–दूसरे को स्पर्श करते हैं, क्योंकि दो परमाणुओं के आधा आदि विभाग नहीं होते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विप्रदेशी और त्रिप्रदेशी स्कन्ध में अन्तर–द्विप्रदेशी स्कन्ध स्वयं अवयवी है, वह किसी का अवयव नहीं है, इसलिए इसमें सर्व से दो (बहुत) देशों का स्पर्श घटित नहीं होता, जबकि त्रिप्रदेशी स्कन्ध में तीन प्रदेशों की अपेक्षा दो प्रदेशों का स्पर्श करते समय एक प्रदेश बाकी रहता है। *(इसे विस्तार से समझने के लिए देखें भगवतीसूत्र हिन्दी विवेचन, भाग २, पृ. ८७५–८७६ तथा भगवइ भाष्य : भाग २, पृष्ठ १९४)*

Elaboration—When a *paramanu* (ultimate particle) touches another *paramanu*, does it do partially or fully ? The aforesaid aphorism 11 provides answer to this question in nine alternatives—(1) one section (*desh*) by one section, (2) many sections by one section, (3) all sections (or whole) by one section, (4) one section by many sections, (5) many sections by many sections, (6) all sections by many sections, (7) one section by all sections, (8) many sections by all sections, and (9) all sections by all sections. *Desh* means part and *sarva* means whole.

Touch of whole by whole—This does not mean that two ultimate particles coalesce into each other. It means they touch each other fully and completely. This is because these ultimate particles have no divisions or sections.

Aggregates of two and three—An independent aggregate of two ultimate particles has sections but it is not a section, therefore the alternative of all by all is not applicable. Whereas in case of an aggregate of three when two sections are in touch one section remains free. *(For more details refer to Bhagavati Sutra Hindi elaboration, part-2, pp. 875-876 and Bhagavai Bhashya, part-2, p. 194)*

परमाणुपुद्गलों की काल स्थिति LIFE-SPAN OF ULTIMATE PARTICLES OF MATTER

१४. [प्र. १] परमाणुपोग्गले णं भंते ! कालओ केवच्चिरं होति ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं।

[२] एवं जाव अणंतपदेसिओ।

१४. [प्र. १] भगवन् ! परमाणुपुद्गल काल की अपेक्षा कब तक रहता है ?

[उ.] गौतम ! परमाणुपुद्गल (परमाणुपुद्गल के रूप में) जघन्य एक समय तक रहता है, और उत्कृष्ट असंख्यात काल तक रहता है।

[२] इसी प्रकार (द्विप्रदेशी स्कन्ध से लेकर) अनन्तप्रदेशी स्कन्ध तक कहना चाहिए।

14. [Q. 1] *Bhante* ! In terms of time how long does a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) exist ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! A *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) exists (in the same form) for a minimum of one *Samaya* and a maximum of immeasurable period.

[2] The same should be repeated for aggregates of two to infinite *pradeshas*.

१५. [प्र. १] एगपदेसोगाढे णं भंते ! पोग्गले सेए तम्मि वा ठाणे अन्नम्मि वा ठाणे कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं। एवं जाव असंखेज्जपदेसोगाढे।

[प्र. २] एगपदेसोगाढे णं भंते ! पोग्गले निरेए कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं। एवं जाव असंखेज्जपदेसोगाढे।

१५. [प्र. १] भगवन् ! एक आकाश-प्रदेशावगाढ़ (एक आकाशप्रदेश पर स्थित) पुद्गल उस स्थान में या अन्य स्थान में काल की अपेक्षा से कब तक सकम्प (स-एज) रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय तक और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक सकम्प रहता है। इसी तरह (द्विप्रदेशावगाढ़ से लेकर) यावत् असंख्येय प्रदेशावगाढ़ तक कहना चाहिए।

[प्र. २] भगवन् ! एक आकाशप्रदेश में अवगाढ़ पुद्गल काल की अपेक्षा से कब तक निष्कम्प (निरेज) रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय तक और उत्कृष्ट असंख्येय काल तक निष्कम्प रहता है। इसी प्रकार (द्विप्रदेशावगाढ़ से लेकर) असंख्येय प्रदेशावगाढ़ तक (के विषय में कहना चाहिए।)

15. [Q. 1] *Bhante* ! How long does a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) occupying one space-point remain in the state of vibration (*sa-eja*) at that point or another ?

[Ans.] Gautam ! (It remains in the state of vibration) For a minimum of one *Samaya* (the ultimate fractional unit of time that cannot be divided any further) and a maximum of innumerable fraction of an *Avalika* (innumerable *Samayas*). (The same is true for)... and so on up to... aggregates of infinite *pradeshas*.

[Q. 2] *Bhante* ! How long does a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) occupying one space-point remain in the state of stillness (*nirej* or non-vibration) at that point or another ?

[Ans.] Gautam ! (It remains in the state of stillness) For a minimum of one *Samaya* (the ultimate fractional unit of time) and a maximum of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

immeasurable period. (The same is true for)... and so on up to... aggregates of infinite *pradeshas*.

१६. [प्र.] एगगुणकालए णं भंते ! पोग्गले कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं। एवं जाव अणंतगुणकालए।

१६. [प्र.] भगवन् ! एक गुण काला पुद्गल काल की अपेक्षा से कब तक (एक गुण काला) रहता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः असंख्येय काल तक रहता है। इसी प्रकार (द्विगुण काले पुद्गल से लेकर) यावत् अनन्तगुण काले पुद्गल का कथन करना चाहिए।

16. [Q.] *Bhante* ! In terms of time how long does a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) with one unit of black colour exist (as black) ?

[Ans.] Gautam ! It exists (in the same form) for a minimum of one *Samaya* and a maximum of immeasurable period. The same should be repeated for (with two units of black colour)... and so on up to... with innumerable units of black colour.

१७. एवं वण्ण–गंध–रस–फासं० जाव अणंतगुणलुक्खे।

१७. इसी प्रकार (एक गुण) वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले पुद्गल के विषय में यावत् अनन्तगुण रूक्ष पुद्गल तक पूर्वोक्त प्रकार से काल की अपेक्षा से कथन करना चाहिए।

17. The same should be repeated for *paramanu-pudgals* with single units of (different) colour, smell, taste and touch... and so on up to... *paramanu-pudgals* with infinite units of coarse (*ruksha*) touch.

१८. एवं सुहुमपरिणए पोग्गले।

१८. इसी प्रकार सूक्ष्म–परिणत (सूक्ष्म–परिणामी) पुद्गल के सम्बन्ध में कहना चाहिए।

18. The same should be repeated for minute (*sukshma*) matter.

१९. एवं बादरपरिणए पोग्गले।

१९. इसी प्रकार बादर–परिणत स्थूल–परिणाम वाले पुद्गल के सम्बन्ध में कहना चाहिए।

19. The same should be repeated for gross (*baadar*) matter.

२०. [प्र.] सद्दपरिणए णं भंते ! पोग्गले कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

२१. असद्दपरिणए जहा एगगुणकालए।

२०. [प्र.] भगवन् ! शब्दरूप में परिणत पुद्गल काल की अपेक्षा से कब तक (शब्द–परिणत) रहता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः आवलिका के असंख्येय भाग तक रहता है।

२१. जिस प्रकार एक गुण काले पुद्गल के विषय में कहा है, उसी तरह अशब्द-परिणत पुद्गल की कालावधि के विषय में कहना चाहिए।

20. [Q.] *Bhante* ! In terms of time how long does a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) turned into sound (*shabd*) exist (as sound) ?

[Ans.] Gautam ! It exists (in the same form) for a minimum of one *Samaya* and a maximum of immeasurable fraction of *Avalika*.

21. What has been stated about one unit of black colour should be repeated for matter not turned into sound.

विवेचन : पुद्गल का एक रूप में अवस्थान सम्बन्धी नियम–उक्त सूत्रों का सार यह है कि–(१) **परमाणु**–परमाणु रूप में अधिकतम असंख्यात काल तक रह सकता है, उसके पश्चात् वह स्कन्ध रूप में बदल जाता है। यही नियम स्कन्ध पर भी लागू होता है। (२) **गुणांश में परिवर्तन**–वर्ण, गंध, रस और स्पर्श में पुद्गल के गुण हैं। काला वर्ण एक गुण (क्वालिटी–Quality) है, उसमें अनन्त गुणांश (Units-यूनिट्स) सम्भव हो सकते हैं। (३) **सकम्प–अकम्प**–पुद्गल सप्रकम्प अधिक समय तक नहीं रह सकता। वह जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवाँ भाग तक, जबकि अप्रकम्प जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्यात काल तक रह सकता है। *(वृत्ति पत्रांक २३५)*

Elaboration--Life of matter in one state—The gist of the aforesaid aphorisms is--(1) *Paramanu* (ultimate particle) remains in its free state as a *paramanu* for a maximum of immeasurable period after which it essentially turns into an aggregate (*skandh*). The same rule applies to *skandh* as well. (2) Change in units of properties—colour, smell, taste and touch are attributes of matter. Black colour is an attribute or a property and it can have one to infinite units (*gunamsh*) in terms of intensity. (3) Vibrant and still—matter cannot remain in the state of vibration for a long period—only for a minimum of one *Samaya* and maximum of innumerable fraction of an *Avalika*. Whereas in the state of non-vibration the range is minimum of one *Samaya* and maximum of immeasurable time. *(Vritti, leaf 235)*

विविध पुद्गलों का अन्तरकाल INTERVENING PERIOD OF RE-TRANSFORMATION

२२. [प्र.] परमाणुपोग्गलस्स णं भंते अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं।

२२. [प्र.] भगवन् ! परमाणु-पुद्गल का काल की अपेक्षा से कितना लम्बा अंतर होता है? अर्थात्–जो पुद्गल अभी परमाणु रूप है उसे अपना परमाणुपन छोड़कर, स्कन्धादि रूप में परिणत होने पर, तथा पुनः उसे परमाणुपन प्राप्त करने में कितने लम्बे काल का अन्तर (अन्तरकाल) होता है ?)

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट असंख्यात काल का अन्तर होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

22. [Q.] *Bhante* ! In terms of time what is the intervening period (of re-transformation) for a *paramanu-pudgal* (ultimate particle of matter) ? (In other words the time taken by a *paramanu* to turn into an aggregate and regain its state of *paramanu*.)

[Ans.] Gautam ! (The intervening period is—) A minimum of one *Samaya* and a maximum of immeasurable period.

२३. [प्र.] दुप्पदेसियस्स णं भंते ! खंधस्स अंतरं कालओ केवच्चिर होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेण अणंतं कालं। एवं जाव अणंतपदेसिओ।

२३. [प्र.] भगवन् ! द्विप्रदेशिक स्कन्ध का काल की अपेक्षा से कितना लम्बा अन्तर होता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्टतः अनन्तकाल का अन्तर होता है।

इसी तरह (त्रिप्रदेशिक स्कन्ध से लेकर) यावत् अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध तक कहना चाहिए।

23. [Q.] *Bhante* ! In terms of time what is the intervening period (of re-transformation) for an aggregate of two *pradeshas* (ultimate particles) ?

[Ans.] Gautam ! (The intervening period is—) A minimum of one *Samaya* and a maximum of infinite time.

Aggregate of three up to infinite space points.

२४. [प्र. १] एगपदेसोगाढस्स णं भंते ! पोग्गलस्स सेयस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं।

२४. [प्र. १] भगवन् ! एकप्रदेशावगाढ़ सकम्प पुद्गल का अन्तर कितने काल का होता है ? (अर्थात्–एक आकाश–प्रदेश में स्थित सकम्प पुद्गल अपना कम्पन बंद करे, तो उसे पुनः कम्पन करने में–सकम्प होने में–कितना समय लगता है ?)

[उ.] हे गौतम ! जघन्यतः एक समय का और उत्कृष्टतः असंख्येय काल का अन्तर होता है। (अर्थात्–वह पुद्गल जब कम्पन करता रुक जाये–अकम्प अवस्था को प्राप्त हो और फिर कम्पन प्रारम्भ करे–सकम्प बने तो उसका अन्तर कम से कम एक समय और अधिक से अधिक असंख्यात काल का है।)

24. [Q. 1] *Bhante* ! In terms of time what is the intervening period (of re-transformation) for a vibrating (*sakamp*) *paramanu-pudgal* occupying one space-point ? (In other words the time taken by a vibrating *paramanu* occupying one space-point to become still and restart vibrating.)

[Ans.] Gautam ! (The intervening period is—) A minimum of one *Samaya* and a maximum of immeasurable period. (Which means that the time taken by a vibrating *paramanu* occupying one space-point to become still and restart vibrating is a minimum of one *Samaya* and a maximum of immeasurable period.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] एवं जाव असंखेज्जपदेसेगाढे।

[२] इसी तरह (द्विप्रदेशावगाढ़ सकम्प पुद्गल से लेकर) यावत् असंख्यप्रदेशावगाढ़ तक का अन्तर कहना चाहिए।

[2] The same (about intervening period) should be repeated for (ultimate particle occupying two space-points)... and so on up to... occupying innumerable space-points.

२५. [प्र. १] एगपदेसोगाढस्स णं भंते ! पोग्गलस्स निरेयस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

[२] एवं जाव असंखेज्जपएसोगाढे।

२५. [प्र. १] भगवन् ! एकप्रदेशावगाढ़ निष्कम्प पुद्गल का अन्तरकाल की अपेक्षा कितना होता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग का अन्तर होता है।

[२] इसी तरह (द्विप्रदेशावगाढ़ निष्कम्प पुद्गल से लेकर) यावत् असंख्येयप्रदेशावगाढ़ तक कहना चाहिए।

25. [Q. 1] *Bhante* ! In terms of time what is the intervening period (of re-transformation) for a still or non-vibrating (*nishkamp*) *paramanu-pudgal* occupying one space-point ?

[Ans.] Gautam ! (The intervening period is—) A minimum of one *Samaya* and a maximum of innumerable fraction of an *Avalika*.

[2] The same (about intervening period) should be repeated for (occupying two space-points)... and so on up to... occupying innumerable space-points.

२६. वण्ण-गंध-रस-फास-सुहुमपरिणय-बादरपरिणयाणं एएसिं जंच्चेव संचिट्ठणा तं चेव अंतरं पि भाणियव्वं।

२६. वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्शगत, सूक्ष्मपरिणत एवं बादरपरिणत पुद्गलों का जो संस्थितिकाल (संचिट्ठणाकाल) कहा है, वही उनका अन्तरकाल समझना चाहिए।

26. The intervening period (*antar kaal*) with regard to colour, smell, taste and touch as well as minute (*sukshma*) and gross (*baadar*) form of matter should be stated to be same as respective period of existence (*samsthiti kaal*).

२७. [प्र.] सद्दपरिणयस्स णं भंते ! पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं।

२७. [प्र.] भगवन् ! शब्दपरिणत पुद्गल का अन्तरकाल की अपेक्षा कितना होता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय का, उत्कृष्ट असंख्येय काल का अन्तर होता है।

27. [Q.] *Bhante* ! What is the intervening period (of re-transformation) for a *paramanu-pudgal* turned into sound ?

[Ans.] Gautam ! (The intervening period is—) A minimum of one *Samaya* and a maximum of immeasurable time.

२८. [प्र.] असद्दपरिणयस्स णं भंते ! पोग्गलस्स अंतरं कालओ केवच्चिरं होइ ?

[उ.] गोयमा ! जहण्णेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

२८. [प्र.] भगवन् ! अशब्दपरिणत पुद्गल का अन्तरकाल की अपेक्षा कितना होता है ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय का और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग का होता है।

28. [Q.] *Bhante* ! What is the intervening period (of re-transformation) for a *paramanu-pudgal* not turned into sound ?

[Ans.] Gautam ! (The intervening period is—) A minimum of one *Samaya* and a maximum of innumerable fraction of an *Avalika*.

स्थानायु का अल्प–बहुत्व MAXIMUM AND MINIMUM PERIOD OF EXISTENCE

२९. [प्र.] एयस्स णं भंते ! दव्वट्ठाणाउयस्स खेत्तट्ठाणाउयस्स ओगाहणट्ठाणाउयस्स भावट्ठाणाउयस्स कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवे खेत्तट्ठाणाउए, ओगाहणट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, दव्वट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे, भावट्ठाणाउए असंखेज्जगुणे।

खेत्तोगाहण–दव्वे भावट्ठाणाउयं च अप्पबहुं।
खेत्ते सव्वत्थोवे सेसा ठाणा असंखगुणा॥१॥

२९. [प्र.] भगवन् ! द्रव्यस्थानायु, क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु और भावस्थानायु; इन सबमें कौन, किससे कम, अधिक, तुल्य और विशेषाधिक है ?

[उ.] गौतम ! सबसे कम क्षेत्रस्थानायु है, उससे अवगाहनास्थानायु असंख्येयगुणा है, उससे द्रव्यस्थानायु असंख्येयगुणा है और उससे भावस्थानायु असंख्येयगुणा है।

गाथा का भावार्थ–क्षेत्रस्थानायु, अवगाहनास्थानायु, द्रव्यस्थानायु और भावस्थानायु; इनका अल्प–बहुत्व कहना चाहिए। इनमें क्षेत्रस्थानायु सबसे अल्प है, शेष तीन स्थानायु क्रमशः असंख्येयगुणा हैं।

29. [Q.] *Bhante* ! Which one of these periods is comparatively less, more, equal and much more—*dravya-sthaan-ayu* (period of existence as

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

matter), *kshetra-sthaan-ayu* (period of existence at a place), *avagahana-sthaan-ayu* (period of existence in a shape) and *bhaava-sthaan-ayu* (period of existence of properties) ?

[Ans.] Gautam ! Of these minimum is *kshetra-sthaan-ayu* (period of existence at a place), innumerable times more than that is *avagahana-sthaan-ayu* (period of existence in a shape), innumerable times more than that is *dravya-sthaan-ayu* (period of existence as matter), and innumerable times more than that is *bhaava-sthaan-ayu* (period of existence of properties).

Verse : To be stated is the comparative maximum and minimum of *kshetra-sthaan-ayu*, *avagahana-sthaan-ayu*, *dravya-sthaan-ayu* and *bhaava-sthaan-ayu*. Of these minimum is *kshetra-sthaan-ayu* and following three are innumerable times more than the preceding in the said order.

विवेचन : द्रव्यस्थानायु आदि का स्वरूप–पुद्गल द्रव्य का परमाणु, द्विप्रदेशिकादि स्कन्ध आदि रूप में अवस्थान रहने की आयु अर्थात् स्थिति **द्रव्यस्थानायु** है। एकप्रदेशादि क्षेत्र में पुद्गलों का अवस्थान **क्षेत्रस्थानायु** है। इसी प्रकार पुद्गलों के आधार–स्थलरूप एक प्रकार का आकार अवगाहना है, इस अवगाहित किये हुए परिमित क्षेत्र में पुद्गलों का रहना **अवगाहना स्थानायु** है। द्रव्य के विभिन्न रूपों में परिवर्तित होने पर भी द्रव्य के आश्रित श्यामत्व आदि गुणों का जो अवस्थान रहता है, उसे **भावस्थानायु** कहते हैं।

क्षेत्र व अवगाहना में अन्तर : पुद्गल जहाँ रहता है, वह 'क्षेत्र' तथा ठहरे हुए पुद्गल का एक प्रकार आकार 'अवगाहना' है।

द्रव्यस्थानायु आदि के अल्प–बहुत्व का रहस्य–द्रव्यस्थानायु आदि चारों में क्षेत्र (आकाश) अमूर्तिक होने से तथा उसके साथ पुद्गलों के बंध का कारण 'स्निग्धत्व' न होने से पुद्गलों को क्षेत्रावस्थानकाल (अर्थात्–क्षेत्रस्थानायु) सबसे थोड़ा बताया है। एक क्षेत्र में रहा हुआ पुद्गल दूसरे क्षेत्र में चला जाता है, तब भी उसकी 'अवगाहना' वही रहती है, इसलिए क्षेत्रस्थानायु की अपेक्षा अवगाहनास्थानायु असंख्यगुणा है। संकोच–विकासरूप अवगाहना बदल जाने पर भी द्रव्य दीर्घकाल तक रहता है; इसलिए अवगाहनास्थानायु की अपेक्षा द्रव्यस्थानायु असंख्यगुणा है। संघात और भेद के कारण स्कन्ध की द्रव्य राशि में अन्तर आ जाने पर भी भाव, वर्ण आदि गुणों की स्थिति चिरकाल तक बनी रहती है, सब गुणों का नाश नहीं होता; इसलिए द्रव्यस्थानायु की अपेक्षा 'भावस्थानायु' असंख्यगुणा है। *(वृत्ति पत्रांक २३५, हिन्दी विवेचन, भाग २, पृ. ८८४)*

Elaboration—Definitions of dravya-sthaan-ayu etc.—The period of existence in any form of matter including *paramanu* (ultimate particle) and aggregates of two or more is called *dravya-sthaan-ayu* (period of existence as matter). The period of occupation of a specific area in space, such as a space-point is called *kshetra-sthaan-ayu* (period of existence at a place). In the same way, while occupying an area in space the matter

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

particles acquire a shape; the period of existence in that specific shape is called *avagahana-sthaan-ayu* (period of existence in a shape). Matter transforms into a variety of forms and shapes and still retains some properties, the period for which some specific property remains in existence is called *bhaava-sthaan-ayu* (period of existence of properties).

Difference between kshetra and avagahana—The area or place where matter exists is called *kshetra* and the shape in which it occupies space there is called *avagahana*.

The reasons for comparative periods of existence—Of the said four *kshetra-sthaan-ayu* (period of existence at a place) is minimum because space is formless and adhesion is not the reason for its association with matter. When matter shifts from one place to another it still retains its shape therefore *avagahana-sthaan-ayu* (period of existence in a shape) is innumerable times more than *kshetra-sthaan-ayu*. Even when matter changes its shape it still exists as matter for a long period therefore *dravya-sthaan-ayu* (period of existence as matter) is innumerable times more than *avagahana-sthaan-ayu*. On disintegrating although the shape and mass of matter changes many of its properties, such as colour, do not change, therefore *bhaava-sthaan-ayu* (period of existence of properties) is innumerable times more than *dravya-sthaan-ayu*. *(Vritti, leaf 235; Hindi Commentary, part-2, p. 884)*

नैरयिक आरंभी और परिग्रही **SINFUL ACTIVITY AND POSSESSIVENESS OF INFERNAL BEINGS**

३०. [प्र. १] नेरइया णं भंते ! किं सारंभा सपरिग्गहा ? उदाहु अणारंभा अपरिग्गहा ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया सारंभा सपरिग्गहा, नो अणारंभा णो अपरिग्गहा।

३०. [प्र. १] भगवन् ! क्या नैरयिक आरम्भ और परिग्रह से सहित होते हैं, अथवा अनारम्भी एवं अपरिग्रही होते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक सारम्भ एवं सपरिग्रह होते हैं, किन्तु अनारम्भी एवं अपरिग्रही नहीं होते।

30. [Q. 1] *Bhante* ! Are the infernal beings equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession) or are they without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession). It is not that they are without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव अपरिग्गहा ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया णं पुढविकायं समारंभंति जाव तसकायं समारंभंति, सरीरा परिग्गहिया भवंति, कम्मा परिग्गहिया भवंति, सचित्त-अचित्त-मीसयाइं दव्वाइं परिग्गहियाइं भवंति; से तेणट्ठेणं तं चेव।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से वे आरम्भयुक्त एवं परिग्रह-सहित होते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक पृथ्वीकाय का समारम्भ करते हैं, यावत् त्रसकाय का समारम्भ करते हैं, (इसलिए वे आरम्भयुक्त हैं) तथा उन्होंने शरीर (ममत्वरूप से ग्रहण किये) हैं, कर्म (ज्ञानावरणीयादि कर्मवर्गणा के पुद्गलरूप द्रव्यकर्म तथा राग-द्वेषादिरूप भावकर्म) परिगृहीत किये हुए हैं, और सचित्त, अचित्त एवं मिश्र द्रव्य परिगृहीत किये (ममत्वपूर्वक ग्रहण किये) हुए हैं, इस कारण से गौतम ! नैरयिक परिग्रह-सहित हैं, किन्तु अनारम्भी और अपरिग्रही नहीं हैं।

[Q. 2] Why do you say that... and so on up to... it is not that they are without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings harm or destroy (*samarambh*) earth-bodied beings (*prithvikaya*)... and so on up to... mobile beings (*tras-kaya*) (therefore they are equipped with the faculty of action). Also, they have acquired bodies (with fondness), *karmas* (physical, like *karmic* particles such as knowledge obscuring and mental, like attachment and aversion) and living, non-living and mixed things (with fondness). Therefore, Gautam ! It is said that infernal beings are equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession). It is not that they are without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*).

असुरकुमार आरंभी-परिग्रही SINFUL ACTIVITY AND POSSESSIVENESS OF ASUR KUMARS

३१. [प्र. १] असुरकुमारा णं भंते ! किं सारंभा सपरिग्गहा ? उदाहु अणारंभा अपरिग्गहा ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमारा सारंभा सपरिग्गहा, नो अणारंभा अपरिग्गहा।

३१. [प्र. १] भगवन् ! असुरकुमार क्या आरम्भ एवं परिग्रह-सहित होते हैं, अथवा अनारम्भी एवं अपरिग्रही होते हैं ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमार भी सारम्भ एवं सपरिग्रह होते हैं, किन्तु अनारम्भी एवं अपरिग्रही नहीं होते।

31. [Q. 1] *Bhante* ! Are the Asur Kumars equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession) or are they without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Asur Kumars are equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession). It is not that they are without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*) ?

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमारा णं पुढविकायं समारंभंति जाव तसकायं समारंभंति, सरीरा परिग्गहिया भवंति, कम्मा परिग्गहिया भवंति, भवणा परिग्गहिया भवंति, देवा देवीओ मणुस्सा मणुस्सीओ तिरिक्खजोणिया तिरिक्खजोणिणीओ परिग्गहियाओ भवंति, असण–सयण–भंडमत्तोवगरणा परिग्गहिया भवंति, सचित्त–अचित्त–मीसयाइं दव्वाइं परिग्गहियाइं भवंति; से तेणट्ठेणं तहेव। एवं जाव थणियकुमारा।

[प्र. २] भगवन् ! असुरकुमार किस कारण से सारम्भ एवं सपरिग्रह होते हैं ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमार पृथ्वीकाय से लेकर त्रसकाय तक का समारम्भ करते हैं, तथा उन्होंने शरीर परिगृहीत किये हुए हैं, कर्म परिगृहीत किये हुए हैं, भवन परिगृहीत किये हुए हैं, वे देव–देवियों, पुरुष-स्त्रियों, तिर्यञ्च–नर–मादाओं को परिगृहीत किये हुए हैं, तथा वे आसन, शयन, भाण्डमात्रक (बर्तन-कांसी आदि धातुओं के पात्र), एवं विविध उपकरण परिगृहीत किये हुए हैं; एवं सचित्त, अचित्त तथा मिश्र द्रव्य परिगृहीत किये हुए हैं। इस कारण से वे आरम्भयुक्त एवं परिग्रह–सहित हैं, किन्तु अनारम्भी और अपरिग्रही नहीं हैं। इसी प्रकार (नागकुमार से लेकर) यावत् स्तनितकुमार तक कहना चाहिए।

[Q. 2] Why do you say that ?

[Ans.] Gautam ! Asur Kumars harm or destroy (*samarambh*) earth-bodied beings (*prithvikaya*)... and so on up to... mobile beings (*tras-kaya*). Also, they have acquired bodies, *karmas*, mansions, gods-goddesses, men-women, male and female animals, seats, beds, utensils and a variety of other equipment as well as living, non-living and mixed things (with fondness). Therefore, Gautam ! It is said that Asur Kumars are equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession). It is not that they are without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*). The same should be repeated for other divine beings (from Naag Kumars) up to Stanit Kumars.

३२. एगिंदिया जहा नेरइया।

३२. नैरयिकों के (सूत्र ३०) कथन की तरह ही एकेन्द्रियों के विषय में कहना चाहिए।

32. What has been stated about infernal beings (aphorism 30) should be repeated for one-sensed beings.

बेइन्द्रिय आदि आरंभी–परिग्रही **TWO-SENSED AND OTHER BEINGS**

३३. [प्र.] बेइंदिया णं भंते ! किं सारंभा सपरिग्गहा० ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] तं चेव जाव सरीरा परिग्गहिया भवंति, बाहरिया भंडमत्तोवगरणा परिग्गहिया भवंति, सचित्त अचित्त भवंति एवं जाव चउरिंदिया।

३३. [प्र.] भगवन् ! द्वीन्द्रिय जीव क्या सारम्भ-सपरिग्रह होते हैं, अथवा अनारम्भी एवं अपरिग्रही होते हैं ?

३३. [उ.] गौतम ! द्वीन्द्रिय जीव भी आरम्भ-परिग्रह से युक्त हैं, वे अनारम्भी-अपरिग्रही नहीं हैं, इसका कारण भी वही पूर्वोक्त है। (वे षट्काय का आरम्भ करते हैं) तथा यावत् उन्होंने शरीर परिगृहीत किये हुए हैं, उनके बाह्य भाण्ड, मात्रक तथा विविध उपकरण परिगृहीत किये हुए होते हैं; एवं सचित्त, अचित्त तथा मिश्र द्रव्य भी परिगृहीत किये हुए होते हैं। इसलिए वे अनारम्भी, अपरिग्रही नहीं होते। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के विषय में जानना चाहिए।

33. [Q.] *Bhante* ! Are two-sensed beings (*dvindriya jivas*) equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession) or are they without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*) ?

[Ans.] Gautam ! Two-sensed beings (*dvindriya jivas*) too are equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession). It is not that they are without these faculties (*anaarambh* and *aparigraha*). The reason for this is also same as aforesaid. (They harm or destroy six classes of living beings)... and so on up to... they have acquired bodies, ... seats, beds, utensils and a variety of other equipment as well as living, non-living and mixed things (with fondness). Therefore, they are said to be equipped with the said faculties and not without them. The same should be repeated for three-sensed and four-sensed beings.

३४. [प्र.] पंचिंदियतिरिक्खजोणिया णं भंते० !

[उ.] तं चेव जाव कम्मा परिग्गहिया भवंति, टंका कूडा सेला सिहरी पब्भारा परिग्गहिया भवंति, जल-थल-बिल-गुह-लेणा परिग्गहिया भवंति, उज्झर-निज्झर-चिल्लल-पल्लल-वप्पिणा परिग्गहिया भवंति, अगड-तडाग-दह-नइओ वावि-पुक्खरिणी-दीहिया गुंजालिया सरा सरपंतियाओ सरसरपंतियाओ बिलपंतियाओ परिग्गहियाओ भवंति, आराम-उज्जाणा काणणा वणाइं वणसंडाइं वणराईओ परिग्गहियाओ भवंति, देवउल-सभा-पवा-थूभ खाइय-परिखाओ परिग्गहियाओ भवंति, पागारऽट्टालग-चरिय-दार-गोपुरा परिग्गहिया भवंति, पासाय-घर-सरण-लेण-आवणा परिग्गहिया भवंति, सिंघाडग-तिग-चउक्क-चच्चर-महापहा परिग्गहिया भवंति, सगड-रह-जाण-जुग्ग-गिल्लि-थिल्लि-सीय-संदमाणियाओ परिग्गहियाओ भवंति, लोही-लोहकडाह-कडुच्छुया परिग्गहिया भवंति, भवणा-परिग्गहिया भवंति, देव देवीओ मणुस्सा चित्ताचित्त मणुस्सीओ तिरिक्खजोणिया

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिरिक्खजोणिणीओ आसण–सयण–खंभ–भंड–सचित्ताचित्त–मीसियाइं दव्वाइं परिग्गहियाइं भवंति; से तेणट्ठेणं०।

३४. [प्र.] भगवन् ! पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव क्या आरम्भ–परिग्रहयुक्त हैं ?

[उ.] गौतम ! पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीव, आरम्भ–परिग्रहयुक्त हैं, क्योंकि उन्होंने शरीर यावत् कर्म परिगृहीत किये हैं तथा उनके टंक (पर्वत से विच्छिन्न टुकड़ा या पहाड़ की ढलान), कूट (पर्वत की चोटी), शैल (शिखररहित पर्वत), शिखरी (चोटी वाले पर्वत), प्राग्भार (कुछ झुके पर्वत के प्रदेश) परिगृहीत होते हैं। इसी प्रकार जल, स्थल, बिल, गुफा, लयन (पहाड़ खोदकर बनाए हुए पर्वतगृह) भी परिगृहीत होते हैं। उनके द्वारा उज्झर (पर्वततट से नीचे गिरने वाला जलप्रपात), निर्झर (पर्वत से बहने वाला जलस्रोत–झरना), चिल्लल (कीचड़ मिला हुआ पानी या जलाशय), पल्लल (प्रह्लाददायक जलाशय) तथा वप्रीण (क्यारियों वाला जलस्थान अथवा तटप्रदेश) परिगृहीत होते हैं। उनके द्वारा कूप, तड़ाग (तालाब), द्रह (झील या जलाशय), नदी, वापी (चौकोन बावड़ी), पुष्करिणी (गोल बावड़ी या कमलों से युक्त बावड़ी), दीर्घिका (हौज या लम्बी बावड़ी), सरोवर, सरपंक्ति (सरोवर श्रेणी), सरसरपंक्ति (एक सरोवर से दूसरे सरोवर में पानी जाने का नाला), एवं बिलपंक्ति (बिलों की श्रेणी) परिगृहीत होते हैं तथा आराम (लतामण्डल आदि से सुशोभित आमोद–प्रमोद का स्थान), उद्यान (सार्वजनिक बगीचा), कानन (सामान्य वृक्षों से युक्त ग्राम के निकटवर्ती वन), वन (गाँव से दूर स्थित जंगल), वनखण्ड (एक ही जाति के वृक्षों से युक्त वन), वनराजि (वृक्षों की पंक्ति), ये सब परिगृहीत किये हुए होते हैं। फिर देवकुल (देवमंदिर), सभा, आश्रम, प्रपा (प्याऊ), स्तूभ (खम्भा या स्तूप), खाई, परिखा (ऊपर और नीचे समान खोदी हुई खाई), ये भी परिगृहीत किये होते हैं; तथा प्राकार (किला), अट्टालक (अटारी या किले पर बनाया हुआ मकान अथवा झरोखा), चरिका (घर और किले के बीच में हाथी आदि के जाने का मार्ग), द्वार, गोपुर (नगरद्वार), ये सब परिगृहीत किये होते हैं। इनके द्वारा प्रासाद (देवभवन या राजमहल), घर, सरण (झोंपड़ा), लयन, आपण (दुकान) परिगृहीत किये जाते हैं। शृङ्गाटक (सिंघाड़े के आकार का △ त्रिकोण मार्ग), त्रिक (तीन मार्ग मिलते हैं; ऐसा स्थान), चतुष्क (चौक–जहाँ चार मार्ग □ मिलते हैं); चत्वर (जहाँ सब मार्ग मिलते हों ऐसा स्थान या आँगन), चतुर्मुख (चार द्वारों वाला मकान या देवालय), महापथ (राजमार्ग या चौड़ी सड़क) परिगृहीत होते हैं। शकट (गाड़ी), रथ, यान (सवारी या वाहन), युग्य (युगल हाथ प्रमाण एक प्रकार की पालखी), गिल्ली (अम्बाड़ी), थिल्ली (घोड़े का पलान–काठी), शिविका (पालखी या डोली), स्यन्दमानिका (म्याना या सुखपालकी) आदि परिगृहीत किये होते हैं। लोही (लोहे की दाल–भात पकाने की देगची या तवा), लोहे की कड़ाही, कुड़छी आदि आदि चीजें परिग्रहरूप में गृहीत होती हैं। इनके द्वारा भवन (भवनपति देवों के निवास–स्थान) भी परिगृहीत होते हैं। (इनके अतिरिक्त) देव–देवियाँ मनुष्य–नर–नारियाँ एवं तिर्यंच नर–मादाएँ, आसन, शयन, खण्ड (टुकड़ा), भाण्ड (बर्तन या किराने का सामान) एवं सचित्त, अचित्त और मिश्र द्रव्य परिगृहीत होते हैं। इस कारण से ये पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चयोनिक जीव आरम्भ और परिग्रह से युक्त होते हैं, किन्तु अनारम्भी–अपरिग्रही नहीं होते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

34. [Q.] *Bhante* ! Are five-sensed animals (*panchendriya tiryagyonik jivas*) equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession) ?

[Ans.] Gautam ! Five-sensed animals (*panchendriya tiryagyonik jivas*) are equipped with faculties of action (*aarambh*; sinful activity) and acquisition (*parigraha*; possession). This is because they have acquired bodies and *karmas*. Also they acquire *tank* (a mountain with one face broken or straight), *koot* (peak or pinnacle), *shail* (flat-top mountain), *shikhari* (mountain with a peak), *pragbhar* (leaning mountain; mountain with an overhang). In the same way they also acquire water, land, hole or burrow, cave, and *layan* (a dugout or cave on a hill). They acquire *ujjhar* (waterfall), *nirjhar* (mountain stream), *chillal* (a turbid pond), *pallal* (a delightful lake), *vapreen* (estuary or a water body with gullies). They acquire *koop* (well), *tadag* (pond), *draha* (lake), river, *vapi* (*bavadi* or rectangular reservoir), *pushkarini* (lake or pond with lotuses), *dirghika* (large lake), *sarovar* (natural lake), *sar-pankti* (row of lakes), *sar-sar-pankti* (row of lakes connected with canals), and *bil-pankti* (row of narrow wells or water-pits). They also acquire *aram* (pleasure garden), *udyan* (public parks with a variety of flowering plants and fruit trees), *kanan* (jungle near a town or village), *van* (forest away from town or village), *van-khand* (forest with similar flora), and *van-raji* (forest with rows upon rows of trees). They acquire *devakul* (temples), *sabha* (assembly hall), *ashram* (hermitage), *prapa* (water-hut), *stupa* (a memorial pillar or mound), *khatika* (trench or gully), *parikha* (a moat or trench with narrow bottom and wide top). They also acquire *prakar* (parapet wall), *attalak* (bastion on a rampart), *charika* (an eight cubit wide pathway between moat and rampart), *dvar* (door), and *gopur* (main gate of entrance into a town). They acquire *prasad* (palace), *ghar* (house), *saran* (thatched hut), *layan* (a dugout or cave on a hill), *apan* (shop or marketplace). They acquire *shringatak* (a triangular marketplace), *trik* (meeting point of three roads), *chatushk* (meeting point of four roads), *chatvar* (a square, court, circus, or plaza), *chaturmukh* (a temple with gates on all four sides), and *mahapath* (highway). They also acquire *shakat* (bullock-cart), *rath* (chariot), *yan* (vehicle), *yugya* (palanquin), *gilli* (howda or a seat on elephant's back), *thilli* (a coach driven by two horses), *shivika* (covered palanquin), and *syandamanika* (a palanquin as long as a man). They acquire *lohi* (a steel pan or concave platen),

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

lohakatah (steel cauldron), *kadachi* (serving spoons) and other such equipment. They also acquire mansions as well as gods-goddesses, men-women, male and female animals, *asan* (seat), *shayan* (bed), *khambh* (pillar), *bhand* (earthen pots and grocery), as well as living, non-living and mixed things. Therefore, they are said to be equipped with the said faculties and not without them.

३५. जहा तिरिक्खजोणिया तहा मणुस्सा वि भाणियव्वा।

३५. जिस प्रकार तिर्यञ्चपञ्चेन्द्रिय जीवों के (सारम्भ सपरिग्रह होने के) विषय में कहा, उसी प्रकार मनुष्यों के विषय में भी कहना चाहिए।

35. What has been stated (with regard to action and possession) about five-sensed animals (*panchendriya tiryagyonik jivas*) should be repeated for human beings.

३६. वाणमंतर–जोइस–वेमाणिया तहा नेयव्वा।

३६. जिस प्रकार भवनवासी देवों के विषय में (सूत्र ३१) में कहा, वैसे ही वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के (आरम्भ–परिग्रहयुक्त होने के) विषय में कहना चाहिए।

36. What has been stated (with regard to action and possession) about abode dwelling gods (aphorism 31) should be repeated for interstitial (Vanavyantar), stellar (Jyotishk) and celestial-vehicular (Vaimanik) gods.

विवेचन : चौबीस दण्डकों के जीवों के आरम्भ–प्रस्तुत सात सूत्रों (सू. ३० से ३६ तक) में परिग्रहयुक्त होने की सहेतुक प्ररूपणा की गई है।

आरम्भ और परिग्रह का हेतु–स्थानांगसूत्र में तीन प्रकार का परिग्रह बताया है–शरीर, कर्म तथा उपधि (सचित्त–अचित्त पौद्गलिक द्रव्य)। सामान्य रूप में संसारी जीव परिग्रहयुक्त होते हैं। (यद्यपि एकेन्द्रिय आदि जीव आरम्भ करते व परिग्रहयुक्त होते दिखाई नहीं देते, तथापि जब तक जीव द्वारा मन–वचन–काय से–स्वेच्छा से आरम्भ एवं परिग्रह का प्रत्याख्यान नहीं किया जाता, तब तक आरम्भ और परिग्रह का दोष लगता ही है, इस दृष्टि से उन्हें आरम्भ–परिग्रहयुक्त कहा गया है। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय प्राणियों के भी सिद्धान्तानुसार शरीर, कर्म एवं कुछ सम्बन्धित उपकरणों का परिग्रह होता है और उनके द्वारा अपने खाद्य, शरीर रक्षा आदि कारणों से आरम्भ भी होता है। तिर्यंचपंचेन्द्रिय जीवों, मनुष्यों, नारकों तथा समस्त प्रकार के देवों के द्वारा आरम्भ और परिग्रह में लिप्तता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। यद्यपि मनुष्यों में वीतराग पुरुष, केवली तथा निर्ग्रन्थ साधु–साध्वी आरम्भ–परिग्रह से मुक्त होते हैं, किन्तु यहाँ समग्र मनुष्य जाति की अपेक्षा से मनुष्य को सारम्भ–सपरिग्रह बताया गया है। *(वृत्ति पत्रांक २३२)*

Elaboration—Sinful activities of twenty four places of suffering (Dandak)—Aforesaid seven aphorisms (30-36) inform that living beings in all *Dandaks* indulge in sinful activities and possession.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

The cause—*Sthananga Sutra* mentions three kinds of *parigraha* (possession)—*Sharira* (body), *Karma*, and *Upadhi* (living and non-living things). Worldly beings are generally with possessions. Although one-sensed beings do not appear to be active or acquisitive, they are said to be so because in principle, as long as one does not renounce action and possessions formally and voluntarily by mind, speech, and action, he is liable to the faults of action and acquisition. Two, three and four-sensed beings are also said to possess body, *karmas* and some necessary equipment; they also indulge in action for food and security. Five sensed animals, human beings, infernal beings and all kinds of divine beings visibly indulge in action and acquisition. There are certain individuals like detached persons, *Kevalis* and ascetics who are free of action and acquisition but they are exceptions. In general human beings are said to indulge in action and acquisition. *(Vritti leaf 232)*

हेतु–अहेतु HETU-AHETU

३७. पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा–हेउं जाणति, हेउं पासति, हेउं बुज्झति, हेउं अभिसमागच्छइ, हेउं छउमत्थमरणं मरइ।

३७. हेतु के पाँच प्रकार हैं, यथा–(१) हेतु को जानता है, (२) हेतु को देखता (सामान्य रूप से जानता) है, (३) हेतु का बोध प्राप्त करता–तात्त्विक श्रद्धान करता है, (४) हेतु का अभिसमागम–अभिमुख होकर सम्यक् रूप से प्राप्त करता है, और (५) हेतुयुक्त छद्मस्थमरण मरता है।

37. *Hetu* (cause/who knows cause) is of five kinds—(1) does (properly) know *hetu*, (2) does (properly) see *hetu*, (3) does have (proper) understanding of and faith on *hetu*, (4) does (properly) accept and imbibe *hetu* and (5) embraces death of a *chhadmasth* with *hetu*.

३८. पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा–हेउणा जाणति जाव हेउणा छउमत्थमरणं मरति।

३८. पाँच हेतु (प्रकारान्तर से) कहे हैं। यथा–(१) हेतु (अनुमान) द्वारा (अनुमेय को) जानता है, (२) हेतु (अनुमान) से देखता (सामान्य ज्ञान करता) है, (३) हेतु द्वारा (वस्तु-तत्त्व को सम्यक् जानकर) श्रद्धा करता है, (४) हेतु द्वारा सम्यक्तया प्राप्त करता है, और (५) हेतु से (अध्यवसायादि) छद्मस्थमरण मरता है।

38. Alternatively *hetu* (cause/who knows cause) is of five kinds—(1) does (properly) know through *hetu*, (2) does (properly) see through *hetu*, (3) does have (proper) understanding of and faith through *hetu*, (4) does (properly) accept and imbibe through *hetu* and (5) embraces death of a *chhadmasth* through *hetu* (endeavour).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा–हेउं न जाणइ जाव हेउं अण्णाणमरणं मरति।

४०. पंच हेऊ पण्णत्ता, तं जहा–हेउणा ण जाणति जाव हेउणा अण्णाणमरणं मरति।

३९. पाँच हेतु (मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा से) कहे हैं। यथा–(१) हेतु को नहीं जानता, (२) हेतु को नहीं देखता, (३) हेतु की बोधप्राप्ति (श्रद्धा) नहीं करता; (४) हेतु को प्राप्त नहीं करता, और (५) हेतुयुक्त अज्ञानमरण मरता है।

४०. पाँच हेतु कहे हैं। यथा–(१) हेतु से नहीं जानता, यावत् (५) हेतु से अज्ञानमरण मरता है।

39. *Hetu* (cause/who knows cause) is of five kinds (in context of unrighteous standpoint)—(1) does not (properly) know *hetu*, (2) does not (properly) see *hetu*, (3) does not have (proper) faith on *hetu*, (4) does not (properly) accept *hetu* and (5) embraces death of an ignorant with *hetu*.

40. *Hetu* (cause/who knows cause) is of five kinds—(1) does not (properly) know through *hetu*... and so on up to... (5) embraces death of an ignorant through *hetu*.

४१. पंच अहेऊ पण्णत्ता, तं जहा–अहेउं जाणइ जाव अहेउं केवलिमरणं मरइ।

४२. पंच अहेऊ पण्णत्ता, तं जहा–अहेउणा जाणइ जाव अहेउणा केवलिमरणं मरइ।

४३. पंच अहेऊ पण्णत्ता, तं जहा–अहेउं न जाणइ जाव अहेउं छउमत्थमरणं मरइ।

४४. पंच अहेऊ पण्णत्ता, तं जहा–अहेउणा न जाणइ जाव अहेउणा छउमत्थमरणं मरइ।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ पंचमसए : सत्तमो उद्देसओ समत्तो ॥

४१. पाँच अहेतु कहे हैं–(१) अहेतु को जानता है; यावत् (५) अहेतुयुक्त केवलिमरण मरता है।

४२. पाँच अहेतु कहे हैं–(१) अहेतु द्वारा जानता है, यावत् (५) अहेतु द्वारा केवलिमरण मरता है।

४३. पाँच अहेतु कहे हैं–(१) अहेतु को नहीं जानता, यावत् (५) अहेतुयुक्त छद्मस्थमरण मरता है।

४४. पाँच अहेतु कहे हैं–(१) अहेतु से नहीं जानता, यावत् (५) अहेतु से छद्मस्थमरण मरता है।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर यावत् श्री गौतम स्वामी विचरण करते हैं।

41. *Ahetu* (non-cause) is of five kinds—(1) does know *ahetu*, (2) does see *ahetu*... and so on up to... (5) embraces death of a *Kevali* with *ahetu*.

42. *Ahetu* is of five kinds—(1) does know through *ahetu*... and so on up to... (5) embraces death of a *Kevali* through *ahetu*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

43. *Ahetu* (non-cause) is of five kinds—(1) does not know *ahetu*... and so on up to... (5) embraces death of a *chhadmasth* with *ahetu*.

44. *Ahetu* is of five kinds—(1) does not know through *ahetu*... and so on up to... (5) embraces death of a *chhadmasth* through *ahetu*.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so. " With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : हेतु–अहेतु सूत्रों का रहस्य–प्रस्तुत आठ सूत्रों में से प्रारम्भ के चार सूत्र छद्मस्थ की अपेक्षा से और बाद के चार सूत्र केवली की अपेक्षा से कहे हैं। 'हेतु' का अर्थ है साध्य की सिद्धि का निश्चित साधन। छद्मस्थ परोक्ष ज्ञानी है, अतः वह हेतु द्वारा जानता है। केवली प्रत्यक्ष ज्ञानी है, उन्हें हेतु की जरूरत नहीं है। पहले के चार सूत्रों में से पहला–दूसरा (३७–३८) सूत्र सम्यग्दृष्टि छद्मस्थ की अपेक्षा से और तीसरा–चौथा (३९–४०) सूत्र मिथ्यादृष्टि छद्मस्थ की अपेक्षा से है। इन दो–दो सूत्रों में अन्तर यह है कि प्रथम दो प्रकार के व्यक्ति छद्मस्थ होने से साध्य का निश्चय करने के लिए हेतु को अथवा 'हेतु' से सम्यक् जानते हैं और सम्यग्दृष्टि छद्मस्थ का मरण हेतुपूर्वक या हेतु से समझकर होता है, अज्ञानमरण नहीं होता; जबकि आगे के दो सूत्रों से मिथ्यादृष्टि छद्मस्थ हेतु को सम्यक्तया नहीं जानता–देखता, न ही सम्यक् श्रद्धा करता है, न वह हेतु का सम्यक् प्रयोग करके वस्तुतत्त्व को प्राप्त करता है और मिथ्यादृष्टि छद्मस्थ होने के नाते सम्यग्ज्ञान न होने से अज्ञानमरणपूर्वक मरता है।

आगे के चार सूत्रों में से दो सूत्रों में केवलज्ञानी की अपेक्षा से कहा गया है कि केवलज्ञानी प्रत्यक्षज्ञानी होने से उन्हें हेतु की अथवा हेतु द्वारा जानने (अनुमान करने) की आवश्यकता नहीं रहती। केवलज्ञानी स्वयं 'अहेतु' (प्रत्यक्षद्रष्टा) कहलाते हैं। अतः अहेतु से ही वे जानते–देखते हैं, अहेतु प्रयोग से ही वे क्षायिक सम्यग्दृष्टि होते हैं, इसलिए पूर्ण श्रद्धा करते हैं, वस्तुतत्त्व का निश्चय भी अहेतु से करते हैं और वे अहेतु से यानी बिना किसी उपक्रम–हेतु से नहीं मरते हैं चूँकि, वे निरुपक्रमी होने से किसी भी निमित्त से मृत्यु नहीं पाते, इसलिए अहेतु केवलीमरण है उनका।

सातवाँ और आठवाँ सूत्र अवधिज्ञानी, मनःपर्यायज्ञानी छद्मस्थ की अपेक्षा से है–वे अहेतु व्यवहार करने वाले जीव सर्वथा अहेतु से नहीं जानते, अपितु कथंचित् जानते हैं, कथंचित् नहीं जानते–देखते। अध्यवसानादि (राग–द्वेष) उपक्रम कारण न होने से अहेतुमरण, किन्तु छद्मस्थमरण (केवलिमरण नहीं) होता है। अज्ञानमरण सहेतुक है, छद्मस्थमरण सहेतुक–अहेतुक दोनों प्रकार का हो सकता, केवलीमरण अहेतुक ही होता है। *(वृत्ति पत्रांक २३५)*

॥ पंचम शतक : सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Of the eight aforesaid aphorisms first four are in context of a *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) and last four are in context of a *Kevali* (omniscient). *Hetu* means causative phrase or statement that proves a point. *Chhadmasth* is a *paroksh jnani* (who perceives indirectly), therefore he sees and knows things through *hetu* (cause). *Kevali* is a *pratyaksh jnani* (who perceives directly), he is not dependent on *hetu* (cause). First two of the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

first four aphorisms (37, 38) are about *samyagdrishti* (righteous) *chhadmasth* and the last two (39, 40) are about *mithyadrishti* (unrighteous) *chhadmasth*. The difference between these two sets is that the first set of two is about people who are righteous *chhadmasth* and arrive at the conclusion by knowing the cause or know the truth through cause. A righteous (*samyagdrishti*) *chhadmasth* embraces death after knowing the cause or through cause; it is never out of ignorance. The following set of two is about unrighteous (*mithyadrishti*) *chhadmasth* who does not rightly know, see, or have faith in the cause; thus he does not acquire the reality by right application. Being an unrighteous *chhadmasth* he is devoid of right knowledge and therefore he embraces an ignorant's death.

The first two of the following four aphorisms are about *Keval Jnani* (omniscient). An omniscient has direct perception, he has no need of cause or acquiring knowledge through cause. That is why he is called *ahetuk* or free of cause (one having direct perception). He rightly knows, sees, or has faith in *ahetu* (cause-free perception); through application of *ahetu* (cause-free perception) he acquires the right perception leading to destruction of *karmas* (*kshayik samyaktva*) and thus he has complete faith in *ahetu* (cause-free perception) and acquires the reality through *ahetu*. Being free of cause, he does not die due to some cause but embraces *ahetuk* death (without cause or timely death).

The last two aphorisms are about *Avadhi Jnani* and *Manah-paryav Jnani*. Although they fall in the cause-free category their knowledge is not completely cause-free, it is partly cause-free and partly not. As they are free of indulgence (attachment and aversion) they embrace cause-free death but it is *chhadmasth maran* (non-omniscient death). Ignorant death is with cause, *chhadmasth* death is both with and without cause and omniscient death is without cause. *(Vritti, leaf 235)*

● END OF THE SEVENTH LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : अष्टम उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : EIGHTH LESSON

निर्ग्रन्थ NIRGRANTH (ASCETIC)

निर्ग्रन्थीपुत्र और नारदपुत्र की चर्चा DISCUSSIONS OF NIRGRINTHIPUTRA AND NARAD-PUTRA

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी नारयपुत्ते नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विहरइ।

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी नियंठिपुत्ते णामं अणगारे पगइभद्दए जाव विहरइ।

१. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर पधारे। परिषद् दर्शन के लिये गई, यावत् धर्मोपदेश श्रवण कर वापस लौट गई। उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी (शिष्य) नारदपुत्र नाम के अनगार थे। वे प्रकृतिभद्र थे, यावत् आत्मा को भावित करते विचरते थे।

२. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के अन्तेवासी निर्ग्रन्थीपुत्र नामक अनगार थे। वे प्रकृति से भद्र थे, यावत् विचरण करते थे।

1. During that period of time Bhagavan Mahavir arrived. People came out. *Bhagavan* gave his sermon. People dispersed. During that period of time there was an ascetic disciple of Bhagavan Mahavir whose name was Narad-putra. By nature he was noble (*bhadra*)... and so on up to... he moved about enkindling (*bhaavit*) his soul.

2. During that period of time there was an ascetic disciple of Bhagavan Mahavir whose name was Nirgranthiputra. By nature he was noble (*bhadra*)... and so on up to... he moved about enkindling (*bhaavit*) his soul.

३. [प्र.] तए णं से नियंठिपुत्ते अणगारे जेणामेव नारयपुत्ते अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी—सव्वपोग्गला ते अज्जो ! किं सअड्ढा समज्झा सपदेसा ? उदाहु अणड्ढा समज्झा अपएसा ?

[उ.] 'अज्जो' त्ति नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अणगारं एवं वयासी—सव्वपोग्गला ते अज्जो ! सअड्ढा समज्झा सपदेसा, नो अणड्ढा अमज्झा अपएसा।

३. [प्र.] एक बार निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार, जहाँ नारदपुत्र नामक अनगार थे, वहाँ आए और उनके पास आकर उन्होंने नारदपुत्र अनगार से इस प्रकार पूछा—"हे आर्य ! तुम्हारे मतानुसार सब पुद्गल क्या सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, अथवा अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश हैं ?"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] 'हे आर्य !' इस प्रकार सम्बोधित कर नारदपुत्र अनगार ने निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार से कहा–"आर्य ! मेरे मतानुसार सभी पुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, किन्तु अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश नहीं हैं।"

3. [Q.] Once ascetic Nirgranthiputra came where ascetic Narad-putra was seated. Coming there he asked ascetic Narad-putra—"O noble one ! In your view are all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*) or without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) ?

[Ans.] "O noble one !" Addressing thus ascetic Narad-putra replied to ascetic Nirgranthiputra—"O noble one ! In my view all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), and not without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*).

४. [प्र.] तए णं से नियंठिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी–जइ णं ते अज्जो ! सव्व पोग्गला सअड्ढा समज्झा सपदेसा, नो अणड्ढा अमज्झा अपदेसा; किं दव्वादेसेणं अज्जो ! सव्वपोग्गला सअड्ढा समज्झा सपदेसा, नो अणड्ढा अमज्झा अपदेसा ? खेत्तादेसेणं अज्जो ! सव्वपोग्गला सअड्ढा समज्झा सपदेसा ? तह चेव। कालादेसेणं० तं चेव ? भावादेसेणं० तं चेव ?

[उ.] तए णं से नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अणगारं एवं वयासी–दव्वादेसेण वि मे अज्जो ! सव्वपोग्गला सअड्ढा समज्झा सपदेसा, नो अणड्ढा अमज्झा अपदेसा; खेत्तादेसेण वि सव्वपोग्गला सअड्ढा०; तह चेव कालादेसेण वि; तं चेव भावादेसेण वि।

४. [प्र.] तत्पश्चात् उन निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से यों कहा–"हे आर्य ! यदि तुम्हारे मतानुसार सभी पुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश नहीं हैं, तो क्या, हे आर्य ! द्रव्यादेश (द्रव्य की अपेक्षा) से वे सर्वपुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, किन्तु अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश नहीं हैं ? अथवा हे आर्य ! क्या क्षेत्रादेश से भी पुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश आदि पूर्ववत् हैं ? या कालादेश से सभी पुद्गल उसी प्रकार हैं या भावादेश से समस्त पुद्गल उसी प्रकार हैं ?"

[उ.] तदनन्तर वह नारदपुत्र अनगार, निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार से यों कहने लगे–"हे आर्य ! मेरे मतानुसार (विचार में), द्रव्यादेश से भी सभी पुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, किन्तु अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश नहीं हैं। क्षेत्रादेश से भी सभी पुद्गल सार्द्ध, समध्य आदि उसी तरह हैं, कालादेश से भी वे सब उसी तरह हैं, तथा भावादेश से भी उसी प्रकार हैं।"

4. [Q.] Then ascetic Nirgranthiputra asked ascetic Narad-putra—"O Noble one ! If in your view all *pudgalas* (particles of matter and their

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), and not without halves (*an-ardh*), without a middle (a-madhya) and without sections (*a-pradesh*); then O noble one ! in context of substance (*dravyadesh*) are all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*), and with sections (*sa-pradesh*) and not without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) ? Also, O noble one ! In context of area (*kshetradesh*) also are all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*), and with sections (*sa-pradesh*) etc. ? Also, does the same hold good for all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) in context of time (*kaaladesh*) as well as in context of state (*bhaavadesh*) ?

[Ans.] Ascetic Narad-putra replied to ascetic Nirgranthiputra—"O noble one ! In my view, in context of substance (*dravyadesh*) all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), and not without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*). In context of area (*kshetradesh*) also all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) etc. The same also holds good for all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) in context of time (*kaaladesh*) as well as in context of state (*bhaavadesh*).

५. तए णं से नियंठिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी—जइ णं अज्जो ! दव्वादेसेणं सव्वपोग्गला सअड्ढा समज्झा सपएसा, नो अणड्ढा अमज्झा अपएसा; एवं ते परमाणुपोग्गले वि सअड्ढे समज्झे सपएसे, णो अणड्ढे अमज्झे अपएसे; जइ णं अज्जो ! खेत्तादेसेणवि सव्वपोग्गला स अड्ढा समज्झा सपएसा एवं ते एगपएसोगाढे वि पोग्गले सअड्ढे समज्झे सपएसे; जइ णं अज्जो ! कालादेसेणं सव्वपोग्गला सअड्ढा समज्झा सपएसा; एवं ते एगसमयठिइ वि पोग्गले स अड्ढे, समज्झे, सपएसे तं चेव जइ णं अज्जो ! भावादेसेणं सव्वपोग्गला सअड्ढा समज्झा सपएसा एवं ते एगगुणकालए वि पोग्गले सअड्ढे ३ तं चेव; अह ते एवं न भवइ, तो जं वदसि दव्वादेसेण वि सव्वपोग्गला सअउड्ढा, समज्झा सपदेसा नो अणड्ढा अमज्झा अपदेसा, एवं खेत्तादेसेण वि, कालादेसेणवि, भावादेसेण वि तं णं मिच्छा।

५. इस पर निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार ने नारद पुत्र अनगार से इस प्रकार प्रतिप्रश्न किया—"हे आर्य ! तुम्हारे मतानुसार द्रव्यादेश से सभी पुद्गल यदि सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, तो क्या तुम्हारे मतानुसार परमाणुपुद्गल भी इसी प्रकार सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, किन्तु अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश नहीं हैं ? और हे आर्य ! क्षेत्रादेश से भी यदि सभी पुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं तो तुम्हारे मतानुसार एकप्रदेशावगाढ़ पुद्गल भी सार्द्ध, समध्य एवं सप्रदेश होने चाहिए ! और फिर हे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्य ! यदि कालादेश से भी समस्त पुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, तो तुम्हारे मतानुसार एक समय की स्थिति वाला पुद्गल भी सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश होना चाहिए। इसी प्रकार भावादेश से भी हे आर्य ! सभी पुद्गल यदि सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, तो तदनुसार एकगुण काला पुद्गल भी तुम्हें सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश मानना चाहिए। यदि आपके मतानुसार ऐसा नहीं है, तो फिर आपने जो यह कहा था कि द्रव्यादेश से भी सभी पुद्गल सार्द्ध, समध्य और सप्रदेश हैं, क्षेत्रादेश से भी उसी तरह हैं, कालादेश से और भावादेश से भी उसी तरह हैं, किन्तु वे अनर्द्ध, अमध्य और अप्रदेश नहीं हैं, इस प्रकार का आपका यह कथन मिथ्या हो जाता है।"

5. At this ascetic Nirgranthiputra further asked ascetic Narad-putra— "O noble one ! If in your view, in context of substance (*dravyadesh*), all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), then in your view is ultimate particle of matter (*paramanu pudgala*) too with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), and not without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) ? And, O noble one ! If in your view, in context of area (*kshetradesh*), all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), then in your view matter occupying one space point should also be with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*). And then, O noble one ! If in context of time (*kaaladesh*), all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), then in your view matter with an existence of one Samaya should also be with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*). In the same way, O noble one ! If in context of state (*bhaavadesh*), all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*), then in your view matter with one unit of blackness should also be with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*). However, if in your opinion it is not so then your assertion that in context of substance (*dravyadesh*) all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) are with halves (*sa-ardh*), with a middle (*sa-madhya*) and with sections (*sa-pradesh*); the same also holds good for all *pudgalas* (particles of matter and their aggregates) in context of area (*kshetradesh*), in context of time (*kaaladesh*) as well as in context of state (*bhaavadesh*); but not without halves (*an-ardh*), without a middle (*a-madhya*) and without sections (*a-pradesh*) becomes wrong.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. तए णं से नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अणगारं एवं वयासि—नो खलु वयं देवाणुप्पिया ! एयमट्ठं जाणाओ—पासामो, जइ णं देवाणुप्पिया ! नो गिलायंति परिकहित्तए तं इच्छामि णं देवाणुप्पियाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म जाणित्तए।

६. [जिज्ञासा] तब नारदपुत्र अनगार ने निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार से इस प्रकार कहा—"हे देवानुप्रिय ! निश्चय ही हम इस अर्थ (तथ्य) को नहीं जानते–देखते (अर्थात्–इस विषय का ज्ञान और दर्शन हमें नहीं है)। हे देवानुप्रिय ! यदि आपको इस अर्थ के परिकथन–(स्पष्टीकरणपूर्वक कहने) में किसी प्रकार की ग्लानि, (ऊब या अप्रसन्नता) न हो तो मैं आप देवानुप्रिय से इस अर्थ को सुनकर, अवधारणापूर्वक जानना चाहता हूँ।"

6. [Question] At this ascetic Narad-putra said to ascetic Nirgranthiputra—"O Beloved of gods ! I certainly do not know or understand this matter. Beloved of gods ! If it is not inconvenient to you, I would like to know and understand this matter from you."

७. तए णं से नियंठिपुत्ते अणगारे नारयपुत्तं अणगारं एवं वयासी—दव्वादेसेण वि मे अज्जो सव्वपोग्गला सपदेसा वि अपदेसा वि अणंता। खेत्तादेसेण वि एवं चेव। कालादेसेण वि एवं चेव। भावादेसेण वि एवं चेव।

जे दव्वओ अपदेसे से खेत्तओ नियमा अपदेसे, कालओ सिय सपदेसे सिय अपदेसे, भावओ सिय सपदेसे, सिय अपदेसे।

जे खेत्तओ अपदेसे से दव्वओ सिय सपदेसे सिय अपदेसे, कालओभयणाए, भावओ भयणाए। जहा खेत्तओ एवं कालओ, भावओ।

जे दव्वओ सपदेसे से खेत्तओ सिय सपदेसे सिय अपदेसे, एवं कालओ भावओ वि।

जे खेत्तओ सपदेसे से दव्वओ नियमा सपदेसे, कालओ भयणाए, भावओ भयणाए। जहा दव्वओ तहा कालओ भावओ वि।

७. [समाधान] इस पर निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार ने नारदपुत्र अनगार से इस प्रकार समाधान किया—"हे आर्य ! मेरी धारणानुसार द्रव्यादेश से भी पुद्गल सप्रदेश भी हैं, अप्रदेश भी हैं और वे पुद्गल अनन्त हैं। क्षेत्रादेश से भी इसी तरह हैं और कालादेश से तथा भावादेश से भी वे इसी तरह हैं।

जो पुद्गल द्रव्यादेश से अप्रदेश हैं, वे क्षेत्रादेश से भी नियमतः (निश्चित रूप से) अप्रदेश हैं। कालादेश से उनमें से कोई सप्रदेश होते हैं, कोई अप्रदेश होते हैं और भावादेश से भी कोई सप्रदेश तथा कोई अप्रदेश होते हैं।

जो पुद्गल क्षेत्रादेश से अप्रदेश होते हैं, उनमें कोई द्रव्यादेश से सप्रदेश और कोई अप्रदेश होते हैं, कालादेश और भावादेश से इसी प्रकार की भजना (कोई सप्रदेश और कोई अप्रदेश) जानना चाहिए। जेस प्रकार क्षेत्र (क्षेत्रादेश) से कहा, उसी प्रकार काल से और भाव से भी कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो पुद्गल द्रव्य से सप्रदेश होते हैं, वे क्षेत्र से कोई सप्रदेश और कोई अप्रदेश होते हैं; इसी प्रकार काल से और भाव से भी वे सप्रदेश और अप्रदेश समझ लेने चाहिए।

जो पुद्गल क्षेत्र से सप्रदेश होते हैं; वे द्रव्य से नियमतः (निश्चित ही) सप्रदेश होते हैं, किन्तु काल से तथा भाव से भजना से (विकल्प से–कदाचित् सप्रदेश, कदाचित् अप्रदेश) जानना चाहिए। जैसे (सप्रदेशी पुद्गल के सम्बन्ध में) द्रव्य से (द्रव्य की अपेक्षा से) कहा, वैसे ही काल से (कालादेश से) और भाव (भावादेश) से भी कथन करना चाहिए।

7. [Answer] Then ascetic Nirgranthiputra explained to ascetic Naradputra as follows—"Noble one ! In my view, in context of substance (*dravyadesh*), *pudgalas* are with sections (*sa-pradesh*) as well as without sections (*a-pradesh*) and *pudgalas* are infinite. The same is true in context of area, in context of time and also in context of state.

Pudgalas that are without sections in context of substance are as a rule also without sections in context of area. In context of time they are with sections sometimes and without sections sometimes. In context of state also they are with sections sometimes and without sections sometimes.

Pudgalas that are without sections in context of area are sometimes with sections and sometimes without sections in context of substance. Same pattern follows in context of time as well as in context of state. As has been said about *pudgalas* in context of area should be repeated for *pudgalas* in context of time and state.

Pudgalas that are with sections in context of substance are sometimes with sections and sometimes without sections in context of area. Same pattern follows in context of time as well as in context of state.

Pudgalas that are with sections in context of area are as a rule also without sections in context of substance. However, in context of time as well as state they are with sections sometimes and without sections sometimes. As has been said about *pudgalas* in context of substance should be repeated for *pudgalas* in context of time and state.

८. [प्र.] एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं दव्वादेसेणं खेत्तादेसेणं कालादेसेणं भावादेसेणं सपदेसाण य अपदेसाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] नारयपुत्ता ! सव्वत्थोवा पोग्गला भावादेसेणं अपदेसा, कालादेसेणं अपदेसा असंखेज्जगुणा, दव्वादेसेणं अपदेसा असंखेज्जगुणा, खेत्तादेसेणं अपदेसा असंखेज्जगुणा; खेत्तादेसेणं चेव सपदेसा असंखेज्जगुणा, दव्वादेसेणं सपदेसा विसेसाहिया, कालादेसेणं सपदेसा विसेसाहिया, भावादेसेणं सपदेसा विसेसाहिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. [प्र.] हे भगवन् ! (निर्ग्रन्थीपुत्र !) द्रव्यादेश से, क्षेत्रादेश से, कालादेश से और भावादेश से, सप्रदेश और अप्रदेश पुद्गलों में कौन किन से कम, अधिक, तुल्य और विशेषाधिक हैं ?

[उ.] हे नारदपुत्र ! भावादेश से अप्रदेश पुद्गल सबसे थोड़े हैं। उनकी अपेक्षा कालादेश से अप्रदेश पुद्गल असंख्येगुणा हैं; उनकी अपेक्षा द्रव्यादेश से अप्रदेश पुद्गल असंख्येयगुणा हैं और उनकी अपेक्षा भी क्षेत्रादेश से अप्रदेश पुद्गल असंख्येयगुणा हैं। उनसे क्षेत्रादेश से सप्रदेश पुद्गल असंख्यातगुणा हैं, उनसे द्रव्यादेशेन सप्रदेश पुद्गल विशेषाधिक हैं, उनसे कालादेशेन सप्रदेश पुद्गल विशेषाधिक हैं और उनसे भी भावादेशेन सप्रदेश पुद्गल विशेषाधिक हैं।

8. [Q.] *Bhante* ! (ascetic Nirgranthiputra) In context of substance (*dravyadesh*), in context of area (*kshetradesh*), in context of time (*kaaladesh*) and in context of state (*bhaavadesh*), out of *pudgalas* with sections (*sa-pradesh*) and those without sections (*a-pradesh*), which are comparatively less, more, equal and much more ?

[Ans.] O Narad-putra ! *Pudgalas* without sections (*a-pradesh*) in context of state (*bhaavadesh*) are minimum. As compared to them *pudgalas* without sections (*a-pradesh*) in context of time (*kaaladesh*) are innumerable times more; as compared to them pudgalas without sections (*a-pradesh*) in context of substance (*dravyadesh*) are innumerable times more, and as compared to them *pudgalas* without sections (*a-pradesh*) in context of area (*kshetradesh*) are innumerable times more. As compared to them *pudgalas* with sections (*sa-pradesh*) in context of area (*kshetradesh*) are innumerable times more; as compared to them *pudgalas* with sections (*sa-pradesh*) in context of substance (*dravyadesh*) are much more; as compared to them *pudgalas* with sections (*sa-pradesh*) in context of time (*kaaladesh*) are much more and as compared to them *pudgalas* with sections (*sa-pradesh*) in context of state (*bhaavadesh*) are much more.

९. तए णं से नारयपुत्ते अणगारे नियंठिपुत्तं अणगारं वंदइ नमंसइ। नियंठिपुत्तं अणगारं वंदित्ता नमंसित्ता एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामेति, खामेत्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

९. इसके पश्चात् (यह सुनकर) नारदपुत्र अनगार ने निर्ग्रन्थीपुत्र अनगार को वन्दन-नमस्कार किया। उन्हें वन्दन-नमस्कार करके उनसे इस (अपनी कही हुई मिथ्या) बात के लिए सम्यक् विनयपूर्वक बार-बार क्षमायाचना की। इस प्रकार क्षमायाचना करके वे (नारदपुत्र-अनगार) संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करने लगे।

9. At that ascetic Narad-putra paid homage and obeisance to ascetic Nirgranthiputra and sought his forgiveness again and again with great

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

sincerity and humility for this (his false statement). After seeking forgiveness he (ascetic Narad-putra) resumed his activities enkindling (*bhaavit*) his soul with ascetic-discipline and austerities.

विवेचन : द्रव्यादेश आदि की परिभाषा—*द्रव्य की अपेक्षा परमाणुत्व आदि का कथन करना* **द्रव्यादेश**, *क्षेत्र की अपेक्षा कथन करना* **क्षेत्रादेश**, *काल की अपेक्षा एक समय की स्थिति आदि का कथन* **कालादेश** *और एकगुण काला इत्यादि कथन करना* **भावादेश** *है।*

द्रव्यादि पुद्गलों की सप्रदेशता—अप्रदेशता का नियम—*जो पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा से अप्रदेश—(परमाणुरूप) है, क्षेत्र से एकप्रदेशावगाढ़ होने से नियमतः अप्रदेश है। क्योंकि परमाणु आकाश के एक प्रदेश का ही अवगाहन करता है। काल से वह पुद्गल यदि एक समय की स्थिति वाला है तो अप्रदेश है और यदि अनेक समय की स्थिति वाला है तो सप्रदेश है। भाव की अपेक्षा से वह एकगुण काला आदि है तो अप्रदेश है और अनेकगुण काला आदि है तो सप्रदेश है।*

जो पुद्गल **क्षेत्र की अपेक्षा अप्रदेश** (एकक्षेत्रावगाढ़) होता है, वह द्रव्य से कदाचित् सप्रदेश और कदाचित् अप्रदेश होता है; क्योंकि क्षेत्र (आकाश) के एक प्रदेश में रहने वाले द्वयणुक आदि सप्रदेश हैं, किन्तु क्षेत्र की अपेक्षा से वे अप्रदेश हैं।

जो पुद्गल क्षेत्र से अप्रदेश है, वह काल से कदाचित् अप्रदेश और कदाचित् सप्रदेश इस प्रकार होता है। जैसे—कोई पुद्गल क्षेत्र से एक प्रदेश में रहने वाला है, वह यदि एक समय की स्थिति वाला है तो कालापेक्षया अप्रदेश है, किन्तु यदि वह अनेक समय की स्थिति वाला है तो कालापेक्षया भी सप्रदेश है।

जो पुद्गल क्षेत्र की अपेक्षा अप्रदेश है, यदि वह एकगुण काला आदि है तो भाव की अपेक्षा भी अप्रदेश है, किन्तु यदि वह अनेकगुण काला आदि है तो क्षेत्र की अपेक्षा सप्रदेश होते हुए भी भाव की अपेक्षा से अप्रदेश है। क्षेत्र से अप्रदेश पुद्गल के कथन की तरह काल और भाव से भी कथन करना चाहिए। यथा—जो पुद्गल काल से अप्रदेश होता है, वह द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से कदाचित् सप्रदेश और कदाचित् अप्रदेश होता है तथा जो पुद्गल भाव से अप्रदेश होता है, वह द्रव्य से, क्षेत्र से और काल से कदाचित् सप्रदेश होता है और कदाचित् अप्रदेश।

द्रव्यादि की अपेक्षा पुद्गलों की सप्रदेशता के विषय में नियम—जो पुद्गल द्वयणुकादि रूप होने से **द्रव्य से सप्रदेश** होता है, वह क्षेत्र से कदाचित् सप्रदेश और कदाचित् अप्रदेश होता है, क्योंकि वह यदि दो प्रदेशों में रहता है तो सप्रदेश है, और एक ही प्रदेश में रहता है तो अप्रदेश है। इसी तरह काल से और भाव से भी कहना चाहिए।

आकाश के दो या अधिक प्रदेशों में रहने वाला पुद्गल **क्षेत्र से सप्रदेश** है, वह द्रव्य से भी सप्रदेश ही होता है; क्योंकि जो पुद्गल द्रव्य से अप्रदेश होता है, वह दो आदि प्रदेशों में नहीं रह सकता। जो पुद्गल क्षेत्र से सप्रदेश होता है, वह काल से और भाव से कदाचित् सप्रदेश होता है, कदाचित् अप्रदेश होता है।

जो पुद्गल **काल से सप्रदेश** होता है, वह द्रव्य से, क्षेत्र से और भाव से कदाचित् सप्रदेश होता है, कदाचित् अप्रदेश होता है।

जो पुद्गल भाव से सप्रदेश होता है, वह द्रव्य से, क्षेत्र से और काल से कदाचित् सप्रदेश और कदाचित् अप्रदेश होता है। *[(क) वृत्ति, पत्रांक २४१ से २४३ तक, (ख) भगवती सूत्र (हिन्दी विवेचन), भा. २, पृ. ९००-९०१]*

Elaboration—Meanings of dravyadesh etc.—to describe particles of matter (etc.) in context of substance is *dravyadesh* (substantial or

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

physical) to do that in context of area is *kshetradesh* (spatial) in context of time (like existence of one or more *Samaya*) is *kaaladesh* (temporal) and in context of state (like one unit attribute of black colour) is *bhaavadesh* (qualitative).

Sa-pradesh and a-pradesh—*Pudgala* (particle of matter) that is without sections (*a-pradesh*) in context of substance is as a rule also without sections in context of area as it occupies just a single space-point. This is because a single ultimate particle occupies only one space-point. In context of time if it has an existence of one *Samaya* it is without sections (*a-pradesh*) and if it has existence of more than one *Samaya* it is with sections. In context of state if it has one unit of an attribute (blackness etc.) it is without sections (*a-pradesh*) and if it has more than one unit of an attribute (blackness etc.) it is with sections.

Pudgala that is without sections in context of area is sometimes with sections and sometimes without sections in context of substance. This is because an aggregate of two ultimate particles occupying one space-point is with sections in context of substance and without sections in context of area.

Pudgala that is without sections in context of area is sometimes with sections and sometimes without sections in context of time. This is because an ultimate particle occupying one space-point and existence of more than one *Samaya* is with sections in context of time and without sections if it has existence of just one *Samaya*.

Pudgala that is without sections in context of area is without sections in context of state if it has just one unit of an attribute (blackness etc.). However, if it has more than one unit of such attributes it is with sections in context of state although without sections in context of area. What has been said about *Pudgala* without sections in context of area also holds good in context of time and state. For example—*pudgala* that is without sections in context of time is sometimes with sections and sometimes without sections in context of substance, area and state and *pudgala* that is without sections in context of state is sometimes with sections and sometimes without sections in context of substance, area and time.

Pudgala, having two or more ultimate particles, that is with sections in context of substance is sometimes with sections and sometimes without sections in context of area. This is because if it occupies two space-points it is with sections and if it occupies just one space-point it is without sections. Same is true in context of time and state.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Pudgala occupying two or more space-points is with sections in context of area. It is also with sections in context of substance because a *pudgala* without sections cannot occupy two or more space-points. *Pudgala* that is with sections in context of area is sometimes with sections and sometimes without sections in context of time and state.

Pudgalas that are with sections in context of time are with sections sometimes and without sections sometimes in context of substance, area and state.

Pudgalas that are with sections in context of state are with sections sometimes and without sections sometimes in context of substance, area and time. *(Vritti, leaves 241-243 and Bhagavati Sutra Hindi Commentary, part-2, pp. 900-901)*

जीवों की वृद्धि–हानि INCREASE AND DECREASE IN NUMBER OF JIVAS

१०. [प्र.] 'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं जाव एवं वयासी–जीवा णं भंते ! किं वड्ढंति, हायंति, अवट्ठिया ?

[उ.] गोयमा ! जीवा णो वड्ढंति, णो हायंति, अवट्ठिता।

१०. [प्र.] 'भगवन् !' यों कहकर भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर से इस प्रकार पूछा–"भगवन् ! क्या जीव बढ़ते हैं या घटते हैं या अवस्थित रहते हैं ?"

[उ.] गौतम ! जीव न बढ़ते हैं, न घटते हैं, किन्तु अवस्थित रहते हैं।

10. [Q.] *"Bhante* !" Addressing thus Bhagavan Gautam asked Shraman Bhagavan Mahavir as *follows—"Bhante ! Do the living beings (jivas)* increase (in number) or decrease or remain constant ?

[Ans.] Gautam ! The living beings (*jivas*) neither increase (in number) nor decrease but remain constant ?

११. [प्र.] नेरइया णं भंते ! किं वड्ढंति, हायंति, अवट्ठिता ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया वड्ढंति वि, हायंति वि, अवट्ठिया वि।

१२. जहा नेरइया एवं जाव वेमाणिया।

११. [प्र.] भगवन् ! क्या नैरयिक बढ़ते हैं, घटते हैं, अथवा अवस्थित रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक बढ़ते भी हैं, घटते भी हैं और अवस्थित भी रहते हैं।

१२. जिस प्रकार नैरयिकों के विषय में कहा, इसी प्रकार वैमानिक–पर्यन्त (चौबीस ही दण्डकों के जीवों के विषय में) कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. [Q.] *Bhante* ! Do the infernal beings (*jivas*) increase (in number) or decrease or remain constant ?

[Ans.] Gautam ! The infernal beings (*jivas*) increase (in number), decrease and remain constant also.

12. As has been said about infernal beings so should be repeated up to *Vaimaniks* (for all the 24 *Dandaks* or places of suffering).

१३. [प्र.] सिद्धा णं भंते ! पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सिद्धा वड्ढंति, नो हायंति, अवट्ठिया वि।

१३. [प्र.] भगवन् ! सिद्धों के विषय में पृच्छा है।

[उ.] गौतम ! सिद्ध बढ़ते हैं, घटते नहीं, वे अवस्थित भी रहते हैं।

13. [Q.] *Bhante* ! What about *Siddhas* (liberated souls) ?

[Ans.] Gautam ! Liberated souls (*Siddhas*) increase (in number), do not decrease and also remain constant.

१४. [प्र.] जीवा णं भंते ! केवतियं कालं अवट्ठिता ?

[उ.] गोयमा ! सव्वद्धं।

१४. [प्र.] भगवन् ! जीव कितने काल तक अवस्थित रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! सर्वाद्धा (सब काल में जीव अवस्थित ही रहते हैं)।

14. [Q.] *Bhante* ! How long do living beings remain constant (in number) ?

[Ans.] Gautam ! For all time (*Sarvaddha*).

चौबीस दण्डकों की वृद्धि–हानि और कालमान की प्ररूपणा

DURATION OF INCREASE-DECREASE IN TWENTY FOUR DANDAKS

१५. [प्र. १] नेरइया णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढंति ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

[२] एवं हायंति।

१५. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक कितने काल तक बढ़ते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः आवलिका के असंख्यात भाग तक बढ़ते हैं।

[२] जिस प्रकार बढ़ने का काल कहा है, उसी प्रकार घटने का काल भी (उतना ही कहना चाहिए)।

15. [Q. 1] *Bhante* ! How long do infernal beings increase ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Infernal beings increase for a minimum of one *Samaya* and maximum of uncountable fraction of *Avalika* (innumerable *Samayas*).

[2] The same is true for the duration of decrease.

[प्र. ३] नेरइया णं भंते ! केवइयं कालं अवट्ठिया ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं चउव्वीसं मुहुत्ता।

[प्र. ३] भगवन् ! नैरयिक कितने काल तक अवस्थित रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! (नैरयिक जीव) जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः चौबीस मुहूर्त्त तक (अवस्थित रहते हैं।)

[Q. 3] *Bhante* ! How long do infernal beings remain constant ?

[Ans.] Gautam ! They (infernal beings) remain constant for a minimum of one *Samaya* and maximum of twenty four *Muhurt* (48 minutes).

[४] एवं सत्तसु वि पुढवीसु 'वड्ढंति, हायंति' भाणियव्वं। नवरं अवट्ठिएसु इमं नाणत्तं, तं जहा–रयणप्पभाए पुढवीए अडतालीसं मुहुत्ता, सक्करप्पभाए चोद्दस राइंदियाइं, वालुयप्पभाए मासं, पंकप्पभाए दो मासा, धूमप्पभाए चत्तारि मासा, तमाए अट्ठमासा, तमतमाए बारस मासा।

[४] इसी प्रकार सातों नरक–पृथ्वियों के जीव बढ़ते हैं, किन्तु अवस्थित रहने के काल में इस प्रकार भिन्नता है। यथा–रत्नप्रभापृथ्वी में ४८ मुहूर्त्त का, शर्कराप्रभा में चौदह अहोरात्रि का, बालुकाप्रभा में एक मास का, पंकप्रभा में दो मास का, धूमप्रभा में चार मास का, तमःप्रभा में आठ मास का और तमस्तमःप्रभा में बारह मास का अवस्थान–काल है।

[4] In the same way they increase and decrease in all the seven hells but the duration of remaining constant varies as follows—In Ratnaprabha Prithvi it is 48 *Muhurts*, in Sharkaraprabha Prithvi it is 14 *Ahoratri* (days and nights), in Balukaprabha Prithvi it is one month, in Pankaprabha Prithvi it is two months, in Dhoom-prabha Prithvi it is four months, in Tamah-prabha Prithvi it is eight months and in Tamstamah-prabha Prithvi it is twelve months.

१६. [१] असुरकुमारा वि वड्ढंति, हायंति, जहा नेरइया। अवट्ठिया जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अडचालीसं मुहुत्ता।

१६. [१] जिस प्रकार नैरयिक जीवों की वृद्धि–हानि के विषय में कहा है, उसी प्रकार असुरकुमार देवों की वृद्धि–हानि के सम्बन्ध में समझना चाहिए। असुरकुमार देव जघन्य एक समय तक और उत्कृष्ट ४८ मुहूर्त्त तक अवस्थित रहते हैं।

16. [1] As has been stated about the increase and decrease of infernal beings should be repeated for Asur Kumar gods. Asur Kumar gods

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

remain constant for a minimum of one *Samaya* and maximum of 48 *Muhurts* (48 minutes).

[२] एवं दसविहा वि।

[२] इसी प्रकार दस ही प्रकार के भवनपतिदेवों की वृद्धि–हानि और अवस्थिति का कथन करना चाहिए।

[2] The same should be repeated for increase, decrease and remaining constant with regard to all ten kinds of abode dwelling gods (*Bhavanpati Devs*).

१७. एगिंदिया वड्ढंति वि, हायंति वि, अवट्ठिया वि। एएहिं तिहि वि जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

१७. एकेन्द्रिय जीव बढ़ते भी हैं, घटते भी हैं और अवस्थित भी रहते हैं। इन तीनों (वृद्धि–हानि–अवस्थिति) का काल जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः आवलिका का असंख्यातवाँ भाग (समझना चाहिए)।

17. One sensed beings (*ekendriya jivas*) also increase, decrease and remain constant. The duration of these three (increase etc.) is minimum one *Samaya* and maximum uncountable fraction of one *Avalika*.

१८. [१] बेइंदिया वड्ढंति हायंति तहेव अवट्ठिया, जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं दो अंतोमुहुत्ता।

[२] एवं जाव चउरिंदिया।

१८. [१] द्वीन्द्रिय जीव भी इसी प्रकार बढ़ते–घटते हैं। इनके अवस्थान–काल में भिन्नता इस प्रकार है–ये जघन्यतः एक समय तक और उत्कृष्टतः दो अन्तर्मुहूर्त्त तक अवस्थित रहते हैं।

[२] द्वीन्द्रिय की तरह त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों तक (का वृद्धि–हानि–अवस्थितिकाल) कहना चाहिए।

18. [1] Two sensed beings (*dvindriya jivas*) also increase and decrease in the same way. The difference in their duration of remaining constant is—they remain constant for a minimum of one *Samaya* and maximum of two *Antar-muhurt* (less than a *Muhurt*).

[2] The same (increase etc.) should be repeated for three and four sensed beings (*trindriya* and *chaturindriya jivas*).

१९. अवसेसा सव्वे वड्ढंति, हायंति तहेव। अवट्ठियाणं णाणत्तं इमं, तं जहा–(१) सम्मुच्छिम–पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं दो अंतोमुहुत्ता। (२) गब्भवक्कंतियाणं चउव्वीसं मुहुत्ता। (३) सम्मुच्छिममणुस्साणं अट्ठचत्तालीसं मुहुत्ता। (४) गब्भवक्कंतियमणुस्साणं चउव्वीसं मुहुत्ता। (५) वाणमंतर–जोइस–सोहम्मीसाणेसु अट्ठचत्तालीसं मुहुत्ता। (६) सणंकुमारे अट्ठारस राइंदियाइं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चत्तालीस य मुहुत्ता। (७) माहिंदे चउवीसं रातिंदियाइं, वीस य मुहुत्ता। (८) बंभलोए पंच चत्तालीसं रातिंदियाइं। (९) लंतए नउतिं रातिंदियाइं। (१०) महासुक्के सट्ठं राइंदियसतं। (११) सहस्सारे दो राइंदियसताइं। (१२) आणय-पाणयाणं संखेज्जा मासा। (१३) आरणऽच्चुयाणं संखेज्जाइं वासाइं। एवं (१४) गेवेज्जगदेवाणं। (१५) विजय-वेजयंत-जयंत अपराजियाणं असंखिज्जाइं वाससहस्साइं। सव्वट्ठसिद्धे य पलिओवमस्स संखेज्जइभागो।

एवं भाणियव्वं-वड्ढंति हायंति जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं; अवट्ठियाणं जं भणियं।

१९. शेष सब जीव बढ़ते-घटते हैं, यह पहले की तरह ही कहना चाहिए। किन्तु उनके अवस्थानकाल में इस प्रकार भिन्नता है, यथा-(१) सम्मूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीवों का (अवस्थानकाल) दो अन्तर्मुहूर्त्त का; (२) गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों का चौबीस मुहूर्त्त का, (३) सम्मूर्च्छिम मनुष्यों का ४८ मुहूर्त्त का, (४) गर्भज मनुष्यों का चौबीस मुहूर्त्त का, (५) वाणव्यन्तर ज्योतिष्क और सौधर्म, ईशान देवों का ४८ मुहूर्त्त का, (६) सनत्कुमार देवों का अठारह अहोरात्रि तथा चालीस मुहूर्त्त का अवस्थानकाल है। (७) माहेन्द्र देवलोक के देवों का चौबीस रात्रि-दिन और बीस मुहूर्त्त का, (८) ब्रह्मलोक देवों का ४५ रात्रि-दिवस का, (९) लान्तक देवों का ९० रात्रि-दिवस का, (१०) महाशुक्र-देवलोक के देवों का १६० अहोरात्रि का, (११) सहस्रार देवों का २०० रात्रि-दिन का, (१२) आनत और प्राणत देवलोक के देवों का संख्येय मास का, (१३) आरण और अच्युत देवलोक के देवों का संख्येय वर्षों का अवस्थानकाल है। इसी प्रकार (१४) नौ ग्रैवेयक देवों के (अवस्थानकाल के) विषय में जान लेना चाहिए। (१५) विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित विमानवासी देवों का अवस्थानकाल असंख्येय हजार वर्षों का है तथा सर्वार्थसिद्ध-विमानवासी देवों का अवस्थानकाल पल्योपम का संख्यातवाँ भाग है।

और ये सब जघन्य एक समय तक और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्यातवें भाग तक बढ़ते-घटते हैं; इस प्रकार कहना चाहिए और इनका अवस्थानकाल जो ऊपर कहा गया है, वही है।

19. In the same way it should be stated as aforesaid that all the remaining beings increase and decrease (in numbers). However, the variation in their duration of remaining constant is—(1) *Sammurchhim panchendriya tiryagyonik jivas* (five-sensed animals of asexual origin) remain constant for two *Antar-muhurt* (less than a *Muhurt*). (2) *Garbhaj panchendriya tiryagyonik jivas* (five-sensed animals born out of womb) for twenty four *Muhurt*. (3) *Sammurchhim manushya* (human beings of asexual origin) for 48 *Muhurt*. (4) *Garbhaj manushya* (human beings born out of womb) for twenty four *Muhurt*. (5) *Vanavyantar*, *Jyotishk*, *Saudharma* and *Ishan Devs* (Interstitial, Stellar, *Saudharma* and *Ishan* gods) for 48 *Muhurt*. (6) *Sanatkumar* gods for 18 Ahoratra (days and nights) and 40 *Muhurt*. (7) Gods of Maahendra divine realm for 24

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Ahoratra (days and nights) and 20 *Muhurt*. (8) Gods of Brahmalok divine realm for 45 *Ahoratra* (days and nights). (9) Gods of Lantak divine realm for 90 *Ahoratra* (days and nights). (10) Gods of Mahashukra divine realm for 160 *Ahoratra* (days and nights). (11) Gods of Sahasrar divine realm for 200 *Ahoratra* (days and nights). (12) Gods of Anat and Pranat divine realm for countable months. (13) Gods of Aran and Achyut divine realm for countable years. (14) Same is true for Gods of nine Graiveyak divine realms. (15) Celestial-vehicular Gods of Vijaya, Vaijayant, Jayant and Aparajit divine realms for innumerable thousand years. (16) Celestial-vehicular Gods of Sarvarth Siddha divine realm for countable fraction of one *Palyopam* (a metaphoric unit of time).

It should be stated that all these increase and decrease (in numbers) for a minimum of one *Samaya* and maximum of uncountable fraction of an *Avalika*, the duration of remaining constant being aforesaid.

२०. [प्र. १] **सिद्धा णं भंते ! केवइयं कालं वड्ढंति ?**

[उ.] **गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अट्ठ समया।**

२०. [प्र. १] भगवन् ! सिद्ध कितने काल तक बढ़ते हैं ?

[उ.] गौतम ! जघन्यतः एक समय और उत्कृष्टतः आठ समय तक सिद्ध बढ़ते हैं।

20. [Q. 1] *Bhante* ! How long do liberated beings (*Siddhas*) increase ?

[Ans.] Gautam ! Liberated beings increase for a minimum of one *Samaya* and maximum of eight *Samayas*.

[प्र. २] **केवइयं कालं अवट्ठिया ?**

[उ.] **गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा।**

[प्र. २] भगवन् ! सिद्ध कितने काल तक अवस्थित रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह मास तक सिद्ध अवस्थित रहते हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! How long do liberated beings (*Siddhas*) remain constant ?

[Ans.] Gautam ! Liberated beings remain constant for a minimum of one *Samaya* and maximum of six months.

विवेचन : वृद्धि, हानि और अवस्थिति का तात्पर्य–संसार का शाश्वत नियम है, जीव–अजीव नहीं बनता, अजीव–जीव नहीं बनता। संसार में न तो कोई नया जीव उत्पन्न होता है, और न किसी जीव का अस्तित्व समाप्त होता है। नैरयिक आदि चौबीसदण्डक के जीव के पर्याय विशेष हैं। इसलिए इनमें हानि–वृद्धि होती रहती है। कोई भी जीव जब बहुत उत्पन्न होते हैं और थोड़े मरते हैं, तब 'वे बढ़ते हैं', ऐसा कहा जाता है और जब वे बहुत मरते हैं और थोड़े उत्पन्न होते हैं, तब 'वे घटते हैं', ऐसा कहा जाता है। जब उत्पत्ति और मरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समान संख्या में होता है, अर्थात्–जितने जीव उत्पन्न होते हैं, उतने ही मरते हैं, अथवा कुछ काल तक न तो जीव का जन्म होता है और न ही मरण होता, तब यह कहा जाता है कि 'वे अवस्थित हैं' इसे अवस्थानकाल कहते हैं।

Elaboration—Increase, decrease and remaining constant—Soul or the living does not turn into matter or the non-living and vice versa; this is the eternal law of nature. In this world no new soul is created nor a single soul gets destroyed. The infernal and other kinds of beings belonging to the twenty four *Dandaks* are simply modes or varieties of living beings or souls. Therefore they continue to increase and decrease. When among one kind of beings the number of births are more than the number of deaths then it is said that 'they are increasing (in number)'. When it is the other way round it is said that 'they are decreasing'. When the number of births is same as that of deaths or when for a specific period their is neither birth nor death, it is said that 'they remain constant'.

जीवों में सोपचयादि चार भंग FOUR DIVISIONS INCLUDING SOPACHAYA

२१. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं सोवचया, सावचया, सोवचय–सावचया, निरुवचय–निरवचया ?

[उ.] गोयमा ! जीवा णो सोवचया, नो सावचया, णो सोवचय–सावचया, निरुवचय–निरवचया।

२१. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव (१) सोपचय उपचय सहित हैं, (२) सापचय अपचय–सहित हैं, (३) सोपचयसापचय उपचय–अपचय–सहित हैं, या (४) निरुपचय उपचयरहित–निरपचय–अपचयरहित हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव न सोपचय हैं और न ही सापचय हैं और न सोपचय–सापचय हैं, किन्तु निरुपचय–निरपचय हैं।

21. [Q.] *Bhante* ! Are the living beings (souls) (1) with augmentation (*sopachaya*), (2) with de-augmentation (*sapachaya*), (3) with augmentation and de-augmentation (*sopachaya-sapachaya*) or (4) without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*) (in their numbers) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings (souls) are neither with augmentation (*sopachaya*) nor with de-augmentation (*sapachaya*) or with augmentation and de-augmentation (*sopachaya-sapachaya*) but are without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*).

२२. एगिंदिया ततियपदे, सेसा जीवा चउहि वि पदेहिं भाणियव्वा।

२२. एकेन्द्रिय जीवों में तीसरा पद (सोपचय–सापचय) कहना चाहिए। शेष सब जीवों में चारों ही पद (विकल्प) कहने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

22. With regard to one-sensed beings the third alternative (with augmentation and de-augmentation) should be stated and with regard to all other beings all the four alternatives should be stated.

२३. [प्र.] सिद्धा णं भंते ! पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सिद्धा सोवचया, णो सावचया, णो सोवचय–सावचया, निरुवचय–निरवचया।

२३. [प्र.] भगवन् ! क्या सिद्ध भगवान सोपचय हैं, सापचय हैं, सोपचय–सापचय हैं या निरुपचय–निरपचय हैं ?

[उ.] गौतम ! सिद्ध भगवान सोपचय हैं, सापचय नहीं हैं, सोपचय–सापचय भी नहीं हैं, किन्तु निरुपचय–निरपचय हैं।

23. [Q.] What in case of *Siddhas* ?

[Ans.] Gautam ! *Siddhas* are with augmentation (*sopachaya*) and not with de-augmentation (*sapachaya*). They are also not with augmentation and de-augmentation (*sopachaya-sapachaya*) but are without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*).

२४. [प्र.] **जीवा णं भंते ! केवइयं कालं निरुवचय–निरवचया ?**

[उ.] गोयमा ! सव्वद्धं।

२४. [प्र.] भगवन् ! जीव कितने काल तक निरुपचय–निरपचय रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव सर्वकाल तक निरुपचय–निरपचय रहते हैं।

24. [Q.] *Bhante* ! How long do living beings remain without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! living beings remain without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*) for all time.

२५. [प्र. १] **नेरइया णं भंते ! केवइयं कालं सोवचया ?**

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं।

२५. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक कितने काल तक सोपचय रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका के असंख्येय भाग तक नैरयिक सोपचय रहते हैं।

25. [Q. 1] *Bhante* ! How long do infernal beings remain with augmentation (*sopachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings remain with augmentation (*sopachaya*) for a minimum of one *Samaya* and maximum of uncountable fraction of an *Avalika*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] केवइयं कालं सावचया ?

[उ.] एवं चेव।

[प्र. २] भगवन् ! नैरयिक कितने काल तक सापचय रहते हैं ?

[उ.] (गौतम) उसी प्रकार (सोपचय के पूर्वोक्त कालमानानुसार) सापचय का काल जानना चाहिए।

[Q. 2] *Bhante* ! How long do infernal beings remain with de-augmentation (*sapachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! The same (as aforesaid regarding *sopachaya*).

[प्र. ३] केवइयं कालं सोवचय–सावचया ?

[उ.] एवं चेव।

[प्र. ३] और वे सोपचय–सापचय कितने काल तक रहते हैं ?

[उ.] (गौतम) ! सोपचय का जितना काल कहा है, उतना ही सोपचय–सापचय का काल जानना चाहिए।

[Q. 3] *Bhante* ! How long do infernal beings remain with augmentation and de-augmentation (*sopachaya-sapachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! The same (as aforesaid regarding *sopachaya*).

[प्र. ४] केवइयं कालं निरुवचय–निरवचया ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं बारस मुहुत्ता।

[प्र. ४] नैरयिक कितने काल तक निरुपचय–निरपचय रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव जघन्य एक समय और उत्कृष्ट बारह मुहूर्त्त तक निरुपचय–निरपचय रहते हैं।

[Q. 4] *Bhante* ! How long do infernal beings remain without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings remain without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*) for a minimum of one *Samaya* and maximum of twelve *Muhurts*.

२६. एगिंदिया सव्वे सोवचय–सावचया सव्वद्धं।

२६. सभी एकेन्द्रिय जीव सर्वकाल (सर्वदा) सोपचय–सापचय रहते हैं।

26. All one-sensed beings always remain with augmentation and de-augmentation (*sopachaya-sapachaya*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. सेसा सब्वे सोवचया वि, सावचया वि, सोवचय-सावचया वि, निरुवचय-निरवचया वि। जहन्नेणं एगं समयं, उक्कोसेणं आवलियाए असंखेज्जइभागं अवट्ठिएहिं वक्कंतिकालो भाणियव्वो।

२७. शेष सभी जीव सोपचय भी हैं, सापचय भी हैं, सोपचय-सापचय भी हैं और निरुपचय-निरपचय भी हैं। इन चारों का काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आवलिका का असंख्यातवाँ भाग है। अवस्थितों (निरुपचय-निरपचय) में व्युत्क्रान्तिकाल (विरहकाल) के अनुसार कहना चाहिए।

27. All the remaining beings are with augmentation (*sopachaya*), with de-augmentation (*sapachaya*), with augmentation and de-augmentation (*sopachaya-sapachaya*) and without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*). The period they remain in these four conditions is minimum of one *Samaya* and maximum uncountable fraction of an *Avalika*. With regard to the constant state (without augmentation and de-augmentation) it is like the period when there is neither birth nor death (*vyutkranti kaal* or *virah kaal*).

२८. [प्र. १] सिद्धा णं भंते ! केवइयं कालं सोवचया ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं अट्ठ समया।

२८. [प्र. १] भगवन् ! सिद्ध भगवान कितने काल तक सोपचय रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! जघन्य एक समय और उत्कृष्ट आठ समय तक वे सोपचय रहते हैं।

28. [Q. 1] *Bhante* ! How long do *Siddhas* (liberated souls) remain with augmentation (*sopachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! *Siddhas* remain with augmentation (*sopachaya*) for a minimum of one *Samaya* and maximum of eight *Samayas*.

[प्र. २] केवइयं कालं निरुवचय-निरवचया ?

[उ.] जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ पंचमसए : अट्ठमो उद्देसओ समत्तो ॥

[प्र. २] सिद्ध भगवान, निरुपचय-निरपचय कितने काल तक रहते हैं ?

[उ.] (गौतम !) वे जघन्य एक समय और उत्कृष्ट छह मास तक निरुपचय-निरपचय रहते हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है' यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरने लगे।

[Q. 2] *Bhante* ! How long do *Siddhas* (liberated souls) remain without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! *Siddhas* remain without augmentation and de-augmentation (*nirupachaya-nirapachaya*) for a minimum of one *Samaya* and maximum of six months.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : सोपचयादि का तात्पर्य–सोपचय का अर्थ है–वृद्धि–सहित। अर्थात्–पहले के जितने जीव हैं, उनमें नये जीवों की उत्पत्ति होती है, उसे सोपचय कहते हैं। पहले के जीवों में से कई जीवों के मर जाने से संख्या घट जाती है, उसे **सापचय** (हानि–सहित) कहते हैं। उत्पाद (उत्पत्ति) और उद्वर्तन (मरण) द्वारा एक साथ वृद्धि–हानि होती है, उसे **सोपचय–सापचय** (वृद्धि–हानि–सहित) कहते हैं, उत्पाद और उद्वर्तन के अभाव से वृद्धि–हानि न होना (विरहकाल) **'निरुपचय–निरपचय'** कहलाता है। सिद्ध एक समय से आठ समय तक निरन्तर उत्पन्न हो सकते हैं, सिद्धों का विरहकाल जघन्य एक समय से उत्कृष्ट छह मास होता है।

॥ पंचम शतक : अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—*Sopachaya* means with augmentation; in other words new beings are born among the existing ones. When some beings from the existing number die, the total number is reduced. This is called *sapachaya* or with de-augmentation. With births and deaths at the same time there is increase as well as decrease. This called *sopachaya-sapachaya* or with augmentation and de-augmentation. Absence of increase and decrease in numbers due to absence of birth and death is called *nirupachaya-nirapachaya* or without augmentation and de-augmentation. This is also called *vyutkranti kaal* or *virah kaal*. The number of *Siddhas* can increase continuously from one to eight *Samayas* and the minimum and maximum period of their number remaining constant is one *Samaya* and six months.

● END OF THE EIGHTH LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : नवम उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : NINTH LESSON

राजगृह RAJAGRIHA

राजगृह का स्वरूप **DESCRIPTION OF RAJAGRIHA**

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी–

१. उस काल और उस समय में गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीर से इस प्रकार पूछा–

1. During that period of time... and so on up to... Gautam Swami asked Shraman Bhagavan Mahavir—

२. [प्र. १] किमिदं भंते ! 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति ? किं पुढवी 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति ? आऊ 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति ? जाव वणस्सइ ! जहा एयणुद्देसए पंचिंदिय–तिरिक्खजोणियाणं वत्तव्वया तहा भाणियव्वं जाव सचित्त–अचित्त–मीसियाइं दव्वाइं 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति ?

[उ.] गोयमा ! पुढवी वि 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति जाव सचित्त–अचित्त–मीसियाइं दव्वाइं 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति।

२. [प्र. १] भगवन् ! यह 'राजगृह नगर' क्या कहलाता है ? क्या पृथ्वी राजगृह नगर कहलाता है ?, अथवा जल ? यावत् वनस्पति क्या राजगृह नगर कहलाता है ?, जिस प्रकार 'एजन' नामक उद्देशक (पंचम शतक के सप्तम उद्देशक) में पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीवों की (परिग्रह–विषयक) वक्तव्यता कही है, क्या उसी प्रकार यहाँ भी कहनी चाहिए ? (अर्थात्–क्या 'कूट' राजगृह नगर कहलाता है ? शैल राजगृह नगर कहलाता है ? इत्यादि); यावत् क्या सचित्त, अचित्त और मिश्र द्रव्य (मिलकर) राजगृह नगर कहलाता है ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वी भी राजगृह नगर कहलाती है, यावत् सचित्त, अचित्त और मिश्र द्रव्य (सब मिलकर) भी राजगृह नगर कहलाता है।

2. [Q. 1] *Bhante* ! What is it that is called 'Rajagriha City' ? Is this *prithvi* (land) called Rajagriha City ? Or is water... and so on up to... plants that are called Rajagriha City ? Or as has been stated in lesson titled Ejan (fifth chapter seventh lesson) in context of possession by five sensed animals, is it to be repeated like that about Rajagriha City [Is pinnacle (*koot*) called Rajagriha City ? Is flat-top mountain (*shail*) called Rajagriha City ?...]... and so on up to... living, non-living and mixed things (combined together) is called Rajagriha City ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! This *prithvi* (land) is also called Rajagriha City... and so on up to... living, non-living and mixed things (combined together) is also called Rajagriha City.

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! पुढवी जीवा इ य अजीवा इ य 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति; जाव सचित्त-अचित्त-मीसियाइं दव्वाइं जीवा ति य अजीवा ति य 'नगरं रायगिहं' ति पवुच्चति, से तेणट्ठेणं तं चेव।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वी जीव (पिण्ड) है और अजीव-(पिण्ड) भी है, इसलिए यह राजगृह नगर कहलाता है, यावत् सचित्त, अचित्त और मिश्र द्रव्य भी जीव हैं, और अजीव भी हैं, इसलिए ये द्रव्य (मिलकर) राजगृह नगर कहलाते हैं। हे गौतम ! इसी कारण से पृथ्वी आदि को राजगृह नगर कहा जाता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why so ?

[Ans.] Gautam ! This *prithvi* is a living thing (*jiva*) as well as a non-living thing (*ajiva*) (lump of living things as well as non-living things) and therefore it is called Rajagriha City... and so on up to... living, non-living and mixed things are also living things as well as non-living things, therefore they (combined together) are called Rajagriha City. Gautam ! That is why this *prithvi* etc. are called Rajagriha City.

उद्योत और अन्धकार LIGHT AND DARKNESS

३. [प्र. १] से नूणं भंते ! दिया उज्जोए राइं अंधकारे ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव अंधकारे।

३. [प्र. १] हे भगवन् ! क्या दिन में उद्योत और रात्रि में अन्धकार होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! दिन में उद्योत और रात्रि में अन्धकार होता है।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Is there light (*udyot*) during the day and darkness during the night ?

[Ans.] Yes, Gautam ! There is light (*udyot*) during the day and darkness during the night.

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! दिया सुभा पोग्गला, सुभे पोग्गलपरिणामे, राइं असुभा पोग्गला, असुभे पोग्गलपरिणामे, से तेणट्ठेणं० ?

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से दिन में उद्योत और रात्रि में अन्धकार होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! दिन में शुभ पुद्गल होते हैं शुभ पुद्गलों का परिणमन होता है, किन्तु रात्रि में अशुभ पुद्गल होते हैं, अशुभ पुद्गलों का परिणमन होता है। इस कारण से दिन में उद्योत और रात्रि में अन्धकार होता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why so ?

[Ans.] Gautam ! During the day auspicious or bright (*shubh*) particles exist and function, but during the night inauspicious or dark (*ashubh*) particles exist and function. That is why there is light (*udyot*) during the day and darkness during the night.

४. [प्र. १] नेरइयाणं भंते ! किं उज्जोए, अंधकारे ?

[उ.] गोयमा ! नेरइयाणं नो उज्जोए, अंधकारे।

४. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिकों के (निवास-स्थान में) उद्योत होता है, अथवा अन्धकार होता है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीवों के (स्थान में) उद्योत नहीं होता, (किन्तु) अन्धकार होता है।

4. [Q. 1] *Bhante* ! Is there light or darkness in the world of infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! In the world of infernal beings there is no light but darkness.

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! नेरइयाणं असुभा पोग्गला, असुभे पोग्गलपरिणामे, से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से उद्योत नहीं होता, अन्धकार होता है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीवों के अशुभ पुद्गल और अशुभ पुद्गल-परिणाम होते हैं, इस कारण से वहाँ उद्योत नहीं, किन्तु अन्धकार होता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why so ?

[Ans.] Gautam ! In the (world of) infernal beings only inauspicious or dark (*ashubh*) particles exist and function. That is why there is no light (*udyot*) but only darkness there.

५. [प्र. १] असुरकुमाराणं भंते ! किं उज्जाते, अंधकारे ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमाराणं उज्जोए, नो अंधकारे।

५. [प्र. १] भगवन् ! असुरकुमारों के क्या उद्योत होता है, अथवा अन्धकार होता है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारों के उद्योत होता है, अन्धकार नहीं होता।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Is there light or darkness in the world of Asur Kumar gods ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! In the world of Asur Kumar gods there is light and not darkness.

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमाराणं सुभा पोग्गला, सुभे पोग्गलपरिणामे, से तेणट्ठेणं एवं वुच्चति०। एवं जाव थणियाणं।

[प्र. २] भगवन् ! यह किस कारण से कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारों के शुभ पुद्गल या शुभ पुद्गल परिणाम होते हैं; इस कारण से कहा जाता है कि उनके उद्योत होता है, अन्धकार नहीं होता। इसी प्रकार (नागकुमार देवों से लेकर) स्तनितकुमार देवों तक के लिए कहना चाहिए।

[**Q. 2**] *Bhante* ! Why so ?

[**Ans.**] Gautam ! In the (world of) Asur Kumar gods only auspicious or bright (*shubh*) particles exist and function. That is why there is only light (*udyot*) and not darkness there. The same should be repeated (for Naag Kumar gods and so on up to) up to Stanit Kumar gods.

६. पुढविकाइया जाव तेइंदिया जहा नेरइया।

६. जिस प्रकार नैरयिक जीवों के (उद्योत-अन्धकार के) विषय में कथन किया, उसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों से लेकर त्रीन्द्रिय जीवों तक के विषय में कहना चाहिए।

6. As has been stated with regard to infernal beings (about light and darkness) so should be repeated for earth-bodied beings... and so on up to... three-sensed beings.

७. [प्र. १] चउरिंदियाणं भंते ! किं उज्जोए, अंधकारे ?

[उ.] गोयमा ! उज्जोए वि, अंधकारे वि।

७. [प्र. १] भगवन् ! चतुरिन्द्रिय जीवों के क्या उद्योत है अथवा अन्धकार है ?

[उ.] गौतम ! चतुरिन्द्रिय जीवों के उद्योत भी है, अन्धकार भी है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Is there light or darkness in the world of four-sensed beings ?

[**Ans.**] Gautam ! In the world of four-sensed beings there is light as well as darkness.

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! चतुरिंदियाणं सुभाऽसुभा पोग्गला, सुभाऽसुभे पोग्गलपरिणामे, से तेणट्ठेणं०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से चतुरिन्द्रिय जीवों के उद्योत भी है, अन्धकार भी है ?

[उ.] गौतम ! चतुरिन्द्रिय जीवों के शुभ और अशुभ (दोनों प्रकार के) पुद्गल होते हैं, तथा शुभ और अशुभ पुद्गल-परिणाम होते हैं, इसलिए उनके उद्योत भी हैं और अन्धकार भी हैं, ऐसा कहा जाता है।

[Q. 2] Bhante ! Why so ?

[Ans.] Gautam ! In (the world of) four-sensed beings auspicious or bright (*shubh*) as well as inauspicious or dark (*ashubh*) particles exist and function. That is why there is light (*udyot*) as well as darkness there.

८. एवं जाव मणुस्साणं।

९. वाणमंतर-जोतिस-वेमाणिया जहा असुरकुमारा।

८. इसी प्रकार (तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय और) यावत् मनुष्यों तक के लिए कहना चाहिए।

९. जिस प्रकार असुरकुमारों के विषय में कहा, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के विषय में भी कहना चाहिए।

8. The same should be repeated (for five sensed animals and so on) up to human beings.

9. As has been stated with regard to Asur Kumar gods (about light and darkness) so also should be repeated for interstitial gods (*Vanavyantar Devs*), stellar gods (*Jyotishk Devs*) and celestial-vehicular gods (*Vaimanik Devas*).

विवेचन : उद्योत और अन्धकार के कारण-दिन में सूर्य की किरणों के सम्पर्क के कारण पुद्गल का परिणमन परिणाम शुभ होता है, किन्तु रात्रि में सूर्य-किरण का सम्पर्क न होने से पुद्गलों का परिणमन अशुभ होता है।

नरकों में सूर्य किरणों का प्रकाश नहीं है, इसलिए वहाँ अन्धकार है। पृथ्वीकायिक से लेकर त्रीन्द्रिय तक के जीव, जो मनुष्यक्षेत्र में हैं, और उन्हें सूर्य-किरणों आदि का सम्पर्क भी है, फिर भी उनमें अन्धकार कहा है, इसका कारण यह है कि उनके चक्षुरिन्द्रिय न होने से दृश्य वस्तु दिखाई नहीं देती, फलतः शुभ पुद्गलों का कार्य उनमें नहीं होता, उस अपेक्षा से उनमें अशुभ पुद्गल हैं; अतः उनमें अन्धकार ही है। चतुरिन्द्रिय जीवों से लेकर मनुष्य तक में शुभाशुभ दोनों पुद्गल होते हैं, क्योंकि उनके आँख होने पर भी जब रवि-किरणादि का सद्भाव होता है, तब दृश्य पदार्थों के ज्ञान में निमित्त होने से उनमें शुभ पुद्गल होते हैं, किन्तु रवि-किरणादि का सम्पर्क नहीं होता, तब पदार्थज्ञान न होने से उनमें अशुभ पुद्गल होते हैं। भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के रहने के (स्थान) आदि की भास्वरता के कारण वहाँ निरन्तर शुभ पुद्गल हैं, अतएव अन्धकार नहीं उद्योत है।

***Elaboration*—Cause of light and darkness**—The consequence (*parinaam*) of functioning (*parinaman*) of matter particles is auspicious due to contact with sun rays. However during the night it is inauspicious due to lack of contact with sun rays.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

As infernal worlds are deprived of the glow of sun rays, darkness prevails there. The living beings, from earth-bodied beings to three-sensed beings, dwelling in the world of humans and in physical contact with sun rays, are said to be in darkness. This is because of the fact that for the absence of the sense organ of seeing (*chakshurindriya*) they are devoid of vision and as a consequence there is no functioning of auspicious particles in them. In this context they have functioning of only inauspicious particles and as such they are in darkness only. Four-sensed beings... and so on up to... human beings have both auspicious and inauspicious particles. This is because they are endowed with the sense organ of seeing (eyes) and have vision due to functioning of auspicious particles when in contact with sun rays. There is absence of vision in them due to functioning of inauspicious particles when not in contact with sun rays. In abode dwelling gods (*Bhavan-pati gods*), interstitial, stellar and celestial-vehicular gods there is continuous functioning of auspicious particles because their realms are ever radiant. Thus they always have light and never darkness.

नैरयिकादि में समय ज्ञान AWARENESS OF TIME

१०. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं तत्थ गयाणं एवं पण्णायति, तं जहा–समया ति वा आवलिया ति वा जाव ओसप्पिणी ति वा उस्सप्पिणी ति वा ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

१०. [प्र. १] भगवन् ! क्या नरकक्षेत्र में रहे हुए नैरयिकों को इस प्रकार का प्रज्ञान (विशिष्ट ज्ञान) होता है, जैसे कि–"यह समय है, आवलिका है, यावत् यह उत्सर्पिणी काल या अवसर्पिणी काल है ?"

[उ.] गौतम ! वहाँ रहे हुए नैरयिक जीवों को समयादि का प्रज्ञान नहीं होता।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Do the infernal beings living in hells have the specific awareness (*prajnana*) that this is *Samaya*, this is *Avalika* ... and so on up to... regressive cycle of time and progressive cycle of time ?

[Ans.] Gautam ! No, they do not have that awareness of time.

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव समया ति वा आवलिया ति वा जाव ओसप्पिणी ति वा उस्सप्पिणी ति वा ?

[उ.] गोयमा ! इहं तेसिं माणं, इहं तेसिं पमाणं, इहं तेसिं एवं पण्णायति, तं जहा–समया ति वा जाव उस्सप्पिणी ति वा। से तेणट्ठेणं जाव नो एवं पण्णायति, तं जहा–समया ति वा जाव उस्सप्पिणी ति वा।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से नरक में रहने वाले नैरयिकों को समय, आवलिका, यावत् उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी काल का प्रज्ञान नहीं होता ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! यहाँ (मनुष्यलोक में) समयादि का मान है, यहाँ उनका प्रमाण है, इसलिए यहाँ (समयादि का) ऐसा प्रज्ञापन होता है कि यह समय है, यावत् यह उत्सर्पिणीकाल है, (किन्तु नरक में न तो समयादि का मान है, न प्रमाण है और न ही प्रज्ञान है।) इस कारण से नरकस्थित नैरयिकों को इस प्रकार से समय, आवलिका यावत् उत्सर्पिणी-अवसर्पिणीकाल का प्रज्ञान नहीं होता।

[Q. 2] *Bhante* ! Why the infernal beings living in hells do not have the awareness (*prajnana*) of *Samaya*, *Avalika* ... and so on up to... regressive cycle of time and progressive cycle of time ?

[Ans.] Gautam ! Here (in the world of humans) there are comparative measures (*maan* and *pramaan*) of units like *Samaya* and therefore there is the awareness that this is *Samaya* ... and so on up to... progressive cycle of time; (but in the infernal world there is neither comparative measure nor evidence or awareness of units like *Samaya*) that is why the infernal beings living in hells do not have the awareness (*prajnana*) of such units as *Samaya*, *Avalika* ... and so on up to... regressive cycle of time and progressive cycle of time.

११. एवं जाव पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं।

११. जिस प्रकार नरकस्थित नैरयिकों के (समयादिप्रज्ञान के) विषय में कहा गया है; उसी प्रकार (भवनपति देवों, स्थावर जीवों, तीन विकलेन्द्रियों से लेकर) यावत् पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिक जीवों तक के लिए कहना चाहिए।

11. As has been stated (about awareness of *Samaya* etc.) with regard to infernal beings dwelling in infernal abodes so should be repeated with regard to beings (from *Bhavan-pati Devs*, immobile beings, two to four-sensed beings... and so on) up to... five sensed animals.

१२. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! मणुस्साणं इहगयाणं एवं पण्णायति, तं जहा—समया ति वा जाव उस्सप्पिणी ति वा ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! इहं तेसिं माणं, इहं तेसिं पमाणं, इहं चेव तेसिं एवं पण्णायति, तं जहा—समया ति वा जाव उस्सप्पिणी ति वा। से तेणट्ठेणं०।

१२. [प्र. १] भगवन् ! क्या यहाँ (मनुष्यलोक में) रहे हुए मनुष्यों को इस प्रकार का प्रज्ञान होता है, कि (यह) समय (है), यावत् (यह) उत्सर्पिणीकाल (है) ?

[उ.] हाँ, गौतम ! होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से (ऐसा कहा जाता है) ?

[उ.] गौतम ! यहाँ (मनुष्यलोक में) उनका (समयादि का) मान है, यहाँ उनका प्रमाण है, इसलिए यहाँ उनको उनका (समयादि का) इस प्रकार से प्रज्ञान होता है, यथा–'यह समय है, या यावत् यह उत्सर्पिणी काल है। इस कारण से यहाँ रहे हुए मनुष्यों को समयादि का प्रज्ञान होता है।'

12. [Q. 1] *Bhante* ! Do the human beings living here (in the world of humans) have the specific awareness (*prajnana*) that this is *Samaya* ... and so on up to... progressive cycle of time ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They have that awareness.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Here (in the world of humans) there are comparative measures (*maan* and *pramaan*) and therefore there is the awareness that this is *Samaya*... and so on up to... progressive cycle of time; that is why the human beings living here have the awareness (*prajnana*) of such units like *Samaya*.

१३. वाणमंतर–जोइस–वेमाणियाणं जहा नेरइयाणं।

१३. जिस प्रकार नैरयिक जीवों के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क एवं वैमानिक देवों के (समयादिप्रज्ञान के) विषय में कहना चाहिए।

13. As has been stated (about awareness of *Samaya* etc.) with regard to infernal beings so should be repeated with regard to *Vanavyantar*, *Jyotishk* and *Vaimanik Devs*.

विवेचन : जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड, अर्धपुष्कर द्वीप, यह अढाई द्वीप समय क्षेत्र (मनुष्यलोक) है। यहाँ सूर्य–चन्द्र भ्रमण करते हैं, इसलिए दिन–रात होते हैं। मनुष्यलोक में स्थित मनुष्यों के अतिरिक्त मनुष्यलोक के बाहर किसी भी जीव को समय, आवलिका आदि का ज्ञान नहीं होता; क्योंकि वहाँ सूर्य–चन्द्र आदि स्थिर होने से समयादि का मान–प्रमाण नहीं होता है। सूर्य की गति नरकादि में नहीं है। यद्यपि मनुष्यलोक में कितने ही तिर्यंच–पंचेन्द्रिय, भवनपति, वाणव्यन्तर और ज्योतिष्क देव हैं, तथापि वे स्वल्प हैं। मनुष्यलोक के बाहर वे बहुत हैं। अतः उन बहुतों की अपेक्षा से यह कहा गया है कि पंचेन्द्रियतिर्यंच, भवनपति, वाणव्यन्तर एवं ज्योतिष्कदेव समय आदि कालविभाग को नहीं जानते।

मान और प्रमाण का अर्थ–समय, आवलिका आदि काल के विभाग हैं। इनमें अपेक्षाकृत सूक्ष्म काल 'मान' कहलाता है और अपेक्षाकृत प्रकृष्ट काल 'प्रमाण'। जैसे–'मुहूर्त्त' मान है, मुहूर्त्त की अपेक्षा सूक्ष्म होने से 'लव' प्रमाण है। इस प्रकार अपेक्षा भेद से मान, प्रमाण जानना चाहिए। *(वृत्ति पत्रांक २४७)*

Elaboration—Jambudveep, Dhatakikhand and Ardhapushkar Dveep (half Pushkar continent), these two and a half continents (Adhaidveep) comprise area of time (*samaya kshetra*) of the human world. Day and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

night occur here because there is movement of the sun and the moon in this area. No living being other than the humans of the human world and living outside this world has awareness of units of time including *Samaya* and *Avalika*. This is because beyond the human world the sun and the moon are stationary and as a consequence there is neither measure nor evidence of units of time. In the infernal world sun does not exist. Although there are numerous five-sensed animals, abode dwelling, interstitial and stellar gods in the human world, their number is minimal as compared to that outside the human world. As such, the statement that five-sensed animals, abode dwelling, interstitial and stellar gods have no awareness of units of time is with regard to that larger number outside the human world.

Maan and Pramaan—*Samaya, Avalika* etc. are units of time. Of these comparatively smaller units are classified as *maan* and larger units are classified as *pramaan*. For example when *Muhurt* comes under the class maan, *Lava* being smaller comes under the class maan. Thus *maan* and *pramaan* should be taken as relative terms. *(Vritti leaf 247)*

पार्श्वापत्य स्थविरों द्वारा पंचमहाव्रत धर्म स्वीकार

ACCEPTANCE OF FIVE GREAT VOWS BY PARSHVAPATYA ASCETICS

१४. [प्र. १] तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जा थेरा भगवंतो जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा एवं वयासी—से नूणं भंते ! असंखेज्जे लोए, अणंता राइंदिया उप्पज्जिसु वा उप्पज्जंति वा उप्पज्जिस्संति वा ?, विगच्छिंसु वा विगच्छंति वा विगच्छिस्संति वा ?, परित्ता राइंदिया उप्पज्जिंसु वा उपज्जंति वा उप्पज्जिस्संति वा ? विगच्छिंसु वा ३ ?

[उ.] हंता, अज्जो ! असंखेज्जे लोए, अणंता राइंदिया० तं चेव।

१४. [प्र. १] उस काल और उस समय में पार्श्वापत्य (पार्श्वनाथ भगवान के सन्तानीय शिष्य) स्थविर भगवन्त, जहाँ श्रमण भगवान महावीर थे, वहाँ आए। वहाँ आकर वे श्रमण भगवान महावीर से यथायोग्य स्थान पर खड़े रहकर इस प्रकार पूछने लगे—भगवन् ! असंख्य लोक में क्या अनन्त रात्रि-दिवस उत्पन्न हुए हैं, उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होंगे; तथा नष्ट हुए हैं, नष्ट होते हैं और नष्ट होंगे ? अथवा परिमित (नियत परिमाण वाले) रात्रि-दिवस उत्पन्न हुए हैं, उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होंगे; तथा नष्ट हुए हैं, नष्ट होते हैं और नष्ट होंगे ?

[उ.] हाँ, आर्यो ! असंख्य लोक में अनन्त रात्रि-दिवस उत्पन्न हुए हैं, उत्पन्न होते हैं, यावत् उपर्युक्त रूप सम्पूर्ण पाठ कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

14. [Q. 1] During that period of time *Parshvapatya* (followers of Bhagavan Parshva Naath) senior ascetics came to Shraman Bhagavan Mahavir. After arriving, they stood keeping their proper distance from Shraman Bhagavan Mahavir and asked—*Bhante* ! In this occupied space (*Lok*) with innumerable space-points has there been, is there and will there be occurrence of dawning and fading of infinite days and nights ? Or has there been, is there and will there be occurrence of dawning and fading of limited number of days and nights ?

[Ans.] Yes, noble ones ! In this occupied space (*Lok*) with innumerable space-points there has been, there is... and so on up to... occurrence of dawning and fading of infinite days and nights (repeat the whole statement).

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव विगच्छिस्संति वा ?

[उ.] से नूणं भे अज्जो ! पासेणं अरहया पुरिसादाणीएणं "सासए लोए बुइए अणादीए अणवदग्गे परित्ते परिवुडे; हेट्ठा वित्थिण्णे, मज्झे संखित्ते, उप्पिं विसाले, अहे पलियंकसंठिए, मज्झे वरवइरविग्गहिए, उप्पिं उद्धमुइंगाकारसंठिए। तंसि च णं सासयंसि लोगंसि अणादियंसि अणवदग्गंसि परित्तंसि परिवुडंसि हेट्ठा वित्थिण्णंसि, मज्झे संखित्तंसि, उप्पिं विसालंसि, अहे पलियंकसंठियंसि, मज्झे वरवइरविग्गहियंसि, उप्पि उद्धमुइंगाकारसंठियंसि अणंता जीवघणा उप्पज्जित्ता उप्पज्जित्ता निलीयंति, परित्ता जीवघणा उप्पज्जित्ता उप्पज्जित्ता निलीयंति। से भूए उप्पन्ने विगए परिणए अजीवेहिं लोक्कइ, पलोक्कइ। जे लोक्कइ से लोए ?"

[उ.] 'हंता, भगवं !' से तेणट्ठेणं अज्जो ! एवं वुच्चति असंखेज्जे तं चेव।

[३] तप्पभिइ च णं ते पासावच्चे थेरा भगवंतो समणं भगवं महावीरं पच्चभिजाणंति 'सव्वण्णुं सव्वदरिसिं'।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से असंख्य लोक में अनन्त रात्रि-दिवस उत्पन्न यावत् नष्ट होंगे ?

[उ.] हे आर्यो ! यह निश्चित है कि आपके (गुरुस्वरूप) पुरुषादानीय अर्हत् पार्श्वनाथ ने लोक को शाश्वत कहा है। इसी प्रकार लोक को अनादि, अनवदग्र (अनन्त), परिमित, अलोक से परिवृत (घिरा हुआ), नीचे विस्तीर्ण, मध्य में संक्षिप्त, और ऊपर विशाल तथा नीचे पल्यंकाकार (ऊपर सँकड़ा, नीचे विस्तृत पद्मासन में स्थित) बीच में उत्तम वज्राकार (मध्य में पतला) और ऊपर ऊर्ध्वमृदंगाकार (सीधे मृदंग पर उल्टा मृदंग की आकृति) कहा है। उस प्रकार के शाश्वत, अनादि, अनन्त, परित्त, परिवृत्त, नीचे विस्तीर्ण, मध्य में संक्षिप्त, ऊपर विशाल, तथा नीचे पल्यंकाकार, मध्य में उत्तमवज्राकार और ऊपर ऊर्ध्वमृदंगाकारसंस्थित लोक में अनन्त जीवघन (समूह) हो-होकर नष्ट होते हैं और परित्त (नियम = असंख्य) जीवघन भी उत्पन्न हो-होकर विनष्ट होते हैं। इसीलिए ही तो यह लोक भूत हैं, उत्पन्न है, विगत हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिणत है। यह, अजीवों (पुद्गलादि) से लोकित-निश्चित होता है, तथा यह (भूत आदि धर्म वाला लोक) विशेष रूप से लोकित-निश्चित होता है। 'जो (प्रमाण से) लोकित-(ज्ञात) होता है, वही लोक है न ?'

(पार्श्वापत्य स्थविर-) हाँ, भगवन् ! (वही लोक है।) इसी कारण से, हे आर्यो ! ऐसा कहा जाता है कि असंख्य लोक में (अनन्त रात्रि-दिवस... यावत् परिमित रात्रि-दिवस यावत् विनष्ट होंगे।) इत्यादि सब पूर्ववत् कहना चाहिए।

[३] तब से वे पार्श्वापत्य स्थविर भगवन्त श्रमण भगवान महावीर स्वामी को सर्वज्ञ और सर्वदर्शी जानने लगे।

[Q. 2] Bhante ! Why is it so that... and so on up to... fading of infinite *days and nights ?*

[Ans.] O *noble ones ! It is a fact that your (preceptor)* Purushadaniya (most respected among men) Arhat Parshva Naath has stated this *universe (Lok) to be eternal. He has further stated that this universe is* without a beginning (*anaadi*) and without an end (*anant*), limited (*parimit*), surrounded (*parivrit*) by unoccupied space (*Alok*), extended at the base, slender in the middle and vast at the top. It is shaped like *paryank* (extended like a bed) at the bottom, *vajra* (slender like thunderbolt) in the middle and *urdhvamridang* (upturned drum) at the top. In such universe without a beginning and without an end, limited, surrounded, extended at the base, slender in the middle and vast at the top, shaped like *paryank* at the bottom, *vajra* in the middle and *urdhvamridang* at the top, infinite clusters of living beings are born and destroyed as also limited number of clusters of living beings are born and destroyed. That is why this universe (*Lok*) is tangible, born, lost and transformed. This (universe with aforesaid attributes) is defined and specially defined by (various states of) the non-living (matter etc.). Is it not that because it is so defined (by evident reality) it is known as the universe (*Lok*) ?

(The ascetics—) Yes, *Bhante* ! It is so. (*Bhagavan*—) That is why, O noble ones ! It is said that in this occupied space (Lok) with innumerable space-points there has been, there is... and so on up to... occurrence of dawning and fading of infinite days and nights (repeat the whole statement).

[3] Since that moment those senior ascetics (followers of Bhagavan Parshva Naath) accepted Shraman Bhagavan Mahavir to be all knowing and all seeing (omniscient).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. [१] तए णं ते थेरा भगवंतो समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जमाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सप्पडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।

[२] 'अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंध करेह।'

१५. [१] इसके पश्चात् उन (पार्श्वापत्य) स्थविर भगवन्तों ने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमस्कार किया। वन्दन–नमस्कार करके इस प्रकार बोले–'भगवन् ! चातुर्याम धर्म के बदले हम आपके पास प्रतिक्रमण सहित पंचमहाव्रत रूप धर्म को स्वीकार करके विचरण करना चाहते हैं।'

[२] भगवन्–'देवानुप्रिय ! जिस प्रकार आपको सुख हो, वैसा करो, किन्तु प्रतिबन्ध (शुभ कार्य में ढील) मत करो।'

15. [1] Then those senior ascetics (followers of Bhagavan Parshva Naath) paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir. Doing that they submitted—*Bhante* ! Instead of our four limbed religion (*Chaturyam dharma*) we want to embrace the religion of five great vows (*Panch Mahavrat*) inclusive of *Pratikraman* (critical review) under your guidance, and move about.

[2] Bhagavan—"Beloved of gods ! Do as you please and avoid languor when doing a good auspicious deed."

१६. तए णं ते पासावच्चिज्जा थेरा भगवंतो जाव चरिमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं सिद्धा जाव सव्वदुक्खप्पहीणा, अत्थेगइया देवा देवलोगेसु उववन्ना।

१६. इसके पश्चात् वे पार्श्वापत्य स्थविर भगवन्त... यावत् अन्तिम उच्छ्वास–निःश्वास के साथ सिद्ध हुए यावत् सर्वदुःखों से प्रहीण (मुक्त) हुए और (उनमें से) कई (स्थविर) देवलोकों में देवरूप में उत्पन्न हुए।

16. In due course some of those senior ascetics (followers of Bhagavan Parshva Naath)... and so on up to... breathed their last to become *Siddhas*... and so on up to... terminated all misery. And many of them (ascetics) were born as gods in divine realms.

विवेचन : पार्श्वापत्य स्थविरों के प्रश्नों का आशय–(१) प्रथम प्रश्न का आशय यह है कि जो लोक असंख्यात प्रदेश वाला है, उसमें अनन्त रात्रि–दिवस (काल), कैसे हो या रह सकते हैं ? (२) दूसरे प्रश्न का आशय यह है कि जब रात्रि–दिवस (काल) अनन्त हैं, तो परित्त कैसे हो सकते हैं ?

समाधान–उपर्युक्त दोनों प्रश्नों का समाधान इस प्रकार है–जगत् में जीव दो प्रकार के हैं, **साधारण शरीरी**–एक शरीर में अनन्त जीव, **प्रत्येक शरीरी**–एक शरीर में एक जीव। साधारण शरीरी की अवस्था में एक शरीर में अनन्त जीव उत्पन्न होते हैं–मरते हैं। उनकी अपेक्षा से अनन्त रात–दिन उत्पन्न होते हैं और बीत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाते हैं। प्रत्येक शरीरी की अपेक्षा से परिमित रात–दिन उत्पन्न होते हैं और बीत जाते हैं। इस प्रकार उक्त दोनों कथन परस्पर विरोधी नहीं, अपितु सापेक्ष हैं।

असंख्येय प्रदेश वाले लोक में अनन्त रात–दिन तथा अनन्त जीवों का होना उक्त अपेक्षा से सम्भव है।

साधारण शरीरी अनन्त पर्याय का समूह रूप होने से तथा असंख्येय प्रदेशों का पिण्ड रूप होने से 'जीव घन' कहलाते हैं, प्रत्येक शरीर वाले भूत–भविष्य काल की संतति की अपेक्षा रहित होने से पूर्वोक्त रूप से **'परित्त जीव घन'** कहलाते हैं।

चूँकि अनन्त और परित्त जीवों के सम्बन्ध से रात्रि–दिवसरूप कालविशेष भी अनन्त और परित्त कहलाता है, इसलिए अनन्त जीवरूप लोक के सम्बन्ध से रात्रि दिवस रूप कालविशेष भी अनन्त हो जाता है और परित्त जीवरूप लोक के सम्बन्ध से रात्रि–दिवस रूप कालविशेष भी परित्त हो जाता है। अतः इन दोनों में परस्पर विरोध नहीं है।

चातुर्याम एवं सप्रतिक्रमण पंचमहाव्रत धर्म–सर्वथा प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान और बहिद्धादान का त्याग **चातुर्याम धर्म** है, और सर्वथा प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और परिग्रह से विरमण **पंचमहाव्रत धर्म** है। बहिद्धादान में मैथुन और परिग्रह दोनों का समावेश हो जाता है। भरत और ऐरवत क्षेत्र के २४ तीर्थंकरों में से प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरों के सिवाय बीच के २२ तीर्थंकरों के शासन में तथा महाविदेह क्षेत्र में चातुर्याम प्रतिक्रमणरहित (कारण होने पर प्रतिक्रमण) धर्म प्रवृत्त होता है, किन्तु प्रथम और अन्तिम तीर्थंकरों के शासन में सप्रतिक्रमण पंचमहाव्रत धर्म प्रवृत्त होता है। *(वृत्ति पत्रांक २४४)*

Elaboration—The questions—(1) The first question by followers of Bhagavan Parshva Naath means that in the universe having innumerable space-points how can infinite days and nights (time) exist ? (2) The second question means that how can the number of days and nights be infinite and limited at the same time ?

The explanation of the answers to the aforesaid questions is as follows—In this world there are two categories of living beings. (1) *Sadharan Shariri* (clustered life forms) having infinite souls or beings in a single body. (2) *Pratyek Shariri* (individual life forms) having one soul in one body. In the clustered state infinite beings are born and die within one body. With reference to these, infinite days dawn and pass away. With reference to individual life forms only limited number of days dawn and pass away. Thus the aforesaid two statements are not contradictory but relative.

Existence of infinite days-nights and infinite souls in the universe constituted of only innumerable space-points is not impossible in aforesaid context.

As the *Sadharan Shariri* beings are clusters of infinite modes and lumps of innumerable ultimate particles they are called *jiva-ghan*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(clustered life forms). As the *Pratyek Shariri* beings are free of the infinite modes of the past and future they are called *paritta jiva-ghan* (limited group of souls).

The number of units of time expressed as day-night follows the pattern of infinite and limited with reference to infinite and limited number of beings. Thus with reference to universe with infinite beings the day-night units of time become infinite and with reference to universe with limited beings the day-night units of time become limited. Therefore there is no contradiction in the two statements.

Religions with four limbs and five great vows—Complete abstention from *praanatipaat* (killing), *mrishavaad* (falsity), *adattadaan* (taking without being given; stealing) and *bahiddhadaan* (material involvements including libido and possessions) is *Chaturyam dharma* (four limbed religion). Complete abstention from *praanatipaat* (killing), *mrishavaad* (falsity), *adattadaan* (taking without being given; stealing) *maithun* (libido) and *parigrah* (possessions) is *Panch Mahavrat dharma* (religion of five great vows). *Bahiddhadaan* covers both libido and possessions. *Chaturyam dharma* without *Pratikraman* (done only if and when needed) prevails during the periods of influence of twenty two *Tirthankars* each of Bharat and Airavat areas, leaving aside the first and the last ones. And during the periods of influence of the first and the last *Tirthankars* religion of five great vows with *Pratikraman* (critical review) prevails. *(Vritti leaf 244)*

१७. [प्र.] कइविहा णं भंते ! देवलोगा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहा देवलोगा पण्णत्ता, तं जहा–भवणवासी–वाणमंतर–जोइसिय–वेमाणिय भेएणं। भवणवासी दसविहा, वाणमंतरा अट्ठविहा, जोइसिया पंचविहा, वेमाणिया दुविहा।

१७. [प्र.] भगवन् ! देवगण कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! देवगण (देव निकाय) चार प्रकार के हैं, यथा–भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक। भवनवासी दस प्रकार के हैं। वाणव्यन्तर आठ प्रकार के हैं, ज्योतिष्क पांच प्रकार के हैं और वैमानिक दो प्रकार के हैं।

17. [Q.] *Bhante* ! How many types of *Dev-gan* (gods or divine realms) are there ?

[Ans.] Gautam ! There are four types of *Dev-gan* (gods or divine realms)—*Bhavan-vaasi* (abode dwelling), *Vaanavyantar* (interstitial), *Jyotishk* (stellar) and *Vaimanik* (celestial-vehicular). *Bhavan-vaasi*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(abode dwelling) are of ten kinds, *Vaanavyantar* (interstitial) are of eight kinds, *Jyotishk* (stellar) are of five kinds and *Vaimanik* (celestial-vehicular) are of two kinds.

उपसंहार रूप संग्रह गाथा CONCLUSIVE COLLATIVE VERSE

१८. किमियं रायगिहं ति य, उज्जोए अंधकार–समए य।
पासंतिवासि–पुच्छा, राइंदिय देवलोगा य॥

॥ पंचमसए : नवमो उद्देसओ समत्तो ॥

१८. [गाथार्थ–] यह राजगृह नगर क्या है ? दिन में उद्योत और रात्रि में अन्धकार क्यों होता है ? समय आदि काल का ज्ञान किन जीवों को होता है, किनको नहीं ? रात्रि–दिवस के विषय में पार्श्वजिनशिष्यों के प्रश्न और देवलोक विषयक प्रश्न; इतने विषय इस नौवें उद्देशक में कहे गए हैं।

॥ पंचम शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

18. What is this Rajagriha city ? Why there is light during the day and darkness during the night ? Which of the beings have awareness of time and which do not ? Questions about day and night by followers of Bhagavan Parshva Naath and question about divine realms. All these topics are included in this ninth lesson.

● **END OF THE NINTH LESSON OF THE FIFTH CHAPTER** ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचम शतक : दशम उद्देशक
FIFTH SHATAK (Chapter Five) : TENTH LESSON

चम्पा-चन्द्रमा CHAMPA-CHANDRAMA (THE MOON IN CHAMPA)

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी, जहा पढिमिल्लो उद्देसओ तहा णेयव्वो एसो वि, णवरं चंदिमा भाणियव्वा।

॥ पंचमसए : दसमो उद्देसओ समत्तो ॥

१. उस काल और उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी। जैसे (पंचम शतक का) प्रथम उद्देशक कहा है, उसी प्रकार यह उद्देशक भी कहना चाहिए। विशेषता यह है कि यहाँ 'चन्द्रमा' कहना चाहिए।

1. During that period of time there was a city named Champa. As has been stated in the first lesson (of the fifth chapter) so should be repeated here (verbatim). Only difference being the use of the word *'Chandrama'*.

विवेचन : पंचम शतक के प्रथम उद्देशक में वर्णित सूर्य के उदय-अस्त सम्बन्धी वर्णन की भाँति यहाँ चन्द्रमा का उदय अस्त वर्णन कहना चाहिए।

॥ पंचम शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ पंचम शतक सम्पूर्ण ॥

Elaboration—Here the description of ascent and descent of the moon should be stated like the description of dawning and setting of the sun mentioned in the first lesson of the fifth chapter.

● END OF THE TENTH LESSON OF THE FIFTH CHAPTER ●

● END OF THE FIFTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : प्रथम उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : FIRST LESSON

वेदना VEDANA (PAIN)

प्रथम उद्देशक में महावेदना और महानिर्जरा का विषय विभिन्न उदाहरणों से स्पष्ट किया गया है।

This first lesson contains explanation about extensive pain (*mahavedana*) and extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*) using various examples.

संग्रहणी गाथा COLLATIVE VERSE

१. वेयण १ आहार २ महस्सवे य ३ सपदेस ४ तमुयाए ५ भविए ६।
साली ७ पुढवी ८ कम्मअन्नउत्थि ९–१० दस छट्ठगम्मि सए॥१॥

१. (१) वेदना, (२) आहार, (३) महास्रव, (४) सप्रदेश, (५) तमस्काय, (६) भव्य, (७) शाली, (८) पृथ्वी, (९) कर्म, और (१०) अन्ययूथिक–वक्तव्यता; इस प्रकार छठे शतक में ये दस उद्देशक हैं।

1. In the sixth chapter there are ten lessons as follows—(1) *Vedana* (Pain), (2) *Ahaar* (Intake), (3) *Mahasrava* (Extensive Influx), (4) *Sapradesh* (With Sections), (5) *Tamaskaaya* (Agglomerative Entity of Darkness), (6) *Bhavya* (Worthy to be Born), (7) *Shaali* (Paddy), (8) *Prithvi* (Hells), (9) *Karma*, and (10) *Anyayuthik* (Heretics).

वेदना एवं निर्जरा के सम्बन्ध में दृष्टान्त EXAMPLES OF PAIN AND SHEDDING

२. [प्र.] से नूणं भंते ! जे महावेयणे से महानिज्जरे ? जे महानिज्जरे से महावेयणे ? महावेयणस्स य अप्पवेयणस्स य से सेए जे पसत्थनिज्जराए ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जे महावेयणे एवं चेव।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या यह निश्चित है कि जो महावेदना वाला है, वह महानिर्जरा वाला है और जो महानिर्जरा वाला है, वह महावेदना वाला है ? तथा क्या महावेदना वाला और अल्पवेदना वाला, इन दोनों में वही जीव श्रेष्ठ है जो प्रशस्तनिर्जरा वाला है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जैसा ऊपर कहा है, वैसा ही है।

2. [Q.] *Bhante* ! Is it for sure that one with extensive pain (*mahavedana*) is also with extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*) and one with extensive shedding of *karmas* is also with extensive pain ? And among the two, the one with extensive pain and the one with little pain, is the soul that is with extensive shedding of *karmas* superior ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is as you have said.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र. १] छट्ठी–सत्तमासु णं भंते ! पुढवीसु नेरइया महावेयणा ?

[उ.] हंता, महावेयणा।

३. [प्र. १] भगवन् ! क्या छठी और सातवीं पृथ्वी (नरक) के नैरयिक महावेदना वाले हैं ?

[उ.] हाँ गौतम ! वे महावेदना वाले हैं।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Are the infernal beings (*nairayik*) of the sixth and the seventh *prithvi* (hell) with extensive pain ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They are with extensive pain.

[प्र. २] ते णं भंते ! समणेहिंतो निग्गंथेहिंतो महानिज्जरतरा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] भगवन् ! तो क्या वे (छठी–सातवीं पृथ्वी के नैरयिक) श्रमण–निर्ग्रन्थों की अपेक्षा भी महानिर्जरा वाले हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। (अर्थात्–श्रमण–निर्ग्रन्थों की अपेक्षा महानिर्जरा वाले नहीं हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Does this mean that they (infernal beings of the sixth and seventh hell) are with extensive shedding of *karmas* even as compared with *shraman nirgranths* (ascetics) ?

[Ans.] No, Gautam ! That is not correct (they are not with greater shedding of *karmas* as compared with ascetics).

४. [प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जे महावेयणे जाव पसत्थनिज्जराए ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए दुवे वत्थे सिया, एगे वत्थे कद्दमरागरत्ते, एगे वत्थे खंजणरागरत्ते। एतेसि णं गोयमा ! दोण्हं वत्थाणं कतरे वत्थे दुद्धोयतराए चेव, दुवामतराए चेव, दुपरिकम्मतराए चेव ? कयरे वा वत्थे सुद्धोयतराए चेव, सुवामतराए चेव, सुपरिकम्मतराए चेव, जे वा से वत्थे कद्दमरागरत्ते ? जे वा से वत्थे खंजणरागरत्ते ?

[प्र.] भगवं ! तत्थ णं जे से वत्थे कद्दमरागरत्ते से णं वत्थे दुद्धोयतराए चेव दुवामतराए चेव दुप्परिकम्मतराए चेव।

[उ.] एवामेव गोयमा ! नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं चिक्कणीकयाइं सिलिट्ठीकयाइं खिलीभूयाइं भवंति; संपगाढं पि य णं ते वेयणं वेएमाणा नो महानिज्जरा, णो महापज्जवसाणा भवंति।

से जहा वा केइ पुरिसे अहिगरणीं आउडेमाणे महया महया सद्देणं महया महया घोसेणं महया महया परंपराघाएणं नो संचाएति तीसे अहिगरणीए केइ अहाबायरे वि पोग्गले परिसाडित्तए। एवामेव गोयमा ! नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं जाव नो महापज्जवसाणा भवंति।

भगवं ! तत्थ जे से वत्थे खंजणरागरत्ते से णं वत्थे सुद्धोयतराए चेव सुवामतराए चेव सुपरिकम्मतराए चेव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवामेव गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं अहाबायराइं कम्माइं सिढिलीकयाइं निट्ठियाइं कडाइं विप्परिणामियाइं खिप्पामेव विद्धत्थाइं भवंति। जावइयं तावइयं पि णं ते वेयणं वेएमाणा महानिज्जरा महापज्जवसाणा भवंति।

से जहानामए केइ पुरिसे सुक्कं तणहत्थयं जायतेयंसि पक्खिवेज्जा, से नूणं गोयमा ! से सुक्के तणहत्थए जायतेयंसि पक्खित्ते समाणे खिप्पामेव मसमसाविज्जति ?

हंता, मसमसाविज्जति।

एवामेव गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं अहाबादराइं कम्माइं, जाव महापज्जवसाणा भवंति।

से जहानामए केइ पुरिसे तत्तंसि अयकवल्लंसि उदगबिंदू जाव हंता, विद्धंसमागच्छति। एवामेव गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं जाव महापज्जवसाणा भवंति।

से तेणट्ठेणं जे महावेदणे से महानिज्जरे जाव निज्जराए।

४. [प्र.] भगवन् ! तब यह कैसे कहा जाता है कि जो महावेदना वाला है, वह महानिर्जरा वाला है, यावत् प्रशस्त निर्जरा वाला है ?

[उ.] गौतम ! जैसे दो वस्त्र हैं। उनमें से एक **कर्दम** (कीचड़) के रंग से रंगा हुआ है और दूसरा वस्त्र खंजन (गाड़ी के पहिये के कीट) के रंग से रंगा हुआ है। गौतम ! इन दोनों वस्त्रों में से कौन-सा वस्त्र **दुर्धौततर** (कठिनाई से धुलने योग्य), **दुर्वाम्यतर** (कठिनाई से उतारे जा सकें, ऐसा) है और कौन-सा वस्त्र **सुधौततर** (जो सरलता से धोया जा सके), **सुवाम्यतर** (आसानी से जिसके दाग उतारे जा सकें), तथा **सुपरिकर्मतर** (जिस पर चमक लाना और चित्रादि बनाना सरल) है; कर्दमरागरक्त या खंजनरागरक्त ?

(गौतम) भगवन् ! उन दोनों वस्त्रों में से जो कर्दम-रंग से रंगा हुआ है, वही (वस्त्र) दुर्धौततर, दुर्वाम्यतर एवं दुष्परिकर्मतर है।

(भगवान) गौतम ! इसी तरह नैरयिकों के पाप-कर्म **गाढीकृत** (गाढ बँधे हुए), **चिक्कणीकृत** (चिकने किये हुए), **श्लिष्ट** (निधत्त किये हुए) एवं **खिलीभूत** (निकाचित किये हुए) हैं, इसलिए वे सम्प्रगाढ वेदना को वेदते हुए भी महानिर्जरा वाले तथा महापर्यवसान वाले नहीं हैं।

अथवा जैसे कोई व्यक्ति प्रचण्ड शब्द के साथ महाघोष (ध्वनि) करता हुआ लगातार जोर-जोर से चोट मारकर एरण (अहरन) को (हथौड़े से) कूटता-पीटता हुआ भी उस एरण के स्थूल पुद्गलों को विनष्ट करने में समर्थ नहीं हो सकता; इसी प्रकार हे गौतम ! नैरयिकों के पापकर्म गाढ़ किये हुए हैं, यावत् इसलिए वे महानिर्जरा एवं महापर्यवसान वाले नहीं हैं।

(गौतम स्वामी ने पूछा) 'भगवन् ! उन दोनों वस्त्रों में से जो खंजन के रंग से रंगा हुआ है, वह वस्त्र सुधौततर, सुवाम्यतर और सुपरिकर्मतर है ?'

(भगवान ने कहा-) हाँ, गौतम ! इसी प्रकार श्रमण-निर्ग्रन्थों के **यथाबादर** (स्थूलतर कर्म पुद्गल, असार पुद्गल) कर्म, **शिथिलीकृत** (मन्द विपाक वाले), **निष्ठितकृत** (निःसत्व किये हुए), **विपरिणामित**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(जिस कर्म के स्थितिघात और रसघात में परिवर्तन किया गया हो।) होते हैं। (इसलिए वे) शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं। जिस किसी भी वेदना को वेदते हुए श्रमण-निर्ग्रन्थ महानिर्जरा और महापर्यवसान वाले होते हैं।'

(भगवान ने पूछा-) हे गौतम ! जैसे कोई पुरुष सूखे तृणहस्तक (घास के पूले) को धधकती हुई अग्नि में डाल दे तो क्या वह सूखे घास का पूला धधकती आग में डालते ही शीघ्र जल उठता है ?

(गौतम ने उत्तर दिया-) हाँ, भगवन् ! वह शीघ्र ही जल उठता है।

(भगवान ने कहा-) गौतम ! इसी तरह श्रमण-निर्ग्रन्थों के यथाबादर कर्म शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं, यावत् वे श्रमण-निर्ग्रन्थ महानिर्जरा एवं महापर्यवसान वाले होते हैं।

(अथवा) जैसे कोई पुरुष अत्यन्त तपे हुए लोहे के तवे (या कड़ाह) पर पानी की बूँद डाले तो वह यावत् शीघ्र ही विनष्ट हो जाती है, इसी प्रकार, हे गौतम ! श्रमण-निर्ग्रन्थों के यथाबादर कर्म भी शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं और वे यावत् महानिर्जरा एवं महापर्यवसान वाले होते हैं।

इसी कारण से ऐसा कहा जाता है कि जो महावेदना वाला होता है, वह महानिर्जरा वाला होता है, यावत् वही श्रेष्ठ है जो प्रशस्तनिर्जरा वाला है।

4. [Q.] *Bhante* ! Then why is it said that one with extensive pain (*mahavedana*) is also with extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*)... and so on up to... with extensive shedding of *karmas* superior ?

[Ans.] Gautam ! Suppose there are two pieces of cloth. One of these is soaked in slime (*kardam*) and the other in the dirt of a wheel (*khanjan*). Gautam ! Which one of these two pieces of cloth is more difficult to wash and more difficult to make free of stains; which one of these two is easier to wash, easier to make free of stains and easier to make sparkling (and paint)—the one soaked in slime or the one soaked in the dirt of a wheel ?

(Gautam) *Bhante* ! Of these the one soaked in slime is more difficult to wash, more difficult to make free of stains and more difficult to make sparkling.

(*Bhagavan*) Gautam ! In the same way the demeritorious *karmas* (*paap-karma*) of the infernal beings (*nairayik*) are firmly adhered (*gaadhikrit*), smoothly fixed (*chikkanikrit*), assimilated (*shlisht*; partially intransigent or *nidhatt*) and fully fused (*khilibhoot*; intransigent or *nikachit*). Therefore, in spite of suffering intense agony they are neither with extensive shedding nor with a noble end (*mahaparyavasaan*).

Or suppose a man is continuously hammering an anvil with great force producing loud sound. Even then he is not able to destroy the gross matter particles of that anvil. In the same way the demeritorious

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

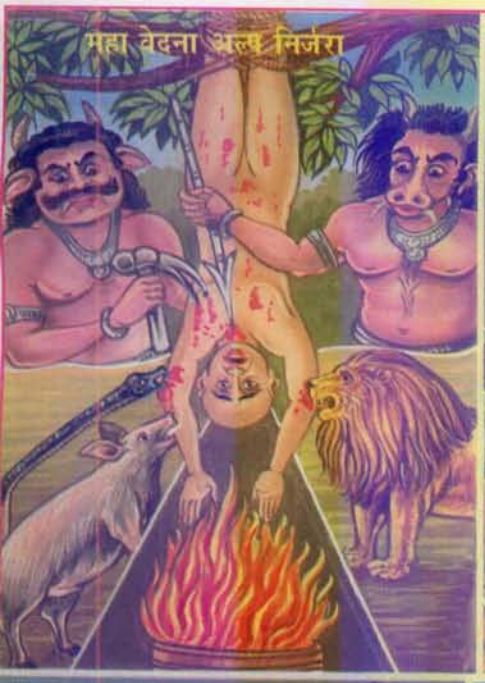

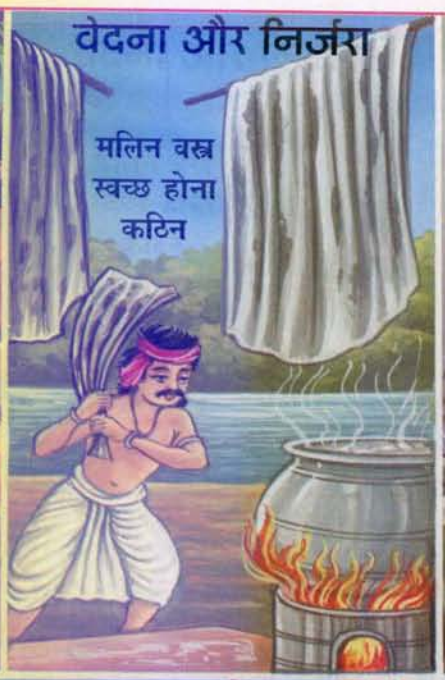

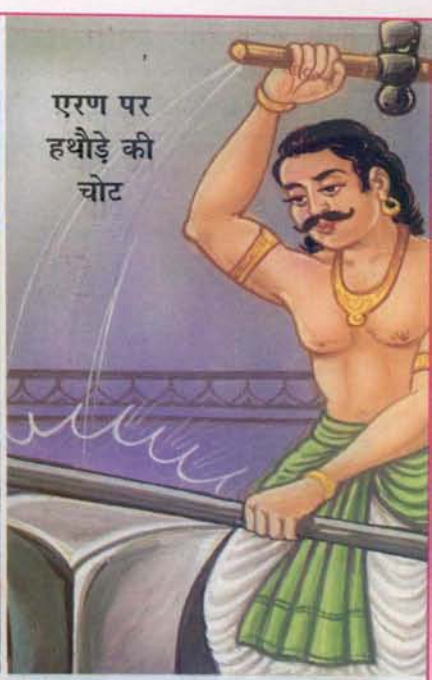

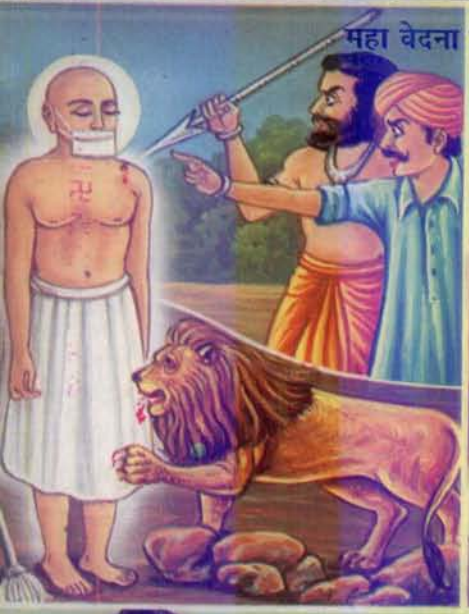

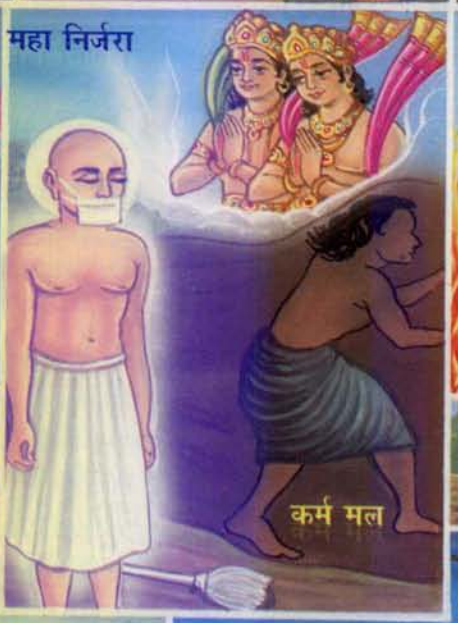

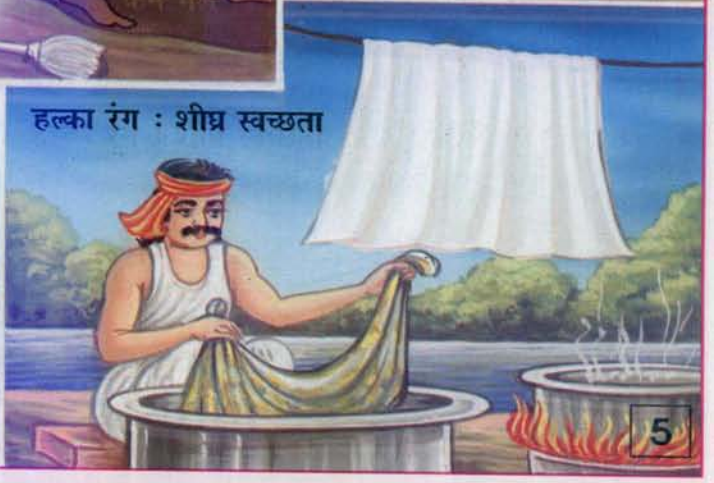

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-५

Illustration No. 5

वेदना और निर्जरा

(१) महावेदना-अल्पनिर्जरा-कुछ जीव पराधीनता के कारण अपने कृतकर्मों के अनुसार नरक आदि गतियों में महाभयंकर वेदना भोगते हैं। परन्तु आत्म-विशुद्धि कारक कर्म निर्जरा की दृष्टि से उन नारकों को अल्प निर्जरा ही होती है।

उदाहरण-जैसे कीचड़ में गहरा रंगा अत्यधिक मलिन वस्त्र बहुत परिश्रम करके धोने पर भी बहुत कम साफ होता है। अथवा एरण आदि पर हथोड़े की चोट मारने पर भी उसके लोह परमाणु अत्यधिक सघन होने से बहुत अल्प मात्रा में बिखरते हैं। इसी प्रकार उन नारक जीवों के सघन, संश्लिष्ट कर्म बन्ध होने के कारण वेदना भोगते हुए विलाप, क्रन्दन करने के कारण आत्मा की विशुद्धि बहुत ही कम होती है। उनको मात्र अकाम निर्जरा ही होती है।

-(शतक ६, उ. १, सूत्र २-३)

(२) इसके विपरीत जो समभावी श्रमण निर्ग्रन्थ होते हैं, उनको कदाचित् घोर उपसर्ग-परीषह उत्पन्न होने पर वे अत्यधिक समभाव के साथ उन्हें सहन करते हैं। इस कारण उनकी आत्मा में संलग्न कर्म रूपी मलिनता दूर होने पर महावेदना के साथ उन्हें महान कर्म निर्जरा भी होती है।

(i) उदाहरण-जैसे आग में सूखा घास डालने पर वह तुरन्त भस्म हो जाता है। (ii) जलते तवे पर पानी की बूँदे गिरते ही वे जल जाती हैं, तथा (iii) हल्दी आदि हल्के रंगों से मलिन वस्त्र धोने पर शीघ्र स्वच्छ हो जाता है। इसी प्रकार उनकी आत्म-विशुद्धि शीघ्र ही होती है।

-(शतक ६, उ. १, सूत्र ३-४)

PAIN AND SHEDDING

(1) Extensive pain and little shedding—Depending on the acquired karmas, some beings suffer extensive pain during their birth in hell and other lowly genuses. But in terms of the shedding leading to spiritual purity those infernal beings have little shedding of karmas.

Example—In spite of working hard, effort to wash a dirty cloth made black by slime fails to make it completely clean. In spit of hammering hard the densely packed molecules of an iron anvil hardly disintegrate. In the same way the densely fused karmic bondage of infernal beings undergoes very little shedding and they gain very little spiritual purity when they suffer the agonizing pain wailing and weeping. They only have involuntary shedding of karmas.

—Shatak-6, lesson-1, Sutra-2, 3

(2) As against this, when the equanimous ascetics are faced with great affliction they endure it with great equanimity. As a consequence the acquired karmic dirt attached to their soul is removed and this great suffering is followed by extensive shedding.

Example—(i) Dry hay is at once turned to ashes when put in fire. (ii) A drop of water falling on a hot platen at once evaporates. (iii) A cloth with light stains gets completely clean on washing. In the same way equanimous ascetics attain purity very soon.

—Shatak-6, lesson-1, Sutra-3, 4

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

karmas of infernal beings are firmly adhered (*gaadhikrit*)... and so on up to... they are neither with extensive shedding nor with a noble end (*mahaparyavasaan*).

(Gautam Swami asked) *Bhante* ! Of these, is the one soaked in the dirt of a wheel easier to wash, easier to make free of stains and easier to make sparkling ?

(*Bhagavan* replied) Yes, Gautam ! In the same way the gross (*yathabaadar*) karmic particles acquired by ascetics are loosely adhered (*shithilikrit*; having low intensity of fruition), devoid of potency (*nishthitkrit*) and transformed (*viparinamit*; in terms of duration and quality). Therefore, they are destroyed easily and soon. Whatever agony they suffer, ascetics are with extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*) and with a noble end (*mahaparyavasaan*).

(*Bhagavan* asked) Gautam ! If a person throws a bundle of hay (*trinahastak*) in blazing fire, is that bundle of hay not aflame at once and soon consumed by that fire ?

(Gautam replied) Yes, *Bhante* ! It is aflame at once and soon consumed by that fire.

(Bhagavan said) Gautam ! In the same way the gross (*yathabaadar*) *karmas* of ascetics are soon destroyed... and so on up to... these ascetics are with extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*) and with a noble end (*mahaparyavasaan*).

Also, if some person pours a drop of water on a red-hot iron platen or pan it at once evaporates. Gautam ! In the same way the gross *karmas* of ascetics are soon destroyed... and so on up to... these ascetics are with extensive shedding of *karmas* and with a noble end.

That is why it is said that one with extensive pain (*mahavedana*) is also with extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*)... and so on up to... one with extensive shedding of *karmas* superior.

विवेचन : महावेदना और महानिर्जरा–कर्म की दो अवस्थाएँ होती हैं–गाढीकृत और शिथिलीकृत। गाढीकृत अवस्था में अधिक कष्ट सहने पर भी निर्जरा अल्प होती है, जबकि शिथिलीकृत अवस्था में अल्प कष्ट सहने पर भी निर्जरा अधिक होती है।

भगवान ने कीचड़ से रंगे और खंजन से रंगे, वस्त्र के दृष्टान्त द्वारा बताया है जो महावेदना वाले होते हैं, वे सभी महानिर्जरा वाले नहीं होते। जैसे नारक महावेदना वाले होते हैं, परन्तु वे उसे समभाव से न सहकर रो-रोकर, विलाप करते हुए सहते हैं, जिससे वह महावेदना महानिर्जरा रूप नहीं होती, बल्कि अल्पतर,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अप्रशस्त, अकामनिर्जरा होकर रह जाती है। इसके विपरीत श्रमण-निर्ग्रन्थ बड़े-बड़े उपसर्गों व परीषहों का समभाव से सहन करने के कारण महानिर्जरा और वह भी प्रशस्तनिर्जरा कर लेते हैं।

श्रमण-निर्ग्रन्थों के कर्म शिथिल बन्धन वाले सुविशोध्य होते हैं, जिन्हें वे शीघ्र ही स्थितिघात और रसघात आदि के द्वारा विपरिणाम वाले कर देते हैं। अतएव वे शीघ्र विध्वस्त हो जाते हैं। इसके लिए तीन उदाहरण दिये गये हैं, खंजन-अर्थात् सामान्य कीचड़ का दाग-धब्बा जैसे शीघ्र ही धुल जाता है, तथा जिस प्रकार से सूखे घास का पूला अग्नि में डालते ही तथा तपे हुए तवे पर पानी की बूँद डालते ही विनष्ट हो जाते हैं; वैसे ही श्रमणों के कर्म शीघ्र नष्ट हो जाते हैं।

गाढ बंधन से बँधे कर्मों के लिए भी दो उदाहरण दिये हैं, जैसे कर्दम (चिकने कर्दम का पक्का रंग) से रंगा वस्त्र मुश्किल से साफ होता है, तथा एरण को लोह के हथोड़े से जोर-जोर से कूटने पर भी उसके स्थूल पुद्गल नष्ट नहीं होते इसी प्रकार गाढ, सचिक्कण बंधे कर्म दुर्विशोध्य होते हैं।

Elaboration—Extensive pain and shedding—There are two states of bonded *karmas*—firmly adhered (*gaadhikrit*) and loosely adhered (*shithilikrit*; having low intensity of fruition). In the state of a firm bond shedding is little in spite of great suffering whereas in the state of a loose bond shedding is extensive in spite of little suffering.

By giving the example of cloth with stains of slime and dirt *Bhagavan* has explained that all those suffering great pain are not necessarily with extensive shedding. For example the infernal beings are with extensive pain, but they do not endure the pain with equanimity; instead they suffer that pain weeping and wailing. As a consequence the shedding is not extensive but very little, ignoble and non-voluntary. On the other hand ascetics endure great afflictions and torments with equanimity. As a result their shedding is extensive and noble.

The *karmic* bonds of *Shraman Nirgranths* (ascetics) are loose and easily removable. The ascetics soon transform them through the process of curtailing duration and intensity of these *karmas*. As a consequence they are destroyed quickly. Three examples have been mentioned here in this regard—as the stain of common dirt (*khanjan*) is removed easily; as a bundle of hay is destroyed the moment it is thrown in fire; and as a drop of water evaporates when poured on a red hot platen; in the same way the *karmas* of ascetics are soon destroyed.

Two examples have also been given for strong bonds of *karmas*—as a fast stain of slime is removed with great difficulty; and as an anvil hammered with great force does not disintegrate easily; in the same way the strongly bound *karmas* are destroyed with great difficulty.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेष शब्दों की व्याख्या—**गाढीकयाइं** = जो कर्म डोरी से मजबूत बाँधी हुई सुइयों के ढेर के समान आत्म-प्रदेशों के साथ गाढ बँधे हुए हैं। **चिक्कणीकयाइं** = मिट्टी के चिकने बर्तन के समान सूक्ष्म-कर्मस्कन्धों के रस के साथ परस्परगाढ बन्ध वाले, दुर्भेद्य कर्मों को चिकने किये हुए कर्म कहते हैं। **सिलिट्ठीकयाइं** = रस्सी से दृढ़तापूर्वक बाँधकर आग में तपाई हुई सुइयों का ढेर जैसे परस्पर चिपक जाता है, वे सुइयाँ एकमेक हो जाती हैं, उसी तरह जो कर्म परस्पर चिपक गये हैं, ऐसे निधत्त कर्म। **खिलीभूयाइं** = खिलीभूत कर्म, वे निकाचित कर्म होते हैं, जो बिना भोगे, किसी भी अन्य उपाय से क्षीण नहीं होते। *(वृत्ति पत्रांक २५१)*

आचार्य उमास्वाति ने प्रशस्त अध्यवसायों को आधार मानकर निर्जरा की तरतमता बताते हुए कहा है, मिथ्यात्वी से सम्यग्दृष्टि को असंख्य गुनी निर्जरा होती है। उससे श्रावक को, श्रावक संयत के क्रमशः क्षीणमोह, जिन के असंख्येय गुनी निर्जरा होती है।

TECHNICAL TERMS

Gaadhikayaim or *gaadhikrit* (firmly adhered)—the *karmas* that are tightly tied to soul space-points like a bunch of needles strongly tied with a thread. *Chikkanikayaim* or *chikkanikrit* (smoothly fixed)—hard to penetrate *karmas* that are smoothly fixed due to their intensity just like an impervious glazed earthen pot. *Silitthikayaim* or *shlisht-krit* (assimilated)—partially intransigent or *nidhatt karmas* like a bunch of needles heated in fire and partially fused. *Khilibhuyaim* or *khilibhoot* (fully fused)—these are the intransigent or *nikachit karmas* that cannot be destroyed without fruition and suffering. *(Vritti leaf 251)*

Assuming noble endeavour to be the basis of purification, Acharya Umasvati has given the progression of shedding of *karmas*. According to him the shedding by a righteous layman is innumerable times more than that by an unrighteous person; that by a *Shravak* (layman observing the prescribed code of conduct) is innumerable times more than that by righteous layman; and so on up to the absolutely detached one (*Jina*).

करण की अपेक्षा साता-असाता-वेदन **EXPERIENCE IN CONTEXT OF KARAN**

५. [प्र.] कइविहे णं भंते ! करणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहे करणे पण्णत्ते, तं जहा—मणकरणे, वइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे।

५. [प्र.] भगवन् ! करण कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! करण (जीव का वीर्य या प्रवृत्ति) चार प्रकार के हैं। यथा—मनकरण, वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण।

विशेष : जिनसे क्रिया की जाये, वह करण है। प्रवृत्ति के हेतुभूत जीव की 'वीर्य' शक्ति को करण कहते हैं। वेदना का मुख्य कारण करण ही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. [Q.] *Bhante* ! How many are the kinds of *karan* (instrument or means) ?

[Ans.] Gautam ! There are four kinds of *karan* (instrument or means of indulgence)—*man-karan* (mind-instrument), *vachan-karan* (speech-instrument), *kaayakaran* (body-instrument) and *karmakaran* (*karma*-instrument).

Note : That which is instrumental in action is called *karan*. The potency of a being or soul that is the cause of its intent of indulgence is called *karan*. The main cause of sufferance is this *karan*.

६. [प्र.] णेरइयाणं भंते ! करणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—मणकरणे, वइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे। एवं पंचेंदियाणं सव्वेसिं चउव्विहे करणे पण्णत्ते। एगिंदियाणं दुविहे—कायकरणे य कम्मकरणे य। विगलेंदियाणं वइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे।

६. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीवों के कितने प्रकार के करण होते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीवों के चार प्रकार के करण होते हैं। यथा—मनकरण, वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण। इसी प्रकार पंचेन्द्रिय जीवों के ये चार प्रकार के करण होते हैं। एकेन्द्रिय जीवों के दो प्रकार के करण होते हैं—कायकरण और कर्मकरण। विकलेन्द्रिय जीवों के तीन प्रकार के करण होते हैं—वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण।

6. [Q.] *Bhante* ! How many types of *karans* infernal beings have ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings have four types of *karan*—mind-instrument, speech-instrument, body-instrument and *karma*-instrument. In the same way five-sensed beings also have the said four types of *karan*. One-sensed beings have two types of *karan*—*kaayakaran* (body-instrument) and *karmakaran* (*karma*-instrument). Two to four-sensed beings (*vikalendriya jivas*) have three types of *karan*—*vachan-karan* (speech-instrument), body-instrument and *karma*-instrument.

७. [प्र. १] नेरइयाणं भंते ! किं करणओ वेदणं वेदेंति ? अकरणओ वेदणं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! नेरइयाणं करणओ वेदणं वेदेंति, नो अकरणओ वेदणं वेदेंति।

७. [प्र. १] भगवन् ! नैरयिक जीव करण से असातावेदना वेदते हैं अथवा अकरण से असातावदेना वेदते हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव करण से असातावेदना वेदते हैं, अकरण से असातावेदना नहीं वेदते।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Do infernal beings have unpleasant experience through *karan* (instrument) or do they have unpleasant experience through *akaran* (without instrument) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Infernal beings have unpleasant experience through instrument and they do not have unpleasant experience without instrument.

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! नेरइयाणं चउव्विहे करणे पण्णत्ते, तं जहा—मणकरणे, वइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे। इच्चेएणं चउव्विहेणं असुभेणं करणेणं नेरइया करणओ असायं वेदणं वेदेंति, नो अकरणओ, से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीवों के चार प्रकार के करण होते हैं, जैसे कि मनकरण, वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण। उनके ये चारों ही प्रकार के करण अशुभ होने से वे करण द्वारा असातावेदना वेदते हैं, अकरण द्वारा नहीं। इस कारण से ऐसा कहा गया है कि नैरयिक जीव करण से असातावेदना वेदते हैं, अकरण से नहीं।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings have four types of *karan—man-karan* (mind-instrument), *vachan-karan* (speech-instrument), *kaayakaran* (body-instrument) and *karmakaran* (*karma*-instrument). With them all these four *karans* are ignoble, so they have unpleasant experience through these ignoble *karans* only and not through *akaran*. That is why it is said that infernal beings have unpleasant experience through *karan* (instrument) and not through *akaran* (without instrument).

८. [प्र. १] असुरकुमारा णं किं करणओ, अकरणओ ?

[उ.] गोयम ! करणओ, नो अकरणओ।

८. [प्र. १] असुरकुमार देव क्या करण से सातावेदना वेदते हैं, अथवा अकरण से ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमार करण से सातावेदना वेदते हैं, अकरण से नहीं।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Do Asur Kumar gods have pleasant experience through *karan* or through *akaran* ?

[Ans.] Gautam ! Asur Kumar gods have pleasant experience through *karan* (instrument) and not through *akaran* (without instrument).

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते !

[उ.] गोयमा ! असुरकुमाराणं चउव्विहे करणे पण्णत्ते, तं जहा—मणकरणे, वइकरणे, कायकरणे, कम्मकरणे। इच्चेएणं सुभेणं करणेणं असुरकुमारा णं करणओ सायं वेदणं वेदेंति, नो अकरणओ।

९. एवं जाव थणियकुमारा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २.] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमारों के चार प्रकार के करण हैं। यथा–मनकरण, वचनकरण, कायकरण और कर्मकरण। असुरकुमारों के ये चारों करण शुभ होने से वे करण से सातावेदना वेदते हैं, किन्तु अकरण से नहीं।

९. इसी तरह (नागकुमार से लेकर) स्तनितकुमार तक कहना चाहिए।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Asur Kumar gods have four types of *karan*—mind-instrument, speech-instrument, body-instrument and *karma*-instrument. With them all these four *karans* are noble, so they have pleasant experience through these and not through *akaran*.

9. The same should be repeated for Stanit Kumar gods (starting from Naag Kumar gods).

१०. [प्र.] पुढविकाइयाणं एवामेव पुच्छा।

[उ.] नवरं इच्चेएणं सुभासुभेणं करणेणं पुढविकाइया करणओ वेमायाए वेदणं वेदेंति, नो अकरणओ।

११. ओरालियसरीरा सव्वे सुभासुभेणं वेमायाए। १२. देवा सुभेणं सायं।

१०. [प्र.] भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव करण द्वारा वेदना वेदते हैं, या अकरण द्वारा।

[उ.] गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव करण द्वारा वेदना वेदते हैं, किन्तु अकरण द्वारा नहीं। विशेष यह है कि इनके ये करण शुभाशुभ होने से ये करण द्वारा विमात्रा से (विविध प्रकार से) वेदना वेदते हैं; किन्तु अकरण द्वारा नहीं। अर्थात्–पृथ्वीकायिक जीव शुभकरण होने से सातावेदना वेदते हैं और कदाचित् अशुभ करण होने से असातावेदना वेदते हैं।

११. औदारिक शरीर वाले सभी जीव अर्थात्–पाँच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंचपंचेन्द्रिय और मनुष्य, शुभाशुभ करण द्वारा विमात्रा से वेदना (कदाचित् सातावेदना और कदाचित् असातावेदना) वेदते हैं। १२. देव (चारों प्रकार के देव) शुभ करण द्वारा सातावेदना वेदते हैं।

10. [Q.] *Bhante* ! Do Earth-bodied beings have experience through *karan* (instrument) or through *akaran* (without instrument) ?

[Ans.] Gautam ! Earth-bodied beings have experience through instrument and not without instrument. However, the difference in their case is that they have both noble and ignoble *karans* (instruments) resulting in diverse experiences through *karan* and not through *akaran*. This means that earth-bodied beings have pleasant experience when the *karan* is noble and unpleasant experience when the *karan* is ignoble.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. All beings with *Audarik Sharira* or gross physical body (this includes five kinds of immobile beings, two to four sensed beings, five sensed animals and human beings) have diverse experiences (sometimes pleasant and sometimes unpleasant) through noble and ignoble *karans*. **12.** Gods of all the four kinds have pleasant experience through noble *karans*.

जीवों में वेदना और निर्जरा **SUFFERING AND SHEDDING IN JIVAS**

१३. [प्र. १] जीवा णं भंते ! किं महावेयणा महानिज्जरा ? महावेयणा अप्पनिज्जरा ? अप्पवेयणा महानिज्जरा ? अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइया जीवा महावेयणा महानिज्जरा, अत्थेगइया जीवा महावेयणा अप्पनिज्जरा, अत्थेगइया जीवा अप्पवेयणा महानिज्जरा, अत्थेगइया जीवा अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा।

१३. [प्र. १] भगवन् ! (१) जीव, (क्या) महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं, (२) महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं, (३) अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले हैं, अथवा (४) अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं ?

[उ.] गौतम ! (१) कितने ही जीव महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं, (२) कितने ही जीव महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं, (३) कई जीव अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले हैं, तथा (४) कई जीव अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं।

13. [Q. 1] *Bhante* ! (1) Are living beings (*jiva*) with extensive pain (*mahavedana*) and extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*), (2) with extensive pain and little shedding of *karmas* (*alpanirjara*), (3) with little pain (*alpavedana*) and extensive shedding of *karmas*, or (4) with little pain and little shedding of *karmas* ?

[Ans.] Gautam ! (1) Some living beings (*jiva*) are with extensive pain (*mahavedana*) and extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*), (2) some with extensive pain and little shedding of *karmas* (*alpanirjara*), (3) some with little pain and extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*), and (4) some with little pain (*alpavedana*) and little shedding of *karmas* (*alpanirjara*) ?

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते !

[उ.] गोयमा ! पडिमापडिवन्नए अणगारे महावेयणे महानिज्जरे। छट्ठ-सत्तमासु पुढवीसु नेरइया महावेदणा अप्पनिज्जरा। सेलेसिं पडिवन्नए अणगारे अप्पवेदणे महानिज्जरे। अणुत्तरोववाइया देवा अप्पवेदणा अप्पनिज्जरा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! प्रतिमा-प्रतिपन्न (प्रतिमाधारी) अनगार महावेदना और महानिर्जरा वाला होता है। छठी-सातवीं नरक-पृथ्वियों के नैरयिक जीव महावेदना वाले, किन्तु अल्पनिर्जरा वाले होते हैं। शैलेशी अवस्था को प्राप्त अनगार अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले होते हैं। तथा अनुत्तरौपपातिक देव अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले होते हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said to be so ?

[Ans.] Gautam ! An ascetic observing *pratimas* (special codes and resolutions) is with extensive pain (*mahavedana*) and extensive shedding of *karmas* (*mahanirjara*). Infernal beings of the sixth and seventh hells are with extensive pain and little shedding of *karmas* (*alpanirjara*). Ascetics having attained the *Shaileshi* (rock-like steady) state are with little pain (*alpavedana*) and extensive shedding of *karmas*, and divine beings of the *Anuttaropapatik* realm are with little pain and little shedding of *karmas*.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

उपसंहार रूप **CONCLUDING VERSE**

१४. महावेयणे य वत्थे कद्दम-खंजणमए य अधिकरणी।
तणहत्थेऽयकवल्ले करण महावेदणा जीवा ॥१॥

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ छट्ठ सयस्स पढमो उद्देसो समत्तो ॥

१४. महावेदन, कर्दम और खंजन के रंग से रंगे हुए वस्त्र, अधिकरणी (एरण), घास का पूला (तृणहस्तक), लोहे का तवा या कड़ाह, करण और महावेदना वाले जीव, इतने विषयों का निरूपण इस प्रथम उद्देशक में किया गया है।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है।

॥ छठा शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

14. Extensive pain (*mahavedan*), pieces of cloth stained with slime (*kardam*) and dirt (*khanjan*), anvil (*adhikarani* or *airun*), bundle of hay (*trinahastak*), iron platen or pan, instrument (*karan*) and living beings with extensive pain are the topics discussed in this first lesson.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE FIRST LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वेदना और निर्जरा की चौभंगी

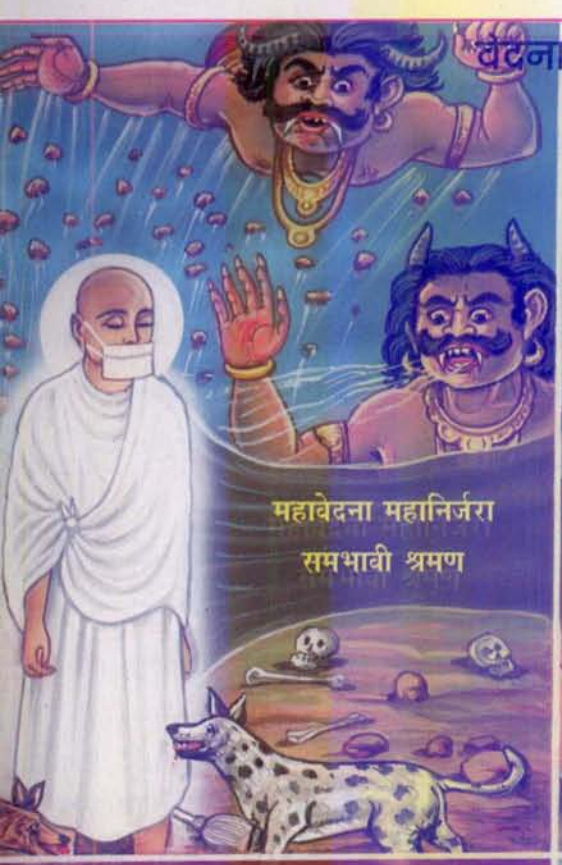

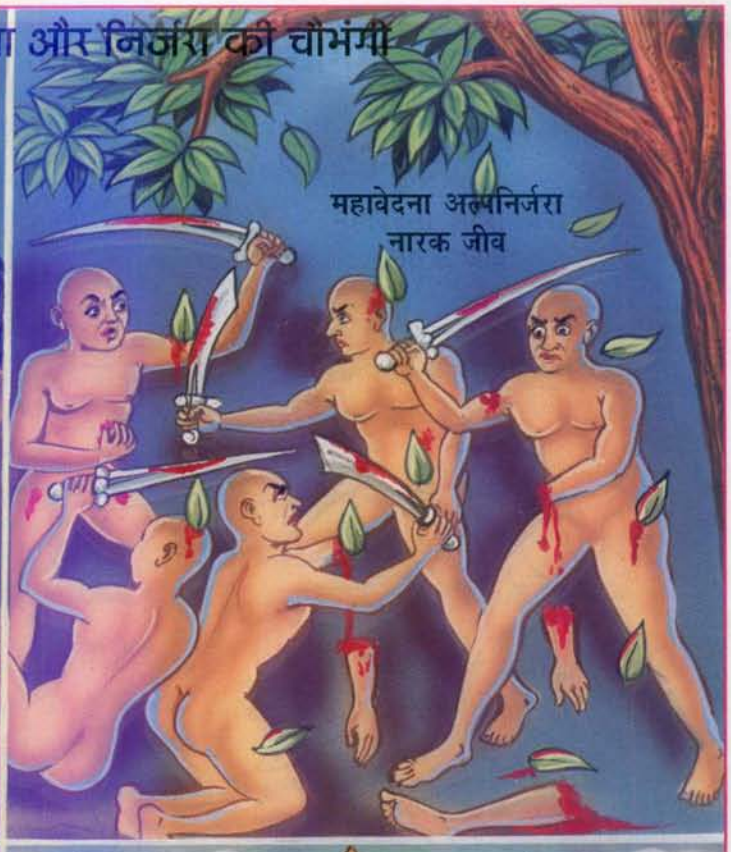

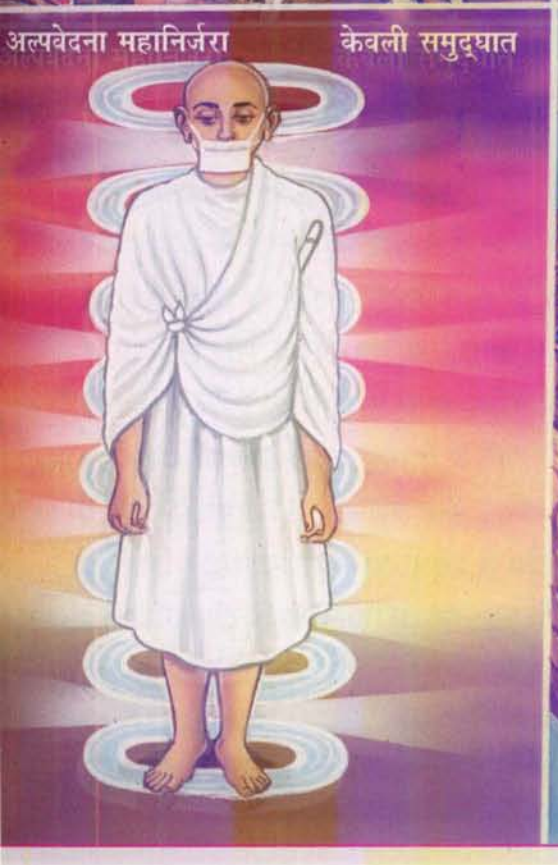

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-६

Illustration No. 6

वेदना और निर्जरा की चौभंगी

१. **महावेदना–महानिर्जरा**–कुछ जीव जैसे प्रतिमाधारी अणगार, उन्हें अनेक प्रकार के घोरातिघोर उपसर्ग उत्पन्न होने पर वे पूर्ण समता व समाधि पूर्वक उसे सहन कर महावेदना महानिर्जरा करते हैं।

२. **महावेदना–अल्पनिर्जरा**–कुछ जीव, जैसे छठी–सातवीं नरक के नैरयिक अनेक प्रकार की महावेदना तो भोगते हैं, परन्तु साथ में आर्त–रौद्र ध्यान रहने से उनकी आत्म–शुद्धि नहींवत् रहती है। वे महावेदना अल्पनिर्जरा करते हैं।

३. **अल्पेवदना–महानिर्जरा**–कुछ आत्माएँ, जैसे शैलेशी अवस्था प्राप्त अणगार (१४वें गुणस्थानवर्ती केवली) समुद्घात आदि करके कर्मों की महानिर्जरा करते हैं, परन्तु इस अवस्था में उनको अल्पवेदना ही होती है।

४. **अल्प वेदना–अल्पनिर्जरा**–जैसे अनुत्तरौपपातिक देवों की वेदना भी अल्प होती है और कर्मनिर्जरा भी अल्प होती है।

–शतक ६, उ. १, सूत्र १३

FOUR ALTERNATIVES OF PAIN AND SHEDDING

(1) **Extensive pain and extensive shedding**—An ascetic observing pratimas endures extensive pain (mahavedana) with equanimity and thereby has extensive shedding of karmas (mahanirjara).

(2) **Extensive pain and little shedding**—Infernal beings of the sixth and seventh hells suffer extensive pain but with grief and anger and thereby have little shedding of karmas (alpanirjara) and hardly any spiritual purity.

(3) **Little pain and extensive shedding**—Ascetics having attained the Shaileshi (rock-like steady) state (Kevali at 14th Gunasthan) are with little pain (alpavedana) and extensive shedding of karmas through Samudghat.

(4) **Little pain and little shedding**—Divine beings of the Anuttaropapatik realm are with little pain and little shedding of karmas.

—Shatak-6, lesson-1, Sutra-13

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : द्वितीय उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : SECOND LESSON

आहार AHAAR (INTAKE)

आहार के सम्बन्ध में कथन STATEMENT ABOUT INTAKE

१. रायगिहं नगरं जाव एवं वयासी—आहारुद्देसो जो पण्णवणाए सो सव्वो निरवसेसो नेयव्वो।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ छट्ठे सए : बीओ उद्देसो समत्तो ॥

१. राजगृह नगर में ..... यावत् भगवान महावीर ने इस प्रकार फरमाया—यहाँ प्रज्ञापनासूत्र (२८वें आहारपद) के प्रथम उद्देशक के अनुसार ग्यारह प्रश्न और उनके उत्तर जान लेना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'।

1. In Rajagriha city... and so on up to... Bhagavan Mahavir said thus—Here the eleven questions and answers from the first lesson of the 28th chapter titled *Ahaar-pad* of *Prajnapana Sutra* should be quoted verbatim.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : प्रज्ञापनासूत्र के २८वें आहारपद के प्रथम उद्देशक में क्रमशः उक्त ११ अधिकारों में वर्णित विषय इस प्रकार हैं—

१. पृथ्वीकाय आदि जीव जो आहार करते हैं, क्या वह सचित्त हैं, अचित्त हैं या मिश्र हैं ?

२. नैरयिक आदि जीव आहारार्थी हैं या नहीं ?

३. किन जीवों को कितने-कितने काल से, कितनी-कितनी बार आहार की अभिलाषा उत्पन्न होती है ?

४. कौन-से जीव किस प्रकार के पुद्गलों का आहार करते हैं ?

५. आहार करने वाला अपने समग्र शरीर द्वारा आहार करता है, या अन्य प्रकार से ?

६. आहार के लिए ग्रहीत पुद्गलों के कितने भाग का आहार किया जाता है ? इत्यादि।

७. मुँह में खाने के लिए रखे हुए सभी पुद्गल खाये जाते हैं या कितने ही गिर जाते हैं। इसका स्पष्टीकरण।

८. खायी हुई वस्तुएँ किस-किस रूप में परिणत होती हैं ?

९. एकेन्द्रियादि जीवों के शरीरों को खाने वाले जीवों से सम्बन्धित वर्णन।

१०. रोमाहार से सम्बन्धित विवेचन।

११. मन द्वारा तृप्त हो जाने वाले मनोभक्षी देवों से सम्बन्धित तथ्यों का निरूपण।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वहीं पर इन प्रश्नों का उत्तर भी दिया गया है, जैसा प्रथम प्रश्न के उत्तर में कहा है, नैरयिक जीव सचित्ताहारी या मिश्रआहारी नहीं हैं। वे अचित्ताहारी हैं।

॥ छठा शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—The topics detailed in the aforesaid eleven questions from the first lesson of the 28th chapter titled *Ahaar-pad* of *Prajnapana Sutra* are as follows—

1. Is the food intake by living beings including earth-bodied beings *sachitt* (infested with living organisms), *achitt* (free of living organisms), or mixed ?

2. Do the infernal beings have food intake or not ?

3. Which living beings have desire of food intake, how many times, and after what intervals ?

4. Which living beings have intake of what kinds of matter particles ?

5. Does a being have food intake through its whole body or otherwise ?

6. What portion of the acquired matter is consumed ? etc.

7. Clarification of whether all the quantity of food placed in mouth is eaten or some of it falls down.

8. What way the consumed matter is transformed ?

9. Description about living beings that consume other living beings including one-sensed beings.

10. Elaboration of the process of intake through body-pores.

11. Description of facts related to divine beings that consume through mind and get sated.

All these questions are with answers. For example the answer to the first question is—Infernal beings have intake of *achitt* (free of living organisms) things and not *sachitt* (infested with living organisms) or mixed things.

● END OF THE SECOND LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : तृतीय उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : THIRD LESSON

महास्रव MAHASRAVA (EXTENSIVE INFLUX)

संग्रहणी गाथाएँ COLLATIVE VERSES

१. बहुकम्म १ वत्थपोग्गल पयोगसा वीससा य २ साइए ३।
कम्मट्ठिति–त्थि ४–५ संजय ६ सम्मद्दिट्ठी ७ य सण्णी ८ य ॥१॥

भविए ९ दंसण १० पज्जत्त ११ भासय १२ परित्त १३ नाण १४ जोगे १५ य।
उवओगा–ऽऽहारग १६–१७ सुहुम १८ चरिम १९ बंधे य, अप्पबहुं २० ॥२॥

१. (१) बहुकर्म, (२) वस्त्र में प्रयोग से और स्वाभाविक रूप से पुद्गल, (३) सादि (आदि सहित), (४) कर्मस्थिति, (५) स्त्री, (६) संयत, (७) सम्यग्दृष्टि, (८) संज्ञी, (९) भव्य, (१०) दर्शन, (११) पर्याप्त, (१२) भाषक, (१३) परित्त, (१४) ज्ञान, (१५) योग, (१६) उपयोग, (१७) आहारक, (१८) सूक्ष्म, (१९) चरम–बन्ध, और (२०) अल्पबहुत्व, (इन बीस विषयों का वर्णन इस उद्देशक में किया गया है।

1. (1) *Bahukarma* (Many *Karmas*), (2) Synthetic and natural matter in cloth, (3) *Saadi* (With a Beginning), (4) *Karmasthiti* (Duration of *Karma*), (5) *Stree* (Women), (6) *Samyat* (Restrained), (7) *Samyagdrishti* (Righteous), (8) *Sanjni* (Sentient), (9) *Bhavya* (Worthy of Liberation), (10) *Darshan* (Perception), (11) *Paryapt* (Fully Developed), (12) *Bhashak* (Capable of Speech), (13) *Paritta* (Limited), (14) *Jnana* (Knowledge), (15) *Yoga* (Association), (16) *Upayog* (Involvement), (17) *Ahaarak* (Having Intake), (18) *Sukshma* (Minute), (19) *Charam* (Final) and (20) *Alpabahutva* (Minimum-maximum). These twenty topics have been discussed in this lesson.

१. प्रथम द्वार : महाकर्मा और अल्पकर्मा
FIRST PORT (DVAR) : WITH MORE KARMAS AND WITH LESS KARMAS

२. [प्र. १] से नूणं भंते ! महाकम्मस्स महाकिरियस्स महासवस्स महावेदणस्स सव्वओ पोग्गला बज्झंति, सव्वओ पोग्गला चिज्जंति, सव्वओ पोग्गला उवचिज्जंति, सया समियं च णं पोग्गला बज्झंति, सया समियं पोग्गला चिज्जंति, सया समियं पोग्गला उवचिज्जंति, सया समियं च णं तस्स आया दुरूवत्ताए दुवण्णत्ताए दुगंधत्ताए दुरसत्ताए दुफासत्ताए अणिट्ठत्ताए अकंतत्ताए अप्पियत्ताए असुभत्ताए अमणुण्णत्ताए अमणामत्ताए अणिच्छियत्ताए अभिज्झियत्ताए, अहत्ताए, नो उड्ढत्ताए, दुक्खत्ताए, नो सुहत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हंता, गोयमा ! महाकम्मस्स तं चेव।

२. [प्र. १] भगवन् ! क्या महाकर्म वाले, महाक्रिया वाले, महाआस्रव वाले और महावेदना वाले जीव के **सर्वतः**–(सभी प्रदेशों से और सभी प्रकार से) पुद्गलों का बन्ध होता है ? सर्वतः पुद्गलों का चय होता है ? सर्वतः पुद्गलों का उपचय होता है ? सदा सतत पुद्गलों का बन्ध होता है ? सदा सतत पुद्गलों का चय होता है ? सदा सतत पुद्गलों का उपचय होता है ? क्या सदा निरन्तर उसका आत्मा (सशरीर जीव) वीभत्सता में, दुर्वर्णता में, दुर्गन्धता में, दुःरसता में, दुःस्पर्शता में, **अनिष्टता**–(इच्छा से विपरीतरूप) में, **अकान्तता**–(असुन्दरता), अप्रियता, अशुभता, अमनोज्ञता और अकमनीयता से अवांछनीयता में, **अनभिध्यितता** (जिसे प्राप्त करने में अरुचि हो) में, अधमता में, **अनूर्ध्वता** (नीचता) में, दुःखरूप में–असुखरूप में बार–बार परिणत होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! महाकर्म वाले जीव के ऊपर कहे अनुसार ही आत्मा का परिणमन होता है।

2. [Q. 1] *Bhante* ! Do living beings with extensive *karmas* (*mahakarmaa*), extensive activity (*mahakriya*) and extensive influx (*mahashrava*) get bonded with matter particles through all space-points and every way (*sarvatah*) ? Do they assimilate (*chaya*) matter particles through all space-points and every way (*sarvatah*) ? Do they augment (*upachaya*) matter particles through all space-points and every way (*sarvatah*) ? Do they get bonded with matter particles always and continuously (*sada-satat*) ? Do they assimilate (*chaya*) matter particles always and continuously (*sada-satat*) ? Do they augment (*upachaya*) matter particles always and continuously (*sada-satat*) ? Does his soul (embodied soul) continue to transform time and again into grotesqueness (*vibhatsata*), repulsive colour (*durvarnata*), repulsive smell (*durgandhata*), repulsive taste . (*duhrasata*), repulsive touch (*duhsparshata*); into something that is *anisht* (undesirable), *akaant* (not beautiful), *apriya* (not lovable), *ashubha* (ignoble), *amanojna* (not attractive), *akamaniya* (not adorable), *avaanchhaniya* (not covetable); abhorrence (*anabhidhyatata*), vileness (*adhamata*), abjectness (*anurdhvata*), and states of misery and unhappiness ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Living beings with extensive *karmas* (*mahakarmaa*) undergo transformation as you have said.

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए वत्थस्स अहयस्स वा धोयस्स वा तंतुग्गयस्स वा आणुपुव्वीए परिभुज्जमाणस्स सव्वओ पोग्गला बज्झंति, सव्वओ पोग्गला चिज्जंति जाव परिणमंति, से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] (भगवन् !) किस कारण से ऐसा कहा है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! जैसे कोई अहत–(बिना पहना हुआ), धौत–(पहनने के बाद धोया हुआ), और तन्तुगत–(ताजा बुनकर उतरा हुआ) वस्त्र हो, वह वस्त्र जब क्रमशः उपयोग में लिया जाता है, तो उसके पुद्गल सब ओर से बँधते हैं, सब ओर से चय होते हैं, यावत् कालान्तर में वह वस्त्र अत्यन्त मैला और दुर्गन्धित रूप में परिणत हो जाता है; इसी प्रकार महाकर्म वाला जीव उपर्युक्त रूप से यावत् असुखरूप में बार–बार परिणत होता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! When a new or washed or fresh-from-loom piece of cloth is used regularly, it acquires and assimilates matter particles from all directions... and so on up to... in due course that piece of cloth turns dirty and malodorous. In the same way living beings with extensive *karmas* (*mahakarma*) undergo transformation... and so on up to... states of misery and unhappiness time and again.

३. [प्र. १] से नूणं भंते ! अप्पकम्मस्स अप्पकिरियस्स अप्पासवस्स अप्पवेयणस्स सव्वओ पोग्गला भिज्जंति, सव्वओ पोग्गला छिज्जंति, सव्वओ पोग्गला विद्धंसंति, सव्वओ पोग्गला परिविद्धंसंति, सया समियं पोग्गला भिज्जंति छिज्जंति विद्धंसंति परिविद्धंसंति, सया समियं च णं तस्स आया सुरूवत्ताए पसत्थं नेयव्वं जाव सुहत्ताए, नो दुक्खत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमंति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जाव परिणमंति।

३. [प्र. १] भगवन् ! क्या अल्पकर्म वाले, अल्पक्रिया वाले, अल्पआस्रव वाले और अल्पवेदना वाले जीव के पुद्गलों का भेदन होता है। पूर्व सम्बन्ध–विशेष को छोड़कर अलग होता ? सर्वतः पुद्गल छिन्न होते (टूटते) जाते हैं ? सर्वतः पुद्गल विध्वस्त होते जाते हैं ? सर्वतः पुद्गल समग्ररूप से ध्वस्त हो जाते हैं ? क्या सदा सतत पुद्गल भिन्न, छिन्न, विध्वस्त और परिविध्वस्त होते हैं ? क्या उस पुरुष की आत्मा (बाह्य आत्मा) सदा सतत सुरूपता में यावत् सुखरूप में और अदुःखरूप में बार–बार परिणत होता है ? (पूर्वसूत्र में अप्रशस्त पदों का कथन किया है, किन्तु यहाँ सब प्रशस्त–पदों का जैसे–शुभ वर्ण, शुभ गन्ध आदि कथन करना चाहिए।)

[उ.] हाँ, गौतम ! अल्पकर्म वाले जीव का आत्मा ऊपर कहे अनुसार ही यावत् परिणत होता है।

3. [Q. 1] *Bhante* ! Do living beings with little *karmas* (*alpakarma*), little activity (*alpakriya*), little influx (*alpashrava*) and little pain (*alpavedana*) get separated from matter particles through all space-points and every way (*sarvatah*) ? Do these matter particles break apart from all space-points and every way (*sarvatah*) ? Do they get destroyed through all space-points and every way (*sarvatah*) ? Do they get completely destroyed through all space-points and every way (*sarvatah*) ? Do they get separated, break apart, get destroyed and get completely destroyed

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

always and continuously (*sada-satat*) ? Does his soul (embodied soul) continue to transform time and again into perfection... and so on up to... states of joy and happiness ? (in the preceding aphorism ignoble attributes have been mentioned but here noble attributes like good colour and good odour should be mentioned)

[Ans.] Yes, Gautam ! Living beings with little *karmas* (*alpakarma*) undergo transformation as you have said.

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए वत्थस्स जल्लियस्स वा पंकियस्स वा मइल्लियस्स वा रइल्लियस्स वा आणुपुव्वीए परिकम्मिज्जमाणस्स सुद्धेणं वारिणा धोव्वेमाणस्स सव्वओ पोग्गला भिज्जंति जाव परिणमंति, से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जैसे कोई **जल्लित** (शरीर के मल से–मैला), **पंकित** (कीचड़ से सना), मैलसहित अथवा धूल से भरा वस्त्र हो और उसे शुद्ध करने का क्रमशः प्रयत्न किया जाये, उसे स्वच्छ पानी से धोया जाये तो उस पर लगे हुए मैले–अशुभ पुद्गल सब ओर से अलग होने लगते हैं, यावत् उसके पुद्गल शुभरूप में परिणत हो जाते हैं, (इसी तरह अल्पकर्म वाले जीव के विषय में भी पूर्वोक्त रूप से सब कथन करना चाहिए।) इसी कारण से, (अल्पकर्म वाले जीव के लिए कहा गया है कि वह यावत् बार–बार परिणत होता है।)

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Suppose there is a dirty and stained piece of cloth covered with slime and dirt. When successive efforts are made to cleanse it and wash it with clear water, the bad matter particles start getting separated from it from all directions... and so on up to... in due course its constituent particles turn good and clean (in the same way the aforesaid statement about beings with little *karmas* should be repeated). That is why it is said so. (beings with little *karmas* continue to transform time and again into perfection)

विवेचन : महाकर्म तथा अल्पकर्म–इन दोनों अवस्थाओं को ही वस्त्र के दृष्टान्त से समझाया गया है– (१) नया वस्त्र पहनने से धीमे–धीमे मलिन होता जाता है, वैसे ही महाआस्रव वाला आत्मा अशुभ प्रवृत्तियों द्वारा मलिन होता जाता है। (२) जैसे मलिन वस्त्र धोने पर उज्ज्वल हो जाता है, वैसे ही अल्प आस्रव वाला आत्मा तपश्चरण आदि के द्वारा कर्मनिर्जरा करता हुआ निर्मल होता रहता है।

महाकर्म वाले की आत्मा के साथ ही उसका शरीर, आभामण्डल आदि सभी अनिष्ट अदर्शनीय, अशोभनीय तथा मलिन होता जाता है तथा अल्पकर्म वाले का शरीर सुन्दर, शोभनीय, प्रभावशाली, कांतिमान होता रहता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। इन सूत्रों में आधुनिक आध्यात्मिक चिकित्सा के सूत्र भी खोजे जा सकते हैं। कर्म, क्रिया, आस्रव तथा वेदना इन चारों का परस्पर सम्बन्ध है। कर्म का संचय विशाल होगा तो क्रिया आस्रव और वेदना भी विशाल होगी। कर्मों की अल्पता होने पर क्रिया, आस्रव और वेदना भी अल्प होगी।

महाकर्मा–जिसके कर्मों की स्थिति आदि लम्बी हो। जिसकी कायिकी आदि क्रियाएँ अधिक हों, वह **महाक्रिया** वाला। कर्मबन्ध के हेतुभूत मिथ्यात्वादि जिसके विशाल गाढ़ एवं प्रचुर हों वह **महास्रव** वाला, तथा महापीड़ा वाले को **महावेदना** वाला कहा गया है। *(वृत्ति पत्रांक २५३)*

Elaboration—Mahakarma and Alpakarma—Both these states have been explained with the help of the example of a piece of cloth. (1) A new piece of cloth gets dirty gradually by wearing, in the same way a being with *mahashrava* (extensive influx) gets maligned with ignoble attitude. (2) A dirty piece of cloth becomes clean on washing; in the same way a being with little influx sheds *karmas* with the help of austerities and other such purifying activities and gradually attains purity.

Along with his soul the body, aura and other attributes of the being with extensive *karmas* become grotesque, repulsive, unattractive and dirty. The body and aura of a being with little *karmas* gradually become beautiful, attractive, imposing and radiant. These aphorism can also be explored for indicators of modern day spiritual healing. *Karma*, action, inflow and experience are mutually connected factors. If *karmas* are extensive, action, influx and experience of pain will also be extensive. If *karmas* are minuscule, action, influx and experience of pain will also be little.

One with ignoble qualities of *karmas*, like long duration, is called *mahakarmaa*. One having intense activities, like those of the body, is called one with *mahakriya*. One having intense and numerous sources of influx of *karmas*, like unrighteousness, is called one with *mahasrava*. One having great sufferance of pain is called one with *mahavedana*. *(Vritti leaf 253)*

२. द्वितीय द्वार : वस्त्र और जीव के पुद्गलोपचय
SECOND PORT : ACQUISITION OF MATTER BY CLOTH AND SOUL

४. [प्र.] वत्थस्स णं भंते ! पोग्गलोवचए किं पयोगसा, वीससा ?

[उ.] गोयमा ! पयोगसा वि, वीससा वि।

४. [प्र.] भगवन् ! वस्त्र में जो पुद्गलों का उपचय (संचय) होता है, वह क्या प्रयोग (प्रयत्न) से होता है, अथवा विश्रसा (स्वाभाविक) रूप से।

[उ.] गौतम ! वह प्रयोग से भी होता है, स्वाभाविक रूप से भी होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. [Q.] *Bhante* ! Are matter particles acquired (*upachaya*; here it includes the whole process of acquisition, assimilation and augmentation) by cloth through application (*prayog*) or naturally (*vishrasa*) ?

[Ans.] Gautam ! It happens both through application as well as naturally.

५. [प्र. १] जहा णं भंते ! वत्थस्स णं पोग्गलोवचए पयोगसा वि, वीससा वि तहा णं जीवाणं कम्मोवचए किं पयोगसा, वीससा ?

[उ.] गोयमा ! पयोगसा, नो वीससा।

५. [प्र. १] भगवन् ! जिस प्रकार वस्त्र में पुद्गलों का उपचय प्रयोग से और स्वाभाविक रूप से होता है, तो क्या उसी प्रकार जीवों के कर्मपुद्गलों का उपचय भी प्रयोग से और स्वभाव से होता है ?

[उ.] गौतम ! जीवों के कर्मपुद्गलों का उपचय प्रयोग से होता है, किन्तु स्वाभाविक रूप से नहीं होता।

5. [Q. 1] *Bhante* ! Just as matter is acquired (*upachaya*) by cloth through application as well as naturally, are *karma* particles also acquired (*upachaya*) by living beings (souls) through application as well as naturally ?

[Ans.] Gautam ! *Karma* particles are acquired (*upachaya*) by living beings (souls) only through application and not naturally.

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! जीवाणं तिविहे पयोगे पण्णत्ते, तं जहा–मणप्पयोगे वइप्पयोगे कायप्पयोगे य। इच्चेएणं तिविहेणं पयोगेणं जीवाणं कम्मोवचए पयोगसा, नो वीससा। एवं सव्वेसिं पंचेंदियाणं तिविहे पयोगे भाणियव्वे। पुढविक्काइयाणं एगविहेणं पयोगेणं, एवं जाव वणस्सइकाइयाणं। विगलिंदियाणं दुविहे पयोगे पण्णत्ते, तं जहा–वइप्पयोगे य, कायप्पयोगे य। इच्चेएणं दुविहेणं पयोगेणं कम्मोवचए पयोगसा, नो वीससा। से एएणट्ठेणं जाव–नो वीससा। एवं जस्स जो पयोगो जाव वेमाणियाणं।

[प्र. २] भगवन् ! किस अपेक्षा से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जीवों के तीन प्रकार के प्रयोग कहे हैं–मनःप्रयोग, वचनप्रयोग और कायप्रयोग। इन तीन प्रकार के प्रयोगों से जीवों के कर्मों का उपचय होता है। इस प्रकार समस्त पंचेन्द्रिय जीवों के तीन प्रकार का प्रयोग कहना चाहिए। पृथ्वीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक (पंचस्थावर) जीवों तक के एक प्रकार के (काय) प्रयोग से (कर्मपुद्गलोपचय होता है।) विकलेन्द्रिय जीवों के दो प्रकार से प्रयोग होते हैं, यथा–वचनप्रयोग और कायप्रयोग। अतः उनके इन दो प्रयोगों से कर्म (पुद्गलों) का उपचय होता है। यों समस्त जीवों के कर्मोपचय प्रयोग से होता है, स्वाभाविक–रूप से नहीं। इसी कारण से कहा गया है कि···· यावत् स्वाभाविक रूप से नहीं होता। इस प्रकार जिस जीव का जो प्रयोग हो, वह कहना चाहिए। यावत् वैमानिक तक (यथायोग्य) प्रयोगों से कर्मोपचय का कथन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Living beings are said to have three types of application (*prayog*)—*manah-prayog* (mental application), *vachan-prayog* (vocal application) and *kaaya-prayog* (physical application). With these three types of applications living beings (souls) acquire *karmas*. In the same way these three types of applications should be mentioned in context of all five-sensed beings. Earth-bodied to plant-bodied beings (the five immobile beings) do that (acquire *karma* particles) through one application (physical). Two to four-sensed beings (*vikalendriyas*) have only two applications—vocal and physical. Thus they acquire *karmas* through these two applications. This way all beings acquires *karmas* through application and not naturally. That is why it is said... and so on up to... not naturally. In the same way acquisition (*upachaya*) of *karmas* through applications specific to the type of being... and so on up to... *Vaimaniks* should be mentioned.

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र में कर्मबन्ध की प्रक्रिया बताई है। कर्मवर्गणा के पुद्गल पूरे लोक में व्याप्त हैं और वे आत्म-प्रदेशों के साथ अनन्तावगाढ भी हैं, फिर भी जब तक आत्मा, मन, वचन तथा काययोग की प्रवृत्ति कर उन्हें ग्रहण नहीं करता, तब तक उनका बंधन नहीं होता। संसार के समस्त जीवों के कर्मपुद्गलों का उपचय प्रयोग-स्वप्रयत्न से होता है, स्वाभाविकरूप (काल, स्वभाव, नियति आदि) से नहीं। अगर ऐसा नहीं माना जायेगा तो सिद्ध जीव योगरहित हैं, उनके भी कर्मपुद्गलों का उपचय होने लगेगा, परन्तु यह सम्भव नहीं।

Elaboration—This aphorism details the process of bonding of *karmas*. The *karmic* particles (*karma vargana*) are spread all over the universe (*Lok*) and they have unending interaction with soul space-points in infinite numbers. However, as long as the soul does not acquire them by indulgence or actions through mental, vocal and physical instruments they do not get bonded. All the beings in the world acquire *karma* particles through such application and not naturally (time, nature, fate etc.). If this is not accepted, even *Siddhas* (the liberated souls) who are free of any association or application will also acquire *karma* particles, but that is not possible.

३. तृतीय द्वार : कर्मोपचय की सादि-सान्तता
THIRD PORT : ACQUISITION OF KARMA WITH BEGINNING AND END

६. [प्र.] वत्थस्स णं भंते ! पोग्गलोवचए किं सादीए सपज्जवसिए ? सादीए अपज्जवसिए ? अणादीए सपज्जवसिए ? अणादीए अपज्जवसिए ?

[उ.] गोयमा ! वत्थस्स णं पोग्गलोवचए सादीए सपज्जवसिए, नो सादीए अपज्जवसिए नो अणादीए सपज्जवसिए, नो अणादीए अपज्जवसिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. [प्र.] भगवन् ! वस्त्र में पुद्गलों का जो उपचय होता है–(१) क्या वह सादि–सान्त है, (२) सादि–अनन्त है, (३) अनादि–सान्त है, अथवा (४) अनादि–अनन्त है ?

[उ.] गौतम ! वस्त्र में पुद्गलों का जो उपचय होता है, वह सादि–सान्त होता है, किन्तु न तो वह सादि–अनन्त है, न अनादि–सान्त है और न अनादि–अनन्त होता है।

6. [Q.] *Bhante* ! Is the acquisition (*upachaya*) of matter particles by cloth—(1) with a beginning and with an end, (2) with a beginning and without an end, (3) without a beginning and with an end, or (4) without a beginning and without an end ?

[Ans.] Gautam ! The *upachaya* of matter particles by cloth—is with a beginning and with an end, and neither with a beginning and without an end, nor without a beginning and with an end, or without a beginning and without an end.

७. [प्र. १] जहा णं भंते ! वत्थस्स पोग्गलोवचए सादीए सपज्जवसिए, नो सादीए अपज्जवसिए, नो अणादीए सपज्जवसिए, नो अणादीए अपज्जवसिए तहा णं जीवाणं कम्मोवचए पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइयाणं जीवाणं कम्मोवचए साईए सपज्जवसिए, अत्थेगइयाणं अणाईए सपज्जवसिए, अत्थेगइयाणं अणाईए अपज्जवसिए, नो चेव णं जीवाणं कम्मोवचए सादीए अपज्जवसिए।

७. [प्र. १] हे भगवन् ! जिस प्रकार वस्त्र में पुद्गलोपचय सादि–सान्त है, किन्तु सादि–अनन्त, अनादि–सान्त और अनादि–अनन्त नहीं है, क्या उसी प्रकार जीवों का कर्मोपचय भी सादि–सान्त है, सादि–अनन्त है, अनादि–सान्त है, अथवा अनादि–अनन्त है ?

[उ.] गौतम ! कितने ही जीवों का कर्मोपचय (१) सादि–सान्त है, (२) कितने ही जीवों का कर्मोपचय अनादि–सान्त है, और (३) कितने ही जीवों का कर्मोपचय अनादि–अनन्त है, किन्तु (४) जीवों का कर्मोपचय सादि–अनन्त नहीं है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! The acquisition (*upachaya*) of matter particles by cloth is with a beginning and with an end, and neither with a beginning and without an end, nor without a beginning and with an end, or without a beginning and without an end; does the acquisition (*upachaya*) of *karmas* by living beings follow the same pattern ?

[Ans.] Gautam ! The acquisition (*upachaya*) of *karmas* (1) by some beings is with a beginning and with an end, (2) that by some beings is without a beginning and with an end, (3) that by some beings is without a beginning and without an end, (4) but for no being it is with a beginning and without an end.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! इरियावहियाबंधयस्स कम्मोवचए साईए सपज्जवसिए। भवसिद्धियस्स कम्मोवचए अणादीए सपज्जवसिए। अभवसिद्धियस्स कम्मोवचए अणाईए अपज्जवसिए। से तेणट्ठेणं।

[प्र. २] भगवन् ! यह किस कारण से कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! (१) ईर्यापथिक-बन्ध की अपेक्षा कर्मोपचय सादि-सान्त है, (२) भवसिद्धिक जीवों का कर्मोपचय अनादि-सान्त है, (३) अभवसिद्धिक जीवों का कर्मोपचय अनादि-अनन्त है। इसी कारण से, हे गौतम ! उपर्युक्त रूप से कहा गया है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! (1) In context of *Iryapathik-bandh* (bondage due to passionless association) acquisition (*upachaya*) of *karmas* is with a beginning and with an end, (2) Acquisition of *karmas* by beings destined to be liberated (*bhavasiddhik*) is without a beginning and with an end, (3) Acquisition of *karmas* by beings not destined to be liberated (*abhavasiddhik*) is without a beginning and without an end. That is why, Gautam ! The aforesaid statement.

विवेचन : ईर्यापथिक बन्ध का स्वरूप ? कर्मबन्ध के मुख्य दो कारण हैं (१) क्रोधादि कषाय, और (२) योग = मन-वचन-काया की प्रवृत्ति। जिन जीवों का कषाय सर्वथा उपशान्त या क्षीण नहीं हुआ है, उनको जो कर्मबन्ध होता है, वह सब **साम्परायिक** (काषायिक) कहलाता है, और जिन जीवों का कषाय सर्वथा उपशान्त या क्षीण हो चुका है, उनकी हलन-चलन आदि सारी प्रवृत्तियाँ यौगिक (मन, वचन, कायायोग से जनित) होती हैं। कषायरहित योगजन्य कर्म को ही **ईर्यापथिक** कर्म कहते हैं। उपशान्तमोह, क्षीणमोह और सयोगीकेवली को ईर्यापथिक कर्मबन्ध होता है। यह कर्म इस अवस्था से पहले नहीं बँधता, इस अवस्था की अपेक्षा से इस कर्म की आदि है, अतएव इसका **सादित्व** है, किन्तु सिद्ध अयोगी (आत्मा की अक्रिय) अवस्था में अथवा उपशमश्रेणी से गिरने पर इस कर्म का बन्ध नहीं होता, इस कर्म का अन्त हो जाता है, इस दृष्टि से इसका **सान्तत्व** है। भवसिद्धिक जीवों की अपेक्षा से कर्मोपचय **अनादि-सान्त** है। भव्यजीव को भव्यजीवों के सामूहिक दृष्टि से कर्मबन्ध की कोई आदि नहीं है प्रवाहरूप से उनके कर्मोपचय अनादि हैं, किन्तु एक न एक दिन वे कर्मों का सर्वथा अन्त करके सिद्धि (मुक्ति) प्राप्त करेंगे, इस अपेक्षा से उनका कर्मोपचय सान्त है।

अभवसिद्धिक अभव्य जीवों की अपेक्षा से कर्मोपचय अनादि-अनन्त है। जिनके कर्मों का कभी अन्त नहीं होगा, ऐसे अभव्य-जीवों के कर्मोपचय की प्रवाहरूप से न तो आदि है, और न अन्त है। चौथा भंग शून्य है। *(वृत्ति पत्रांक २५५)*

Elaboration—Karmic bondage—There are two basic causes of *karmic* bondage—(1) passions including anger and (2) association (*yoga*) or mental, vocal and physical indulgence. The *karmic* bondage of beings whose passions have not been completely pacified or destroyed is called *saamparayik* or *kashayik* (caused by passions). All activities and movements of living beings whose passions have been completely pacified

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

or destroyed are caused exclusively by association (*yoga*) or mental, vocal and physical indulgence. It is this *karmic* bondage caused by passionless actions that is called *Iryapathik-bandh*. This bondage is acquired only by an ascetic with *upashant-moha* (pacified deluding *karma*), *ksheen-moha* (destroyed deluding *karma*) and *Sayogi Kevali* (omniscient with association or action). This *karma* is not bound prior to attaining these states. Thus in context of this state this bondage has a beginning. However, this bondage stops either when the *Sayogi Kevali* rises to the level of *Ayogi Kevali* (omniscient without association or action) or when he falls from that level of pacification. In this context this state of bondage has an end. In context of beings destined to liberation (*bhavasiddhik*) the acquisition (*upachaya*) of *karmas* is without a beginning and with an end. In generic context or from collective standpoint there is no beginning of *karmic* bondage of the beings destined to liberation. In other words in terms of continuity their acquisition of *karmas* is without a beginning. But they are sure to attain liberation by ending all *karmas*, therefore their acquisition of *karmas* is with an end.

In context of beings not destined to liberation (*abhavasiddhik*) the acquisition of *karmas* is without a beginning and without an end. In terms of continuity the acquisition of *karmas* of beings not destined to liberation, there neither is a beginning nor an end. The fourth alternative is nonexistent. *(Vritti leaf 255)*

वस्त्र एवं जीवों की सादि-सान्तता **BEGINNING AND END OF CLOTH AND BEINGS**

८. [प्र.] वत्थे णं भंते ! किं सादीए सपज्जवसिए ? चतुभंगो।

[उ.] गोयमा ! वत्थे सादीए सपज्जवसिए, अवसेसा तिण्णि वि पडिसेहेयव्वा।

८. [प्र.] भगवन् ! क्या वस्त्र सादि-सान्त है ? इत्यादि पूर्वोक्त रूप से चार भंग करके प्रश्न करना चाहिए।

[उ.] गौतम ! वस्त्र सादि-सान्त है; शेष तीन भंगों का वस्त्र में निषेध करना चाहिए।

8. [Q.] *Bhante* ! Is cloth with a beginning and with an end ? Put up all aforesaid four question in this context.

[Ans.] Gautam ! Cloth is with a beginning and with an end. Remaining three questions should be answered in negative.

९. [प्र. १] जहा णं भंते ! वत्थे सादीए सपज्जवसिए० तहा णं जीवा किं सादीया सपज्जवसिया ? चतुभंगो, पुच्छा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] **गोयमा ! अत्थेगइया सादीया सपज्जवसिया चत्तारि वि भाणियव्वा।**

९. [प्र. १] भगवन् ! जैसे वस्त्र सादि--सान्त है, [किन्तु सादि- अनन्त नहीं है, अनादि--सान्त नहीं है और न अनादि–अनन्त है] वैसे जीवों के विषय में भी चारों भंगों को लेकर प्रश्न करना चाहिए–अर्थात् (भगवन् ! क्या जीव सादि–सान्त हैं, सादि–अनन्त हैं, अनादि–सान्त हैं अथवा अनादि--अनन्त हैं ?)

[उ.] गौतम ! कितने ही जीव सादि–सान्त हैं, [कितने ही जीव सादि–अनन्त हैं, कई जीव अनादि–सान्त हैं और कितनेक अनादि--अनन्त हैं] इस प्रकार जीव में चारों ही भंग कहने चाहिए।

9. [Q. 1] *Bhante* ! (As you have said) Cloth is with a beginning and with an end (but neither with a beginning and without an end, nor without a beginning and with an end, or without a beginning and without an end). In the same way are living beings (souls) with a beginning and with an end ? All the four aforesaid questions should be asked (are they with a beginning and without an end, without a beginning and with an end, and without a beginning and without an end ?)

[Ans.] Gautam ! Some beings are with a beginning and with an end. All the four answers should be given here (some are with a beginning and without an end, some are without a beginning and with an end, and some are without a beginning and without an end).

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] **गोयमा ! नेरइया तिरिक्खजोणिया मणुस्सा देव गइरागइं पडुच्च सादीया सपज्जवसिया। सिद्धा गइं पडुच्च सादीया अपज्जवसिया। भवसिद्धिया लद्धिं पडुच्च अणादीया सपज्जवसिया। अभवसिद्धिया संसारं पडुच्च अणादीया अपज्जवसिया भवंति। से तेणट्ठेणं।**

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक, तिर्यंचयोनिक, मनुष्य और देव, गति और आगति की अपेक्षा से सादि–सान्त हैं; सिद्धगति (एक सिद्ध जीव) की अपेक्षा से सिद्ध जीव सादि–अनन्त हैं; लब्धि की अपेक्षा (भव्यत्वलब्धि सिद्धि प्राप्ति तक रहती है अतः) भवसिद्धिक जीव अनादि–सान्त हैं, और संसार की अपेक्षा अभवसिद्धिक जीव अनादि–अनन्त हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Why it is so ?

[Ans.] Gautam ! With reference to birth and rebirth (*aagati* and *gati*) infernal beings, animals, human beings and divine beings are with a beginning and with an end. With reference to *Siddha gati* (state of perfection) a liberated soul is with a beginning and without an end. With reference to the quality (worthiness) the beings destined to be liberated (*bhavasiddhik jivas*) are without a beginning and with an end. With

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

reference to cycles of rebirth (*samsar*) beings not destined to liberation (*abhavasiddhik jivas*) are without a beginning and without an end).

४. चतुर्थ द्वार : अष्ट कर्मों की बन्धस्थिति

FOURTH PORT : DURATION OF BONDAGE OF EIGHT KARMAS

१०. [प्र.] कइ णं भंते ! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ, तं जहा–णाणावरणिज्जं, दंसणावरणिज्जं जाव अंतराइयं।

१०. [प्र.] भगवन् ! कर्मप्रकृतियाँ कितनी हैं ?

[उ.] गौतम ! कर्मप्रकृतियाँ आठ हैं, यथा–ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय यावत् अन्तराय।

10. [Q.] *Bhante* ! How many are *karma prakritis* (species of *karma*) ?

[Ans.] Gautam ! There are eight species of *karma*—*Jnanavaraniya* (knowledge obscuring), *Darshanavaraniya* (perception obscuring)... and so on up to... *Antaraya* (energy hindering).

११. [प्र. १] नाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स केवइयं कालं बंधठिती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ, तिण्णि य वाससहस्साइं अबाहा, अबाहूणिया कम्मठिइ कम्मनिसेओ।

[२] एवं दरिसणावरणिज्जं पि।

[३] वेदणिज्जं जहण्णेणं दो समया, उक्कोसेणं जहा नाणावरणिज्जं।

[४] मोहणिज्जं जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं सत्तरि सागरोवमकोडाकोडीओ, सत्त य वाससहस्साणि अबाधा, अबाहूणिया कम्मठिई कम्मनिसेओ।

[५] आउगं जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाणि पुव्वकोडि–तिभागमब्भहियाणि, कम्मट्ठिइ कम्मनिसेओ।

[६] नाम–गोयाणं जहन्नेणं अट्ठ मुहुत्ता, उक्कोसेणं वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ, दोण्णि य वाससहस्साणि अबाहा, अबाहूणिया कम्मट्ठिइ कम्मनिसेओ।

[७] अंतरायं जहा नाणावरणिज्जं।

११. [प्र. १] भगवन् ! (१) ज्ञानावरणीय कर्म की बन्धस्थिति कितने काल की है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म की बन्धस्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त और उत्कृष्ट तीस क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम की है। उसका अबाधाकाल तीन हजार वर्ष का है। अबाधाकाल जितनी स्थिति को कम करने से शेष कर्मस्थिति–कर्मनिषेककाल जानना चाहिए।

[२] इसी प्रकार दर्शनावरणीय कर्म के विषय में भी जानना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[३] **वेदनीय** कर्म की जघन्य (बन्ध–) स्थिति दो समय की है, उत्कृष्ट स्थिति ज्ञानावरणीय कर्म के समान तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम की जाननी चाहिए।

[४] **मोहनीय कर्म** की बन्धस्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट ७० क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम की है। सात हजार वर्ष का अबाधाकाल है। अबाधाकाल की स्थिति को कम करने से शेष कर्म–स्थिति–कर्मनिषेककाल जानना चाहिए।

[५] **आयुष्य कर्म** की बन्धस्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट पूर्वकोटि के त्रिभाग से अधिक तैतीस सागरोपम की है। इसका कर्मनिषेक काल (तैतीस सागरोपम का तथा शेष) अबाधाकाल जानना चाहिए।

[६] **नाम कर्म** और **गोत्र कर्म** की बन्धस्थिति जघन्य आठ मुहूर्त्त की और उत्कृष्ट २० क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम की है। इसका दो हजार वर्ष का अबाधाकाल है। अबाधाकाल की स्थिति को कम करने से शेष कर्मस्थिति–कर्मनिषेककाल होता है।

[७] **अन्तराय** कर्म के विषय में ज्ञानावरणीय कर्म की तरह (बन्धस्थिति आदि) समझ लेना चाहिए।

11. **[Q. 1]** *Bhante* ! What is the duration of bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ?

[Ans.] Gautam ! The minimum duration of bondage of *Jnanavaraniya karma* is *Antar-muhurt* (slightly less than 48 minutes) and maximum is thirty *Kodakodi Sagaropam* (a metaphoric unit of time). The duration of its dormant state (*abaadha kaal*) is three thousand years. Subtracting the dormant period from the total gives the *karma-nishek kaal* (duration of experience or effective duration).

[2] Same is true for *Darshanavaraniya* (perception obscuring) *karma*.

[3] The minimum duration of bondage of *Vedaniya karma* (*karma* responsible for mundane experience of pain and pleasure) is two *Samaya* (ultimate fractional unit of time) and maximum is thirty *Kodakodi Sagaropam* (a metaphoric unit of time) like *Jnanavaraniya karma*.

[4] The minimum duration of bondage of *Mohaniya* (deluding) *karma* is *Antar-muhurt* (slightly less than 48 minutes) and maximum is seventy *Kodakodi Sagaropam* (a metaphoric unit of time). The duration of its dormant state (*abaadha kaal*) is seven thousand years. Subtracting the dormant period from the total gives the *karma-nishek kaal* (duration of experience or effective duration).

[5] The minimum duration of bondage of *Ayushya* (life-span determining) *karma* is *Antar-muhurt* (slightly less than 48 minutes) and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

maximum is a third of *Purva-koti* added to thirty three *Sagaropam* (a metaphoric unit of time). Its *karma-nishek kaal* (effective duration) is (thirty three *Sagaropam*) and the remaining is the duration of its dormant state (*abaadha kaal*).

[6] The minimum duration of bondage of *Naam* (form determining) and *Gotra* (status determining) *karmas* is eight *Antar-muhurts* and maximum is twenty *Kodakodi Sagaropam* (a metaphoric unit of time). The duration of their dormant state is two thousand years. Subtracting the dormant period from the total gives the *karma-nishek kaal* (effective duration).

[7] What has been stated about *Jnanavaraniya karma* should be repeated for *Antaraya* (energy hindering) *karma*.

विवेचन : चतुर्थद्वार–**बन्धस्थिति**–कर्मबन्ध होने के बाद वह जितने काल तक रहता है, उसे **बन्धस्थिति** कहते हैं। **अबाधाकाल**–कर्म का उदय न होना 'अबाधा' कहलाता है। जिस समय कर्म का बंध हुआ उस समय से लेकर जब तक उस कर्म का उदय नहीं होता, तब तक के काल को अबाधाकाल कहते हैं। **कर्मस्थिति–कर्मनिषेक काल** : कर्म का वेदन काल–भोगने का काल **कर्मनिषेक काल** है। प्रत्येक कर्म बँधने के पश्चात् उस कर्म के उदय में आने पर अर्थात् उस कर्म का अबाधाकाल पूरा होने पर कर्म को वेदन करने के प्रथम समय से लेकर बँधे हुए कर्मदलिकों में से भोगने योग्य कर्मदलिकों की एक प्रकार की रचना होती है उसे **कर्मनिषेक** कहते हैं। प्रथम समय में बहुत अधिक कर्मनिषेक होता है, द्वितीय–तृतीय समय में उत्तरोत्तर विशेष हीन होता जाता है। निषेक तब तक होता रहता है, जब तक वह बँधा हुआ कर्म आत्मा के साथ बँधा रहता है।

कर्म की स्थिति : दो प्रकार की–एक तो, कर्म के रूप में रहना, और दूसरे, अनुभव, (वेदन) योग्य कर्म रूप में रहना। कर्म जब से अनुभव (वेदन) में आता है, उस समय की स्थिति को अनुभव योग्य कर्मस्थिति जानना। अर्थात्–कर्म की कुल स्थिति में से अनुदय का काल (अबाधाकाल) बाद करने पर जो स्थिति शेष रहती है,उसे अनुभव योग्य कर्मस्थिति समझना चाहिए। कर्म की स्थिति जितने क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम की होती है, उतने सौ वर्ष तक वह कर्म, अनुभव (वेदन) में आये बिना आत्मा के साथ अकिंचित्कर (अप्रभावी अनुदय अवस्था में) रहता है। जैसे–मोहनीय कर्म की ७० क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम की उत्कृष्ट स्थिति है, उसमें से ७० सौ (७,०००) वर्ष तक तो वह कर्म यों ही आकिंचित्कर पड़ा रहता है। वही कर्म का अबाधाकाल है। उसके पश्चात् वह मोहनीय कर्म उदय में आता है,तो ७ हजार वर्ष कम ७० क्रोड़ीक्रोड़ी सागरोपम तक अपना फल भुगताता रहता है, उस काल को कर्म निषेककाल कहते हैं।

वेदनीय कर्म की स्थिति–जिस वेदनीय कर्म के बन्ध में कषाय कारण नहीं होता, केवल योग निमित्त होते हैं, वह वेदनीय कर्म बन्ध की अपेक्षा दो समय की स्थिति वाला है। वह प्रथम समय में बँधता है, दूसरे समय में वेदा जाता है; किन्तु सकषाय बन्ध की स्थिति की अपेक्षा वेदनीय कर्म की जघन्य स्थिति १२ मुहूर्त्त की होती है। *(पंचसंग्रह, गा. ३१–३२, पृष्ठ १७६ (द्वार ५ से १९)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

संख्या	कर्म	जघन्य स्थिति	उत्कृष्ट स्थिति	अबाधाकाल	निषेककाल
१.	ज्ञानावरणीय	अन्तर्मुहूर्त्त	३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर	३ हजार वर्ष	३ हजार वर्ष न्यून ३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर
२.	दर्शनावरणीय	अन्तर्मुहूर्त्त	३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर	३ हजार वर्ष	३ हजार वर्ष न्यून ३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर
३.	वेदनीय	२ समय	३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर	३ हजार वर्ष	३ हजार वर्ष न्यून ३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर
४.	मोहनीय	अन्तर्मुहूर्त्त	७० क्रोड़ाक्रोड़ सागर	७ हजार वर्ष	७ हजार वर्ष न्यून ७० क्रोड़ाक्रोड़ सागर
५.	आयुष्य	अन्तर्मुहूर्त्त	३३ सागर १/३ पूर्वकोटि अधिक	-	३३ सागर
६.	नाम	८ मुहूर्त्त	२० क्रोड़ाक्रोड़ सागर	२ हजार वर्ष	२ हजार वर्ष न्यून २० क्रोड़ाक्रोड़ सागर
७.	गोत्र	८ मुहूर्त्त	२० क्रोड़ाक्रोड़ सागर	२ हजार वर्ष	२ हजार वर्ष न्यून २० क्रोड़ाक्रोड़ सागर
८.	अन्तराय	अन्तर्मुहूर्त्त	३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर	३ हजार वर्ष	३ हजार वर्ष न्यून ३० क्रोड़ाक्रोड़ सागर

Elaboration—Duration of bondage of karmas—The duration of existence of a *karma* after bonding is called *bandh-sthiti* (duration of bondage). *Abaadha kaal*—the duration for which a *karma* does not come to fruition is called *abaadha kaal* (duration of dormant state). The lapse of time from the moment of bonding to the moment of fruition is this duration of dormant state. *Karma-nishek kaal*—the duration of experiencing the fruits of *karmas* is called *karma-nishek kaal*. After bonding of each type of *karma* when its dormant state transforms to state of fruition, the clusters (*dalik*) of *karma* particles undergo a special configuration of fruition. This configuration is called *karma-nishek*. At the first *Samaya* maximum clusters of *karmas* come to fruition and every passing *Samaya* this number continues to reduce. This process of *nishek* continues as long as *karma* remains bonded with the soul.

The duration of bondage has two divisions. First is to remain as dormant *karma* and second is to turn into experience causing *karma*. When *karma* comes to fruition the duration of experience commences. This means that when the duration of dormant state is subtracted from the total duration of bondage we get the duration of experience of *karma*. The formula for this is that when we turn the number of units of total duration from *Kodakodi Sagaropam* to hundred years it gives the duration of the dormant state. For example the maximum duration of the *Mohaniya karma* is 70 *Kodakodi Sagaropam*. Out of this 70 hundred years (7000 years) is the duration of dormant state. This is called the *abaadha kaal* (dormant state) of that *karma*. When this period ends *Mohaniya karma* comes to fruition and continues to cause experience for

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7000 years less 70 *Kodakodi Sagaropam*. This period is called *karma-nishek kaal*.

Duration of Vedaniya karma—When passions are not the cause of bondage of *Vedaniya karma* and they are bonded exclusively due to association (*yoga*) its duration is only two *Samayas*. It is bound in the first *Samaya* and experienced in the second *Samaya*. But the minimum duration of the bondage of *Vedaniya karma* caused by passions is 12 *Muhurts*. *(Panch-samgraha, verses 31, 32, p. 176, Dvar 5 to 19)*

Sr. No.	Karma	Minimum Duration	Maximum Duration	Dormant Period	Active Period
1.	Jnanavaraniya	Antarmuhurt	30 Kodakodi Sagar	3000 years	3000 years less 30 Kodakodi Sagar
2.	Darshanavaraniya	Antarmuhurt	30 Kodakodi Sagar	3000 years	3000 years less 30 Kodakodi Sagar
3.	Vedaniya	2 Samaya	30 Kodakodi Sagar	3000 years	3000 years less 30 Kodakodi Sagar
4.	Mohaniya	Antarmuhurt	70 Kodakodi Sagar	7000 years	7000 years less 30 Kodakodi Sagar
5.	Ayushya	Antarmuhurt	33 Sagar + 1/3 Purvakoti	—	33 Sagar
6.	Naam	8 Muhurt	20 Kodakodi Sagar	2000 years	2000 years less 20 Kodakodi Sagar
7.	Gotra	8 Muhurt	20 Kodakodi Sagar	2000 years	2000 years less 20 Kodakodi Sagar
8.	Antaraya	Antarmuhurt	30 Kodakodi Sagar	3000 years	3000 years less 30 Kodakodi Sagar

५. *स्त्री द्वार* **FIFTH PORT : STREE (FEMALE)**

१२. [प्र. १] नाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं इत्थी बंधति, पुरिसो बंधति, नपुंसओ बंधति, णोइत्थी–नोपुरिसो–नोनपुंसओ बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! इत्थी वि बंधइ, पुरिसो वि बंधइ, नपुंसओ वि बंधइ, नोइत्थी–नोपुरिसो–नोनपुंसओ सिय बंधइ, सिय नो बंधइ।

[२] एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्मप्पगडीओ।

१२. [प्र. १] 'भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या स्त्री बाँधती है ? पुरुष बाँधता है, अथवा नपुंसक बाँधता है ? अथवा नोस्त्री–नोपुरुष–नोनपुंसक (उपशान्त मोह आदि गुणस्थानवर्ती वेदोदय मुक्त आत्मा जो न स्त्री, न पुरुष या नपुंसक न हो) बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म को स्त्री भी बाँधती है, पुरुष भी बाँधता है और नपुंसक भी बाँधता है, परन्तु जो नोस्त्री–नोपुरुष–नोनपुंसक होता है, वह कदाचित् बाँधता है, कदाचित् नहीं बाँधता।

[२] इसी प्रकार आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष सातों कर्मप्रकृतियों के विषय में समझना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12. [Q. 1] *Bhante* ! Does a female (*stree*) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does a male (*purush*) acquire that ? Does a neuter (*napumsak*) acquire that ? Or does a non-female (no-*stree*), non-male (no-*purush*) or non-neuter (no-*napumsak*) (having attained higher levels of purity or *Gunasthan* including *Upashant Moha*, a soul that is free of gender) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! A female acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and so does a male as well as a neuter. However, a non-female, non-male or non-neuter sometimes acquires and sometimes does not.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Ayushya karma*.

१३. [प्र.] आउगं णं भंते ! कम्मं किं इत्थी बंधइ, पुरिसो बंधइ, नपुंसओ बंधइ ?० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! इत्थी सिय बंधइ, सिय नो बंधइ, एवं तिण्णि वि भाणियव्वा। नोइत्थी–नोपुरिसो–नोनपुंसओ न बंधइ।

१३. [प्र.] भगवन् ! आयुष्य कर्म को क्या स्त्री बाँधती है, पुरुष बाँधता है, नपुंसक बाँधता है अथवा नोस्त्री–नोपुरुष–नोनपुंसक बाँधता है ?

[उ.] 'गौतम ! आयुष्य कर्म स्त्री कदाचित् बाँधती है और कदाचित् नहीं बाँधती। इसी प्रकार पुरुष और नपुंसक के विषय में भी कहना चाहिए। नोस्त्री–नोपुरुष–नोनपुंसक आयुष्य कर्म का बंध नहीं करता। (यह अवेद अवस्था है। अवेद जीव आयुष्य कर्म का बंध नहीं करता)

13. [Q.] *Bhante* ! Does a female acquire bondage of *Ayushya* (life-span determining) *karma* ? Does a male acquire that ? Does a neuter acquire that ? Or does a non-female, non-male or non-neuter acquire that ?

[Ans.] Gautam ! A female sometimes acquires bondage of *Ayushya karma* and sometimes does not. Same is true for a male as well as a neuter. However, a non-female, non-male or non-neuter does not (a non-genderic or gender transcendent being does not acquire bondage of *Ayushya karma*).

६. *संयत द्वार* SIXTH PORT : SAMYAT (RESTRAINED)

१४. [प्र. १] णाणवरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं संजए बंधइ, असंजते बंधइ, संजयासंजए बंधइ, नोसंजए–नोअसंजए–नोसंजयासंजए बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! संजए सिय बंधइ सिय नो बंधति, असंजए बंधइ, संजयासंजए वि बंधइ, नोसंजए–नोअसंजए नोसंजयासंजए न बंधइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] एवं आउगवज्जाओ सत्त वि।

[३] आउगे हेट्ठिल्ला तिण्णि भयणाए, उवरिल्ले णं बंधइ।

१४. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या संयत बाँधता है, असंयत बाँधता है, संयतासंयत बाँधता है और नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! (ज्ञानावरणीय कर्म को) संयत कदाचित् बाँधता है और कदाचित् नहीं बाँधता, किन्तु असंयत बाँधता है, संयतासंयत भी बाँधता है, परन्तु नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत (सिद्ध आत्मा) नहीं बाँधता।

[२] इस प्रकार आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष सातों कर्मप्रकृतियों के विषय में समझना चाहिए।

[३] आयुष्य कर्म के सम्बन्ध में नीचे के तीन-संयत, असंयत और संयतासंयत के लिए भजना समझनी चाहिए। (अर्थात्-कदाचित् बाँधते हैं और कदाचित् नहीं बाँधते) नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत (सिद्ध) आयुष्य कर्म को नहीं बाँधते।

14. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *samyat* (the restrained) acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* ? Does an *asamyat* (the unrestrained) acquire that ? Does a *samyat-asamyat* (the restrained-un-restrained) acquire that ? Or does a *no-samyat*, *no-asamyat* and *no-samyatasamyat* (the non-restrained, non-unrestrained and non-restrained-unrestrained) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! A *samyat* sometimes acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes does not. But an *asamyat* as well as a *samyat-asamyat* acquires that. However, *no-samyat*, *no-asamyat* and *no-samyat-asamyat* (a *Siddha*) does not.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Ayushya karma*.

[3] Regarding *Ayushya karma*, the first three *i. e. samyat* (the restrained), *asamyat* (the non-restrained) and *samyat-asamyat* (the restrained-un-restrained) sometimes acquire bondage and sometimes not. The last three *i. e. no-samyat*, *no-asamyat* and *no-samyat-asamyat* (a *Siddha*) do not acquire that.

७. सम्यग्दृष्टि द्वार SEVENTH PORT : SAMYAGDRISHTI (RIGHTEOUS)

१५. [प्र. १] णाणावरणिज्जं णं भंते ! कम्मं किं सम्मदिट्ठी बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! सम्मदिट्ठी सिय बंधइ सिय नो बंधइ, मिच्छदिट्ठी बंधइ, सम्मामिच्छदिट्ठी बंधइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] एवं आउयवज्जाओ सत्त वि।

[३] आउए हेट्ठिल्ला दो भयणाए, सम्मामिच्छदिट्ठी न बंधइ।

१५. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या सम्यग्दृष्टि बाँधता है, मिथ्यादृष्टि बाँधता है अथवा सम्यग्-मिथ्यादृष्टि-बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! (ज्ञानावरणीय कर्म को) सम्यग्दृष्टि कदाचित् बाँधता है, कदाचित् (वीतराग अवस्था में) नहीं बाँधता, मिथ्यादृष्टि बाँधता है और सम्यग्-मिथ्यादृष्टि भी बाँधता है।

[२] इसी प्रकार आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष सातों कर्मप्रकृतियों के विषय में समझना चाहिए।

[३] आयुष्य कर्म को नीचे के दो-सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि-भजना से बाँधते हैं (अर्थात्-कदाचित् बाँधते हैं, कदाचित् नहीं बाँधते।) सम्यग्-मिथ्यादृष्टि (मिश्रदृष्टि अवस्था में) नहीं बाँधते।

15. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *samyakdrishti* (the righteous) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does a *mithyadrishti* (the unrighteous) acquire that ? Or does a *samyak-mithyadrishti* (the righteous-unrighteous) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! A *samyakdrishti* sometimes acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes (in the detached state of mind) does not. But a *mithyadrishti* as well as a *samyak-mithyadrishti* acquires that.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Ayushya karma*.

[3] Regarding *Ayushya karma*, the first two *i. e. samyakdrishti* (the righteous) and *mithyadrishti* (the unrighteous) sometimes acquire bondage and sometimes not. The *samyak-mithyadrishti* (the righteous-unrighteous) (in the mixed state) do not acquire that.

८. संज्ञी द्वार EIGHTH PORT : SANJNI (SENTIENT)

१६. [प्र. १] णाणावरणिज्जं किं सण्णी बंधइ, असण्णी बंधइं, नोसण्णी-नोअसण्णी बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! सण्णी सिय बंधइ सिय नो बंधइ, असण्णी बंधइ, नोसण्णी-नोअसण्णी न बंधइ।

[२] एवं वेयणिज्जाऽऽउगवज्जाओ छ कम्मप्पगडीओ। [३] वेयणिज्जं हेट्ठिल्ला दो बंधंति, उवरिल्ले भयणाए। आउगं हेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले न बंधइ।

१६. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म को क्या संज्ञी बाँधता है, असंज्ञी बाँधता है अथवा नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! (ज्ञानावरणीय कर्म को) संज्ञी कदाचित् बाँधता है, और कदाचित् (वीतराग की अपेक्षा) नहीं बाँधता। असंज्ञी बाँधता है, और नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी (सयोगीकेवली अयोगीकेवली तथा सिद्ध) नहीं बाँधता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] इस प्रकार वेदनीय और आयुष्य को छोड़कर शेष छह कर्मप्रकृतियों के विषय में कहना चाहिए। [३] वेदनीय कर्म को संज्ञी भी बाँधता है और असंज्ञी भी बाँधता है, किन्तु नोसंज्ञी नोअसंज्ञी कदाचित् बाँधता है और कदाचित् नहीं बाँधता। आयुष्य कर्म को नीचे के दो–संज्ञी और असंज्ञी जीव भजना से (कदाचित् बाँधते हैं, कदाचित् नहीं) बाँधते हैं। नोसंज्ञी–नोअसंज्ञी जीव आयुष्य कर्म को नहीं बाँधते।

16. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *sanjni* (the sentient) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does an *asanjni* (the non-sentient) acquire that ? Or does a *nosanjni-noasanjni* (the not sentient, not non-sentient) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! A *sanjni* sometimes acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes (in the detached state of mind) does not. An *asanjni* acquires that and a *nosanjni-noasanjni* does not (this is about *Sayogikevali* or omniscient with association, *Ayogikevali* or omniscient without association, and *Siddha*).

[2] The same is true for all six species of *karmas* except for *Vedaniya* and *Ayushya karmas*. **[3]** Regarding *Vedaniya karma*, the first two *i. e.* the sentient and the non-sentient acquire bondage. The *nosanjni-noasanjni* (the not sentient, not non-sentient) sometimes acquire and sometimes do not. As regards *Ayushya karma*, the first two *i. e. sanjni* and *asanjni* sometimes acquire bondage and sometimes not. The *nosanjni-noasanjni* (in the mixed state) does not acquire *Ayushya karma*.

९. *भवसिद्धिक द्वार* NINTH PORT : BHAVA SIDDHIK (WORTHY OF LIBERATION)

१७. [प्र. १] णाणावरणिज्जं कम्मं किं भवसिद्धीए बंधइ, अभवसिद्धीए बंधइ, नोभवसिद्धीए–नोअभवसिद्धीए बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! भवसिद्धीए भयणाए, अभवसिद्धीए बंधइ, नोभवसिद्धीए–नोअभवसिद्धीए ण बंधइ।

[२] एवं आउगवज्जाओ सत्त वि। [३] आउगं हेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्लो ण बंधइ।

१७. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म को क्या भवसिद्धिक बाँधता है, अभवसिद्धिक बाँधता है अथवा नोभवसिद्धिक–नोअभवसिद्धिक बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! (ज्ञानावरणीय कर्म को) भवसिद्धिक जीव भजना से (सराग भवसिद्धिक) कदाचित् (वीतराग) बाँधता है, कदाचित् नहीं बाँधता है। अभवसिद्धिक जीव बाँधता है और नोभवसिद्धिक–नोअभवसिद्धिक जीव (सिद्ध आत्मा) नहीं बाँधता।

[२] इस प्रकार आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों के विषय में कहना चाहिए। [३] आयुष्य कर्म को नीचे के दो (भवसिद्धिक–भव्य और अभवसिद्धिक–अभव्य) भजना से (कदाचित् बाँधते हैं, कदाचित् नहीं) बाँधते हैं। ऊपर का (नोभवसिद्धिक–नोअभवसिद्धिक) नहीं बाँधता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

17. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *bhavasiddhik* (the worthy of liberation) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does an *abhavasiddhik* (the non-worthy of liberation) acquire that ? Or does a *nobhavasiddhik-noabhavasiddhik* (the not worthy, not non-worthy) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! A *bhavasiddhik* sometimes acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* (when he has attachment) and sometimes (in the detached state of mind) does not. An *abhavasiddhik* acquires that and a *nobhavasiddhik-noabhavasiddhik* does not (this is about a *Siddha*).

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Ayushya karmas*. **[3]** As regards *Ayushya karma*, the first two *i. e. bhavasiddhik* (the worthy of liberation) and *abhavasiddhik* (the non-worthy of liberation) sometimes acquire bondage and sometimes not. The *nobhavasiddhik-noabhavasiddhik* (the not worthy, not non-worthy) (in the mixed state) does not acquire *Ayushya karma*.

१०. दर्शन द्वार TENTH PORT : DARSHAN (PERCEPTION)

१८. [प्र. १] णाणावरणिज्जं किं चक्खुदंसणी बंधति, अचक्खुदंसणी, ओहिदंसणी, केवलदंसणी ?

[उ.] गोयमा ! हेट्ठिल्ला तिण्णि भयणाए, उवरिल्ले णं बंधइ।

[२] एवं वेदणिज्जवज्जाओ सत्त वि। [३] वेदणिज्जं हेट्ठिल्ला तिण्णि बंधंति, केवलदंसणी भयणाए।

१८. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म को क्या चक्षुदर्शनी बाँधता है, अचक्षुदर्शनी बाँधता है, अवधिदर्शनी बाँधता है अथवा केवलदर्शनी बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! (ज्ञानावरणीय कर्म को) नीचे के तीन (चक्षु, अचक्षु और अवधिदर्शनी) भजना से बाँधते हैं किन्तु–केवलदर्शनी नहीं बाँधता।

[२] इसी प्रकार वेदनीय को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों के विषय में समझ लेना चाहिए। [३] वेदनीय कर्म को निचले तीन (चक्षु, अचक्षु और अवधिदर्शनी) बाँधते हैं, किन्तु केवलदर्शनी भजना से बाँधते हैं।

18. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *chakshudarshani* (one with visual perception) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does an *achakshudarshani* (one without visual perception) acquire that ? Does an *avadhidarshani* (one with extrasensory perception of the physical dimension) acquire that ? Or does a *Keval-darshani* (one with ultimate perception, that of an omniscient) acquire that ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! The first three (with visual, without visual and with *avadhi* perception) sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes do not. However, one with *Keval-darshan* does not acquire.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Vedaniya karma*. [3] As regards *Vedaniya karma*, the first three acquire the bondage but *Keval-darshani* sometimes acquires bondage and sometimes does not.

विवेचन : उक्त छह द्वारों में प्रतिपादित जीवों के कर्मबन्ध-अबन्ध-विषयक स्पष्टीकरण-

(५) **स्त्री द्वार**-स्त्री, पुरुष और नपुंसक तीनों ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधते हैं। जिस जीव के केवल स्त्री, पुरुष या नपुंसक का शरीर है, किन्तु वेद (कामविकार) का उदय नहीं होता, उसे **नोस्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसक** जीव कहते हैं। वह अनिवृत्तिबादर सम्परायादि गुणस्थानवर्ती होता है। इनमें से अनिवृत्तिबादर सम्पराय और सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थानवर्ती जीव ज्ञानावरणीय कर्म का बन्धक होता है, उपशान्तमोह से अयोगीकेवली गुणस्थानवर्ती (नोस्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसक) जीव ज्ञानावरणीय कर्म के अबन्धक होते हैं। इसीलिए कहा गया है-नोस्त्री-नोपुरुष-नोनपुंसक ज्ञानावरणीय कर्म को भजना (विकल्प) से बाँधता है। और यह (वेदरहित) जीव आयुष्य कर्म को तो बाँधता ही नहीं है, क्योंकि निवृत्तिबादर सम्पराय से लेकर अयोगीकेवली गुणस्थान तक में आयुष्यबन्ध का व्यवच्छेद हो जाता है। स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और नपुंसकवेदी जीव आयुष्य कर्म को एक भव में एक ही बार बाँधता है, वह भी आयुष्य का बन्धकाल होता है, तभी आयुष्य कर्म बाँधता है। जब आयुष्य बन्ध काल नहीं होता, तब आयुष्य नहीं बाँधता। इसलिए कहा गया है-ये तीनों प्रकार के जीव आयुष्य कर्म को कदाचित् बाँधते हैं, कदाचित् नहीं बाँधते।

(६) **संयत द्वार**-सामायिक, छेदोपस्थापनिक, परिहारविशुद्धि और सूक्ष्म सम्पराय, इन चार संयमों में रहने वाला संयत जीव ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधता है, किन्तु यथाख्यात संयमवर्ती संयत जीव उपशान्तमोहादि वाला होने से ज्ञानावरणीय कर्म को नहीं बाँधता; इसीलिए कहा गया है-संयत भजना से ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधता है, किन्तु असंयत (मिथ्यादृष्टि आदि जीव) और संयतासंयत (पंचम गुणस्थानवर्ती देशविरत) जीव, ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधते हैं। जबकि नोसयंत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत (अर्थात्-सिद्ध) जीव न तो ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं और न ही आयुष्यादि अन्य कर्म। संयत, असंयत और संयतासंयत, ये तीनों पूर्ववत् आयुष्य बन्धकाल में आयुष्य बाँधते हैं, अन्यथा नहीं बाँधते।

(७) **सम्यग्दृष्टि द्वार**-सम्यग्दृष्टि के दो भेद हैं-सराग सम्यग्दृष्टि और वीतराग सम्यग्दृष्टि। जो वीतराग सम्यग्दृष्टि हैं, वे ज्ञानावरणीय कर्म को नहीं बाँधते, जबकि सराग सम्यग्दृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधते हैं। इसीलिए कहा है-सम्यग्दृष्टि ज्ञानावरणीय कर्म कदाचित् बाँधता है, कदाचित् नहीं बाँधता। मिथ्यादृष्टि और मिश्रदृष्टि तो ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधते ही हैं। सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि जीव आयुष्य कर्म को कदाचित् बाँधते हैं, कदाचित् नहीं बाँधते; इस कथन का आशय यह है कि अपूर्वकरणादि सम्यग्दृष्टि जीव आयुष्य को नहीं बाँधते, जबकि इनसे भिन्न चतुर्थ आदि गुणस्थानों वाले सम्यग्दृष्टि तथा मिथ्यादृष्टि जीव पूर्ववत् आयुष्य बन्धकाल में आयुष्य को बाँधते हैं, दूसरे समय में नहीं बाँधते। सम्यग्-मिथ्यादृष्टि जीवों में (मिश्रदृष्टि अवस्था में) आयुष्य बाँधने के अध्यवसाय-स्थानों का अभाव होने से ये आयुष्य बाँधते ही नहीं हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(८) **संज्ञी द्वार**—मनःपर्याप्ति वाले जीवों को संज्ञी कहते हैं। वीतराग संज्ञी जीव ज्ञानावरणीय कर्म को नहीं बाँधते, जबकि सराग संज्ञी जीव बाँधते हैं, इसीलिए कहा है—संज्ञी जीव ज्ञानावरणीय कर्म को कदाचित् बाँधता है, कदाचित् नहीं बाँधता, किन्तु मनःपर्याप्ति से रहित असंज्ञी जीव ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधते ही हैं। नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी जीवों के तीन भेद होते हैं—सयोगीकेवली, अयोगीकेवली और सिद्ध भगवान, इनके ज्ञानावरणीय कर्म के बन्ध के कारण न होने से ज्ञानावरणीय कर्म नहीं बाँधते। अयोगीकेवली और सिद्ध भगवान के सिवाय शेष सभी संज्ञी जीव एवं असंज्ञी जीव वेदनीय कर्म को बाँधते हैं। पूर्वोक्त आशयानुसार संज्ञी और असंज्ञी, ये दोनों आयुष्य कर्म को भजना से बाँधते हैं। नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी जीव आयुष्य कर्म को बाँधते ही नहीं हैं।

(९) **भवसिद्धिक द्वार**—जो भवसिद्धिक वीतराग होते हैं, वे ज्ञानावरणीय कर्म नहीं बाँधते, किन्तु जो भवसिद्धिक सराग होते हैं, वे इस कर्म को बाँधते हैं, इसीलिए भवसिद्धिक जीव ज्ञानावरणीय कर्म को भजना से बाँधते हैं। अभवसिद्धिक तो ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते ही हैं, जबकि नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक (सिद्ध) जीव ज्ञानावरणीय कर्म एवं आयुष्य कर्मादि को नहीं बाँधते। भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक ये दोनों आयुष्य कर्म को पूर्वोक्त आशयानुसार कदाचित् बाँधते हैं, कदाचित् नहीं बाँधते।

(१०) **दर्शन द्वार**—चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी और अवधिदर्शनी, यदि छद्मस्थ वीतरागी हों तो ज्ञानावरणीय कर्म को नहीं बाँधते, क्योंकि वे केवल वेदनीय कर्म के बन्धक होते हैं। ये यदि सरागी-छद्मस्थ हों तो इसे बाँधते हैं। इसीलिए कहा गया है कि ये तीनों ज्ञानावरणीय कर्म को भजना से बाँधते हैं। भवस्थ केवलदर्शनी और सिद्ध केवलदर्शनी, इन दोनों के ज्ञानावरणीय कर्मबन्ध का हेतु न होने से, ये दोनों इसे नहीं बाँधते। चक्षुदर्शनी, अचक्षुदर्शनी और अवधिदर्शनी, छद्मस्थ वीतरागी और सरागी वेदनीय कर्म को बाँधते ही हैं। सयोगीकेवली भी वेदनीय कर्म बाँधते हैं, किन्तु अयोगीकेवली नहीं बाँधते।

Elaboration—Explanation regarding acquiring and not acquiring bondage of *karmas* enumerated in the aforesaid six ports of influx (*bandh dvar*)—

(5) Stree dvar—Female, male and neuter, all the three acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma*. An individual with the physical body of female, male or neuter but devoid of the feelings associated with the respective gender is called a *no-stree*, *no-purush* and *no-napumsak* being. This being belongs to the *Anivritti-baadar Samparaya* (9th level of purity) and higher *Gunasthans* (levels of spiritual ascendance or level of purity of soul). Of these, a being at *Anivritti-baadar Samparaya* (9th level of purity) and *Sukshma Samparaya* (10th level of purity) acquires bondage of *Jnanavaraniya karma*. Those at still higher levels *Upashanta Moha* (11th) to *Ayogi Kevali* (14th) (non-genderic or gender transcendent beings) do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. That is the reason for stating that non-genderic or gender transcendent beings sometimes acquire *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. Such beings never acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) because at the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Anivritti-baadar Samparaya (9th level of purity) to *Ayogi Kevali* (14th) *Gunasthans* there is total absence of this bondage. *Streevedi* (female), *purush-vedi* (male) and *napumsak-vedi* (neuter) beings acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) only once during one birth and that too only at the allotted time of this bondage. Other than the allotted time there is no bondage of *Ayushya karma*. That is why it is said that these three kinds of beings sometimes acquire bondage of *Ayushya karma* and sometimes not.

(6) Samyat dvar—A restrained being (*samyat jiva*) observing *Samayik Chaaritra* (equanimous conduct), *Chhedopasthapanik Chaaritra* (conduct of re-initiation after rectifying faults), *Parihar-vishuddhi Chaaritra* (destroying *karma* through special austerities) or *Sukshma samparaya Chaaritra* (discipline with residual subtle passions) acquires bondage of *Jnanavaraniya karma*. However, a restrained being observing *Yathakhyat chaaritra* (conduct conforming to perfect purity) does not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* because he has completely pacified fondness (*upashant moha*). That is why it is said that a restrained being sometimes acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. However, *asamyat* (unrestrained or unrighteous) and *samyatasamyat* (restrained-unrestrained or the partially detached one at the fifth *Gunasthan*) beings acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. The *no-samyat*, *no-asamyat* and *no-samyatasamyat* beings (*Siddhas*) do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* as well as *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) or any other *karma*. *Samyat, asamyat* and *samyatasamyat* beings acquire bondage of *Ayushya karma* only at the allotted time as aforesaid otherwise not.

(7) Samyagdrishti dvar—There are two kinds of *Samyagdrishti* (righteous)—*Saraag Samyagdrishti* (righteous with attachment) and *Vitaraag Samyagdrishti* (righteous without attachment). *Vitaraag Samyagdrishti* beings do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) whereas *Saraag Samyagdrishti* beings acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. That is why it is said that *Samyagdrishti* beings sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. The unrighteous and righteous-unrighteous (mixed) beings necessarily acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. The righteous and unrighteous beings sometimes acquire bondage of *Ayushya karma* and sometimes not. This means that beings at higher levels including *Apurvakaran* do not acquire bondage of *Ayushya karma*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

whereas righteous beings from fourth to seventh *Gunasthan* as well as the unrighteous beings acquire bondage of *Ayushya karma* only at the allotted time as aforesaid otherwise not. As regards righteous-unrighteous beings, they do not acquire bondage of *Ayushya karma* in absence of intent of effort.

(8) Sanjni dvar—A being endowed with fully developed mental faculty (*manah-paryapti*) is called *sanjni*. A detached *sanjni* (sentient) being does not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* whereas a sentient being with attachment acquires bondage of *Jnanavaraniya karma*. that is why it is said that sentient beings sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. However, non-sentient (*asanjni*) beings or those devoid of fully developed faculty of mind necessarily acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. No-*sanjni*-no-*asanjni* (not sentient, not non-sentient) beings have three categories—*Sayogi Kevali, Ayogi Kevali,* and *Siddha*. As they are above any cause of this bondage they do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*). Besides *Ayogi Kevali* and *Siddha* all other sentient and non-sentient beings acquire bondage of *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*). Sentient and non-sentient beings acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) in aforesaid manner. No-*sanjni*-no-*asanjni* do not acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*).

(9) Bhavasiddhik dvar—*Vitaraag Bhavasiddhik* (detached ones destined to be liberated) beings do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*) whereas *Saraag Bhavasiddhik* (destined to be liberated but having attachment) beings acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. That is why it is said that *Bhavasiddhik* (destined to be liberated) beings sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. *Abhavasiddhik* (not destined to be liberated) beings necessarily acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* whereas *nobhavasiddhik-noabhavasiddhik* beings (*Siddhas*) do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and other *karmas*. *Bhavasiddhik* and *abhavasiddhik* beings sometimes acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) in aforesaid manner and sometimes not.

(10) Darshan dvar—If a *chakshudarshani* (one with visual perception), *achakshudarshani* (one without visual perception) or

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

avadhidarshani (one with extrasensory perception of the physical dimension) is a *chhadmasth vitaraag* (one who is detached but short of omniscience due to residual *karmic* bondage), he does not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*). This is because they are capable of acquiring bondage of *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) alone. However if he is *saraagi chhadmasth* (one who is not detached but short of omniscience due to residual *karmic* bondage), he acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* . That is why it is said that these three sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* and sometimes not. *Bhavasth Keval-darshani* (a living omniscient) and *Siddha Keval-darshani* (a liberated omniscient) do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* because they are above any cause of such bondage. *Chakshudarshani, achakshudarshani, avadhidarshani, chhadmasth vitaraag* and *saraagi chhadmasth* acquire bondage of *Vedaniya karma. Sayogikevali* also acquires bondage of *Vedaniya karma* but *Ayogikevali* does not.

११. पर्याप्तक द्वार ELEVENTH PORT : PARYAPTAK (FULLY DEVELOPED)

१९. [प्र. १] णाणावरणिज्जं कम्मं किं पज्जत्तओ बंधइ, अपज्जत्तओ बंधइ, नोपज्जत्तए–नोअपज्जत्तए बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! पज्जत्तए भयणाए, अपज्जत्तए बंधइ, नोपज्जत्तए–नोअपज्जत्तए न बंधइ।

[२] एवं आउगवज्जाओ। [३] आउगं हेट्ठिल्ला दो भयणाए, उवरिल्ले णं बंधइ।

१९. [प्र. १] भगवन् ! क्या ज्ञानावरणीय कर्म को पर्याप्तक जीव बाँधता है, अपर्याप्तक जीव बाँधता है अथवा नोपर्याप्तक–नोअपर्याप्तक जीव बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! (ज्ञानावरणीय कर्म को) पर्याप्तक जीव भजना से बाँधता है; अपर्याप्तक जीव बाँधता है और नोपर्याप्तक–नोअपर्याप्तक (सिद्ध) जीव नहीं बाँधता।

[२] इस प्रकार आयुष्य कर्म के सिवाय शेष सात कर्मप्रकृतियों के विषय में कहना चाहिए। [३] आयुष्य कर्म को निचले दो (पर्याप्तक और अपर्याप्तक जीव) भजना से बाँधते हैं। नोपर्याप्त नहीं बाँधता।

19. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *paryaptak jiva* (fully developed being) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does an *aparyaptak jiva* (underdeveloped being) acquire that ? Or does a no-*paryaptak*-no-*aparyaptak jiva* (neither developed nor underdeveloped being; *Siddha*) acquire that ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! *Paryaptak jiva* (fully developed being) sometimes acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes does not. However, one with *Keval-darshan* does not acquire. *Aparyaptak jiva* (underdeveloped being) acquires that and *no-paryaptak-no-aparyaptak jiva* (neither developed nor underdeveloped being; *Siddha*) does not acquire.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Ayushya karma*. [3] As regards *Ayushya karma* (life-span determining *karma*), the first two sometimes acquire bondage and sometimes do not. The third does not acquire.

१२. भाषक द्वार TWELFTH PORT : BHASHAK (CAPABLE OF SPEECH)

२०. [प्र. १] नाणावरणिज्जं किं भासए बंधइ, अभासए बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! दो वि भयणाए।

[२] एवं वेयणिज्जवज्जाओ सत्त। [३] वेयणिज्जं भासए बंधइ, अभासए भयणाए।

२०. [प्र. १] भगवन् ! क्या ज्ञानावरणीय कर्म को भाषक जीव बाँधता है, या अभाषक जीव बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म को दोनों–भाषक और अभाषक भजना से बाँधते हैं।

[२] इसी प्रकार वेदनीय को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों के विषय में कहना चाहिए। [३] वेदनीय कर्म को भाषक जीव बाँधता है, अभाषक जीव भजना से बाँधता है।

20. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *bhashak jiva* (a being capable of speech) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Or does an *abhashak jiva* (a being not capable of speech) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! *Bhashak* (a being capable of speech) and *abhashak jiva* (a being not capable of speech) both sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes do not.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*). [3] As regards *Vedaniya karma, bhashak jiva* (a being capable of speech) acquires bondage and *abhashak jiva* (a being not capable of speech) sometimes acquires bondage and sometimes does not.

१३. परित्त द्वार THIRTEENTH PORT : PARITTA (LIMITED)

२१. [प्र. १] णाणावरणिज्जं किं परित्ते बंधइ, अपरित्ते बंधइ, नोपरित्ते–नोअपरित्ते बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! परित्ते भयणाए, अपरित्ते बंधइ, नोपरित्ते–नोअपरित्ते न बंधइ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] एवं आउगवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ। [३] आउए परित्तो वि, अपरित्तो वि भयणाए। नोपरित्तो–नोअपरित्तो न बंधइ।

२१. [प्र. १] भगवन् ! क्या परित्त जीव ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधता है, अपरित्त जीव बाँधता है, अथवा नोपरित्त–नोअपरित्त जीव बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! परित्त जीव ज्ञानावरणीय कर्म को भजना से बाँधता है, अपरित्त जीव बाँधता है और नोपरित्त–नोअपरित्त (सिद्ध) जीव नहीं बाँधता।

[२] इस प्रकार आयुष्यकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों के विषय में कहना चाहिए। [३] आयुष्यकर्म को परित्तजीव भी और अपरित्तजीव भी भजना से बाँधते हैं तथा नोअपरित्तजीव नहीं बाँधते।

21. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *paritta jiva* (limited in terms of body or cycles of birth) acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* ? Does an *aparitta jiva* (unlimited in terms of body or cycles of birth) acquire that ? Or does a *no-paritta-no-aparitta jiva* (neither limited nor unlimited; *Siddha*) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! *Paritta jiva* sometimes acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes does not. *Aparitta jiva* acquires that and *no-paritta-no-aparitta jiva* (*Siddha*) does not acquire.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Ayushya karma*. **[3]** As regards *Ayushya karma, Paritta jiva* and *Aparitta* both sometimes acquire bondage and sometimes do not. *No-paritta-no-aparitta jiva* does not acquire.

१४. *नाणद्वार* FOURTEENTH PORT : JNANA (KNOWLEDGE)

२२. [प्र. १] णाणावरणिज्जं कम्मं किं आभिणिबोहियनाणी बंधइ, सुयनाणी०, ओहिनाणी०, मणपज्जवनाणी०, केवलनाणी बंधइ० ?

[उ.] गोयमा ! हेट्ठिल्ला चत्तारि भयणाए, केवलनाणी न बंधइ।

[२] एवं वेदणिज्जवज्जाओ सत्त वि। [३] वेदणिज्जं हेट्ठिल्ला चत्तारि बंधंति, केवलनाणी भयणाए।

२२. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म क्या आभिनिबोधिक (मति) ज्ञानी बाँधता है, श्रुतज्ञानी बाँधता है, अवधिज्ञानी बाँधता है, मनःपर्यवज्ञानी बाँधता है अथवा केवलज्ञानी बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म को निचले चार (आभिनिबोधिकज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी और मनःपर्यवज्ञानी) भजना से बाँधते हैं; केवलज्ञानी नहीं बाँधता।

[२] इसी प्रकार वेदनीय को छोड़कर शेष सातों कर्म–प्रकृतियों के विषय में समझ लेना चाहिए। [३] वेदनीय कर्म को निचले चारों बाँधते हैं; केवलज्ञानी भजना से बाँधता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

22. [Q. 1] *Bhante* ! Does an *abhinibodhik jnani* (*mati-jnani* or one having sensory knowledge) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does a *shrut jnani* or *avadhi jnani* or *manahparyav jnani* or *Keval jnani* (one endowed with scriptural knowledge, extrasensory perception of the physical dimension, extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings or ultimate perfect knowledge) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! The first four (*mati jnani, shrut jnani, avadhi jnani* and *manahparyav jnani*) sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes do not. However, *Keval jnani* does not acquire.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*). **[3]** As regards *Vedaniya karma*, the first four do not acquire bondage, *Keval-jnani* sometimes acquires bondage and sometimes does not.

२३. [प्र.] णाणावरणिज्जं किं मतिअण्णाणी बंधइ, सुयनाणी अण्णाणी विभंगनाणी बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! आउगवज्जाओ सत्त वि बंधंति। आउगं भयणाए।

२३. [प्र.] भगवन् ! क्या ज्ञानावरणीय कर्म को मति–अज्ञानी बाँधता है, श्रुत–अज्ञानी बाँधता है या विभंगज्ञानी बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष सातों कर्मप्रकृतियों को ये उक्त तीनों बाँधते हैं। आयुष्य कर्म को ये तीनों कदाचित् नहीं बाँधते।

23. [Q.] *Bhante* ! Does a *mati-ajnani* (one not having sensory knowledge) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does a *shrut ajnani* (one not endowed with scriptural knowledge) or a *vibhang jnani* (one endowed with pervert knowledge) acquire that ?

[Ans.] All these three acquire bondage of all the seven species of *karmas* excepting for *Ayushya karma*. They sometimes acquire bondage of *Ayushya karma* and sometimes not.

१५. *योग द्वार* FIFTEENTH PORT : YOGA (ASSOCIATION)

२४. [प्र. १] णाणावरणिज्जं किं मणजोगी बंधइ, वय जोगी; काय जोगी, अजोगी बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! हेट्ठिल्ला तिण्णि भयणाए, अजोगी न बंधइ।

[२] एवं वेदणिज्जवज्जाओ। [३] वेदणिज्जं हेट्ठिल्ला बंधंति, अजोगी न बंधइ।

२४. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म को क्या मनोयोगी बाँधता है, वचनयोगी बाँधता है, काययोगी बाँधता है, या अयोगी बाँधता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म को निचले तीन–(मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी) भजना से बाँधते हैं; अयोगी नहीं बाँधता।

[२] इसी प्रकार वेदनीय को छोड़कर शेष सातों कर्मप्रकृतियों के विषय में कहना चाहिए। [३] वेदनीय कर्म को मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी बाँधते हैं; अयोगी नहीं बाँधता।

24. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *manoyogi* (one having mental association) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Does a *vachan-yogi* or *kaaya yogi* or *ayogi* (one having vocal association, or physical association or no association) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! The first three (*mano yogi, vachan-yogi* and *kaaya yogi*) sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes do not. However, *ayogi* does not acquire.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Vedaniya karma*. **[3]** As regards *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*), the first three acquire bondage and *ayogi* does not.

१६. *उपयोग द्वार* SIXTEENTH PORT : UPAYOG (INVOLVEMENT)

२५. [प्र.] णाणावरणिज्जं किं सागारोवउत्ते बंधइ, अणागारोवउत्ते बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठसु वि भयणाए।

२५. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय (आदि अष्टविध) कर्म को क्या साकारोपयोग वाला बाँधता है या अनाकारोपयोग वाला बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! (दोनों प्रकार के जीव) आठों कर्मप्रकृतियों को भजना से बाँधते हैं।

25. [Q.] *Bhante* ! Does one with *saakaar upayoga* (cognitive involvement) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Or does one with *anaakaar upayoga* (perceptive involvement acquire that ?

[Ans.] Gautam ! Both these types of beings sometimes acquire bondage of all the eight species of *karma* and sometimes do not.

१७. *आहारक द्वार* SEVENTEENTH PORT : AHAARAK (HAVING INTAKE)

२६. [प्र. १] णाणावरणिज्जं किं आहारए बंधइ, अणाहारए बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! दो वि भयणाए।

[२] एवं वेदणिज्ज–आउगवज्जाणं छण्हं। [३] वेदणिज्जं आहारए बंधति, अणाहारए भयणाए। आउगं आहारए भयणाए, अणाहारए न बंधति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२६. [प्र. १] भगवन् ! क्या ज्ञानावरणीय कर्म आहारक जीव बाँधता है या अनाहारक जीव बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म को आहारक और अनाहारक, दोनों प्रकार के जीव, कदाचित् बाँधते हैं और कदाचित् नहीं बाँधते।

[२] इसी प्रकार वेदनीय और आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष छहों कर्मप्रकृतियों के विषय में समझ लेना चाहिए। [३] आहारक जीव वेदनीय कर्म को बाँधता है, अनाहारक भजना से बाँधता है। (इसी प्रकार) आयुष्य कर्म को आहारक भजना से बाँधता है, अनाहारक नहीं बाँधता।

26. [Q. 1] *Bhante* ! Does an *ahaarak jiva* (a being capable of intake) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Or does an *anahaarak jiva* (a being not capable of intake) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! Both *ahaarak jiva* and *anahaarak jiva* sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes do not.

[2] The same is true for all six species of *karmas* except for *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) and *Ayushya karma* (life-span determining *karma*). **[3]** As regards *Vedaniya karma, ahaarak jiva* acquires bondage and *anahaarak jiva* sometimes acquires bondage and sometimes not. As regards *Ayushya karma, ahaarak jiva* sometimes acquires bondage and sometimes not, and *anahaarak jiva* does not.

१८. सूक्ष्म द्वार EIGHTEENTH PORT : SUKSHMA (MINUTE)

२७. [प्र. १] णाणावरणिज्जं किं सुहुमे बंधइ, बादरे बंधइ, नोसुहुमे–नोबादरे बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! सुहुमे बंधइ, बादरे भयणाए, नोसुहुमे–नोबादरे न बंधइ।

[२] एवं आउगवज्जाओ सत्त वि। [३] आउए सुहुमे, बादरे भयणाए, नोसुहुमे–नोबादरे ण बंधइ।

२७. [प्र. १] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म को क्या सूक्ष्म जीव बाँधता है, बादर जीव बाँधता है, अथवा नोसूक्ष्म–नोबादर जीव बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! ज्ञानावरणीय कर्म को सूक्ष्म जीव बाँधता है, बादर जीव भजना से बाँधता है, किन्तु नोसूक्ष्म–नोबादर (सिद्ध) जीव नहीं बाँधता।

[२] इसी प्रकार आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष सातों कर्मप्रकृतियों के विषय में कहना चाहिए। [३] आयुष्य कर्म को सूक्ष्म और बादर जीव भजना से बाँधते हैं, नोबादर जीव नहीं बाँधता।

27. [Q. 1] Bhante ! Does a *sukshma jiva* (minute being) acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* ? Does a *baadar jiva* (gross being) acquire that ? Or does a *no-sukshma-no-baadar jiva* (neither minute nor gross; *Siddha*) acquire that ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! *Sukshma jiva* acquires bondage of *Jnanavaraniya karma*. *Baadar jiva* sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. And *no-sukshma-no-baadar jiva* (*Siddha*) does not acquire.

[2] The same is true for all seven species of *karmas* except for *Ayushya karma*. [3] As regards *Ayushya karma*, *Sukshma jiva* and *Baadar* both sometimes acquire bondage and sometimes do not. *No-sukshma-no-baadar jiva* does not acquire.

१९. चरम द्वार NINETEENTH PORT : CHARAM (FINAL)

२८. [प्र.] णाणावरणिज्जं किं चरिमे बंधइ, अचरिमे बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ वि भयणाए।

२८. [प्र.] भगवन् ! क्या ज्ञानावरणीय (आदि अष्टविध) कर्म को चरम जीव बाँधता है, अथवा अचरम जीव बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! चरम और अचरम; दोनों प्रकार के जीव, आठों कर्मप्रकृतियों को कदाचित् बाँधते हैं, (भवान्तकर्ता केवली की अपेक्षा) कदाचित् नहीं बाँधते।

28. [Q. 1] *Bhante* ! Does a *charam jiva* (a being in his final birth) acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* ? Or does an *acharam jiva* (a being not in his final birth) acquire that ?

[Ans.] Gautam ! Both *charam jiva* and *acharam jiva* sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes (in context of an omniscient terminating birth-cycles) do not.

विवेचन : (११) **पर्याप्तक द्वार**–जिस जीव ने उत्पन्न होने के बाद अपने योग्य आहार–शरीरादि पर्याप्तियाँ पूर्ण कर ली हों, वह **पर्याप्तक** और जिसने पूर्ण न की हों, वह **अपर्याप्तक** कहलाता है। अपर्याप्तक जीव ज्ञानावरणीयादि सात कर्म बाँधते हैं। पर्याप्तक जीवों के दो भेद–वीतराग और सराग। इनमें से वीतराग पर्याप्तक ज्ञानावरणीय कर्म को नहीं बाँधते, सराग पर्याप्तक बाँधते हैं। कहा गया है कि पर्याप्तक भजना से ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं। नोपर्याप्तक–नोअपर्याप्तक (सिद्ध) जीव ज्ञानावरणीयादि आठों कर्मों को नहीं बाँधते। पर्याप्तक और अपर्याप्तक दोनों आयुष्यबन्ध के काल में आयुष्य बाँधते हैं, दूसरे समय में नहीं, इसीलिए कहा गया है कि ये दोनों आयुष्य बन्ध भजना से करते हैं।

(१२) **भाषक द्वार**–भाषालब्धि वाले को 'भाषक' और भाषालब्धि से विहीन को 'अभाषक' कहते हैं। भाषक के दो भेद–वीतराग भाषक और सराग भाषक। वीतराग भाषक ज्ञानावरणीय कर्म नहीं बाँधते, सराग भाषक बाँधते हैं। इसीलिए कहा गया कि भाषक जीव भजना से ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं। अभाषक के चार भेद–अयोगीकेवली, सिद्ध भगवान, विग्रहगति समापन्न और एकेन्द्रिय पृथ्वीकायिकादि के जीव। इनमें से प्रथम दो तो ज्ञानावरणीय कर्म नहीं बाँधते, किन्तु शेष दो बाँधते हैं। आदि के दोनों अभाषक वेदनीय कर्म को नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बाँधते, जबकि पिछले दोनों वेदनीय कर्म बाँधते हैं। इसीलिए कहा गया है कि अभाषक जीव ज्ञानावरणीय और वेदनीय कर्म भजना से बाँधते हैं। भाषक जीव (सयोगीकेवली गुणस्थान के अन्तिम समय तक के भाषक भी) वेदनीय कर्म बाँधते हैं।

(१३) **परित्त द्वार**–एक शरीर में एक जीव हो उसे 'परित्त' अथवा अल्प–सीमित संसार वाले को भी 'परित्त' जीव कहते हैं। परित्त के दो प्रकार–वीतराग–परित्त और सराग परित्त। वीतराग परित्त ज्ञानावरणीय कर्म नहीं बाँधता, सराग परित्त बाँधता है। इसीलिए कहा गया है कि परित्त जीव भजना से ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधता है। जो जीव अनन्त जीवों के साथ एक शरीर में रहता है, ऐसे साधारण काय वाले जीव को 'अपरित्त' कहते हैं, अथवा अनन्त संसारी को 'अपरित्त' कहते हैं। दोनों प्रकार के अपरित्त जीव ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं। नोपरित्त–नोअपरित्त अर्थात् सिद्ध जीव, ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्म नहीं बाँधते। परित्त और अपरित्त जीव आयुष्य बन्धकाल में आयुष्य बाँधते हैं, किन्तु दूसरे समय में नहीं, इसीलिए कहा गया है–परित्त और अपरित्त भजना से आयुष्य बाँधते हैं।

(१४) **ज्ञान द्वार**–प्रथम के चारों ज्ञान वाले वीतराग अवस्था में ज्ञानावरणीय कर्म नहीं बाँधते, सराग अवस्था में बाँधते हैं। इसीलिए इन चारों के ज्ञानावरणीय कर्मबन्ध के विषय में भजना कही गई है। आभिनिबोधिक आदि चार ज्ञानों वाले वेदनीय कर्म को बाँधते हैं, क्योंकि छद्मस्थ वीतराग भी वेदनीय कर्म के बन्धक होते हैं। केवलज्ञानी वेदनीय कर्म को भजना से बाँधते हैं, क्योंकि सयोगीकेवली वेदनीय के बन्धक तथा अयोगीकेवली और सिद्ध वेदनीय के अबन्धक होते हैं।

(१५) **योग द्वार**–मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी, ये तीनों सयोगी जब ११वें, १२वें, १३वें गुणस्थानवर्ती होते हैं, तब ज्ञानावरणीय कर्म को नहीं बाँधते, इनके अतिरिक्त अन्य सभी सयोगी जीव ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं। इसीलिए कहा गया है कि सयोगी जीव भजना से ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं। अयोगी के दो भेद–अयोगीकेवली और सिद्ध। ये दोनों ज्ञानावरणीय, वेदनीयादि कर्म नहीं बाँधते, किन्तु सभी सयोगी जीव वेदनीय कर्म के बन्धक होते हैं, क्योंकि सयोगीकेवली गुणस्थान तक सातावेदनीय का बन्ध होता है।

(१६) **उपयोग द्वार**–सयोगी जीव और अयोगी जीव, इन दोनों के साकार (ज्ञान) और अनाकार (दर्शन) ये दोनों उपयोग होते हैं। इन दोनों उपयोगों में वर्तमान सयोगी जीव, ज्ञानावरणीयादि आठों कर्मप्रकृतियों को यथायोग्य बाँधता है और अयोगी जीव नहीं बाँधता, क्योंकि अयोगी जीव आठों कर्मप्रकृतियों का अबन्धक होता है। इसीलिए साकारोपयोगी और निराकारोपयोगी दोनों में अष्टकर्मबन्ध की भजना कही है।

(१७) **आहारक द्वार**–आहारक दो प्रकार के हैं–वीतरागी और सरागी। वीतरागी आहारक ज्ञानावरणीय कर्म नहीं बाँधते, जबकि सरागी आहारक बाँधते हैं। इसी प्रकार अनाहारक के चार भेद होते हैं–(१) विग्रहगति समापन्न, (२) समुद्घातप्राप्त केवली, (३) अयोगीकेवली, और (४) सिद्ध। इनमें से प्रथम बाँधते हैं, शेष तीनों ज्ञानावरणीय कर्म को नहीं बाँधते। इसलिए कहा गया है–आहारक की तरह अनाहारक भी ज्ञानावरणीय कर्म को भजना से बाँधते हैं। आहारक जीव (सयोगीकेवली तक) वेदनीय कर्म को बाँधते हैं, जबकि अनाहारकों में से प्रथम व द्वितीय ये दोनों अनाहारक वेदनीय कर्म को बाँधते हैं, अयोगीकेवली और सिद्ध अनाहारक इसे नहीं बाँधते। इसीलिए कहा है कि अनाहारक जीव वेदनीय कर्म को भजना से बाँधते हैं। सभी प्रकार के अनाहारक जीव आयुष्य कर्म के अबन्धक हैं, जबकि आहारक जीव आयुष्य बन्धकाल में आयुष्य बाँधते हैं, दूसरे समय में नहीं बाँधते।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(१८) सूक्ष्म द्वार–सूक्ष्म जीव ज्ञानावरणीय कर्म बाँधते हैं। बादर जीवों के दो भेद हैं–(१) वीतराग बादर जीव ज्ञानावरणीय कर्म के अबन्धक हैं, (२) सराग बादर जीव इसके बन्धक हैं। नोसूक्ष्म-नोबादर अर्थात्–सिद्ध ज्ञानावरणीयादि सभी कर्मों के अबन्धक हैं। सूक्ष्म और बादर दोनों आयुष्य बन्धकाल में आयुष्य कर्म बाँधते हैं, दूसरे समय में नहीं। इसीलिए इनका आयुष्य कर्मबन्ध भजना से कहा गया है।

(१९) चरम द्वार–जिसका यह भव अन्तिम भव है या होने वाला है, उसे 'चरम' कहते हैं। यहाँ 'भव्य' को 'चरम' कहा गया है। अचरम का अर्थ है–जिसका अन्तिम भव नहीं होने वाला है अथवा जिसने भवों का अन्त कर दिया है। इस दृष्टि से अभव्य और सिद्ध को यहाँ 'अचरम' कहा है। चरम जीव यथायोग्य आठ कर्मप्रकृतियों को बाँधता है और जब चरम जीव अयोगी अवस्था में हो, तब नहीं भी बाँधता। इसीलिए कहा गया है कि चरम जीव आठों कर्मप्रकृतियों को भजना से बाँधता है। जिसका कभी चरम भव नहीं होगा–ऐसा अभव्य-अचरम तो आठों प्रकृतियों को बाँधता है, और सिद्ध अचरम (भवों का अन्तकर्ता) तो किसी भी कर्मप्रकृति को नहीं बाँधता। इसीलिए कहा गया कि अचरम जीव आठों कर्मप्रकृतियों को भजना से बाँधता है। *(वृत्ति, पत्रांक २५६ से २५९ तक)*

Elaboration—(11) Paryaptak dvar—A being who has attained full development of physical and mental capacities including food intake and body formation is called *paryaptak*. One who has not attained this full development is called *aparyaptak*. The *aparyaptak jivas* acquire bondage of seven species of *karmas* including *Jnanavaraniya karma*. *Paryaptak jivas* (fully developed beings) are of two kinds—*vitaraag* and *saraag*. Out of these *vitaraag* (detached) *paryaptak jivas* do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* but *saraag* (with attachment) *paryaptak jivas* acquire. That is why the general statement that *paryaptak jivas* sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* and sometimes not. *No-paryaptak-no-aparyaptak jiva* (neither developed nor underdeveloped being; *Siddha*) does not acquire bondage of any of the eight *karma* species. *Paryaptak* and *aparyaptak jivas* both acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) only at the allotted time and not otherwise. That is why it is mentioned that these two sometimes acquire bondage of *Ayushya karma* and sometimes not.

(12) Bhashak dvar—A being capable of speech is called *bhashak jiva* and that not capable of speech is called *abhashak jiva*. *Bhashak jivas* are of two kinds—*vitaraag bhashak* and *saraag bhashak*. A *Vitaraag bhashak* does not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* but *saraag bhashak* does so. That is why it is mentioned that *bhashak jivas* sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes do not. *Abhashak jivas* are of four kinds—*Ayogikevali* (omniscient without association), *Siddha* (liberated soul), *Vigrahagati Samapanna* (those

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

undergoing oblique movement) and *Ekendriya jivas* (one-sensed beings like earth-bodied beings). Out of these, the first two do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* but the remaining two do so. The first two of the *abhashak jivas* do not acquire bondage of *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*), whereas the last two do so. That is why it is said that *abhashak jiva* (a being not capable of speech) sometimes acquires bondage *Jnanavaraniya karma* and *Vedaniya karma* and sometimes does not. *Bhashak jivas* (even those at the last moment of the *Sayogikevali Gunasthan*) acquire bondage of *Vedaniya karma.*

(13) Paritta dvar—*Paritta* means one soul confined to one body or a being with limited cycles of birth. *Paritta* (limited in terms of body or cycles of birth) are of two kinds—*Vitaraag paritta* and *saraag paritta. Vitaraag paritt* does not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* but *saraag* does. That is why it is mentioned that *paritta jiva* sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya* (knowledge obscuring) *karma* and sometimes not. A soul that lives in a body along with infinite other souls is called *aparitta jiva* or *saadhaaran kaaya jiva*. Also, a being with infinite cycles of birth is called *aparitta jiva*. Both these kinds of *aparitta jivas* acquire bondage of *Jnanavaraniya karma. No-paritta-no-aparitta jiva* or *Siddha* does not acquire any of the eight species of *karmas* including *Jnanavaraniya karma. Paritta jiva* and *aparitta* both acquire bondage of *Ayushya karma* at the allotted time otherwise not. That is why it is said that they sometimes acquire bondage and sometimes do not.

(14) Jnana dvar—Those endowed with first four *jnanas* (knowledge) do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* in their *vitaraag* (detached) state but do so in their *saraag* (with attachment) state. That is why it is stated that they sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. Those with the first four *jnanas* including *mati-jnana* acquire bondage of *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) because even the *chhadmasth vitaraag* (one who is detached but short of omniscience due to residual *karmic* bondage) acquire bondage of *Vedaniya karma. Keval-jnani* (omniscient) sometimes acquires bondage of *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) and sometimes not because *Sayogikevali* acquires that bondage and *Ayogikevali* and *Siddha* does not.

(15) Yoga dvar—*Manoyogi, vachan-yogi* or *kaaya yogi* (one having mental association, vocal association, or physical association), all these

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

three *sayogi* (with association) do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* when they are at 11th, 12th or 13th *Gunasthan*. Besides these, all *sayogis* acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. That is why it is said that *sayogis* sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes do not. *Ayogis* (without association) are of two kinds—*Ayogikevali* and *Siddha*. Both these do not acquire bondage of *karmas* including *Jnanavaraniya karma* and *Vedaniya karma*. However, all *sayogi jivas* acquire bondage of *Vedaniya karma* because even at *Sayogikevali Gunasthan* there is a bondage of *sata-vedaniya karma* (the *karma* that causes feelings of pleasure).

(16) Upayog dvar—Both *sayogi* and *ayogi jivas* have *saakaar upayoga* (cognitive involvement; *jnana*) and *anaakaar upayoga* (perceptive involvement; *darshan*). *Sayogi jiva* with both these involvements acquires bondage of all the eight species of *karmas* including *Jnanavaraniya karma* depending on the involvement. However, *ayogi jiva* does not do so because he is beyond the scope of bondage of all the eight species of *karmas*. That is why it is said that both these types of beings sometimes acquire bondage of all the eight species of *karma* and sometimes do not.

(17) Ahaarak dvar—*Ahaarak jivas* (beings capable of intake) are of two kinds—*vitaraag* and *saraag*. *Vitaraag ahaarak jivas* do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* whereas *saraag ahaarak jivas* do so. In the same way there are four categories of *anahaarak jivas*—(1) *Vigrahagati Samapanna* (those undergoing oblique movement), (2) *Samudghat-prapt Kevali* (omniscient undergoing the special process of expanding and contracting sections of soul), (3) *Ayogikevali* (omniscient without association) and (4) *Siddha* (liberated soul). Of these, the first category acquires bondage of *Jnanavaraniya karma* and the remaining three do not. That is why it is stated that like *ahaarak jivas, anahaarak jivas* also sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not. *Ahaarak jivas* (up to *sayogikevali*) acquire bondage of *Vedaniya karma* (sensation producing *karma*) whereas among the *anahaarak jivas* the first two acquire bondage of *Vedaniya karma*, the remaining two do not. That is why it is mentioned that *anahaarak jivas* sometimes acquire bondage of *Vedaniya karma* and sometimes not. All categories of *anahaarak jivas* do not acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) whereas *ahaarak jivas* acquire bondage of *Ayushya karma* only at the allotted time and not otherwise.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(18) Sukshma dvar—*Sukshma jivas* (minute beings) acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. *Baadar jivas* (gross beings) are of two kinds—(1) *Vitaraag baadar jivas* (detached gross beings) do not acquire bondage of *Jnanavaraniya karma*. (2) *Saraag baadar jivas* (gross beings with attachment) acquire this bondage. *No-sukshma-no-baadar jiva* (neither minute nor gross; *Siddha*) do not acquire bondage of any of the eight species of *karmas* including *Jnanavaraniya karma*. Both *sukshma* and *baadar jivas* acquire bondage of *Ayushya karma* (life-span determining *karma*) only at the allotted time and not otherwise. That is why it is stated that they sometimes acquire bondage of *Jnanavaraniya karma* and sometimes not.

(19) Charam dvar—A being in his final birth before liberation is called *charam jiva*. Here the term *charam* has been used for *bhavya* (worthy of being liberated). *Acharam jiva* is one who has no final birth. Generally it means unworthy of being liberated but here it also means one who has terminated his final birth (*Siddha*). Thus here both *abhavya* as well as *Siddha* have been called *acharam*. A *charam jiva* acquires bondage of the eight species of *karmas* depending on his mental state, however when he is in *ayogi* state, he does not do so. That is why it is mentioned that a *charam jiva* sometimes acquires bondage of eight species of *karmas* and sometimes not. An *abhavya charam* acquires bondage of all eight species of *karmas* where as a *Siddha charam* does not do so. That is why it is said that *acharam jiva* sometimes acquires bondage of all eight species of *karmas* and sometimes not. *(Vritti, leaves 256 to 259)*

वेदक जीवों का अल्प–बहुत्व ALPABAHUTVA (MINIMUM-MAXIMUM) OF GENDERIC BEINGS

२९. [प्र. १] एएसि णं भंते ! जीवाणं इत्थिवेयगाणं पुरिसवेयगाणं नपुंसगवेयगाणं अवेयगाण य कयरे कयरे हिंतो अप्पा वा ४ ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा पुरिसवेयगा, इत्थिवेयगा संखेज्जगुणा, अवेयगा अणंतगुणा, नपुंसगवेयगा अणंतगुणा।

२९. [प्र. १] भगवन् ! स्त्रीवेदक, पुरुषवेदक, नपुंसकवेदक और अवेदक; इन जीवों में से कौन किससे अल्प हैं, बहुत हैं, तुल्य हैं अथवा विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोड़े जीव पुरुषवेदक हैं, उनसे संख्येयगुणा अधिक स्त्रीवेदक जीव हैं, उनसे अनन्तगुणा अवेदक हैं और उनसे भी अनन्तगुणा नपुंसकवेदक हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

29. [Q. 1] *Bhante* ! Of the *streevedak jivas* (beings with female gender), *purush-vedak jivas* (beings with male gender), *napumsak-vedak jivas* (beings with neuter gender) and *avedak jivas* (beings with no gender; *Siddha*) which one are comparatively less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gautam ! *Purush-vedak jivas* (beings with male gender) are minimum, *streevedak jivas* (beings with female gender) are countable times more then these, *avedak jivas* (beings with no gender; *Siddha*) are infinite times more than these and *napumsak-vedak jivas* (beings with neuter gender) are infinite times more than these.

[२] एएसिं सव्वेसिं पदाणं अप्पबहुगाइं उच्चारेयव्वाइं जाव सव्वत्थोवा जीवा अचरिमा, चरिमा अणंतगुणा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति !

॥ छट्ठसए : तइओ उद्देसो समत्तो ॥

[२] इन (पूर्वोक्त) सर्व पदों (संयतादि से लेकर चरम तक चतुर्दश द्वारों में उक्त पदों) का अल्प-बहुत्व कहना चाहिए। (संयत पद से लेकर) यावत् सबसे थोड़े अचरम (सिद्ध तथा अभव्य) जीव हैं, और उनसे अनन्तगुणा चरम (भव्य) जीव हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरने लगे।

[2] In the same way comparative minimum-maximum for all these (preceding fourteen ports from *samyat* to *charam*) should be stated. Starting from *samyat jivas*... and so on up to... minimum are *acharam* (*Siddhas*) and infinite times more than these are *charam jivas* (beings worthy of liberation).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : वेदकों के अल्प-बहुत्व का स्पष्टीकरण—यहाँ पुरुषवेदक जीवों की अपेक्षा स्त्रीवेदक जीवों को संख्यातगुणा अधिक बताने का कारण यह है कि देवों की अपेक्षा देवियाँ बत्तीस गुणी और बत्तीस अधिक हैं, नर मनुष्य की अपेक्षा नारी सत्ताईस गुणी और सत्ताईस अधिक हैं और तिर्यंच नर की अपेक्षा तिर्यंचनी तीन गुणी और तीन अधिक हैं। स्त्रीवेदकों की अपेक्षा अवेदकों को अनन्तगुणा बताने का कारण यह है कि अनिवृत्ति बादर सम्परायादि वाले जीव और सिद्ध जीव अनन्त हैं, इसलिए वे स्त्रीवेदकों की अपेक्षा अनन्तगुणा हैं। अवेदकों से नपुंसकवेदी अनन्त इसलिए हैं कि सिद्धों की अपेक्षा अनन्तकायिक जीव अनन्तगुणा हैं, जो सब नपुंसक हैं। *(वृत्ति, पत्रांक २६०)*

॥ छठा शतक : तृतीय उद्देशक समाप्त ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Alpabahutva (minimum-maximum) of genderic beings—The reason for stating females to be more than males is that it is believed that among divine beings goddesses are thirty two times and thirty two more than gods, among human beings females are twenty seven times and twenty seven more than males and among animals females are three times and three more than males. The reason for stating that non-genderic or gender transcendent beings are infinite times more than those with female gender is that the beings at *Anivritti Baadar Samparaaya* and higher *Gunasthans* inclusive of *Siddhas* are infinite, therefore they are infinite times more than those with female gender. Beings with neuter gender are infinite times more than non-genderic or gender transcendent beings because as compared with *Siddhas, anantakaayik jivas* (infinite souls in one body) are infinite times more, and they all are with neuter gender. *(Vritti leaf 260)*

● END OF THE THIRD LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : चतुर्थ उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : FOURTH LESSON

सप्रदेश SAPRADESH (WITH SECTIONS)

प्रस्तुत उद्देशक में जीव की सप्रदेशता–अप्रदेशता पर काल आदि विभिन्न अपेक्षाओं से चिन्तन किया गया है।

This lesson discusses the sectional (*sapradeshi*) and non-sectional (*apradeshi*) states of *jiva* (soul; living being) from different viewpoints including time.

१. प्रदेश द्वार : जीव–प्रदेश निरूपण PRADESH DVAR (PORT OF SECTIONS) : SOUL-SECTIONS

१. [प्र.] जीवे णं भंते ! कालापदेसेणं किं सपदेसे, अपदेसे ?

[उ.] गोयमा ! नियमा सपदेसे।

१. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव कालादेश (काल की अपेक्षा) से सप्रदेश है या अप्रदेश है ?

[उ.] गौतम ! कालादेश से जीव नियमतः (निश्चित रूप से) सप्रदेश है।

1. [Q.] *Bhante* ! Relative to time (*kaaladesh*), is soul (*jiva*) with sections (*sapradesh*) or without sections (*apradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! As a rule it is with sections relative to time.

२. [प्र.] नेरइए णं भंते ! कालादेसेणं किं सपदेसे, अपदेसे ?

[उ.] गोयमा ! सिय सपदेसे, सिय अपदेसे। एवं जाव सिद्धे।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या नैरयिक जीव कालादेश से सप्रदेश है या अप्रदेश है ?

[उ.] गौतम ! एक नैरयिक जीव कालादेश से कदाचित् सप्रदेश है और कदाचित् अप्रदेश है। इस प्रकार यावत् (भवनपति से वैमानिक देव) यावत् सिद्ध–जीव–पर्यन्त कहना चाहिए।

2. [Q.] *Bhante* ! Relative to time (*kaaladesh*), is an infernal being (*nairayik jiva*) with sections (*sapradesh*) or without sections (*apradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! Relative to time, single infernal being is sometimes with sections and sometimes without sections. The same should be repeated for... and so on up to... (divine beings up to *Vaimaniks*)... and so on up to... *Siddha*.

३. [प्र.] जीवा णं भंते ! कालादेसेणं किं सपदेसा, अपदेसा ?

[उ.] गोयमा ! नियमा सपदेसा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] भगवन् ! कालादेश की अपेक्षा बहुत जीव (अनेक जीव) सप्रदेश हैं या अप्रदेश हैं ?

[उ.] गौतम ! अनेक जीव कालादेश की अपेक्षा नियमतः सप्रदेश हैं।

3. [Q.] *Bhante* ! Relative to time (*kaaladesh*), are many souls (*jiva*) with sections (*sapradesh*) or without sections (*apradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! As a rule many souls are with sections relative to time.

४. [प्र.] नेरइया णं भंते ! कालादेसेणं किं सपदेसा, अपदेसा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वे वि ताव होज्ज सपदेसा, अहवा सपदेसा य अपदेसे य, अहवा सपदेसा य अपदेसा य। एवं जाव थणियकुमारा।

४. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीव (बहुत–से नैरयिक) कालादेश की अपेक्षा क्या सप्रदेश हैं या अप्रदेश हैं ?

[उ.] गौतम ! (१) सभी (नैरयिक) सप्रदेश हैं, (२) बहुत–से सप्रदेश और एक अप्रदेश हैं, और (३) बहुत–से सप्रदेश और बहुत–से अप्रदेश हैं। इसी प्रकार असुरकुमारों से स्तनित कुमारों तक कहना चाहिए।

4. [Q.] *Bhante* ! Relative to time (*kaaladesh*), are many infernal beings (*nairayik jiva*) with sections (*sapradesh*) or without sections (*apradesh*) ?

[Ans.] Gautam ! Relative to time (1) all infernal beings are with sections, (2) many are with sections and one without sections, and (3) many are with sections and many are without sections. The same should be repeated for divine beings from Asur Kumars to Stanit Kumars.

५. [प्र.] पुढविकाइया णं भंते ! किं सपदेसा, अपदेसा ?

[उ.] गोयमा ! सपदेसा वि, अपदेसा वि। एवं जाव वणप्फतिकाइया।

६. सेसा जहा नेरइया तहा जाव सिद्धा।

५. [प्र.] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव सप्रदेश हैं या अप्रदेश हैं ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव सप्रदेश भी हैं, अप्रदेश भी हैं। इसी प्रकार (अप्कायिक से) वनस्पतिकायिक तक कहना चाहिए।

६. शेष सभी जीवों के लिए जिस प्रकार नैरयिक जीवों का कथन किया गया है, उसी प्रकार सिद्धपर्यन्त कहना चाहिए।

5. [Q.] *Bhante* ! Relative to time (*kaaladesh*), are earth-bodied beings (*prithvikaayik jivas*) with sections (*sapradesh*) or without sections (*apradesh*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! Earth-bodied beings (*prithvikaayik jivas*) are with sections (*sapradesh*) as well as without sections (*apradesh*). The same should be repeated for (*apkaayiks* or water-bodied beings)... and so on up to... plant-bodied beings (*vanaspatikaayiks*).

6. For all the remaining *jivas* (souls; living beings) up to *Siddhas* the statement about infernal beings should be repeated.

विवेचन : इस उद्देशक में भी १४ द्वारों के माध्यम से जीवों की सप्रदेशता, अप्रदेशता का वर्णन है। वृत्तिकार द्वारा इनका स्पष्टीकरण इस प्रकार किया गया है–

१. सप्रदेश द्वार–कालादेश का अर्थ है–काल की अपेक्षा से। विभागरहित को अप्रदेश और विभागसहित को सप्रदेश कहते हैं। समुच्चय में जीव अनादि है, इसलिए उसकी स्थिति अनन्त समय की है; इसलिए वह सप्रदेश है। जो जिस भाव (पर्याय व अवस्था) में प्रथम समयवर्ती होता है वह काल की अपेक्षा अप्रदेशी होता है और एक समय से अधिक दो–तीन–चार आदि समयों में वर्तने वाले काल की अपेक्षा सप्रदेश होता है।

कालादेश की अपेक्षा जीवों के भंग–जिस नैरयिक जीव को उत्पन्न हुए एक समय हुआ है, वह कालादेश से अप्रदेश है, और प्रथम समय के पश्चात् द्वितीय–तृतीयादि समयवर्ती नैरयिक सप्रदेश है। इस प्रकार औधिक जीव का एक नैरयिक आदि के २४ दण्डक और सिद्ध के मिलाकर २६ दण्डकों में एकवचन को लेकर कदाचित् अप्रदेश, कदाचित् सप्रदेश, ये दो–दो भंग होते हैं। इन्हीं २६ दण्डकों में बहुवचन को लेकर विचार करने पर तीन भंग (विकल्प) होते हैं–

(१) उपपात के विरहकाल में पूर्वोत्पन्न जीवों की संख्या असंख्यात होने से सभी सप्रदेश होते हैं, अतः वे सब सप्रदेश हैं।

(२) पूर्वोत्पन्न नैरयिकों में जब एक नया नैरयिक उत्पन्न होता है, तब उसकी प्रथम समय की उत्पत्ति की अपेक्षा से वह 'अप्रदेश' कहलाता है। बाकी नैरयिक जीव जिनकी उत्पत्ति को दो–तीन–चार आदि समय हो गये हैं, वे 'सप्रदेश' कहलाते हैं।

(३) पूर्वोत्पन्न नैरयिकों के मध्य अनेक नैरयिक एक साथ उत्पन्न होते हैं, तब तीसरा भंग बनता है, अनेक सप्रदेश (पूर्वोत्पन्न की अपेक्षा) अनेक अप्रदेश (तत्काल उत्पद्यमान की अपेक्षा) पृथ्वीकायिकादि एकेन्द्रिय जीवों में दो भंग होते हैं–वे कदाचित् सप्रदेश भी होते हैं, और कदाचित् अप्रदेश भी। क्योंकि उनमें प्रति समय अनेक जीव उत्पन्न होते रहते हैं। द्वीन्द्रियों से लेकर सिद्धपर्यन्त पूर्ववत् (नैरयिकों की तरह) तीन–तीन भंग होते हैं।

Elaboration—This lesson describes sectionality and non-sectionality of *jivas* (souls; living beings) under 14 *dvars* (ports; headings). The commentator (*Vritti*) has explained these as follows—

(1) Sapradesh Dvar—*Kaaladesh* means relative to time (here it means in terms of sections or units of time). One without sections is *apradesh* (without sections) and one with sections is *sapradesh* (with sections). Collectively speaking *jiva* (souls; living beings) are without a beginning, therefore their existence is of infinite duration and thus

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

relative to time it falls in the category of sapradesh (with sections or with units of time). A being commencing its existence in a particular mode or state (*paryaya*) is *apradesh* (without sections) at the first *Samaya* (*Samaya* being the smallest unit of time, it does not have any further sections). As time passes and its existence is two, three, four and more *Samayas* long it is *sapradesh* (with sections) relative to time.

Divisions of beings in relation to time—The infernal being at the first *Samaya* of its birth is *apradesh* relative to time. When its existence is two, three, four and more *Samayas* long it is *sapradesh* (with sections). This way generally speaking a single *jiva*, belonging to any of the 24 *Dandaks* (places of suffering) including infernal beings and 26 *Dandaks* including *Siddha*, has two alternatives (*bhang*)—sometimes *apradesh* and sometimes *sapradesh*. For the same 26 places when the general statement is about many *jivas* there are three alternatives—

(1) During the intervening time (*virah kaal*) after an instantaneous birth (*upapaat*) the number of living beings already born is innumerable and they all are *sapradesh* (with sections) relative to time

(2) Among the already born infernal beings when one new being is born then at that moment of birth he is *apradesh* relative to time and all other previously born beings are *sapradesh* because they are already past two, three, four or more *Samayas* after birth.

(3) Among the already born infernal beings when many new being are born at the same moment then at that moment of birth they all are *apradesh* relative to time and all other previously born beings are *sapradesh*. This is the third alternative.

Among one-sensed beings, including earth-bodied beings, there are only two alternatives—they are sometimes *apradesh* (without sections) and sometimes *sapradesh*. This is because they have numerous beings born among them every moment. All other beings from two-sensed ones to *Siddhas* have three alternatives just like infernal beings.

२. आहारक द्वार AHARAK DVAR (PORT OF BEINGS WITH INTAKE)

७. [१] आहारगाणं जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो।

[२] अणाहारगाणं जीवेगिंदियवज्जा छब्भंगा एवं भाणियव्वा—सपदेसा वा, अपदेसा वा, अहवा सपदेसे य अपदेसे य, अहवा सपदेसे य अपदेसा य, अहवा सपदेसा य अपदेसे य, अहवा सपदेसा य अपदेसा य। सिद्धेहिं तियभंगो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [१] जीव और एकेन्द्रियों को छोड़कर शेष सभी आहारक जीवों के लिए तीन भंग कहने चाहिए–यथा (१) सभी सप्रदेश, (२) बहुत सप्रदेश और एक अप्रदेश, तथा (३) बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश।

[२] अनाहारक जीवों के लिए एकेन्द्रिय को छोड़कर छह भंग इस प्रकार होते हैं–यथा–(१) सभी सप्रदेश, (२) सभी अप्रदेश, (३) एक सप्रदेश और एक अप्रदेश, (४) एक सप्रदेश और बहुत अप्रदेश, (५) बहुत सप्रदेश और एक अप्रदेश, तथा (६) बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश। सिद्धों के लिए तीन भंग (सूत्र ४–१) कहने चाहिए।

7. [1] Leaving aside *jiva* (in general) and one-sensed beings, three alternative should be stated for all other *ahaarak jivas* (living beings with intake)—Relative to time (1) all beings are with sections, (2) many are with sections and one without sections, and (3) many are with sections and many are without sections.

[2] For *anahaarak jivas* (living beings without intake) other than one-sensed beings, there are six alternatives for all beings—(1) all beings are with sections (*sapradesh*), (2) all are without sections (*apradesh*), (3) one with sections and one without sections, (4) one with sections and many without sections, (5) many with sections and one without sections, and (6) many with sections and many without sections. With regard to *Siddhas* three alternatives should be stated (aphorism 4/1).

विवेचन : २. आहारक द्वार–आहारक और अनाहारक दोनों प्रकार के जीवों के प्रत्येक के एकवचन और बहुवचन को लेकर क्रमशः एक–एक दण्डक यानी दो–दो दण्डक कहने चाहिए। जो जीव विग्रहगति में या केवली समुद्घात में अनाहारक होकर फिर आहारकत्व को प्राप्त करता है, वह आहारक काल के प्रथम समय वाला जीव 'अप्रदेश' और प्रथम समय के अतिरिक्त द्वितीय–तृतीयादि समयवर्ती जीव 'सप्रदेश' कहलाता है। इसीलिए कदाचित् कोई सप्रदेश और कदाचित् कोई अप्रदेश कहा गया है–इसी प्रकार सभी आदि वाले (शुरू होने वाले) भावों में एकवचन में जान लेना चाहिए। अनादि वाले भावों में तो सभी नियमतः सप्रदेश होते हैं। बहुवचन वाले दण्डक में भी इसी प्रकार–कदाचित् सप्रदेश भी और कदाचित् अप्रदेश भी होते हैं। जैसे–आहारकपने में रहे हुए बहुत जीव होने से उनका सप्रदेशत्व है, तथा बहुत–से जीव विग्रहगति के पश्चात् प्रथम समय में तुरन्त ही अनाहारक होने से उनका अप्रदेशत्व भी है। इस प्रकार आहारक जीवों में सप्रदेशत्व और अप्रदेशत्व ये दोनों पाये जाते हैं। इसी प्रकार एकेन्द्रिय (पृथ्वीकायिक आदि) जीवों के लिए भी कहना चाहिए। सिद्ध अनाहारक होने से उनमें आहारकत्व नहीं होता है। अतः सिद्ध पद और एकेन्द्रिय को छोड़कर नैरयिकादि जीवों में मूल पाठोक्त तीन भंग–(१) सभी सप्रदेश, अथवा (२) बहुत सप्रदेश और एक अप्रदेश, अथवा (३) बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश कहने चाहिए। अनाहारक के भी इसी प्रकार एकवचन–बहुवचन को लेकर दो दण्डक कहने चाहिए। ये जब अनाहारकत्व के प्रथम समय में होते हैं तो 'अप्रदेश' और द्वितीय–तृतीय आदि समय में होते हैं तो 'सप्रदेश' कहलाते हैं। बहुवचन के दण्डक में जीव और एकेन्द्रिय को नहीं लेना चाहिए, क्योंकि इन दोनों पदों में 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश', यह एक ही भंग पाया जाता है; क्योंकि इन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दोनों पदों में विग्रहगति-समापन्न अनेक जीव सप्रदेश और अनेक जीव अप्रदेश मिलते हैं। नैरयिकादि तथा द्वीन्द्रिय आदि जीवों में थोड़े जीवों की उत्पत्ति होती है। अतएव उनमें एक-दो आदि अनाहारक होने से छह भंग संभवित होते हैं; यहाँ एकवचन की अपेक्षा दो भंग नहीं होते, क्योंकि यहाँ बहुवचन का अधिकार चलता है। सिद्धों में तीन भंग होते हैं, उनमें सप्रदेश पद बहुवचनान्त ही सम्भवित है।

Elaboration—(2) Aharak Dvar—For *ahaarak* (with intake) and *anahaarak jivas* each one has two alternatives (*bhang*) depending on singularity and plurality. The beings who become *anahaarak* (without intake) when they commence either the process of oblique movement or *Kevali Samudghat* and then again become *ahaarak* are *apradesh* (without sections) at the first moment of this transformation and later become *sapradesh* (with sections). That is why it is said that sometimes some are *sapradesh* and sometimes some are *apradesh*. The same is true for all in context of singularity and the moment of commencement. In post-commencement cases all are *sapradesh* as a rule. In case of plurality also sometimes *sapradesh* and sometimes *apradesh* is applicable. For example as there are numerous *ahaarak* beings *sapradesh* is applicable and as there are numerous *anahaarak* beings in the first moment of their transformation after oblique movement *apradesh* (without sections) is applicable. Thus *sapradesh* and *apradesh* both states are found in *ahaarak jivas*. Same is true for one-sensed beings including earth-bodied beings. As all *Siddhas* are *anahaarak* they do not have *ahaarak* category. Therefore, leaving aside one-sensed beings and *Siddhas* three alternatives should be mentioned for all beings including infernal ones—(1) all beings are with sections, (2) many are with sections and one without sections, and (3) many are with sections and many are without sections. For *anahaarak jivas* also two divisions related to singularity and plurality should be stated. At the first moment of their being *ahaarak* they are *apradesh* and during the second, third and more *Samayas* they are *sapradesh* (with sections). In case of plurality, *jivas* (in general) and one-sensed beings should not be included because in both these cases only one state (*abhang*) is applicable—many *sapradesh* (with sections) and many *apradesh* (without sections). This is because in both these cases many post-oblique-movement beings are *sapradesh* and many *apradesh*. Comparatively less beings are born among infernal beings and other beings including two-sensed ones. Therefore there are periods when there are only one, two or more *anahaarak jivas* among them. As such there are six alternatives (*bhang*) of *sapradesh* and *apradesh* possible for them. In these cases there is an

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

absence of even two alternatives related to singularity because only plurality is possible here. *Siddhas* have three alternatives, because for them *sapradesh* is possible only with respect to plurality.

३. भव्य द्वार BHAVYA DVAR (PORT OF THE WORTHY)

८. [१] भवसिद्धिया अभवसिद्धिया जहा ओहिया।

[२] नोभवसिद्धिय–नोअभवसिद्धिया जीव–सिद्धेहिं तियभंगो।

८. [१] भवसिद्धिक (भव्य) और अभवसिद्धिक (अभव्य) जीवों में औधिक (सामान्य) जीवों की तरह होते हैं।

[२] नोभवसिद्धिक–नोअभवसिद्धिक जीव और सिद्धों में (पूर्ववत्) तीन भंग होते हैं।

8. [1] *Bhavasiddhik* (worthy of liberation) and *abhavasiddhik* (unworthy of liberation) follow the pattern of the general statement (*aughik*) about *jivas*.

[2] *No-bhavasiddhik-no-abhavasiddhik* (neither worthy of liberation nor unworthy of liberation) and *Siddhas* have three alternatives (as aforesaid).

४. संज्ञी द्वार SANJNI DVAR (PORT OF THE SENTIENT)

९. [१] सण्णीहिं जीवादिओ तियभंगो।

[२] असण्णीहिं एगिंदियवज्जो तियभंगो। नेरइय–देव–मणुएहिं छब्भंगा।

[३] नोसण्णि–नोअसण्णिणो जीव–मणुय–सिद्धेहिं तियभंगो।

९. [१] संज्ञी जीवों में जीव आदि तीन भंग पाये जाते हैं।

[२] असंज्ञी जीवों में एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग। नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग कहने चाहिए।

[३] नोसंज्ञी–नोअसंज्ञी जीव, मनुष्य और सिद्धों में तीन भंग कहने चाहिए।

9. [1] *Sanjni jivas* (sentient beings) have three alternatives (*bhang*) including general statement about *jivas*.

[2] Three alternatives should be stated for *Asanjni jivas* (non-sentient beings) leaving aside one-sensed beings. Six alternatives should be stated for infernal, divine and human beings.

[3] *No-sanjni-no-asanjni* (neither sentient nor non-sentient) beings have three alternatives each, related to *jiva* (in general), humans and *Siddhas*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : ३. भव्य द्वार—भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक, इन दोनों के प्रत्येक के दो-दो दण्डक हैं, जो औधिक (सामान्य) जीव-दण्डक की तरह हैं। इनमें भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक जीव, नियमतः सप्रदेश होता है। क्योंकि ये दोनों भाव अनादिपारिणामिक हैं। अतः भव्यत्व और अभव्यत्व का प्रथम समय कभी नहीं होता। नैरयिक आदि जीव, सप्रदेश भी होता है, अप्रदेश भी। बहुत जीव तो सप्रदेश ही होते हैं। नैरयिक आदि जीवों में तीन भंग होते हैं। एकेन्द्रिय जीवों में 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश', यह एक ही भंग होता है। क्योंकि ये बहुत संख्या में ही प्रति समय उत्पन्न होते रहते हैं। यहाँ भव्य और अभव्य के प्रकरण में सिद्धपद नहीं कहना चाहिए, क्योंकि वे नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक होते हैं। अतः उनमें एकवचन और बहुवचन को लेकर दो दण्डक कहने चाहिए। इसमें जीवपद और सिद्धपद, ये दो पद ही कहने चाहिए; क्योंकि नैरयिक आदि जीवों के साथ 'नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक' विशेषण लग नहीं सकता।

४. संज्ञी द्वार—संज्ञी जीवों के एकवचन और बहुवचन को लेकर दो दण्डक होते हैं। बहुवचन के दण्डक में जीवादि पदों में तीन भंग होते हैं, यथा-(१) जिन संज्ञी जीवों को उत्पन्न हुए बहुत-सा समय हो गया है, वे कालादेश से सप्रदेश हैं, (२) उत्पातविरह के बाद जब एक जीव की उत्पत्ति होती है, तब उसको प्रथम समय की अपेक्षा 'बहुत जीव सप्रदेश और एक जीव अप्रदेश' कहा जाता है, और (३) जब बहुत जीवों की उत्पत्ति एक ही समय में होती है, तब 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश' यों भी कहा जाता है। इस प्रकार ये तीन भंग सभी पदों में जान लेने चाहिए। किन्तु इन दो दण्डकों में एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सिद्धपद नहीं कहना चाहिए, क्योंकि इनमें 'संज्ञी' विशेषण ही नहीं है। असंज्ञी जीवों में एकेन्द्रिय पदों को छोड़कर दूसरे दण्डक में ये ही तीन भंग कहने चाहिए। पृथ्वीकायिकादि एकेन्द्रियों में सदा बहुत जीवों की उत्पत्ति होती है, इसलिए उन पदों में 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश', यह एक ही भंग सम्भव है। नैरयिकों से लेकर व्यन्तर देवों तक असंज्ञी जीव उत्पन्न होते हैं, वे जब तक संज्ञी न हों, तब तक उनका असंज्ञीपन जानना चाहिए। नैरयिक आदि में असंज्ञीपन कादाचित्क होने से एकत्व एवं बहुत्व की सम्भावना होने के कारण में ६ भंग बताये गये हैं। असंज्ञी प्रकरण में ज्योतिष्क, वैमानिक और सिद्ध का कथन नहीं करना चाहिए, क्योंकि उनमें असंज्ञीपन सम्भव नहीं है। नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी विशेषण वाले जीवों के दो दण्डक कहने चाहिए। उसमें बहुवचन को लेकर द्वितीय दण्डक में जीव, मनुष्य और सिद्ध में उपर्युक्त तीन भंग कहने चाहिए, क्योंकि उनमें बहुत-से अवस्थित मिलते हैं। उनमें उत्पद्यमान एकादि सम्भव हैं। नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी के इन दो दण्डकों में जीव, मनुष्य और सिद्ध, ये तीन पद ही कहने चाहिए; क्योंकि नैरयिकादि जीवों के साथ 'नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी' विशेषण घटित नहीं हो सकता।

Elaboration—(3) Bhavya dvar—*Bhavasiddhik* (worthy of liberation) and *abhavasiddhik* (unworthy of liberation) have two categories each similar to those of *jiva* (in general). *Bhavasiddhik* and *abhavasiddhik* beings are as a rule *sapradesh*. This is because both these states are without a beginning and thus there is never a first *Samaya* related to these states. Infernal beings are *sapradesh* as well as *apradesh*. In context of plurality of beings the state is always *sapradesh* (with sections). Infernal and other beings have three alternatives (*bhang*). One-sensed beings have no alternative (*abhang*) just one state—many *sapradesh* and many *apradesh*. This is because they are born in large numbers every moment. Here *Siddhas* should not be included with

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

bhavya and *abhavya* because they are *no-bhavasiddhik-no-abhavasiddhik*. Therefore only two categories of singular and plural should be stated for them. This is applicable only to categories of *jiva* (in general) and *Siddhas* because other beings including infernal ones do not qualify for the category *no-bhavasiddhik-no-abhavasiddhik*.

(4) Sanjni dvar—*Sanjni* (sentient) beings have two categories of singular and plural. In the plural category there are three alternatives for *jiva* (in general)—(1) The *sanjni jivas* past the moment of birth are *sapradesh* relative to time, (2) after the intervening period when one being is born then in context of its first *Samaya* of birth it is said that many beings are *sapradesh* and one is *apradesh*, and (3) when numerous beings are born at the same *Samaya* it is said that many beings are *sapradesh* and many are *apradesh*. Thus these three alternatives are applicable to all categories. However, one-sensed beings, two to four sensed beings (*vikalendriya*), and *Siddhas* should not be included in these two categories. This is because these beings are never sentient. For *asanjni* (non-sentient) *jivas* other than one-sensed beings these three alternatives (*bhang*) should be stated. One-sensed beings have no alternative (*abhang*) just one state—many *sapradesh* and many *apradesh* (without sections). This is because they are born in large numbers every moment. *Asanjni jivas* are born among all beings from infernal to interstitial gods. As long as they do not become sentient they should be treated as *asanjni*. For infernal beings six alternatives have been mentioned due to probability of non-sentience as well as singularity and plurality. Jyotishk gods, Vaimanik gods and Siddhas should not be included in *asanjni* category because that state is impossible in them. There are two categories of *no-sanjni-no-asanjni* beings. Of these the second category of plurality has three aforesaid alternatives for *jiva* (in general), humans and *Siddhas*. This is because among them many are already born and there is possibility of one or more being born. In the said two categories of *no-sanjni-no-asanjni*, only *jiva* (in general), humans and *Siddhas* are included because infernal and other beings do not qualify for this class.

५. लेश्या द्वार LESHYA-DVAR (PORT OF SOUL-COMPLEXION)

९०. [९] सलेसा जहा ओहिया। कण्हलेस्सा नीललेस्सा काउलेस्सा जहा आहारओ, नवरं जस्स अत्थि एयाओ। तेउलेस्साए जीवादिओ तियभंगो, नवरं पुढविकाइएसु आउ–वणप्फतीसु छब्भंगा। पम्हलेस–सुक्कलेस्साए जीवाइओ तियभंगो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] अलेसेहिं जीव–सिद्धेहिं तियभंगो, मणुएसु छब्भंगा।

१०. [१] सलेश्य जीवों का औधिक जीवों की तरह कथन करना चाहिए। कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या वाले जीवों का कथन आहारक जीव की तरह (सूत्र ७–१) कहना चाहिए। किन्तु इतना विशेष है कि जिसके जो लेश्या हो, उसके वह लेश्या कहनी चाहिए। तेजोलेश्या में जीव आदि तीन भंग कहने चाहिए; किन्तु इतनी विशेषता है कि पृथ्वीकायिक, अप्कायिक और वनस्पतिकायिक जीवों में छह भंग कहने चाहिए। पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या में जीवादिक तीन भंग कहने चाहिए।

[२] अलेश्य (लेश्यारहित) जीव और सिद्धों में तीन भंग कहने चाहिए, तथा अलेश्य मनुष्यों में (पूर्ववत्) छह भंग कहने चाहिए।

10. [1] Living beings with *leshyas* (soul-complexions) follow the pattern of statement about *jiva* (in general). Beings with *krishna leshya* (black complexion of soul), neel *leshya* (blue complexion of soul) and *kapot leshya* (pigeon complexion of soul) follow the pattern of *ahaarak jivas* (aphorism 7/1). The difference is that the related *leshya* should be mentioned. As regards *tejoleshya* (fiery complexion of soul) three alternatives (bhang) including *jiva* (in general) should be stated with the difference that for earth-bodied, water-bodied and plant-bodied beings six alternatives should be stated. For *padma leshya* (yellow complexion of soul) and *shukla leshya* (white complexion of soul) three alternatives including *jiva* (in general) should be stated.

[2] For *aleshya* (without complexion of soul) beings and *Siddhas* three alternatives should be mentioned. For *aleshya* human beings six alternatives (as aforesaid) should be stated.

विवेचन : ५. **लेश्या द्वार**–लेश्या वाले जीवों के दो दण्डकों में जीव और नैरयिकों का कथन सामान्य दण्डक के समान करना चाहिए, क्योंकि जीवत्व की तरह सलेश्यत्व भी अनादि है, इसलिए इन दोनों में किसी प्रकार की विशेषता नहीं है, किन्तु इतना विशेष है कि सलेश्य प्रकरण में सिद्ध पद नहीं कहना चाहिए। कृष्ण–नील–कापोतलेश्यावान् जीव और नैरयिकों के प्रत्येक के दो–दो दण्डक आहारक जीव की तरह कहने चाहिए। जिन जीव एवं नैरयिकादि में जो लेश्या हो, वही कहनी चाहिए। जैसे कि कृष्णादि तीन लेश्याएँ, ज्योतिष्क एवं वैमानिक देवों में नहीं होतीं। तेजोलेश्या के एकवचन और बहुवचन को लेकर दो दण्डक कहने चाहिए। बहुवचन की अपेक्षा द्वितीय दण्डक में जीवादि पदों के तीन भंग होते हैं। पृथ्वीकाय, अप्काय और वनस्पतिकाय में ६ भंग होते हैं, क्योंकि पृथ्वीकायादि जीवों में तेजोलेश्या वाले एकादि जीव–(पूर्वोत्पन्न और उत्पद्यमान दोनों प्रकार के) पाये जाते हैं। तेजोलेश्या प्रकरण में नैरयिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, विकलेन्द्रिय और सिद्ध, ये पद नहीं कहने चाहिए, क्योंकि इनमें तेजोलेश्या नहीं होती। पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या के दो–दो दण्डक कहने चाहिए। दूसरे दण्डक में जीवादि पदों में तीन भंग कहने चाहिए। पद्म–शुक्ललेश्या प्रकरण में पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

और वैमानिक देव ही कहने चाहिए; क्योंकि इनके सिवाय दूसरे जीवों में ये लेश्याएँ नहीं होतीं। अलेश्य जीव के एकवचन और बहुवचन को लेकर दो दण्डकों में जीव, मनुष्य और सिद्ध पद का ही कथन करना चाहिए; क्योंकि दूसरे जीवों में अलेश्यत्व सम्भव नहीं है। इनमें जीव और सिद्ध में तीन भंग और मनुष्य में छह भंग कहने चाहिए; क्योंकि अलेश्यत्व प्रतिपन्न (प्राप्त किये हुए) और प्रतिपद्यमान (प्राप्त करते हुए) एकादि मनुष्यों का सम्भव होने से सप्रदेशत्व में और अप्रदेशत्व में एकवचन और बहुवचन सम्भव है।

Elaboration—(5) Leshya dvar—The two categories of beings with *leshya—jiva* (in general) and infernal beings—follow the pattern of the general category. This is because like life the complexion of soul is also without a beginning and thus there is no difference. The only difference is that *Siddhas* should not be included among beings with *leshya*. Beings with *krishna leshya* (black complexion of soul), *neel leshya* (blue complexion of soul) and *kapot leshya* (pigeon complexion of soul) have two categories each like *ahaarak jivas*. The specific related *leshya* should also be mentioned. For example the said three *leshyas* including the black hue are not applicable to Jyotishk and Vaimanik gods. *Tejoleshya* has two categories of singular and plural. In context of plural, *jiva* (in general) and others belonging to the plural category have three alternatives (*bhang*). Earth, water and plant-bodied beings have six alternatives because among these one or more beings with *tejoleshya* in states of 'already born' and 'just born' are available. Infernal beings, fire-bodied beings, air-bodied beings, two to four sensed beings and *Siddhas* are not included in the *tejoleshya* category because they are devoid of this *leshya*. *Padma leshya* and *shukla leshya* have two categories each. For *jiva* (in general) and others belonging to the second category three alternatives should be stated. Only five-sensed animals, human beings and Vaimanik gods are included in these two *leshyas* because beings other than these do not have these two *leshyas*. *Aleshya* (without soul complexion) beings have two categories of singular and plural. These beings include only *jiva* (in general), humans, and *Siddhas*. Beings other than these cannot be without *leshyas*. Among these, *jiva* (in general) and *Siddhas* have three alternatives and humans have six alternatives (*bhang*). This is because one or more human beings are in states of having already become and just become without *leshyas*. Thus there are chances of singularity and plurality of states of *sapradesh* (with sections) and *apradesh*.

६. *दृष्टि द्वार* DRISHTI DVAR (PORT OF ATTITUDE)

११. [१] सम्मद्दिट्ठीहिं जीवाइओ तियभंगो। विगलिंदिएसु छब्भंगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] मिच्छद्दिट्ठीहिं एगिंदियवज्जो तियभंगो।

[३] सम्मामिच्छद्दिट्ठीहिं छब्भंगा।

99. [१] सम्यग्दृष्टि जीवों में जीवादिक तीन भंग कहने चाहिए। विकलेन्द्रियों में छह भंग कहने चाहिए।

[२] मिथ्यादृष्टि जीवों में एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए।

[३] सम्यग्-मिथ्यादृष्टि जीवों में छह भंग कहने चाहिए।

11. [1] For *Samyagdrishti jivas* (righteous beings) three alternatives, including *jiva* (in general) should be mentioned. For *vikalendriyas* (two to four sensed beings) six alternatives should be mentioned.

[2] For *Mithyadrishti jivas* (unrighteous beings), leaving aside one-sensed beings, three alternatives should be mentioned.

[3] For *Samyag-mithyadrishti jivas* (righteous-unrighteous beings) six alternatives should be mentioned.

विवेचन : ६. **दृष्टि द्वार**—सम्यग्दृष्टि के दो दण्डकों में सम्यग्दर्शन प्राप्ति के प्रथम समय में अप्रदेशत्व है और बाद के द्वितीय-तृतीयादि समयों में सप्रदेशत्व है। इनमें दूसरे दण्डक में जीवादि पदों में पूर्वोक्त तीन भंग कहने चाहिए। विकलेन्द्रियों में पूर्वोत्पन्न और उत्पद्यमान एकादि सास्वादन सम्यग्दृष्टि जीव पाये जाते हैं, इस कारण इनमें ६ भंग जानने चाहिए। एकेन्द्रिय सर्वथा मिथ्यादृष्टि होते हैं, उनमें सम्यग्दर्शन न होने से सम्यग्दृष्टि द्वार में एकेन्द्रिय पद का कथन नहीं करना चाहिए। मिथ्यादृष्टि के एकवचन और बहुवचन से दो दण्डक कहने चाहिए। उनमें से दूसरे दण्डक में जीवादि पदों के तीन भंग होते हैं; क्योंकि मिथ्यात्व-प्रतिपन्न (प्राप्त) जीव बहुत हैं और सम्यक्त्व से भ्रष्ट होने के बाद मिथ्यात्व को प्रतिपद्यमान एक जीव भी सम्भव है। मिथ्यादृष्टि के प्रकरण में एकेन्द्रिय जीवों में 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश', यह एक ही भंग पाया जाता है, क्योंकि एकेन्द्रिय जीवों में अवस्थित और उत्पद्यमान बहुत होते हैं। इस (मिथ्यादृष्टि-) प्रकरण में सिद्धों का कथन नहीं करना चाहिए-सम्यग्-मिथ्यादृष्टि जीवों के एकवचन और बहुवचन, ये दो दण्डक कहने चाहिए। उनमें से बहुवचन के दण्डक में ६ भंग होते हैं; क्योंकि सम्यग्-मिथ्यादृष्टित्व को प्राप्त और प्रतिपद्यमान एकादि जीव भी पाये जाते हैं। इस सम्यग्-मिथ्यादृष्टि द्वार में एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सिद्ध जीवों का कथन नहीं करना चाहिए, क्योंकि उनमें सम्यग् मिथ्यादृष्टित्व असम्भव है।

Elaboration—(6) Drishti dvar—In the two categories of *Samyagdrishti* at the first moment of attaining righteousness it is *apradesh* state and after that it is *sapradesh*. For the second category aforesaid three alternatives should be stated for beings including *jiva* (in general). In *vikalendriyas* one or more *sasvadan samyagdrishti jivas* (one who had a fleeting taste of righteousness) already born or just born are available. For this reason six alternatives (*bhang*) should be mentioned for them. One-sensed beings are exclusively unrighteous, as such they are not

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

included among the righteous. For unrighteous jivas two categories of singular and plural should be stated. For the second category aforesaid three alternatives should be stated for beings including *jiva* (in general). This is because there are numerous beings who have become unrighteous and there may be one being who falls from righteousness. In context of unrighteousness there is no alternative (*abhang*) just one state possible for one-sensed beings—many with sections and many without sections. This is because every moment many one-sensed beings are born. In the unrighteous category *Siddhas* are not included. For righteous-unrighteous *jivas* two categories of singular and plural should be stated. For the second category there are six aforesaid alternatives. This is because one or more righteous-unrighteous *jivas* already born or just born are available. In this category of righteous-unrighteous one-sensed beings, two to four sensed beings and *Siddhas* are not to be included because that is impossible.

७. *संयत द्वार* SAMYAT DVAR (PORT OF THE RESTRAINED)

१२. [१] संजतेहिं जीवाइओ तियभंगो।

[२] असंजतेहिं एगिंदियवज्जो तियभंगो।

[३] संजतासंजतेहिं तियभंगो जीवादिओ।

[४] नोसंजय–नोअसंजय–नोसंजतासंजत जीव–सिद्धेहिं तियभंगो।

१२. [१] संयतों में जीवादि तीन भंग कहने चाहिए।

[२] असंयतों में एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए।

[३] संयतासंयत जीवों में जीवादि तीन भंग कहने चाहिए।

[४] नोसंयत–नोअसंयत–नोसंयतासंयत जीव और सिद्धों में तीन भंग कहने चाहिए।

12. [1] For *samyat jivas* (restrained beings) three alternatives, including *jiva* (in general), should be mentioned.

[2] For *asamyat jivas* (unrestrained beings), other than one-sensed beings three alternatives, including *jiva* (in general), should be mentioned.

[3] For *samyat-asamyat jivas* (restrained-unrestrained beings) three alternatives, including *jiva* (in general), should be mentioned.

[4] For *no-samyat - no-asamyat - no-samyat-asamyat jivas* (neither restrained nor unrestrained or restrained-unrestrained beings) and *Siddhas* three alternatives should be mentioned.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

विवेचन : ७. संयत द्वार–'संयत' जीवों में तीन भंग कहने चाहिए; क्योंकि संयम को प्राप्त बहुत जीव होते हैं, संयम को प्रतिपद्यमान एकादि जीव होते हैं। **संयत द्वार** में केवल दो ही पद कहने चाहिए–जीव पद और मनुष्य पद, क्योंकि दूसरे जीवों में संयतत्व का अभाव है। असंयत जीवों के एकवचन और बहुवचन को लेकर दो दण्डक कहने चाहिए। उनमें से बहुवचन सम्बन्धी द्वितीय दण्डक में तीन भंग होते हैं, क्योंकि असंयतत्व को प्राप्त बहुत जीव होते हैं, तथा संयतत्व से भ्रष्ट होकर असंयतत्व को प्राप्त करते हुए एकादि जीव होते हैं, इसलिए उनमें तीन भंग घटित हो सकते हैं। एकेन्द्रिय जीवों में पूर्वोक्त युक्ति के अनुसार 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश'–यह एक ही भंग पाया जाता है। इस असंयत प्रकरण में 'सिद्ध पद' नहीं कहना चाहिए; क्योंकि सिद्धों में असंयतत्व नहीं होता। **'संयतासंयत'** पद में भी एकवचन–बहुवचन को लेकर दो दण्डक कहने चाहिए। उनमें से दूसरे दण्डक में बहुवचन की अपेक्षा पूर्वोक्त तीन भंग कहने चाहिए; क्योंकि संयतासंयत्व–देशविरतिपन को प्राप्त बहुत जीव होते हैं; और उससे भ्रष्ट होकर या असंयम का त्याग कर संयतासंयतत्व को प्राप्त होते हुए एकादि जीव होते हैं। अतः तीन भंग घटित होते हैं। इस संयतासंयत द्वार में भी जीव, पंचेन्द्रियतिर्यंच और मनुष्य, ये तीन पद ही कहने चाहिए; क्योंकि इन तीन पदों के अतिरिक्त अन्य जीवों में संयतासंयतत्व नहीं पाया जाता। नोसयंत–नोअसंयत–नोसंयतासंयत द्वार में जीव और सिद्ध, ये दो पद ही कहने चाहिए, भंग भी पूर्वोक्त तीन होते हैं।

Elaboration—(7) Samyat dvar—For restrained beings three alternatives should be stated because there are numerous beings who have attained that state and there are one or more beings in the process of attaining that state. In the *samyat* state there are only two classes—*jiva* (in general) and human beings. In all beings other than humans there is absence of restraint. In unrestrained (*asamyat*) there are two categories of singular and plural. For the second category aforesaid three alternatives (*bhang*) should be stated. This is because there are numerous beings who have become unrestrained and there may be one or more beings who fall from the state of restraint to become unrestrained. For one-sensed beings there is no alternative (*abhang*) just one state as aforesaid—many *sapradesh* and many *apradesh*. *Siddhas* are not included in this class of unrestrained because they are beyond it. For *samyat-asamyat* too there are two categories of singular and plural. For the second category aforesaid three alternatives should be stated. This is because there are numerous beings who have become *samyat-asamyat* (partial detachment or *desh-virati*) and there may be one or more beings who shift from the state of *asamyat* to become *samyat-asamyat*. In this *samyat-asamyat dvar* too only *jiva* (in general), five-sensed animals and humans are included because this state is not possible in other beings. In the *no-samyat - no-asamyat - no-samyat-asamyat* class only *jiva* (in general) and *Siddhas* should be stated and they too have three alternatives as aforesaid.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. [१] सकसाईहिं जीवादिओ तियभंगो। एगिंदिएसु अभंगकं। कोहकसाईहिं जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो। देवेहिं छब्भंगा। माणकसाई मायाकसाई जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो। नेरइयदेवेहिं छब्भंगा। लोभकसायीहिं जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो। नेरइएसु छब्भंगा।

[२] अकसाई जीव–मणुएहिं सिद्धेहिं तियभंगो।

१३. [१] सकषायी जीवों में जीवादि तीन भंग कहने चाहिए। एकेन्द्रियों (सकषायी) में अभंगक (तीन भंग नहीं, किन्तु मात्र एक भंग) कहना चाहिए। क्रोधकषायी जीवों में जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए। मानकषायी और मायाकषायी जीवों में जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए। नैरयिकों और देवों में छह भंग कहने चाहिए। लोभकषायी जीवों में जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए। नैरयिक जीवों में छह भंग कहने चाहिए।

[२] अकषाई जीवों, जीव, मनुष्य और सिद्धों में तीन भंग कहने चाहिए।

13. [1] For *sakashaayi jivas* (beings with passions) three alternatives, including *jiva* (in general) should be stated. For one-sensed (with passions) no alternative (*abhang*) just one state should be stated. For *krodh-kashaayi jivas* (beings with anger), leaving aside one-sensed beings, three alternatives should be stated. For *maan-kashaayi* and *maaya-kashaayi jivas* (beings with conceit and deceit), leaving aside *jiva* (in general) and one-sensed beings, three alternatives should be stated. For infernal and divine beings six alternatives should be stated. For *lobh-kashaayi jivas* (beings with greed), leaving aside *jiva* (in general) and one-sensed beings, three alternatives (*bhang*) should be stated. For infernal beings six alternatives should be stated.

[2] For *akashaayi jivas* (beings without passions)—three alternatives should be stated for *jiva* (in general), humans and *Siddhas*.

विवेचन : ८. कषाय द्वार–सकषायी जीवों में तीन भंग पाये जाते हैं, यथा–(१) सकषायी जीव, सदा अवस्थित होने से सप्रदेश होते हैं–यह प्रथम भंग; (२) उपशमश्रेणी से गिरकर सकषायावस्था को प्राप्त होते हुए एकादि जीव पाये जाते हैं इसलिए 'बहुत सप्रदेश और एक अप्रदेश' यह दूसरा भंग तथा 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश' यह तीसरा भंग। नैरयिकादि में तीन भंग पाये जाते हैं। एकेन्द्रिय जीवों में अभंग है–अर्थात् उनमें अनेक भंग नहीं, किन्तु 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश' यह एक ही भंग पाया जाता है; क्योंकि एकेन्द्रिय जीवों में बहुत जीव 'अवस्थित' और बहुत जीव 'उत्पद्यमान' पाये जाते हैं। सकषायी द्वार में 'सिद्ध पद' नहीं कहना चाहिए; क्योंकि सिद्ध कषायरहित होते हैं। इसी तरह क्रोधादि कषायों में कहना चाहिए। क्रोधकषाय के एकवचन–बहुवचन दण्डकद्वय में से दूसरे दण्डक में बहुवचन से जीव पद में और पृथ्वीकायादि पदों में 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश' यह एक भंग ही कहना चाहिए; क्योंकि मान, माया और लोभ से निवृत्त होकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रोधकषाय को प्राप्त होते हुए जीव अनन्त होने से यहाँ एकादि का सम्भव नहीं है, इसलिए सकषायी जीवों की तरह तीन भंग नहीं हो सकते। शेष (एकवचन) में तीन भंग कहने चाहिए।

देवपद में देवों सम्बन्धी तेरह ही दण्डकों में छह भंग कहने चाहिए; क्योंकि उनमें क्रोधकषाय के उदय वाले जीव अल्प होने से एकत्व और बहुत्व, दोनों सम्भव हैं; अतः सप्रदेशत्व-अप्रदेशत्व दोनों सम्भव हैं। मानकषाय और मायाकषाय वाले जीवों के भी एकवचन-बहुवचन को लेकर दण्डद्वय क्रोधकषाय की तरह कहने चाहिए। उनमें से दूसरे दण्डक में नैरयिकों और देवों में ६ भंग होते हैं, क्योंकि मान और माया के उदय वाले जीव थोड़े ही पाये जाते हैं। लोभकषाय का कथन, क्रोधकषाय की तरह करना चाहिए। लोभकषाय के उदय वाले नैरयिक अल्प होने से उनमें ६ भंग पाये जाते हैं। निष्कर्ष यह है कि देवों में लोभ बहुत होता है, और नैरयिकों में क्रोध अधिक। इसलिए क्रोध, मान और माया में देवों के ६ भंग और मान, माया और लोभ में नैरयिकों के ६ भंग कहने चाहिए। **अकषायी द्वार** के भी एकवचन और बहुवचन ये दो दण्डक होते हैं। उनमें से दूसरे दण्डक में जीव, मनुष्य और सिद्ध पद में तीन भंग कहने चाहिए। इन तीन पदों के सिवाय अन्य दण्डकों का कथन नहीं करना चाहिए, क्योंकि दूसरे जीव अकषायी नहीं हो सकते।

Elaboration—(8) Kashaaya dvar—There are three alternatives for beings with passions (*sakashaayi*)—(1) Because they always exist, *sakashaayis* are *sapradesh*; there are one or more beings falling from the path of pacification (*upasham shreni*) to the state maligned with passions involving two alternatives—(2) many *sapradesh* and one *apradesh* and (3) many *sapradesh* and many *apradesh*. Infernal and other beings also have three alternatives. For one-sensed beings there is no alternative (*abhang*) just one state—many *sapradesh* (with sections) and many *apradesh* (without sections). This is because in one-sensed beings there are always many existent beings and many in the process of being born. *Siddhas* are not included among the *sakashaayi jivas* because they are absolutely free of passions. The same should be repeated for other passions including anger. Out of the singular and plural categories of *krodh-kashaaya* (anger) in the plural category there is only one state 'many *sapradesh* and many *apradesh*' for *jiva* (in general) and one-sensed beings including earth-bodied ones. This is because every moment there are infinite beings rising above conceit, deceit and greed into anger alone, thus singular option is not applicable here. As regards the singular category all the three alternatives should be stated.

In the class of divine beings six alternatives (*bhang*) should be stated for all the thirteen kinds. This is because among divine beings the number of those with fruition of anger is very low and thus one and more both are possible; therefore both the states of *sapradesh* and *apradesh*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

are possible. For beings with conceit and deceit two categories of singular and plural should be stated just like anger. In the plural category there are six alternatives for infernal and divine beings because there are very few beings with the fruition of conceit and deceit. What has been stated for anger should be repeated for greed. As the number of infernal beings with greed is low, for them six alternatives should be stated. This means that greed is more among divine beings and anger is more among infernal beings. Therefore with regard to anger, conceit and deceit there are six alternatives among divine beings and with regard to conceit, deceit and greed there are six alternatives among infernal beings. In *akashaayi* (without passions) class also there are two categories of singular and plural. In the plural category three alternatives should be stated for *jiva* (in general), humans and *Siddhas*. No other class of beings are included here because besides these three other beings cannot be without passions.

९. *ज्ञान द्वार* JNANA DVAR (PORT OF KNOWLEDGE)

१४. [१] ओहियनाणे, आभिणिबोहियनाणे, सुयनाणे, जीवादिओ तियभंगो। विगलिंदिएहिं छब्भंगा। ओहिनाणे मणपज्जवमाणे केवलनाणे जीवादिओ तियभंगो।

[२] ओहिए अण्णाणे, मतिअण्णाणे, सुयअण्णाणे एगिंदियवज्जो तियभंगो। विभंगगाणे जीवादिओ तियभंगो।

१४. [१] औधिक (समुच्चय) ज्ञान आभिनिबोधिक ज्ञान, और श्रुतज्ञान में जीवादि तीन भंग कहने चाहिए। विकलेन्द्रियों में छह भंग कहने चाहिए। अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और केवलज्ञान में जीवादि तीन भंग कहने चाहिए।

[२] औधिक (समुच्चय) अज्ञान, मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान में एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए। विभंगज्ञान में जीवादि तीन भंग कहने चाहिए।

14. [1] For *jnana* (in general), *abhinibodhik jnana* (sensory knowledge) and *shrut jnana* (scriptural knowledge) three alternatives (*bhang*) should be stated for *jiva* (in general). For *vikalendriyas* six alternatives should be stated. For *avadhi jnana, manah-paryav jnana* and *Keval jnana* three alternatives should be stated for *jiva* (in general).

[2] For *ajnana* (in general), *abhinibodhik ajnana* (lack of sensory knowledge) and *shrut ajnana* (lack of scriptural knowledge) three alternatives should be stated for beings other than one-sensed ones. For *vibhang jnana* (perverse knowledge) three alternatives should be stated for *jiva* (in general).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : ९. **ज्ञान द्वार**–मति आदि सामान्य ज्ञान को औधिक ज्ञान कहते हैं। औधिक (सामान्य) ज्ञान में तथा मतिज्ञान और श्रुतज्ञान में एकवचन और बहुवचन को लेकर दो दण्डक होते हैं। दूसरे दण्डक में जीवादि पदों के तीन भंग होते हैं। यथा–औधिकज्ञानी, मतिज्ञानी और श्रुतज्ञानी सदा अवस्थित होने से वे सप्रदेश हैं, यह एक भंग, मिथ्याज्ञान से निवृत्त होकर मात्र मत्यादिज्ञान को प्राप्त होने वाले एवं श्रुत–अज्ञान से निवृत्त होकर श्रुतज्ञान को प्राप्त होने वाले एकादि जीव पाये जाते हैं, इसलिए, तथा मति–अज्ञान से निवृत्त होकर मतिज्ञान को प्राप्त होने वाले 'बहुत सप्रदेश और एकादि अप्रदेश' यह दूसरा भंग, तथा 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश' यह तीसरा भंग होता है। विकलेन्द्रियों में सास्वादन सम्यक्त्व होने से मत्यादिज्ञान वाले एकादि जीव पाये जाते हैं, इसलिए उनमें ६ भंग घटित हो जाते हैं। यहाँ पृथ्वीकायादि जीव तथा सिद्धपद का कथन नहीं करना चाहिए, क्योंकि उनमें मत्यादिज्ञान नहीं होते। इसी प्रकार अवधिज्ञान आदि में भी तीन भंग सम्भव हैं। विशेषता यह है कि अवधिज्ञान के एकवचन–बहुवचन–दण्डकद्वय में एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सिद्धों का कथन नहीं करना चाहिए। मनःपर्यवज्ञान के उक्त दण्डकद्वय में जीव और मनुष्य का ही कथन करना चाहिए, क्योंकि इनके सिवाय अन्यों को मनःपर्यवज्ञान नहीं होता। केवलज्ञान के उक्त दोनों दण्डकों में भी मनुष्य और सिद्ध का ही कथन करना चाहिए, क्योंकि दूसरे जीवों को केवलज्ञान नहीं होता।

मति आदि सामान्य (औधिक) अज्ञान, मति–अज्ञान और श्रुत–अज्ञान, इनमें जीवादि पदों में तीन भंग घटित हो जाते हैं, तथा–(१) ये सदा अवस्थित होते हैं, इसलिए 'सभी सप्रदेश' यह प्रथम भंग हुआ, (२–३) अवस्थित के सिवाय जब दूसरे जीव, ज्ञान को छोड़कर मति–अज्ञानादि को प्राप्त होते हैं, तब उनके एकादि का सम्भव होने से दूसरा और तीसरा भंग भी घटित हो जाता है। एकेन्द्रिय जीवों में 'बहुत सप्रदेश और बहुत प्रदेश' यह एक ही भंग पाया जाता है। सिद्धों में तीनों अज्ञान असम्भव होने से उनमें अज्ञानों का कथन नहीं करना चाहिए। विभंगज्ञान में जीवादि पदों में मति–अज्ञानादि की तरह तीन भंग कहने चाहिए। इसमें एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सिद्धों का कथन नहीं करना चाहिए।

Elaboration—(9) Jnana dvar—*Aughik jnana* means knowledge in general. There are two categories of singular and plural for *jnana* (in general) and *Mati* and *Shrut jnana*. For *jiva* (in general) there are three alternatives in the plural category—(1) As beings with *aughik-jnana, mati-jnana* and *shrut-jnana* always exist they are *sapradesh*; there are one or more beings progressing from states of ignorance, *mati-ajnana* and *shrut-ajnana* to state of knowledge, *mati-jnana* and *shrut-jnana* respectively, involving two alternatives—(2) many *sapradesh* and one *apradesh* and (3) many *sapradesh* and many *apradesh*. As *vikalendriyas* have *saasvadan samyaktva* (fleeting taste of righteousness), one or more beings with *jnana* including the right one are available among them; for this reason there are six alternatives (*bhang*) for them. Here one-sensed beings including earth-bodied beings and *Siddhas* are to be excluded because they are devoid of the said *jnanas*. In the same way, for *avadhi-jnana* and other higher *jnanas* there are three alternatives each. The difference is that in the two categories of beings with *avadhi-jnana* one to

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

four sensed beings and *Siddhas* are not included. In the two categories of beings with *manah-paryav jnana* only *jiva* (in general) and humans are included because all others are incapable of acquiring *manah-paryav jnana*. In the two categories of beings with *Keval jnana* only humans and *Siddhas* are included because others cannot acquire *Keval-jnana*.

For *ajnana* (in general) and *Mati* and *Shrut ajnana*, for *jiva* (in general) there are three alternatives in the plural category—(1) As beings with *aughik-ajnana*, *mati-ajnana* and *shrut-ajnana* always exist they are *sapradesh* (with sections); there are one or more beings regressing from states of knowledge, *mati-jnana* and *shrut-jnana* to states of ignorance, *mati-ajnana* and *shrut-ajnana* respectively, involving two alternatives—(2) many *sapradesh* and one *apradesh* and (3) many *sapradesh* and many *apradesh* (without sections). For one-sensed beings there is only one state possible—many *sapradesh* and many *apradesh*. As there is no scope of any of these three *ajnanas* in *Siddhas* they are not included here. With regard to *vibhang jnana* the pattern of *ajnana* is to be followed. Here one to four sensed beings and *Siddhas* are not included.

१०. *योग द्वार* YOGA DVAR (PORT OF ASSOCIATION)

१५. [१] सजोगी जहा ओहिओ। मणजोगी वयजोगी कायजोगी जीवादिओ तियभंगो, णवरं कायजोगी एगिंदिया तेसु अभंगकं।

[२] अजोगी जहा अलेसा।

१५. [१] औधिक जीवों की भाँति सयोगी जीवों का कथन करना चाहिए। मनोयोगी, वचनयोगी और काययोगी में जीवादि तीन भंग कहने चाहिए। विशेषता यह है कि जो काययोगी एकेन्द्रिय होते हैं, उनमें अभंगक (अधिक भंग नहीं, केवल एक भंग) होता है।

[२] अयोगी जीवों का कथन अलेश्य जीवों के समान है।

15. [1] *Sayogi jivas* (beings with association) should be described like *jivas* (in general). For *manoyogi, vachan-yogi* and *kaaya yogi* three alternatives including *jiva* etc. should be stated. The difference is that for one-sensed *kaaya yogi* beings there is only one state (*abhang*).

[2] *Ayogi jivas* (beings without association) follow the pattern of *aleshya jivas* (beings without soul complexion).

विवेचन : १०. योग द्वार—सयोगी जीवों के एक–बहुवचन दोनों दण्डक औधिक जीवादि की तरह कहने चाहिए। यथा–सयोगी जीव नियमतः सप्रदेशी होते हैं। नैरयिकादि सयोगी तो सप्रदेश और अप्रदेश दोनों होते हैं, किन्तु बहुत जीव सप्रदेश ही होते हैं। इस प्रकार नैरयिकादि सयोगी में तीन भंग होते हैं–एकेन्द्रियादि सयोगी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवों में केवल तीसरा ही भंग पाया जाता है। यहाँ सिद्ध का कथन नहीं करना चाहिए, क्योंकि वे अयोगी होते हैं। मनोयोगी, अर्थात् तीनों योगों वाले संज्ञी जीव, वचनयोगी अर्थात् एकेन्द्रियों को छोड़कर शेष सभी जीव, और काययोगी, अर्थात् एकेन्द्रियादि सभी जीव। इनमें जीवादि पद में तीन भंग होते हैं। जब मनोयोगी आदि जीव अवस्थित होते हैं, तब उनमें 'सभी सप्रदेश' यह प्रथम भंग पाया जाता है और जब अमनोयोगीपन छोड़कर मनोयोगीपन आदि में उत्पत्ति होती है, तब प्रथम समयवर्ती अप्रदेशत्व की दृष्टि से दूसरे दो भंग पाये जाते हैं। विशेष यह है–काययोगी में एकेन्द्रियों में अनेक भंग न होकर सिर्फ एक ही भंग होता है 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश'। तीनों योगों के दण्डकों में यथासम्भव जीवादि पद कहने चाहिए; किन्तु सिद्धपद का कथन नहीं करना चाहिए। **अयोगी द्वार** का कथन अलेश्य द्वार के समान कहना चाहिए। अतः इसके दूसरे दण्डक में अयोगी जीवों में, जीव और सिद्धपद में तीन भंग और अयोगी मनुष्य में छह भंग कहने चाहिए।

Elaboration—(10) Yoga dvar—Two categories of *Sayogi jivas* (beings with association) should be described like *jivas* (in general). As a rule *sayogi jivas* are *sapradeshi. Sayogi* infernal beings are *sapradesh* as well as *apradesh* but most of them are *sapradesh* (with sections) therefore *sayogi* infernal beings have three alternatives. For one-sensed *sayogi* beings there is only the third alternative. *Siddhas* are not included here because they are *ayogi. Manoyogi* means sentient beings with three *yogas. Vachan-yogi* means all beings besides one-sensed beings. *Kaayayogi* means all beings including one-sensed beings. Among these for *jiva* etc. there are three alternatives (*bhang*)—in context of existent beings the first alternative of 'all *sapradesh*' is applicable. In context of the transitional state from non-association to association the other two alternatives related to the first moment of transition are applicable. The difference is that with regard to *kaayayogis* there is only one alternative for one-sensed beings—many *sapradesh* and many *apradesh*. For all categories of the three *yogas* mostly *jiva* etc. should be stated but never *Siddha. Ayogi jivas* (beings without association) follow the pattern of *aleshya jivas* (beings without soul-complexion). Thus for the plural category of *ayogi jivas* three alternatives for *jiva* (in general) and *Siddhas* and six alternatives for humans should be stated.

११. *उपयोग द्वार* UPAYOGA DVAR (DOOR OF INVOLVEMENT)

१६. सागारोवउत्त–अणागारोवउत्तेहिं जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो।

१६. साकार उपयोग वाले और अनाकार उपयोग वाले जीवों में जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए।

16. For *jivas* with *saakaar upayoga* (cognitive involvement) and *anaakaar upayoga* (perceptive involvement), leaving aside *jiva* (in general) and one-sensed beings, three alternatives should be stated.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : ११. उपयोग द्वार–साकारोपयोगी और अनाकारोपयोगी नैरयिक आदि में तीन भंग तथा जीव पद और पृथ्वीकायादि पदों में एक ही भंग (बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश) कहना चाहिए। इन दोनों उपयोगों में से किसी एक में से दूसरे उपयोग में जाते हुए प्रथम समय में अप्रदेशत्व और इतर समयों में सप्रदेशत्व स्वयं घटित कर लेना चाहिए। सिद्धों में तो एक समयोपयोगीपन है, तो भी साकार और अनाकार उपयोगी की बारम्बार प्राप्ति होने से सप्रदेशत्व और एक बार प्राप्ति होने से अप्रदेशत्व होता है। इस प्रकार साकार–उपयोग को बारम्बार प्राप्त ऐसे बहुत सिद्धों की अपेक्षा एक भंग (सभी सप्रदेश), उन्हीं सिद्धों की अपेक्षा तथा एक बार साकारोपयोग को प्राप्त एक सिद्ध की अपेक्षा–'बहुत सप्रदेश और एक अप्रदेश', यह दूसरा भंग तथा बारम्बार साकारोपयोग–प्राप्त बहुत सिद्धों की अपेक्षा एवं एक बार साकारोपयोग–प्राप्त बहुत सिद्धों की अपेक्षा–'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश'–यह तृतीय भंग समझना चाहिए। अनाकार उपयोग में बारम्बार अनाकारोपयोग को प्राप्त बहुत सिद्धों की अपेक्षा प्रथम भंग, उन्हीं सिद्धों की अपेक्षा तथा एक बार अनाकारोपयोग प्राप्त एक सिद्ध जीव की अपेक्षा द्वितीय भंग और बारम्बार अनाकारोपयोग प्राप्त बहुत सिद्धों की अपेक्षा तथा एक बार अनाकारोपयोग प्राप्त बहुत सिद्धों की अपेक्षा तृतीय भंग जानना चाहिए।

Elaboration—(11) Upayoga dvar—For infernal beings with *saakaar upayoga* (cognitive involvement) and *anaakaar upayoga* (perceptive involvement) three alternatives should be stated. For *jiva* (in general) and one-sensed beings including earth-bodied ones only one alternative (many *sapradesh* and many *apradesh*) should be stated. For transitional state from one to another of these two, *apradesh* for the first moment of transition and *sapradesh* for post transition should be stated. *Siddhas* have a continuous transition of involvement (*samayopayogi*) but they have two alternatives (*bhang*)—*sapradesh* related to continuous transition and *apradesh* related to one time transition. Thus the three alternatives for *saakaar upayoga* are—in context of many *Siddhas* with continuous transition to *saakaar* state it is 'all *sapradesh*'; in context of many *Siddhas* with continuous transition to *saakaar* state and one *Siddha* with one time transition to *saakaar* state it is 'many *sapradesh* and one *apradesh*'; in context of many *Siddhas* with continuous transition to *saakaar* state and many *Siddhas* with one time transition to *saakaar* state it is 'many *sapradesh* and one *apradesh*'. Three alternatives for *anakaar upayoga* are—in context of many *Siddhas* with continuous transition to *anakaar* state it is 'all *sapradesh*'; in context of many *Siddhas* with continuous transition to *anakaar* state and one *Siddha* with one time transition to *anakaar* state it is 'many *sapradesh* and one *apradesh*'; in context of many *Siddhas* with continuous transition to *anakaar* state and many *Siddhas* with one time transition to *anakaar* state it is 'many *sapradesh* and one *apradesh*'.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. वेद द्वार VEDA DVAR (DOOR OF GENDER)

१७. [१] सवेयगा य जहा सकसाई। इत्थिवेयग–पुरिसवेयग–नपुंसगवेयगेसु जीवादिओ तियभंगो, नवरं नपुंसगवेदे एगिंदिएसु अभंगयं।

[२] अवेयगा जहा अकसाई।

१७. [१] सवेदक जीवों का कथन सकषायी जीवों के समान है। स्त्रीवेदी, पुरुषवेदी और नपुंसकवेदी जीवों में जीवादि तीन भंग पाये जाते हैं। विशेष यह है कि नपुंसकवेद में जो एकेन्द्रिय होते हैं, उनमें अभंगक (अधिक भंग नहीं, किन्तु एक भंग) है।

[२] जैसे अकषायी जीवों के विषय में कथन किया, वैसे ही अवेदक (वेदरहित) जीवों के विषय में कहना चाहिए।

17. [1] *Jivas* with *vedas* (genderic beings) should be described like *sakashaayi jivas* (beings with passions). In feminine, masculine and neuter beings there are three alternatives of *jiva* etc. Difference is that in the one-sensed neuter beings there is only one state (*abhang*).

[2] What has been stated about *akashaayi jivas* (beings without passions) should be repeated for *aveda jivas* (non-genderic beings).

विवेचन : १२. वेद द्वार–सवेदक जीवों का कथन सकषायी जीवों के समान है। सवेदक जीवों में भी जीवादि–पद में वेद को प्राप्त बहुत जीवों और उपशम श्रेणी से गिरने के बाद सवेद अवस्था को प्राप्त होने वाले एकादि जीवों की अपेक्षा तीन भंग घटित होते हैं। एकेन्द्रियों में एक ही भंग तथा स्त्रीवेदक आदि में तीन भंग पाये जाते हैं। जब एक वेद से दूसरे वेद में संक्रमण होता है, तब प्रथम समय में अप्रदेशत्व और द्वितीय आदि समयों में सप्रदेशत्व होता है, यों तीन भंग घटित होते हैं। नपुंसकवेद के एकवचन–बहुवचन रूप दो दण्डकों में तथा एकेन्द्रियों में 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश' यह एक भंग पाया जाता है। स्त्रीवेद और पुरुषवेद के दण्डकों में देव, पंचेन्द्रिय तिर्यंच एवं मनुष्य ही कहने चाहिए। सिद्धपद का कथन तीनों वेदों में नहीं करना चाहिए। अवेदक जीवों का कथन अकषायी की तरह करना चाहिए। इसमें जीव, मनुष्य और सिद्ध ये तीन पद ही कहने चाहिए। इनमें तीन भंग पाये जाते हैं।

Elaboration—(12) Veda dvar—*Savedak jivas* (genderic beings or beings classified on the basis of their mental and physical sexual functions—male, female and neuter) are described like *sakashaayi jivas* (beings with passions). To *savedak jivas* (genderic beings) three alternatives, including *jiva* (in general) are applicable because of the existence of many beings with gender and one or more in transitional state from *upasham shreni* (higher level of pacification; eighth and higher *Gunasthans*) to genderic state. For one-sensed beings there is only one alternative and for each gender including feminine there are three alternatives. This is because in these cases also there is existence of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

many beings with one particular gender and one or more in transitional state from one gender to another. For the two categories of singular and plural in neuter gender as well as one-sensed beings there is only one state—'many *sapradesh* and many *apradesh*'. In the class of feminine and masculine genders only divine beings, five-sensed animals and humans are included. *Siddhas* are not included in any of these three genders. *Avedak jivas* (non-genderic or gender transcendent beings) are to be described as *akashaayi jivas* (beings without passions). These include only *jiva* (in general), humans and *Siddhas* and there are three alternatives (*bhang*).

१३. *शरीर द्वार* SHARIRA DVAR (PORT OF THE BODY)

१८. [१] ससरीरी जहा ओहिओ। ओरालिय-वेउव्वियसरीराणं जीवएगिंदियवज्जो तियभंगो। आहारगसरीरे जीव-मणुएसु छब्भंगा। तेयग-कम्मगाणं जहा ओहिया।

[२] असरीरेहिं जीव-सिद्धेहिं तियभंगो।

१८. [१] औधिक जीवों के समान ही सशरीर जीवों के विषय में कहना चाहिए। औदारिक और वैक्रियशरीर वाले जीवों में जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए। आहारक शरीर वाले जीवों में जीव और मनुष्य में छह भंग कहने चाहिए। तैजस् और कार्मण शरीर वाले जीवों का कथन औधिक जीवों के समान कहना चाहिए।

[२] अशरीरी, जीव और सिद्धों के लिए तीन भंग कहने चाहिए।

18. [1] *Sasharira jivas* (beings with a body) should be described as *aughik jivas* (beings in general). For beings with *Audarik* and *Vaikriya sharira* (gross physical and transmuted body), leaving aside *jiva* (in general) and one-sensed beings, three alternatives should be stated. For *jiva* (in general) and humans among beings with *ahaarak sharira* (telemigratory body) six alternatives are to be stated. Beings with *taijas* and *karman sharira* (fiery and *karmic* bodies) should be described like *aughik jivas* (beings in general).

[2] Three alternatives should be stated for *ashariri jivas* (soul without body), *jiva* (in general) and *Siddhas*.

विवेचन : १३. शरीर द्वार—सशरीर के दो दण्डकों में औधिक दण्डक के समान जीवपद में सप्रदेशत्व ही कहना चाहिए। क्योंकि सशरीरीपन अनादि है। नैरयिकादि में सशरीरत्व का बाहुल्य होने से तीन भंग और एकेन्द्रियों में केवल तृतीय भंग ही कहना चाहिए। औदारिक और वैक्रियशरीर वाले जीवों में जीवपद और एकेन्द्रिय पदों में बहुत्व के कारण केवल तीसरा भंग ही पाया जाता है; क्योंकि जीवपद और एकेन्द्रिय पदों में प्रतिक्षण शरीर प्रतिपन्न और प्रतिपद्यमान जीव बहुत पाये जाते हैं। शेष जीवों में तीन भंग पाये जाते हैं, क्योंकि उनमें प्रतिपन्न बहुत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाये जाते हैं। एक औदारिक या एक वैक्रियशरीर को छोड़कर दूसरे औदारिक या दूसरे वैक्रियशरीर को प्राप्त होने वाले एकादि जीव पाये जाते हैं। औदारिकशरीर के दण्डकद्वय में नैरयिकों और देवों का कथन तथा वैक्रियशरीर के दण्डकद्वय में पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वनस्पतिकाय और विकलेन्द्रिय जीवों का कथन नहीं करना चाहिए; क्योंकि नारकों और देवों के औदारिक तथा (वायुकाय के सिवाय) पृथ्वीकायादि में वैक्रियशरीर नहीं होता। वैक्रिय दण्डक में एकेन्द्रिय पद में जो तृतीय भंग–(बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश) कहा गया है, वह असंख्यात वायुकायिक जीवों में प्रतिक्षण होने वाली वैक्रिय क्रिया की अपेक्षा से कहा गया है। यद्यपि वैक्रियलब्धि वाले पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य अल्प होते हैं, तथापि उनमें जो तीन भंग कहे गये हैं, वे वैक्रियावस्था वाले अधिक संख्या में हैं, इस अपेक्षा से सम्भावित हैं। इसके अतिरिक्त पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्यों में एकादि जीवों की वैक्रियशरीर की प्रतिपद्यमानता जाननी चाहिए। आहारकशरीर की अपेक्षा जीव और मनुष्यों में पूर्वोक्त छह भंग होते हैं, क्योंकि आहारक–शरीर जीव और मनुष्य पदों के सिवाय अन्य जीवों में न होने से आहारकशरीरी थोड़े होते हैं। तैजस और कार्मण शरीर का कथन औधिक जीवों के समान करना चाहिए। औधिक जीव सप्रदेश होते हैं, क्योंकि तैजस–कार्मणशरीर–संयोग अनादि है। नैरयिकादि में तीन भंग और एकेन्द्रियों में केवल तृतीय भंग कहना चाहिए। इन सशरीरादि दण्डकों में सिद्धपद का कथन नहीं करना चाहिए। (सप्रदेशत्वादि से कहने योग्य) अशरीर जीवादि में जीवपद और सिद्धपद ही कहना चाहिए; क्योंकि इनके सिवाय दूसरे जीवों में अशरीरत्व नहीं पाया जाता। इस तरह अशरीरपद में तीन भंग कहने चाहिए।

Elaboration—(13) Sharira dvar—Like the general category the plural and singular categories of beings (in general) with a body (*sashariri*) are to be described in the *sapradesh* (with sections) class. This is because the association of soul and body is without a beginning. For infernal beings three alternatives should be stated because majority of them possess a body. For one-sensed beings only the third alternative should be stated. In beings with *audarik* and *vaikriya shariras* for beings (in general) and one-sensed beings only third alternative is applicable due to their numbers. This is because in these two categories the number of *jivas* born and in process of being born every moment is very high. In other types of *jivas* there are three alternatives because among them there are many already born *jivas* and one or more beings in states of transition from one type of *audarik* or *vaikriya* body to another type of *audarik* and *vaikriya* body. In the two categories of *audarik sharira* infernal and divine beings are not included as they do not have *audarik* bodies. In the two categories of *vaikriya sharira* earth-bodied, water-bodied, fire-bodied, plant-bodied beings and two to four sensed beings are not included because they do not have *vaikriya* bodies. For the *vaikriya* category the third alternative (many *sapradesh* and many *apradesh*) is stated because of the process of transmutation the air-bodied beings undergo every moment. Although the number of five-sensed animals and humans endowed with power of transmutation is small, the three

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

alternatives (*bhang*) attributed to them could be because of the larger number of those in the state of transmutation. Besides this there are one or more *jivas* in the process of transition. In the *aharak sharira* category for *jiva* (in general) and human beings there are six categories as aforesaid. This is because *aharak shariras* are available only in *jiva* (in general) and humans and thus the number of beings with this type of body is very small. *Taijas* and *karman shariras* follow the pattern of *jivas* in general. They are only *sapradesh* because the association of soul with *taijas* and *karman shariras* is without a beginning. For infernal beings three alternatives should be stated and for one-sensed beings only third alternative. In all these categories of soul with a body *Siddhas* are not included. For *jivas* without body (*asharira*) only *jiva* (in general) and *Siddha* should be included because no other *jiva* class can be without a body. Thus there are three alternatives for *asharira* category.

१४. *पर्याप्ति द्वार* PARYAPTI DVAR (DOOR OF FULL DEVELOPMENT)

१९. [१] आहारपज्जत्तीए सरीरपज्जत्तीए इंदियपज्जत्तीए आणापाणपज्जत्तीए जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो। भासामणपज्जत्ती जहा सण्णी।

[२] आहारअपज्जत्तीए जहा अणाहारगा। सरीरअपज्जत्तीए इंदियअपज्जत्तीए आणआपाणअपज्जत्तीए जीवेगिंदियवज्जो तियभंगो, नेरइय–देव–मणुएहिं छब्भंगा। भासामणअपज्जत्तीए जीवादिओ तियभंगो, णेरइय–देव–मणुएहिं छब्भंगा।

१९. [१] आहार–पर्याप्ति, शरीर–पर्याप्ति, इन्द्रिय–पर्याप्ति और श्वासोच्छ्वास–पर्याप्ति वाले जीवों में जीव और एकेन्द्रिय को छोड़कर तीन भंग कहने चाहिए। भाषा–पर्याप्ति और मनः–पर्याप्ति वाले जीवों का कथन संज्ञी जीवों के समान कहना चाहिए।

[२] आहार–अपर्याप्ति वाले जीवों का कथन अनाहारक जीवों के समान कहना चाहिए। शरीर–अपर्याप्ति, इन्द्रिय–अपर्याप्ति और श्वासोच्छ्वास–अपर्याप्ति वाले जीवों में जीव और एकेन्द्रिय को छोड़ तीन भंग कहने चाहिए। (अपर्याप्तक) नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग कहने चाहिए। भाषा–अपर्याप्ति और मनः–अपर्याप्ति वाले जीवों में जीव आदि तीन भंग कहने चाहिए। नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग जानने चाहिए।

19. [1] For *jivas* with fully developed faculties of intake, body, sense organs and respiration (*ahaar-paryapti, sharira-paryapti, indriya-paryapti,* and *shvasochhavas-paryapti*), leaving aside *jiva* (in general) and one-sensed beings, three alternatives should be stated. *Jivas* with fully developed faculties of speech and mind (*bhasha-paryapti* and *manah-paryapti*) follow the pattern of sentient beings (*sanjni jivas*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[2] Beings with underdeveloped faculty of intake (*ahaar-aparyapti*) follow the pattern of *anahaarak jivas* (beings without intake). For *jivas* with underdeveloped faculties of body, sense organs and respiration (*sharira-aparyapti, indriya-aparyapti,* and *shvasochhavas-aparyapti*), leaving aside *jiva* (in general) and one-sensed beings, three alternatives should be stated. For underdeveloped infernal, divine and human beings six alternatives should be stated. For beings with underdeveloped faculties of speech and mind (*bhasha-paryapti* and *manah-paryapti*) three alternatives (*bhang*) should be stated including *jiva* (in general). In this context six alternatives should be stated for infernal, divine and human beings.

विवेचन : १४. पर्याप्ति द्वार–जीवपद और एकेन्द्रिय पदों में **आहार–पर्याप्ति आदि को प्राप्त** तथा आहारादि की अपर्याप्ति से मुक्त होकर आहारादि–पर्याप्ति को प्राप्त होने वाले जीव बहुत हैं, इसलिए इनमें 'बहुत सप्रदेश और बहुत अप्रदेश' यह एक ही भंग होता है; शेष जीवों में तीन भंग पाये जाते हैं। यद्यपि भाषा–पर्याप्ति और मनः–पर्याप्ति, ये दोनों पर्याप्तियाँ भिन्न–भिन्न हैं, तथापि बहुश्रुत महापुरुषों द्वारा सम्मत होने से ये दोनों पर्याप्तियाँ एकरूप मान ली गई हैं। अतएव भाषा–मनः–पर्याप्ति द्वारा पर्याप्त जीवों का कथन संज्ञी जीवों की तरह करना चाहिए। इन सब पदों में तीन भंग कहने चाहिए। यहाँ केवल पंचेन्द्रिय पद ही लेना चाहिए। आहार–अपर्याप्ति दण्डक में जीवपद और पृथ्वीकायिक आदि पदों में 'बहुत सप्रदेश–बहुत अप्रदेश'–यह एक ही भंग कहना चाहिए। क्योंकि आहार–पर्याप्ति से रहित विग्रहगति समापन्न बहुत जीव निरन्तर पाये जाते हैं। शेष जीवों में पूर्वोक्त ६ भंग होते हैं, क्योंकि शेष जीवों में आहार–पर्याप्ति रहित जीव थोड़े पाये जाते हैं। शरीर–अपर्याप्ति द्वार में जीवों और एकेन्द्रियों में एक भंग एवं शेष जीवों में तीन भंग कहने चाहिए, क्योंकि शरीरादि से अपर्याप्त जीव कालादेश की अपेक्षा सदा सप्रदेश ही पाये जाते हैं, अप्रदेश तो कदाचित् एकादि पाये जाते हैं। नैरयिक, देव और मनुष्यों में छह भंग कहने चाहिए। भाषा और मन की पर्याप्ति से अपर्याप्त जीव वे हैं, जिनको जन्म से भाषा और मन की योग्यता तो हो, किन्तु उसकी सिद्धि न हुई हो। ऐसे जीव पंचेन्द्रिय ही होते हैं। अतः इन जीवों में और पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में भाषा व मन–अपर्याप्ति को प्राप्त बहुत जीव होते हैं, और इसकी अपर्याप्ति को प्राप्त होते हुए एकादि जीव ही पाये जाते हैं। इसलिए उनमें पूर्वोक्त तीन भंग घटित होते हैं। नैरयिकादि में भाषा–मनःअपर्याप्तकों की अल्पतरता होने से उनमें एकादि सप्रदेश और अप्रदेश पाये जाने से पूर्वोक्त ६ भंग होते हैं। इन पर्याप्ति-अपर्याप्ति के दण्डकों में सिद्धपद नहीं कहना चाहिए, क्योंकि सिद्धों में पर्याप्ति और अपर्याप्ति नहीं होती। *[वृत्ति, पत्रांक २६१ से २६६ तक, भगवती सूत्र (हिन्दी विवेचनयुक्त) भा. २, पृष्ठ ९८४ से ९९५ तक]*

Elaboration—(14) Paryapti dvar—Among *jiva* (in general) and one-sensed beings there is a large number of beings having attained and in the process of attaining the said full developments, therefore only one state is applicable—many *sapradesh* and many *apradesh* (without sections). For the remaining *jivas* three alternatives are applicable. Although *bhasha-paryapti* and *manah-paryapti* are different they are considered as one by great scholarly sages. Therefore, *jivas* with fully

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

developed faculties of speech and mind (*bhasha-manah-paryapti*) follow the pattern of sentient beings (*sanjni jivas*). For all these categories that are applicable only to five-sensed beings three alternatives are applicable. In the *ahaar-aparyapti* category for *jiva* (in general) and one-sensed beings including earth-bodied beings only one state—many *sapradesh* and many *apradesh*—should be stated. This is because always a large number of beings devoid of the faculty of intake and undergoing oblique movement exist. For remaining beings aforesaid six alternatives are applicable because there are very few beings devoid of *ahaar-paryapti*. For the *sharira-aparyapti* category there is only one state in *jivas* (in general) and one-sensed beings and three alternatives in other beings. This is because underdeveloped beings are always *sapradesh* in relation to time; very rarely they are *apradesh*. Here six alternatives (*bhang*) should be stated for infernal, divine and human beings. Beings with underdeveloped faculties of speech and mind are only those that do have these faculties but have not attained full development. Such beings are always five-sensed beings. Therefore in these beings and five-sensed animals there is a large number of beings with *bhasha-manah-aparyapti* and one or more in process. That is the reason three alternatives are applicable to them. In infernal beings there are only a few in this category. As such, among them there are only one or more *sapradesh* (with sections) and *apradesh* requiring aforesaid six alternatives. In these categories of fully developed and underdeveloped beings *Siddha* category is not included because they are beyond these. *(Vritti, leaves 261-266 and Bhagavati Sutra with Hindi commentary, part 2, pp. 984-995)*

उपसंहार CONCLUSION

२०. गाहा– सपदेसाऽऽहारग भविय सण्णि लेस्सा दिट्ठी संजय कसाए।
णाणे जोगुवओगे वेदे य सरीर पज्जत्ती॥१॥

२०. संग्रहणी गाथा–सप्रदेश, आहारक, भव्य, संज्ञी, लेश्या, दृष्टि, संयत, कषाय, ज्ञान, योग, उपयोग, वेद, शरीर और पर्याप्ति, इन चौदह द्वारों का कथन ऊपर किया गया है।

20. Collative verse—*Sapradesh* (with sections), *ahaarak* (beings with intake), *bhavya* (worthy), *sanjni* (sentient), *leshya* (soul complexion), *drishti* (attitude), *samyat* (restrained), *kashaaya* (passions), *jnana* (knowledge), *yoga* (association), *upayog* (involvement), *veda* (gender), *sharira* (body) and *paryapti* (full development)—these fourteen *dvars* (ports; categories) have been mentioned above.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. [प्र. १] जीवा णं भंते ! किं पच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी, पच्चक्खाणापच्चक्खाणी ?

[उ.] गोयमा ! जीवा पच्चक्खाणी वि, अपच्चक्खाणी वि, पच्चक्खाणाऽपच्चक्खाणी वि।

२१. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव (१) प्रत्याख्यानी हैं (पाप का त्याग करने वाले), (२) अप्रत्याख्यानी हैं, या (३) प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यानी हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव प्रत्याख्यानी भी हैं, अप्रत्याख्यानी भी हैं और प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यानी भी हैं।

21. [**Q. 1**] *Bhante* ! Are living beings (*jivas*) (1) with *pratyakhyan* (renunciation of sinful activities), (2) with *apratyakhyan* (non-renunciation of sinful activities) or (3) with *pratyakhyan-apratyakhyan* (renunciation - non-renunciation of sinful activities) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings are with *pratyakhyan* (renunciation of sinful activities), with *apratyakhyan* (non-renunciation of sinful activities) as well as with *pratyakhyan-apratyakhyan* (renunciation - non-renunciation of sinful activities).

[प्र. २] सव्वजीवाणं एवं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नेरइया अपच्चक्खाणी जाव चउरिंदिया, सेसा दो पडिसेहेयव्वा। पंचेंदियतिरिक्खजोणिया णो पच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी वि, पच्चक्खाणापच्चक्खाणे वि। मणुस्सा तिण्णि वि। सेसा जहा नेरइया।

[प्र. २.] इसी तरह सभी जीवों के सम्बन्ध में यही प्रश्न है, (कि वे प्रत्याख्यानी हैं, अप्रत्याख्यानी हैं या प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यानी हैं ?)

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव अप्रत्याख्यानी हैं, यावत् चतुरिन्द्रिय जीवों तक अप्रत्याख्यानी हैं, अतः इन जीवों में शेष दो भंगों का निषेध करना चाहिए। पंचेन्द्रिय तिर्यंच प्रत्याख्यानी नहीं हैं, किन्तु अप्रत्याख्यानी हैं और प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यानी भी हैं। मनुष्य तीनों भंग के स्वामी हैं। शेष जीवों का कथन नैरयिकों की तरह करना चाहिए।

[Q. 2] Is it universally true for all *jivas* (living beings; souls) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are *apratyakhyani* (without renunciation of sinful activities)... and so on up to... four-sensed beings are *apratyakhyani*, therefore the other two aforesaid alternatives are not applicable to them. Five-sensed animals are not *pratyakhyani* (with renunciation) but *apratyakhyani* (without-renunciation) as well as *pratyakhyani-apratyakhyani* (with and without renunciation). To humans all the three said alternatives are applicable. All the remaining beings follow the pattern of infernal beings.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं पच्चक्खाणं जाणंति, अपच्चक्खाणं जाणंति, पच्चक्खाणापच्चक्खाणं जाणंति ?

[उ.] गोयमा ! जे पंचेंदिया ते तिण्णि वि जाणंति, अवसेसा पच्चक्खाणं न जाणंति।

२२. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव प्रत्याख्यान को जानते हैं, अप्रत्याख्यान को जानते हैं और प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यान को जानते हैं ?

[उ.] गौतम ! जो पंचेंद्रिय जीव हैं, वे तीनों को जानते हैं। शेष जीव प्रत्याख्यान आदि तीनों को नहीं जानते।

22. [Q.] *Bhante* ! Do living beings (*jivas*) know *pratyakhyan* (renunciation of sinful activities), do they know *apratyakhyan* (non-renunciation of sinful activities) and do they know *pratyakhyan-apratyakhyan* (renunciation - non-renunciation of sinful activities) ?

[Ans.] Gautam ! The five-sensed beings know all the three. The rest do not know renunciation (any of the three).

२३. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं पच्चक्खाणं कुव्वंति अपच्चक्खाणं कुव्वंति, पच्चक्खाणापच्चक्खाणं कुव्वंति ?

[उ.] जहा ओहिया तहा कुव्वणा।

२३. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव प्रत्याख्यान करते हैं, अप्रत्याख्यान करते हैं, प्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान करते हैं ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार औधिक दण्डक (समुच्चय में) कहा है, उसी प्रकार प्रत्याख्यान करने के विषय में कहना चाहिए।

23. [Q.] *Bhante* ! Do living beings (*jivas*) practice *pratyakhyan* (renunciation of sinful activities), do they practice *apratyakhyan* (non-renunciation of sinful activities) and do they practice *pratyakhyan-apratyakhyan* (renunciation - non-renunciation of sinful activities) ?

[Ans.] Gautam ! What has been stated about beings in general (aphorism 21) should be repeated for practice of *pratyakhyan*.

प्रत्याख्यान निबद्ध आयु LIFE SPAN DETERMINED BY PRATYAKHYAN

२४. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं पच्चक्खाणनिव्वत्तियाउया, अपच्चक्खाणनिव्वत्तियाउया, पच्चक्खाणा-पच्चक्खाणनिव्वत्तियाउया ?

[उ.] गोयमा ! जीवा य वेमाणिया य पच्चक्खाणणिव्वत्तियाउया तिण्णि वि। अवसेसा अपच्चक्खाणनिव्वत्तियाउया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२४. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव, प्रत्याख्यान से निबद्ध आयुष्य वाले हैं ? अप्रत्याख्यान से निबद्ध आयुष्य वाले हैं अथवा प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यान से निबद्ध आयुष्य वाले हैं ? (अर्थात्-क्या जीवों का आयुष्य प्रत्याख्यान से बँधता है यावत् ....)

[उ.] गौतम ! जीव और वैमानिक देव प्रत्याख्यान से निबद्ध आयुष्य वाले हैं, अप्रत्याख्यान से और प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यान से निबद्ध आयुष्य वाले भी हैं। शेष सभी जीव अप्रत्याख्यान से निबद्ध आयुष्य वाले हैं।

24. [Q.] *Bhante* ! Are beings with a life-span determined by *pratyakhyan*, are they with a life-span determined by *apratyakhyan*, or are they with a life-span determined by *pratyakhyan-apratyakhyan* ?

[Ans.] Gautam ! *Jiva* (in general) and Vaimanik gods are with a life-span determined by *pratyakhyan*, they are with a life-span determined by *apratyakhyan* as well as by *pratyakhyan-apratyakhyan*. All other beings are with a life-span determined by *apratyakhyan*.

विवेचन : प्रत्याख्यानी–सावद्य प्रवृत्ति का त्यागी। **अप्रत्याख्यानी**–अविरत, जिसने कोई भी व्रत स्वीकार नहीं किया हो।

प्रत्याख्यानाऽप्रत्याख्यानी–देशविरत। व्रतधारी श्रावक। चारित्रमोह कर्म के क्षयोपशम से प्रत्याख्यान की पात्रता आती है।

(१) जीव प्रत्याख्यानी भी हैं, अप्रत्याख्यानी भी हैं, प्रत्याख्यानी-अप्रत्याख्यानी भी हैं। (२) नैरयिकों से लेकर चतुरिन्द्रिय जीव तक तथा भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देव अप्रत्याख्यानी होते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय अप्रत्याख्यानी और प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यानी दोनों होते हैं, तथा मनुष्य तीनों ही होते हैं। (३) संज्ञी पंचेन्द्रिय के सिवाय कोई भी जीव प्रत्याख्यानादि को नहीं जानते हैं। (४) समुच्चय जीव और मनुष्य प्रत्याख्यानादि तीनों ही करते हैं, तिर्यंच पंचेन्द्रिय अप्रत्याख्यान और प्रत्याख्याना-प्रत्याख्यान करते हैं और शेष २२ दण्डक के जीव प्रत्याख्यान नहीं करते। (५) समुच्चय जीव और वैमानिक देवों में उत्पन्न होने वाले जीव प्रत्याख्यान आदि तीनों भंगों में आयुष्य बाँधते हैं, शेष २३ दण्डक के जीव अप्रत्याख्यान में आयुष्य बाँधते हैं।

प्रत्याख्यानकरण का आशय–प्रत्याख्यान तभी होता है, जबकि वह किया जाता है। सच्चे अर्थों में प्रत्याख्यान वही करता है, जो प्रत्याख्यान एवं प्रत्याख्यान-अप्रत्याख्यान को जानता हो।

प्रत्याख्यानादि निर्वर्तित आयुष्यबन्ध का आशय–प्रत्याख्यान आदि से आयुष्य बाँधे हुए को प्रत्याख्यानादि-निर्वर्तित आयुष्यबन्ध कहते हैं। प्रत्याख्यान वाले जीवों की उत्पत्ति प्रायः वैमानिकों में, एवं अप्रत्याख्यानी अविरत जीवों की उत्पत्ति प्रायः नैरयिक आदि में होती है। *(वृत्ति, पत्रांक २६७)*

Elaboration—*Pratyakhyani* means one who has renounced all sinful activities. *Apratyakhyani* means one who is attached and who has not taken any vow of abstainment. *Pratyakhyani-apratyakhyani* means one with partial detachment or a *shraavak* who has taken vows. The capacity of renunciation develops with the destruction-cum-pacification of *Chaaritramoha karma* (conduct-disturbing *karma*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(1) Generally speaking living beings are *pratyakhyani, apratyakhyani* as well as *pratyakhyan-apratyakhyani*. (2) Starting from infernal beings up to four-sensed beings as also Bhavanpati, Vaanavyantar, Jyotishk and Vaimanik gods are *apratyakhyani*. Five-sensed animals are *apratyakhyani* as well as *pratyakhyan-apratyakhyani*. Humans can be of all the three classes. (3) Besides five-sensed beings no other beings know of these three. (4) *Jiva* (in general) and humans practice all the three. Five-sensed animals practice *apratyakhyan* as well as *pratyakhyan-apratyakhyan*. All other beings belonging to 22 *Dandaks* practice only *apratyakhyan*. (5) *Jiva* (in general) and Vaimanik gods are with a life-span determined by all the three alternatives of *pratyakhyan*. All other beings belonging to 23 *Dandaks* are with a life-span determined by *apratyakhyan*.

Doing pratyakhyan—*Pratyakhyan* manifests only when it is resolved or formally accepted. In the true sense of the word, *pratyakhyan* is done only by a person who knows and understands these three alternatives (*bhang*).

Life-span—The life-span determined by the bondage of *karmas* acquired through *pratyakhyan* (etc.) is called *pratyakhyan* (etc.) *nirvartit ayushya bandh*. Living beings practicing *pratyakhyan* are generally born as Vaimanik gods and those who are attached and do not practice *pratyakhyan* are generally born in the infernal world. *(Vritti, leaf 267)*

उपसंहार : गाथा **CONCLUDING VERSE**

२५. पच्चक्खाणं १ जाणइ २ कुव्वति ३ तेणेव आउनिव्वत्ती ४।
सपदेसुद्देसम्मि य एमेए दंडगा चउरो॥२॥

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ छट्ठे सए : चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

२५. प्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान का जानना, करना, तीनों का (जानना, करना), तथा आयुष्य की निर्वृत्ति, इस प्रकार ये चार दण्डक सप्रदेश (नामक चतुर्थ) उद्देशक में कहे गये हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् यह इसी प्रकार है।

॥ छठा शतक : चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

25. *Pratyakhyan*, knowing and practicing *pratyakhyan*, knowing and practicing all three and determining of life-span, these four topics have been discussed in this lesson titled *Sapradesh* (fourth lesson).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so."

● **END OF THE FOURTH LESSON OF THE SIXTH CHAPTER** ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : पंचम उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : FIFTH LESSON

तमस्काय TAMASKAAYA (BODY OF DARKNESS)

तमस्काय क्या, कैसी है ? WHAT IS TAMASKAAYA ?

१. [प्र. १] किमियं भंते ! तमुक्काए त्ति पवुच्चति, किं पुढवी तमुक्काए त्ति पवुच्चति, आऊ तमुक्काए त्ति पवुच्चति ?

[उ.] गोयमा ! नो पुढवी तमुक्काए त्ति पवुच्चति, आऊ तमुक्काए त्ति पवुच्चति।

१. [प्र. १] भगवन् ! 'तमस्काय' किसे कहा जाता है ? क्या पृथ्वी को 'तमस्काय' कहते हैं या पानी को ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वी तमस्काय नहीं किन्तु पानी 'तमस्काय' कहलाता है।

1. [Q. 1] *Bhante* ! What is called *Tamaskaaya* (body of darkness or agglomerative entity of water-derived darkness) ? Is earth called *Tamaskaaya* or water ?

[Ans.] Earth is not called *Tamaskaaya* (body of darkness) but water is called *Tamaskaaya*.

[प्र. २] से केणट्ठेणं ?

[उ.] गोयमा ! पुढविकाए णं अत्थेगइए सुभे देसं पकासेति, अत्थेगइए देसं नो पकासेइ, से तेणट्ठेणं।

[प्र. २] भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

[उ.] गौतम ! कुछ पृथ्वीकाय ऐसी शुभ है, जो देश (कुछ भाग) को प्रकाशित करती है और कुछ पृथ्वीकाय ऐसी है, जो देश (भाग) को प्रकाशित नहीं करती। इस कारण से पृथ्वी तमस्काय नहीं कहलाती, पानी ही तमस्काय कहलाता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! There are some earth-bodies that glow in sections and there are some earth-bodies that do not glow in sections. Therefore earth is not called *Tamaskaaya* but water is called *Tamaskaaya*.

२. [प्र.] तमुक्काए णं भंते ! कहिं समुट्ठिए ? कहिं सन्निट्ठिए ?

[उ.] गोयमा ! जंबुद्दीवस्स दीवस्स बहिया तिरियमसंखेज्जे दीव–समुद्दे वीइवइत्ता अरुणवरस्स दीवस्स बाहिरिल्लाओ वेइयंताओ अरुणोदयं समुद्दं बायालीसं जोयणसहस्साणि ओगाहित्ता उवरिल्लाओ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जलंताओ एकपदेसियाए सेढीए इत्थ णं तमुक्काए समुट्ठिए। सत्तरस एक्कवीसे जोयणसए उड्ढं उप्पतित्ता तओ पच्छा तिरियं पवित्थरमाणे पवित्थरमाणे सोहम्मीसाण–सणंकुमार–माहिंदे चत्तारि वि कप्पे आवरित्ता णं उड्ढं पि य णं जाव बंभलोगे कप्पे रिट्ठविमाणपत्थडं संपत्ते, एत्थ णं तमुक्काए सन्निट्ठिए।

२. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय कहाँ से समुत्थित (उत्पन्न–प्रारम्भ) होती है और कहाँ जाकर सन्निष्ठित (समाप्त) होती है ?

[उ.] गौतम ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप के बाहर तिरछे असंख्यात द्वीप–समुद्रों को पार करने के बाद अरुणवर द्वीप आता है, उस द्वीप की बाहरी वेदिका के अन्त से अरुणोदय समुद्र में ४२,००० योजन जाने पर वहाँ जल के ऊपर के सिरे से एक प्रदेश की श्रेणी में तमस्काय उठती है। (अर्थात् नीचे से लेकर ऊपर उठती एक समान दीवार रूप है।) वहाँ से १,७२१ योजन ऊँची जाने के बाद तिरछी विस्तृत होती हुई, सौधर्म, ईशान, सनत्कुमार और माहेन्द्र, इन चार देवलोकों (कल्पों) को आच्छादित करके उनसे भी ऊपर पंचम ब्रह्मलोककल्प के रिष्टविमान नामक पाथड़े तक पहुँच जाती है। यहीं तमस्काय समाप्त होती है।

2. [Q.] *Bhante* ! Where does *Tamaskaaya* (agglomerative entity of darkness) begin (*samutthit*) and where does it end ?

[Ans.] Gautam ! Outside the Jambudveep continent after obliquely crossing innumerable pairs of island-seas (*dveep-samudra*) one reaches Arunavar continent. At the end of its outer *vedika* (plateau) is Arunavar sea. Crossing 42 thousand Yojans (a linear measure approximately equal to 8 miles) in that sea comes a point on the water surface from where *Tamaskaaya* (agglomerative entity of darkness) rises into space as a matrix (*shreni*) of single space-point dimension (depth). Going perpendicular for 1721 Yojans it turns and extends to envelope four divine dimensions (heavens), namely Saudharma, Ishan, Sanatkumar and Maahendra kalps, and goes up to Risht Vimaan of the fifth Brahmalok *kalp*. This is the point where *Tamaskaaya* ends.

३. [प्र.] तमुक्काए णं भंते ! किंसंठिए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! अहे मल्लगमूलसंठिए, उप्पिं कुक्कुडगपंजरगसंठिए पण्णत्ते।

३. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय का संस्थान (आकार) किस प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! तमस्काय नीचे तो मल्लक (शराब या सिकोरे) के मूल के आकार का है और ऊपर कुर्क्कुपंजरक अर्थात् मुर्गे के पिंजरे के आकार का है।

3. [Q.] *Bhante* ! What is the shape of *Tamaskaaya* ?

[Ans.] Gautam ! At the base it is of the shape of the base of a *mallak* (earthen pot of the shape of a conical tumbler) and at the top it is like cage of a cock (square shaped)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अरुणवर समुद्र में से उठलता तमस्काय का दृश्य

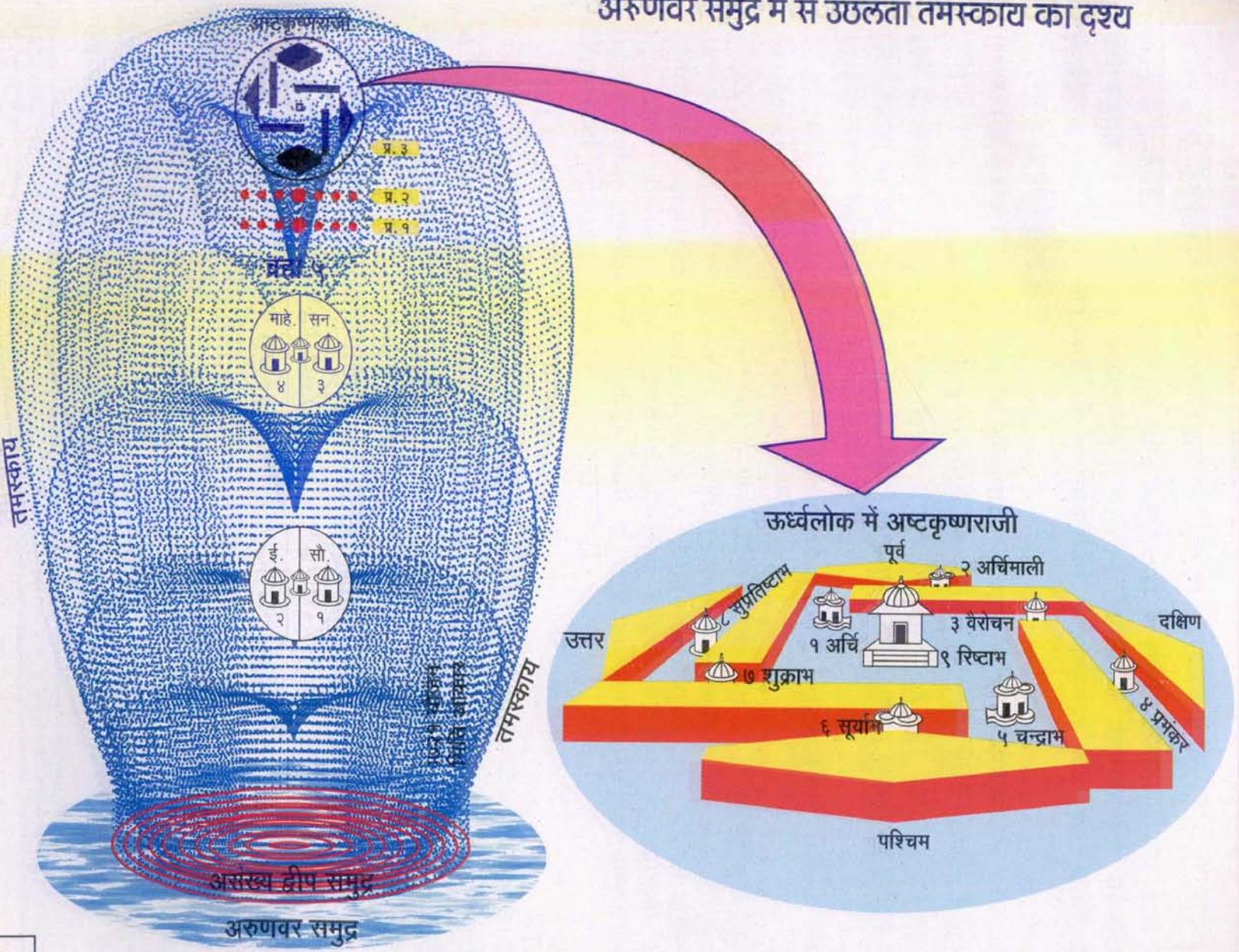

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-७

Illustration No. 7

तमस्काय

कहाँ से कहाँ तक—मध्यलोक स्थित जम्बूद्वीप के बाहर असंख्य द्वीप समुद्रों के बाद अरुणवर समुद्र आता है। इस समुद्र में ४२,००० योजन भीतर जाने पर जल के सघन पुद्गलों का एक अंधकार मय समूह सीधा ऊपर की ओर उठता है। यह अंधकाराच्छन्न जल जातीय पुद्गलों का समूह है। इसे तमस्काय (अंधकार समूह) कहते हैं। यह सीधी दीवार की आकृति में ऊपर उठती हुई १७२१ योजन ऊपर जाने के बाद तिरछी विस्तार लेती हुई ऊपर की ओर जाती है। १. सौधर्म, २. ईशान इन दोनों देवलोकों को घेरती हुई ऊपर, ३. सनत्कुमार, ४. माहेन्द्र देवलोक से भी ऊपर जाकर पाँचवें देवलोक के रिष्ट विमान के प्रस्तट तक पहुँच जाती है।

यह इतना सघन अंधकार समूह होता है कि देवता भी इसे पार करने में भयभीत होते हैं।

-शतक ६, उ. ५, सूत्र १ से १५

अष्ट कृष्णराजि—पाँचवें देवलोक के तृतीय प्रस्तट के नीचे समचौरस आकार वाली आठ कृष्णराजियाँ हैं। ये तमस्काय जैसी ही भयानक है। परन्तु यह बादर अप्कायिक जीव नहीं, किन्तु पृथ्वीकायिक जीवों का पुद्गल पिण्ड है। इनको पार करने में अत्यन्त शीघ्र गति वाले देव को भी १५ दिन तक लग सकते हैं। इनके बीच कोनों पर आठ लोकान्तिक देवों के (काले अंधकार की श्रेणी) आठ विमान हैं। तथा नौवां रिष्टाभ विमान मध्य में स्थित है। कृष्णराजि-पूर्व-पश्चिम षट्कोण, उत्तर-दक्षिण त्रिकोण तथा मध्य कोनों में चतुष्कोण आकृति में है।

-शतक ६, उ. ५, सूत्र १७-१८

TAMASKAAYA

In the middle world outside the Jambudveep continent after crossing innumerable pairs of island-seas one reaches Arunavar sea. Crossing 42 thousand Yojans in that sea comes a point on the water surface from where Tamaskaaya rises into space as a matrix (shreni) of single space-point dimension (depth). Going perpendicular for 1721 Yojans it turns and extends to envelope four divine dimensions (heavens), namely Saudharma, Ishan, Sanatkumar and Maahendra kalps, and goes up to Risht Vimaan of the fifth Brahmalok kalp.

This conglamorative entity of water-derived darkness is so dense that even gods are afraid to cross it.

-- Shatak-6, lesson-5, Sutra-1 - 15

Eight Krishna-rajis—Below the third level of the fifth heaven there are eight square shaped krishna-rajis. They are as fierce as Tamaskaaya. But they are earth-derived and not water-derived. To cross these even the fastest gods may take fifteen days. Eight celestial vehicles of eight Lokantik gods are located between the corners of these Rajis. A ninth celestial vehicle called Rishtabh is at the center. The outer krishna-rajis of east and west are hexagonal and those of north and south are triangular. All the inner krishna-rajis are square.

—Shatak-6, lesson-5, Sutra-17 - 18

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. [प्र.] तमुक्काए णं भंते केवइयं विक्खंभेणं ? केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–संखेज्जवित्थडे य असंखेज्जवित्थडे य। तत्थ णं जे से संखेज्जवित्थडे से णं संखेज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिक्खेवेणं पण्णत्ते। तत्थ णं जे से असंखिज्जवित्थडे से असंक्खेज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिक्खेवेणं पण्णत्ते।

४. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय का विष्कम्भ–विस्तार और परिक्षेप–घेरा कितना है ?

[उ.] गौतम ! तमस्काय दो प्रकार की है–एक तो संख्येय विस्तृत और दूसरी असंखेय विस्तृत। इनमें से जो संख्येय विस्तृत है, उसका विस्तार संख्येय हजार योजन है और घेरा असंख्येय हजार योजन है। जो तमस्काय असंख्येय विस्तृत है, उसका विष्कम्भ, असंख्येय हजार योजन और परिक्षेप भी असंख्येय हजार योजन है।

4. [Q.] *Bhante* ! What is the *vishkambh* (spread or area) and *parikshep* (circumference) of *Tamaskaaya* ?

[Ans.] Gautam ! *Tamaskaaya* is of two kinds—with limited expanse and with unlimited expanse. One with limited expanse has a spread of countable thousand Yojans and a circumference of innumerable thousand Yojans. One with unlimited expanse has a spread of innumerable thousand Yojans and a circumference of innumerable thousand Yojans.

५. [प्र.] तमुक्काए णं भंते ! केमहालए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! अयं णं जंबुद्दीवे दीवे सव्व दीव–समुद्दाणं सव्भंतराए जाव परिक्खेवेणं पण्णत्ते। देवे णं महिड्ढीए जाव 'इणामेव इणामेव' त्ति कट्टु केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं तिहिं अच्छरानिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्टित्ताणं हव्वमागच्छिज्जा। से णं देवे ताए उक्किट्ठाए तुरियाए जाव देवगईए वीईवयमाणे वीईवयमाणे जाव एकाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं छम्मासे वीईवएज्जा, अत्थेगइयं तमुक्कायं वीईवएज्जा, अत्थेगइयं तमुक्कायं नो वीईवएज्जा। एमहालए णं गोयमा ! तमुक्काए पन्नत्ते।

५. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय कितनी बड़ी है ?

[उ.] गौतम ! समस्त द्वीप–समुद्रों के बीचोंबीच यह जम्बूद्वीप है। यावत् यह एक लाख योजन का लम्बा–चौड़ा है। इसकी परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन तीन कोस एक सौ अट्ठाईस धनुष और साढ़े तेरह अंगुल से कुछ अधिक है। कोई महाऋद्धि यावत् महानुभाव वाला देव– 'यह चला, यह चला'; ऐसा करके तीन चुटकी बजाये, उतने समय में सम्पूर्ण जम्बूद्वीप की इक्कीस बार परिक्रमा करके शीघ्र वापस आ जाये, इस प्रकार की उत्कृष्ट और त्वरायुक्त देव की गति से चलता हुआ देव यावत् एक दिन, दो दिन, तीन दिन चले, यावत् उत्कृष्ट छह महीने तक चले तब जाकर कुछ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तमस्काय का उल्लंघन कर पाता है और कुछ तमस्काय का उल्लंघन नहीं कर पाता। हे गौतम ! तमस्काय इतना बड़ा है।

5. [Q.] *Bhante* ! How large is *Tamaskaaya* ?

[Ans.] At the center of all continents and all oceans there is a continent named Jambudveep. Its length and breadth is one hundred thousand Yojans. Its circumference is slightly more than three hundred sixteen thousand two hundred twenty seven (3,16,227) Yojans, three Kos (a linear measure equal to 2 miles), twenty eight Dhanush (a linear measure equivalent to four cubits), and thirteen and a half Angul (a linear measurement equal to the width of a finger). Suppose a god with great opulence... and so on up to... great influence goes around this Jambudveep 21 times and returns within the time taken in uttering—'Here I go.'—and snapping his finger thrice. If such a god moves with such great and fast divine speed for one day, two days, three days... and so on up to... a maximum of six months then he is able to cross some portion of *Tamaskaaya* and fails to cross some portion of *Tamaskaaya*. Gautam ! So large is *Tamaskaaya*.

६. [प्र.] अत्थि णं भंते ! तमुकाए गेहा ति वा, गेहावणा ति वा ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

७. [प्र.] अत्थि णं भंते ! तमुक्काए गामा ति वा जाव सन्निवेसा ति वा ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

८. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! तमुक्काए ओराला बलाहया संसेयंति, सम्मुच्छंति, वासं वासंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] तं भंते ! किं देवो पकरेति, असुरो पकरेति? णागो पकरेति?

[उ.] गोयमा ! देवो वि पकरेति, असुरो वि पकरेति, णागो वि पकरेति।

६. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय में गृह (घर) हैं, अथवा गृहापण (दुकानें) हैं।

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

७. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय में ग्राम हैं यावत् अथवा सन्निवेश हैं ?

[उ.] गौतम ! ऐसा नहीं है।

८. [प्र. १] भगवन् ! क्या तमस्काय में उदार (विशाल) मेघ संस्वेद को प्राप्त होते हैं, सम्मूर्च्छित मेघ का आकार लेते हैं और वर्षा बरसाते हैं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हाँ, गौतम ! ऐसा है।

[प्र. २] भगवन् ! क्या वह (मेघ संस्वेदन–सम्मूर्छन–वर्षण) देव करता है, असुर करता है या नाग करता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (ऐसा) देव भी करता है, असुर भी करता है और नाग भी करता है।

6. [Q.] *Bhante* ! Are there houses or shops (*grihapan*) in *Tamaskaaya*

[Ans.] Gautam ! It is not so.

7. [Q.] *Bhante* ! Are there villages... and so on up to... *sannivesh* (temporary settlement) in *Tamaskaaya* ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

8. [Q. 1] *Bhante* ! In *Tamaskaaya* do great clouds accumulate moisture, form into rain-clouds and cause shower ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so.

[Q. 2] *Bhante* ! Is it (aforesaid activities of clouds) done by a *Dev*, *Asur* or *Naag* (classes of divine beings) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is done by a *Dev*, *Asur* as well as a *Naag*.

९. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! तमुक्काए बादरे थणियसद्दे, बायरे विज्जुए ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] तं भंते ! किं देवो पकरेति ३ ?

[उ.] तिण्णि वि पकरेंति।

९. [प्र. १] भगवन् ! तमस्काय में क्या बादर स्तनित शब्द (स्थूल मेघगर्जन) है, क्या बादर विद्युत् है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! है।

[प्र. २] भगवन् ! क्या उसे देव करता है, असुर करता है या नाग करता है ?

[उ.] गौतम ! तीनों ही करते हैं।

9. [Q. 1] *Bhante* ! In *Tamaskaaya* is there loud thundering sound (of clouds) and gross (bright) lightening ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so.

[Q. 2] *Bhante* ! Is it produced by a *Dev*, *Asur* or *Naag* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is done by all three.

१०. [प्र.] अत्थि णं भंते ! तमुक्का बायरे पुढविकाए, बायरे अगणिकाए ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] णो तिणट्ठे समट्ठे, णण्णत्थ विग्गहगतिसमावन्नएणं।

१०. [प्र.] भगवन् ! क्या तमस्काय में बादर पृथ्वीकाय है और बादर अग्निकाय है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा नहीं है। किन्तु वहाँ विग्रहगतिसमापन्न बादर पृथ्वी और बादर अग्नि हो सकती है।

10. [Q.] *Bhante* ! Does *Tamaskaaya* contain gross (*baadar*) earth-bodies (*prithvikaaya*) and gross fire-bodies (*tejaskaaya*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not so. However, it may contain gross earth-bodies and gross fire-bodies with oblique movement (*vigrahagati samapanna*).

११. [प्र.] अत्थि णं भंते ! तमुक्काए चंदिम–सूरिय–गहगण–णक्खत्त–तारारूवा ?

[उ.] णो तिणट्ठे समट्ठे, पलियस्सओ पुण अत्थि।

११. [प्र.] भगवन् ! क्या तमस्काय में चन्द्रमा, सूर्य, ग्रहगण, नक्षत्र और तारारूप हैं ?

[उ.] गौतम ! यह ऐसा नहीं है, किन्तु वे (चन्द्रादि) तमस्काय के परिपार्श्व में हैं।

11. [Q.] *Bhante* ! Does *Tamaskaaya* have cosmic formations like moon, sun, planets, constellations and stars ?

[Ans.] Gautam ! It is not so. However, such formations including moon are in its vicinity.

१२. [प्र.] अत्थि णं भंते ! तमुक्काए चंदाभा ति वा, सूराभा ति वा ?

[उ.] णो तिणट्ठे समट्ठे, कादूसणिया पुण सा।

१२. [प्र.] भगवन् ! क्या तमस्काय में चन्द्रमा की आभा (प्रभा) या सूर्य की आभा है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ ऐसा नहीं है; किन्तु तमस्काय में (जो प्रभा है, वह) कादूषणिका–(चन्द्र–सूर्य की प्रभा को दूषित करने वाली) है।

12. [Q.] *Bhante* ! Does *Tamaskaaya* have glow like the moon or the sun ?

[Ans.] Gautam ! It is not so. However, it has murkiness (the attribute that defiles or darkens the glow of the sun and the moon).

१३. [प्र.] तमुक्काए णं भंते ! केरिसए वण्णेणं पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! काले कालोभासे गंभीरलोमहरिसजणणे भीमे उत्तासणे परमकिण्हे वण्णेणं पण्णत्ते। देवे वि णं अत्थेगइए जे णं तप्पढमयाए पासित्ता णं खुभाएज्जा। अहे णं अभिसमागच्छेज्जा, ततो पच्छा सीहं सीहं तुरियं तुरियं खिप्पामेव वीईवएज्जा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय का वर्ण कैसा है ?

[उ.] गौतम ! तमस्काय वर्ण से काला, काली कान्ति वाला, गम्भीर (गहरा), रोमहर्षक (रोंगटे खड़े करने वाला), भीम (भयंकर), उत्त्रासजनक और परम कृष्ण है। कोई एक देव भी उस तमस्काय को देखते ही सर्वप्रथम तो घबरा जाता है। कदाचित् कोई देव उस तमस्काय में प्रवेश करता है तो वह शीघ्रातिशीघ्र त्वरित गति से झटपट उसे पार कर जाता है।

13. [Q.] *Bhante* ! What is the appearance (colour) of *Tamaskaaya* ?

[Ans.] Gautam ! In appearance *Tamaskaaya* is black, with a black hue, dense, gruesome, hideous, terrifying and deep black. At its first sight even a god is horrified. If by chance a god enters it, he at once rushes out with great speed.

१४. [प्र.] तमुक्कायस्स णं भंते ! कइ नामधेज्जा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तेरस नामधेज्ज पण्णत्ता, तं जहा–तमे ति वा, तमुकाए ति वा, अंधकारे इ वा, महंधकारे इ वा, लोगंधकारे इ वा, लोगतमिस्से इ वा, देवंधकारे ति वा, देवंतमिस्से ति वा, देवारण्णे ति वा, देववूहे ति वा, देवफलिहे ति वा, देवपडिक्खोभे ति वा, अरुणोदए ति वा समुद्दे।

१४. [प्र.] भगवन् ! तमस्काय के कितने नाम हैं ?

[उ.] गौतम ! तमस्काय के तेरह नाम हैं, यथा–(१) तम, (२) तमस्काय, (३) अन्धकार, (४) महान्धकार, (५) लोकान्धकार, (६) लोकतमिस्र, (७) देवान्धकार, (८) देवतमिस्र, (९) देवारण्य (देवों के लिए भी अरण्य जंगल के समान भयावह), (१०) देवव्यूह (देवों के लिए भी चक्रव्यूह के समान दुर्भेद्य), (११) देवपरिध (गहरी खाई के समान गति में बाधक), (१२) देवप्रतिक्षोभ (देवों के क्षोभ का विषय), (१३) अरुणोदक समुद्र।

14. [Q.] *Bhante* ! How many names *Tamaskaaya* has ?

[Ans.] Gautam ! *Tamaskaaya* has thirteen names—(1) *Tam*, (2) *Tamaskaaya*, (3) *Andhakaar*, (4) *Mahandhakaar*, (5) *Lokandhakaar*, (6) *Lokatamisra*, (7) *Devandhakaar*, (8) *Devatamisra*, (9) *Devaranya* (terrifying like a forest even for gods), (10) *Devavyuha* (like a labyrinth impassable even for gods), (11) *Devaparigh* (impassable like a gorge), (12) *Devapratikshobh* (matter of disappointment for gods) and (13) *Arunodak Samudra*.

१५. [प्र.] तमुक्काए णं भंते ! किं पुढविपरिणामे, आउपरिणामे, जीवपरिणामे, पोग्गलपरिणामे ?

[उ.] गोयमा ! नो पुढविपरिणामे, आउपरिणामे वि, जीवपरिणामे वि, पोग्गलपरिणामे वि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. [प्र.] भगवन् ! क्या तमस्काय पृथ्वी का परिणाम है, जल का परिणाम है, जीव का परिणाम है अथवा पुद्गल का परिणाम है ?

[उ.] गौतम ! तमस्काय पृथ्वी का परिणाम नहीं है, किन्तु जल का परिणाम है, जीव का परिणाम भी है और पुद्गल का परिणाम भी है।

15. [Q.] *Bhante* ! Is *Tamaskaaya* a derivative of earth, a derivative of water, a derivative of *jiva* (life force or soul) or a derivative of matter ?

[Ans.] Gautam ! *Tamaskaaya* is not a derivative of earth, but a derivative of water, a derivative of *jiva* (life force or soul) as well as a derivative of matter.

१६. [प्र.] तमुक्काए णं भंते ! सव्वे पाणा भूता जीवा सत्ता पुढविकाइयत्ताए जाव तसकाइयत्ताए उववन्नपुव्वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! असई, अदुवा अणंतखुत्तो, णो चेव णं बादरपुढविकाइयत्ताए वा, बादरअगणिकाइयत्ताए वा।

१६. [प्र.] भगवन् ! क्या तमस्काय में सर्व प्राण, भूत, जीव और सत्त्व–पृथ्वीकायिक रूप में यावत् त्रसकायिक रूप में पहले उत्पन्न हो चुके हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (वे सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, तमस्काय में) अनेक बार अथवा अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चुके हैं; किन्तु बादर पृथ्वीकायिक रूप में या बादर अग्निकायिक रूप में उत्पन्न नहीं हुए हैं।

16. [Q.] *Bhante* ! Have all beings (*praan*), organisms (*bhoot*), souls (*jiva*), and entities (*sattva*) been born in *Tamaskaaya* earlier in the form of earth-bodied... and so on up to... mobile beings many times or infinite times ?

[Ans.] Yes, Gautam ! All these have been born many times or infinite times but never in the form of gross earth-bodies or gross fire-bodies.

विवेचन : **तमस्काय** का अर्थ–यह अन्धकारमय सघन पुद्गलों का समूह है। तमस्काय उदकरजःस्कन्धरूप है। क्योंकि जल अप्रकाशक होता है और तमस्काय भी अप्रकाशक है। दोनों (अप्काय और तमस्काय) का समान स्वभाव होने से तमस्काय अप्काय का ही परिणाम है। तमस्काय एकप्रदेश श्रेणीरूप है, इसका अर्थ है कि वह समभित्ति वाली अर्थात् नीचे से लेकर ऊपर तक एक समान भींत रूप श्रेणी है। एक आकाश–प्रदेश की श्रेणीरूप नहीं। तमस्काय का संस्थान मिट्टी के सकोरे के (मूल का) आकार–सा और ऊपर मुर्गे के पिंजरे के जैसा है। वह दो प्रकार का है–संख्येय योजन विस्तृत और असंख्येय योजन विस्तृत। पहला जलान्त (जल के ऊपर का स्तर) से प्रारम्भ होकर संख्येय योजन तक फैला हुआ है, दूसरा असंख्येय योजन तक विस्तृत और असंख्येय द्वीपों को घेरे हुए है। तमस्काय इतना विस्तृत है कि कोई देव ६ महीने तक अपनी उत्कृष्ट शीघ्र दिव्यगति से चले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो भी वह संख्येय योजन विस्तृत तमस्काय तक पहुँचता है, असंख्येय योजन तमस्काय तक पहुँचना बाकी रह जाता है।

तमस्काय में घर, ग्राम, नगर आदि नहीं हैं, किन्त वहाँ बड़े-बड़े मेघ उठते हैं, उमड़ते हैं, गर्जते हैं, बरसते हैं। बिजली भी चमकती है। देव, असुर या नागकुमार ये सब कार्य करते हैं। विग्रहगतिसमापन्न बादर पृथ्वी या अग्नि को छोड़कर तमस्काय में न बादर पृथ्वीकाय है, न अग्निकाय। तमस्काय में चन्द्र-सूर्यादि नहीं हैं, किन्तु उसके आसपास में हैं, उनकी प्रभा तमस्काय में पड़ती भी है, किन्तु तमस्काय के परिणाम से परिणत हो जाने के कारण नहीं जैसी है। तमस्काय काला, भयंकर काला और रोमहर्षक तथा त्रासजनक है। देवता भी उसे देखकर घबरा जाते हैं। यदि कोई देव साहस करके उसमें घुस भी जाये तो भी वह भय के मारे कायगति से अत्यन्त तेजी से और मनोगति से अतिशीघ्र बाहर निकल जाता है। तमस्काय पानी, जीव और पुद्गलों का परिणाम है, जलरूप होने के कारण वहाँ बादर वायु, वनस्पति और त्रस जीव उत्पन्न होते हैं। इनके अतिरिक्त अन्य जीवों का स्वस्थान न होने से उनकी उत्पत्ति तमस्काय में सम्भव नहीं है।

कृष्ण विवर के साथ समानता—आधुनिक वैज्ञानिकों ने बरमूदा-त्रिकोण (त्रिनिडाड समुद्र तट) के रहस्यमय क्षेत्र में यात्रा करते हुए जल का एक अत्यन्त सघन काला भयानक पर्वताकार अंधकार देखा। उसके निकट जाते ही राडार आदि ने काम करना बन्द कर दिया। जहाज की सब बत्तियाँ बुझ गईं। इंजन का स्टीम प्रेशर भी खत्म हो गया। वैज्ञानिकों ने उस यात्रा का पूरा विवरण दिया है। जो साप्ताहिक हिन्दुस्तान ९ सितम्बर १९७९ में 'बरमूदा-त्रिकोणः नये पुराने कितने कोण' नाम से छपा है। वैज्ञानिकों ने इसे कृष्ण विवर नाम दिया है। तमस्काय के उक्त वर्णन से कृष्ण विवर का वर्णन बहुत ही आश्चर्यजनक समानता रखता है। *(विशेष द्रष्टव्य : भगवई भाष्य, भाग २, पृष्ठ २७७)*

Elaboration—*Tamaskaaya* means a dense cluster of dark matter particles (*pudgala*). It is formed of water-bodies because water-bodies do not emit light and *Tamaskaaya* too does not. As they have same properties it can be inferred that *Tamaskaaya* is a derivative of water-bodies. *Tamaskaaya* is a matrix of one space-point depth. It has a uniform wall like structure from base to top and not a row of single space-points. At the base it is of the shape of the base of a *mallak* (earthen pot of the shape of a conical tumbler) and at the top it is like cage of a cock (square shaped). *Tamaskaaya* is of two kinds—with limited expanse and with unlimited expanse. The first starts at water surface and has a spread of countable thousand Yojans. The second has a spread of innumerable thousand Yojans and envelopes innumerable continents. The expanse of *Tamaskaaya* is so great that a god travelling with his maximum divine speed can cover only the *Tamaskaaya* with countable Yojan expanse and not that with innumerable Yojan expanse.

There are no houses, villages or cities in *Tamaskaaya* but gigantic clouds are formed there producing thunder and rain. There is lightening also. These acts are performed by gods including *Dev*, *Asurs* and *Naag*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Kumars. Except for gross earth-bodies and fire-bodies with oblique movement there are no other gross earth-bodies and fire-bodies in *Tamaskaaya*. There are no suns, moons or other cosmic bodies within *Tamaskaaya* but there are in its vicinity. Their light falls on *Tamaskaaya* but it is reduced to nothing due to its unique properties. In appearance *Tamaskaaya* is oppressively black, gruesome and terrifying. Even gods are horrified seeing it. If by chance a god enters it, he at once rushes out with great speed and mental alacrity. *Tamaskaaya* is a derivative of water, *jiva* (life force or soul) and matter. Being a form of water it is conducive to origin of gross air-bodies, plant-bodies and mobile beings. No other beings are born here because it is hostile to them.

Similarity with areas of darkness—Modern scientists observed an intense dark and ominous mountain-like water body while travelling in the mysterious Bermuda triangle area (near Trinidad coast). When they approached this body radar and other instruments stopped functioning. All the lights went off and the steam pressure in the engine was reduced to zero. Scientists have described that voyage in details. An article based on that and titled "*Bermuda Trikone : Naye Purane Kitne Kone*" (Bermuda triangle : Many angles new and old) was published in *Saptahik Hindustan* (a Hindi weekly) of 9th September 1979. The scientists named it as area of darkness (krishna vivar). The aforesaid description of *Tamaskaaya* has astonishing similarities with that description of area of darkness. *(Bhagavai Bhashya, part 2, p. 277)*

आठ कृष्णराजियाँ EIGHT KRISHNA-RAJIS

१७. [प्र.] कइ णं भंते ! कण्हराईओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ कण्हराईओ पण्णत्ताओ।

१७. [प्र.] भगवन् ! कृष्णराजियाँ कितनी हैं ?

[उ.] गौतम ! कृष्णराजियाँ आठ हैं।

17. [Q.] *Bhante* ! How many are the *krishna-rajis* (cluster of darkness or agglomerative entity of earth-derived darkness) ?

[Ans.] Gautam ! There are eight *krishna-rajis*.

१८. [प्र.] कहि णं भंते ! एयाओ अट्ठ कण्हराईयो पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! उप्पिं सणंकुमार–माहिंदाणं कप्पाणं, हव्विं बंभलोगे कप्पे रिट्ठे विमाणपत्थडे, एत्थ णं अक्खाडग–समचउरंसठाणसंठियाओ अट्ठ कण्हराईओ पण्णत्ताओ, तं जहा–पुरत्थिमेणं दो, पच्चत्थिमेणं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दो, दाहिणेणं दो, उत्तरेणं दो। पुरत्थिमऽब्भंतरा कण्हराई दाहिणबाहिरं कण्हराइं पुट्ठा, दाहिणऽब्भंतरा कण्हराई पच्चत्थिमबाहिरं कण्हराइं पुट्ठा, पच्चत्थिमऽब्भंतरा कण्हराई उत्तरबाहिरं कण्हराइं पुट्ठा, उत्तरऽब्भंतरा कण्हराई पुरत्थिमबाहिरं कण्हराइं पुट्ठा। दो पुरत्थिमपच्चत्थिमाओ बाहिराओ कण्हराईओ छलंसाओ, दो उत्तरदाहिणबाहिराओ कण्हराईओ तंसाओ, दो पुरत्थिमपच्चत्थिमाओ अब्भिंतराओ कण्हराईओ चउरंसाओ, दो उत्तरदाहिणाओ अब्भिंतराओ कण्हराईओ चउरंसाओ।

पुव्वावरा छलंसा, तंसा पुण दाहिणुत्तरा बज्झा।

अब्भंतर चउरंसा सव्वा वि य कण्हराईओ॥१॥

१८. [प्र.] भगवन् ! ये आठ कृष्णराजियाँ कहाँ हैं ?

[उ.] गौतम ! ऊपर सनत्कुमार (तृतीय) और माहेन्द्र (चतुर्थ) कल्पों (देवलोकों) पर और नीचे ब्रह्मलोक (पंचम) देवलोक के अरिष्ट नामक विमान के (तृतीय) पाथड़े से नीचे, (अर्थात्) इस स्थान में, अखाड़ा (प्रेक्षास्थल) के आकार की समचतुरस्र (सम चौरस) संस्थान-वाली आठ कृष्णराजियाँ हैं। यथा-पूर्व में दो, पश्चिम में दो, दक्षिण में दो और उत्तर में दो। पूर्वाभ्यन्तर अर्थात्-पूर्व दिशा की आभ्यन्तर कृष्णराजि दक्षिण दिशा की बाह्य कृष्णराजि से सटी हुई है। दक्षिण दिशा की आभ्यन्तर कृष्णराजि ने पश्चिम दिशा की बाह्य कृष्णराजि को स्पर्श किया हुआ है। पश्चिम दिशा की आभ्यन्तर कृष्णराजि ने उत्तर दिशा की बाह्य कृष्णराजि को स्पर्श किया हुआ है, और उत्तर दिशा की आभ्यन्तर कृष्णराजि पूर्व दिशा की बाह्य कृष्णराजि को स्पर्श की हुई है। पूर्व और पश्चिम दिशा की दो बाह्य कृष्णराजियाँ षडंश (षट्कोण) हैं, उत्तर और दक्षिण की दो बाह्य कृष्णराजियाँ त्र्यस्र (त्रिकोण) हैं; पूर्व और पश्चिम की दो आभ्यन्तर कृष्णराजियाँ चतुरस्र (चतुष्कोण-चौकोन) हैं, इसी प्रकार उत्तर और दक्षिण की दो आभ्यन्तर कृष्णराजियाँ भी चतुष्कोण हैं।

[गाथार्थ-] "पूर्व और पश्चिम की कृष्णराजि षट्कोण हैं, तथा दक्षिण और उत्तर की बाह्य कृष्णराजि त्रिकोण हैं। शेष सभी आभ्यन्तर कृष्णराजियाँ चतुष्कोण हैं।" (स्पष्टता के लिए चित्र देखें)

18. [Q.] *Bhante* ! Where are these eight *krishna-rajis* ?

[Ans.] In the space above the Sanatkumar *kalp* (a divine dimension or the third heaven) and the Maahendra kalp (the fourth heaven) and below the celestial vehicle (*vimaan*) named Risht belonging to the Brahmalok *kalp* (the fifth heaven) there are eight *krishna-rajis* resembling the shape (cross section) of a square wrestling arena — two in the east, two in the west, two in the south and two in the north. The inner *krishna-raji* of the east touches the outer *krishna-raji* of the south; the inner *krishna-raji* of the south touches the outer *krishna-raji* of the west; the inner *krishna-raji* of the west touches the outer *krishna-raji* of the north; and the inner *krishna-raji* of the north touches the outer *krishna-raji* of the east. The two outer *krishna-rajis* of east and west are

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

hexagonal; the two outer *krishna-rajis* of north and south are triangular; the two inner *krishna-rajis* of east and west are square; and the two inner *krishna-rajis* of north and south are also square.

Verse—The outer *krishna-rajis* of east and west are hexagonal and those of north and south are triangular. All the inner *krishna-rajis* are square. (see the illustration)

१९. [प्र.] कण्हराईओ णं भंते ! केवइय आयामेणं, केवइयं विक्खंभेणं, केवइयं परिक्खेवेणं पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं आयामेणं, संखेज्जाइं जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं, असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं परिक्खेवेणं पण्णत्ताओ।

१९. [प्र.] भगवन् ! कृष्णराजियों का आयाम–(लम्बाई), विष्कम्भ (विस्तार–चौड़ाई) और परिक्षेप–(घेरा = परिधि) कितना है ?

[उ.] गौतम ! कृष्णराजियों का आयाम असंख्यात हजार योजन है, विष्कम्भ संख्यात हजार योजन है और परिक्षेप असंख्यात हजार योजन है।

19. [Q.] *Bhante* ! What is the length (*aayaam*), breadth or spread (*vishkambh*) and circumference (*parikshep*) of the *krishna-rajis* ?

[Ans.] The length (*aayaam*) of the *krishna-rajis* is innumerable thousand Yojans, the breadth or spread (*vishkambh*) is countable thousand Yojans and the circumference (*parikshep*) is innumerable thousand Yojans.

२०. [प्र.] कण्हराईओ णं भंते ! केमहालियाओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! अयं णं जंबुद्दीवे दीवे जाव अद्धमासं वीतीवएज्जा। अत्थेगइयं कण्हराइं वीतीवएज्जा, अत्थेगइयं कण्हराइं णो वीईवएज्जा। एमहालियाओ णं गोयमा ! कण्हराईओ पण्णत्ताओ।

२०. [प्र.] भगवन् ! कृष्णराजियाँ कितनी बड़ी हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन चुटकी बजाये, उतने समय में इस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप की इक्कीस बार परिक्रमा करके आ जाये–इतनी शीघ्र दिव्यगति से कोई देव लगातार एक दिन, दो दिन, यावत् अर्द्ध–मास (१५ दिन) तक चले, तब कहीं वह देव किसी कृष्णराजि को पार कर पाता है और किसी कृष्णराजि को पार नहीं कर पाता। गौतम ! कृष्णराजियाँ इतनी बड़ी हैं।

20. [Q.] *Bhante* ! How vast are the *krishna-rajis* ?

[Ans.] Gautam ! Suppose a god goes around this Jambudveep 21 times and returns within the time taken in snapping his finger thrice. If such a god moves with such great and fast divine speed for one day, two

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

days, ... and so on up to... a maximum of half a month (15 days) then he is able to cross some *krishna-raji* and unable to cross some *krishna-raji*. Gautam ! So large are *krishna-rajis*.

२१. [प्र.] अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु गेहा ति वा, गेहावणा इ वा ?

[उ.] नो इणट्ठे समट्ठे।

२२. [प्र.] अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु गामा इ वा ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

२३. [प्र. १] अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु ओराला बलाहया संसेयंति सम्मुच्छंति वासं वासंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

[प्र. २] तं भंते ! किं देवो पकरेइ, असुरो पकरेइ, नागो पकरेइ ?

[उ.] गोयमा ! देवो पकरेइ, नो असुरो, नो नागो य।

२१. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में गृह हैं अथवा गृहापण हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

२२. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में ग्राम आदि हैं ?

[उ.] यह अर्थ समर्थ नहीं है।

२३. [प्र. १] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में उदार (विशाल) महामेघ संस्वेद को प्राप्त होते हैं, सम्मूर्च्छित होते हैं और वर्षा बरसाते हैं ?

[उ. १] हाँ, गौतम ! कृष्णराजियों में ऐसा होता है।

[प्र. २] भगवन् ! क्या इन सबको देव करता है, असुर (कुमार) करता है अथवा नाग (कुमार) करता है ?

[उ. २] गौतम ! (वहाँ यह सब) देव ही करता है, किन्तु न असुर (कुमार) करता है और न नाग (कुमार) करता है।

21. [Q.] *Bhante* ! Are there houses or shops (*grihapan*) in *krishna-rajis*.

[Ans.] Gautam ! It is not so.

22. [Q.] *Bhante* ! Are there villages... and so on up to... *sannivesh* (temporary settlement) in *krishna-rajis* ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

23. [Q. 1] *Bhante* ! In *krishna-rajis* do great clouds accumulate moisture, form into rain-clouds and cause shower ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so.

[Q. 2] *Bhante* ! Is it (aforesaid activities of clouds) done by a *Dev*, *Asur* or *Naag* (classes of divine beings) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is done by a *Dev* only and not by an *Asur* or a *Naag*.

२४. [प्र.] अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु बादरे थणियसद्दे ?

[उ.] जहा ओराला (सु. २३) तहा।

२४. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में बादर स्तनित शब्द है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार उदार मेघों के विषय में कहा है, उसी प्रकार इनका भी कथन करना चाहिए। (अर्थात्–कृष्णराजियों में बादर स्तनित शब्द हैं और उसे देव करता है, किन्तु असुरकुमार या नागकुमार नहीं करता।)

24. [Q. 1] *Bhante* ! In *krishna-rajis* is there loud thundering sound ?

[Ans.] What has been said about clouds should be repeated here. (It is done by a *Dev* only and not by an *Asur* or a *Naag*)

२५. [प्र.] अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु बादरे आउकाए, बादरे अगणिकाए, बायरे वणस्सइकाए ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे, णऽण्णत्थ विग्गहगतिसमावन्नएणं।

२५. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में बादर अप्काय, बादर अग्निकाय और बादर वनस्पतिकाय है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। यह निषेध विग्रहगतिसमापन्न जीवों के विषय में नहीं है।

25. [Q.] *Bhante* ! Do *krishna-rajis* contain gross (*baadar*) earth-bodies and gross fire-bodies ?

[Ans.] Gautam ! That is not so. However, this negation is not for bodies with oblique movement (*vigrahagati samapanna*).

२६. [प्र.] अत्थि णं भंते ! कण्हराईसु चंदिम–सूरिय० ४ ?

[उ.] णो इणट्ठेसयट्ठे।

२७. [प्र.] अत्थि णं कण्हराईसु चंदाभा ति वा २?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

२६. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में चन्द्रमा, सूर्य, ग्रहगण, नक्षत्र और तारारूप हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२७. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में चन्द्र की कान्ति या सूर्य की कान्ति (आभा) है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

26. [Q.] Do *krishna-rajis* have formations like moon, sun, planets, constellations and stars ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

27. [Q.] *Bhante* ! Do *krishna-rajis* have glow like the moon or the sun ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

२८. [प्र.] कण्हराईओ णं भंते केरिसियाओ वण्णेणं पन्नत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! कालाओ जाव खिप्पामेव वीईवएज्जा।

२८. [प्र.] भगवन् ! कृष्णराजियों का वर्ण कैसा है ?

[उ.] गौतम ! कृष्णराजियों का वर्ण काला है, यह काली कान्ति वाली है, यावत् परम कृष्ण (एकदम काला) है। तमस्काय की तरह अतीव भयंकर होने से इसे देखते ही देव क्षुब्ध हो जाता है; यावत् अगर कोई देव (साहस करके इनमें प्रविष्ट हो जाये, तो भी वह) शीघ्र गति से झटपट इसे पार कर जाता है।

28. [Q.] *Bhante* ! What is the appearance (colour) of *krishna-rajis* ?

[Ans.] Gautam ! In appearance *krishna-rajis* are black... and so on up to... deep black. They are as horrifying as *Tamaskaaya*... and so on up to... if a god enters these he rushes out with great speed.

२९. [प्र.] कण्हराईणं भंते ! कति नामधेज्जा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ नामधेज्जा पण्णत्ता, तं जहा—कण्हराई इ वा, मेहराई इ वा, मघा इ वा, माघवती इ वा, वातफलिहे इ वा, वातपलिक्खोभे इ वा, देवफलिहा इ वा, देवपलिक्खोभा इ वा।

२९. [प्र.] भगवन् कृष्णराजियों के कितने नाम हैं ?

[उ.] गौतम ! कृष्णराजियों के आठ नाम हैं। यथा–(१) कृष्णराजि, (२) मेघराजि, (३) मघा, (४) माघवती, (५) वातपरिघा, (६) वातपरिक्षोभा, (७) देवपरिघा, और (८) देवपरिक्षोभा।

29. [Q.] *Bhante* ! How many names *krishna-rajis* have ?

[Ans.] Gautam ! *Krishna-rajis* have eight names—(1) *Krishna-raji*, (2) *Megh-raji*, (3) *Maghaa*, (4) *Maaghavati*, (5) *Vaat-parigha*, (6) *Vaat-parikshobh*, (7) *Devaparigha* and (8) *Devaparikshobh*.

३०. [प्र.] कण्हराईओ णं भंते ! किं पुढविपरिणामाओ, आउपरिणामाओ, जीवपरिणामाओ, पुग्गलपरिणामाओ ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! पुढविपरिणामाओ, नो आउपरिणामाओ, जीवपरिणामाओ वि, पुग्गलपरिणामाओ वि।

३०. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियाँ पृथ्वी के परिणामरूप हैं, जल के परिणामरूप हैं, या जीव के परिणामरूप हैं, अथवा पुद्गलों के परिणामरूप हैं ?

[उ.] गौतम ! कृष्णराजियाँ पृथ्वी के परिणामरूप हैं, किन्तु जल के परिणामरूप नहीं हैं, वे जीव के परिणामरूप भी हैं और पुद्गलों के परिणामरूप भी हैं।

30. [Q.] *Bhante* ! Are *krishna-rajis* derivatives of earth, derivatives of water, derivatives of *jiva* (life force or soul) or derivatives of matter ?

[Ans.] Gautam ! *Krishna-rajis* are derivatives of earth and not derivatives of water, but are derivatives of *jiva* (life force or soul) as well as derivatives of matter.

३१. [प्र.] कण्हराईसु णं भंते ! सव्वे पाणा भूया जीवा सत्ता उववन्नपुव्वा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, नो चेव णं बादरआउकाइयत्ताए, बादरअगणिकाइयत्ताइ, बादरवणस्सइकाइयत्ताए वा।

३१. [प्र.] भगवन् ! क्या कृष्णराजियों में सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व पहले उत्पन्न हो चुके हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व कृष्णराजियों में अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं, किन्तु बादर अप्काय रूप से, बादर अग्निकाय रूप से और बादर वनस्पतिकाय रूप से उत्पन्न नहीं हुए हैं।

31. [Q.] *Bhante* ! Have all beings (*praan*), organisms (*bhoot*), souls (*jiva*), and entities (*sattva*) been born earlier in *krishna-rajis* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! All these have been born many times or infinite times but never in the form of gross water-bodies, gross fire-bodies or gross plant-bodies.

विवेचन : आठ नामों की व्याख्या—**कृष्णराजि** = काले वर्ण की पृथ्वी और पुद्गलों के परिणामरूप होने से काले पुद्गलों की राजि = रेखा। **मेघराजि** = काले मेघ की रेखा के सदृश। **मघा** = छठी नरक के समान अन्धकार वाली। **माघवती** = सातवीं नरक के समान गाढान्धकार वाली। **वातपरिघा** = आँधी के समान अन्धकार वाली और दुर्लंघ्य। **वातपरिक्षोभा** = आँधी के समान अन्धकार वाली और क्षोभजनक। **देवपरिघा** = देवों के लिए दुर्लंघ्य खाई के सदृश। **देवपरिक्षोभा** = देवों को क्षुब्ध करने वाली।

Elaboration—The eight names—Krishna-raji=row of black matter particles derived from black earth matter. **Megh-raji** = resembling a row of black clouds. **Maghaa** = dark like the sixth hell named Maghaa.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Maaghavati = intensely dark like the seventh hell. **Vaat-parigha** = dark and impassable like a storm. **Vaat-parikshobh** = dark and tormenting like a storm. **Devaparigha** = like a gorge impassable even for gods. **Devaparikshobh** = tormenting even for gods.

३२. एयासिं णं अट्ठण्हं कण्हराईणं अट्ठसु ओवासंतरेसु अट्ठ लोगंतियविमाणा पण्णत्ता, तं जहा– अच्ची, अच्चिमाली, वइरोयणे, पभंकरे, चंदाभे, सूराभे, सुक्काभे, सुपतिट्ठाभे, मज्झे रिट्ठाभे।

३२. इन (पूर्वोक्त) आठ कृष्णराजियों के आठ अवकाशान्तरों में आठ लोकान्तिक विमान हैं। यथा–(१) अर्चि, (२) अर्चिमाली, (३) वैरोचन, (४) प्रभंकर, (५) चन्द्राभ, (६) सूर्याभ, (७) शुक्राभ, और (८) सुप्रतिष्ठाभ। इन सबके मध्य में रिष्टाभ विमान है।

32. In the eight intervening (*avakashantar*) areas between the (aforesaid) eight *krishna-rajis* there are eight *Lokantik Vimaans* (celestial vehicles at the edge of the universe) — (1) Archi, (2) Archimali, (3) Vairochan, (4) Prabhankar, (5) Chandraabh, (6) Suryaabh, (7) Shukraabh and (8) Supratishtaabh. At the center of all these is the Rishtaabh Vimaan.

३३. [प्र.] कहि णं भंते ! अच्ची विमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! उत्तरपुरत्थिमेणं।

३४. [प्र.] कहि णं भंते ! अच्चिमाली विमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पुरत्थिमेणं।

३५. [प्र.] एवं परिवाडीए नेयव्वं जाव कहि णं भंते ! रिट्ठे विमाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! बहुमज्झदेसभागे।

३३. [प्र.] भगवन् ! अर्चि विमान कहाँ है ?

[उ.] गौतम ! अर्चि विमान उत्तर और पूर्व के बीच में है।

३४. [प्र.] भगवन् ! अर्चिमाली विमान कहाँ है ?

[उ.] गौतम ! अर्चिमाली विमान पूर्व में है।

३५. [प्र.] इसी क्रम (परिपाटी) से सभी विमानों के विषय में जानना चाहिए। यावत्–हे भगवन् ! रिष्ट विमान कहाँ बताया गया है ?

[उ.] गौतम ! रिष्ट विमान बहुमध्यभाग (सबके मध्य) में है।

33. [Q.] Where is the Archi Vimaan ?

[Ans.] Archi Vimaan is in the north-east.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

34. [Q.] Where is the Archimali Vimaan ?

[Ans.] Archimali Vimaan is in the east.

35. [Q.] In this order the directions of all the Vimaans should be known... and so on up to... *Bhante* ! Where is the Risht Vimaan ?

[Ans.] Gautam ! Rishtaabh Vimaan is at the center of all these.

३६. एएसु णं अट्ठसु लोगंतियविमाणेसु अट्ठविहा लोगंतिया देवा परिवसंति, तं जहा–

सारस्सयमाइच्चा वण्ही वरुणा य गद्दतोया य।
तुसिया अव्वाबाहा अग्गिच्चा चेव रिट्ठा य॥१॥

३६. इन आठ लोकान्तिक विमानों में अष्टविध (आठ जाति के) लोकान्तिक देव निवास करते हैं। जैसे–

(१) सारस्वत, (२) आदित्य, (३) वह्नि, (४) वरुण, (५) गर्दतोय, (६) तुषित, (७) आग्नेय, और (८) रिष्ट देव (बीच में)।

36. In these eight *Lokantik Vimaans* reside eight classes of Lokantik Devs (gods of the edge of the universe)—

(1) Saarasvat, (2) Aditya, (3) Vahni, (4) Varun, (5) Gardatoya, (6) Tushit, (7) Aagneya and (8) Risht (at the center).

३७. [प्र.] कहि णं भंते ए सारस्सता देवा परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! अच्चिम्मि विमाणे परिवसंति।

३८. [प्र.] कहि णं भंते ! आदिच्चा देवा परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! अच्चिमालिम्मि विमाणे०।

३९. [प्र.] एवं नेयव्वं जहाणुपुव्वीए जाव कहि णं भंते ! रिट्ठा देवा परिवसंति ?

[उ.] गोयमा ! रिट्ठम्मि विमाणे।

३७. [प्र.] भगवन् ! सारस्वत देव कहाँ रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! सारस्वत देव अर्चि विमान में रहते हैं।

३८. [प्र.] भगवन् ! आदित्य देव कहाँ रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! आदित्य देव अर्चिमाली विमान में रहते हैं।

३९. [प्र.] इस प्रकार अनुक्रम से यावत् रिष्ट विमान तक जान लेना चाहिए कि भगवन् ! रिष्ट देव कहाँ रहते हैं ?

[उ.] गौतम ! रिष्ट देव रिष्ट विमान में रहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

37. [Q.] *Bhante* ! Where do the Saarasvat Devs live ?

[Ans.] Gautam ! Saarasvat Devs live in the Archi Vimaan.

38. [Q.] *Bhante* ! Where do the Aditya Devs live ?

[Ans.] Gautam ! Aditya Devs live in the Archimali Vimaan.

39. [Q.] In this order the *vimaans* of all the (aforesaid) gods should be known... and so on up to... *Bhante* ! Where do the Risht Devs live ?

[Ans.] Gautam ! Risht Devs live in the Risht Vimaan.

४०. [प्र. १] सारस्सय–माइच्चाणं भंते ! देवाणं कइ देवा, कइ देवसया पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! सत्त देवा, सत्त देवसया परिवारो पण्णत्तो।

[२] वण्ही–वरुणाणं देवाणं चउद्दस देवा, चउद्दस देवसहस्सा परिवारो पण्णत्तो।

[३] गद्दतोय–तुसियाणं देवाणं सत्त देवा, सत्त देवसहस्सा परिवारो पण्णत्तो।

[४] अवसेसाणं नव देवा, नव देवसया परिवारो पण्णत्ता।

पढमजुगलम्मि सत्त उ सयाणि बीयम्मि चोद्दस सहस्सा।
ततिए सत्त सहस्सा नव चेव सयाणि सेसेसु॥ ३॥

४०. [प्र. १] भगवन् ! सारस्वत और आदित्य, इन दो देवों के कितने देव हैं और कितने सौ देवों का परिवार है ?

[उ.] गौतम ! सारस्वत और आदित्य, इन दो देवों के सात देव (स्वामी) हैं और इनके ७०० देवों का परिवार है।

[२] वह्नि और अरुण, इन दो देवों के १४ देव स्वामी और १४ हजार देवों का परिवार है।

[३] गर्दतोय और तुषित देवों के ७ देव स्वामी और ७ हजार देवों का परिवार है।

[४] शेष (अव्याबाध, आग्नेय और रिष्ट, इन) तीनों देवों के नौ देव स्वामी और ९०० देवों का परिवार है।

(गाथार्थ–) प्रथम युगल में ७००, दूसरे युगल में १४,००० देवों का परिवार, तीसरे युगल में ७,००० देवों का परिवार और शेष तीन देवों के ९०० देवों का परिवार है।

40. [Q. 1] *Bhante* ! How many are the divine overlords and families of divine subjects among the gods of the two classes Saaraswat and Aditya ?

[Ans.] Gautam ! In the two classes Saaraswat and Aditya there are seven overlord gods and a family of 700 gods.

[2] In the two classes Vahni and Varun there are fourteen overlord gods and a family of 14, 000 gods.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[3] In the two classes Gardatoya and Tushit there are seven overlord gods and a family of 7000 gods.

[4] In the remaining three classes (Avyabadh, Agneya and Risht) there are nine overlord gods and a family of 900 gods.

Verse—First pair has family of 700 gods, second pair has that of 14000 gods, third pair has that of 7000 gods, and the remaining three classes has family of 900 gods.

४१. [प्र. १] लोगंतियविमाणा णं भंते ! किंपइट्ठिआ पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! वाउपइट्ठिया पण्णत्ता।

४१. [प्र. १] भगवन् ! लोकान्तिक विमान किसके आधार पर (स्थित) हैं ?

[उ.] गौतम ! लोकान्तिक विमान वायुप्रतिष्ठित (वायु के आधार पर रहे हुए) हैं।

41. [Q. 1] *Bhante* ! On what rest *Lokantik Vimaans* ?

[Ans.] Gautam ! *Lokantik Vimaans* rest on air.

[२] एवं नेयव्वं–'विमाणाणं पइट्ठाणं बाहल्लुच्चत्तमेव संठाणं', बंभलोयवत्तव्वया नेयव्वा जाव हंता गोयमा ! असइ अदुवा अणंतखुत्तो, नो चेव णं देवत्ताए।

[२] इस प्रकार–जिस तरह विमानों का प्रतिष्ठान, विमानों का बाहल्य, विमानों की ऊँचाई और विमानों के संस्थान आदि का वर्णन; जीवाभिगमसूत्र के देव–उद्देशक में ब्रह्मलोक की वक्तव्यता में कहा है, तदनुसार यहाँ भी कहना चाहिए, यावत्–हाँ, गौतम ! सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व यहाँ अनेक बार और अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चुके हैं, किन्तु लोकान्तिक विमानों में देवरूप में उत्पन्न नहीं हुए।

[2] In the same way the details about the situation (*pratishthaan*), dimensions, height and structure etc. should be mentioned according to that about Brahmalok given in the chapter titled *Dev* in *Jivabhigam Sutra*... and so on up to... Gautam ! All beings (*praan*), organisms (*bhoot*), souls (*jiva*), and entities (*sattva*) have been born many times or infinite times but never in the form of divine beings in the *Lokantik Vimaans*.

४२. [प्र.] लोगंतिगविमाणेसु लोगंतियदेवाणं भंते ! केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता।

४२. [प्र.] भगवन् ! लोकान्तिक विमानों में देवों की कितने काल की स्थिति है ?

[उ.] गौतम ! लोकान्तिक विमानों में आठ सागरोपम की स्थिति है।

42. [Q.] *Bhante* ! What is the life-span of gods in *Lokantik Vimaans* ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! The life-span of gods in *Lokantik Vimaans* is eight *Sagaropam* (a metaphoric unit of time).

४३. [प्र.] लोगंतियविमाणेहिं णं भंते ! केवइयं अबाहाए लोगंते पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं अबाहाए लोगंते पण्णत्ते।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति.।

।। छट्ठ सए : पंचमो उद्देसओ समत्तो ।।

४३. [प्र.] भगवन् ! लोकान्तिक विमानों से लोकान्त कितना दूर है ?

[उ.] गौतम ! लोकान्तिक विमानों से असंख्येय हजार योजन दूर लोकान्त है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है;' इस प्रकार कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

43. [Q.] *Bhante* ! How far is the edge of the universe from the *Lokantik Vimaans* ?

[Ans.] Gautam ! The edge of the universe is innumerable thousand Yojans away from the *Lokantik Vimaans*.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so. "With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : सूत्र १ से १६ तक तमस्काय का वर्णन है, तथा १७ से ४३ तक कृष्णराजि का। दोनों में कुछ समानताएँ हैं, कुछ भिन्नताएँ हैं।

समानता निम्न हैं–(१) दोनों का वर्ण काला, भयजनक परम कृष्ण है।

(२) दोनों में ही रिक्त स्थान हैं, वहाँ घर है, न ही ग्राम आदि।

भिन्नताएँ–(१) दोनों का परिमाण तथा परिधि भिन्न-भिन्न है।

(२) तमस्काय मुख्य रूप से अप्कायिक (जल) है, जबकि कृष्णराजि मुख्यतः पृथ्वीकायिक (पृथ्वी) है।

(३) तमस्काय में बादर पृथ्वीकाय, बादर अग्निकाय नहीं है। कृष्णराजि में बादर अप्काय, बादर अग्निकाय और बादर वनस्पतिकाय नहीं है।

लोकान्तिक देव ब्रह्मलोक नामक पंचम देवलोक के पास लोक के किनारे पर रहते हैं, इसलिए इन्हें लोकान्तिक कहते हैं। अथवा ये संसार रूप लोक के अन्त (करने में) करने में निकट हैं, क्योंकि ये सब स्वामी देव एकभवावतारी (एक भव के पश्चात् मोक्षगामी) होते हैं, इसलिए भी इन्हें लोकान्तिक कहते हैं।

इन विमानों का वर्ण लाल, पीला और श्वेत होता है, ये प्रकाशयुक्त, इष्ट वर्ण–गन्धयुक्त एवं सर्वरत्नमय होते हैं। इन विमानों के निवासी देव समचतुरस्र संस्थान वाले, पद्मलेश्यायुक्त एवं सम्यग्दृष्टि होते हैं। (जीवाभिगमसूत्र द्वितीय वैमानिक उद्देशक)

।। छठा शतक : पंचम उद्देशक समाप्त ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—Aphorisms 1 to 16 contain information about *Tamaskaaya* and aphorisms 17 to 43 about *krishna-rajis*. These two have some similarities and some differences—

Similarities—(1) The appearance of both is black, terrifying pitch black. (2) Both have only empty space where neither houses nor inhabited places exist.

Differences—(1) The spread and circumferences of the two differ. (2) *Tamaskaaya* is mainly *apkaayik* (water-bodied) and *krishna-rajis* are mainly *prithvi-kaayik* (earth-bodied). (3) *Tamaskaaya* does not contain gross earth-bodies and gross fire-bodies. *Krishna-rajis* do not contain gross water-bodies, gross fire-bodies and gross plant-bodies.

Lokantik gods live at the edge of the universe (*lokant*) near the fifth divine realm called Brahmalok, that is why they are called *Lokantik*. Also, the overlords of these gods are destined to be liberated after just one rebirth. Thus they are about to end the cycles of rebirth in the *Lok*. That is another reason they are called *Lokantik*.

The colour of these *vimaans* is red, yellow and white. They are illuminated, have pleasant appearance and smell and are embellished with all kinds of gems. The gods residing there have perfect body constitution (*sam-chaturasra samsthan*), *Padma leshya* (yellow soul-complexion) and are righteous. (*Jivabhigam Sutra, chapter 2, Vaimanik*)

● END OF THE FIFTH LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : छठा उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : SIXTH LESSON

भव्य BHAVYA (WORTHY OF LIBERATION)

पृथ्वियाँ और अनुत्तर विमान HELLS AND ANUTTAR VIMAAN

१. [प्र. १] कइ णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, तं जहा—रयणप्पभा जाव तमतमा।

१. [प्र. १] भगवन् ! पृथ्वियाँ कितनी हैं ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वियाँ सात हैं। यथा—रत्नप्रभा यावत् [शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा] तमस्तमःप्रभा।

1. [Q. 1] *Bhante* ! How many hells (*prithvi*) are there ?

[Ans.] Gautam ! There are seven hells—Ratnaprabha... and so on up to... (Sharkaraprabha, Balukaprabha, Pankaprabha, Dhoom-prabha, Tamah-prabha and) Tamstamah-prabha.

[२] रयणप्पभाईणं आवासा भाणियव्वा जाव अहेसत्तमाए। एवं जे जत्तिया आवासा ते भाणियव्वा जाव।

[२] रत्नप्रभा पृथ्वी से लेकर अधःसप्तमी (तमस्तमःप्रभा) पृथ्वी तक, जिस पृथ्वी के जितने आवास हों, उतने कहने चाहिए यावत्।

[2] From Ratnaprabha Prithvi to Adhah-saptami (Tamstamah-prabha) the number of abodes in each hell respectively should be mentioned.

२. [प्र.] कइ णं भंते ! अणुत्तरविमाणा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंच अणुत्तरविमाणा पण्णत्ता, तं जहा—विजए जाव सव्वट्ठसिद्धे।

२. [प्र.] भगवन् ! अनुत्तर विमान कितने हैं ?

[उ.] गौतम ! पाँच अनुत्तरविमान हैं। यथा—विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्ध विमान।

2. [Q.] *Bhante* ! How many Anuttar Vimaans are there ?

[Ans.] Gautam ! There are five Anuttar Vimaans (matchless celestial vehicles or divine realms)—Vijaya, Vaijayant, Jayant, Aparajit and Sarvarthasiddha Vimaan.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहए, समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु अन्नयरंसि निरयावासंसि नेरइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! तत्थगए चेव आहारेज्ज वा, परिणामेज्ज वा, सरीरं वा बंधेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए तत्थगए चेव आहारेज्ज वा, परिणामेज्ज वा, सरीरं वा बंधेज्जा, अत्थेगइए तओ पडिनियत्तित्ता, इहमागच्छइ, आगच्छित्ता दोच्चं पि मारणंतियसमुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ता इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु अन्नयरंसि निरयावासंसि नेरइयत्ताए उववज्जित्तए तओ पच्छा आहारेज्ज वा परिणामेज्ज वा सरीरं वा बंधेज्जा। एवं जाव अहेसत्तमा पुढवी।

३. [प्र.] भगवन् ! जो जीव मारणान्तिक समुद्घात से समवहत हुआ (समुद्घात किया) है और समवहत होकर इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से किसी एक नारकावास में नैरयिक रूप में उत्पन्न होने के योग्य है, भगवन् ! क्या वह वहाँ जाकर आहार करता है ? आहार को परिणमाता है ? और शरीर बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! कोई जीव वहाँ जाकर ही आहार करता है, आहार को परिणमाता है या शरीर बाँधता है; और कोई जीव वहाँ जाकर वापस लौटता है, वापस लौटकर यहाँ आता है। यहाँ आकर वह फिर दूसरी बार मारणान्तिक समुद्घात द्वारा समवहत होता है। समवहत होकर इस रत्नप्रभापृथ्वी के तीस लाख नारकावासों में से किसी एक नारकावास में नैरयिक रूप से उत्पन्न होता है। इसके पश्चात् आहार ग्रहण करता है, परिणमाता है और शरीर बाँधता है। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी (तमस्तमः प्रभा) पृथ्वी तक कहना चाहिए।

3. [Q.] *Bhante* ! When a soul (*jiva*) having undergone *maranantik samudghat* (bursting forth of some soul-space-points before the moment of death) is destined to be born as an infernal being in any one of the three million hell-abodes; on reaching there does this soul have food intake, does it transform that food and does it take a body ?

[Ans.] Gautam ! On reaching there, some soul (*jiva*) has food intake, it transforms that food and it takes a body, while some other soul goes there, returns and once again undergoes *maranantik samudghat*. After this it is born as an infernal being in any one of the three million hell-abodes. After that it has food intake, it transforms that food and it takes a body. The same should be repeated for all hells up to Adhah-saptami (Tamstamah-prabha).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. [प्र.] जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहए, समोहणित्ता जे भविए चउसट्ठीए असुरकुमारावाससयसहस्सेसु अन्नयरंसि असुरकुमारावासंसि असुरकुमारत्ताए उववज्जित्तए।

[उ.] जहा नेरइया तहा भाणियव्वा जाव थणियकुमारा।

४. [प्र.] भगवन् ! जो जीव मारणान्तिक समुद्घात से समवहत हुआ है और समवहत होकर असुरकुमारों के चौंसठ लाख आवासों में से किसी एक आवास में उत्पन्न होने के योग्य है; क्या वह जीव वहाँ जाकर ही आहार करता है ? उस आहार को परिणमाता है और शरीर बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार नैरयिकों के विषय में कहा, उसी प्रकार असुरकुमारों के विषय में, यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए।

4. [Q.] *Bhante* ! When a soul (*jiva*) having undergone *maranantik samudghat* is destined to be born as a divine being in any one of the 6.4 million abodes of Asur Kumar gods; on reaching there does this soul have food intake, does it transform that food and does it take a body ?

[Ans.] Gautam ! What has been stated about infernal beings should be repeated for Asur Kumar gods... and so on up to... Stanit Kumar gods.

५. [प्र. १] जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहए, समोहणित्ता जे भविए असंखेज्जेसु पुढविकाइयावाससयसहस्सेसु अन्नयरंसि पुढविकाइयावासंसि पुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं केवइयं गच्छेज्जा, केवइयं पाउणेज्जा ?

[उ.] गोयमा ! लोयंतं गच्छेज्जा, लोयंतं पाउणिज्जा।

५. [प्र. १] भगवन् ! जो जीव मारणान्तिक समुद्घात से समवहत हुआ है, और समवहत होकर असंख्येय लाख पृथ्वीकायिक आवासों में से किसी एक पृथ्वीकायिक आवास में पृथ्वीकायिक रूप से उत्पन्न होने के योग्य है, भगवन् ! वह जीव मंदर (मेरु) पर्वत से पूर्व में कितनी दूर जाता है ? और कितनी दूरी को प्राप्त करता है ?

[उ.] हे गौतम ! वह लोकान्त तक जाता है और लोकान्त को प्राप्त करता है।

5. [Q. 1] *Bhante* ! When a soul (*jiva*) having undergone *maranantik samudghat* is destined to be born as a divine being in any one of the innumerable million abodes of earth-bodied beings, *Bhante* ! What distance to the east of Mandar (Meru) mountain does it cover and how far does it reach ?

[Ans.] Gautam ! It goes up to the edge of the universe (*Lokaant*) and reaches the edge of the universe.

[प्र. २] से णं भंते ! तत्थगए चेव आहारेज्ज वा, परिणामेज्ज वा, सरीरं वा बंधेज्जा ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

[उ.] गोयमा ! अत्थेगइए तत्थगएचेव आहारेज्ज वा, परिणामेज्ज वा, सरीरं वा बंधेज्ज, अत्थेगइए तओ पडिनियत्तइ, पडिनियत्तित्ता इहमागच्छइ, आगच्छित्ता दोच्चं पि मारणंतियसमुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ता मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागमेत्तं वा संखेज्जइभागमेत्तं वा, वालग्गं वा, वालग्गपुहुत्तं वा एवं लिक्खं जूयं जवं अंगुलं जाव जोयणकोडिं वा, जोयणकोडाकोडिं वा, संखेज्जेसु वा असंखेज्जेसु वा जोयणसहस्सेसु, लोगंते वा एगपएसियं सेढिं मोत्तूण असंखेज्जेसु पुढविकाइयावाससहसहस्सेसु अन्नयरंसि पुढविकाइयावासंसि पुढविकाइयत्ताए उववज्जेत्ता तओ पच्छा आहारेज्ज वा, परिणामेज्ज वा, सरीरं वा बंधेज्जा।

[३] जहा पुरत्थिमेणं मंदरस्स पव्वयस्स आलावगो भणिओ एवं दाहिणेणं, पच्चत्थिमेणं, उत्तरेणं, उड्ढे, अहे।

[प्र. २] भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक जीव, वहाँ जाकर ही आहार करता है, आहार को परिणमाता है और शरीर बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! कोई जीव, वहाँ जाकर ही आहार करता है। उस आहार को परिणमाता है और शरीर बाँधता है; और कोई जीव वहाँ जाकर वापस लौटता है, वापस लौटकर यहाँ आता है; यहाँ आकर फिर दूसरी बार मारणान्तिक समुद्घात से समवहत होता है। समवहत होकर मेरु पर्वत के पूर्व में अंगुल के असंख्येय भागमात्र, या संख्येय भागमात्र, या बालाग्र, अथवा बालाग्र-पृथक्त्व (दो से नौ तक बालाग्र), इसी तरह लीख, जूँ, यव, अंगुल यावत् कोटि योजन, कोटाकोटि योजन, संख्येय हजार योजन और असंख्येय हजार योजन में, अथवा एक प्रदेशात्मक श्रेणी को छोड़कर लोकान्त में पृथ्वीकाय के असंख्य लाख आवासों में से किसी आवास में पृथ्वीकायिक रूप से उत्पन्न होता है और उसके पश्चात् आहार करता है, उस आहार को परिणमाता है और शरीर बाँधता है।

[३] जिस प्रकार मेरु पर्वत की पूर्व दिशा के विषय में कथन किया गया है, उसी प्रकार से दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, ऊर्ध्व और अधोदिशा के सम्बन्ध में कहना चाहिए।

[Q. 2] *Bhante* ! On reaching there does this earth-bodied being have food intake, does it transform that food and does it take a body ?

[Ans.] Gautam ! On reaching there some soul (*jiva*) has food intake, it transforms that food and it takes a body. While some other soul goes there, returns and once again undergoes *maranantik samudghat*. After this it is born as an earth-bodied being in any one of the innumerable million abodes of earth-bodied beings to the east of Meru mountain located at a distance of innumerable fraction of an Angul, or countable fraction of an Angul, or Baalaagra (hair-tip), or Baalaagra *prithakatva* (two to nine Baalaagras), or Leekh, or Joon, or Yava, or Angul... and so on up to... billion Yojans, or billion-billion Yojans or at Lokaant except for

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

a single space-point row. After that it has food intake, it transforms that food and it takes a body.

[3] What has been stated for the area east of Meru mountain should be repeated for south, west, north, above and below of Meru mountain.

६. जहा पुढविकाइया तहा एगिंदियाणं सव्वेसिं एक्केक्कस्स छ आलावगा भाणियव्वा।

६. जिस प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों के विषय में कहा है, उसी प्रकार से सभी एकेन्द्रिय जीवों के विषय में कहना चाहिए। एक-एक के छह-छह आलापक कहने चाहिए।

6. What has been said about earth-bodied beings should be repeated for all one-sensed beings. Six statements each.

७. [प्र.] जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहइ, समोहणित्ता जे भविए अंसखेज्जेसु बेइंदियावाससयसहस्सेसु अन्नतरंसि बेइंदियावासंसि बेइंदियत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते तत्थगते चेव० !

[उ.] जहा नेरइया। एवं जाव अणुत्तरोववाइया।

७. [प्र.] भगवन् ! जो जीव, मारणान्तिक समुद्घात से समवहत हुआ है और समवहत होकर द्वीन्द्रिय जीवों के असंख्येय लाख आवासों में से किसी एक आवास में द्वीन्द्रिय रूप में उत्पन्न होने वाला है; भगवन् ! क्या वह जीव वहाँ जाकर ही आहार करता है, उस आहार को परिणमाता है, और शरीर बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार नैरयिकों के लिए कहा गया, उसी प्रकार द्वीन्द्रिय जीवों से लेकर अनुत्तरौपपातिक देवों तक सब जीवों के लिए कथन करना चाहिए।

7. [Q.] When a soul (*jiva*) having undergone *maranantik samudghat* is destined to be born as a two-sensed being in any one of the innumerable million abodes; on reaching there does this soul have food intake, does it transform that food and does it take a body ?

[Ans.] What has been said about infernal beings should be repeated for all beings starting from two-sensed beings... and so on up to... Anuttaropapatik gods.

८. [प्र.] जीवे णं भंते ! मारणंतियसमुग्घाएणं समोहए, समोहणित्ता जे भविए एवं पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालएसु महाविमाणेसु अन्नयरंसि अनुत्तरविमाणंसि अणुत्तरोववाइयदेवत्ताए उववज्जित्तए, से णं भंते तत्थगए चेव !

[उ.] तं चेव जाव आहारेज्ज वा, परिणामेज्ज वा, सरीरं वा बंधेज्जा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति।

॥ छट्ठे सए : छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. [प्र.] हे भगवन् ! जो जीव मारणान्तिक समुद्घात से समवहत हुआ है और समवहत होकर सबसे महान् महाविमानरूप पंच अनुत्तरविमानों में से किसी एक अनुत्तर विमान में अनुत्तरौपपातिक देवरूप में उत्पन्न होने वाला है, क्या वह जीव वहाँ जाकर ही आहार करता है, आहार को परिणमाता है और शरीर बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! पहले कहा गया है, उसी प्रकार कहना चाहिए.... यावत् आहार करता है, उसे परिणमाता है और शरीर बाँधता है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् । यह इसी प्रकार है', ऐसा कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करते हैं।

8. [Q.] When a soul (*jiva*) having undergone *maranantik samudghat* is destined to be born as an Anuttaropapatik god in any one of the five great celestial vehicles called Anuttaropapatik Vimaans; on reaching there does this soul have food intake, does it transform that food and does it take a body ?

[Ans.] Gautam ! It is as stated before... and so on up to... it has food intake, it transforms that food and it takes a body.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so. "With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : निष्कर्ष–एक जीवन में मारणान्तिक समुद्घात (मरण के समय होने वाली आत्मा की उग्र क्रिया) का प्रयोग दो बार होता है–(१) कुछ जीव मारणांतिक समुद्घात का प्रयोग करके अपने उत्पत्तिस्थान पर जन्म ले लेते हैं। जो जीव मारणान्तिक समुद्घात करके नरकावासादि में अपने आगामी उत्पत्तिस्थान पर जाते हैं, उस काल में उनमें से कोई एक जीव, जो समुद्घात–काल में ही मरण प्राप्त हो जाता है, वह वहाँ मारणान्तिक समुद्घात करके पुनः उत्पत्तिस्थान पर आता है; फिर आहारयोग्य पुद्गलों को ग्रहण करता है, तत्पश्चात् ग्रहण किये हुए उन पुद्गलों को पचाकर उनका खलरूप और रसरूप विभाग करता है। फिर पुद्गलों से शरीर की रचना करता है।

द्वीन्द्रिय आदि जीवों के आवासस्थान लोक के एक भाग में हैं। एकेन्द्रिय के आवासस्थान सम्पूर्ण लोक में है। इसलिए वे जीव लोकान्त तक उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक जीव का आकाश के असंख्य प्रदेशों में अवगाहन होता है। इसलिए वह एक प्रदेशात्मक आकाश श्रेणी को छोड़कर अनेक प्रदेशात्मक–असंख्य प्रदेशात्मक आकाश श्रेणी में उत्पन्न होता है। *(वृत्ति, पत्रांक २७३–२७४)*

॥ छठा शतक : छठा उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Conclusion—In one rebirth a soul may undergo *maranantik samudghat* (bursting forth of some soul-space-points before the moment of death) twice. After *maranantik samudghat* some souls (*jiva*) take rebirth at their destined place including infernal abodes. Out

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of these some soul goes there, returns and once again undergoes *maranantik samudghat* to be born at the destined place. After that it acquires suitable particles as food, transforms these particles into digestible solids and liquids, and finally forms its body with these particles.

The abodes of two sensed and higher beings are only in a portion of Lok (occupied space) whereas those of one-sensed beings are in the whole Lok. That is why these beings are born right up to Lokaant (the edge of the universe). Every single being occupies innumerable space-points and therefore it takes birth in areas of innumerable space-point dimension and not those with single space-point dimension. *(Vritti, leaves 273-274)*

● END OF THE SIXTH LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : सप्तम उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : SEVENTH LESSON

'शाली' SHAALI (PADDY)

धान्यों की योनि–स्थिति SPROUTING OF CORN

१. [प्र.] अह णं भंते ! सालीणं, वीहीणं, गोधूमाणं, जवाणं, जवजवाणं, एएसि णं धन्नाणं कोट्ठाउत्ताणं पल्लाउत्ताणं मंचाउत्ताणं मालाउत्ताणं ओलित्ताणं लित्ताणं पिहियाणं मुद्दियाणं लंछियाणं केवइयं कालं जोणी संचिट्ठइ ?

गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिण्णि संवच्छराइं, तेण परं जोणी पमिलायइ, तेण परं जोणी पविद्धंसति, तेण परं बीए अबीए भवति, तेण परं जोणिवोच्छेदे पन्नत्ते समणाउसो !

१. [प्र.] भगवन् ! शाली (कमल आदि श्रेष्ठ जाति का चावल), व्रीहि (सामान्य चावल), गोधूम (गेहूँ), यव (जौ) तथा यवयव (विशिष्ट प्रकार का जौ = जई धान्य) इत्यादि धान्य कोठे में सुरक्षित रखे हों, बाँस के पल्ले (छबड़े), मंच (मचान) पर रखे हों, माल में डालकर रखे हों, (बर्तन में डालकर) गोबर से उनके मुख उल्लिप्त (विशेष प्रकार से लीपे हुए) हों, लिप्त हों, ढँके हुए हों, मिट्टी आदि से उन बर्तनों के मुख मुद्रित हों, (उनके मुँह बन्द करके) लांछित (सील लगाकर चिन्हित) किये हुए हों; (इस प्रकार सुरक्षित किये हुए हों) तो उन (धान्यों) की योनि (अंकुरोत्पादक शक्ति) कितने काल तक रहती है ?

[उ.] हे गौतम ! उनकी योनि कम से कम अन्तर्मुहूर्त्त तक और अधिक से अधिक तीन वर्ष तक रहती है। उसके पश्चात् उन (धान्यों) की योनि म्लान हो जाती है, विध्वंस को प्राप्त हो जाती है, फिर वह बीज, अबीज हो जाता है। इसके पश्चात् हे आयुष्मान् श्रमण ! उस योनि का विच्छेद हो जाता है।

1. [Q.] *Bhante* ! Say there are corns including *shali* (fine paddy), *brihi* (coarse paddy), *godhoom* (wheat), *yav* (barley) and *yav-yav* (special variety of barley, also called *jayi*) stored safely in a barn, a basket, a loft after being filled in large containers covered and sealed after properly besmearing and plastering with clay and cow-dung. How long does the sprouting capacity (*yoni*) of these secured corns remain intact ?

[Ans.] Gautam ! The sprouting capacity of these remains intact for a minimum period of Antar-muhurt (less than 48 minutes) and a maximum period of three years. After that this capacity of these corns fades and gets destroyed to make that seed a non-seed. After that, O long lived *Shraman*, that sprouting capacity ends.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. [प्र.] अह भंते ! कलाय-मसूर-तिल-मुग्ग-मास-निष्फाव-कुलत्थ-आलिसंदग-सईण-पलिमंथगमाईणं एएसिं णं धन्नाणं०?

[उ.] जहा सालीणं तहा एयाण वि, नवरं पंच संवच्छराइं। सेसं तं चेव।

२. [प्र.] भगवन् ! कलाय, मसूर, तिल, मूँग, उड़द, बाल (बालोर), कुलथ, आलिसन्दक (एक प्रकार का चंवला), सतीण (अरहर), पलिमंथक (गोल चना या काला चना) इत्यादि (धान्य पूर्वोक्त रूप से कोठे आदि में रखे हुए हों तो इन) धान्यों की (योनि कितने काल तक कायम रहती है ?)

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार शाली धान्य के विषय में कहा, उसी प्रकार इन धान्यों के लिए भी कहना चाहिए। विशेषता इतनी ही है कि यहाँ उत्कृष्ट पाँच वर्ष कहना चाहिए। शेष सारा वर्णन उसी तरह है।

2. [Q.] *Bhante* ! For how long the aforesaid capacity of pulses including *Kalaaya*, *Masoor* (a small-grained pulse; Lens esculenta), *Til* (sesame seed), *Moong* (green gram), *Urad* (a pulse; Phaseolus mungo), *baal* or *Balor* (a bean; Canavalia gladiata and Canavalia ensiformis), *Kulath* (a kind of gray or black gram; Dolichos biflorus), *Aalisandak* (a kind of bean), *Satina* or *Arahar* (a type of pulse; Cajamus Indicus), *Palimanthak* (round or black gram) lasts (if they are safely stored as aforesaid) ?

[Ans.] Gautam ! As has been stated about *shali* or corns so should be repeated for these pulses. The only difference being that in this case the maximum period is five years. Remaining details are same.

३. [प्र.] अह भंते ! अयसि-कुसुंभग-कोद्दव-कंगु-वरग-रालग-कोदूसग-सण-सरिसव-मूलगबीयमाईणं एएसिं णं धन्नाणं०?

[उ.] एयाणि वि तहेव, नवरं सत्त संवच्छराइं। सेसं तं चेव।

३. [प्र.] हे भगवन् ! अलसी, कुसुम्भ, कोद्रव (कोदों) कांगणी, बरट (बंटी), राल, सण, सरसों, मूलक बीज (एक जाति के शाक के बीज) आदि धान्यों की योनि कितने काल तक कायम रहती है ?

[उ.] गौतम ! उसी प्रकार इन धान्यों के लिए भी कहना चाहिए। विशेषता इतनी ही है कि इनकी योनि उत्कृष्ट सात वर्ष तक रहती है। शेष वर्णन पूर्ववत् समझ लेना चाहिए।

3. [Q.] *Bhante* ! For how long the aforesaid capacity of seeds including *Alasi* (linseed; Linum Usita-tssium), *Kusumbh*, *Kodrav* or *Kodon* (Paspalum scrobiculum), *Kaangani* (a millet; Setaria italica), *Barat* or *Bunty*, *Raal*, *Sarason* (mustard), and *Moolak beej* lasts (if they are safely stored as aforesaid) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Same as aforesaid (aphorism 2). The only difference being that in this case the maximum period is seven years. Remaining details are same.

गणनीय काल : मुहूर्त्त का मान MEASURABLE TIME : MUHURT

४. [प्र.] एगमेगस्स णं भंते ! मुहुत्तस्स केवइया ऊसासद्धा वियाहिया ?

[उ.] गोयमा ! असंखेज्जाणं समयाणं समुदय–समिति–समागमेणं सा एगा आवलिय त्ति पवुच्चइ, संखेज्जा आवलिया ऊसासो, संखेज्जा आवलिया निस्सासो।

हट्ठस्स अणवगल्लस्स निरुवकिट्ठस्स जंतुणो।
एगे ऊसासनीसासे, एस पाणु त्ति वुच्चइ॥१॥

सत्त पाणूणि से थोवे, सत्त थोवाइं से लवे।
लवाणं सत्तहत्तरिए एस मुहुत्ते वियाहिए॥२॥

तिण्णि सहस्सा सत्त य सयाइं तेवत्तरिं च ऊसासा।
एस मुहुत्तो दिट्ठो सव्वेहिं अणंतनाणीहिं॥३॥

४. [प्र.] भगवन् ! एक–एक मुहूर्त्त के कितने उच्छ्वास होते हैं ?

[उ.] गौतम ! असंख्यात समय मिलकर जितना काल होता है, उसे एक **'आवलिका'** कहते हैं। संख्येय आवलिका का एक 'उच्छ्वास' होता है और संख्येय आवलिका का एक 'निःश्वास' होता है।

4. [Q.] *Bhante* ! How many *Uchchhavaases* are there in each *Muhurt* ? (Or how many *Uchchhavaases* make a *Muhurt* ?)

[Ans.] Gautam ! Innumerable *Samayas* (the smallest indivisible unit of time; something even beyond nanosecond) make one *Avalika*. Countable *Avalikas* make one *Uchchhavaas* (time taken for one inhalation) and countable *Avalikas* make one *Nihshvaas* (time taken for one inhalation).

[गाथाओं का अर्थ–] (१) हृष्ट–पुष्ट, वृद्धावस्था और व्याधि से रहित मानसिक संक्लेश (टेंशन) से रहित प्राणी का एक उच्छ्वास और एक निःश्वास–(ये दोनों मिलकर) एक **'प्राण'** कहलाते हैं। (२) सात प्राणों का एक **'स्तोक'** होता है। सात स्तोकों का एक **'लव'** होता है। ७७ लवों का एक **मुहूर्त्त** कहा गया है। (३) अथवा ३,७७३ उच्छ्वासों का एक मुहूर्त्त होता है, ऐसा समस्त अनन्तज्ञानियों ने देखा है।

Verses—(1) One inhalation (*Uchchhavaas*) and one exhalation of a healthy, young, person free of any disease or stress make one *Praan*. (2) Seven *Praans* make one *Stoka*. Seven *Stokas* make one *Lava* and 77 *Lavas* make one *Muhurt*. Also 3773 *Uchchhavaasas* make one *Muhurt*. Such *Muhurt* has been seen by all sages possessing infinite knowledge.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. एएणं मुहुत्तपमाणेणं तीसमुहुत्तो अहोरत्तो, पण्णरस अहोरत्ता पक्खो, दो पक्खा मासो, दो मासा ऊऊ, तिण्णि उऊ अयणे, दो अयणा संवच्छरे, पंचसंवच्छरिए जुगे, वीसं जुगाइं वाससयं, दस वाससयाइं वाससहस्सं, सयं वाससहस्साइं वाससतसहस्सं, चउरासीइं वाससतसहस्साणि से एगे पुव्वंगे, चउरासीइं पुव्वंगसयसहस्साइं से एगे पुव्वे, एवं तुडिअंगे तुडिए, अडडंगे अडडे, अववंगे अववे, हूहूअंगे हूहूए, उप्पलंगे उप्पले, पउमंगे पउमे, नलिणंगे नलिणे, अत्थनिउरंगे अत्थनिउरे, अउअंगे अउए, पउअंगे पउए य, नउअंगे नउए य, चूलिअंगे चूलिआ य, सीसपहेलिअंगे सीसपहेलिया। एताव ताव गणिए। एताव ताव गणियस्स विसए। तेण परं ओवमिए।

५. इस मुहूर्त्त के अनुसार तीस मुहूर्त्त का एक 'अहोरात्र' होता है। पन्द्रह अहोरात्र का एक 'पक्ष', दो पक्षों का एक 'मास', दो मासों की एक 'ऋतु', तीन ऋतुओं का एक 'अयन', दो अयन का एक 'संवत्सर' (वर्ष), पाँच संवत्सर का एक 'युग', बीस युग का एक 'वर्षशत' (सौ वर्ष) है, दस वर्षशत का एक 'वर्षसहस्र' (एक हजार वर्ष), सौ वर्ष सहस्रों का एक 'वर्षशतसहस्र' (एक लाख वर्ष), ८४ लाख वर्षों का एक 'पूर्वांग'। ८४ लाख पूर्वांग का एक 'पूर्व', ८४ लाख पूर्व का एक 'त्रुटितांग' और ८४ लाख त्रुटितांग का एक 'त्रुटित' होता है। इस प्रकार पहले की राशि को ८४ लाख से गुणा करने से उत्तरोत्तर राशियाँ बनती हैं। वे इस प्रकार हैं—अटटांग, अटट, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनुपूरांग, अर्थनुपूर, अयुतांग, अयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, नयुतांग, नयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग और शीर्षप्रहेलिका। इस संख्या तक गणित है। यह गणित का विषय है। इसके बाद औपमिक काल है (उपमा का विषय है—उपमा द्वारा जाना जाता है, गणित (गणना) का नहीं)।

5. 30 such *Muhurts* make one *Ahoratra* (day and night). 15 *Ahoratras* make one *Paksha*. 2 *Pakshas* make one *Maas* (30 days or a month). 2 *Maases* make one *Ritu* (season). 3 *Ritus* make one *Ayan* (the time from one solstice to another, 6 months). 2 *Ayans* make one *Samvatsar* (year). 5 *Samvatsars* make one *Yug*. 20 *Yugs* make one *Varshashat* (century). 10 *Varshashat* make one *Varshasahasra* (millennium). 100 *Varshasahasra* make one *Varshashatsahasra* (one hundred thousand years). 8.4 million *Varsh* make one *Purvanga*. 8.4 million *Purvangas* make one *Purva*. 8.4 million *Purvas* make one *Trutitanga*. 8.4 million *Trutitanga* make one *Trutit*. In the same way multiplying the preceding unit by 8.4 million gives the following units that are — *Adadanga*, *Adada*, *Avavanga*, *Avava*, *Huhukanga*, *Huhuka*, *Utpalanga*, *Utpala*, *Padmanga*, *Padma*, *Nalinanga*, *Nalina*, *Arthanupuranga*, *Arthanupura*, *Ayutanga*, *Ayut*, *Prayutanga*, *Prayuta*, *Nayutanga*, *Nayuta*, *Chulikanga*, *Chulika*, *Sheershaprahelikanga*, and *Sheershaprahelika* (a number having 194 digits). This is the point up to which arithmetic is applicable. Up to this

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

point is the subject of arithmetic. After this comes metaphoric time (expressed through metaphors not numerals or arithmetic).

विवेचन : गणनीय काल–मुहूर्त से लेकर शीर्ष–प्रहेलिकापर्यन्त गणितयोग्य काल है। काल का सूक्ष्मतम भाग समय होता है। असंख्यात समय की एक 'आवलिका' होती है। २५६ आवलिका का एक क्षुल्लकभवग्रहण होता है। १७ से कुछ अधिक क्षुल्लकभवग्रहण (४४४६ $\frac{२४५८}{३७७३}$ आवलिका) का एक उच्छ्वास-निःश्वासकाल होता है। मानसिक संक्लेशरहित व्यक्ति के श्वास–निश्वास की संख्या सम व स्थिर रहती है। अतः वही प्रमाण माना गया है। एक पूर्ण उच्छ्वास–निःश्वास का एक 'प्राण' इसके आगे की संख्या स्पष्ट है। सबसे अन्तिम गणनीय काल 'शीर्षप्रहेलिका' है, और जो १९४ अंकों की संख्या है। *(काल का विस्तृत वर्णन अनुयोगद्वार, भाग १, पृष्ठ २८९, तथा भाग २, काल प्रमाण, पृष्ठ १५८ पर किया जा चुका है।)*

Elaboration—Countable or measurable time is expressed by various aforesaid units from *Muhurt* to *Sheershaprahelika*. The smallest indivisible unit of time is called one *Samaya*; it is something even beyond nanosecond. Innumerable *Samayas* make one *Avalika*. 256 *Avalikas* make one *Kshullak-bhava-grahan*. Slightly more than 17 *Kshullak-bhava-grahan* (4446 $\frac{2458}{3773}$ *Avalika*) make one *Uchchhavaas-Nihshvaas*. The rhythm of respiration of a healthy and stress free person is uniform and that is why it is taken as a standard unit. Time taken in one complete inhalation and exhalation is called *Praan*. The following units are exact and as aforesaid. The last countable unit of time is *Sheershaprahelika* (a number having 194 digits). *(for more details refer to Illustrated Anuyogadvar Sutra, part 1, p. 289 and part 2, p. 158)*

औपमिक काल का स्वरूप **METAPHORIC UNITS TIME**

६. [प्र.] से किं तं ओवमिए ?

[उ.] ओवमिए दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–पलिओवमे य, सागरोवमे य।

६. [प्र.] भगवन् ! वह औपमिक (काल) क्या है ?

[उ.] गौतम ! औपमिक काल दो प्रकार है। यथा–पल्योपम और सागरोपम।

6. [Q.] *Bhante* ! What is this metaphoric unit of time ?

[Ans.] Gautam ! There are two metaphoric units of time—*Palyopam* and *Sagaropam*.

७. [प्र.] से किं तं पलिओवमे ? से किं तं सागरोवमे ?

सत्थेण सुतिक्खेण वि छेत्तुं भेत्तुं च जं किर न सक्का।
तं परमाणुं सिद्धा वदंति आदिं पमाणाणं॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अणंताणं परमाणुपोग्गलाणं समुदय-समिति-समागमेणं सा एगा उस्सण्हसण्हिया ति वा, सण्हसण्हिया ति वा, उड्ढरेणू ति वा, तसरेणू ति वा, रहरेणू ति वा, वालग्गे ति वा, लिक्खा ति वा, जूया ति वा, जवमज्झे ति वा, अंगुले ति वा। अट्ठ उस्सण्हसण्हियाओ सा एगा सण्हसण्हिया, अट्ठ सण्हसण्हियाओ सा एगा उड्ढरेणू, अट्ठ उड्ढरेणूओ सा एगा तसरेणू, अट्ठ तसरेणूओ सा एगा रहरेणू, अट्ठ रहरेणूओ से एगे देवकुरु-उत्तरकुरुगाणं मणूसाणं वालग्गे, एवं हरिवास-रम्मग-हेमवत-एरण्णवताणं पुव्वविदेहाणं मणूसाणं अट्ठ वालग्गा स एगा लिक्खा, अट्ठ लिक्खाओ सा एगा जूया, अट्ठ जूयाओ से एगे जवमज्झे, अट्ठ जवमज्झा से एगे अंगुले, एतेणं अंगुलपमाणेणं छ अंगुलाणि पादो, बारस अंगुलाइं विहत्थी, चउव्वीसं अंगुलाणि रयणी, अडयालीसं अंगुलाइं कुच्छी, छण्णउतिं अंगुलाणि से एगे दंडे ति वा, धणू ति वा, जूए ति वा, नालिया ति वा, अक्खे ति वा, मुसले ति वा, एतेणं धणुप्पमाणेणं दो धणुसहस्साइं गाउयं, चत्तारि गाउयाइं जोयणं।

एएणं जोयणप्पमाणेणं जे पल्ले जोयणं आयामविक्खंभेणं, जोयणं उड्ढं उच्चत्तेणं तं तिउणं सविसेसं परिरएणं। से णं एगाहिय-बेयाहिय-तेयाहिय उक्कोसं सत्तरत्तप्परूढाणं संसट्ठे सन्निचिते भरिते वालग्गकोडीणं, ते णं वालग्गे नो अग्गी दहेज्जा, नो वाऊ हरेज्जा, नो कुत्थेज्जा नो परिविद्धंसेज्जा, नो पूइत्ताए हव्वमागच्छेज्जा। तओ णं वाससते वाससते गते एगमेगं वालग्गं अवहाय जावइएणं कालेणं से पल्ले खीणे नीरए निम्मले निट्ठिए निल्लेवे अवहडे विसुद्धे भवति। से तं पलिओवमे।

गाहा-एतेसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया।
तं सागरोवमस्स तु एक्कस्स भवे परीमाणं॥५॥

७. [प्र.] भगवन् ! पल्योपम' (काल) क्या है ? तथा 'सागरोपम' (काल) क्या है ?

[उ.] हे गौतम ! जो सुतीक्ष्ण शस्त्रों द्वारा भी छेदा-भेदा न जा सके, ऐसे परम-अणु (परमाणु) को सिद्ध (केवली) भगवान समस्त प्रमाणों का आदिभूत प्रमाण कहते हैं। ऐसे अनन्त परमाणु पुद्गलों के समुदाय की समितियों के समागम से एक उच्छ्लक्ष्ण श्लक्ष्णिका, श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका, ऊर्ध्वरेणु, त्रसरेणु, रथरेणु, बालाग्र, लिक्षा, यूका, यवमध्य और अंगुल होता है। आठ उच्छ्लक्ष्ण -श्लक्ष्णिका के मिलने से एक श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका होती है। आठ श्लक्ष्ण-श्लक्ष्णिका से एक ऊर्ध्वरेणु, आठ ऊर्ध्वरेणु से एक त्रसरेणु, आठ त्रसरेणुओं के मिलने से एक रथरेणु और आठ रथरेणुओं के मिलने से देवकुरु-उत्तरकुरु क्षेत्र के मनुष्यों का एक बालाग्र होता है, तथा देवकुरु और उत्तरकुरु क्षेत्र के मनुष्यों के आठ बालाग्रों से हरिवर्ष और रम्यक्वर्ष के मनुष्यों का एक बालाग्र होता है। हरिवर्ष और रम्यक्वर्ष के मनुष्यों के आठ बालाग्रों से हैमवत और हैरण्यवत के मनुष्यों का एक बालाग्र होता है। हैमवत और हैरण्यवत के मनुष्यों के आठ बालाग्रों से पूर्वविदेह के मनुष्यों का एक बालाग्र होता है। पूर्वविदेह के मनुष्यों के आठ बालाग्रों से एकलिक्षा (लीख), आठ लिक्षा से एक यूका (जूँ), आठ यूका से एक यवमध्य और आठ यवमध्य से एक अंगुल होता है। इस प्रकार के छह अंगुल का एक पाद (पैर), बारह अंगुल की एक वितस्ति (बेंत), चौबीस अंगुल का एक हाथ, अड़तालीस अंगुल की एक कुक्षि, छियानवे अंगुल का दण्ड, धनुष, युग,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नालिका, अक्ष अथवा मूसल होता है। दो हजार धनुष का एक गाऊ होता है और चार गाऊ का एक योजन होता है।

इस योजन के परिमाण से एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा और एक योजन गहरा (ऊपर में ऊँचा), तिगुणी से अधिक परिधि वाला एक पल्य (कोठा) हो, उस पल्य में एक दिन के उगे हुए, दो दिन के उगे हुए, तीन दिन के उगे हुए, और अधिक से अधिक सात रात्रि के उगे हुए करोड़ों बालाग्र, किनारे तक ऐसे ठूँस-ठूँसकर भरे हों, संनिचित (इकट्ठे) किये हों, अत्यन्त भरे हों, कि उन बालाग्रों को अग्नि न जला सके और हवा उन्हें उड़ाकर न ले जा सके; वे बालाग्र सड़ें नहीं, न ही परिध्वस्त (नष्ट) हों, और न ही वे शीघ्र दुर्गन्धित हों। इसके पश्चात् उस पल्य में से सौ-सौ वर्ष में एक-एक बालाग्र को निकाला जाये। इस क्रम से तब तक निकाला जाये, जब तक कि वह पल्य क्षीण हो जाय नीरज, निर्मल और निष्ठित (पूर्ण) हो जाये, निर्लेप, अपहरित और विशुद्ध (पूरी तरह खाली) हो जाये। उतने काल को एक **'पल्योपम काल'** (व्यावहारिक) कहते हैं। (सागरोपम काल के परिमाण को बताने वाली गाथा का अर्थ-) इस पल्योपम काल का जो परिमाण ऊपर बतलाया गया है, वैसे दस कोटाकोटि पल्योपमों का एक सागरोपम-कालपरिमाण होता है।

7. [Q.] *Bhante* ! What is this *Palyopam* unit of time ? And what is this *Sagaropam* unit of time ?

[Ans.] Gautam ! The ultimate (*param*) particle (*anu*) of matter that cannot be pierced and divided even by sharpest of weapons is called the first of all validations (*Adi-pramaan*) by the Omniscient. Combinations of lumps of clusters of such infinite *paramanu pudgals* (ultimate-particles of matter) form (the following linear units)—*Uchchhlakshn-shlakshnika*, *Shlakshn-shlakshnika*, *Urdhvarenu*, *Trasarenu*, *Ratharenu*, *Baalaagra* (hair-tip), *Liksha*, *Yuka*, *Yavamadhya* and *Angul*. 8 *Uchchhlakshn-shlakshnikas* make one *Shlakshn-shlakshnika*. 8 *Shlakshn-shlakshnikas* make one *Urdhvarenu*. 8 *Urdhvarenus* make one *Trasarenu*. 8 *Trasarenus* make one *Ratharenu*. 8 *Ratharenus* make one *Baalaagra* (hair-tip) of humans of Devakuru and Uttarakuru area. 8 *Baalaagras* (hair-tips) of humans of Devakuru and Uttarakuru area make one *Baalaagra* (hair-tip) of humans of Harivarsha-Ramyakvarsha area. 8 *Baalaagras* (hair-tips) of humans of Harivarsha-Ramyakvarsha area make one *Baalaagra* (hair-tip) of humans of Haimavat-Hairanyavat area. 8 *Baalaagras* (hair-tips) of humans of Haimavat-Hairanyavat area make one *Baalaagra* (hair-tip) of humans of Purva-videh area. 8 *Baalaagras* (hair-tips) of humans of Purva-videh area make one *Liksha* (*Leekh*). 8 *Likshas* make one *Yuka*. 8 *Yukas* make one *Yavamadhya*. 8 *Yavamadhyas* make one *Angul* (finger-width). Such 6 *Anguls* make one

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Paad (foot), 12 *Anguls* make one *Vitasti* (*Baint* or *Bitta*), 24 *Anguls* make one *Haath*, 48 *Anguls* make one *Kukshi*, 96 *Anguls* make one *Dand* or *Dhanush* or *Yuga* or *Nalika* or *Aksha* or *Musal*. 2000 *Dhanush* make one *Gau* (*Gavyut* or *Kosa*) and 4 *Gau* make one *Yojan*.

With this *Yojan* measure, take for example a silo one *Yojan* long, one Yojan wide, one *Yojan* high and with a circumference of a little more than three times (three *Yojans*). That silo is filled to the brim with hair tips grown in one day, two days, three days, up to a maximum of seven days (after shaving the head). The hair are tightly packed into a solid mass so that afterwards they cannot be burnt by fire or swept by air and are neither decayed, destroyed or putrefied. Now, *Palyopam* (*Vyavaharik*) is the total time taken in completely emptying this silo by taking out one hair-tip at a time every one hundred years and sweeping it clean and free from any sand particles, slime, and even odour so that it remains itself only. (Verse—) Such ten *Kotakoti* (1014) *Palyopams* make one *Sagaropam*.

उत्सर्पिणी–अवसर्पिणी **UTSARPINI-AVASARPINI**

८. एएणं सागरोवम पमाणेणं चत्तारि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमसुसमा १, तिण्णि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमा २, दो सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसम–दूसमा ३, एगा सागरोवमकोडाकोडी बायालीसाए वाससहस्सेहिं ऊणिया कालो दूसम–सुसमा ४, एक्कवीसं वाससहस्साइं कालो दूसमा ५, एक्कवीसं वाससहस्साइं कालो दूसम–दूसमा ६।

पुणरवि उस्सप्पिणीए एक्कवीसं वाससहस्साइं कालो दूसमदूसमा १। एक्कवीसं वाससहस्साइं जाव चत्तारि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो सुसमसुसमा ६। दस सागरोवमकोडाकोडीओ कालो ओसप्पिणी। दस सागरोवमकोडाकोडीओ कालो उस्सप्पिणी, वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ कालो ओसप्पिणी य उस्सप्पिणी य।

८. इस सागरोपम-परिमाण के अनुसार चार कोटाकोटि सागरोपम–काल का एक (१) सुषम–सुषमा आरा होता है। (२) तीन कोटाकोटि सागरोपम–काल का एक सुषमा आरा होता है। (३) दो कोटाकोटि सागरोपम–काल का एक सुषम–दुःषमा आरा होता है। (४) बयालीस हजार वर्ष कम एक कोटाकोटि सागरोपम–काल का एक दुःषम–सुषमा आरा होता है। (५) इक्कीस हजार वर्ष का एक दुःषम आरा होता है। (६) इक्कीस हजार वर्ष का एक दुःषम–दुःषमा आरा होता है।

इसी प्रकार उत्सर्पिणीकाल में पुनः इक्कीस हजार वर्ष परिमित काल का प्रथम दुःषम–दुषमा आरा होता है। इक्कीस हजार वर्ष का द्वितीय दुःषम आरा होता है, बयालीस हजार वर्ष कम एक कोटाकोटि सागरोपम काल का तीसरा दुःषमा–सुषमा आरा होता है, दो कोटाकोटि सागरोपमकाल का चौथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुषमा-दुःषमा आरा होता है। तीन कोटाकोटि सागरोपमकाल का पाँचवाँ सुषम आरा होता है और चार कोटाकोटि सागरोपमकाल का छठा सुषम-सुषमा आरा होता है। इस प्रकार (कुल) दस कोटाकोटि सागरोपमकाल का एक अवसर्पिणीकाल होता है और दस कोटाकोटि सागरोपम काल का ही उत्सर्पिणीकाल होता है। यों बीस कोटाकोटि सागरोपमकाल का एक अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी-कालचक्र होता है।

8. (In the *Avasarpini* kaal or regressive cycle of time) In this *Sagaropam* measure (1) *Sukham-sukhama Ara* (epoch of extreme happiness) is 4 *Kotakoti Sagaropam* long; (2) *Sukhama Ara* (epoch of happiness) is 3 *Kotakoti Sagaropam* long; (3) *Sukham-dukhama* (epoch of more happiness than sorrow) is 2 *Kotakoti Sagaropam* long; (4) *Dukham-sukhama* (epoch of more sorrow than happiness) is 42,000 year less one *Kotakoti Sagaropam* long; (5) *Dukhama* (epoch of sorrow) is 21,000 years long and (6) *Dukham-dukhama* (epoch of extreme sorrow) is 21,000 years long.

In the same way in the *Utsarpini kaal* (progressive cycle of time) the first *Dukham-dukhama* (epoch of extreme sorrow) is 21,000 years long; the second *Dukhama* (epoch of sorrow) is 21,000 years long; the third *Dukham-sukhama* (epoch of more sorrow than happiness) is 42,000 year less one *Kotakoti Sagaropam* long; the fourth *Sukham-dukhama* (epoch of more happiness than sorrow) is 2 *Kotakoti Sagaropam* long; the fifth *Sukhama Ara* (epoch of happiness) is 3 *Kotakoti Sagaropam* long; and the sixth *Sukham-sukhama* Ara (epoch of extreme happiness) is 4 *Kotakoti Sagaropam* long. This way there is one *Avasarpini kaal* (regressive half-cycle of time) ten *Kotakoti Sagaropam* long and one *Utsarpini kaal* (progressive half-cycle of time) also ten *Kotakoti Sagaropam* long. Thus one complete progressive-regressive cycle of time *Avasarpini Utsarpini kaal-chakra* is of 20 *Kotakoti Sagaropam* duration.

विवेचन : पल्योपम का स्वरूप—यहाँ जो पल्योपम का स्वरूप बतलाया है, वह व्यवहार अद्धापल्योपम का स्वरूप है। पल्योपम के मुख्य तीन भेद हैं-(१) उद्धारपल्योपम, (२) अद्धापल्योपम, और (३) क्षेत्रपल्योपम। उद्धारपल्योपम आदि के प्रत्येक के दो प्रकार हैं—व्यवहार उद्धारपल्योपम एवं सूक्ष्म उद्धारपल्योपम, व्यवहार अद्धापल्योपम एवं सूक्ष्म अद्धापल्योपम, तथा व्यवहार क्षेत्रपल्योपम एवं सूक्ष्म क्षेत्रपल्योपम। (विस्तृत वर्णन अनुयोगद्वार, भाग १ में किया जा चुका है)

Elaboration—Palyopam—the *Palyopam* unit detailed here is *Vyavahar Addhapalyopam*. There are three kinds of *Palyopam* units—(1) *Uddhar Palyopam*, (2) *Addha Palyopam*, and (3) *Kshetra Palyopam*. All these have two sub-categories each—*Vyavahar Uddhar Palyopam*, *Sukshma*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Uddhar Palyopam, *Vyavahar Addha Palyopam*, *Sukshma Addha Palyopam*, *Vyavahar Kshetra Palyopam*, and *Sukshma Kshetra Palyopam*. (for detailed description refer to *Illustrated Anuyogadvar Sutra*, part 1)

सुषमसुषमाकालीन भारतवर्ष के भाव **BHARAT VARSH IN SUKHAM-SUKHAMA ARA**

९. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे इमीसे ओसप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए उत्तमट्ठपत्ताए भरहस्स वासस्स केरिसए आगारभावपडोयगारे होत्था ?

[उ.] गोयमा ! बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे होत्था, से जहानामए आलिंगपुक्खरे इ वा, एवं उत्तरकुरुवत्तव्वया नेयव्वा जाव आसयंति सयंति। तीसे णं समाए भारहे वासे तत्थ तत्थ देसे देसे तहिं तहिं बहवे उराला कुद्दाला, जाव कुसविकुस–विसुद्धरुक्खमूला जाव छव्विहा मणूसा अणुसज्जित्था, तं०–१. पम्हगंधा, २. मियगंधा, ३. अममा, ४. तेयली, ५. सहा, ६. सणिंचारी।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ छट्ठे सए : सत्तमो सालिउद्देसो समत्तो ॥

९. [प्र.] भगवन् ! इस जम्बूद्वीप नामक द्वीप में उत्तमार्थ–प्राप्त (आयुष्य आदि उत्तम अवस्था प्राप्त) इस अवसर्पिणीकाल के सुषम–सुषमा नामक आरे में भरतक्षेत्र (भारतवर्ष) के आकार (आचार–) भाव–प्रत्यवतार (आचारों और पदार्थों के भाव–पर्याय–अवस्था) किस प्रकार के थे ?

[उ.] गौतम ! (उस समय) भूमिभाग बहुत सम होने से अत्यन्त रमणीय था। जैसे–कोई आलिंग मुरज (तबला) नामक वाद्य का चर्ममण्डित मुखपट हो, वैसा बहुत ही सम भरतक्षेत्र का भूभाग था। इस प्रकार उस समय के भरतक्षेत्र के लिए उत्तरकुरु की वक्तव्यता (वर्णन) के समान कहनी चाहिए। यावत् बैठते हैं, सोते हैं। उस काल (अवसर्पिणी के प्रथम आरे) में भारतवर्ष में उन–उन देशों के उन–उन स्थलों में उदार (प्रधान) एवं कुद्दालक यावत् कुश और विकुश से विशुद्ध वृक्षमूल थे; यावत् छह प्रकार के मनुष्य थे। यथा–(१) पद्मगन्ध वाले, (२) मृग (कस्तूरी के समान) गन्ध वाले, (३) अमम (ममत्वरहित), (४) तेजस्तली (तेजस्वी एवं रूपवान्), (५) सहा (सहनशील), और (६) शनैश्चर (उतावल व उत्सुकतारहित होने से धीरे–धीरे गजगति से चलने वाले) थे।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है' यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरने लगे।

॥ छठा शतक : सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

9. [Q.] *Bhante* ! In this *Avasarpini kaal* (regressive half-cycle of time) in the noblest *Sukham-sukhama Ara* what were the forms (things and conduct) and appearances (modes or variety of conduct and things) that prevailed in *Bharat* area (Bharat-varsh or Indian sub-continent) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Being very even, the land was delightful. The land of the Bharat area was as even and smooth as the leather mounted surface of *Muraj* (a tabla-like hand-drum). The description of Bharat area of that period should follow the pattern of Uttar Kuru... and so on up to... they sit, they sleep. During that period in those countries and those places in Bharat area there were luxuriant trees free of *Uddalak*, *Kuddalak*... and so on up to... grass and weeds... and so on up to... six kinds of human beings—(1) with lotus fragrance, (2) with musk fragrance, (3) free of attachment, (4) imposing and handsome, (5) tolerant, and (6) with serene gait (free of curiosity and rush).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so. "With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE SEVENTH LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : अष्टम उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : EIGHTH LESSON

पृथ्वी PRITHVI (WORLDS)

रत्नप्रभादि पृथ्वियों के नीचे BELOW THE WORLDS

१. [प्र.] कइ णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! अट्ठ पुढवीओ पण्णत्ताओ, तं जहा–रयणप्पभा जाव ईसीपब्भारा।

१. [प्र.] भगवन् ! कितनी पृथ्वियाँ हैं ?

[उ.] गौतम ! आठ पृथ्वियाँ हैं। वे यथा–(१) रत्नप्रभा, [(२) शर्कराप्रभा, (३) बालुकाप्रभा, (४) पंकप्रभा, (५) धूमप्रभा, (६) तमःप्रभा, (७) महातमःप्रभा], और (८) ईषत्प्राग्भारा।

1. [Q.] *Bhante* ! How many *prithvis* (worlds) are there ?

[Ans.] Gautam ! There are eight *prithvis* (worlds)—(1) Ratnaprabha, ... and so on up to... [(2) Sharkaraprabha, (3) Balukaprabha, (4) Pankaprabha, (5) Dhoom-prabha, (6) Tamah-prabha, (7) Adhah saptami (Tamstamah-prabha) and] (8) Ishatpragbhara (Siddhashila).

२. [प्र.] अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे गेहा इ वा गेहावणा इ वा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

३. [प्र.] अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए अहे गामा इ वा जाव सन्निवेसा इ वा ?

[उ.] नो इणट्ठे समट्ठे।

४. [प्र.] अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे उराला बलाहया संसेयंति, सम्मुच्छंति, वासं वासंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

५. तिण्णि वि पकरेंति–देवो वि पकरेइ, असुरो वि, नागो वि पकरेइ।

६–७. [प्र.] अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए बायरे थणियसद्दे ?

[उ.] हंता, अत्थि। तिण्णि वि पकरेंति।

८. [प्र.] अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए अहे बादरे अगणिकाए ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे, नऽन्नत्थ विग्गहगतिसमावन्नएणं।

९. [प्र.] अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अहे चंदिम जाव तारारूवा ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] नो इणट्ठे समट्ठे।

१०. [प्र.] अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए चंदाभा। ति वा सूराभा ति वा।

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे गृह (घर) अथवा गृहापण (दुकानें) आदि हैं ?

[उ.] गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे गृह या गृहापण नहीं हैं।

३. [प्र.] भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे ग्राम यावत् सन्निवेश आदि हैं ?

[उ.] गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे ग्राम यावत् सन्निवेश नहीं हैं।

४. [प्र.] भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे महान् (उदार) मेघ संस्वेद (बादलों के रूप में) को प्राप्त होते हैं, (घटा के रूप में) सम्मूर्च्छित होते हैं और वर्षा बरसाते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! ऐसा होता है।

५. भगवन् ! (महामेघों को संस्वेदित करने, सम्मूर्च्छित करने तथा वर्षा बरसाने का कार्य) ये तीनों कार्य देव भी करते हैं, असुर भी करते हैं और नाग भी करते हैं।

६—७. [प्र.] भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे बादर (स्थूल) स्तनित शब्द (मेघगर्जना की आवाज) है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! बादर स्तनित शब्द है, जिसे (उपर्युक्त) तीनों ही करते हैं।

८. [प्र.] भगवन् ! क्या रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे बादर अग्निकाय है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। यह निषेध विग्रहगति समापन्नक जीवों के सिवाय (दूसरे जीवों के लिए समझना चाहिए)।

९. [प्र.] भगवन् ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे क्या चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारारूप हैं ?

[उ.] (गौतम !) यह अर्थ समर्थ नहीं है।

१०. [प्र.] भगवन् ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी में चन्द्राभा (चन्द्रमा का प्रकाश), सूर्याभा (सूर्य का प्रकाश आदि) हैं ?

[उ.] (गौतम !) ऐसा नहीं है।

2. [Q.] *Bhante* ! Are there houses or shops (*grihapan*) below this Ratnaprabha *prithvi* ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

3. [Q.] *Bhante* ! Are there villages... and so on up to... *sannivesh* (temporary settlement) below this Ratnaprabha *prithvi* ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. [Q.] *Bhante* ! Below this Ratnaprabha prithvi do great clouds accumulate moisture, form into rain-clouds and cause shower ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so.

5. These activities of clouds are done by a *Dev*, *Asur* as well as a *Naag*.

6-7. [Q.] *Bhante* ! Below this Ratnaprabha *prithvi* is there loud thundering sound (of clouds) and gross (bright) lightening ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so. And it is produced by all three.

8. *Bhante* ! Does this Ratnaprabha *prithvi* contain gross (*baadar*) fire-bodies ?

[Ans.] Gautam ! That is not so. However, this negation is for beings other than those with oblique movement (*vigrahagati samapanna*).

9. [Q.] Does this Ratnaprabha *prithvi* have formations like moon, sun, planets, constellations and stars ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

10. [Q.] *Bhante* ! Does this Ratnaprabha *prithvi* have glow of the moon or the sun ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

११. एवं दोच्चाए वि पुढवीए भाणियव्वं।

१२. एवं तच्चाए वि भाणियव्वं, नवरं देवो वि पकरेति, असुरो वि पकरेति, णो णागो पकरेति।

१३. चउत्थीए वि एवं, नवरं देवो एक्को पकरेति, नो असुरो, नो नागो पकरेति।

१४. एवं हेट्ठिल्लासु सव्वासु देवो एक्को पकरेति।

११. इसी प्रकार (पूर्वोक्त सभी बातें) दूसरी पृथ्वी (शर्कराप्रभा) के लिए भी कहना चाहिए।

१२. इसी प्रकार (पूर्वोक्त सब बातें) तीसरी पृथ्वी (बालुकाप्रभा) के लिए भी कहना चाहिए। इतना विशेष है कि वहाँ देव भी (ये सब) करते हैं, असुर भी करते हैं, किन्तु नाग (कुमार) नहीं करते।

१३. चौथी पृथ्वी में भी इसी प्रकार सब बातें कहनी चाहिए। इतना विशेष है कि वहाँ देव ही अकेले (यह सब) करते हैं, किन्तु असुर और नाग नहीं करते हैं।

१४. इसी प्रकार नीचे की (पाँचवीं, छठी और सातवीं नरक) सब पृथ्वियों में केवल देव ही (यह सब कार्य) करते हैं (असुरकुमार और नागकुमार नहीं करते)।

11. The same (aforesaid statements) should be repeated for the second world (Sharkaraprabha).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12. The same (aforesaid statements) should be repeated for the third world (Balukaprabha). The only exception is that here all activities are done by gods and Asur Kumars but not by Naag Kumars.

13. The same (aforesaid statements) should be repeated for the fourth world (Pankaprabha). The only exception is that here all activities are done by gods alone and not by Asur Kumars or Naag Kumars.

14. In the same way in the three lower most worlds (fifth, sixth and seventh) all activities are done by gods alone and not by Asur Kumars or Naag Kumars.

देवलोकों के नीचे **BELOW THE DIVINE REALMS**

१५. [प्र.] अत्थि णं भंते ! सोहम्मीसाणाणं कप्पाणं अहे गेहा इ वा २ ?

[उ.] नो इणट्ठे समट्ठे।

१६. [प्र.] अत्थि णं भंते ! उराला बलाहया ?

[उ.] हंता, अत्थि।

१७. देवो पकरेति, असुरो वि पकरेइ, नो नागो पकरेति।

१८. एवं थणियसद्दे वि।

१५. [प्र.] भगवन् ! क्या सौधर्म और ईशान कल्पों के नीचे गृह अथवा गृहापण हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

१६. [प्र.] भगवन् ! क्या सौधर्म और ईशान देवलोक के नीचे महामेघ (उदार बलाहक) हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! (वहाँ महामेघ हैं)।

१७. (सौधर्म और ईशान देवलोक के नीचे पूर्वोक्त सब कार्य (बादलों का छाना, मेघ उमड़ना, वर्षा बरसाना आदि) देव करते हैं, असुर भी करते हैं, किन्तु नागकुमार नहीं करते।

१८. इसी प्रकार वहाँ स्तनित शब्द के लिए भी कहना चाहिए।

15. [Q.] *Bhante* ! Are there houses or shops (*grihapan*) below Saudharma and Ishan *kalps* (divine realms) ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

16. [Q.] *Bhante* ! Below Saudharma and Ishan *kalps* are there great clouds ?

[Ans.] Yes, Gautam ! It is so.

17. These activities of clouds (accumulate moisture, form into rain-clouds and cause shower) are done by a *Dev*, an *Asur* but not a *Naag*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

18. The same should be repeated for loud thundering sound (of clouds).

१९. [प्र.] अत्थि णं भंते ! बादरे पुढविकाए, बादरे अगणिकाए ?

[उ.] नो इणट्ठे समट्ठे, नऽन्नत्थ विग्गहगतिसमावन्नएणं।

२०. [प्र.] अत्थि णं भंते ! चंदिम० ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

२१. [प्र.] अत्थि णं भंते ! गामाइ वा० ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

२२. [प्र.] अत्थि णं भंते ! चंदाभा ति वा २ ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

२३. एवं सणंकुमार–माहिंदेसु, नवरं देवो एगो पकरेति।

२४. एवं बंभलोए वि।

२५. एवं बंभलोगस्स उवरिं सव्वहिं देवो पकरेति।

१९. [प्र.] भगवन् ! क्या वहाँ (सौधर्म और ईशान देवलोक के नीचे) बादर पृथ्वीकाय और बादर अग्निकाय है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं। यह निषेध विग्रहगति समापन्न जीवों के सिवाय दूसरे जीवों के लिए जानना चाहिए।

२०. [प्र.] भगवन् ! क्या वहाँ चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारारूप हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

२१. [प्र.] भगवन् ! क्या वहाँ ग्राम यावत् सन्निवेश हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

२२. [प्र.] भगवन् ! क्या यहाँ चन्द्राभा, सूर्याभा आदि हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

२३. इसी प्रकार सनत्कुमार और माहेन्द्र देवलोकों में भी कहना चाहिए। विशेष यह है कि वहाँ (यह सब) केवल देव ही करते हैं।

२४. इसी प्रकार ब्रह्मलोक (पंचम देवलोक) में भी कहना चाहिए।

२५. इसी तरह ब्रह्मलोक से ऊपर (पंच अनुत्तरविमान देवलोक तक) सर्वस्थलों में पूर्वोक्त प्रकार से कहना चाहिए। इन सब स्थलों में केवल देव ही (पूर्वोक्त कार्य) करते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. [Q.] *Bhante* ! Do Saudharma and Ishan *kalps* contain gross (*baadar*) earth-bodies and gross fire-bodies ?

[Ans.] Gautam ! That is not so. However, this negation is for beings other than those with oblique movement (*vigrahagati samapanna*).

20. [Q.] Do Saudharma and Ishan *kalps* have formations like moon, sun, planets, constellations and stars ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

21. [Q.] *Bhante* ! Are there villages... and so on up to... *sannivesh* (temporary settlement) in Saudharma and Ishan *kalps* ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

22. [Q.] *Bhante* ! Do Saudharma and Ishan *kalps* have glow like the moon or the sun ?

[Ans.] Gautam ! It is not so.

23. The same (aforesaid statements) should be repeated for Sanatkumar and Maahendra *kalps*. The only exception is that here all activities are done by gods alone.

24. The same (aforesaid statements) should be repeated for Brahmalok (the fifth *kalp*).

25. The same (aforesaid statements) should be repeated for *kalps* above Brahmalok (up to the five Anuttar Vimaan *kalps*). In all these *kalps* all activities are done by gods alone.

२६. [प्र. उ.] पुच्छियव्वे य बादरे आउकाए, बादरे तेउकाए, बायरे वणस्सइकाए। अन्नं तं चेव।

तमुक्काए कप्पपणए अगणी पुढवी य, अगणी पुढवीसु।
आऊ–तेउ–वणस्सति कप्पुवरिम–कण्हराईसु॥१॥ (गाहा)

२६. [प्र. उ.] इन सब स्थलों में बादर अप्काय, बादर अग्निकाय और बादर वनस्पतिकाय के विषय में प्रश्न (पृच्छा) करना चाहिए। उनका उत्तर भी पूर्ववत् कहना चाहिए। अन्य सब बातें पूर्ववत् कहनी चाहिए।

[गाथा का अर्थ–] तमस्काय में और पाँच देवलोकों तक में अग्निकाय और पृथ्वीकाय के सम्बन्ध में प्रश्न करना चाहिए। रत्नप्रभा आदि नरकपृथ्वियों में अग्निकाय के सम्बन्ध में प्रश्न करना चाहिए। इसी तरह पंचम कल्प–देवलोक से ऊपर सब स्थानों में तथा कृष्णराजियों में अप्काय, तेजस्काय और वनस्पतिकाय के सम्बन्ध में प्रश्न करना चाहिए।

26. [Q. Ans.] For all these areas questions should be asked about *gross* (*baadar*) water-bodies, gross fire-bodies and gross plant-bodies.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Same answers should also be repeated. All other information is also as aforesaid.

[Verse—] With regard to *Tamaskaaya* and five divine realms questions about fire-bodies and earth-bodies should be asked. With regard to Ratnaprabha and other worlds questions about fire-bodies should be asked. In the same way with regard to all areas above the fifth *kalp* and *krishna-rajis* questions about water-bodies, fire-bodies and plant-bodies should be asked.

विवेचन : रत्नप्रभादि पृथ्वियों के नीचे बादर पृथ्वीकाय और बादर अग्निकाय नहीं है, किन्तु वहाँ घनोदधि आदि होने से अप्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय है। सौधर्म, ईशान आदि देवलोकों में बादर पृथ्वीकाय नहीं है; क्योंकि वहाँ उसका स्वस्थान न होने से उत्पत्ति नहीं है तथा सौधर्म, ईशान उदधिप्रतिष्ठित होने से वहाँ बादर अप्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय का सद्भाव है। इसी तरह सनत्कुमार और माहेन्द्र में तमस्काय होने से वहाँ बादर अप्काय और वनस्पतिकाय का होना सुसंगत है। तमस्काय में और पाँचवें देवलोक तक बादर अग्निकाय और बादर पृथ्वीकाय का अस्तित्व नहीं है। शेष तीन का सद्भाव है। बारहवें देवलोक तक इसी तरह जान लेना चाहिए। पाँचवें देवलोक से ऊपर के स्थानों में तथा कृष्णराजियों में भी बादर अप्काय, तेजस्काय और वनस्पतिकाय का सद्भाव नहीं है, क्योंकि उनके नीचे वायुकाय का ही सद्भाव है। संक्षेप में सार यह है–पहला, दूसरा स्वर्ग घनोदधि पर प्रतिष्ठित है। ३, ४, ५ घनवात पर, ६, ७, ८ घनोदधि और घनवात पर, ९ से १२वें ९ ग्रैवेयक तथा पाँच अनुत्तर विमान ये सब आकाश प्रतिष्ठित हैं। *(वृत्ति, पत्रांक २७९)*

Elaboration—Gross earth-bodies (*baadar prithvikaaya*) and gross fire-bodies (*baadar agnikaaya*) do not exist below Ratnaprabha and other worlds. However, due to the presence of *Ghanodadhi* (dense water) gross water-bodies (*baadar apkaaya*), gross air-bodies (*baadar vayukaaya*) and gross plant-bodies (*baadar vanaspatikaaya*) do exist there. In divine realms including Saudharma and Ishaan there are no gross earth-bodies because those areas are not conducive to evolution of these. However, as Saudharma and Ishan kalps rest on water, gross water-bodies, gross air-bodies and gross plant-bodies do exist there. In the same way due to the presence of *Tamaskaaya* in Sanatkumar and Maahendra *kalps*, there is existence of gross water-bodies and gross plant-bodies there. In *Tamaskaaya* and up to the fifth divine realm (*Dev Lok*) there is no existence of gross earth-bodies and gross fire-bodies. Remaining three do exist there. The same holds true up to the twelfth heaven (*Dev Lok*). Above the fifth heaven and in *krishna-rajis* there is absence of gross water-bodies, gross fire-bodies and gross plant-bodies; this is because only gross air-bodies can exist there. In brief — First and second heavens rest on dense water; third, fourth and fifth on dense air; sixth seventh

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and eighth on dense water and dense air; ninth to twelfth, the nine Graiveyaks and five Anuttar Vimaans, all rest on space. (Vritti, leaf 279)

जीवों के आयुष्य का बन्ध LIFE-SPAN BONDAGE OF LIVING BEINGS

२७. [प्र.] कतिविहे णं भंते ! आउयबंधे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! छव्विहे आउयबंधे पण्णत्ते, तं जहा—जातिनामनिहत्ताउए गतिनामनिहत्ताउए ठितिनामनिहत्ताउए ओगाहणानामनिहत्ताउए पदेसनामनिहत्ताउए अणुभागनामनिहत्ताउए।

२७. [प्र.] भगवन् ! आयुष्यबन्ध कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! आयुष्यबन्ध छह प्रकार का है। वह इस प्रकार है–(१) जातिनामनिधत्तायु, (२) गतिनामनिधत्तायु, (३) स्थितिनामनिधत्तायु, (४) अवगाहनामनिधत्तायु, (५) प्रदेशनामनिधत्तायु, और (६) अनुभागनामनिधत्तायु।

27. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is life-span bondage (*ayushya-bandh*) ?

[Ans.] Gautam ! Life-span bondage (*ayushya-bandh*) is of six kinds—(1) *Jati-naam-nidhatt-ayu* (race programmed life-span), (2) *Gati-naam-nidhatt-ayu* (genus programmed life-span), (3) *Sthiti-naam-nidhatt-ayu* (duration programmed life-span), (4) *Avagahana-naam-nidhatt-ayu* (space-occupation or form programmed life-span), (5) *Pradesh-naam-nidhatt-ayu* (space-point programmed life-span), and (6) *Anubhag-naam-nidhatt-ayu* (potency programmed life-span).

२८. एवं दंडओ जाव वेमाणियाणं।

२८. यावत् वैमानिकों तक दण्डक कहना चाहिए।

28. Repeat these for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimaniks*.

२९. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं जातिनामनिहत्ता, गतिनामनिहत्ता जाव अणुभागनामनिहत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जातिनामनिहत्ता वि जाव अणुभागनामनिहत्ता वि।

३०. दंडओ जाव वेमाणियाणं।

२९. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव जातिनामनिधत्त हैं? गतिनामनिधत्त हैं? यावत् अनुभागनामनिधत्त हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव जातिनामनिधत्त भी हैं, यावत् अनुभागनामनिधत्त भी हैं।

३०. यह दण्डक यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

29. [Q.] *Bhante* ! Have beings undergone (these kinds of *karma* programming)—*Jati-naam-nidhatt* (race programming), *Gati-naam-nidhatt* (genus programming)... and so on up to... *Anubhag-naam-nidhatt* (potency programming) ?

[Ans.] Gautam ! They have undergone *Jati-naam-nidhatt* (race programming)... and so on up to... *Anubhag-naam-nidhatt* (potency programming).

30. Repeat these for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimaniks*.

३१. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं जातिनामनिहित्ताउया जाव अणुभागनामनिहित्ताउया ?

[उ.] गोयमा ! जातिनामनिहित्ताउया वि जाव अणुभागनामनिहित्ताउया वि।

३२. दंडओ जाव वेमाणियाणं।

३१. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव जातिनामनिधत्तायुष्क हैं, यावत् अनुभागनामनिधत्तायुष्क हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव, जातिनामनिधत्तायुष्क भी हैं, यावत् अनुभागनामनिधत्तायुष्क भी हैं।

३२. यह दण्डक यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए।

31. [Q.] *Bhante* ! Are beings with bondage of *Jati-naam-nidhatt-ayushk* (race programmed life-span)... and so on up to... *Anubhag-naam-nidhatt-ayushk* (potency programmed life-span).

[Ans.] Gautam ! They are with bondage of *Jati-naam-nidhatt-ayushk* (race programmed life-span)... and so on up to... *Anubhag-naam-nidhatt-ayushk* (potency programmed life-span).

32. Repeat these for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimaniks*.

३३. [प्र.] एवमेए दुवालस दंडगा भाणियव्वा—जीवा णं भंते ! किं जातिनामनिहत्ता १, जातिनामनिहत्ताउया २, जीवा णं भंते ! किं जातिनामनिउत्ता ३, जातिनामनिउत्ताउया ४, जातिगोयनिहत्ता ५, जातिगोयनिहत्ताउया ६, जातिगोत्तनिउत्ता ७, जातिगोत्तनिउत्ताउया ८, जातिणामगोत्तनिहत्ता ९, जातिणामगोयनिहत्ताउया १०, जातिणामगोयनिउत्ता ११, जीवा णं भंते ! किं जातिनामगोत्तनिउत्ताउया जाव अणुभागनामगोत्तनिउत्ताउया १२ ?

[उ.] गोयमा ! जातिनामगोयनिउत्ताउया वि जाव अणुभागनामगोत्तनिउत्ताउया वि।

३४. दंडओ जाव वेमाणियाणं।

३३. [प्र.] इस प्रकार ये बारह दण्डक कहने चाहिए—भगवन् ! क्या जीव, १. जातिनामनिधत्त हैं ? २. जातिनामनिधत्तायु है ? ३. क्या जीव, जातिनामनियुक्त हैं ? ४. जातिनामनियुक्तायु हैं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. जातिगोत्रनिधत्त हैं ? ६. जातिगोत्रनिधत्तायु हैं ? ७. जातिगोत्रनियुक्त हैं ? ८. जातिगोत्रनियुक्तायु हैं ? ९. जातिनामगोत्रनिधत्त हैं ? १०. जातिनामगोत्रनिधत्तायु हैं ? भगवन् ! ११. जातिनामगोत्रनियुक्त हैं ? १२. क्या जातिनामगोत्रनियुक्तायु हैं ? यावत् अनुभागनामगोत्रनियुक्तायु हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव, जातिनामगोत्रनिधत्त भी हैं, यावत् अनुभागनामगोत्रनियुक्तायु भी हैं।

३४. यह दण्डक यावत् वैमानिकों तक कहना चाहिए।

33. [Q.] This way these twelve kinds (*dandaks*) should be stated—*Bhante* ! Are beings with—1. *Jati-naam-nidhatt* (race programming) ? 2. *Jati-naam-nidhatt-ayu* (race programmed life-span) ? 3. *Jati-naam-niyukt* (race programme activation) ? 4. *Jati-naam-niyukt-ayu* (race programme activated life-span) ? 5. *Jati-gotra-nidhatt* (race-status programming) ? 6. *Jati-gotra-nidhatt-ayu* (race-status programmed life-span) ? 7. *Jati-gotra-niyukt* (race-status programme activation) ? 8. *Jati-gotra-niyukt-ayu* (race-status programme activated life-span) ? 9. *Jati-naam-gotra-nidhatt* (race-form-status programming) ? 10. *Jati-naam-gotra-nidhatt-ayu* (race-form-status programmed life-span) ? 11. *Jati-naam-gotra-niyukt* (race-form-status programme activation) ? 12. Are they with *Jati-naam-gotra-niyukt-ayu* (race-form-status programme activated life-span) ?... and so on up to... *Anubhag-naam-gotra-niyukt-ayu* (potency-race-status programme activated life-span).

[Ans.] Gautam ! Beings are with *Jati-naam-gotra-niyukt-ayu* (race-status programme activated life-span) ?... and so on up to... Anubhag-naam-gotra-niyukt-ayu (potency-race-status programme activated life-span).

34. Repeat these for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimaniks*.

विवेचन : प्रस्तुत आठ सूत्रों (सूत्र २७ से ३४ तक) में जीवों के आयुष्यबन्ध के ६ प्रकार, तथा चौबीस ही दण्डक के जीवों में जातिनामनिधत्तादि बारह दण्डकों--आलापकों की प्ररूपणा की गई है।

षड्विध आयुष्यबन्ध की व्याख्या—आठ कर्मों में पाँचवाँ कर्म है आयुष्य ! इसके पुद्गलों से जीवनी शक्ति का निर्माण होता है। अगले जन्म के आयुष्य का बन्ध वर्तमान जीवन काल में ही हो जाता है। आयुष्य बन्ध के समय छह अन्य कर्मप्रकृतियों का भी बन्ध होता है। जैसे–(१) **जातिनामकर्म**–इससे अगले जन्म में एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक की जाति का निर्धारण होता है, (२) **गतिनामकर्म**–इससे नरकगति से देवगति तक चार गतियों का, (३) **स्थितिनामकर्म**–इससे जीवन की कालावधि का, (४) **अवगाहनानामकर्म**–इससे औदारिक–वैक्रिय आदि शरीर का, (५) **प्रदेशनामकर्म**–इससे आयुष्य कर्म के पुद्गलों का परिमाण, तथा (६) **अनुभागनामकर्म**–आयुष्य कर्म के पुद्गलों का विपाक निर्धारित होता है। जाति, गति नाम, के साथ ही इन छहों प्रकृतियों का बंध होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक जाति रूप कर्म-जाति नाम है। उसके साथ प्रतिसमय अनुभव में आने योग्य कर्मपुद्गलों की रचना को 'जातिनामनिधत्तायु' कहते हैं। इसी प्रकार गति आदि को समझना चाहिए।

निधत्त (निषिक्त)-कर्म के उदय में आने की एक स्वाभाविक व्यवस्था है। **निधत्त** (निषिक्त) सब कर्मपुद्गल एक साथ उदय में नहीं आते, किन्तु उनकी एक क्रमिक श्रेणी बन जाती है, विपाक में आने वाले पुद्गलों के निषेक (श्रेणी) बन जाते हैं। प्रतिसमय उदय में आने वाले कर्मपुद्गलों की विशिष्ट रचना होती है जिसे 'निषेक' कहा जाता है। विपाक की पूर्ववर्ती अवस्था में निषेक की द्रव्य राशि अधिक होती है, उत्तर अवस्था में वह कम होती जाती है। कर्म की स्थिति की समाप्ति के क्षण तक निषेक व्यवस्था सक्रिय रहती है।

नामकर्म से विशेषित १२ दण्डकों की व्याख्या-(१) **जातिनाम-निधत्त**-जिन जीवों ने जातिनाम निषिक्त (निश्चित बाँधा है) किया है वे जीव 'जातिनामनिधत्त' कहलाते हैं। (२) **जातिनामनिधत्तायु**-जिन जीवों ने जातिनाम के साथ आयुष्य को निधत्त किया है, उन्हें 'जातिनामनिधत्तायु' कहते हैं। (३) **जातिनामनियुक्त**-जिन जीवों ने जातिनाम को नियुक्त (सम्बन्ध-निकाचित) किया है अथवा वेदन प्रारम्भ किया है, वे। (४) **जातिनामनियुक्त-आयु**-जिन जीवों ने जातिनाम के साथ आयुष्य नियुक्त किया है अथवा उसका वेदन प्रारम्भ किया है। इसी प्रकार गतिनाम, स्थितिनाम, अवगाहनानाम, प्रदेशनाम और अनुभागनाम के सभी पदों का अर्थ भी जान लेना चाहिए। (५) **जातिगोत्रनिधत्त**-जिन जीवों ने एकेन्द्रियादिरूप जाति तथा गोत्र-एकेन्द्रियादि जाति के योग्य नीचगोत्रादि को निधत्त किया है। (६) **जातिगोत्रनिधत्तायु**-जिन जीवों ने जाति और गोत्र के साथ आयुष्य को निधत्त किया है। (७) **जातिगोत्रनियुक्त**-जिन जीवों ने जाति और गोत्र को नियुक्त किया है। (८) **जातिगोत्रनियुक्तायु**-जिन जीवों ने जाति और गोत्र के साथ आयुष्य को नियुक्त कर लिया है। (९) **जातिनाम-गोत्र-निधत्त**-जिन जीवों ने जाति, नाम और गोत्र को निधत्त किया है। इसी प्रकार दूसरे पदों का अर्थ भी जान लें। (१०) **जाति-नाम-गोत्रनिधत्तायु**-जिन जीवों ने जाति, नाम और गोत्र के साथ आयुष्य को निधत्त कर लिया है। (११) **जाति-नाम-गोत्र-नियुक्त**-जिन जीवों ने जाति, नाम और गोत्र को नियुक्त किया है। (१२) **जाति-नाम-गोत्र-नियुक्तायु**-जिन जीवों ने जाति, नाम और गोत्र के साथ आयुष्य को नियुक्त किया है। इसी तरह अन्य सभी पदों का अर्थ भी समझ लेना चाहिए। *(वृत्ति, पत्रांक २८०-२८१ एवं हिन्दी विवेचन, भा. २, पृ. १०५३ से १०५६ तक)*

Elaboration—These eight aphorisms (27-34) discuss six kinds of life-span bondage of beings and twelve statements about various levels of bondage including *Jati-naam-gotra-niyukt-ayu* (race-status programme activated life-span).

Six kinds of bondage—Of the eight *karmas* fifth is *Ayushya* or life-span determining *karma*. The particles of this *karma* impart the life force. The bondage of life-span of next birth is concluded during this birth. With this life-span bondage six other species of *karmas* (*karma prakritis*) are also bound. (1) **Jati-naam-karma**—this *karma* determines the race (one-sensed to five-sensed beings) during the next birth. (2) **Gati-naam-karma**—it determines the genus (infernal to divine) during the next birth. (3) **Sthiti-naam-karma**—it determines the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

duration of the karma or the life-span. (4) **Avagahana-naam-karma**—this determines space-occupation or form of the body (*Audarik, Vaikriya* etc.). (5) **Pradesh-naam-karma**—this determines the total number of space-points of the acquired *Ayushya karma*. (6) **Anubhag-naam-karma**—it determines the potency of fruition of *Ayushya karma*. Along with the *jati* and *gati naam* species all these six species of *karmas* are bound.

Jati-naam-karma is the *karma* that determines the race (one-sensed to five-sensed beings) during the next birth. While assimilating these *karmas* they are also programmed for fruition in bunches every passing moment. This process of programming is called *nidhatt* and the so programmed *karma* is called *Jati-naam-nidhatt-ayu* (race programmed life-span). This is also true for other aforesaid *karmas* including *gati*.

There is an inherent programming of activation or fruition of the so assimilated *karmas*. All the programmed *karmas* do not come to fruition at the same time. A series of *karmas* due for fruition is formed. This special arrangement of *karmas* to come to fruition every passing moment is called *nishek*. At the initial levels of fruition the density of the *nishek* is highest and it gradually reduces. This special arrangement of *nishek* continues till the duration of the *karmic* bondage.

The twelve statements about *naam-karma*—**1. Jati-naam-nidhatt**—The beings that have undergone race programming are called *Jati-naam-nidhatt*. **2. Jati-naam-nidhatt-ayu**—The beings that have undergone race programming along with life-span programming are called *Jati-naam-nidhatt-ayu*. **3. Jati-naam-niyukt**—The beings that have undergone race programme activation are called *Jati-naam-niyukt*. **4. Jati-naam-niyukt-ayu**—The beings that have undergone race and life-span programme activation are called *Jati-naam-niyukt-ayu*. The same pattern holds good for *Gati-naam*, *Sthiti-naam*, *Avagahana-naam*, *Pradesh-naam* and *Anubhag-naam*. **5. Jati-gotra-nidhatt**—The beings that have undergone race and status programming are called *Jati-gotra-nidhatt*. **6. Jati-gotra-nidhatt-ayu**—The beings that have undergone race-status programming along with life-span programming are called *Jati-gotra-nidhatt-ayu*. **7. Jati-gotra-niyukt**—The beings that have undergone race-status programme activation are called *Jati-gotra-niyukt*. **8. Jati-gotra-niyukt-ayu**—The beings that have undergone race-status and life-span programme activation are called *Jati-gotra-niyukt-ayu*. The same pattern holds good for other aforesaid bondages. **9. Jati-**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

naam-gotra-nidhatt—The beings that have undergone race-form-status programming are called *Jati-naam-gotra-nidhatt*. **10. Jati-naam-gotra-nidhatt-ayu**—The beings that have undergone race-form-status programming along with life-span programming are called *Jati-naam-gotra-nidhatt-ayu*. **11. Jati-naam-gotra-niyukt**—The beings that have undergone race-form-status programme activation are called *Jati-naam-gotra-niyukt*. **12. Jati-naam-gotra-niyukt-ayu**—The beings that have undergone race-form-status and life-span programme activation are called *Jati-naam-gotra-niyukt-ayu*. The same pattern holds good for other aforesaid bondages. (*Vritti*, leaves 280-281; Hindi Commentary, part 2, pp. 1053-1056)

असंख्यात-द्वीप-समुद्र INNUMERABLE ISLANDS AND SEAS

३५. [प्र.] लवणे णं भंते ! समुद्दे किं उस्सिओदए, पत्थडोदए, खुब्भियजले, अखुब्भियजले ?

[उ.] गोयमा ! लवणे णं समुद्दे उस्सिओदए, नो पत्थडोदए; खुब्भियजले, नो अखुब्भियजले। एत्तो आढत्तं जहा जीवाभिगमे जाव से तेण० गोयमा ! बाहिरिया णं दीव-समुद्दापुण्णा पुण्णप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडत्ताए चिट्ठंति, संठाणओ एगविहिविहाणा, वित्थरओ अणेगविहिविहाणा, दुगुणा दुगुणप्पमाणाओ जाव अस्सिं तिरियलोए असंखेज्जा दीव-समुद्दा सयंभूरमणपज्जवसाणा पण्णत्ता समणाउसो !

३५. [प्र.] भगवन् ! क्या लवणसमुद्र, उच्छ्रितोदक (उछलते हुए जल वाला) है, प्रस्तृतोदक (सम जल वाला) है, क्षुब्ध जल वाला है अथवा अक्षुब्ध जल वाला है ?

[उ.] गौतम ! लवणसमुद्र उच्छ्रितोदक है, किन्तु प्रस्तृतोदक नहीं है; वह क्षुब्ध जल वाला है, किन्तु अक्षुब्ध जल वाला नहीं है। यहाँ से प्रारम्भ करके जिस प्रकार जीवाभिगम सूत्र (तृतीय प्रतिपत्ति) में कहा है, इसी प्रकार से जान लेना चाहिए; यावत् इस कारण, हे गौतम ! (अढाई द्वीप से) बाहर के (द्वीप-) समुद्र पूर्ण, पूर्ण प्रमाण वाले (अक्षुब्ध एवं सम जल वाले), छलाछल भरे हुए, छलकते हुए और समभर घट के रूप में, (अर्थात् परिपूर्ण भरे हुए घड़े के समान) तथा संस्थान से एक ही तरह के स्वरूप वाले, किन्तु विस्तार की अपेक्षा अनेक प्रकार के स्वरूप वाले हैं; द्विगुण-द्विगुण विस्तार वाले हैं; (अर्थात् अपने पूर्ववर्ती द्वीप से दुगुने प्रमाण वाले हैं) यावत् इस तिर्यक्लोक में असंख्येय द्वीप-समुद्र हैं। सबसे अन्त में 'स्वयम्भूरमण-समुद्र' है। हे श्रमणायुष्मन् ! इस प्रकार द्वीप और समुद्र कहे गये हैं।

35. [Q.] *Bhante* ! Does Lavan Samudra (Salt Sea) have surging water (*uchchhritodak*), level water (*prastritodak*), turbulent water or calm water ?

[Ans.] Gautam ! Lavan Samudra (Salt Sea) has surging water (*uchchhritodak*) and not level water (*prastritodak*); it has turbulent

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

water and not calm water. Starting from this point read *Jivabhigam Sutra* (third chapter)... and so on up to... For this reason, Gautam, the outer seas (beyond Adhai Dveep) are full, filled to capacity (with level and serene waters) filled to the brim, splashing like a filled pitcher. They are similar in shape but different in size or double the preceding one in size... and so on up to... In this transverse world there are innumerable such islands and seas, the last one being Svayambhuraman sea. O long lived one ! This is what is said about islands and seas.

विवेचन : असंख्यात द्वीप समुद्र–मध्यलोक में असंख्य द्वीप तथा असंख्य समुद्र हैं। उनमें प्रथम लवण–समुद्र है और सबसे अन्त में स्वयंभूरमण–समुद्र है। लवण–समुद्र में जल–स्तर ऊपर उछलता है और उसका जल क्षुब्ध रहता है। उसमें ज्वार–भाटा आता रहता है। उसमें वर्षा होती रहती है। समय–क्षेत्र के बाह्यवर्ती समुद्रों का जल–स्तर सम रहता है। उनमें वर्षा नहीं होती तथा ज्वार–भाटा नहीं आता। उनमें उदक योनिक जीव और पुद्गल उदक रूप में उत्पन्न होते रहते हैं, विनष्ट होते रहते हैं।

Elaboration—In the middle or transverse world there are innumerable islands and seas. First of these is Lavan Samudra and the last one is Svayambhuraman sea. The waters in the Lavan Samudra are surging and turbulent. It has ebb and tide as well as rains. The seas beyond the area of time (Adhai Dveep), where humans live, have level and serene water. There are neither rains nor ebb and tide. In these seas water bodies and matter particles continue to be created and destroyed.

द्वीप समुद्रों के शुभ नाम NAMES OF ISLANDS AND SEAS

३६. [प्र.] दीव–समुद्दा णं भंते ! केवइया नामधेज्जेहिं पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! जावइया लोए सुभा नामा, सुभा रूवा, सुभा गंधा, सुभा रसा, सुभा फासा एवइयाणं दीव–समुद्दा नामधेज्जेहिं पण्णत्ता। एवं नेयव्वा सुभा नामा, उद्धारो परिणामो सव्वजीवाणं।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ छट्ठे सए : अट्ठमो उद्देसओ समत्तो ॥

३६. [प्र.] भगवन् ! द्वीप-समुद्रों के कितने नाम हैं ?

[उ.] गौतम ! इस लोक में जितने भी शुभ नाम हैं, शुभ रूप, शुभ रस, शुभ गन्ध और शुभ स्पर्श हैं, उतने ही नाम द्वीप–समुद्रों के हैं। इस प्रकार सब द्वीप–समुद्र शुभ नाम वाले जानने चाहिए। तथा उद्धार, परिणाम और सर्व जीवों का (द्वीपों एवं समुद्रों में) उत्पाद जानना चाहिए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर यावत् श्री गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

36. [Q.] *Bhante* ! How many are the names of islands and seas ?

[Ans.] Gautam ! Islands and seas have as many names as are all noble names, noble forms, noble tastes, noble smells and noble touches in this universe (*Lok*). This way all island-seas have noble names. The numbers, attributes and evolutionary activities of these should be stated.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so. "With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : द्वीप-समुद्रों के शुभ नाम-ये समुद्र बहुत-से उत्पल, पद्म, कुमुद, नलिन, सुन्दर एवं सुगन्धित पुण्डरीक-महापुण्डरीक, शतपत्र, सहस्रपत्र, केशर एवं विकसित पद्मों आदि से युक्त हैं। स्वस्तिक, श्रीवत्स आदि सुशब्द, पीतादि सुन्दर रूपवाचक शब्द, कपूर आदि सुगन्धवाचक शब्द, मधुररसवाचक शब्द तथा नवनीत आदि मृदुस्पर्शवाचक शब्द जितने भी इस लोक में हैं, उतने ही शुभ नामों वाले द्वीप-समुद्र हैं।

ये द्वीप-समुद्र उद्धार, परिणाम और उत्पाद वाले-ढाई सूक्ष्म उद्धार सागरोपम या २५ क्रोड़ा-क्रोड़ी सूक्ष्म उद्धार पल्योपम में जितने समय होते हैं, उतने लोक में द्वीप-समुद्र हैं, ये द्वीप-समुद्र पृथ्वी, जल, जीव और पुद्गलों के परिणाम वाले हैं, इनमें जीव पृथ्वीकायिक से यावत् त्रसकायिक रूप में अनेक या अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चुके हैं। *(जीवाभिगम. सवृत्तिक पत्र ३७२-३७३)*

॥ छठा शतक : अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Names—These seas are filled with a variety of blooming lotuses including—*Utpal*, *Padma*, *Kumud*, *Nalin*, beautiful and fragrant *Pundarik-Mahapundarik* with hundred and thousand petals as well as pollen. There are island-seas with all the noble names including good sounding names like *Swastika*, *Shrivatsa*; names depicting good colour like yellow; names depicting good smell like camphor; names depicting good taste like sweet; and names depicting good touch like butter.

The number of island-seas in this universe is equal to the number of *Samayas* in two and a half *Sukshma Uddhar Palyopam* or 25 *Kotakoti Sukshma Uddhar Palyopam*. These have attributes of earth, water, living beings and matter. Many beings have taken birth many or infinite times in these island-seas in the form of earth-bodied to mobile beings. (*Jivabhigam Sutra with Vritti*, leaves 372-373)

● END OF THE EIGHTH LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : नवम उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : NINTH LESSON

कर्म KARMA

कर्मबन्ध के प्रकार TYPES OF KARMIC BONDAGE

१. [प्र.] जीवे णं भंते ! णाणावरणिज्जं कम्मं बंधमाणे कइ कम्मप्पगडीओ बंधइ ?

[उ.] गोयमा ! सत्तविहबंधए वा, अट्ठविहबंधए वा, छव्विहबंधए वा। बंधुद्देसो पण्णवणाए नेयव्वो।

१. [प्र.] भगवन् ! ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधता हुआ जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों को बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! सात प्रकृतियों को बाँधता है, आठ प्रकार को बाँधता है अथवा छह प्रकृतियों को बाँधता है। यहाँ प्रज्ञापनासूत्र का बन्ध-उद्देशक कहना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! While acquiring bondage of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*), how many species of *karma* (*karma-prakriti*) does a being (*jiva*) acquire ?

[Ans.] Gautam ! He acquires bondage of seven species, eight species or six species. Here the lesson titled Bandh from *Prajnapana Sutra* should be quoted.

विवेचन : प्रज्ञापना सूत्रानुसार स्पष्टीकरण—जिस समय जीव का आयुष्यबन्धकाल नहीं होता, उस समय वह ज्ञानावरणीय कर्म को बाँधते समय आयुष्यकर्म को छोड़कर सात कर्मों को बाँधता है, आयुष्य के बन्धकाल में आठ कर्मप्रकृतियों को बाँधता है, किन्तु सूक्ष्मसम्पराय गुणस्थान की अवस्था में मोहनीय कर्म और आयुकर्म को नहीं बाँधता, इसलिए वहाँ ज्ञानावरणीय कर्म बाँधता हुआ जीव छह कर्मप्रकृतियों को बाँधता है। *(प्रज्ञापना पद २४, बन्धोद्देशक)*

Elaboration—Explanation according to Prajnapana Sutra—While acquiring bondage of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*), if it is not the proper time for acquiring bondage of *ayushya karma* (life-span determining *karma*) a living being binds seven out of the total eight species of *karma*. If the time is ripe for acquiring *ayushya karma*, he binds all the eight species. However, if he is at the level of *Sukshma Samparaya Gunasthan* he does not bind *Mohaniya karma* (deluding *karma*) and *Ayushya karma*; therefore at that level he binds only six species while acquiring bondage of *Jnanavaraniya karma* (knowledge obscuring *karma*). *(Prajnapana Sutra, Bandhoddeshak, verse 24)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महर्द्धिक देवों की विकुर्वणा SELF-MUTATION BY GODS WITH GREAT OPULENCE

२. [प्र.] देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव महाणुभागे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू एगवण्णं एगरूवं विउव्वित्तए ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठेसमट्ठे।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महानुभाग देव बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना एक वर्ण वाले और एक रूप (एक आकार वाले) (स्वशरीरादि) की विकुर्वणा करने में समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

2. [Q.] *Bhante* ! Is a god with great opulence... and so on up to... great influence capable of self-mutation (*vikurvana*) into a body of single colour and single form without acquiring external matter ?

[Ans.] Gautam ! This is not possible.

३. [प्र.] देवे णं भंते ! बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू ?

[उ.] हंता, पभू।

३. [प्र.] भगवन् ! क्या वह देव बाहर के पुद्गलों को ग्रहण करके (उपर्युक्त रूप से) विकुर्वणा करने में समर्थ है ?

[उ.] हाँ गौतम ! हाँ, (वह ऐसा करने में) समर्थ है।

3. [Q.] *Bhante* ! Is a he capable of the said self-mutation (*vikurvana*) by acquiring external matter ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He is capable of doing that.

४. [प्र.] से णं भंते ! किं इहगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वति, तत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वति, अन्नत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वति ?

[उ.] गोयमा ! नो इहगते पोग्गले परियाइत्ता विउव्वति, तत्थगते पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वति, नो अन्नत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वति।

४. [प्र.] भगवन् ! क्या वह देव इहगत (यहाँ मनुष्यलोक या पार्श्ववर्ती क्षेत्र में रहे हुए) पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है अथवा तत्रगत (वहाँ–देवलोक में देव के पार्श्ववर्ती क्षेत्र रहे हुए) पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है या अन्यत्रगत (किसी अन्य स्थान में रहे हुए) पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है ?

[उ.] गौतम ! वह देव, यहाँ रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा नहीं करता, वह वहाँ (देवलोक में रहे हुए तथा जहाँ विकुर्वणा करता है वहाँ) के पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है, किन्तु अन्यत्र रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा नहीं करता।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. [Q.] *Bhante* ! Does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from here (the world of humans or adjoining areas) ? Does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from there (the divine realm or adjoining areas) ? Or does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from elsewhere (some area other then the said two areas) ?

[Ans.] Gautam ! He does not perform the said self-mutation by acquiring matter particles from here. He performs the said self-mutation by acquiring matter particles from there (the divine realm or the place where he is performing the act). He also does not perform the said self-mutation by acquiring matter particles from elsewhere.

५. एवं एएणं गमेणं जाव एगवण्णं एगरूवं, एगवण्णं अणेगरूवं, अणेगवण्णं एगरूवं, अणेगवण्णं अणेगरूवं, चउण्हं चउभंगो।

५. इस प्रकार इस गम (आलापक) द्वारा विकुर्वणा के चार भंग कहने चाहिए–(१) एक वर्ण वाला, एक आकार (रूप) वाला, (२) एक वर्ण वाला, अनेक आकार वाला, (३) अनेक वर्ण वाला और एक आकार वाला, तथा (४) अनेक वर्ण वाला और अनेक आकार वाला। (अर्थात् वह इन चारों प्रकार के रूपों को विकुर्वित करने में समर्थ है।)

5. In the same way four **alternatives** of self-mutation described in the aforesaid **statement should be stated**—(1) of single colour and single form (or shape), (2) of single colour and many forms (or shapes), (3) of many colours and single form (or shape), and (4) of many colours and many forms (or shapes).

६. [प्र.] देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव महाणुभागे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू कालगं पोग्गलं नीलगपोग्गलत्ताए परिणामित्तए ? नीलगं पोग्गलं वा कालगपोग्गलत्ताए परिणामित्ताए ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे, परियाइत्ता पभू।

६. [प्र.] भगवन् ! क्या महर्द्धिक यावत् महानुभाग देव, बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना काले पुद्गल को नीले पुद्गल के रूप में और नीले पुद्गल को काले पुद्गल के रूप में परिणत करने में समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है; किन्तु बाहरी पुद्गलों को ग्रहण करके देव वैसा करने में समर्थ है।

6. [Q.] *Bhante* ! Is a god with great opulence... and so on up to... great influence capable of transforming black matter into blue matter and blue matter into black matter without acquiring external matter particles ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! This is not possible. However, he is capable of doing that by acquiring external matter particles.

७. [प्र.] से णं भंते ! किं इहगए पोग्गले० ?

[उ.] तं चेव, नवरं परिणामेति त्ति भाणियव्वं।

८. [१] एवं कालगपोग्गलं लोहियपोग्गलत्ताए। [२] एवं कालएणं जाव सुक्किलं।

९. एवं णीलएणं जाव सुक्किलं।

१०. एवं लोहिएणं जाव सुक्किलं।

११. एवं हालिद्दएणं जाव सुक्किलं।

७. [प्र.] भगवन् ! वह देव इहगत, तत्रगत या अन्यत्रगत पुद्गलों (में से किन) को ग्रहण करके वैसा करने में समर्थ है ?

[उ.] गौतम ! वह इहगत और अन्यत्रगत पुद्गलों को ग्रहण करके वैसा नहीं कर सकता, किन्तु तत्र (देवलोक–) गत पुद्गलों को ग्रहण करके वैसा परिणत करने में समर्थ है। (विशेष यह है कि यहाँ 'विकुर्वित करने में' के बदले 'परिणत करने में' कहना चाहिए।)

८. [१] इसी प्रकार काले पुद्गल को लाल पुद्गल के रूप में (परिणत करने में) समर्थ है। [२] इसी प्रकार काले पुद्गल के साथ यावत् शुक्ल पुद्गल तक समझना।

९. इसी प्रकार नीले पुद्गल के साथ यावत् शुक्ल पुद्गल तक जानना।

१०. इसी प्रकार लाल पुद्गल को यावत् शुक्ल तक।

११. इसी प्रकार पीले पुद्गल को यावत् शुक्ल तक (परिणत करने में) समर्थ है।

7. [Q.] *Bhante* ! By acquiring matter particles from which place—existing here (*ihagat*), there (*tatragat*) or elsewhere (*anyatragat*)—is he capable of doing so ?

[Ans.] Gautam ! He cannot do so by acquiring matter particles existing here (*ihagat*) and elsewhere (*anyatragat*) but is capable of doing so by acquiring matter particles existing there (*tatragat*). (instead of self-mutation transforming should be stated here).

8. [1] In the same way he is capable of transforming black matter into red matter. [2] In the same way he is capable of transforming black matter into matter with colours up to white.

9. The same should be repeated for blue matter... and so on up to... white matter.

10. The same should be repeated for red matter... and so on up to... white matter.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. The same should be repeated for yellow matter... and so on up to... white matter.

१२. एवं एताए परिवाडीए गंध-रस-फास० कक्खडफासपोग्गलं मउयफासपोग्गलत्ताए।

एवं दो दो गरुय-लहुय २, सीय-उसिण २, णिद्ध-लुक्ख २, वण्णाइ सव्वत्थ परिणामेइ। आलावगा य दो दो-पोग्गले अपरियाइत्ता, परियाइत्ता।

१२. इसी प्रकार इस क्रम (परिपाटी) के अनुसार गन्ध, रस और स्पर्श के विषय में भी समझना चाहिए। यथा-(यावत्) कर्कश स्पर्श वाले पुद्गल को मृदु (कोमल) स्पर्श वाले (पुद्गल में परिणत करने में समर्थ है।)

इसी प्रकार दो-दो विरुद्ध गुणों को अर्थात् गुरु और लघु, शीत और उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष, वर्ण आदि को वह सर्वत्र परिणमाता है। 'परिणमाता है' इस क्रिया के साथ यहाँ इस प्रकार दो-दो आलापक कहने चाहिए; यथा-(१) पुद्गलों को ग्रहण करके परिणमाता है, (२) पुद्गलों को ग्रहण किये बिना नहीं परिणमाता।

12. The same pattern is applicable to matter with properties of smell, taste and touch in this order... and so on up to... capable of transforming matter with hard touch into matter with soft touch.

In the same way he is capable of transforming matter with pairs of opposite qualities—heavy-light, cold-hot, smooth-rough, etc. (one into the other). With this act of transformation two statements should be added—(1) transforms by acquiring matter particles, and (2) does not transform without acquiring matter particles.

विवेचन : सूत्र २ से १२ तक का निष्कर्ष—महर्द्धिक यावत् महाप्रभावशाली देव देवलोक में रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके उत्तरवैक्रियरूप बना सकता (विकुर्वणा करता) है और फिर दूसरे स्थान में जाता है, किन्तु इहगत अर्थात् प्रश्नकार के समीपस्थ क्षेत्र में रहे हुए पुद्गलों को तथा अन्यत्रगत-प्रज्ञापक के क्षेत्र और देव के स्थान से भिन्न क्षेत्र में रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा नहीं कर सकता।

उक्त सूत्रानुसार पाँच वर्ण के १०, दो गंध का एक, पाँच रस के १० तथा आठ स्पर्श के चार विकल्प करने पर कुल २५ भंग (विकल्प) होते हैं। *(विस्तार के लिए देखें, भगवती सूत्र भाग २ पृ. ९५ आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर)*

Elaboration—A god with great opulence... and so on up to... great influence is capable of self-mutation (vikurvana) into a secondary transmutated body by acquiring matter particles from the divine realm. He then goes to other places. But he is not capable of performing self-mutation by acquiring matter particles from here (place where the question has been raised) or elsewhere (other than his own divine realm).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

According to the aforesaid aphorism there are 25 alternatives—10 for five colours, 1 for two tastes, 10 for five tastes, and 4 for eight touches. *(for more details refer to Bhagavati Sutra, part 2, p. 95; Agam Prakashan Samiti, Beawar)*

देवों की जानने-देखने की क्षमता CAPACITY OF GODS TO SEE AND KNOW

१३. [प्र. १] अविसुद्धलेसे णं भंते ! देवे असमोहएणं अप्पाणेणं अविसुद्धलेसं देवं देविं अन्नयरं जाणति पासति ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे १।

१३. [प्र. १] भगवन् ! क्या अविशुद्ध लेश्या वाला देव असमवहत-(उपयोगरहित) आत्मा से अविशुद्ध लेश्या वाले देव को या देवी को या अन्यतर को (-इन दोनों में से किसी एक को) जानता और देखता है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

13. [Q. 1] *Bhante* ! Does a god with impure *leshya* (complexion of soul) and a soul devoid of application (*asamvahat* or *upayogarahit*) know and see a god and a goddess or either of them with impure *leshya* ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible.

[२] एवं अविसुद्धलेसेदेवे असमोहएणं अप्पाणेणं विसुद्धलेसं देवं० ? २ अविसुद्धलेसेदेवे समोहएणं अप्पाणेणं अविसुद्धलेसं देवं० ? ३। अविसुद्धलेसे देवे समोहएणं अप्पाणेणं विसुद्धलेसं देवं० ? ४। अविसुद्धलेसेदेवे समोहयासमोहएणं अप्पाणेणं अविसुद्धलेसं देवं० ? ५। अविसुद्धलेसेदेवे समोहयासमोहएणंअप्पाणेणं विसुद्धलेसं देवं० ? ६। विसुद्धलेसेदेवे असमोहएणं अप्पाणेणं अविसुद्धलेसं देवं० ७। विसुद्धलेसेदेवे असमोहएणं विसुद्धलेसं देवं० ८।

[प्र. ९] विसुद्धलेसे णं भंते ! देवे समोहएणं० अविसुद्धलेसं देवं० जाणइ० ?

[उ.] हंता, जाणइ०।

[प्र. १०] एवं विसुद्धलेसेदेवे समोहएणं० विसुद्धलेसं देवं० जाणइ० ?

[उ.] हंता, जाणइ०।

[प्र. ११] विसुद्धलेसेदेवे समोहयासमोहएणं अप्पाणेणं अविसुद्धलेसं देवं जाणइ २ ?

[उ.] हंता जाणइ०।

[प्र. १२] विसुद्धलेसेदेवे समोहयासमोहएणं अप्पाणेणं विसुद्धलेसं देवं० ?

[उ.] हंता, जाणइ०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं हेट्ठिल्लएहिं अट्ठहिं न जाणइ न पासइ, उवरिल्लएहिं चउहिं जाणइ पासइ।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ छट्ठ सए : नवमो उद्देसो समत्तो ॥

[२] (२) इसी तरह अविशुद्ध लेश्या वाला देव अनुपयुक्त (असमवहत) आत्मा से, विशुद्ध लेश्या वाले देव को, देवी को या अन्यतर को जानता और देखता है ? (३) अविशुद्ध लेश्या वाला देव उपयुक्त आत्मा से अविशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ? (४) अविशुद्ध लेश्या वाला देव उपयुक्त आत्मा से विशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ? (५) अविशुद्ध लेश्या वाला देव उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा से अविशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ? (६) अविशुद्ध लेश्या वाला देव, उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा से विशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ? (उक्त छह विकल्पों वाले देव मिथ्यात्वी होने से विभंग ज्ञानी होते हैं।) (७) विशुद्ध लेश्या वाले देव, अनुपयुक्त आत्मा द्वारा, अविशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ? (८) विशुद्ध लेश्या वाला देव, अनुपयुक्त आत्मा द्वारा, विशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ? [आठों प्रश्नों का उत्तर] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। (अर्थात् नहीं जानता-देखता।)

[प्र. ९] भगवन् ! विशुद्ध लेश्या वाला देव क्या उपयुक्त आत्मा से अविशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ?

[उ.] हाँ गौतम ! ऐसा देव जानता और देखता है।

[प्र. १०] इसी प्रकार क्या विशुद्ध लेश्या वाला देव, उपयुक्त आत्मा से विशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ?

[उ.] हाँ गौतम ! वह जानता-देखता है।

[प्र. ११] विशुद्ध लेश्या वाला देव, उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा से, अविशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ?

[उ.] हाँ गौतम ! वह जानता और देखता है।

[प्र. १२] विशुद्ध लेश्या वाला देव, उपयुक्तानुपयुक्त आत्मा से, विशुद्ध लेश्या वाले देव, देवी या अन्यतर को जानता-देखता है ?

[उ.] किन्तु पीछे (ऊपर के) जो चार भंग कहे गये हैं, उन चार भंगों वाले देव, जानते और देखते हैं।

यों पहले (निचले) जो आठ भंग कहे गये हैं, उन आठ भंगों वाले देव नहीं जानते-देखते।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यों कहकर श्री गौतम स्वामी ... यावत् विचरण करने लगे। (इन चार विकल्पों वाले देव सम्यग् दृष्टि होने के कारण जानते-देखते हैं।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Also, the same answer applies to the following questions—[2] Does a god with impure *leshya* and a soul devoid of application (*asamvahat atma*) know and see a god and a goddess or either of them with pure *leshya* ? [3] Does a god with impure *leshya* and a soul capable of application (*samvahat atma*) know and see a god and a goddess or either of them with impure *leshya* ? [4] Does a god with impure *leshya* (soul-complexion) and a soul capable of application (*samvahat atma*) know and see a god and a goddess or either of them with pure *leshya* ? [5] Does a god with impure *leshya* and a soul capable and incapable of application (*samvahat-asamvahat atma*) know and see a god and a goddess or either of them with impure *leshya* ? [6] Does a god with impure *leshya* and a soul capable and incapable of application (*samvahat-asamvahat atma*) know and see a god and a goddess or either of them with pure *leshya* ? [7] Does a god with pure *leshya* (soul-complexion) and a soul incapable of application (*asamvahat atma*) know and see a god and a goddess or either of them with impure *leshya* ? [8] Does a god with pure *leshya* and a soul incapable of application (*asamvahat atma*) know and see a god and a goddess or either of them with pure *leshya* ?

[Q. 9] *Bhante* ! Does a god with pure *leshya* and a soul capable of application (*samvahat* or *upayogasahit*) know and see a god and a goddess or either of them with impure *leshya* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He knows and sees.

[Q. 10] In the same way does a god with pure *leshya* and a soul capable of application (*samvahat* or *upayogasahit*) know and see a god and a goddess or either of them with pure *leshya* (soul-complexion) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He knows and sees.

[Q. 11] Does a god with pure *leshya* and a soul capable and incapable of application (*samvahat-asamvahat*) know and see a god and a goddess or either of them with impure *leshya* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He knows and sees.

[Q. 12] Does a god with pure *leshya* and a soul capable and incapable of application (*samvahat-asamvahat*) know and see a god and a goddess or either of them with pure *leshya* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He knows and sees.

Thus the first eight types of gods do not know and see but the last four types of gods do know and see.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विशेषार्थ : अविशुद्ध लेश्या–कृष्ण, नील, कापोत लेश्या वाला देव। वह मिथ्यात्वी होने से विभंगज्ञानी होता है। **समवहत**–उपभोग सहित आत्मा। *(वृत्ति : पत्रांक २८४)*

॥ छठा शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Avishuddha leshya—impure *leshya*—black, blue and gray (*kapot*) *leshyas*. Being unrighteous (*mithyatvi*), the gods with these *leshyas* are with pervert knowledge (*vibhang jnana*). **Samvahat**—with *upayoga* or application (a soul with an inclination to know and see).

● **END OF THE NINTH LESSON OF THE SIXTH CHAPTER** ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छठा शतक : दशम उद्देशक
SIXTH SHATAK (Chapter Six) : TENTH LESSON

अन्यतीर्थी ANYATIRTHI (HERETICS)

सुख-दुःख का प्रदर्शन सम्भव नहीं DISPLAY OF PLEASURE AND PAIN

१. [प्र. १] अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवेंति–जावइया रायगिहे नयरे जीवा एवइयाणं जीवाणं नो चक्किया केइ सुहं वा दुहं वा जाव कोलट्ठिगमायमवि निप्फावमायमवि कलममायमवि मासमायमवि मुग्गमायमवि जूयामायमवि लिक्खामायमवि अभिनिवट्टेत्ता उवदंसित्तए, से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि, सव्वलोए वि य णं सव्वजीवाणं णो चक्किया केइ सुहं वा तं चेव जाव उवदंसित्तए।

१. [प्र. १] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि–'राजगृह नगर में जितने जीव हैं, उन सबके दुःख या सुख को कोलास्थिक (बेर की गुठली) जितना भी, बाल– (निष्पाव नामक धान्य) जितना भी, कलाय (ग्वार के दाने या काली दाल अथवा मटर या चावल) जितना भी, उड़द के जितना भी, मूँग-प्रमाण, यूका (जूं) प्रमाण, लिक्षा (लीख) प्रमाण भी बाहर निकालकर नहीं दिखा सकता। भगवन् ! यह बात यों कैसे हो सकती है ?

[उ.] गौतम ! जो अन्यतीर्थिक उपर्युक्त प्रकार से कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं, वे मिथ्या कहते हैं। हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि (केवल राजगृह नगर में ही नहीं) सम्पूर्ण लोक में रहे हुए सर्व जीवों के सुख या दुःख को कोई भी पुरुष उपर्युक्तरूप से यावत् किसी भी प्रमाण में बाहर निकालकर नहीं दिखा सकता।

1. [Q. 1] *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that—It is not possible to bring out and display (physically) the misery and happiness of all the living beings in Rajagriha city even to the extant matching the size of a berry seed (*Kolasthik*), grain of *Baal* (a type of corn), pea, rice, *Udad* (a pulse), *Moong* (green gram), a louse (*joon*), or even a nit (*leekh*). *Bhante* ! How is it so ?

[Ans.] Gautam ! What the heretics say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) is not true. Gautam ! I say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that it is not possible for any person to bring out and display (physically) the misery and happiness of all the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

living beings in the whole universe (what to say of Rajagriha city) to any extant as aforesaid.

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! अयं णं जंबुद्दीवे दीवे जाव–विसेसाहिए परिक्खेवेणं पन्नत्ते। देवे णं महिड्ढीए जाव महाणुभागे एगं महं सविलेवणं गंधसमुग्गगं गहाय तं अवहालेति, तं अवहालित्ता जाव इणामेव कट्टु केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं तिहिं अच्छरानिवाएहिं तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्टित्ताणं हव्वमागच्छेज्जा, से नूणं गोयमा ! से केवलकप्पे जंबुद्दीवे दीवे तेहिं घाणपोग्गलेहिं फुडे ?

हंता, फुडे, चक्किया णं गोयमा ! केइ तेसिं घाणपोग्गलाणं कोलट्ठियमायमवि जाव उवदंसित्तए ? णो इणट्ठे समट्ठे। से तेणट्ठेणं जाव उवदंसेत्तए।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! यह जम्बूद्वीप नाम द्वीप एक लाख योजन का लम्बा-चौड़ा है। इसकी परिधि ३ लाख १६ हजार २२७ योजन १२८ धनुष, १३ $\frac{1}{2}$ अंगुल से कुछ अधिक है। कोई महर्द्धिक यावत् महानुभाग देव एक बड़े विलेपन वाले (सुगंधित चूर्ण) गन्धद्रव्य के डिब्बे को लेकर उघाड़े और उघाड़ कर तीन चुटकी बजाए (लगभग एक सेकंड) उतने समय में उपर्युक्त जम्बूद्वीप की ११ बार परिक्रमा करके वापस शीघ्र आए तो हे गौतम ! (मैं तुमसे पूछता हूँ–) उस देव की इस प्रकार की शीघ्र गति से गन्ध पुद्गलों के स्पर्श से यह सम्पूर्ण जम्बूद्वीप स्पृष्ट हुआ या नहीं ?

(गौतम–) हाँ भगवन् ! वह स्पृष्ट हो गया। (भगवान–) गौतम ! कोई पुरुष उन गन्धपुद्गलों को बेर की गुठली जितना भी, यावत् लिक्षा जितना भी दिखलाने में समर्थ है ? (गौतम–) भगवन् ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। (भगवन्–) हे गौतम ! इसी प्रकार जीव के सुख-दुःख को भी बाहर निकालकर बतलाने में, यावत् कोई भी व्यक्ति समर्थ नहीं है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! The length and breadth of this Jambudveep is one hundred thousand *Yojans*. Its circumference is slightly more than three hundred sixteen thousand two hundred twenty seven (3,16,227) *Yojans*, three *Kos* (a linear measure equal to 2 miles), twenty eight *Dhanush* (a linear measure equivalent to four cubits), and thirteen and a half *Angul* (a linear measurement equal to the width of a finger). Suppose a god with great opulence... and so on up to... great influence takes a box of fragrant paste, removes its cover and carrying it goes around this Jambudveep 11 times and returns within the time taken in snapping his fingers thrice. (Now, I ask you—) Gautam ! Due to this speedy movement of that god, did the smell particles of the fragrant paste touch the whole Jambudveep or not ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(Gautam) Yes, *Bhante* ! It is so touched. (*Bhagavan*) Gautam ! Is it possible for some person to bring out and display (physically) those smell particles to the extant matching the size of a berry seed (*Kolasthik*)... and so on up to... a nit (*leekh*) ? (Gautam) *Bhante* ! That is not possible. (*Bhagavan*) Gautam ! In the same way it is not possible for any person to bring out and display (physically) the misery and happiness of living beings.

सार : सुख-दुःख मानसिक संवदेन है, उन्हें पौद्गलिक पदार्थ के समान आकार देकर प्रदर्शित नहीं किया जा सकता। यद्यपि उनको प्रत्यक्ष दर्शन, अनुमान और सूक्ष्म छायांक (फोटोग्राफी) द्वारा जाना जा सकता है, किन्तु आकार में नहीं बताया जा सकता।

Gist—Happiness and sorrow are feelings or psychological activities. It is not possible to display them in some physical form like matter. They can be assessed through direct perception, hypothetically or through micro-photography (or some other advanced technology) but cannot be physically shown.

जीव और प्राण का स्वरूप SOUL AND LIFE-FORCE

२. [प्र.] जीवे णं भंते ! जीवे ? जीवे जीवे ?

[उ.] गोयमा ! जीवे ताव नियमा जीवे, जीवे वि नियमा जीवे।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव चैतन्य है या चैतन्य जीव है ?

[उ.] गौतम ! जीव तो नियमतः (निश्चितरूप से) जीव (चैतन्य स्वरूप है) और जीव (चैतन्य) भी निश्चितरूप से जीवरूप है।

2. [Q.] *Bhante* ! Is soul (*jiva*) sentience (*jiva*) or is sentience soul ?

[Ans.] Gautam ! As a rule soul (*jiva*) is sentience (*jiva*) and also sentience is soul.

३. [प्र.] जीवे णं भंते ! नेरइए ? नेरइए जीवे ?

[उ.] गोयमा ! नेरइए ताव नियमा जीवे, जीवे पुण सिय नेरइए, सिय अनेरइए।

४. [प्र.] जीवे णं भंते ! असुरकुमारे ? असुरकुमारे जीवे ?

[उ.] गोयमा ! असुरकुमारे ताव नियमा जीवे, जीवे पुण सिय असुरकुमारे, सिय णो असुरकुमारे।

५. एवं दंडओ णेयव्वो जाव वेमाणियाणं।

३. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव नैरयिक है या नैरयिक जीव है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक तो नियमतः जीव है और जीव तो कदाचित् नैरयिक भी हो सकता है, कदाचित् नैरयिक से भिन्न भी हो सकता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव असुरकुमार है या असुरकुमार जीव है ?

[उ.] गौतम ! असुरकुमार तो निश्चित ही जीव है, किन्तु जीव तो कदाचित् असुरकुमार भी होता है, कदाचित् असुरकुमार नहीं भी होता।

५. इसी प्रकार वैमानिक तक सभी दण्डक (आलापक) कहने चाहिए।

3. *Bhante* ! Is soul (*jiva*) infernal being (*nairayik*) or is infernal-being soul ?

[Ans.] Gautam ! As a rule infernal being is soul but soul (*jiva*) may be an infernal being or sometimes other than an infernal being.

4. Bhante ! Is soul (*jiva*) *Asur Kumar* (a class of divine beings) or is *Asur Kumar* soul ?

[Ans.] Gautam ! As a rule *Asur Kumar* is soul but soul (*jiva*) may be an *Asur Kumar* or sometimes not an *Asur Kumar*.

5. Same statement should be repeated for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimanik*.

६. [प्र.] जीवति भंते ! जीवे ? जीवे जीवति ?

[उ.] गोयमा ! जीवति ताव नियमा जीवे, जीवे पुण सिय जीवति, सिय नो जीवति।

६. [प्र.] भगवन् ! जो जीता-प्राण धारण करता है, वह जीव कहलाता है या जो जीव है, वह जीता-प्राण धारण करता है ?

[उ.] गौतम ! जो जीता-प्राण धारण करता है, वह तो निश्चित ही जीव कहलाता है, किन्तु जो जीव होता है, वह प्राण धारण करता (जीता) भी है और कदाचित् प्राण धारण नहीं भी करता। (सिद्ध आत्मा की अपेक्षा, चूँकि वे जीव होते हुए भी द्रव्य प्राण धारण नहीं करते।)

6. [Q.] *Bhante* ! Is one who lives called *jiva* (soul) or is it soul that is called a living being (or one possessing life force) ?

[Ans.] Gautam ! As a rule one who lives is called *jiva* (soul) but soul is sometimes a living being and sometimes not. (This relates to *Siddha* who, although a soul, does not exist as a physical living being.)

७. [प्र.] जीवति भंते ! नेरइए ? नेरइए जीवति ?

[उ.] गोयमा ! नेरइए ताव नियमा जीवति, जीवति पुण सिय नेरइए, सिय अनेरइए।

८. एवं दंडओ नेयव्वो जाव वेमाणियाणं।

७. [प्र.] भगवन् ! जो जीता है, वह नैरयिक कहलाता है या जो नैरयिक होता है, वह जीता-प्राण धारण करता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! नैरयिक तो निश्चित ही जीता है, किन्तु जो जीता है, वह नैरयिक भी होता है और अनैरयिक भी होता है।

८. इसी प्रकार यावत् वैमानिकपर्यन्त सभी दण्डक (आलापक) कहने चाहिए।

7. [Q.] *Bhante* ! Is one who lives called infernal being (*nairayik*) or is an infernal being called living ?

[Ans.] Gautam ! As a rule an infernal being is called living but one who lives is sometimes infernal being (*nairayik*) and sometimes not.

8. Same statements should be repeated for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimanik*.

विवेचन : जीव द्रव्य है, चैतन्य उसका गुण है। गुण-गुणी में अविनाभाव सम्बन्ध है। नरक आदि जीव के पर्याय हैं, पर्याय के साथ अविनाभाव सम्बन्ध नहीं होता जीवन का मूल आधार आयुष्य कर्म है। कोई भी संसारी जीव आयुष्य कर्म के बिना नहीं रहता।

Elaboration—*Jiva* (soul) is an entity and sentience is its attribute. An object and its attributes have a perennial relationship. Infernal and other states are modes of soul and modes do not have such perennial relationship with the object.

९. [प्र.] भवसिद्धिए णं भंते ! नेरइए ? नेरइए भवसिद्धिए ?

[उ.] गोयमा ! भवसिद्धिए सिय नेरइए, सिय अनेरइए। नेरतिए वि य सिय भवसिद्धिए, सिय अभवसिद्धिए।

१०. एवं दंडओ जाव वेमाणियाणं।

९. [प्र.] भगवन् ! जो भवसिद्धिक होता है, वह नैरयिक होता है या जो नैरयिक होता है, वह भवसिद्धिक होता है ?

[उ.] गौतम ! जो भवसिद्धिक (भव्य) होता है, वह नैरयिक भी होता है और अनैरयिक भी होता है। तथा जो नैरयिक होता है, वह भवसिद्धिक भी होता है और अभवसिद्धिक भी होता है।

१०. इसी प्रकार यावत् वैमानिकपर्यन्त सभी दण्डक (आलापक) कहने चाहिए।

9. [Q.] *Bhante* ! Is a *bhavasiddhik* (destined to be liberated) an infernal being or is an infernal being a *bhavasiddhik* ?

[Ans.] Gautam ! A *bhavasiddhik* (destined to be liberated) can be an infernal being and some other being as well. An infernal being can be a *bhavasiddhik* as well as an *abhavasiddhik* (not destined to be liberated).

10. Same statements should be repeated for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimanik*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. [प्र. १] अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवेंति–"एवं खलु सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे जीवा सव्वे सत्ता एगंतदुक्खं वेदणं वेदेंति से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया जाव मिच्छं ते एवमाहंसु। अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–अत्थेगइया पाणा भूया जीवा सत्ता एगंतदुक्खं वेदणं वेदेंति, आहच्च सायं। अत्थेगइया पाणा भूया जीवा सत्ता एगंतसायं वेदणं वेदेंति, आहच्च असायं वेयणं वेदेंति। अत्थेगइया पाणा भूया जीवा सत्ता वेमायाए वेयणं वेयंति, आहच्च सायमसायं।

११. [प्र. १] भगवन् ! अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, एकान्तदुःखरूप वेदना को वेदते (अनुभव करते) हैं, तो भगवन् ! ऐसा कैसे हो सकता है ?

[उ.] गौतम ! अन्यतीर्थिक जो यह कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं, वे मिथ्या कहते हैं। हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ, यावत् प्ररूपणा करता हूँ–कितने ही प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, एकान्तदुःख रूप वेदना वेदते हैं और कदाचित् साता (सुख) रूप वेदना भी वेदते हैं; कितने ही प्राण, भूत, जीव और सत्त्व, एकान्तसाता (सुख) रूप वेदना वेदते हैं और कदाचित् असाता (दुःख) रूप वेदना भी वेदते हैं; तथा कितने ही प्राण, भूत, जीव और सत्त्व विमात्रा (विविध प्रकार) से वेदना वेदते हैं; (अर्थात्–) कदाचित् सातारूप और कदाचित् असातारूप (वेदना वेदते हैं।)

11. [Q. 1] *Bhante* ! People of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that—all *praan* (two to four sensed beings; beings), *bhoot* (plant bodied beings; organisms), *jiva* (five sensed beings; souls), and *sattva* (immobile beings; entities) exclusively suffer pain. *Bhante* ! How is it so ?

[Ans.] Gautam ! What the people of other faiths (*anyatirthik*) or heretics say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) is wrong. I say (*akhyanti*)... and so on up to... propagate (*prarupayanti*) that—some *praan* (two to four sensed beings; beings), *bhoot* (plant bodied beings; organisms), *jiva* (five sensed beings; souls), and *sattva* (immobile beings; entities) exclusively suffer pain (*asaata*) but sometimes experience happiness (*saata*). Some *praan*, *bhoot*, *jiva*, and *sattva* exclusively experience happiness but sometimes experience pain. And some *praan*, *bhoot*, *jiva*, and *sattva* have diverse experiences (they sometimes suffer happiness and sometimes pain).

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! नेरइया एगंतदुक्खं वेयणं वेयंति, आहच्च सायं। भवणवति–वाणमंतर–जोइस–वेमाणिया एगंतसायं वेदणं वेदेंति, आहच्च असायं। पुढविक्काइया जाव मणुस्सा वेमायाए वेदणं वेदेंति, आहच्च सायमसायं। से तेणट्ठेणं।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कथन किया जाता है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव, एकान्तदुःखरूप वेदना वेदते हैं और कदाचित् सातारूप वेदना भी वेदते हैं। भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक एकान्तसाता (सुख) रूप वेदना वेदते हैं, किन्तु कदाचित् असातारूप वेदना भी वेदते हैं। तथा पृथ्वीकायिक जीवों से लेकर मनुष्यों पर्यन्त विमात्रा से वेदना वेदते हैं। (अर्थात्) कदाचित् सुख और कदाचित् दुःख वेदते हैं। इसी कारण से, हे गौतम ! उपर्युक्त रूप से कहा गया है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings exclusively suffer pain (*asaata*) but sometimes experience happiness (*saata*). *Bhavan-pati* (abode dwelling), *Vanavyantar* (interstitial), *Jyotishk* (stellar) and *Vaimanik* (celestial vehicular) gods exclusively experience happiness but sometimes experience pain. And living beings from earth-bodied ones to humans have diverse experiences (they sometimes suffer happiness and sometimes pain). That is the reason, Gautam, for stating as aforesaid.

विवेचन : प्राचीन भारतीय दर्शनों में सांख्य (योग) और बौद्ध दर्शन एकान्त दुःखवादी दर्शन है। दुःखमेवं सर्वं विवेकिनः (पातंजल २/१५) किन्तु जैन दर्शन सापेक्षवादी है, सुख–दुःख दोनों को ही एकान्त सापेक्ष मानता है।

Elaboration—In the ancient Indian philosophies *Sankhya* (*Yoga*) philosophy and Buddhist philosophy are based exclusively on sufferance. But Jain philosophy is relativistic as it considers happiness and sorrow to be absolutely relative states.

नैरयिकादि का आहार INTAKE OF INFERNAL AND OTHER BEINGS

१२. [प्र.] नेरइया णं भंते ! जे पोग्गले अत्तमायाए आहारेंति ते किं आयसरीरक्खेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेंति ? अणंतरखेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेंति ? परंपरखेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेंति ?

[उ.] गोयमा ! आयसरीरखेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेंति, नो अणंतरखेत्तोगाढे पोग्गले अत्तमायाए आहारेंति, नो परंपरखेत्तोगाढे।

१३. जहा नेरइया तहा जाव वेमाणियाणं दंडओ।

१२. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीव, जिन पुद्गलों का आत्मा (अपने) द्वारा ग्रहण करके आहार करते हैं, क्या वे आत्म–शरीर क्षेत्रावगाढ़ (जिन आकाशप्रदेशों में अपना शरीर है, उन्हीं प्रदेशों में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थित) पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण करते हैं? या अनन्तरक्षेत्रावगाढ़ (आत्मा से दूर) पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण करते हैं? अथवा परम्परक्षेत्रावगाढ़ (परक्षेत्र) पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण करते हैं?

[उ.] गौतम! वे आत्म-शरीर-क्षेत्रावगाढ़ पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण करते हैं, किन्तु न तो अनन्तर क्षेत्रावगाढ़ पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण करते हैं और न ही परम्परक्षेत्रावगाढ़ पुद्गलों को आत्मा द्वारा ग्रहण करते हैं।

१३. जिस प्रकार नैरयिकों के लिए कहा, उसी प्रकार यावत् वैमानिक-पर्यन्त दण्डक (आलापक) कहना चाहिए।

12. [**Q.**] *Bhante* ! Infernal beings have intake of matter particles through the soul (self). Do they have this intake of matter particles through soul from the area occupied by their own body (*atma kshetravagadh*) ? Or from an area away from their own body (*anantar kshetravagadh*) ? Or from an area far away from their bodies (*parampar kshetravagadh*) ?

[**Ans.**] Gautam ! They have this intake of matter particles through soul from the area occupied by their own body (*atma kshetravagadh*) but neither form an area away from their own body (*anantar kshetravagadh*) nor from an area far away from their bodies (*parampar kshetravagadh*).

13. As has been said about infernal beings so should be repeated for all *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimanik*.

केवली अनिन्द्रिय होते हैं OMNISCIENT IS WITHOUT SENSE ORGANS

१४. [प्र. १] केवली णं भंते! आयाणेहिं जाणति पासति?

[उ.] गोयमा! नो इणट्ठे०।

१४. [प्र. १] भगवन्! क्या केवली भगवान इन्द्रियों द्वारा जानते-देखते हैं?

[उ.] गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

14. [**Q. 1**] *Bhante* ! Do the omniscient know and see with the help of sense organs ?

[**Ans.**] Gautam ! That is not correct.

[प्र. २] से केणट्ठेणं?

[उ.] गोयमा! केवली णं पुरत्थिमेणं मियं पि जाणति अमियं पि जाणति जाव निव्वुडे दंसणे केवलिस्स, से तेणट्ठेणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! केवली भगवान पूर्व दिशा में मित (परिमित) को भी जानते हैं और अमित (अपरिमित) को भी जानते हैं; यावत् केवली का (ज्ञान और) दर्शन निर्वृत्त, (परिपूर्ण और निरावरण) होता है। हे गौतम ! इस कारण से ऐसा कहा जाता है।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] The omniscient knows the limited as well as the unlimited in the east... and so on up to... the (knowledge and) perception of the omniscient is unobstructed (complete and unveiled). Gautam ! That is why it is so ?

उपसंहार की संग्रहणी गाथा **CONCLUSIVE COLLATIVE VERSE**

१५. जीवाण सुहं दुक्खं जीवे जीवति तहेव भविया य।
एगंतदुक्खवेयण अत्तमायाय केवली॥१॥

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ छट्ठे सए : दसमो उद्देसओ समत्तो ॥

॥ छट्ठं सतं समत्तं ॥

१५. जीवों का सुख-दुःख, जीव, जीव का प्राणधारण, भव्य, एकान्त दुःख-वेदना, आत्मा द्वारा पुद्गलों का ग्रहण और केवली, इन विषयों पर दसवें उद्देशक में विचार किया गया है।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरने लगे।

॥ छठा शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ छठा शतक सम्पूर्ण ॥

15. Happiness and misery of living beings, living beings, life-force of living beings, the worthy, exclusive misery, intake of matter by soul and the omniscient, all these topics have been discussed in this tenth lesson.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE TENTH LESSON OF THE SIXTH CHAPTER ●

● END OF THE SIXTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : प्रथम उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : FIRST LESSON

आहार AHAAR (INTAKE)

उपोद्घात INTRODUCTION

१. आहार १ विरति २ थावर ३ जीवा ४ पक्खी ५ य आउ ६ अणगारे ७।
छउमत्थ ८ असंवुड ९ अन्नउत्थि १० दस सत्तमम्मि सए॥१॥ (संग्रहणी गाथा)

१. इस सातवें शतक में निम्न दस उद्देशक हैं–(१) आहार, (२) विरति, (३) स्थावर, (४) जीव, (५) पक्षी, (६) आयुष्य, (७) अनगार, (८) छद्मस्थ, (९) असंवृत, और (१०) अन्यतीर्थिक।

प्रस्तुत शतक में आहार, (आहार सम्बन्धी विविध विकल्प तथा आहार के दोषों का वर्णन) लोक संस्थान, जीव की ऊर्ध्वगति, सुप्रत्याख्यान आदि अनेक प्रकार के रोचक ज्ञानवर्धक तात्कालिक, प्रश्नों का विविध दृष्टियों से समाधान प्रस्तुत है।

1. This seventh chapter (*shatak*) has the following ten lessons (*uddeshak*)—(1) *Ahaar* (Food Intake), (2) *Virati* (Renunciation), (3) *Sthavar* (Immobile Beings), (4) *Jiva* (Living Beings), (5) *Pakshi* (Aerial Beings; Birds), (6) *Ayushya* (Life-span), (7) *Anagaar* (Homeless), (8) *Chhadmasth* (Ascetic), (9) *Asamvrit* (Unrestrained) and (10) *Anyatirthik* (Heretics).

Food and its range as well as faults, structure of the universe, ascent of soul, noble renunciation and many other interesting and edifying questions related to general as well as periodic information have been answered in this chapter from varied angles

अनाहार और सर्वाल्पाहार का काल PERIOD OF TOTAL AND PARTIAL FASTING

२. तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी–

३. [प्र. १] जीवे णं भंते ! कं समयमणाहारए भवति ?

[उ.] गोयमा ! पढमे समए सिय आहारए, सिय अणाहारए। बितिए समए सिय आहारए, सिय अणाहारए। ततिए समए सिय आहारए, सिय अणाहारए। चउत्थे समए नियमा आहारए। [२] एवं दंडओ। जीवा य एगिंदिया य चउत्थे समए। सेसा तइए समए।

२. उस काल और उस समय में गौतम स्वामी ने (श्रमण भगवान महावीर से) वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार पूछा–

३. [प्र. १] भगवन् ! (परभव में जाता हुआ) जीव किस समय में अनाहारक होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! (परभव में जाता हुआ) जीव, प्रथम समय में कदाचित् आहारक होता है और कदाचित् अनाहारक होता है; द्वितीय समय में भी कदाचित् आहारक और कदाचित् अनाहारक होता है, तृतीय समय में भी कदाचित् आहारक और कदाचित् अनाहारक होता है; परन्तु चौथे समय में अवश्य आहारक होता है। [२] इसी प्रकार नैरयिक आदि चौबीस ही दण्डकों में कहना चाहिए। सामान्य जीव और एकेन्द्रिय ही चौथे समय में आहारक होते हैं। इनके सिवाय शेष जीव, तीसरे समय में आहारक होते हैं।

2. During that period of time Indrabhuti Anagar, the senior disciple of Bhagavan Mahavir... and so on up to... paid his homage and obeisance and submitted—

3. [Q. 1] *Bhante* ! When does a soul (while going to its next birth) remain without food intake (*anahaarak*) ?

[Ans.] Gautam ! At the first moment (*Samaya*) (while going to its next birth) a soul sometimes remains with food intake (*ahaarak*) and sometimes without food intake; at the second *Samaya* also it sometimes remains with food intake and sometimes without food intake; at the third *Samaya* too it sometimes remains with food intake and sometimes without food intake; but at the fourth *Samaya* it is necessarily with food intake. [2] The same should be repeated for all twenty four *Dandaks* (places of suffering) including infernal beings. *Jiva* (in general) and one-sensed beings become *ahaarak* (with food intake) at the fourth *Samaya*. All the remaining living beings become *ahaarak* at the third *Samaya*.

४. [प्र. १] जीवे णं भंते ! कं समयं सव्वप्पाहारए भवति ?

[उ.] गोयमा ! पढमसमयोववन्नए वा, चरमसमयभवत्थे वा, एत्थ णं जीवे सव्वप्पाहारए भवति। [२] दंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणियाणं।

४. [प्र. १] भगवन् ! जीव किस समय में सबसे अल्प आहार लेता है ?

[उ.] गौतम ! उत्पत्ति के प्रथम समय में अथवा भव (जीवन) के अन्तिम समय में जीव सबसे अल्प आहार वाला होता है। [२] वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डकों में इसी प्रकार कहना चाहिए।

4. [Q. 1] *Bhante* ! When does a *jiva* (soul; living being) have least intake of food ?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* (soul; living being) has least intake of food at the first *Samaya* of its birth or the last *Samaya* of a life-span. [2] The same should be repeated for all twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimanik*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : आहार चार प्रकार का है-(१) **ओज आहार**-जन्म के प्रारम्भ में अन्तर्मुहूर्त्त तक किया जाता है। (२) **लोम आहार**-(श्वासोच्छ्वास द्वारा) जन्म से जीवन के अन्तिम क्षण तक किया जाता है। (३) **प्रक्षेप आहार**-मुख से (कवल रूप) भोजन काल में किया जाता है। (४) **मनोभक्ष्य**-मानसिक संकल्प द्वारा ग्रहण किया जाता है।

दो स्थितियों में जीव अनाहारक होता है-(१) **अन्तराल गति**-मृत्यु के पश्चात् जन्म-स्थान तक जाने के मध्य का समय। (२) केवली समुद्घात। अन्तराल गति दो प्रकार की है-(१) ऋजु गति, और (२) वक्र गति।

(१) संसारी जीव जब आयुष्य पूर्ण करके ऋजुगति (सीधी गति दंडाकार) से परभव में उत्पत्ति स्थान में चला जाता है, तब परभव-सम्बन्धी आयुष्य के प्रथम समय में ही आहारक होता है, किन्तु जब वक्र (मोड़ वाली) विग्रहगति (वक्रगति) से जाता है, तब प्रथम समय में वक्र मार्ग में चलता हुआ वह अनाहारक होता है; इसलिए वह कदाचित् आहारक और कदाचित् अनाहारक होता है। तथा (२) जब एक वक्र (मोड़) लेकर दो समय में उत्पन्न होता है, तब पहले समय में अनाहारक और द्वितीय समय में आहारक होता है, (३) जब दो वक्रों (मोड़ों) से तीन समय में उत्पन्न होता है, तब प्रारम्भ के दो समयों तक अनाहारक रहता है, तीसरे समय में आहारक होता है, और (४) जब तीन वक्र मोड़ लेकर चार समय में उत्पन्न होता है, तब तीन समय तक अनाहारक और चौथे समय में अवश्य आहारक होता है। तीन मोड़ों का क्रम इस प्रकार होता है-त्रसनाड़ी से बाहर विदिशा में रहा हुआ कोई जीव, जब अधोलोक से ऊर्ध्वलोक में त्रसनाड़ी से बाहर की दिशा में जाकर उत्पन्न होता है, तब वह प्रथम एक समय में विश्रेणी से समश्रेणी में आता है। दूसरे समय में त्रसनाड़ी में प्रविष्ट होता है, तृतीय समय में ऊर्ध्वलोक में जाता है और चौथे समय में लोकनाड़ी से बाहर निकलकर उत्पत्ति-स्थान में उत्पन्न होता है। इनमें से पहले के तीन समयों में तीन वक्र समश्रेणी में जाने से हो जाते हैं। जब त्रसनाड़ी से निकल कर जीव बाहर विदिशा में ही उत्पन्न हो जाता है तो चार समय में चार वक्र भी हो जाते हैं, पाँचवें समय में वह उत्पत्तिस्थान को प्राप्त करता है। ऐसा कई आचार्य कहते हैं। विग्रह गति विग्रह गति होती है। (संलग्न रेखाचित्र से स्पष्ट समझा जा सकेगा)

जो नारकादि त्रस, त्रसजीवों में ही उत्पन्न होता है, उसका गमनागमन त्रसनाड़ी से बाहर नहीं होता, अतएव वह तीसरे समय में नियमतः आहारक हो जाता है। जैसे-कोई मत्स्यादि भरत क्षेत्र के पूर्व भाग में स्थित है, वह वहाँ से मरकर ऐरवत क्षेत्र के पश्चिम भाग में नीचे नरक में उत्पन्न होता है, तब एक समय में भरत क्षेत्र के पूर्व भाग से पश्चिम भाग में चला जाता है, दूसरे समय में ऐरवत क्षेत्र के पश्चिम भाग में जाता है और तीसरे समय में नरक में उत्पन्न होता है। इन तीनों समयों में से प्रथम दो में वह अनाहारक और तीसरे समय में आहारक होता है।

सर्वाल्पाहारता-आहार ग्रहण करने का हेतु शरीर है। उत्पत्ति के प्रथम समय में आहार ग्रहण करने वाला शरीर अल्प होता है, इसलिए उस समय जीव सर्वाल्पाहारी होता है तथा अन्तिम समय में प्रदेशों के संकुचित हो जाने एवं जीव के शरीर के अल्प अवयवों में स्थित हो जाने के कारण जीव सर्वाल्पाहारी होता है। यह कथन अनाभोग निवर्तित (बिना इच्छा के गृहीत) आहार की अपेक्षा से है। *(वृत्ति, पत्रांक २८७-२८८)*

Elaboration—Intake (*ahaar*) is of four kinds—(1) *Oj ahaar* (energy intake)—intake at the time of conception of a being lasting one *Antar-muhurt* (less than forty eight minutes). (2) *Loam ahaar* (intake through

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विग्रह गति और लोक संस्थान

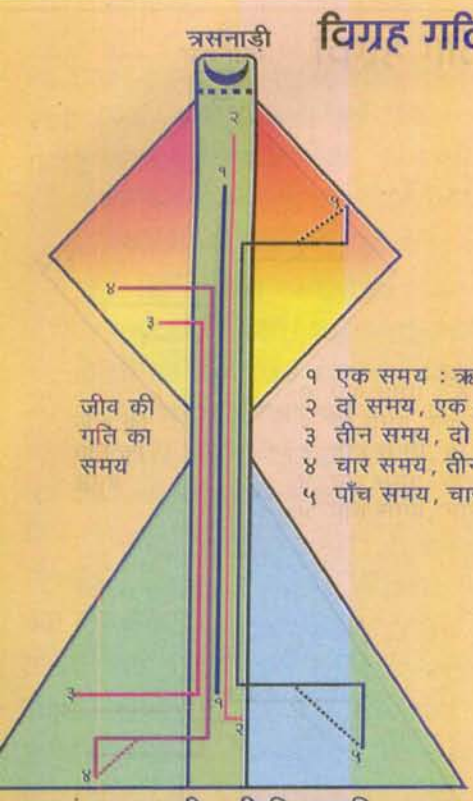

ग्रंथानुसार जीव की विग्रह गति

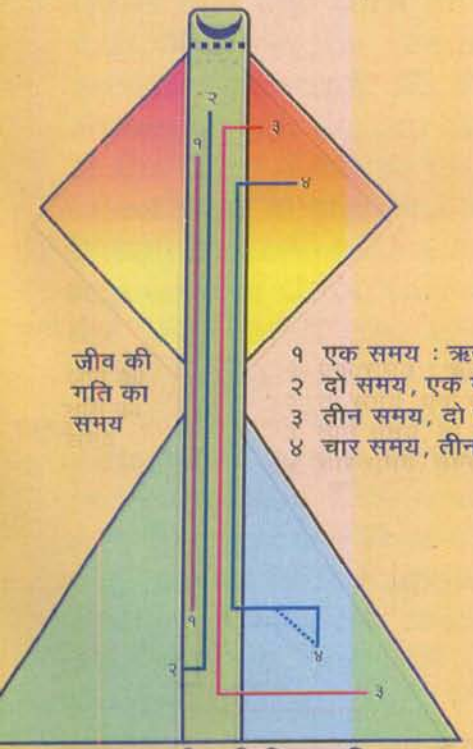

सूत्रानुसार जीव की विग्रह गति

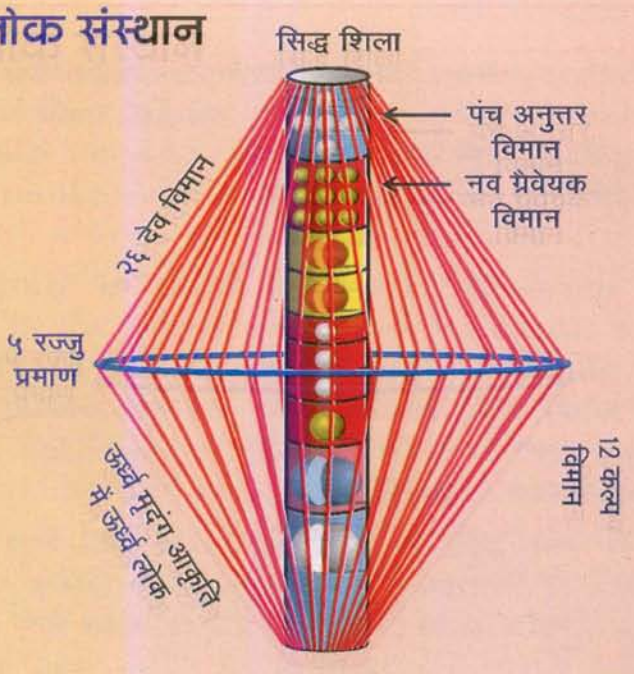

१ रज्जु प्रमाण

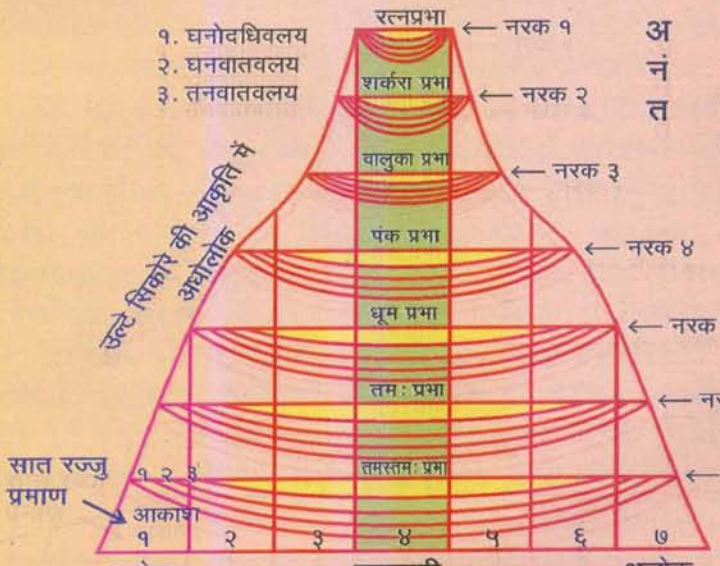

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-८

Illustration No. 8

विग्रह गति और लोक संस्थान

१. **एक समय की ऋजुगति**–मृत्यु स्थान से उत्पत्ति स्थान पर एक समय की ऋजुगति से जाने वाला जीव प्रथम समय में आहारी होता है।

२. **दो समय की वक्रगति**–मृत्यु स्थान से एक मोड़ लेकर वक्रगति से उत्पत्ति स्थान पर जाने वाले जीव को दो समय लगते हैं। तब प्रथम समय अनाहारक, दूसरे समय आहारक होता है।

३. **तीन समय**–त्रस नाड़ी के बाहर से त्रस नाड़ी में प्रवेश कर पुनः त्रस नाड़ी के बाहर उत्पन्न होने वाले जीव को उत्पत्ति स्थान तक जाने में दो मोड़ लेने पड़ते हैं, तीन समय लगते हैं। प्रथम दो समय में वह अनाहारक तथा तीसरे समय में आहारक होता है।

४. **चार समय**–त्रस नाड़ी के बाहर विदिशा से पहले सीधी दिशा में फिर त्रस नाड़ी में, फिर ऊपर सीध में तथा पुनः मोड़ लेकर त्रस नाड़ी के बाहर उत्पन्न होने पर चार समय लगते हैं। जीव प्रथम तीन समय अनाहारक रहता है।

टीका आदि ग्रन्थों में पाँच समय की वक्र गति का कथन भी है।

-शतक ७, उ. १, सूत्र ३

लोक संस्थान–चौदह राजू ऊँचा लोक नीचे मूल में, अधोलोक में सात रज्जू चौड़ा है। अधोलोक का संस्थान उल्टे सिकोरे जैसी आकृति में बनता है। मध्यलोक झालर; पूर्ण चन्द्रमा या थाली का आकार में दिखाई देता है और ऊर्ध्वलोक खड़े मृदंग (ढोलक) की आकृति में नीचे–ऊपर सँकड़ा बीच में चौड़ा दिखाई देता है। (चित्र में तीनों दृश्य अलग–अलग दिखाये हैं)

-शतक ७, उ. १, सूत्र ४

OBLIQUE MOVEMENT AND STRUCTURE OF LOK

1. Straight movement of one Samaya—On death when a jiva moves in a straight line to the new place of birth then at the first Samaya he is ahaarak (with intake).

2. Oblique movement of two Samayas—In the oblique movement if he takes just one turn and takes birth at the second Samaya then at the first Samaya he remains anahaarak and at the second Samaya he becomes ahaarak.

3. Three Samayas—A jiva entering Tras Nadi, going out again and then taking birth, has to take two turns taking three Samayas. During the first two Samayas he remains anahaarak and at the third Samaya he becomes ahaarak.

4. Four Samayas—A jiva entering Tras-naadi from some other direction first has a vertical movement. Then it takes a horizontal turn to enter the Tras-naadi. It then takes a vertical turn and again a horizontal turn to come out of the Tras-naadi and get born. He takes four Samayas in this process and during the first three remains anahaarak.

In Tika and other commentaries there is a mention of oblique movements taking five Samayas.

—Shatak-7, lesson-1, Sutra-3

Structure of Lok—The total height of Lok from base to top is 14 Rajjus. It is 7 Rajjus wide at the base. The shape of Adholok is like an upturned cup. Middle world or Tiryak Lok is like a cymbal, full moon or a round plate and Urdhvalok is wide at middle and narrow at ends like an upturned Mridang (a cask-shaped drum).

—Shatak-7, lesson-1, Sutra-4

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

body hair or follicle)—this also includes respiration and continues till the last moment of life. (3) *Prakshep ahaar* or *Kavalahar* (intake of morsel)—intake through mouth or the normal act of eating. (4) *Manobhakshya* (mental food intake)—This is done with the help of mental resolve.

In two states a *jiva* (soul) is *anahaarak*—(1) *Antaraal gati* (transitional movement)—this is the movement when on death a soul moves to the new place of birth. (2) *Kevali Samudghat*—bursting forth and withdrawal of soul-space-points by an omniscient just before his death (see chapter 2, lesson 2). Transitional movement is of two types—(a) *Riju gati* (straight movement) and (2) *Vakra gati* (oblique movement).

In context of intake there are four alternatives of the transitional movement—(1) When a worldly being completes his life-span and moves in a straight line (*riju gati*) to the new place of birth then right at the first *Samaya* of life-span of the new birth he is *ahaarak* (with intake). However, if he moves in a oblique way (*vakra gati*) he is *anahaarak* (without intake) in the first *Samaya* of movement. That is why the general statement about the first *Samaya* of movement is that a *jiva* may be *ahaarak* or *anahaarak*. (2) Now in the oblique movement if he takes just one turn and takes birth at the second *Samaya* then at the first *Samaya* he remains *anahaarak* and at the second *Samaya* he becomes *ahaarak*. (3) If he takes two turns and takes birth at the third *Samaya* then during the first two *Samayas* he remains *anahaarak* and at the third *Samaya* he becomes *ahaarak*. (4) If he takes three turns and takes birth at the fourth *Samaya* then during the first three *Samayas* he remains *anahaarak* and at the fourth *Samaya* he becomes *ahaarak*. The sequence of three turns is like this—Suppose a being is located outside the *Tras-naadi* (the central spine of the *Lok* or occupied space where living beings exist) in some direction. When he goes from lower world to upper world and gets reborn outside the *Tras-nadi* then at the first moment it has a vertical movement to come in line with the point of entry into the *Tras-naadi*. In the second *Samaya* it takes a horizontal turn to enter the *Tras-naadi*. In the third *Samaya* it takes a vertical turn and moves to the upper world. In the fourth *Samaya* it again takes a horizontal turn to come out of the *Tras-naadi* moving to the place of birth and get born. Of these the first three movements are oblique. (see illustration).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Those infernal and mobile beings that are reborn as mobile beings only, do not move outside the *Tras-naadi*, therefore as a rule they become *ahaarak* in the third *Samaya*. For example—Suppose a fish or other animal lives in the eastern part of *Bharat* area. If it dies there and is reborn in a hell below western Airavat area, then at the first *Samaya* it moves from east Bharat to west Bharat, in the second *Samaya* it moves to west Airavat and in the third *Samaya* it moves to the infernal world and gets born. Of these three *Samayas* it is *anahaarak* for first two and *ahaarak* at the third.

Sarvalpahaarata—The purpose of food intake is creation and sustenance of body. The body of an *ahaarak* (with intake) at the first *Samaya* of birth is minute. Therefore at that moment a *jiva* (soul) is *sarvalpahaari* (with minute food intake). Also at the last moment before death as the space-points of soul undergo contraction and are occupying a very small fraction of the body, the soul becomes *sarvalpahaari*. This statement is in context of non-voluntary food intake (*anaabhog nivartit*). (Vritti, leaf 287-288)

लोक के संस्थान STRUCTURE OF LOK

५. [प्र.] किंसंठिए णं भंते ! लोए पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! सुपतिट्ठिगसंठिए लोए पण्णत्ते, हेट्ठा वित्थिण्णे जाव उप्पिं उद्धमुइंगाकारसंठिए। तंसि च णं सासयंसि लोगंसि हेट्ठा वित्थिण्णंसि जाव उप्पिं उद्धमुइंगाकारसंठियंसि उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली जीवे वि जाणति पासति, अजीवे वि जाणति पासति। ततो पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेंति।

५. [प्र.] भगवन् ! लोक का संस्थान (आकार) किस प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! लोक का संस्थान सुप्रतिष्ठिक (सकोरे) के आकार का है। वह नीचे विस्तीर्ण (चौड़ा) है और क्रमशः ऊपर ऊर्ध्व मृदंग के आकार का है। ऐसे नीचे से विस्तृत ऊपर ऊर्ध्व मृदंगाकार इस शाश्वत लोक में उत्पन्न केवलज्ञान-दर्शन के धारक, अर्हन्त, जिन, केवली, जीवों को भी जानते और देखते हैं तथा अजीवों को भी जानते और देखते हैं। इसके पश्चात् वे सिद्ध, बुद्ध और मुक्त होते हैं, यावत् सब दुःखों का अन्त करते हैं।

5. [Q.] *Bhante* ! What is the structure (*samsthaan*) of the *Lok* (universe) ?

[Ans.] The shape of the *Lok* is like that of a *supratishthit* (an earthen pot of the shape of a wine glass). It is wide at the base with a gradual taper ending with the shape of an upturned *Mridang* (a two sided drum with bulging middle and unequal ends). *Arhants*, *Jinas*, *Kevalis*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(synonyms of *Tirthankar*), endowed with perfect knowledge and perception (*Keval jnana-darshan*) and born in this *Lok* that is wide at the base with a gradual taper ending with the shape of an upturned *Mridang*, know and see *jivas* (souls; living beings) as well as non-souls (matter, space, time and other entities). Finally they become *Siddha* (perfected), *buddha* (enlightened), *mukta* (liberated)... and so on up to... end all miseries.

विवेचन : लोक का विस्तार नीचे सात रज्जूपरिमाण है। ऊपर क्रमशः घटते हुए सात रज्जू की ऊँचाई पर एक रज्जू विस्तृत है। तत्पश्चात् उत्तरोत्तर क्रमशः बढ़ते हुए साढ़े दस रज्जू (नीचे से) की ऊँचाई पर पाँच रज्जू और शिरोभाग में एक रज्जू विस्तार है। मूल (नीचे) से लेकर ऊपर तक की कुल ऊँचाई १४ रज्जू है।

लोक का संस्थान–लोक की आकृति को यथार्थरूप से समझाने के लिए लोक के तीन विभाग किये गये हैं– अधोलोक, तिर्यक्लोक और ऊर्ध्वलोक। अधोलोक का आकार उलटे सकोरे (शराव) जैसा है, तिर्यक्लोक का आकार झालर थाली या पूर्ण चन्द्रमा जैसा है और ऊर्ध्वलोक का आकार ऊर्ध्व मृदंग जैसा है। (संलग्न रेखा चित्र देखें)

Elaboration—The spread of *Lok* is seven *Rajjus* (a very large linear measure) at the base. With a gradual taper it becomes one *Rajju* at the height of seven *Rajjus*. After that it gradually expands to five *Rajjus* at the height of ten and a half *Rajjus*. Then it again reduces gradually to one *Rajju* at the height of 14 *Rajjus*. Thus the total height from base to top is 14 *Rajjus*.

Structure—In order to properly understand the structure, *Lok* has been divided into three parts—lower world (*Adholok*), transverse world (*Tiryak lok*) and upper world (*Urdhvalok*). The shape of *Adholok* is like an upturned cup, *Tiryak Lok* is like a disc or full moon and *Urdhvalok* is like an upturned *Mridang*. (see illustration)

श्रमणोपासक की कितनी क्रिया ACTIVITIES OF SHRAMANOPASAK

६. [प्र. १] समणोवासगस्स णं भंते ! समाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ ? संपराइया किरिया कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! नो इरियावहिया किरिया कज्जइ, संपराइया किरिया कज्जइ।

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव संपराइयाकिरिया कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! समणोवासयस्स णं सामाइयकडस्स समणोवस्सए अच्छमाणस्स आया अहिकरणी भवति। आयाहिगरणवत्तियं च णं तस्स नो ईरियावहिया किरिया कज्जइ, संपराइया किरिया कज्जइ। से तेणट्ठेणं जाव संपराइया०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. [प्र. १] भगवन् ! श्रमण के उपाश्रय (धर्मस्थान) में बैठे हुए सामायिक किये हुए श्रमणोपासक (श्रावक) को क्या ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है अथवा साम्परायिकी क्रिया लगती है ?

[उ.] गौतम ! उसे साम्परायिकी क्रिया लगती है, ऐर्यापथिकी क्रिया नहीं लगती।

[प्र. २] भगवन् ! किस हेतु से ऐसा कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! श्रमण के उपाश्रय में बैठे हुए सामायिक किये हुए श्रमणोपासक की आत्मा अधिकरणी (कषाय के साधन से युक्त) होती है। जिसकी आत्मा अधिकरण का निमित्त होती है, उसे ऐर्यापथिकी क्रिया नहीं लगती, किन्तु साम्परायिकी क्रिया लगती है। हे गौतम ! इसी कारण से (कहा गया है कि उसे) साम्परायिकी क्रिया लगती है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Is a *shramanopasak* (follower of *Shraman*) seated in *upashraya* (place of stay for ascetics) and performing *Samayik* (a formal Jain meditational practice) said to be performing *Iryapathiki kriya* (careful activity of an accomplished ascetic) or *Samparayik kriya* (passion inspired activity) ?

[Ans.] Gautam ! He is said to be performing *Samparayik kriya* (passion inspired activity) and not *Iryapathiki kriya* (careful activity of an accomplished ascetic).

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] The soul of a *shramanopasak* (follower of *Shraman*) seated in *upashraya* (place of stay for ascetics) and performing *Samayik* is still an instrument of passions (*adhikarani*). A person who is an instrument of passions is not qualified for *Iryapathiki kriya* but only for *Samparayik kriya*. That is why Gautam ! He is said to be performing *Samparayik kriya* (passion inspired activity).

विवेचन : प्रवृत्ति निमित्त से होने वाली दो क्रियाएँ मुख्य हैं-ऐर्यापथिकी तथा सांपरायिकी। सांपरायिक क्रिया कर्म बंध का कारण है। वीतराग आत्मा एवं उपयोग युक्त संयत आत्मा को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है तथा कषाययुक्त एवं अनुपयुक्त आत्मा को सांपरायिकी क्रिया। जो श्रावक सामायिक करके श्रमणोपाश्रय में बैठा है, उसे साम्परायिक क्रिया लगने का कारण है, उक्त श्रावक में कषाय का सद्भाव। जब तक आत्मा में कषाय (अप्रत्याख्यान या अविरति विद्यमान है) रहेगा, तब तक तन्निमित्तक साम्परायिक क्रिया लगेगी, क्योंकि साम्परायिक क्रिया कषाय के कारण लगती है।

Elaboration—Among voluntary activities two are main—*Iryapathiki* and *Samparayiki*. The *Samparayiki kriya* is the cause of *karmic* bondage. A detached soul and a restrained soul aspiring for liberation qualify for *Iryapathiki kriya* [careful movement of *apramatt chhadmasth sadhu* (accomplished ascetic who is short of omniscience due to residual

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

karmic bondage) or *sayogi Kevali* (an omniscient with non-vitiating *karmas*)]. A soul infested with passions and no aspiration for liberation qualifies for *Samparayiki kriya* (activity inspired by association and passions and leading to *karmic* bondage). A *shramanopasak* (follower of *Shraman*) seated in *upashraya* (place of stay for ascetics) and performing *Samayik* qualifies for *Samparayik kriya* because he is still under the influence of passions. As long as a soul is not free of passions (also non-abstainment and attachment) he qualifies only for *Samparayik kriya*, which is an outcome of passions.

श्रमणोपासक का व्रत-प्रत्याख्यान ABSTAINMENT OF SHRAMANOPASAK

७. [प्र.] समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव तसपाणसमारंभे पच्चक्खाए भवति, पुढविसमारंभे अपच्चक्खाए भवति, से य पुढविं खणमाणे अन्नयरं तसं पाणं विहिंसेज्जा, से णं भंते ! तं वयं अतिचरइ ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु से तस्स अइवायाए आउट्टति।

७. [प्र.] भगवन् ! जिस श्रमणोपासक ने पहले से ही त्रस-प्राणियों के समारम्भ का प्रत्याख्यान कर लिया हो, किन्तु पृथ्वीकाय के समारम्भ का प्रत्याख्यान नहीं किया हो, उस श्रमणोपासक से पृथ्वी खोदते हुए किसी त्रसजीव की हिंसा हो जाए, तो भगवन् ! क्या उसके व्रत (त्रसजीववध-प्रत्याख्यान) का उल्लंघन होता है ?

[उ.] गौतम ! ऐसा नहीं है। क्योंकि वह श्रमणोपासक त्रसजीव के अतिपात (वध) के लिए प्रवृत्त नहीं होता।

7. [Q.] *Bhante* ! A *shramanopasak* who has already renounced violence towards mobile beings but has not renounced violence towards earth-bodied beings; if while digging earth he happens to harm some mobile being, Bhante, does this amount to transgression of his aforesaid vow ?

[Ans.] Gautam ! It is not so. This is because that *shramanopasak* does not intend to kill a mobile being.

८. [प्र.] समणोवासगस्स णं भंते ! पुव्वामेव वणस्सइसमारंभे पच्चक्खाए, से य पुढविं खणमाणे अन्नयरस्स रुक्खस्स मूलं छिंदेज्जा, से णं भंते ! तं वयं अतिचरति ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु से तस्स अइवायाए आउट्टति।

८. [प्र.] भगवन् ! जिस श्रमणोपासक ने पहले से ही वनस्पति के समारम्भ का प्रत्याख्यान किया हो (किन्तु पृथ्वी के समारम्भ का प्रत्याख्यान न किया हो), पृथ्वी को खोदते हुए (उसके हाथ से) किसी वृक्ष का मूल छिन्न (कट) हो जाए, तो भगवन् ! क्या उसका व्रत भंग होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! ऐसा नहीं है, क्योंकि वह श्रमणोपासक उस (वनस्पति) के वध के लिए प्रवृत्त नहीं होता।

8. [Q.] *Bhante* ! A *shramanopasak* who has already renounced violence towards plants (but has not renounced violence towards earth-bodied beings); if while digging earth he happens to cut roots of some tree, *Bhante*, does this amount to transgression of his aforesaid vow ?

[Ans.] Gautam ! It is not so. This is because that *shramanopasak* does not intend to kill it (the plant).

विवेचन : हिंसा के दो मुख्य विकल्प हैं-(१) **आभोग जनित हिंसा**-संकल्पपूर्वक की जाने वाली हिंसा। (२) अनाभोग जनित हिंसा-अनजाने में होने वाली हिंसा। (समाधान) सामान्यतः देशविरति श्रावक के आभोग जनित संकल्पपूर्वक आरम्भी हिंसा का त्याग होता है, इसलिए जिन जीवों की हिंसा का उसने प्रत्याख्यान किया है, उन जीवों की संकल्पपूर्वक हिंसा करने में जब तक वह प्रवृत्त नहीं होता, तब तक उसका व्रत भंग नहीं होता।

Elaboration—There are two conditions of violence—(1) intentional violence and (2) unintentional violence. Generally a *shravak* (lay follower) following partial detachment abstains from violence. Therefore as long as he is not involved in intentional killing of beings he had resolved not to harm, his vow is not broken.

श्रमणों को दान देने का लाभ BENEFITS OF DONATION TO ASCETICS

९. [प्र.] समणोवासए णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा फासुएणं एसणिज्जेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं पडिलाभेमाणे किं लभति ?

[उ.] गोयमा ! समणोवासए णं तहारूवं समणं वा माहणं वा जाव पडिलाभेमाणे तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा समाहिं उप्पाएति, समाहिकारए णं तमेव समाहिं पडिलभति।

९. [प्र.] भगवन् ! तथारूप (उत्तम) श्रमण एवं माहन को प्रासुक (अचित्त), एषणीय (निर्दोष) अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप (चतुर्विध आहार) द्वारा प्रतिलाभित करते (विधिपूर्वक बहराते) हुए श्रमणोपासक को क्या लाभ होता है ?

[उ.] गौतम ! तथारूप श्रमण या माहन को यावत् प्रतिलाभित करता हुआ श्रमणोपासक, तथारूप श्रमण या माहन को समाधि पहुँचाता है। उन्हें समाधि प्राप्त कराने वाला श्रमणोपासक उसी प्रकार समाधि को प्राप्त करता है।

9. [Q.] *Bhante* ! What benefit does a *shramanopasak* derive by giving (following prescribed procedure) pure (*achitt*) and faultless (*eshaniya*) staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*) to an ascetic (*Shraman* or *Brahmin*) conforming to the description in *Agams* (*tatharupa*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! A *shramanopasak* by giving donation to an ascetic (etc.) helps him attain equanimous serenity (*samadhi*). By helping him (*Shraman*) attain equanimous serenity (*samadhi*) he (*shramanopasak*) himself attains the same *samadhi*.

१०. [प्र.] समणोवासए णं भंते ! तहारूवं समणं वा माहणं वा जाव पडिलाभेमाणे किं चयति ?

[उ.] गोयमा ! जीवियं चयति, दुच्चयं चयति, दुक्करं करेति, दुल्लभं लभति, बोहिं बुज्झति तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेति।

१०. [प्र.] भगवन् ! तथारूप श्रमण या माहन को यावत् प्रतिलाभित करता हुआ श्रमणोपासक क्या त्याग (या संचय) करता (देता) है ?

[उ.] गौतम ! वह श्रमणोपासक जीवित (जीवननिर्वाह के सहायक अन्नपानादि द्रव्य) का त्याग करता–(देता) है, दुस्त्यज वस्तु का त्याग करता है, दुष्कर कार्य करता है, दुर्लभ वस्तु का लाभ लेता है, बोधि (सम्यग्दर्शन) का बोध प्राप्त (अनुभव) करता है, उसके पश्चात् वह सिद्ध (मुक्त) होता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है।

10. [Q.] *Bhante* ! What does a *shramanopasak* give (or give up) by donating to an ascetic (*Shraman* or *Brahmin*) conforming to the description in *Agams* (*tatharupa*) ?

[Ans.] Gautam ! That *shramanopasak* gives (and gives up) the living (food, water and other life-sustaining things), he gives up things difficult to renounce, he performs difficult tasks, draws benefits difficult to attain, attains right perception (*samyagdarshan*) and then becomes *Siddha* (perfected)... and so on up to... end all miseries.

विवेचन : 'चयति' क्रिया पद के फलितार्थ के रूप में वृत्तिकार ने श्रमणोपासक को होने वाले ८ लाभों का निरूपण इस प्रकार किया है–(१) 'अन्न–पानी' प्राण तुल्य है, अतः अन्न–पानी देना–जीवनदान देना है, अतः वह जीवन का दान करता है। (२) जीवन का सबसे प्रिय दुस्त्याज्य अन्नादि द्रव्य का दुष्कर त्याग करता है। (३) कर्मों की दीर्घस्थिति को ह्रस्व (अल्प) करता है। (४) दुष्ट कर्मद्रव्यों के संचय का, उसका त्याग करता है। (५) फिर अपूर्वकरण के द्वारा ग्रन्थिभेदरूप दुष्कर कार्य करता है। (६) इसके फलस्वरूप दुर्लभ–अनिवृत्तिकरणरूप दुर्लभ वस्तु को उपलब्ध (चय) करता है। (७) तत्पश्चात् बोधि का लाभ (चय) = उपार्जन = अनुभव करता है। (८) तदनन्तर परम्परा से सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होता है, यावत् समस्त कर्मों–दुःखों का अन्त (त्याग) कर देता है। *(वृत्ति, पत्रांक २८९)*

Elaboration—Interpreting the verb root *chayati*, the commentator (*Vritti*) has listed eight benefits to a *shramanopasak*—(1) Food and water sustain life and as such giving these is like bestowing life; thus he bestows life. (2) The most difficult thing to give up is food and water; thus he gives up things difficult to renounce. (3) He shortens the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

duration of long lasting *karmas*. (4) He gives up accumulating malignant *karmic* matter. (5) He then attains the unprecedented level of *Apurvakaran* (a *Gunasthaan*) and accomplishes the difficult task of terminating the bonds. (6) As a result of this he acquires (*chaya*) the rare status of *Anivrittikaran*. (7) After this he earns (*chaya*) and experiences enlightenment. (8) At last he gradually becomes *Siddha* (perfected), *buddha* (enlightened), *mukta* (liberated)... and so on up to... destroys (gives up) all *karmas* to end all miseries. (*Vritti*, leaf 289)

कर्मरहित जीव की गति **MOVEMENT OF A KARMA-FREE SOUL**

११. [प्र.] अत्थि णं भंते ! अकम्मस्स गती पण्णायति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

१२. [प्र.] कहं णं भंते ! अकम्मस्स गती पण्णायति ?

[उ.] गोयमा ! निस्संगयाए १ निरंगणयाए २ गतिपरिणामेणं ३ बंधणछेयणयाए ४ निरिंधणयाए ५ पुव्वपओगेणं ६ अकम्मस्स गती पण्णायति।

११. [प्र.] भगवन् ! क्या कर्मरहित जीव की गति होती है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! हाँ, अकर्म जीव की गति होती है।

१२. [प्र.] भगवन् ! अकर्म जीव की गति कैसे होती है ?

[उ.] गौतम ! निःसंगता से, नीरागता (निरंजनता) से, गतिपरिणाम से, बन्धन का छेद (विच्छेद) हो जाने से, निरिन्धनता–(कर्मरूपी ईंधन के अभाव में) होने से और पूर्व प्रयोग से कर्मरहित जीव की गति होती है।

11. [Q.] *Bhante* ! Does a *karma*-free soul have movement (*gati*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! A soul without *karma* has movement.

12. [Q.] *Bhante* ! How does a *karma*-free soul move ?

[Ans.] Gautam ! A *karma*-free soul moves due to non-association (*nihsangata*), detachment (*niraagata* or *niranjanata*), due to movement orientation (*gati parinaam*), destruction of bondage, absence of fuel of *karmas* (*nirindhanata*), and prior endeavour (*purva prayogata*).

१३. [प्र. १] कहं णं भंते ! निस्संगयाए १ निरंगणयाए २ गतिपरिणामेणं ३ बंधणछेयणयाए ४ निरिंधणयाए ५ पुव्वप्पओगेणं ६ अकम्मस्स गती पण्णायति ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे सुक्कं तुंबं निच्छिद्दं निरुवहयं आणुपुव्वीए परिकम्मेमाणे परिकम्मेमाणे दब्भेहि य कुसेहि य वेढेइ, वेढित्ता अट्ठहिं मट्टियालेवेहिं लिंपति, लिंपित्ता उण्हे दलयति, भूइं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भूइं सुक्कं समाणं अत्थाहमतारमपोरिसियंसि उदगंसि पक्खिवेज्जा, से नूणं गोयमा ! से तुंबे तेसिं अट्ठण्हं मट्टियालेवाणं गुरुयत्ताए भारियत्ताए सलिलतलमइवइत्ता अहे धरणितलपइट्ठाणे भवति ? हंता, भवति।

अहे णं से तुंबे तेसिं अट्ठण्हं मट्टियालेवाणं परिक्खएणं धरणितलमइवइत्ता उप्पिं सलिलतलपइट्ठाणे भवति ? हंता भवति। एवं खलु गोयमा ! निस्संगयाए निरंगणयाए गतिपरिणामेणं अकम्मस्स गती पण्णायति।

१३. [प्र. १] भगवन् ! निःसंगता से, नीरागता से, गतिपरिणाम से, बन्धन का छेद होने से, निरिन्धनता से और पूर्वप्रयोग से कर्मरहित जीव की गति कैसे होती है ?

[उ.] गौतम ! जैसे–कोई पुरुष एक छिद्ररहित और निरुपहत (बिना फटे–टूटे) सूखे तुम्बे पर क्रमशः परिकर्म (संस्कार) करता–करता उस पर डाभ (नारियल की जटा) और कुश लपेटे। फिर उस पर आठ बार मिट्टी के लेप लगा दे, फिर उसे (सूखने के लिए) धूप में रख दे। बार–बार (धूप में देने से) अत्यन्त सूखे हुए उस तुम्बे को अथाह, अतरणीय (जिस पर तैरा न जा सके), पुरुष–प्रमाण से भी अधिक जल में डाल दे, तो हे गौतम ! वह तुम्बा मिट्टी के उन आठ लेपों से अधिक भारी हो जाने से क्या पानी के उपरितल को छोड़कर नीचे पृथ्वीतल पर जा बैठता है ? (गौतम–) हाँ, भगवन् ! वह तुम्बा नीचे पृथ्वीतल पर जा बैठता है।

(भगवान ने पुनः पूछा–) गौतम ! (पानी में पड़ा रहने के कारण) आठों ही मिट्टी के लेपों के (गलकर) नष्ट हो जाने से क्या वह तुम्बा पृथ्वीतल को छोड़कर पानी के उपरितल पर आ जाता है ? (गौतम–) हाँ, भगवन् ! वह पानी के उपरितल पर आ जाता है। (भगवान–) हे गौतम ! इसी तरह निःसंगता (कर्ममल लेप हट जाने) से, नीरागता (रागरहित) से एवं गतिपरिणाम से कर्मरहित जीव की भी (ऊर्ध्व) गति होती जाती है।

13. [Q. 1] *Bhante* ! How does a *karma*-free soul move due to non-association (*nihsangata*), detachment (*niraagata* or *niranjanata*), due to movement orientation (*gati parinaam*), destruction of bondage, absence of fuel of *karmas* (*nirindhanata*), and prior endeavour (*purva prayogata*) ?

[Ans.] Gautam ! Suppose a person carefully anoints and wraps an intact (*nirupahat*) and dry gourd with coconut husk and grass. After that he plasters it eight times with clay and puts it in sun (to dry). He then throws that repeatedly dried (in sun) gourd in a more than man-height deep water-body difficult to cross. Now, Gautam ! Does that gourd weighed by eight layers of clay go below the surface of water and reach the bottom ? Yes, *Bhagavan* ! That gourd settles at the bottom.

(*Bhagavan* asked further—) Gautam ! When the eight layers of clay get destroyed (by dissolving into the water it is lying) does that gourd not

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

leave the bottom and come to the surface of water again ? (Gautam—) Yes, *Bhagavan* ! It returns to the surface. (*Bhagavan*—) Gautam ! In the same way on becoming free of *karmic* association (*nihsangata*) and attachment (*niraagata*), a *karma*-free soul moves upward due to its natural movement orientation (*gati parinaam*).

[प्र. २] कहं णं भंते ! बंधणछेदणत्ताए अकम्मस्स गती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए कलसिंबलिया इ वा, मुग्गसिंबलिया इ वा, माससिंबलिया इ वा, सिंबलिसिंबलिया इ वा, एरंडमिंजिया इ वा उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी फुडित्ताणं एगंतमंतं गच्छइ एवं खलु गोयमा !०।

[प्र. २] भगवन् ! बन्धन का छेद हो जाने से अकर्म (कर्ममुक्त) जीव की गति कैसे होती है ?

[उ.] गौतम ! जैसे–कोई मटर की फली, मूँग की फली, उड़द की फली, सेम की फली और एरण्ड के फल (बीज) को धूप में रखकर सुखाए तो सूख जाने पर वह फटता है और उसमें का बीज उछलकर दूर जा गिरता है, हे गौतम ! इसी प्रकार कर्मरूप बन्धन का छेद हो जाने पर कर्मरहित जीव की गति होती है।

[Q. 2] *Bhante* ! How does a *karma*-free soul move on destruction of bondage ?

[Ans.] Gautam ! When a pod of pea, green gram, *Urad* and beans or *Erand* fruit is put in sun to dry, it bursts and the seed is thrown out at a distance. In the same way when the bondage of *karma* is destroyed a *karma*-free soul move away.

[प्र. ३] कहं णं भंते ! निरिंधणयाए अकम्मस्स गती० ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए धूमस्स इंधणविप्पमुक्कस्स उड्ढं वीससाए निव्वाघाएणं गती पवत्तति एवं खलु गोयमा !०।

[प्र. ३] भगवन् ! ईंधनरहित होने (निरिन्धनता) से कर्मरहित जीव की गति किस प्रकार होती है ?

[उ.] गौतम ! जैसे–ईंधन से छूटे हुए धुएँ की गति किसी प्रकार की रुकावट न हो तो स्वाभाविक रूप से ऊपर की ओर होती है, इसी प्रकार, हे गौतम ! कर्मरूप ईंधन से रहित होने से कर्मरहित जीव की गति (ऊपर की ओर) होती है।

13. [Q. 3] *Bhante* ! How does a *karma*-free soul move in absence of fuel of *karmas* (*nirindhanata*) ?

[Ans.] Gautam ! When smoke emanating from a (burning) fuel naturally moves upwards in absence of any obstruction. In the same way,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-९

Illustration No. 9

कर्मरहित जीव की ऊर्ध्वगति कैसे ?

कर्मरहित जीव ऊर्ध्वगति में कैसे जाता है ? इसके छह हेतु हैं-१. निःसंगता-निर्लेप होने से, २. नीरागता-मोह मुक्त हो जाने से, ३. गतिपरिणाम-जीव का ऊर्ध्वगमन स्वभाव होने के कारण, ४ बंध छेद-गति में बन्धन या रुकावट हट जाने पर, ५. निरिन्धनता-ईंधन का अभाव होने से, ६. पूर्व प्रयोग-पहले किये गये प्रयत्न की संप्रेषणता बनी रहने से।

उदाहरण-१., २., ३. किसी ने एक अखण्ड सूखा तुम्बा लेकर उस पर नारियल की जटा तथा कुश सूखी घास लपेटी। फिर उस पर आठ बार मिट्टी का लेप लगाकर धूप में सुखाया। सूखने पर उसे गहरे जल में डुबो दिया। मिट्टी आदि के लेप से भारी तुम्बा जल में डूब गया। फिर धीरे-धीरे ज्यों ज्यों मिट्टी के लेप हटते गये, तुम्बा हल्का होकर स्वतः ऊपर उठता गया। इसी प्रकार कर्ममल का लेप हटने से, भोगासक्ति कम होने से तथा हल्की वस्तुएँ ऊपर उठने का स्वभाव होने के कारण आत्मा ऊर्ध्वगमन करता है।

४. बंधच्छेद-मूँग की फली, (अथवा एरण्ड व सेम आदि की फली) सूख जाने पर अपने आप फट जाती है और उसका बीज (दाना) उछलकर बाहर आ जाता है।

५. निरिन्धनता-ईंधन जलने पर धुआँ हल्का होने से स्वभावतः ऊपर उठता है।

६. पूर्व प्रयोग-किसी ने पूरी ताकत लगाकर बाण छोड़ा तो धनुष से छूटा बाण बिना रुके अपने लक्ष्य तक पहुँच जाता है। अथवा कुम्हार ने दण्डे से चाक घुमाकर छोड़ दिया तब भी बहुत देर तक वह पूर्व-प्रयोग वश स्वतः घूमता रहता है। इसी प्रकार कर्मरहित जीव शरीर का बंधन छूट जाने से ऊर्ध्वगमन करता है।

-शतक ७, उ. १, सूत्र ११

UPWARD MOVEMENT OF KARMA-FREE SOUL

There are six reasons for the upward movement of karma-free—(1) **Nihsangata**—non-association, (2) **Niraagata**—absence of attachment or fondness, (3) **Gati parinaam**—upward movement orientation, (4) **Bandhachhed**—destruction of bondage or obstruction, (5) **Nirindhanata**—absence of fuel, and (6) **Purva prayogata**—inertia of prior endeavour.

Examples—1, 2, 3. A person anoints and wraps an intact and dry gourd with coconut husk and grass. After that he plasters it eight times with clay and puts it in sun (to dry). He then throws it in a deep water body. That gourd weighed by layers of clay submerges in the water. When the layers of clay dissolve into the water, it gradually rises to the surface. In the same way on becoming free of karmic association and attachment, a karma-free soul moves upward due to its natural upward movement orientation.

4. Bandhachhed—When a pod of pea, green gram, Udad and beans or Erand fruit is put in sun to dry, it bursts and the seed is thrown out at a distance.

5. Nirindhanata—Smoke emanating from a (burning) fuel naturally moves upwards in absence of any obstruction.

6. Purva prayogata—An arrow launched from a bow rushes towards the target in absence of an obstructions. Also a potter's wheel continues to rotate even after the hand stops moving it. In the same way a karma-free soul moves with the force of prior endeavour when free of the bondage of its body.

—Shatak-7, lesson-1, Sutra-11

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Gautam ! Getting free from the fuel of *karmas* a *karma*-free soul naturally moves upwards.

[प्र. ४] कहं णं भंते ! पुव्वप्पयोगेणं अकम्मस्स गती पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! से जहानामए कंडस्स कोदंडविप्पमुक्कस्स लक्खाभिमुही निव्वाघाएणं गती पवत्तति एवं खलु गोयमा ! नीसंगयाए निरंगणयाए पुव्वप्पयोगेणं अकम्मस्स गती पण्णत्ता।

[प्र. ४] भगवन् ! पूर्वप्रयोग से कर्मरहित जीव की गति किस प्रकार होती है ?

[उ.] गौतम ! जैसे–धनुष से छूटे हुए बाण की गति बिना किसी रुकावट के लक्ष्याभिमुखी (निशाने की ओर) होती है, इसी प्रकार, हे गौतम ! पूर्वप्रयोग से कर्मरहित जीव की गति होती है। इसीलिए हे गौतम ! ऐसा कहा गया कि निःसंगता से, नीरागता से यावत् पूर्वप्रयोग से कर्मरहित जीव की (ऊर्ध्व) गति होती है।

[Q. 4] *Bhante* ! How does a *karma*-free soul move due to prior endeavour (*purva prayogata*) ?

[Ans.] Gautam ! An arrow launched from a bow rushes towards the target without any obstructions. In the same way, Gautam ! A *karma*-free soul moves with the force of prior endeavour. That is why, Gautam ! it is said that a *karma*-free soul moves (upwards) due to non-association, detachment... and so on up to... prior endeavour.

विवेचन : जैनदर्शन आत्मा को शरीरव्यापी मानता है, तथा कर्ममुक्त होने पर ऊर्ध्वगति स्वभाव वाला भी। पुद्गल की स्वाभाविक गति नीचे की ओर होती है तथा आत्मा (जीव) ऊर्ध्वगति स्वभाव वाला है। कर्म संयोग से जीव नीची, तिरछी व ऊँची गति में जाता है। किन्तु आत्मा की स्वाभाविक गति, ऊर्ध्वगति है। प्रस्तुत सूत्र में आत्मा (कर्ममुक्त जीव) की ऊर्ध्वगति के छह कारण बताये हैं–(१) **निःसंगता**–कर्मों से निर्लेपता मिट्टी के लेप से रहित तुम्बे की तरह। (२) **नीरागता**–मोह (राग) रहितता। (३) **गतिपरिणाम**–जिस प्रकार दीपशिखा स्वभाव से ऊपर की ओर गमन करती है, वैसे ही मुक्त (कर्मरहित) आत्मा भी जीव के ऊर्ध्वगति स्वभाव होने से ऊपर की ओर ही गति करता है। (तत्त्वार्थ राज. १०/६) (४) **बन्धछेद**–जिस प्रकार बीजकोष के बन्धन के टूटने से एरण्ड आदि की फली के बीज की ऊर्ध्वगति देखी जाती है, वैसे ही मुक्त जीव की ऊर्ध्वगति जानी जाती है। (५) **निरिन्धनता**–जैसे ईंधन से रहित होने से धुँआ स्वभावतः ऊपर की ओर गति करता है, वैसे ही कर्मरूप इन्धन से रहित अकर्म जीव की स्वभावतः ऊर्ध्वगति होती है। (६) **पूर्वप्रयोग**–धनुष से छूटे हुए बाण की निराबाध लक्ष्याभिमुख गति का दृष्टान्त सूत्र में दिया गया है। दूसरा दृष्टान्त (तत्त्वार्थ राज.) यह भी है–जैसे कुम्हार के प्रयोग से किया गया हाथ, दण्ड और चक्र के संयोगपूर्वक जो चाक घूमता है, वह चाक उस प्रयत्न के बन्द होने पर भी पूर्वप्रयोगवश संस्कारक्षय होने तक घूमता है, इसी प्रकार संसारस्थित आत्मा ने मोक्ष प्राप्ति के लिए जो अनेक बार प्रणिधान (प्रयत्न) किया है, उसका अभाव होने पर भी उसके आवेशपूर्वक मुक्त जीव का गमन निश्चित होता है। *(वृत्ति, पत्रांक २९०, देखो संलग्न चित्र)*

Elaboration—Jain philosophy believes that although soul is confined in a body, it has a tendency to move upwards when free of *karmic* bondage. The natural movement of matter is downward and that of soul

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

is upwards. It is due to the association with *karmas* that a soul moves in all directions including downwards, transverse and upwards. But the natural direction of movement of soul is upwards. In this aphorism six reasons for the upward movement of *karma*—infested soul have been discussed—(1) *Nihsangata* (non-association)—absence of any association with *karmas* like a clean gourd not plastered with clay. (2) *Niraagata* (detachment)—absence of attachment or fondness. (3) *Gati parinaam*—(movement orientation)—As the flame of a lamp always moves upwards, so does a liberated soul (from bondage of *karmas*) tends to move upwards (*Tattvarth Rajavartika* 10/6). (4) *Bandhachhed* (destruction of bondage)—As the seeds of *Erand* fruit are thrown upwards when its pod breaks, likewise soul moves upwards when its bondage of *karmas* is shattered. (5) *Nirindhanata* (absence of fuel)—When fuel is consumed the smoke moves upwards in the same way free from of the fuel of *karmas*, the soul naturally moves upwards. (6)—*Purva prayogata* (prior endeavour)—An arrow launched from a bow rushes unobstructed towards the target , in the same way, *karma*-free soul moves with the force of prior endeavour. Another example of this is the continuing movement of a potter's wheel even after the hand stops moving it. The movement is due to the prior effort. In the same way a mundane soul moves towards liberation due to the prior efforts made during past numerous births even in absence of efforts at the present time. (*Vritti*, leaf 290) (see illustration).

दुःख की स्पृष्टता TOUCH OF MISERY

१४. [प्र.] दुक्खी भंते ! दुक्खेणं फुडे ? अदुक्खी दुक्खेणं फुडे ?

[उ.] गोयमा ! दुक्खी दुक्खेणं फुडे, नो अदुक्खी दुक्खेणं फुडे।

१४. [प्र.] भगवन् ! क्या दुःखी जीव (कर्मसहित जीव) दुःख से स्पृष्ट (बद्ध या व्याप्त) होता है अथवा अदुःखी (कर्मरहित) जीव दुःख से स्पृष्ट होता है ?

[उ.] गौतम ! दुःखी जीव ही दुःख से स्पृष्ट होता है, किन्तु अदुःखी (दुःखरहित) जीव दुःख से स्पृष्ट नहीं होता।

14. [Q.] *Bhante* ! Is a miserable *jiva* (karma infested soul) touched (bound or overwhelmed) by misery ? Or a non-miserable *jiva* (*karma*-free soul) touched (bound or overwhelmed) by misery ?

[Ans.] Gautam ! Only a miserable *jiva* (*karma* infested soul) is touched (bound or overwhelmed) by misery and not a non-miserable *jiva* (*karma*-free soul).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१५. [प्र. १] दुक्खी भंते ! नेरइए दुक्खेणं फुडे ? अदुक्खी नेरइए दुक्खेणं फुडे ?

[उ.] गोयमा ! दुक्खी नेरइए दुक्खेणं फुडे, नो अदुक्खी नेरइए दुक्खेणं फुडे। [२] एवं दंडओ जाव वेमाणियाणं। [३] एवं पंच दंडगा नेयव्वा—दुक्खी दुक्खेणं फुडे १ दुक्खी दुक्खं परियायइ २ दुक्खी दुक्खं उदीरेइ ३ दुक्खी दुक्खं वेदेइ ४ दुक्खी दुक्खं निज्जरेइ ५।

१५. [प्र. १] भगवन् ! क्या दुःखी नैरयिक दुःख से स्पृष्ट होता है या अदुःखी नैरयिक दुःख से स्पृष्ट होता है ?

[उ.] गौतम ! दुःखी नैरयिक ही दुःख से स्पृष्ट होता है, अदुःखी नैरयिक दुःख से स्पृष्ट नहीं होता। [२] इसी तरह वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डकों में कहना चाहिए। [३] इसी प्रकार के पाँच दण्डक (आलापक) कहने चाहिए, यथा–(१) दुःखी दुःख से स्पृष्ट होता है, (२) दुःखी दुःख का परिग्रहण करता है, (३) दुःखी दुःख की उदीरणा करता है, (४) दुःखी दुःख का वेदन करता है, और (५) दुःखी दुःख की निर्जरा करता है।

15. [Q.] *Bhante* ! Is a miserable infernal being touched (bound or overwhelmed) by misery ? Or a non-miserable infernal beings touched (bound or overwhelmed) by misery ?

[Ans.] Gautam ! Only a miserable infernal being is touched (bound or overwhelmed) by misery and not a non-miserable one. [2] The same should be repeated for all twenty four *Dandaks* (places of suffering) including *Vaimanik*. [3] In the same way five statements should be mentioned—(1) The miserable is touched (*sprisht*) by misery. (2) The miserable acquires (*parigrahan*) misery. (3) The miserable fructifies (*udirana*) misery. (4) The miserable suffers (*vedan*) misery. (5) The miserable sheds (*nirjara*) misery.

अनगार को साम्परायिकी क्रिया SAMPARAYIKI KRIYA OF AN ASCETIC

१६. [प्र. १] अणगारस्स णं भंते ! अणाउत्तं गच्छमाणस्स वा, चिट्ठमाणस्स वा, निसीयमाणस्स वा, तुयट्टमाणस्स वा; अणाउत्तं वत्थं पडिग्गहं कंबलं पादपुंछणं गेण्हमाणस्स वा, निक्खिवमाणस्स वा, तस्स णं भंते ! किं इरियावहिया किरिया कज्जइ ? संपराइया किरिया कज्जइ ?

[उ.] गोयमा ! नो ईरियावहिया किरिया कज्जइ, संपराइया किरिया कज्जइ।

१६. [प्र. १] भगवन् ! उपयोगरहित गमन करते हुए, खड़े होते (ठहरते) हुए, बैठते हुए, या सोते हुए और इसी प्रकार बिना उपयोग के वस्त्र, पात्र, कम्बल और पादप्रोंछन (प्रमार्जनिका या रजोहरण) ग्रहण करते (उठाते) हुए या रखते हुए अनगार को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है अथवा साम्परायिकी क्रिया लगती है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! ऐसे (पूर्वोक्त) अनगार को ऐर्यापथिक क्रिया नहीं लगती, साम्परायिक क्रिया लगती है।

16. [Q. 1] *Bhante* ! When an ascetic moves, stands, sits or sleeps without *upayog* (careful application of knowledge) and also handles clothes, pots, blanket and ascetic-broom in the same way, is he liable of involvement in *Airyapathiki kriya* (careful movement of an accomplished ascetic or an omniscient with non-vitiating *karmas*) or *Samparayiki kriya* (activity inspired by association and passions and leading to *karmic* bondage) ?

[Ans.] Gautam ! Such an ascetic is liable of involvement in *Samparayiki kriya* and not in *Airyapathiki kriya.*

[प्र. २] से केणट्ठेणं० ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं कोह–माण–माया–लोभा वोच्छिन्ना भवंति तस्स णं इरियावहिया किरिया कज्जति, नो संपराइया किरिया कज्जति। जस्स णं कोह–माण–माया–लोभा अवोच्छिन्ना भवंति तस्स णं संपराइया किरिया कज्जति, नो इरियावहिया। अहासुत्तं रियं रीयमाणस्स इरियावहिया किरिया कज्जति। उस्सुत्तं रीयमाणस्स संपराइया किरिया कज्जति, से णं उस्सुत्तमेव रियति। से तेणट्ठेणं०।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जिस जीव के क्रोध, मान, माया और लोभ व्युच्छिन्न (उदयावस्थारहित अथवा क्षीण) हो गए, उसी को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, उसे साम्परायिकी क्रिया नहीं लगती। किन्तु जिस जीव के क्रोध, मान, माया और लोभ (ये चारों) व्युच्छिन्न नहीं हुए, उसको साम्परायिकी क्रिया लगती है, ऐर्यापथिकी क्रिया नहीं लगती। सूत्र (आगम) के अनुसार प्रवृत्ति करने वाले अनगार को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है और उत्सूत्र प्रवृत्ति करने वाले अनगार को साम्परायिकी क्रिया लगती है। उपयोगरहित गमनादि प्रवृत्ति करने वाला अनगार, सूत्रविरुद्ध प्रवृत्ति करता है। हे गौतम ! इस कारण से उसे साम्परायिकी क्रिया लगती है।

16. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it so ?

[Ans.] Gautam ! Only that soul whose anger, conceit, deceit and greed are free of the state of fruition or have been destroyed (*vyuchchhinn*) is liable of involvement in *Airyapathiki kriya* but not in *Samparayiki kriya*. But the soul whose anger, conceit, deceit and greed are not free of the state of fruition or have not been destroyed is liable of involvement in *Samparayiki kriya* but not in *Airyapathiki kriya*. An ascetic who acts according to *Sutra* (*Agam*) is liable of involvement in *Airyapathiki kriya* and an ascetic who acts contrary to *Sutra* (*Agam*) is liable of involvement in *Samparayiki kriya*. An ascetic indulging in movement and other

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

activities without *upayog* (careful application of knowledge) acts contrary to *Sutra* (*Agam*). Gautam ! That is why he is liable of involvement in *Samparayiki kriya*.

विवेचन : प्रस्तुत सूत्र में **'अहासुत्तं'** का विशेष अर्थ है–११वें से १३वें गुणस्थानवर्ती यथाख्यात चारित्री अनगार तथा **'उत्सूत्र'** का अर्थ है–यथाख्यात चारित्र के विपरीत प्रवृत्ति करना।

Elaboration—In this aphorism the term *ahasuttam* (according to *Agams*) has a special meaning that points at the ascetics at the level of 11 to 13 *Gunasthaans* and follow *Yathakhyat chaaritra* (conduct conforming to perfect purity). And *utsutra* means acting contrary to the same.

अंगारादि दोषयुक्त पान–भोजन **FAULTY FOOD**

१७. [प्र.] अह भंते ! सइंगालस्स सधूमस्स संजोयणादोसदुट्ठस्स पाणभोयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जं असण–पाण–खाइम–साइमं पडिगाहित्ता मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववन्ने आहारं आहारेइ एस णं गोयमा ! सइंगाले पाण–भोयणे। जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जं असण–पाण–खाइम–साइमं पडिगाहित्ता महयाअप्पत्तियं कोहकिलामं करेमाणे आहारमाहारेइ एस णं गोयमा ! सधूमे पाणभोयणे। जे णं निग्गंथे वा २ जाव पडिग्गाहित्ता गुणुप्पायणहेतुं अन्नदव्वेणं सद्धिं संजोएत्ता आहारमाहारेइ एस णं गोयमा ! संजोयणादोसदुट्ठे पाण–भोयणे। एस णं गोयमा ! सइंगालस्स सधूमस्स संजोयणादोसदुट्ठस्स पाण–भोयणस्स अट्ठे पण्णत्ते।

१७. [प्र.] भगवन् ! अंगारदोष, धूमदोष और संयोजनादोष से दूषित पान–भोजन (आहार–पानी) का क्या अर्थ कहा है ?

[उ.] गौतम ! जो निर्ग्रन्थ अथवा निर्ग्रन्थी प्रासुक और एषणीय अशन–पान–खादिम–स्वादिम रूप आहार ग्रहण करके उसमें मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और आसक्त (मोह में एकाग्रचित्त) होकर आहार करते हैं, हे गौतम ! यह **अंगार–दोष** से दूषित आहार–पानी कहलाता है। जो निर्ग्रन्थ अथवा निर्ग्रन्थी, प्रासुक और एषणीय अशन–पान–खादिम–स्वादिम रूप आहार ग्रहण करके, उसके प्रति अत्यन्त अप्रीतिपूर्वक, क्रोध से खिन्नता करते हुए आहार करते हैं, तो हे गौतम ! यह **धूम–दोष** से दूषित आहार–पानी कहलाता है। जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी प्रासुक यावत् आहार ग्रहण करके गुण (स्वाद) उत्पन्न करने हेतु दूसरे पदार्थों के साथ संयोग करके आहार–पानी करते हैं, हे गौतम ! वह आहार–पानी **संयोजनादोष** से दूषित कहलाता है। हे गौतम ! यह अंगारदोष, धूमदोष और संयोजनादोष से दूषित पान–भोजन का अर्थ कहा है।

17. [Q.] *Bhante* ! What is the meaning of food and drink with these faults—*angaar dosh*, *dhoom dosh* and *samyojana dosh* ?

[Ans.] Gautam ! When a male or female ascetic collects pure (*prasuk*) and prescribed (*eshaniya*) staple food, liquids, general food, and savoury

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

food (*ashan, paan, khadya, svadya*), and while eating gets fond of (*murchhit*), infatuated with (*griddha*), captivated by (*baddha*) and obsessed with (*aasakt*) that food, then Gautam ! that food is said to have the fault called *angaar dosh*. When a male or female ascetic collects pure (*prasuk*) and prescribed (*eshaniya*) staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), and while eating, gets dissatisfied, angry and irritated with that food, then Gautam ! that food is said to have the fault called *dhoom dosh*. When a male or female ascetic collects pure (*prasuk*)... and so on up to... savoury food, and while eating, mixes enriching (taste etc.) ingredients with that food, then Gautam ! that food is said to have the fault called *samyojana dosh*. Gautam ! This is the meaning of food and drink with these faults—*angaar dosh, dhoom dosh and samyojana dosh*.

१८. [प्र.] अह भंते ! वीतिंगालस्स वीयधूमस्स संजोयणादोसविप्पमुक्कस्स पाण-भोयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जे णं णिग्गंथे वा २ जाव पडिगाहेत्ता अमुच्छिए जाव आहारेइ एस णं गोयमा ! वीतिंगाले पाण-भोयणे। जे णं निग्गंथे वा २ जाव पडिगाहेत्ता णो महयाअप्पत्तियं जाव आहारेइ, एस णं गोयमा ! वीतधूमे पाण-भोयणे। जे णं निग्गंथे वा २ जाव पडिगाहेत्ता जहा लद्धं तहा आहारं आहारेइ एस णं गोयमा ! संजोयणादोसविप्पमुक्के पाण-भोयणे। एस णं गोयमा ! वीतिंगालस्स वीतधूमस्स संजोयणादोसविप्पमुक्कस्स पाण-भोयणस्स अट्ठे पण्णत्ते।

१८. [प्र.] भगवन् ! अंगारदोष, धूमदोष और संयोजनादोष; इन तीन दोषों से मुक्त पान-भोजन का क्या अर्थ कहा है ?

[उ.] गौतम ! जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी प्रासुक और एषणीय अशन-पान-खादिम-स्वादिम रूप चतुर्विध आहार को ग्रहण करके मूर्च्छारहित यावत् आसक्तिरहित होकर आहार करते हैं, हे गौतम ! यह **अंगारदोषरहित** पान-भोजन कहलाता है। जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी यावत् अशनादि को ग्रहण करके अत्यन्त अप्रीतिपूर्वक यावत् आहार नहीं करता है, हे गौतम ! यह धूम दोषरहित पान-भोजन है। जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी यावत् अशनादि को ग्रहण करके, जैसा मिला है, वैसा ही आहार कर लेते हैं (दूसरे पदार्थों का संयोग नहीं करते), तो हे गौतम ! यह **संयोजनादोषरहित** पान-भोजन कहलाता है। हे गौतम ! यह अंगारदोषरहित, धूमदोषरहित एवं संयोजनादोषविमुक्त पान-भोजन का अर्थ कहा गया है।

18. [Q.] *Bhante* ! What is the meaning of food and drink without these faults—*angaar dosh, dhoom dosh and samyojana dosh* ?

[Ans.] Gautam ! When a male or female ascetic collects pure (*prasuk*) and prescribed (*eshaniya*) staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), and while eating, does not get fond

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of (murchhit), infatuated with (*griddha*), captivated by (*baddha*) and obsessed with (*aasakt*) that food, then Gautam ! that food is said to be free of the fault called *angaar dosh*. When a male or female ascetic collects pure (*prasuk*) and prescribed (*eshaniya*) staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), and while eating, does not get dissatisfied, angry and irritated with that food, then Gautam ! that food is said to be free of the fault called *dhoom dosh*. When a male or female ascetic collects pure (*prasuk*)... and so on up to... savoury food, and while eating does not mix enriching (taste etc.) ingredients with that food, then Gautam ! that food is said to be free of the fault called *samyojana dosh*. Gautam ! This is the meaning of food and drink without these faults—*angaar dosh, dhoom dosh and samyojana dosh.*

१९. [प्र.] अह भंते ! खेत्तातिक्कंतस्स कालातिक्कंतस्स मग्गातिक्कंतस्स पमाणातिक्कंतस्स पाणभोयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते?

[उ.] गोयमा ! (१) जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जं असण–पाण–खाइम–साइमं अणुग्गते सूरिए पडिग्गाहित्ता उग्गते सूरिए आहारं आहारेति एस णं गोतमा ! खेत्तातिक्कंते पाण–भोयणे।

(२) जे णं निग्गंथे वा २ जाव० साइमं पढमाए पोरिसीए पडिगाहेत्ता पच्छिमं पोरिसिं उवायणावेत्ता आहारं आहारेति एस णं गोयमा ! कालातिक्कंते पाण–भोयणे।

(३) जे णं निग्गंथे वा २ जाव० सातिमं पडिगाहित्ता परं अद्धजोयणमेराए वीतिक्कमावेत्ता आहारमाहारेति एस णं गोयमा ! मग्गातिक्कंते पाण–भोयणे।

(४) जेणं निग्गंथे वा निग्गंथी वा फासुएसणिज्जं जाव सातिमं पडिगाहित्ता परं बत्तीसाए कुक्कुडिअंडगप्पमाणेत्ताणं कवलाणं आहारमाहारेति एस णं गोतमा ! पमाणातिक्कंते पाण–भोयणे।

अट्ठकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे अप्पाहारे, दुवालसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे अवड्ढोमोयरिया, सोलसकुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे दुभागप्पत्ते, चउव्वीसं कुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते जाव आहारमाहारेमाणए ओमोदरिया, बत्तीसं कुक्कुडिअंडगप्पमाणमेत्ते कवले आहारमाहारेमाणे पमाणपत्ते, एत्तो एक्केण वि गासेणं ऊणगं आहारमाहारेमाणे समणे निग्गंथे नो पकामरसभोई इति वत्तव्वं सिया। एस णं गोयमा ! खेत्तातिक्कंतस्स कालातिक्कंतस्स मग्गातिक्कंतस्स पमाणातिक्कंतस्स पाण–भोयणस्स अट्ठे पण्णत्ते।

१९. [प्र.] भगवन् ! (१) क्षेत्रातिक्रान्त, (२) कालातिक्रान्त, (३) मार्गातिक्रान्त, और (४) प्रमाणातिक्रान्त पान–भोजन का क्या अर्थ है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! (१) जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी, प्रासुक और एषणीय अशन-पान-खादिम-स्वादिम रूप चतुर्विध आहार को सूर्योदय से पूर्व ग्रहण करके सूर्योदय के पश्चात् उस आहार को सेवन करते हैं, हे गौतम ! यह **क्षेत्रातिक्रान्त** पान-भोजन कहलाता है।

(२) जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी यावत् चतुर्विध आहार को प्रथम प्रहर में ग्रहण करके अन्तिम प्रहर तक रखकर सेवन करते हैं, हे गौतम ! यह **कालातिक्रान्त** पान-भोजन कहलाता है।

(३) जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी यावत् चतुर्विध आहार को ग्रहण करके आधे योजन (दो कोस) की मर्यादा (सीमा) का उल्लंघन करके खाते हैं, हे गौतम ! यह **मार्गातिक्रान्त** पान-भोजन कहलाता है।

(४) जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी प्रासुक एवं एषणीय यावत् आहार को ग्रहण करके **कुक्कुटीअण्डक** (मुर्गी के अण्डे के) प्रमाण बत्तीस कवल (कौर या ग्रास) की मात्रा से अधिक (उपरान्त) आहार करता है, तो हे गौतम ! यह **प्रमाणातिक्रान्त** पान-भोजन कहलाता है।

कुक्कुटी-अण्डे जितने आठ कवल का आहार करने वाला साधु **'अल्पाहारी'** कहलाता है। कुक्कुटी-अण्डे जितने बारह कवल का आहार करने वाला साधु **अपार्द्ध अवमोदरिका** (किंचित् न्यून अर्ध ऊनोदरी) वाला होता है। कुक्कुटी-अण्डे जितने सोलह कवल का आहार करने वाला साधु **द्विभागप्राप्त** आहार वाला (अर्धाहारी) कहलाता है। कुक्कुटी-अण्डे जितने चौबीस कवल का आहार करने वाला साधु **ऊनोदरिका** वाला होता है। कुक्कुटी-अण्डे जितने बत्तीस कवल का आहार करने वाला साधु **प्रमाणप्राप्त** (प्रमाणोपेत) आहारी कहलाता है। इस (बत्तीस कवल) से एक भी ग्रास कम आहार करने वाला श्रमणनिर्ग्रन्थ **'प्रकामरसभोजी'** (अत्यधिक मधुरादि रसभोक्ता) नहीं है, यह कहा जा सकता है। हे गौतम ! यह क्षेत्रातिक्रान्त, कालातिक्रान्त, मार्गातिक्रान्त और प्रमाणातिक्रान्त पान-भोजन का अर्थ कहा है।

19. [Q.] *Bhante* ! What is the meaning of taking food and drink with following transgressions—(1) *Kshetratikrant* (transgression related to movement of the sun). (2) *Kaalatikrant* (transgression related to time). (3) *Maargatikrant* (transgression related to distance). (4) *Pramanatikrant* (transgression related to quantity).

[Ans.] Gautam ! (1) Suppose a male or female ascetic collects pure (*prasuk*) and prescribed (*eshaniya*) staple food, liquids, general food, and savoury food (*ashan, paan, khadya, svadya*), before sunrise and eats it after sunrise. Gautam ! This is called eating and drinking with the fault of transgression of prescribed code related to the movement of the sun (*Kshetratikrant paan-bhojan*).

(2) Suppose a male or female ascetic collects pure (*prasuk*)... and so on up to... savoury food during the first quarter of the day and eats it during the last quarter of the day. Gautam ! This is called eating and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

drinking with the fault of transgression of prescribed code related to time (*Kaalatikrant paan-bhojana*).

(3) Suppose a male or female ascetic collects pure (*prasuk*)... and so on up to... savoury food at a place and eats it after crossing the prescribed limit of walking half a *Yojan* (four miles) distance. Gautam ! This is called eating and drinking with the fault of transgression of prescribed code related to distance (*Maargatikrant paan-bhojana*).

(4) Suppose a male or female ascetic collects pure (*prasuk*)... and so on up to... savoury food and eats a quantity more than thirty two morsels, each more than the size of hen's egg (*kukkuti andak*). Gautam ! This is called eating and drinking with the fault of transgression of prescribed code related to quantity (*Pramanatikrant paan-bhojana*).

An ascetic who eats a quantity equivalent to eight morsels of the size of hen's egg is called *Alpahaari* (one who eats very little). An ascetic who eats a quantity equivalent to twelve morsels of the size of hen's egg is called *Apardha Avamodarika* (eating a little less than half *Unodari*). An ascetic who eats a quantity equivalent to sixteen morsels of the size of hen's egg is called *Dvibhaag-prapt* (eating half the standard quantity). An ascetic who eats a quantity equivalent to twenty four morsels of the size of hen's egg is called *Unodaarika* (eating less than the standard quantity) observer. An ascetic who eats a quantity equivalent to thirty two morsels of the size of hen's egg is called *Pramaan-prapt* (eating standard quantity). An ascetic who eats a quantity even one morsel less than this thirty two morsels of the size of hen's egg cannot be called *Prakamarasabhoji* (one who eats very sweet and rich food). Gautam ! This is the meaning of taking food and drink with transgressions like *Kshetratikrant*, *Kaalatikrant*, *Maargatikrant* and *Pramanatikrant*.

शस्त्रातीत आदि दोष FAULTS INCLUDING SHASTRATEET

२०. [प्र.] अह भंते ! सत्थातीतस्स सत्थपरिणामितस्स एसियस्स वेसियस्स सामुदाणियस्स पाण–भोयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! जे णं निग्गंथे वा निग्गंथी वा निक्खित्तसत्थमुसले ववगयमाला–वण्णगविलेवणे ववगयचुय–चइय–चत्तदेहं जीव–वप्पजढं अकयंअकारियंअसंप्पियंअणाहूयंमकीयकडंअणुदिट्ठं नवकोडी–परिसुद्धं दसदोसविप्पमक्कं उग्गम–उप्पायणेसणासुपरिसुद्धं वीतिंगालं वीतधूमं संजयोणादोस–विप्पमुक्कं असुरसुरं अचवचवं अदुतमविलंबितं अपरिसाडिं अक्खोवंजण–वणाणुलेवणभूयं संयमजाया मायावत्तियं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संजमभारवहणट्ठयाए बिलमिव पन्नगभूएणं अप्पाणेणं आहारमाहारेति; एस णं गोयमा ! सत्थातीतस्स सत्थपरिणामितयस्स जाव पाण–भोयणस्स अट्ठे पन्नत्ते।

॥ सत्तम सए : पढमो उद्देसो समत्तो ॥

२०. [प्र.] भगवन् ! **शस्त्रातीत** (अग्नि से पका हुआ), **शस्त्रपरिणामित** (अचित्त किया हुआ), एषित, व्येषित, (मुनिवेश के कारण प्राप्त) सामुदायिक भिक्षारूप पान–भोजन का क्या अर्थ है ?

[उ.] गौतम ! जो निर्ग्रन्थ या निर्ग्रन्थी शस्त्र (चाकू आदि) और मूसलादि का प्रयोग न करने वाले है। पुष्प–माला और चन्दनादि के विलेपन से रहित हैं, वे यदि उस आहार को करते हैं, जो (भोज्य वस्तु में पैदा होने वाले) कृमि आदि जन्तुओं से रहित, जीवच्युत और जीवविमुक्त (प्रासुक) है, जो साधु के लिए नहीं बनाया गया है, न बनवाया गया है, जो **असंकल्पित**–(आधाकर्मादि दोषरहित) है, **अनाहूत**–(आमंत्रणरहित) है, **अक्रीतकृत**–(नहीं खरीदा हुआ) है, **अनुद्दिष्ट**–(औद्देशिक दोष से रहित) है, **नवकोटिविशुद्ध** है, (शंकित आदि) दस दोषों से विमुक्त है, **उद्गम** (१६ उद्गम–दोष) और **उत्पादना** (१६ उत्पादन सम्बन्धी) एषणा दोषों से रहित परिशुद्ध है, अंगारदोषरहित है, धूमदोषरहित है, संयोजनादोषरहित है। तथा जो 'सुरसुर' और 'चपचप' शब्द नहीं करते हुए बहुत शीघ्रता और अत्यन्त विलम्ब से रहित, आहार का लेशमात्र भी छोड़े बिना, भूमि पर नहीं गिराते हुए, गाड़ी की धुरी के अंजन अथवा घाव पर लगाये जाने वाले लेप (मल्हम) की तरह केवल संयमयात्रा के निर्वाह के लिए और संयम–भार को वहन करने के उद्देश्य से जिस प्रकार सर्प बिल में (सीधा) प्रवेश करता है, उसी प्रकार (सहजता व सरलतापूर्वक) जो आहार करते हैं, तो हे गौतम ! वह शस्त्रातीत, शस्त्रपरिणामित, एषित, वेशित और सामुदायिक पान–भोजन का अर्थ है।

'हे भगवन् ! यह इस प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है' (यों कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरते हैं)।

20. [Q.] *Bhante* ! What is the meaning of taking food and drink with following qualities—*Shastrateet* (cooked in fire), *Shastraparinanamit* (made life-less), *Eshit* (suitable for an ascetic), *Vyeshit* (offered due to ascetic garb), *Saamudayik* (collected from various houses) ?

[Ans.] Gautam ! Suppose there is a male or female ascetic (*nirgranth* or *nirgranthi*) who does not use a weapon (knife etc.) or mace etc., does not have flowers or garlands and does not apply any fragrant paste like sandal-wood. He or she takes food that is free or made free of any insect or other living organism, that conforms to the code of purity prescribed for an ascetic (*prasuk*), that has neither been cooked or got cooked for an ascetics, that is not predetermined (free of faults like *Aadhaakarma*), that is not an outcome of an invitation (*anaahoot*), that is neither bought (*akritakrit*) nor meant (*anuddisht*) for an ascetic, that has nine purities

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*navakoti vishuddha*), that is free of ten faults including doubtful, that is free of faults of exploring related to origin (sixteen faults of *udgam*) and production (sixteen faults of *utpadan*), that is free of any contamination, and that is free of (aforesaid) faults like *Angaar-dosh*, *Dhoom-dosh* and *Samyojana dosh*. And he or she eats that food without producing any slurping or chewing sound, without any haste or delay, without leaving any leftovers, without dropping on the ground. He or she eats only small quantity, just like grease on an axle or ointment on a wound, simply for the purpose of facilitating his path of discipline and carrying the burden of restraint. He or she eats simply and naturally just like a snake enters (straight) into its hole. Gautam ! That food (taken thus) is called *Shastrateet* (cooked in fire), *Shastraparinanamit* (made life-less), *Eshit* (suitable for an ascetic), *Vyeshit* (offered due to ascetic garb), *Saamudayik* (collected from various houses).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : अंगारादि दोषों का स्वरूप-- मुनि गवेषणैषणा और ग्रहणैषणापूर्वक जो आहार लाता है। उस आहार को साधुओं के मण्डल (मांडले) में बैठकर सेवन करते समय जो दोष लगते हैं, उन्हें ग्रासैषणा (परिभोगैषणा) के पाँच दोष कहते हैं। वे इस प्रकार हैं-(१) **अंगार**-सरस स्वादिष्ट आहार में आसक्त होकर खाना। इस प्रकार अग्नि से संयम रूप ईंधन कोयले (अंगार) की तरह दूषित हो जाता है। (२) **धूम**-नीरस या अमनोज्ञ आहार करते हुए आहार या दाता की निन्दा करना। (३) **संयोजना**-स्वादिष्ट एवं रोचक बनाने के लिए लोलुपतावश एक द्रव्य के साथ दूसरे द्रव्यों को मिलाना। (४) **अप्रमाण**-शास्त्रोक्तप्रमाण से अधिक आहार करना, और (५) **अकारण**-साधु के लिए ६ कारणों से आहार करने और ६ कारणों से छोड़ने का विधान है, किन्तु उक्त कारणों के बिना केवल बलवीर्यवृद्धि के लिए आहार करना। इन ५ दोषों का वर्णन सूत्र १७ से २० तक में किया गया है।

कुक्कुटी-अण्डप्रमाण का तात्पर्य-आहार का प्रमाण बताने के लिए 'कुक्कुटी-अण्डकप्रमाण' शब्द दिया है। इसके दो अर्थ होते हैं-(१) कुक्कुटी (मुर्गी) के अंडे के जितने प्रमाण का एक कवल (ग्रास) होता है। तथा (२) जीवरूपी पक्षी के लिए आश्रय रूप होने से यह गन्दी अशुचिप्राय काया 'कुकुटी' है, इस कुकुटी के उदरपूरक पर्याप्त आहार को कुकुटी-अण्डकप्रमाण कहते हैं।

शस्त्रातीतादि की व्याख्या-**शस्त्रातीत** = अग्नि आदि शस्त्र से पका हुआ, **शस्त्र परिणामित** = शस्त्रों से वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्श अन्य रूप में परिणत किया हुआ, अर्थात्-अचित्त किया हुआ। **एसियस्स** = एषणीय-गवेषणा आदि से गवेषित। **वेसियस्स** = विशेष या विविध प्रकार से गवेषणा, ग्रहणैषणा एवं ग्रासैषणा से विशोधित मुनि वेष के निमित्त से प्राप्त। **सामुदाणियस्स** = गृहसमुदायों से प्राप्त।

नवकोटिविशुद्ध का अर्थ-(१) किसी जीव की हिंसा न करना, (२) न कराना, (३) न ही अनुमोदन करना, (४) स्वयं न पकाना, (५) दूसरों से न पकवाना, (६) पकाने वालों का अनुमोदन न करना, (७) स्वयं न

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खरीदना, (८) दूसरों से न खरीदवाना, और (९) खरीदने वाले का अनुमोदन न करना। इन दोषों से रहित आहारादि नवकोटिविशुद्ध कहलाते हैं।

उद्गम, उत्पादना और एषणा के दोष–शास्त्र में आधाकर्म आदि १६ उद्गम के, धात्री, दूती आदि १६ उत्पादना के, एवं शंकित आदि १० एषणा के दोष बताए हैं। उनमें से प्रथम वर्ग के दोष दाता से, द्वितीय वर्ग के साधु से और तृतीय वर्ग के दोनों से लगते हैं। *(विस्तार के लिए देखें, हिन्दी विवेचन, भाग ३, पृष्ठ ११०४ से ११०९ तक, वृत्ति, पत्रांक २९४)*

॥ सप्तक शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—The faults—An ascetic collects food with careful exploration and careful acquisition. He then sits in the group of other ascetics and eats it. The faults applicable at the time of eating are called five faults of *grasaishana* or *paribhogaishana* (care in eating). They are as follows—(1) **Angaar**—to eat with excessive liking for tasty and rich food. Here *angaar* means coal and infatuation for foods tarnishes restraint like a piece of coal. (2) **Dhoom**—to criticize food or its donor while eating drab and repulsive food. (3) **Samyojana**—to mix one item of food with another to improve its taste in order to satiate taste buds. (4) **Apramaan**—to eat more then the quantity prescribed in scriptures. (5) **Akaaran**—There are six reasons to eat food and six to avoid food prescribed in the ascetic code. To eat in absence of these reasons just for taste or to enhance one's physical strength and potency is *akaaran* eating. These five faults have been discussed in aphorisms 17 to 20.

Kukkuti-and pramaan—In order to explain the quantity of food to be eaten this term has been used. It has two interpretations—(1) equivalent to the size (*pramaan*) of hen's egg (*kukkuti-andak*) is the size of a morsel. (2) This filthy body (*kukuti*) is the resting place of the bird that is soul. The quantity of food required to satiate the hunger of this body (*kukuti*) is called *kukuti-and pramaan*.

Shastrateet—Cooked by fire or other means. *Shastra-parinamit*—transformed by fire or other means in terms of colour, smell, taste and touch, in other words made free of any living organism (*achitt*). *Esiyassa* (*eshaniya*)—explored with proper care. *Vesiyassa* (*vyeshaniya*)—explored with particular care regarding exploration, acceptance and eating prescribed for an ascetic. *Samudaaniyassa* (*saamudaniya*)— collected from various houses.

Navakoti vishuddha—Food that is free of the following nine faults—(1) to kill, (2) to get killed, or (3) to approve killing of a living being for

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

food; (4) to cook, (5) to get cooked, or (6) to approve cooking of food; (7) to buy, (8) to get bought, or (9) to approve buying of food.

Faults of udgam, utpaadan and eshana—According to scriptures there are 16 faults of *udgam* (origin) including *aadhaakarma* (food specifically prepared for an ascetic), 16 faults of *utpaadan* (production) including *dhaatri* (food prepared for a nurse) and *dooti* (food prepared for a maid), and 10 faults of *eshana* (exploration) including doubt. Of these the faults of first group are caused by donor, those of the second group are caused by ascetic and those of the third group are caused by both. (*for details refer to Hindi commentary, part-3, pp. 1104-1109 and Vritti leaf 294*)

● **END OF THE FIRST LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER** ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : द्वितीय उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : SECOND LESSON

विरति VIRATI (RENUNCIATION)

सुप्रत्याख्यानी और दुष्प्रत्याख्यानी RIGHT AND WRONG RENUNCIATION

१. [प्र. १] से नूणं भंते ! सव्वपाणेहिं सव्वभूतेहिं सव्वजीवेहिं सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति वदमाणस्स सुपच्चक्खायं भवति ? दुपच्चक्खायं भवति ?

[उ.] गोयमा ! सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति वदमाणस्स सिय सुपच्चक्खायं भवति, सिय दुपच्चक्खायं भवति।

१. [प्र. १] भगवन् ! 'मैंने सर्व प्राण, सर्व भूत, सर्व जीव और सभी सत्त्वों की हिंसा का प्रत्याख्यान किया है', इस प्रकार कहने वाले के सुप्रत्याख्यान होता है या दुष्प्रत्याख्यान ?

[उ.] गौतम ! 'मैंने सभी प्राण यावत् सभी सत्त्वों की हिंसा का प्रत्याख्यान किया है', इस प्रकार कहने वाले के कदाचित् सुप्रत्याख्यान है और कदाचित् दुष्प्रत्याख्यान होता है।

1. [Q. 1] *Bhante* ! Is a person saying—"I have renounced violence towards all *praan* (two to four sensed beings; beings), all *bhoot* (plant bodied beings; organisms), all *jiva* (five sensed beings; souls), and all *sattva* (immobile beings; entities)"—liable of achieving good renunciation or bad renunciation ?

[Ans.] Gautam ! A person saying—"I have renounced violence towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities)"—is some times liable of achieving good renunciation and sometimes bad renunciation.

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'सव्वपाणेहिं जाव सिय दुपच्चक्खायं भवति ?'

[उ.] गोयमा ! जस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति वदमाणस्स णो एवं अभिसमन्नागयं भवति 'इमे जीवा, इमे अजीवा, इमे तसा, इमे थावरा' तस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति वदमाणस्स नो सुपच्चक्खायं भवति, दुपच्चक्खायं भवति। एवं खलु से दुपच्चक्खाई सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति वदमाणो नो सच्चं भासं भासति, मोसं भासं भासइ, एवं खलु से मुसावाई सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं तिविहं तिविहेणं अस्संजयविरय-पडिहयपच्चक्खायपावकम्मे सकिरिए असंवुडे एगंतदंडे एगंतबाले यावि भवति।

जस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति वदमाणस्स एवं अभिसमन्नागयं भवति 'इमे जीवा, इमे अजीवा, इमे तसा, इमे थावरा' तस्स णं सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वदमाणस्स सुपच्चक्खायं भवति, नो दुपच्चक्खायं भवति। एवं खलु से सुपच्चक्खाई सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं 'पच्चक्खायं' इति वयमाणे सच्चं भासं भासति, नो मोसं भासं भासति।

एवं खलु से सच्चवादी सव्वपाणेहिं जाव सव्वसत्तेहिं तिविहं तिविहेणं संजयविरयपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे अकिरिए संवुडे [एगंतअदंडे] एगंतपंडिए यावि भवति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव सिय दुपच्चक्खायं भवति।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा क्यों कहा जाता है कि सभी प्राण यावत् सभी सत्त्वों की हिंसा का प्रत्याख्यान-उच्चारण करने वाले के कदाचित् सुप्रत्याख्यान और कदाचित् दुष्प्रत्याख्यान होता है ?

[उ.] गौतम ! 'मैंने समस्त प्राण यावत् सर्व सत्त्वों की हिंसा का प्रत्याख्यान किया है', इस प्रकार कहने वाले पुरुष को यदि इस प्रकार यह अभिसमन्वागत का ज्ञान नहीं होता कि 'ये जीव हैं, ये अजीव हैं, ये त्रस हैं, ये स्थावर हैं'; उस पुरुष का प्रत्याख्यान सुप्रत्याख्यान नहीं होता, किन्तु दुष्प्रत्याख्यान होता है। साथ ही, 'मैंने सभी प्राण यावत् सभी सत्त्वों की हिंसा का प्रत्याख्यान किया है', इस प्रकार कहने वाला वह दुष्प्रत्याख्यानी पुरुष सत्य भाषा नहीं बोलता; किन्तु मृषा भाषा बोलता है। इस प्रकार वह मृषावादी सर्व प्राण यावत् समस्त सत्त्वों के प्रति तीन करण, तीन योग से असंयत (संयमरहित), अविरत (हिंसादि से अनिवृत्त या विरतिरहित), पापकर्म से अप्रतिहत (नहीं रुका हुआ) और पापकर्म का अप्रत्याख्यानी (जिसने पापकर्म का प्रत्याख्यान-त्याग नहीं किया है), (कायिकी आदि) क्रियाओं से युक्त-(सक्रिय), असंवृत (संवररहित), एकान्तदण्ड (हिंसा) करने वाला एवं एकान्तबाल (अज्ञानी व विरति शून्य) है।

'मैंने सर्व प्राण यावत् सर्व सत्त्वों की हिंसा का प्रत्याख्यान किया है', यों कहने वाले पुरुष को यह ज्ञात होता है कि 'ये जीव हैं, ये अजीव हैं, ये त्रस हैं, और ये स्थावर हैं', उस (सर्व प्राण, यावत् सर्व सत्त्वों की हिंसा का मैंने त्याग किया है, यों कहने वाले) पुरुष का प्रत्याख्यान सुप्रत्याख्यान है, किन्तु दुष्प्रत्याख्यान नहीं है। 'मैंने सर्व प्राण यावत् सर्व सत्त्वों की हिंसा का प्रत्याख्यान किया है', इस प्रकार कहता हुआ वह सुप्रत्याख्यानी सत्य भाषा बोलता है, मृषा भाषा नहीं बोलता, इस प्रकार वह सुप्रत्याख्यानी सत्यभाषी, सर्व प्राण यावत् सत्त्वों के प्रति तीन करण, तीन योग से संयत, विरत है। (अतीतकालीन) पापकर्मों को (पश्चात्ताप-आत्मनिन्दा से) उसने प्रतिहत (घात) कर रोक दिया है, (अनागत पापों को) प्रत्याख्यान से त्याग दिया है, वह **अक्रिय** (कर्मबन्ध की कारणभूत क्रियाओं से रहित) है, **संवृत**-(आस्रवद्वारों को रोकने वाला, संवरयुक्त) है, (एकान्त अदण्डरूप है) और एकान्त पण्डित है। इसीलिए, हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि यावत् कदाचित् सुप्रत्याख्यान होता है और कदाचित् दुष्प्रत्याख्यान होता है।

1. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that a person saying—"I have renounced violence towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities)"—is sometimes liable of achieving good renunciation and sometimes bad renunciation ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] "I have renounced violence towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities)"—Gautam ! If a person saying thus does not have complete awareness about, 'These are *jivas* (souls), these are *ajivas* (non-souls), these are mobile beings and these are immobile beings,' then his renunciation (*pratyakhyan*) is not good renunciation but bad renunciation. Also, that person, with bad renunciation, who utters that he has renounced violence towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities), is not telling the truth but is telling a lie. Thus that liar is devoid of restraint (*asamyat*), detachment (*avirat*), control on and renunciation of sinful indulgence (*apratihat* and *apratyakhyan*) towards all praan (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities) through three means (*karan*) and three methods (*yoga*). He is active (physically and otherwise), devoid of blockage of inflow of *karmas* (*asamvrit*), with singular indulgence in violence (*ekaant dand*) and a complete ignorant (*ekaant baal*).

In contrast, Gautam !—"I have renounced violence towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities)"—if a person saying thus does have complete awareness about, 'These are jivas (souls), these are ajivas (non-souls), these are mobile beings and these are immobile beings,' then his renunciation (*pratyakhyan*) is good renunciation and not bad renunciation. Also, that person, with good renunciation, who utters that he has renounced violence towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities), is telling the truth and not telling a lie. Thus that speaker of truth is endowed with restraint (*samyat*) and detachment (*virat*). He blocks (the fruition of) or destroys (*pratihat*) demeritorious *karmas* (acquired in the past) and renounces (*pratyakhyan*) sinful indulgence (the source of future acquisition of *karmas*) towards all *praan* (two to four sensed beings; beings)... and so on up to... all *sattva* (immobile beings; entities), through three means (*karan*) and three methods (*yoga*). He is inactive (in terms of all activities that cause acquisition of *karmas*). He blocks the inflow of *karmas* (*samvrit*). He accomplishes singular abstinence from violence (*ekaant adand*) and is completely sagacious (*ekaant pundit*). That is why I say that... and so on up to... some times liable of achieving good renunciation and sometimes bad renunciation.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्याख्यान के भेद–प्रभेद CATEGORIES AND SUB-CATEGORIES OF RENOUNCING

२. [प्र.] कतिविहे णं भंते ! पच्चक्खाणे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे पच्चक्खाणे पण्णत्ते, तं जहा–मूलगुणपच्चक्खाणे य उत्तरगुणपच्चक्खाणे य।

२. [प्र.] भगवन् ! प्रत्याख्यान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! प्रत्याख्यान दो प्रकार का है। यथा–(१) मूलगुण प्रत्याख्यान, और (२) उत्तरगुण प्रत्याख्यान।

2. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is renunciation (*pratyakhyan*) ?

[Ans.] Gautam ! Renunciation is of two kinds—(1) *Mool-guna pratyakhyan* (basic-virtue enhancing renunciation) and (2) *Uttar-guna pratyakhyan* (auxiliary-virtue enhancing renunciation).

३. [प्र.] मूलगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं जहा–सव्वमूलगुणपच्चक्खाणे य देसमूलगुणपच्चक्खाणे य।

४. [प्र.] सव्वमूलगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–सव्वाओ पाणातिवायाओ, वेरमणं जाव सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं।

३. [प्र.] भगवन् ! मूलगुण प्रत्याख्यान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! वह दो प्रकार का है। यथा–(१) सर्व–मूलगुण प्रत्याख्यान, और (२) देश–मूलगुण प्रत्याख्यान।

४. [प्र.] भगवन् ! सर्व–मूलगुण प्रत्याख्यान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार का है। यथा–(१) सर्व–प्राणातिपात से विरमण, (२) सर्व–मृषावाद से विरमण, (३) सर्व–अदत्तादान से विरमण, (४) सर्व–मैथुन से विरमण, और (५) सर्व–परिग्रह से विरमण।

3. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is *Mool-guna pratyakhyan* (basic-virtue enhancing renunciation) ?

[Ans.] Gautam ! It is of two kinds—(1) *Sarva-mool-guna pratyakhyan* (complete basic-virtue enhancing renunciation) and (2) *Desh-mool-guna pratyakhyan* (partial basic-virtue enhancing renunciation).

4. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is *Sarva-mool-guna pratyakhyan* (complete basic-virtue enhancing renunciation) ?

[Ans.] It is of five kinds—(1) *Sarva Pranatipat viraman* (to abstain completely from harming or destroying life), (2) *Sarva Mrishavad*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

viraman (to abstain completely from falsity), (3) *Sarva Adattadan viraman* (to abstain completely from taking without being given; to abstain completely from acts of stealing), (4) *Sarva Maithun viraman* (to abstain completely from indulgence in sexual activities), and (5) *Sarva Parigraha viraman* (to abstain completely from acts of possession of things).

५. [प्र.] देसमूलगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा–थूलाओ पाणातिवायाओ वेरमणं जाव थूलाओ परिग्गहाओ वेरमणं।

५. [प्र.] भगवन् ! देश–मूलगुण–प्रत्याख्यान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! वह पाँच प्रकार का है। यथा–स्थूल प्राणातिपात से विरमण यावत् स्थूल परिग्रह से विरमण।

5. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is *Desh-mool-guna pratyakhyan* (partial basic-virtue enhancing renunciation) ?

[Ans.] It is of five kinds—(1) *Sthula Pranatipat viraman* (to abstain grossly or partially from harming or destroying life)... and so on up to... *Sthula Parigraha viraman* (to abstain grossly or partially from acts of possession of things).

६. [प्र.] उत्तरगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तं०–सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणे य, देसुत्तरगुणपच्चक्खाणे य।

६. [प्र.] भगवन् ! उत्तरगुण प्रत्याख्यान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! वह दो प्रकार का है। यथा–(१) सर्व–उत्तरगुण प्रत्याख्यान, और (२) देश–उत्तरगुण–प्रत्याख्यान।

6. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is *Uttar-guna pratyakhyan* (auxiliary-virtue enhancing renunciation) ?

[Ans.] Gautam ! It is of two kinds—(1) *Sarva-uttar-guna pratyakhyan* (complete auxiliary-virtue enhancing renunciation) and (2) *Desh-uttar-guna pratyakhyan* (partial auxiliary-virtue enhancing renunciation).

७. [प्र.] सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! दसविहे पण्णत्ते, तं जहा–

अणागतं १ अतिक्कंतं २ कोडीसहितं ३ नियंटियं ४ चेव।
सागारमणागारं ५–६ परिमाणकडं ७ निरवसेसं ८ ॥१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साकेयं ९ चेव अद्धाए १०, पच्चक्खाणं भवे दसहा।

७. [प्र.] भगवन् ! सर्व-उत्तरगुण प्रत्याख्यान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! वह दस प्रकार का है। यथा-(१) अनागत, (२) अतिक्रान्त, (३) कोटिसहित, (४) नियंत्रित, (५) साकार (सागार), (६) अनाकार (अनागार), (७) परिमाणकृत, (८) निरवशेष, (९) संकेत, और (१०) अद्धा-प्रत्याख्यान। इस प्रकार (सर्वोत्तरगुण) प्रत्याख्यान दस प्रकार का होता है।

7. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is *Sarva Uttar-guna pratyakhyan* (complete auxiliary-virtue enhancing renunciation) ?

[Ans.] Gautam ! It is of ten kinds—(1) *Anagat*, (2) *Atikrant*, (3) *Kotisahit*, (4) *Niyantrit*, (5) *Sagaar*, (6) *Anagaar*, (7) *Parimanakrit*, (8) *Niravashesh*, (9) *Sanket*, and (10) *Addha-pratyakhyan*. Thus *pratyakhyan* is of ten kinds.

८. [प्र.] देसुत्तरगुणपच्चक्खाणे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा-दिसिव्वयं १ उवभोग-परीभोगपरिमाणं २ अणत्थदंडवेरमणं ३ सामाइयं ४ देसावगासियं ५ पोसहोववासो ६ अतिहिसंविभागो ७ अपच्छिममारणंतियसंलेहणा झूसणाऽऽराहणता।

८. [प्र.] भगवन् ! देश-उत्तरगुण प्रत्याख्यान कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! देश-उत्तरगुण प्रत्याख्यान सात प्रकार का है। यथा-(१) दिग्व्रत (दिशापरिमाणव्रत), (२) उपभोग-परिभोगपरिणाम, (३) अनर्थदण्डविरमण, (४) सामायिक, (५) देशावकाशिक, (६) पौषधोपवास, और (७) अतिथि-संविभाग तथा अपश्चिम मारणान्तिक-संलेखना-जोषणा-आराधना।

8. [Q.] *Bhante* ! Of how many kinds is *Desh Uttar-guna pratyakhyan* (partial auxiliary-virtue enhancing renunciation) ?

[Ans.] Gautam ! It is of seven kinds—(1) *Digvrat* or *dishaparimaan vrat* (limiting movement in each direction), (2) *Upabhoga-paribhoga-parimaan* (limiting of means of subsistence and comforts), (3) *Anarthdanda viraman* (abstention from needless and wanton violence), (4) *Samayik* (meditational and other prescribed practices), (5) *Deshavakashik* (limiting area of activity), (6) *Paushadhopavas* (partial ascetic vow and fasting) and (7) *Atithi Samvibhag* (taking care of the guests or the needy) and *Apashchim maranantik-samlekhana-joshana-aradhana* (accepting final ultimate vow till death).

विवेचन : मूलगुण—चारित्र रूप कल्पवृक्ष के मूल (जड़) के समान जो गुण है, जैसे प्राणातिपात विरमण आदि। उत्तरगुण-वृक्ष की शाखा के समान जो गुण है, (आगे बताये अनुसार)। सर्व-मूलगुण प्रत्याख्यान मुनि के तथा देश-मूलगुण प्रत्याख्यान देशविरत श्रावक के होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दशविध सर्वोत्तरगुण प्रत्याख्यान–(१) **अनागत**–भविष्य में जो तप, नियम या प्रत्याख्यान करना है, उसमें भविष्य में बाधा पड़ती देखकर उसे पहले ही कर लेना। (२) **अतिक्रान्त**–पहले जो तप, नियम, व्रत-प्रत्याख्यान करना था, उसमें गुरु, तपस्वी एवं रुग्ण की सेवा आदि कारणों से बाधा पड़ने के कारण उस तप, व्रत-प्रत्याख्यान आदि को बाद में करना, (३) **कोटिसहित**–जहाँ एक प्रत्याख्यान की समाप्ति तथा दूसरे प्रत्याख्यान की आदि एक ही दिन में हो जाये। तप की कड़ी नहीं टूटे। जैसे-उपवास के पारणे में आयंबिल आदि तप करना। (४) **नियंत्रित**–जिस दिन जो प्रत्याख्यान करने का निश्चय किया है, उस दिन रोगादि बाधाओं के आने पर भी, उसे नहीं छोड़ना, नियमपूर्वक करना। (५) **साकार (सागार)**–जिस प्रत्याख्यान में कुछ आगार (छूट या अपवाद) रखा जाय। उन आगारों में से किसी आगार के उपस्थित होने पर त्यागी हुई वस्तु के त्याग का काल पूरा होने से पहले ही उसे सेवन कर लेने पर भी प्रत्याख्यान-भंग नहीं होता। जैसा-नवकारसी, पोरसी आदि। (६) **अनाकार (अनागार)**–जिस प्रत्याख्यान में 'महत्तरागार' आदि कोई आगार न हों। 'अनाभोग' और 'सहसाकार' तो उसमें होते ही हैं। (७) **परिमाणकृत**–दत्ति, कवल (ग्रास), घर, भिक्षा या भोज्यद्रव्यों की मर्यादा करना। (८) **निरवशेष**-अशन, पान, खादिम और स्वादिम, इन चारों प्रकार के आहार का सर्वथा प्रत्याख्यान-त्याग करना। (९) **संकेतप्रत्याख्यान**-अंगूठा, मुट्ठी, गाँठ आदि किसी भी वस्तु के संकेत को लेकर किया जाने वाला प्रत्याख्यान। (१०) **अद्धाप्रत्याख्यान**-अद्धा अर्थात् काल विशेष को नियत करके जो प्रत्याख्यान किया जाता है। जैसे-पोरिसी, दो पोरिसी, मास, अर्द्ध-मास आदि। श्रावक के दिग्व्रत आदि तीन गुणव्रत और सामायिक आदि चार शिक्षाव्रत ये सात देशान्तर गुण प्रत्याख्यान हैं।

अपश्चिम-मारणान्तिक-संलेखना-जोषणा-आराधना की व्याख्या-अपश्चिम अर्थात् जिसके पीछे कोई संलेखनादि कार्य करना शेष नहीं, ऐसी **अन्तिम मारणान्तिक** (आयुष्यसमाप्ति के अन्त-मरणकाल में) की जाने वाली शरीर और कषाय आदि को कृश करने वाली तपस्याविशेष '**अपश्चिम-मारणान्तिक संलेखना**' है। उसकी **जोषणा**-स्वीकार करने की आराधना आयुःसमाप्ति तक जाती है। अन्तिम समय में यह सबके लिए अवश्यकरणीय है। (वृत्ति, पत्रांक २९७)

Elaboration—Mool-guna—*mool* means root and *guna* means virtues. The virtues (complete abstention from violence, etc.) that are like roots of the tree of conduct. *Uttar-guna*—the auxiliary virtues that are like branches of the tree of conduct (detailed as following). *Sarva-mool-guna pratyakhyan* (complete basic-virtue enhancing renunciation) is meant for ascetics and *Desh-mool-guna pratyakhyan* (partial basic-virtue enhancing renunciation) is meant for vow observing *shravak* (layman).

Ten *Sarva-uttar-guna pratyakhyan* (complete basic-virtue enhancing renunciation)—(1) *Anagat-pratyakhyan*—to advance, under special circumstances (like anticipated impediments in future), the observation of some austerity resolved to be observed in future. (2) *Atikrant-pratyakhyan*—to postpone for future the observation of some austerity for some specific reason (like serving senior and ailing ascetics). (3) *Kotisahit-pratyakhyan*—where the last day of one abstainment and the first day of the immediate next abstainment become common (for

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

example breaking a fast with the austerity of *ayambil*). (4) *Niyantrit-pratyakhyan*—a *tap* (austerity) done with complete control, following prescribed rules, irrespective of being normal or ailing. (5) *Sagaar-pratyakhyan*—austerities done with some predetermined relaxations (like observing some vow and concluding it prematurely in case some predetermined cause occurs). (6) *Anagaar-pratyakhyan*—austerities done without any relaxations (unforeseen obstructions being allowed). (7) *Parimanakrit-pratyakhyan*—abstainment related to specific quantity or number of things like servings, morsels, houses, things and alms. (8) *Niravashesh-pratyakhyan*—abstaining completely from all the four kinds of food (staple food, liquids, general food, and savoury food). (9) *Sanket-pratyakhyan*—abstainment done with specific signs or indications (done with fingers, thumb, fist etc.) or that done with special resolves. (10) *Addha-pratyakhyan*—abstainment done for specific duration such as *Muhurt* (48 minutes), *Prahar* (three hours), etc.

Apashchim maranantik-samlekhana-joshana-aradhana—the practice (*aradhana*) of acceptance (*joshana*) of final (*apashchim*) ultimate vow (*samlekhana*) till death (*maranantik*). This emaciates passions and other vices as well as the body. This is done when the end of life is near and is obligatory for all indoctrinated people. (Vritti, leaf 297)

प्रत्याख्यानी–अप्रत्याख्यानी **RENOUNCER AND NON-RENOUNCER**

९. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं मूलगुणपच्चक्खाणी, उत्तरगुणपच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी ?

[उ.] गोयमा ! जीवा मूलगुणपच्चक्खाणी वि, उत्तरगुणपच्चक्खाणी वि, अपच्चक्खाणी वि।

९. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव, मूलगुण प्रत्याख्यानी हैं, उत्तरगुण प्रत्याख्यानी हैं, अथवा अप्रत्याख्यानी हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव मूलगुण प्रत्याख्यानी भी हैं, उत्तरगुण प्रत्याख्यानी भी हैं और अप्रत्याख्यानी भी हैं।

9. [Q.] *Bhante* ! Are living beings (*jiva*) *mool-guna-pratyakhyani* (basic-virtue enhancing renouncers), *uttar-guna pratyakhyani* (auxiliary-virtue enhancing renouncers), or *apratyakhyani* (non-renouncers) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings (*jiva*) are basic-virtue enhancing renouncers, auxiliary-virtue enhancing renouncers as well as non-renouncers.

१०. [प्र.] नेरइया णं भंते ! किं मूलगुणपच्चक्खाणी० ? पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नेरइया नो मूलगुणपच्चक्खाणी, नो उत्तरगुणपच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

११. एवं जाव चउरिंदिया।

१२. पंचेंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य जहा जीवा (सू. ९)।

१३. वाणमंतर-जोतिसिय-वेमाणिया जहा नेरइया (सू. १०)।

१०. [प्र.] भगवन् ! क्या नैरयिक जीव, मूलगुण प्रत्याख्यानी हैं, उत्तरगुण प्रत्याख्यानी हैं या अप्रत्याख्यानी हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव, न तो मूलगुण प्रत्याख्यानी हैं और न उत्तरगुण प्रत्याख्यानी हैं, किन्तु अप्रत्याख्यानी हैं।

११. इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों पर्यन्त कहना चाहिए।

१२. पंचेन्द्रियतिर्यंचों और मनुष्यों के विषय में (समुच्चय-औधिक) जीवों की तरह कहना चाहिए।

१३. वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के सम्बन्ध में नैरयिक जीवों की तरह कथन करना चाहिए। ये सब अप्रत्याख्यानी हैं।

10. [Q.] *Bhante* ! Are infernal beings (*nairayik jiva*) *mool-guna-pratyakhyani* (basic-virtue enhancing renouncers), *uttar-guna pratyakhyani* (auxiliary-virtue enhancing renouncers), or *apratyakhyani* (non-renouncers) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are neither basic-virtue enhancing renouncers nor auxiliary-virtue enhancing renouncers but non-renouncers only.

11. Same should be repeated for living beings up to four sensed beings.

12. What has been said about living beings (in general) should be repeated for five sensed animals and human beings.

13. What has been said about infernal beings should be repeated for *Vanavyantar*, *Jyotishk* and *Vaimanik* gods. They all are *apratyakhyani* (non-renouncers).

विवेचन : निष्कर्ष—नैरयिकों, पंचस्थावरों, तीन विकलेन्द्रिय जीवों, तथा वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिकों में मूलगुण प्रत्याख्यानी या उत्तरगुण प्रत्याख्यानी नहीं होते, वे सर्वथा अप्रत्याख्यानी होते हैं। तिर्यंचपंचेन्द्रिय जीवों और मनुष्यों में तीनों ही विकल्प पाये जाते हैं। किन्तु तिर्यंचों में मात्र देशप्रत्याख्यानी ही हो सकते हैं।

Elaboration—Infernal, immobile (five kinds), and two to four sensed beings as well as divine beings like interstitial, stellar and celestial vehicular gods are all singularly non-renouncers; they are neither basic-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

virtue enhancing renouncers nor auxiliary-virtue enhancing renouncers. The said three alternatives are applicable only to five sensed animals and human beings. In animals there can only be partial renouncers (*desh-pratyakhyani*).

१४. [प्र.] एएसि णं भंते ! जीवाणं मूलगुणपच्चक्खाणीणं जाव अपच्चक्खाणीण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा मूलगुणपच्चक्खाणी, उत्तरगुणपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा, अपच्चक्खाणी अणंतगुणा।

१४. [प्र.] भगवन् ! मूलगुण प्रत्याख्यानी, उत्तरगुण प्रत्याख्यानी और अप्रत्याख्यानी, इन जीवों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोड़े जीव मूलगुण प्रत्याख्यानी हैं, (उनसे) उत्तरगुण प्रत्याख्यानी असंख्येय गुणा हैं, और (उनसे) अप्रत्याख्यानी अनन्तगुणा हैं।

14. *Bhante* ! Of these *mool-guna-pratyakhyani* (basic-virtue enhancing renouncer), *uttar-guna pratyakhyani* (auxiliary-virtue enhancing renouncer), and *apratyakhyani* (non-renouncer) living beings (*jivas*), which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! Of the said living beings minimum (in number) are basic-virtue enhancing renouncers, innumerable times more than these are auxiliary-virtue enhancing renouncers, and infinite times more than these are non-renouncers.

१५. [प्र.] एएसि णं भंते ! पंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा पंचेंदियतिरिक्खजोणिया मूलगुणपच्चक्खाणी, उत्तरगुणपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा, अपच्चक्खाणी असंखिज्जगुणा।

१६. [प्र.] एएसि णं भंते ! मणुस्साणं मूलगुणपच्चक्खाणीणं० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा मणुस्सा मूलगुणपच्चक्खाणी, उत्तरगुणपच्चक्खाणी संखेज्जगुणा, अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा।

१५. [प्र.] भगवन् ! इन मूलगुण प्रत्याख्यानी आदि (पूर्वोक्त) जीवों में पंचेन्द्रियतिर्यग्योनिक जीव कौन किनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! मूलगुण प्रत्याख्यानी पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीव सबसे थोड़े हैं, उनसे उत्तरगुण प्रत्याख्यानी असंख्यगुणा हैं, और उनसे अप्रत्याख्यानी असंख्यगुणा हैं।

१६. [प्र.] भगवन् ! इन मूलगुण प्रत्याख्यानी आदि जीवों में मनुष्य कौन किनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! मूलगुण प्रत्याख्यानी मनुष्य सबसे थोड़े हैं, उनसे उत्तरगुण प्रत्याख्यानी संख्यातगुणा हैं और उनसे अप्रत्याख्यानी मनुष्य असंख्यातगुणा हैं।

15. *Bhante* ! Of these basic-virtue enhancing renouncer, auxiliary-virtue enhancing renouncer, and non-renouncer five sensed animals, which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! Of the said five sensed animals minimum (in number) are basic-virtue enhancing renouncers, innumerable times more than these are auxiliary-virtue enhancing renouncers, and innumerable times more than these are non-renouncers.

16. [Q.] *Bhante* ! Of these basic-virtue enhancing renouncer, auxiliary-virtue enhancing renouncer, and non-renouncer human beings, which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! Of the said human beings, minimum (in number) are basic-virtue enhancing renouncers, countable times more than these are auxiliary-virtue enhancing renouncers, and innumerable times more than these are non-renouncers.

१७. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी ? देसमूलगुणपच्चक्खाणी ? अपच्चक्खाणी ?

[उ.] गोयमा ! जीवा सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी, देसमूलगुणपच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी वि।

१७. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव, सर्वमूलगुण प्रत्याख्यानी हैं, देशमूलगुण प्रत्याख्यानी हैं या अप्रत्याख्यानी हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव (समुच्चय में), सर्वमूलगुण प्रत्याख्यानी भी हैं, देशमूलगुण प्रत्याख्यानी भी हैं और अप्रत्याख्यानी भी हैं।

17. [Q.] *Bhante* ! Are living beings (*jiva*) *Sarva-mool-guna-pratyakhyani* (complete basic-virtue enhancing renouncers), *Desh-mool-guna pratyakhyani* (partial basic-virtue enhancing renouncers), or *apratyakhyani* (non-renouncers) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings (in general) are complete basic-virtue enhancing renouncers, partial basic-virtue enhancing renouncers as well as non-renouncers.

१८. [प्र.] नेरइयाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! नेरइया नो सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी, नो देसमूलगुणपच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी।

१९. एवं जाव चउरिंदिया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. [प्र.] पंचेंदियतिरिक्खपुच्छा।

[उ.] गोयमा ! पंचेंदियतिरिक्खा नो सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी, देसमूलगुणपच्चक्खाणी वि, अपच्चक्खाणी वि।

१८. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीवों के विषय में भी यही प्रश्न है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव, न तो सर्वमूलगुण प्रत्याख्यानी हैं, और न ही देशमूलगुण प्रत्याख्यानी हैं, वे अप्रत्याख्यानी हैं।

१९. इसी तरह यावत् चतुरिन्द्रियपर्यन्त कहना चाहिए।

२०. [प्र.] पंचेन्द्रियतिर्यंच जीवों के विषय में भी यही प्रश्न है।

[उ.] गौतम ! पंचेन्द्रियतिर्यंच सर्वमूलगुण प्रत्याख्यानी नहीं हैं, देशमूलगुण प्रत्याख्यानी हैं और अप्रत्याख्यानी भी हैं।

18. [Q.] *Bhante* ! The same question about infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are neither complete basic-virtue enhancing renouncers nor partial basic-virtue enhancing renouncers but are non-renouncers.

19. The same should be repeated for all beings up to four sensed beings.

20. [Q.] *Bhante* ! The same question about five sensed animals ?

[Ans.] Gautam ! Five sensed animals are not complete basic-virtue enhancing renouncers but are partial basic-virtue enhancing renouncers as well as non-renouncers.

२१. मणुस्सा जहा जीवा।

२२. वाणमंतर–जोतिस–वेमाणिया जहा नेरइया।

२१. मनुष्यों के विषय में जीवों की तरह कथन करना चाहिए।

२२. वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के विषय में नैरयिकों की तरह कहना चाहिए।

21. What has been said about living beings (in general) should be repeated for human beings.

22. What has been said about infernal beings should be repeated for *Vanavyantar*, *Jyotishk* and *Vaimanik* gods.

२३. [प्र.] एएसि णं भंते ! जीवाणं सव्वमूलगुणपच्चक्खाणीणं देसमूलगुणपच्चक्खाणीणं अपच्चक्खाणीण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा सव्वमूलगुणपच्चक्खाणी। एवं अप्पाबहुगाणि तिण्णि वि जहा पढमिल्लए दंडए (सु. १४–१६), नवरं सव्वत्थोवा पंचेंदियतिरिक्खजोणिया देसमूलगुणपच्चक्खाणी, अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा।

२३. [प्र.] भगवन् ! इन सर्वमूलगुण प्रत्याख्यानी, देशमूलगुण प्रत्याख्यानी और अप्रत्याख्यानी जीवों में कौन किनसे अल्प, अधिक, तुल्य और विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे थोड़े सर्वमूलगुण प्रत्याख्यानी जीव हैं, उनसे असंख्यातगुणे देशमूलगुण प्रत्याख्यानी जीव हैं, और अप्रत्याख्यानी जीव उनसे अनन्तगुणे हैं। इसी प्रकार तीनों–औधिक जीवों, पंचेन्द्रियतिर्यंचों और मनुष्यों का अल्प–बहुत्व प्रथम दण्डक में कहे अनुसार कहना चाहिए; किन्तु इतना विशेष है कि देशमूलगुण प्रत्याख्यानी पंचेन्द्रियतिर्यंच सबसे थोड़े हैं और अप्रत्यख्यानी पंचेन्द्रियतिर्यंच उनसे असंख्येयगुणे हैं।

23. [Q.] *Bhante* ! Of these *Sarva-mool-guna-pratyakhyani* (complete basic-virtue enhancing renouncer), *Desh-mool-guna pratyakhyani* (partial basic-virtue enhancing renouncer), or *apratyakhyani* (non-renouncer) living beings (*jivas*), which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! Of the said living beings minimum (in number) are complete basic-virtue enhancing renouncers, innumerable times more than these are partial basic-virtue enhancing renouncers, and infinite times more than these are non-renouncers. The same is true for all the three—living beings (in general), five sensed animals and human beings. The difference is that in case of five sensed animals minimum are partial basic-virtue enhancing renouncers and infinite times more than these are non-renouncers.

२४. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणी ? देसुत्तरगुणपच्चक्खाणी ? अपच्चक्खाणी ?

[उ.] गोयमा ! जीवा सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणी वि, तिण्णि वि।

२४. [प्र.] भगवन् ! जीव क्या सर्व–उत्तरगुण प्रत्याख्यानी हैं, देश–उत्तरगुण प्रत्याख्यानी हैं अथवा अप्रत्याख्यानी हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव सर्व–उत्तरगुण प्रत्याख्यानी भी हैं, देश–उत्तरगुण प्रत्याख्यानी भी हैं और अप्रत्याख्यानी भी हैं। (अर्थात्–तीनों प्रकार के हैं)

24. [Q.] *Bhante* ! Are living beings (*jiva*) *Sarva-uttar-guna-pratyakhyani* (complete auxiliary-virtue enhancing renouncers), *Desh-uttar-guna pratyakhyani* (partial auxiliary-virtue enhancing renouncers), or *apratyakhyani* (non-renouncers) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Living beings (in general) are complete auxiliary-virtue enhancing renouncers, partial auxiliary-virtue enhancing renouncers as well as non-renouncers.

२५. पंचेंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य एवं चेव।

२६. सेसा अपच्चक्खाणी जाव वेमाणिया।

२५. पंचेन्द्रियतिर्यंचों और मनुष्यों का कथन भी इसी तरह करना चाहिए।

२६. वैमानिकपर्यन्त शेष सभी जीव अप्रत्याख्यानी हैं।

25. The same should be repeated for five sensed animals and human beings.

26. All other beings up to *Vaimaniks* are *apratyakhyani* (non-renouncers).

२७. [प्र.] एएसि णं भंते ! जीवाणं सव्वुत्तरगुणपच्चक्खाणी०, अप्पाबहुगाणि।

[उ.] तिण्णि वि जहा पढमे दंडए (सु. १४–१६) जाव मणूसाणं।

२७. [प्र.] भगवन् ! इन सर्वोत्तरगुण प्रत्याख्यानी, देशोत्तरगुण प्रत्याख्यानी एवं अप्रत्याख्यानी जीवों में से कौन किनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! इन तीनों का अल्पबहुत्व प्रथम दण्डक (सू. १४–१६) में कहे अनुसार यावत् मनुष्यों तक जान लेना चाहिए।

27. [Q.] *Bhante* ! Of these *Sarva-uttar-guna-pratyakhyani* (complete auxiliary-virtue enhancing renouncer), *Desh-uttar-guna pratyakhyani* (partial auxiliary-virtue enhancing renouncer), or *apratyakhyani* (non-renouncer) living beings (*jivas*), which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! The statement of comparative numbers of these three should be repeated like that about the first category (aphorisms 14-16)... and so on up to... human beings.

विवेचन : निष्कर्ष–सर्व–मूलगुण प्रत्याख्यान केवल मनुष्य में ही होता है, देश–मूलगुण प्रत्याख्यानी मनुष्य और पंचेन्द्रियतिर्यंच दोनों ही हो सकते हैं, तथा शेष सभी जीव अप्रत्याख्यानी होते हैं। अतः सबसे थोड़े सर्व–मूलगुण प्रत्याख्यानी हैं, उनसे अधिक देश–मूलगुण प्रत्याख्यानी जीव हैं, और सबसे अधिक अप्रत्याख्यानी हैं।

Elaboration—Conclusion—Only human beings can be *Sarva-mool-guna-pratyakhyani* (complete basic-virtue enhancing renouncers). Human beings and five sensed animals both can be *Desh-mool-guna pratyakhyani* (partial basic-virtue enhancing renouncers). All the

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

remaining classes of beings are necessarily *apratyakhyani* (non-renouncers). That is why in number minimum are complete basic-virtue enhancing renouncers, more then them are partial basic-virtue enhancing renouncers and maximum are non-renouncers.

संयत तथा प्रत्याख्यानी आदि का अल्पबहुत्व

COMPARATIVE NUMBERS OF RESTRAINED AND RENOUNCERS

२८. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं संजया ? असंजया ? संजयासंजया ?

[उ.] गोयमा ! जीवा संजया वि०, तिण्णि वि, एवं जहेव पण्णवणाए तहेव भाणियव्वं जाव वेमाणिया। अप्पाबहुगं तहेव (सु. १४–१६) तिण्ह वि भाणियव्वं।

२८. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव संयत (सर्वथा सावद्य का त्यागी) हैं, असंयत हैं, अथवा संयतासंयत (आंशिक त्यागी) हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव संयत भी हैं, असंयत भी हैं और संयतासंयत भी हैं। इस तरह प्रज्ञापनासूत्र ३२वें पद में कहे अनुसार यावत् वैमानिकपर्यन्त कहना चाहिए और अल्पबहुत्व भी तीनों का पूर्ववत् (सू. १४ से १६ तक में उक्त) कहना चाहिए।

28. [Q.] *Bhante* ! Are living beings *samyat* (restrained), *asamyat* (unrestrained) or *samyat-asamyat* (restrained-unrestrained or partially restrained)?

[Ans.] Gautam ! Living beings are *samyat* (restrained), *asamyat* (unrestrained) and *samyat-asamyat* (restrained-unrestrained or partially restrained) also. In the same way what has been mentioned in *Pada 32 of Prajanapana Sutra* should be repeated up to *Vaimanik*. The statement about comparative numbers of the three should be repeated as aforesaid (aphorisms 14-16)

२९. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं पच्चक्खाणी ? अपच्चक्खाणी ? पच्चक्खाणापच्चक्खाणी ?

[उ.] गोयमा ! जीवा पच्चक्खाणी वि, एवं तिण्णि वि।

३०. एवं मणुस्साण वि।

३१. पंचिंदियतिरिक्खजोणिया आदिल्लविरहिया।

३२. सेसा सव्वे अपच्चक्खाणी जाव वेमाणिया।

२९. [प्र.] भगवन् ! क्या जीव प्रत्याख्यानी हैं, अप्रत्याख्यानी हैं, अथवा प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव प्रत्याख्यानी भी हैं, (अप्रत्याख्यानी भी हैं और प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी भी हैं)। अर्थात् तीनों प्रकार के हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३०. इसी प्रकार मनुष्य भी तीनों ही प्रकार के हैं।

३१. पंचेन्द्रिय तिर्यंचयोनिक जीव प्रारम्भ के विकल्प से रहित हैं, (अर्थात् वे प्रत्याख्यानी नहीं हैं), किन्तु अप्रत्याख्यानी हैं या प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी हैं।

३२. शेष सभी जीव यावत् वैमानिक तक अप्रत्याख्यानी हैं।

29. [Q.] *Bhante* ! Are living beings *pratyakhyani* (renouncers), *apratyakhyani* (non-renouncer) or *pratyakhyani-apratyakhyani* (renouncer-non-unrenouncers or partial renouncers) ?

[Ans.] Gautam ! Living beings are renouncers, (non-renouncers and renouncer-non-renouncers or partial renouncers too). Or of all the three types.

30. In the same way human beings are also of all the three types.

31. Five sensed animals have absence of the first alternative (i. e. they are not renouncers) but are non-renouncers and partial renouncers.

32. All the remaining beings up to *Vaimanik* are non-renouncers.

३३. [प्र.] एतेसि णं भंते ! जीवाणं पच्चक्खाणीणं जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीव पच्चक्खाणी, पच्चक्खाणापच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा, अपच्चक्खाणी अणंतगुणा।

३३. [प्र.] भगवन् ! इन प्रत्याख्यानी आदि जीवों में कौन किनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! सबसे अल्प जीव प्रत्याख्यानी हैं, उनसे प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी असंख्येयगुणे हैं और उनसे अप्रत्याख्यानी अनन्तगुणे हैं।

33. [Q.] *Bhante* ! Of these *pratyakhyani* (renouncer) and other aforesaid living beings (*jivas*), which are less (or more or equal or much more) than the other ?

[Ans.] Gautam ! Of these living beings minimum are renouncers, innumerable times more than these are partial renouncers and infinite times more than these are non-renouncers.

३४. पंचेंदियतिरिक्खजोणिया सव्वत्थोवा पच्चक्खाणापच्चक्खाणी अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा।

३५. मणुस्सा सव्वत्थोवा पच्चक्खाणी, पच्चक्खाणापच्चक्खाणी संखेज्जगुणा, अपच्चक्खाणी असंखेज्जगुणा।

३४. पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवों में प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी जीव सबसे थोड़े हैं, और उनसे असंख्यातगुणे अप्रत्याख्यानी हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३५. मनुष्यों में प्रत्याख्यानी मनुष्य सबसे थोड़े हैं, उनसे संख्येयगुणे प्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानी हैं और उनसे भी असंख्येयगुणे अप्रत्याख्यानी हैं।

34. In five sensed animals minimum are partial renouncers and innumerable times more than these are non-renouncers.

35. In human beings minimum are renouncers, countable times more than these are partial renouncers and innumerable times more than these are non-renouncers.

जीवों की शाश्वतता–अशाश्वतता ETERNALITY AND NON-ETERNALITY OF BEINGS

३६. [प्र. १] जीवा णं भंते ! किं सासया ? असासया ?

[उ.] गोयमा ! जीवा सिय सासया, सिय असासया।

३६. [प्र. १] भगवन् ! क्या जीव शाश्वत हैं या अशाश्वत हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव कथंचित् शाश्वत हैं और कथंचित् अशाश्वत हैं।

36. [Q. 1] *Bhante* ! Are living beings (*jiva*) eternal (*shaashvat*) or are they non-eternal ?

[Ans.] From one angle they are eternal and from another angle they are non-eternal.

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'जीवा सिय सासया, सिय असासया'?

[उ.] गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासया, भावट्ठयाए असासया। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव सिय असासया।

[प्र. २] भगवन् ! यह किस कारण से कहा जाता है कि जीव कथंचित् शाश्वत हैं, कथंचित् अशाश्वत हैं ?

[उ.] गौतम ! द्रव्य की दृष्टि से जीव शाश्वत हैं, और भाव (पर्याय) की दृष्टि से जीव अशाश्वत हैं। गौतम ! इस कारण ऐसा कहा गया है कि जीव कथंचित् शाश्वत हैं, कथंचित् अशाश्वत हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that from one angle they are eternal and from another they are non-eternal ?

[Ans.] Gautam ! From the standpoint of entity (*dravya*) living beings (souls) are eternal and from the standpoint of state or mode (*bhaava* or *paryaya*) they are non-eternal. Gautam ! That is why it is said that from one angle they are eternal and from another angle they are non-eternal.

३७. [प्र.] नेरइया णं भंते ! किं सासया ? असासया ?

[उ.] एवं जहा जीवा तहा नेरइया वि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३८. एवं जाव वेमाणिया जाव सिय असासया।

सेवं भंते ! सेवं भंते। त्ति०।

॥ सत्तम सए : बिइओ उद्देसओ समत्तो ॥

३७. भगवन् ! क्या नैरयिक जीव शाश्वत हैं या अशाश्वत हैं ?

[उ.] जिस प्रकार (औधिक) जीवों का कथन किया था, उसी प्रकार नैरयिकों को कथन करना चाहिए।

37. [Q.] *Bhante* ! Are infernal beings eternal (*shaashvat*) or are they non-eternal ?

[Ans.] What has been said about living beings (in general) should be repeated for infernal beings.

३८. इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डकों के विषय में कथन करना चाहिए कि वे जीव कथंचित् शाश्वत हैं, कथंचित् अशाश्वत हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार हैं'; यों कहकर गौतम स्वामी विचरने लगे।

38. In the same way the statement that from one angle they are eternal and from another angle they are non-eternal, should be repeated for all the twenty four places of suffering (*Dandak*).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : सारांश–द्रव्यार्थिकनय की दृष्टि से जीव (जीवद्रव्य) शाश्वत है, किन्तु विभिन्न गतियों एवं योनियों में परिभ्रमण करने और विभिन्न पर्याय धारण करने के कारण पर्यायार्थिक–नय की दृष्टि से वह अशाश्वत है।

॥ सप्तम शतक : द्वितीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—From *dravyarthik naya* (existent material aspect) living being (soul entity) is eternal. However as it undergoes a variety of transformations while moving around in various genuses in cycles of rebirth, from *paryayarthik naya* (transformational aspect) it is non-eternal.

● END OF THE SECOND LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : तृतीय उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : THIRD LESSON

स्थावर STHAVAR (IMMOBILE BEINGS)

वनस्पतिकायिक जीवों का आहारकाल PERIOD OF INTAKE BY PLANT-BODIED BEINGS

१. [प्र.] वणस्सइकाइया णं भंते ! कं कालं सव्वप्पाहारगा वा सव्वमहाहारगा वा भवंति ?

[उ.] गोयमा ! पाउस–वरिसारत्तेसु णं एत्थ णं वणस्सइतिकाइया सव्वमहाहारगा भवंति, तदाणंतरं च णं सरदे, तयाणंतरं च णं हेमंते, तयाणंतरं च णं वसंते, तयाणंतरं च णं गिम्हे। गिम्हासु णं वणस्सइकाइया सव्वप्पाहारगा भवंति।

१. [प्र.] भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीव किस काल में सर्वाल्पाहारी (सबसे थोड़ा आहार करने वाले) होते हैं और किस काल में सर्वमहाहारी (सबसे अधिक आहार करने वाले) होते हैं ?

[उ.] गौतम ! पावस ऋतु (श्रावण और भाद्रपद मास) में तथा वर्षा ऋतु (आश्विन और कार्तिक मास) में वनस्पतिकायिक जीव (अधिक जल बरसने के कारण) सर्वमहाहारी होते हैं। इसके पश्चात् शरद् ऋतु (कार्तिक और मार्गशीर्ष मास) में, तदनन्तर हेमन्त ऋतु (पौष और माघ मास) में, इसके बाद वसन्त ऋतु (फाल्गुन और चैत्र मास) में और तत्पश्चात् ग्रीष्म ऋतु (वैशाख और ज्येष्ठ मास) में वनस्पतिकायिक जीव क्रमशः अल्पाहारी होते हैं। ग्रीष्म ऋतु में वे सर्वाल्पाहारी होते हैं।

1. [Q.] *Bhante* ! During what period plant-bodied beings (*vanaspati-kayik jivas*) have least intake and during what period they have most intake ?

[Ans.] Gautam ! Plant-bodied beings (*vanaspati-kayik jivas*) have maximum intake during four months of monsoon season (*Pavas ritu* and *Varsha ritu*), which according to Indian calendar are months of Ashadh, Shravan, Bhadrapad and Ashvin (the cause being excess of rain water during these months). After that their intake gradually reduces in the following seasons of autumn (*Sharad ritu* or Kartik and Margshirsh months), winter (*Hemant ritu* or Paush and Maagh months) and spring (*Vasant ritu* or Phalgun and Chaitra months). In the summer season (*Grishm ritu* or Vaishaakh and Jyeshth months) their intake is minimum.

२. [प्र.] जइ णं भंते ! गिम्हासु वणस्सइकाइया सव्वप्पाहारगा भवंति, कम्हा णं भंते ! गिम्हासु बहवे वणस्सइकाइया पत्तिया पुप्फिया फलिया हरितगरेरिज्जमाणा सिरीए अतीव अतीव उवसोभेमाणा उवसोभेमाणा चिट्ठंति ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! गिम्हासु णं बहवे उसिणजोणिया जीवा य पुग्गला य वणस्सइकाइयत्ताए वक्कमंति विउक्कमंति चयंति उववज्जंति, एवं खलु गोयमा ! गिम्हासु बहवे वणस्सइकाइया पत्तिया पुप्फिया जाव चिट्ठंति।

२. [प्र.] भगवन् ! यदि ग्रीष्म ऋतु में वनस्पतिकायिक जीव सर्वाल्पाहारी होते हैं, तो बहुत से वनस्पतिकायिक ग्रीष्म ऋतु में पत्तों वाले, फूलों वाले, फलों वाले, हरियाली से देदीप्यमान (हरे-भरे) एवं श्री (शोभा) से अतीव सुशोभित कैसे होते हैं ?

[उ.] गौतम ! ग्रीष्म ऋतु में बहुत से उष्ण योनि वाले जीव और पुद्गल वनस्पतिकाय के रूप में उत्पन्न हो जाते हैं, विशेष रूप से उत्पन्न होते हैं, वृद्धि को प्राप्त होते हैं, और विशेष रूप से वृद्धि को प्राप्त होते हैं। इस कारण से हे गौतम ! ग्रीष्म ऋतु में बहुत से वनस्पतिकायिक पत्तों वाले, फूलों वाले, फलों वाले यावत् सुशोभित होते हैं।

2. [Q.] *Bhante* ! If plant-bodied beings have minimum intake in the summer season then how is it that in summer many plant-bodied beings are loaded with leaves, flowers, fruits, and appear lush green and extremely beautiful ?

[Ans.] Gautam ! In summer many heat-thriving (*ushna-yoni*) beings and matter particles are commonly and specially born and they grow as plant-bodied beings. That is why, Gautam ! In summer many plant-bodied beings are loaded with leaves, flowers, fruits... and so on up to... appear beautiful.

विवेचन : छह ऋतुओं में से प्रावृट् और वर्षा ऋतु, इन दो ऋतुओं में वनस्पतिकायिक जीव सर्वाधिक आहारी होते हैं, क्योंकि इन ऋतुओं में वर्षा अधिक होती है, जलस्नेह की अधिकता के कारण वनस्पति को अधिक आहार मिलता है। अन्य ऋतुओं में क्रमशः जल की अल्पता के कारण आहार भी अल्प मिलता है।

ग्रीष्म ऋतु में सर्वाल्पाहारी होते हुए भी वनस्पतियाँ हरी-भरी क्यों रहती हैं ? क्योंकि ग्रीष्म ऋतु में जो वनस्पतियाँ पत्र, पुष्प, फलों से युक्त हरी-भरी दिखाई देती हैं, इसका कारण उस समय उष्णयोनिक जीवों और पुद्गलों के उत्पन्न होने, बढ़ने आदि का सिलसिला चालू हो जाना है। *(वृत्ति, पत्रांक ३००)*

Elaboration—Of the six seasons, plant-bodied beings have maximum nutrient intake during the pre-monsoon and monsoon seasons. This is because of availability of water, the nutrient carrier, in abundance due to rains. In other seasons there is a gradual decline of intake due to reduced supply of water.

In summer although there is least intake of nutrients, why the plants are green ? The reason for plants appearing lush green and loaded with leaves, flowers and fruits is that with the advent of summer the sprouting and growing of heat thriving organism and matter begins. (*Vritti, leaf 300*)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. [प्र.] से नूणं भंते ! मूला मूलजीवफुडा, कंदा कंदजीवफुडा जाव बीया बीयजीवफुडा ?

[उ.] हंता, गोयमा ! मूला मूलजीवफुडा जाव बीया बीयजीवफुडा।

३. [प्र.] भगवन् ! क्या वनस्पतिकाय के मूल, निश्चय ही मूल जीवों से स्पृष्ट (व्याप्त) होते हैं, कन्द-कन्द के जीवों से स्पृष्ट होते हैं, यावत् बीज, बीज के जीवों से स्पृष्ट होते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! मूल, मूल के जीवों से स्पृष्ट होते हैं, यावत् बीज, बीज के जीवों से स्पृष्ट होते हैं।

3. [Q.] *Bhante* ! Are the roots (mool) of plant-bodied beings essentially touched (pervaded) by living organism (souls) of the root-class (*mool-jivas*), trunk (*kand*) by *kand-jivas* (living organism of the trunk-class)... and so on up to... seed (*beej*) by *beej-jivas* ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Roots (*mool*) are touched (pervaded) by living organism (souls) of the root-class (*mool-jivas*)... and so on up to... seed (*beej*) by *beej-jivas*.

४. [प्र.] जइ णं भंते ! मूला मूलजीवफुडा जाव बीया बीयजीवफुडा, कम्हा णं भंते। वणस्सइकाइया आहारेंति ? कम्हा परिणामेंति ?

[उ.] गोयमा ! मूल मूलजीवफुडा पुढविजीवपडिबद्धा तम्हा आहारेंति, तम्हा परिणामेंति। कंदा कंदजीवफुडा मूलजीवपडिबद्धा तम्हा आहारेंति, तम्हा परिणामेंति। एवं जाव बीया बीयजीवफुडा फलजीवपडिबद्धा तम्हा आहारेंति, तम्हा परिणामेंति।

४. [प्र.] भगवन् ! यदि मूल, मूल जीवों से स्पृष्ट होते हैं, यावत् बीज, बीज के जीवों से स्पृष्ट होते हैं, तो फिर, भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीव किस प्रकार से (कैसे) आहार करते हैं, और किस तरह से उसे परिणमाते हैं ?

[उ.] गौतम ! मूल, मूल के जीवों से व्याप्त (स्पृष्ट) हैं और वे पृथ्वी के जीव के साथ सम्बद्ध (संयुक्त-जुड़े हुए) होते हैं, इस तरह से वनस्पतिकायिक जीव आहार करते हैं, और उसे परिणमाते हैं। इसी प्रकार कन्द, कन्द के जीवों के साथ स्पृष्ट (व्याप्त) होते हैं और मूल के जीवों से सम्बद्ध (जुड़े हुए) रहते हैं; इस प्रकार यावत् बीज, बीज के जीवों से व्याप्त (स्पृष्ट) होते हैं, और वे फल के जीवों के साथ सम्बद्ध रहते हैं; इस प्रकार वे आहार करते और उसे परिणमाते हैं।

4. [Q.] *Bhante* ! If roots (*mool*) are touched (pervaded) by living organism (souls) of the root-class (*mool-jivas*)... and so on up to... seed (*beej*) by *beej-jivas*, then, *Bhante* ! How do plant-bodied beings take in and digest nutrients ?

[Ans.] Gautam ! Roots (*mool*) are touched (pervaded) by living organism (souls) of the root-class (*mool-jivas*) and they, in turn, are linked with living organism (souls) of earth; that is how plant-bodied

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

beings take in and digest nutrients. In the same way trunks (*kand*) are touched by *kand-jivas* (living organism of the trunk class) and they, in turn, are linked with *mool-jivas* (living organism of root);... and so on up to... seeds (*beej*) are touched by *beej-jivas* (living organism of the seed class) and they, in turn, are linked with *phal-jivas* (living organism of fruit); that is how plant-bodied beings take in and digest nutrients.

विवेचन : वृक्षादि रूप वनस्पति के दस अंग होते हैं–मूल, कन्द, स्कन्ध, त्वचा (छाल), शाखा, प्रवाल, पत्र, पुष्प, फल और बीज।

मूलादि जीवों से व्याप्त मूलादि द्वारा आहारग्रहण–मूलादि, अपने-अपने जीवों से व्याप्त होते हुए भी परस्पर एक-दूसरे से सम्बद्ध रहते हैं। इस कारण मूल पृथ्वी से रस ग्रहण करते हैं और परम्परा से कन्द आदि सब एक-दूसरे से जुड़े हुए होने से अपना-अपना आहार ले लेते हैं और उसे परिणमाते हैं।

Elaboration—There are ten parts of trees and other plants — root (*mool*), trunk (*kand*), thick branch (*skandh*), bark (*chhaal*), branch (*shakha*), sprout (*praval*), leaf (*patra*), flower (*pushp*), fruit (*phal*) and seed (*beej*).

Intake—Roots and other parts of plants are pervaded by living organism of their specific classes but at the same time they are also linked with living organism of each other. This way the organism of roots take nutrients from earth and pass on the same to the next part in sequence in the aforesaid order to complete the cycle up to fruit.

वनस्पतियों में अनन्तजीवत्व CLUSTERS OF INFINITE SOULS IN PLANTS

५. [प्र.] अह भंते ! आलुए मूलए सिंगबेरे हिरिली सिरिली सिस्सिरिली किट्टिया छिरिया छीरविरालिया कण्हकंदे वज्जकंदे सूरणकंदे खिलूडे भद्दमुत्था पिंडहलिद्दा लोहीणी हूथिहमगा (थिरुगा) मुग्गकण्णी अस्सकण्णी सीहकण्णी सीहंढी मुसुंढी, जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते अणंतजीवा विविहसत्ता ?

[उ.] हंता, गोयमा ! आलुए मूलए जाव अणंतजीवा विविहसत्ता।

५. [प्र.] भगवन् ! आलू, मूला, शृंगबेर (अदरख), हिरिली, सिरिली (चीड़), सिस्सिरिली, किट्टिका (वाराहीकंद), छिरिया, छीरविदारिका, (सफेद और अधिक दूध वाला कंद), वज्रकन्द, सूरणकन्द, खिलूड़ा, (आर्द्र-) भद्रमोथा, (नागर मोक्ष), पिंडहरिद्रा (हल्दी की गाँठ), रोहिणी, हुथीहू, थिरुगा, मुद्गकर्णी, अश्वकर्णी, सिंहकर्णी (अडूसा), सिहण्डी (दूधिया थोहर), मुसुण्ढी (काली मुसली), ये और इसी प्रकार की जितनी भी दूसरी वनस्पतियाँ हैं, क्या वे सब अनन्त जीव वाली और विविध (पृथक्-पृथक्) जीव वाली हैं।

[उ.] हाँ, गौतम ! आलू, मूला यावत् मुसुण्ढी; ये और इसी प्रकार की जितनी भी दूसरी वनस्पतियाँ हैं, वे सब अनन्त जीव वाली और विविध (भिन्न-भिन्न) जीव वाली हैं। अर्थात् एककायिक होते हुए भी अनेक जीव पृथक्-पृथक् चेतन सत्ता वाले हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. [Q.] *Bhante* ! *Aalu* (potato), *Mula* (radish), *Shringaber* (ginger), *Hirili*, *Sirili* (*Cheed*; Pinus roxburghii Sargent), *Sissirili*, *Kittika* (*Varaha-kand*; Tacca leontopetaloides), *Chhiriya*, *Chhiravidarika*, *Vajra-kand*, *Suran-kand*, *Khiluda*, *Bhadra Motha* (*Naagar Motha*; Cyperus rotundus), *Pindaharidra* (turmeric), *Rohini*, *Huthihoo*, *Thiruga*, *Mudgakarni*, *Ashvakarni*, *Simhakarni* (*Adusa*; Adhatoda vasica), *Sihandi* (a type of cactus), *Musundhi* (Syaha Musli; Murdannia scapiflorum), are all these and other such vegetables with infinite and diverse living beings ?

[Ans.] Yes, Gautam ! *Aalu* (potato), *Mula* (radish)... and so on up to... *Musundhi*, all these and other such vegetables are with infinite and diverse living beings. In other words, in spite of being single bodied, these vegetables are clusters of numerous independent individual beings.

लेश्या की अपेक्षा अल्पकर्म महाकर्म **LESHYA AND KARMA**

६. [प्र. १] सिय भंते ! कण्हलेसे नेरइए अप्पकम्मतराए, नीललेसे नेरइए महाकम्मतराए ?

[उ.] हंता, गोयमा ! सिया।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'कण्हलेसे नेरइए अप्पकम्मतराए, नीललेसे नेरइए महाकम्मतराए' ?

[उ.] गोयमा ! ठितिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव महाकम्मतराए।

६. [प्र. १] भगवन् ! क्या कृष्णलेश्या वाला नैरयिक कदाचित् अल्पकर्म वाला और नीललेश्या वाला नैरयिक कदाचित् महाकर्म वाला होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! कदाचित् ऐसा होता है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कृष्णलेश्या वाला नैरयिक कदाचित् अल्पकर्म वाला होता है और नीललेश्या वाला नैरयिक कदाचित् महाकर्म वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! स्थिति की अपेक्षा से ऐसा कहा जाता है कि यावत् (नीललेश्या वाला नैरयिक कदाचित्) महाकर्म वाला होता है।

6. [Q. 1] *Bhante* ! Are black soul-complexioned (*Krishna leshya*) infernal beings sometimes with less *karmas* (*alpakarma*) and blue soul-complexioned (*Neel leshya*) infernal beings sometimes with much *karmas* (*mahakarma*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Sometimes it happens.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. [Q. 2] *Bhante* ! Why is it so that... and so on up to... blue soul-complexioned infernal beings sometimes with much *karmas* ?

[**Ans.**] It is in context of their remaining life-span that it is said that... and so on up to... blue soul-complexioned infernal beings sometimes with much *karmas*.

७. [प्र. १] सिय भंते ! नीललेसे नेरइए अप्पकम्मतराए, काउलेसे नेरइए महाकम्मतराए ?

[उ.] हंता, सिया।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'नीललेसे अप्पकम्मतराए, काउलेसे नेरइए महाकम्मतराए' ?

[उ.] गोयमा ! ठितिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा जाव महाकम्मतराए।

७. [प्र. १] भगवन् ! क्या नीललेश्या वाला नैरयिक कदाचित् अल्पकर्म वाला होता है और कापोतलेश्या वाला नैरयिक कदाचित् महाकर्म वाला होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! कदाचित् ऐसा होता है।

[प्र. २] भगवन् ! आप किस कारण से ऐसा कहते हैं कि नीललेश्या वाला नैरयिक कदाचित् अल्पकर्म वाला होता है और कापोतलेश्या वाला नैरयिक कदाचित् महाकर्म वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! स्थिति की अपेक्षा ऐसा कहता हूँ कि यावत् (कापोतलेश्या वाला नैरयिक कदाचित्) महाकर्म वाला होता है।

7. [Q. 1] *Bhante* ! Are blue soul-complexioned (*Neel leshya*) infernal beings sometimes with less *karmas* (*alpakarma*) and pigeon soul-complexioned (*Kapot leshya*) infernal beings sometimes with much *karmas* (*mahakarma*) ?

[**Ans.**] Yes, Gautam ! Sometimes it happens.

[**Q. 2**] *Bhante* ! Why is it so that... and so on up to... pigeon soul-complexioned infernal beings sometimes with much *karmas* ?

[**Ans.**] It is in context of their remaining life-span that it is said that... and so on up to... pigeon soul-complexioned infernal beings sometimes with much *karmas*.

८. एवं असुरकुमारे वि, नवरं तेउलेसा अब्भहिया।

८. इसी प्रकार असुरकुमारों के विषय में भी कहना चाहिए, परन्तु उनमें एक तेजोलेश्या अधिक होती है। (अर्थात् उनमें कृष्ण, नील, कापोत और तेजो; ये चार लेश्याएँ होती हैं।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

8. The same should be repeated for *Asur Kumar* gods but they have one *leshya* more. (In other words they have four *leshyas—Krishna* or black, *Neel* or blue, *Kapot* or pigeon and *Tejo* or fiery.)

९. [प्र.] एवं जाव वेमाणिया, जस्स जति लेसाओ तस्स तति भाणियव्वाओ। जोतिसियस्स न भण्णति।

जाव सिय भंते ! पम्हलेसे वेमाणिए अप्पकम्मतराए, सुक्कलेसे वेमाणिए महाकम्मतराए ?

[उ.] हंता, सिया।

[प्र.] से केणट्ठेणं० सेसं जहा नेरइयस्स जाव महाकम्मतराए।

९. [प्र.] इसी तरह यावत् वैमानिक देवों तक कहना चाहिए। जिसमें जितनी लेश्याएँ हों, उतनी कहनी चाहिए, किन्तु ज्योतिष्क देवों में केवल एक तेजोलेश्या ही होती है। अतः दूसरी लेश्या की अपेक्षा अल्पकर्मी महाकर्मी नहीं कहा जा सकता। (प्रश्नोत्तर की संयोजना इस प्रकार कर लेनी चाहिए, यथा–) भगवन् ! क्या पद्मलेश्या वाला वैमानिक कदाचित् अल्प कर्म वाला और शुक्ललेश्या वाला वैमानिक कदाचित् महाकर्म वाला होता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! कदाचित् होता है।

[प्र.] भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं ? (इसके उत्तर में) शेष सारा कथन नैरयिक की तरह यावत् 'महाकर्म वाला होता है'; यहाँ तक करना चाहिए।

9. [Q.] The same should be repeated for (all beings up to) *Vaimanik* gods. Number of *leshyas* specific to particular beings should be mentioned. It should be noted that *Jyotishk* (stellar) gods have only one *tejoleshya* therefore comparative statement about less and much is not possible. (The questions and answers should follow the same pattern as aforesaid, i. e.) *Bhante* ! Are yellow soul-complexioned (*Padma leshya*) divine beings sometimes with less *karmas* (*alpakarma*) and white soul-complexioned (*Shukla leshya*) divine beings sometimes with much *karmas* (*mahakarma*) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Sometimes it happens.

[Q.] *Bhante* ! Why is it so ? (in answer) rest of the statement should be stated like that about infernal beings... and so on up to... are sometimes with much *karmas* ?

विवेचन : सापेक्ष कथन का आशय–सामान्यतया कृष्णलेश्या वाला जीव महाकर्मी और नीललेश्या वाला जीव उससे अल्पकर्मी होता है, किन्तु आयुष्य की स्थिति की अपेक्षा से कृष्णलेश्यी जीव अल्पकर्मी और नीललेश्यी जीव महाकर्मी भी हो सकता है। उदाहरणार्थ–सप्तम नरक में उत्पन्न कोई कृष्णलेश्यी नैरयिक है, जिसने अपने आयुष्य की बहुत–सी स्थिति क्षय कर दी है, इस कारण उसने बहुत–से कर्म भी क्षय कर दिये हैं, किन्तु उसकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपेक्षा कोई नीललेश्यी नैरयिक दस सागरोपम की स्थिति से पंचम नरक में अभी तत्काल उत्पन्न हुआ है, उसने अपने आयुष्य की स्थिति अभी अधिक क्षय नहीं की। इस कारण पूर्वोक्त कृष्णलेश्यी नैरयिक की अपेक्षा इस नीललेश्यी के कर्म अभी बहुत बाकी हैं। इस दृष्टि से नीललेश्यी कृष्णलेश्यी की अपेक्षा महाकर्म वाला है।

Elaboration—The meaning of comparative statement—Generally a black soul-complexioned being is with much *karmas* and blue complexioned one is comparatively with less *karmas*. But in context of the remaining life-span a black soul-complexioned being can be with less *karmas* and blue complexioned one can be with much *karmas*. For example a black soul-complexioned infernal being in the seventh hell, when completes a larger part of his life-span he has shed a larger portion of his *karmas*. On the other hand a blue soul-complexioned infernal being just born in the fifth hell with a life-span of ten *Sagaropam* has not yet started completing his life-span and shedding his *karmas*. The blue soul-complexioned infernal being is left with much *karmas* as compared with black soul-complexioned infernal being who is left with less *karmas*. The aforesaid statements have been made from this angle.

वेदना और निर्जरा SUFFERING AND SHEDDING

१०. [प्र. १] से नूणं भंते ! जा वेदणा सा निज्जरा ? जा निज्जरा सा वेदणा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

१०. [प्र. १] भगवन् ! क्या वास्तव में, जो वेदना है, वह निर्जरा कही जा सकती है ? और जो निर्जरा है, वह वेदना कही जा सकती है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ उपयुक्त नहीं है।

10. [1] [Q.] *Bhante* ! In reality can suffering or experiencing (*vedana*) be called shedding (*nirjara*) and can shedding (*nirjara*) be called suffering (*vedana*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'जा वेयणा न सा निज्जरा, जा निज्जरा न सा वेयणा' ?

[उ.] गोयमा ! कम्मं वेदणा, णोकम्मं निज्जरा। से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव न सा वेदणा।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहा जाता है कि जो वेदना है, वह निर्जरा नहीं कही जा सकती और जो निर्जरा है, वह वेदना नहीं कही जा सकती ?

[उ.] गौतम ! वेदना कर्म है और निर्जरा नोकर्म है। इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि यावत् जो निर्जरा है, वह वेदना नहीं कही जा सकती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that suffering (*vedana*) cannot be called shedding (*nirjara*) and shedding (*nirjara*) cannot be called suffering (*vedana*) ?

[Ans.] Gautam ! (What causes) suffering (*vedana*) is *karma* (potent *karma* particles) and (what is) shed (*nirjara*) is *no-karma* (spent *karma* particles). That is why it is said that... and so on up to... shedding (*nirjara*) cannot be called suffering (*vedana*).

११. [प्र. १] नेरइयाणं भंते ! जा वेयणा सा निज्जरा ? जा निज्जरा सा वेदणा ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति नेरइयाणं जा वेयणा न सा निज्जरा, जा निज्जरा न सा वेयणा ?

[उ.] गोयमा ! नेरइयाणं कम्मं वेयणा, णोकम्मं निज्जरा। से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव न सा वेयणा।

१२. एवं जाव वेमाणियाणं।

११. [प्र. १] भगवन् ! क्या नैरयिकों की जो वेदना है, उसे निर्जरा कहा जा सकता है और जो निर्जरा है, उसे वेदना कहा जा सकता है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ उपयुक्त नहीं है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि नैरयिकों की जो वेदना है, उसे निर्जरा नहीं कहा जा सकता और जो निर्जरा है, उसे वेदना नहीं कहा जा सकता ?

[उ.] गौतम ! नैरयिकों की जो वेदना है, वह कर्म है और जो निर्जरा है, वह नोकर्म है। इस कारण से, हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूँ कि यावत् जो निर्जरा है, उसे वेदना नहीं कहा जा सकता।

१२. इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त (चौबीस ही दण्डकों में) कहना चाहिए।

11. [Q. 1] *Bhante* ! Can the suffering (*vedana*) of infernal beings be called shedding (*nirjara*) and can shedding (*nirjara*) by them be called suffering (*vedana*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] Bhante ! Why is it said that suffering (vedana) of infernal beings cannot be called shedding (*nirjara*) and shedding (*nirjara*) by them cannot be called suffering (*vedana*) ?

[Ans.] Gautam ! (What causes) suffering (*vedana*) to infernal beings is *karma* (potent *karma* particles) and (what is) shed (*nirjara*) by them is *no-karma* (spent *karma* particles). That is why it is said that... and so on up to... shedding (*nirjara*) cannot be called suffering (*vedana*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

12. The same should be repeated for (all twenty four *Dandaks*) up to *Vaimaniks*.

१३. [प्र. १] से नूणं भंते ! जं वेदेंसु तं निज्जरिंसु ? जं निज्जरिंसु तं वेदेंसु ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'जं वेदेंसु नो तं निज्जरेंसु, जं निज्जरेंसु नो तं वेदेंसु' ?

[उ.] गोयमा ! कम्मं वेदेंसु, नोकम्मं निज्जरिंसु, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो तं वेदेंसु।

१३. [प्र. १] भगवन् ! जिन कर्मों का वेदन कर (भोग) लिया, क्या उनको निर्जीर्ण कर लिया और जिन कर्मों को निर्जीर्ण कर लिया, क्या उनका वेदन कर लिया ?

[उ.] गौतम ! यह बात (अर्थ) शक्य नहीं है।

[प्र. २] भगवन् ! किस कारण से आप ऐसा कहते हैं कि जिन कर्मों का वेदन कर लिया, उनको निर्जीर्ण नहीं किया और जिन कर्मों को निर्जीर्ण कर लिया, उनका वेदन नहीं किया ?

[उ.] गौतम ! कर्मों का वेदन किया गया है, किन्तु निर्जीर्ण किया गया है–नोकर्मों को; इस कारण से, हे गौतम ! मैंने कहा कि यावत्.... उनका वेदन नहीं किया।

13. [Q. 1] *Bhante* ! Are the *karmas* that have been experienced (*vedana*) have also been shed (*nirjara*) ? And the *karmas* that have been shed have already been experienced ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that the *karmas* that have been experienced (*vedana*) have not been shed (*nirjara*) ? And the *karmas* that have been shed have not already been experienced ?

[Ans.] Gautam ! What is experienced (*vedana*) is *karma* (potent *karma* particles) but what is shed (*nirjara*) is *no-karma* (spent *karma* particles). That is why it is said that... and so on up to... have not already been experienced.

१४. [प्र.] नेरइया णं भंते ! जं वेदेंसु तं निज्जरिंसु ?

[उ.] एवं नेरइया वि।

१५. एवं जाव वेमाणिया।

१४. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीवों ने जिस कर्म का वेदन कर लिया, क्या उसे निर्जीर्ण कर लिया ?

[उ.] पहले कहे अनुसार नैरयिकों के विषय में भी जान लेना चाहिए।

१५. इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डक में कथन करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

14. [Q.] *Bhante* ! Are the *karmas* that have been experienced (*vedana*) by infernal beings have also been shed (*nirjara*) ?

[Ans.] Gautam ! The aforesaid (answer of aphorism 13) should be repeated about infernal beings also.

15. The same should be repeated for (all twenty four *Dandaks*) up to *Vaimaniks*.

१६. [प्र. १] से नूणं भंते ! जं वेदेंति तं निज्जरेंति, जं निज्जरेंति तं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति जाव 'नो तं वेदेंति' ?

[उ.] गोयमा ! कम्मं वेदेंति, नोकम्मं निज्जरेंति। से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो तं वेदेंति।

१७. एवं नेरइया वि जाव वेमाणिया।

१६. [प्र. १] भगवन् ! क्या वास्तव में जिस कर्म को वेदते हैं, उसकी निर्जरा करते हैं और जिसकी निर्जरा करते हैं, उसको वेदते हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ उपयुक्त नहीं है।

[प्र. २] भगवन् ! यह आप किस कारण से कहते हैं कि जिसको वेदते हैं, उसकी निर्जरा नहीं करते और जिसकी निर्जरा करते हैं, उसको वेदते नहीं हैं ?

[उ.] गौतम ! कर्म को वेदते हैं, और नोकर्म को निर्जीर्ण करते हैं। इस कारण से हे गौतम ! मैं कहता हूँ कि यावत् जिसको निर्जीर्ण करते हैं, उसका वेदन नहीं करते।

१७. इसी तरह नैरयिकों के विषय में जानना चाहिए। यावत् वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डकों में इसी तरह कहना चाहिए।

16. [Q. 1] *Bhante* ! Is it true that the *karma* that is experienced (*vedana*) is also shed and that which is shed is also experienced ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that... and so on up to... that which is shed is not experienced ?

[Ans.] Gautam ! *Karma* is what is experienced and *no-karma* is what is shed. That is why, Gautam ! I say that... and so on up to... that which is shed is not experienced.

17. The same should be repeated for infernal beings... and so on up to... (all twenty four *Dandaks*) up to *Vaimaniks*.

१८. [प्र. १] से नूणं भंते ! जं वेदिस्संति तं निज्जरिस्संति ? जं निज्जरिस्संति तं वेदिस्संति ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव 'णो तं वेदिस्संति' ?

[उ.] गोयमा ! कम्मं वेदिस्संति, नोकम्मं निज्जरिस्संति। से तेणट्ठेणं जाव नो तं निज्जरि(वेदि)स्संति।

१९. एवं नेरइया वि जाव वेमाणिया।

१८. [प्र. १] भगवन् ! क्या वास्तव में, जिस कर्म का वेदन करेंगे, उसकी निर्जरा करेंगे और जिस कर्म की निर्जरा करेंगे, उसका वेदन करेंगे ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि यावत् उसका वेदना नहीं करेंगे ?

[उ.] गौतम ! कर्म का वेदन करेंगे, नोकर्म की निर्जरा करेंगे। इस कारण से ऐसा कहा जाता है कि जिसका वेदन करेंगे, उसकी निर्जरा नहीं करेंगे और जिसकी निर्जरा करेंगे, उसका वेदन नहीं करेंगे।

१९. इसी तरह नैरयिकों के विषय में जान लेना चाहिए। यावत् वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डकों में इसी तरह कहना चाहिए।

18. [Q. 1] *Bhante* ! Is it true that the *karma* that will be experienced (*vedana*) will also be shed and that which will be shed will also be experienced ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that... and so on up to... that which will be shed will not be experienced ?

[Ans.] Gautam ! *Karma* is what will be experienced and *no-karma* is what will be shed. That is why, Gautam ! I say that... and so on up to... that which will be shed will not be experienced.

19. The same should be repeated for infernal beings... and so on up to... (all twenty four *Dandaks*) up to *Vaimaniks*.

२०. [प्र. १] से नूणं भंते ! जे वेदणासमए से निज्जरासमए, जे निज्जरासमए से वेदणासमए ?

[उ.] गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'जे वेदणासमए न से णिज्जरासमए, जे निज्जरासमए न से वेदणासमए ?

[उ.] गोयमा ! जं समयं वेदेंति नो तं समयं निज्जरेंति, जं समयं निज्जरेंति नो तं समयं वेदेंति; अन्नम्मि समए वेदेंति, अन्नम्मि समए निज्जरेंति; अन्ने से वेदणासमए, अन्ने से निज्जरासमए। से तेणट्ठेणं जाव न से वेदणासमए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. [प्र. १] भगवन् ! जो वेदना का समय है, क्या वह निर्जरा का समय है और जो निर्जरा का समय है, वह वेदना का समय है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि जो वेदना का समय है, वह निर्जरा का समय नहीं है और जो निर्जरा का समय है, वह वेदना का समय नहीं है ?

[उ.] गौतम ! जिस समय में वेदते हैं, उस समय निर्जरा नहीं करते और जिस समय निर्जरा करते हैं, उस समय वेदन नहीं करते। अन्य समय में वेदन करते हैं और अन्य समय में निर्जरा करते हैं। वेदना का समय दूसरा है और निर्जरा का समय दूसरा है। इसी कारण से, हे गौतम ! मैं कहता हूँ कि ... यावत् निर्जरा का जो समय है, वह वेदना का समय नहीं है।

20. [Q. 1] *Bhante* ! Is it true that what is the time of experiencing (*vedana*) *karma* is also the time of shedding (*nirjara*) it ? And what is the time of shedding *karma* is also the time of experiencing it ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that what is the time of experiencing is not the time of shedding ? And what is the time of shedding is not the time of experiencing ?

[Ans.] Gautam ! At the time of experiencing shedding is not done and at the time of shedding experiencing is not done. Experiencing is done at a different time and shedding is done at a different time. Time of experiencing is different and that of shedding is different. That is why I say that... and so on up to... what is the time of shedding is not the time of experiencing.

२१. [प्र. १] नेरइयाणं भंते ! जे वेदणासमए से निज्जरासमए ? जे निज्जरासमए से वेदणासमए ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'नेरइयाणं जे वेदणासमए न से निज्जरासमए, जे निज्जरासमए न से वेदणासमए' ?

[उ.] गोयमा ! नेरइया णं जं समयं वेदेंति णो तं समयं निज्जरेंति, जं समयं निज्जरेंति नो तं समयं वेदेंति; अन्नम्मि समए वेदेंति, अन्नम्मि समए निज्जरेंति; अन्ने से वेदणासमए, अन्ने से निज्जरासमए। से तेणट्ठेणं जाव न से वेदणासमए।

२२. एवं जाव वेमाणियाणं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. [प्र. १] भगवन् ! क्या नैरयिक जीवों का जो वेदना का समय है, वह निर्जरा का समय है और जो निर्जरा का समय है, वह वेदना का समय है ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि नैरयिकों के जो वेदना का समय है, वह निर्जरा का समय नहीं है और जो निर्जरा का समय है, वह वेदना का समय नहीं है ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव, जिस समय में वेदन करते हैं, उस समय में निर्जरा नहीं करते और जिस समय में निर्जरा करते हैं, उस समय में वेदन नहीं करते। अन्य समय में वे वेदन करते हैं और अन्य समय में निर्जरा करते हैं। उनके वेदना का समय दूसरा है और निर्जरा का समय दूसरा है। इस कारण से, मैं ऐसा कहता हूँ कि यावत् जो निर्जरा का समय है, वह वेदना का समय नहीं है।

२२. इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त चौबीस ही दण्डकों में कहना चाहिए।

21. [Q. 1] *Bhante* ! In case of infernal beings, what is the time of experiencing (*vedana*) *karma* is also the time of shedding (*nirjara*) it ? And what is the time of shedding karma is also the time of experiencing it ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct.

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that in case of infernal beings what is the time of experiencing is not the time of shedding ? And what is the time of shedding is not the time of experiencing ?

[Ans.] Gautam ! In case of infernal beings at the time of experiencing shedding is not done and at the time of shedding experiencing is not done. Experiencing is done at a different time and shedding is done at a different time. Time of experiencing is different and that of shedding is different. That is why I say that... and so on up to... what is the time of shedding is not the time of experiencing.

22. The same should be repeated... and so on up to... (all twenty four *Dandaks*) up to *Vaimaniks*.

विवेचन : वेदना और निर्जरा में अन्तर—उदयप्राप्त कर्म को भोगना 'वेदना' है। और जो कर्म भोगकर क्षय कर दिया गया है, उसे 'वेदित रस कर्म', 'नोकर्म' निर्जरा कहते हैं। वेदना का हेतु कर्म है। इसी कारण वेदना को (उदयप्राप्त) कर्म कहा गया है और निर्जरा को नोकर्म (स्वत्त्वहीन कर्म)। तात्पर्य यह है कि कार्मण वर्गणा के पुद्गल सदैव विद्यमान रहते हैं, किन्तु वे सदा कर्म नहीं कहलाते। कषाय और योग के निमित्त से जीव के साथ बद्ध होने पर ही उन्हें 'कर्म' संज्ञा प्राप्त होती है और वेदन के अन्तिम समय तक उसकी कर्म संज्ञा रहती है। निर्जरा होने पर वे पुद्गल 'कर्म' नहीं रहते, नोकर्म (अकर्म) हो जाते हैं।

Elaboration—Difference between Vedana and Nirjara—To experience precipitated or fructified *karma* is *vedana*. On being experienced after

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

fruition a *karma* particle loses its potency. Such spent *karma* particle is called *no-karma*. The shedding of this *no-karma* is called *nirjara*. Karma is the cause of experience (*vedana*). That is why *vedana* is called fructified *karma*, or simply *karma*. And *nirjara* is called *no-karma* (spent *karma* or *karma* devoid of potency). In other words although *karmic* particles always exist, they are not always called *karma*. They are classified as *karma* only when they fuse with soul due to passions (*kashaya*) and association (*yoga*). They remain *karma* till the last moment of experience. Once they lose their potency they no more remain *karma* but turn into *no-karma* and are shed.

जीवों की शाश्वतता–अशाश्वतता **ETERNALITY AND NON-ETERNALITY OF JIVAS**

२३. [प्र. १] नेरइया भंते ! किं सासया, असासया ?

[उ.] गोयमा ! सिय सासया, सिय असासया।

[प्र. १] भगवन् ! नैरयिक जीव शाश्वत हैं या अशाश्वत हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव कथंचित् शाश्वत हैं और कथंचित् अशाश्वत हैं।

23. [Q. 1] *Bhante* ! Are infernal beings eternal (*shaashvat*) or non-eternal (*ashaashvat*) ?

[Ans.] Gautam ! Infernal beings are sometimes eternal (*shaashvat*) and sometimes non-eternal (*ashaashvat*).

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'नेरइया सिय सासया, सिय असासया' ?

[उ.] गोयमा ! अव्वोच्छित्तिनयट्ठताए सासया, वोच्छित्तिणयट्ठयाए असासया। से तेणट्ठेणं जाव सिय असासया।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि नैरयिक जीव कथंचित् शाश्वत हैं और कथंचित् अशाश्वत हैं ?'

[उ.] गौतम ! अव्युच्छित्ति (द्रव्यार्थिक) नय की अपेक्षा से नैरयिक जीव शाश्वत हैं और व्युच्छित्ति (पर्यायार्थिक) नय की अपेक्षा से नैरयिक जीव अशाश्वत हैं। इस कारण से, गौतम ! मैं ऐसा कहता हूँ कि नैरयिक जीव कथंचित् शाश्वत हैं और कथंचित् अशाश्वत हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Why did you say that infernal beings are sometimes eternal (*shaashvat*) and sometimes non-eternal (*ashaashvat*) ?

[Ans.] Gautam ! From the existent material aspect or substantial standpoint (*avyuchchhitti naya* or *dravyarthik naya*) infernal beings are eternal (*shaashvat*) and from transformational aspects or modal stand point (*vyuchchhitti naya* or *paryayarthik naya*) infernal beings are non-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

eternal (*ashaashvat*). That is why, Gautam ! I say that infernal beings are sometimes eternal (*shaashvat*) and sometimes non-eternal (*ashaashvat*).

२४. एवं जाव वेमाणियाणं जाव सिय असासया।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ सत्तम सए : तइओ उद्देसओ समत्तो ॥

२४. इसी प्रकार यावत् वैमानिक देव-पर्यन्त कहना चाहिए कि वे कथंचित् शाश्वत हैं और कथंचित् अशाश्वत हैं। यावत् इसी कारण से मैं कहता हूँ कि वैमानिक देव कथंचित् शाश्वत हैं, कथंचित् अशाश्वत हैं।

भगवन् ! 'यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', इस प्रकार कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।

24. The same should be repeated... and so on up to... (all twenty four *Dandaks*) up to *Vaimaniks* (sometimes eternal and sometimes non-eternal). That is why I say that *Vaimanik Devs* are sometimes eternal and sometimes non-eternal.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : सारांश—नरक कभी भी नैरयिकों से शून्य नहीं होता। अतः प्रवाह की दृष्टि से नैरयिक शाश्वत है और एक-एक व्यक्ति की अपेक्षा वह अशाश्वत है।

॥ सप्तम शतक : तृतीय उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Gist—Hells are never devoid of infernal beings, therefore in terms of continuity the existence of infernal beings is eternal. However, in terms of single infernal being they are non-eternal.

● END OF THE THIRD LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : चतुर्थ उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : FOURTH LESSON

जीव JIVA (LIVING BEINGS)

षड्विध संसारसमापन्नक जीव SIX KINDS OF WORLDLY LIVING BEINGS

१. रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी--

२. [प्र.] कतिविहा णं भंते ! संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! छव्विहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता, तं जहा--पुढविकाइया एवं जहा जीवाभिगमे जाव सम्मत्तकिरियं वा मिच्छत्तकिरियं वा।

[संग्रहणी गाथा (वाचनान्तरे)-- जीवा छव्विह पुढवी जीवाण ठिती, भवट्ठिती काए।
निल्लेवण अणगारे किरिया सम्मत्त मिच्छत्ता।।]

सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति० !

।। सत्तम सए : चउत्थो उद्देसओ समत्तो ।।

१. राजगृह नगर में (श्री गौतम स्वामी ने) श्रमण भगवान महावीर से इस प्रकार पूछा-

२. [प्र.] भगवन् ! संसारसमापन्नक (संसारी) जीव कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! संसारसमापन्नक जीव छह प्रकार के हैं। यथा-(१) पृथ्वीकायिक, (२) अप्कायिक, (३) तेजस्कायिक, (४) वायुकायिक, (५) वनस्पतिकायकि, एवं (६) त्रसकायिक।

इस प्रकार यह समस्त वर्णन जीवाभिगमसूत्र के तिर्यंच-सम्बन्धी दूसरी उद्देशक में कहे अनुसार सम्यक्त्वक्रिया और मिथ्यात्वक्रिया पर्यन्त कहना चाहिए।

[गाथा का अर्थ-(१) जीव के छह भेद, (२) पृथ्वीकायिक जीवों के छह भेद, (३) पृथ्वीकायिक आदि जीवों की स्थिति, भवस्थिति, सामान्य कायस्थिति, (४) निर्लेपन, (५) अनगार--सम्बन्धी वर्णन, (६) सम्यक्त्वक्रिया और मिथ्यात्वक्रिया।]

1. In the city of Rajagriha... and so on up to... Gautam Swami asked Shraman Bhagavan Mahavir as follows :

2. [Q.] *Bhante* ! How many kinds of worldly living beings (*Samsar-samapannak jivas*) are there ?

[Ans.] Gautam ! Worldly living beings (*samsar-samapannak jivas*) are of six kinds—(1) earth-bodied (*prithvikayik*), (2) water-bodied (*apkayik*), (3) fire-bodied (*tejaskayik*), (4) air-bodied (*vayukayik*), (5) plant-bodied (*vanaspatikayik*), and (6) mobile-bodied (*traskayik*). This way the whole

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

description should be excerpted from the second lesson about animals from *Jivabhigam Sutra* up to *Samyaktvakriya* (righteous activity) and *Mithyatvakriya* (unrighteous activity).

[**Collative verse**—(1) Six kinds of living beings (*jiva*), (2) six kinds of earth-bodied beings, (3) state of being, life-span and state of body of earth-bodied and other beings, (4) cleansing (*nirlepan*), (5) description of the homeless, and (6) *Samyaktvakriya* (righteous activity) and *Mithyatvakriya* (unrighteous activity).]

विवेचन : यह गाथा वाचनान्तर की है, जिसमें जीवाभिगमसूत्र के दूसरे उद्देशक में कथित विषयों का विस्तृत वर्णन यहाँ करने की सूचना दी है। पाठक इसके लिए देखें श्री अमर मुनि जी द्वारा सम्पादित व्याख्याप्रज्ञप्ति, भाग २, पृष्ठ १४७-१७८, आगम प्रकाशन समिति, ब्यावर।

॥ सप्तम शतक : चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—This verse is from an alternative text and lists the topics to be quoted from the second lesson of *Jivabhigam Sutra*. For details of this refer to *Vyakhyaprajnapti* part 2 edited by Shri Amar Muni ji and published from Agam Prakashan Samiti, Beawar.

● END OF THE FOURTH LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : पंचम उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : FIFTH LESSON

पक्षी PAKSHI (BIRDS)

खेचर–पंचेन्द्रिय जीवों के भेद KINDS OF AERIAL BEINGS

१. रायगिहे जाव एवं वयासी–

२. [प्र.] खहयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं भंते ! कतिविहे जोणीसंगहे पण्णत्ते ?

[उ.] गोयमा ! तिविहे जोणीसंगहे पण्णत्ते, तं जहा–अंडया, पोयया, सम्मुच्छिमा। एवं जहा जीवाभिगमे जाव नो चेव णं ते विमाणे वीतीवएज्जा। एमहालया णं गोयमा ! ते विमाणा पण्णत्ता।

[संग्रहणी गाथा (वाचनान्तर)– 'जोणीसंगह लेसा दिट्ठी णाणे य जोग–उवओग।
उववाय–ट्ठिइ–समुग्घाय–चवण–जाइ–कुल–विहीओ॥]

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ सत्तम सए : पंचमो उद्देसओ समत्तो ॥

१. राजगृह नगर में (गौतम स्वामी ने भगवान महावीर से) इस प्रकार पूछा–

२. [प्र.] भगवन् ! खेचर पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवों का योनिसंग्रह कितने प्रकार का है ?

[उ.] गौतम ! (खेचर पंचेन्द्रिय तिर्यंच जीवों का) योनिसंग्रह तीन प्रकार का है। यथा-(१) अण्डज, (२) पोतज, और (३) सम्मूर्च्छिम। इस प्रकार (आगे का सारा वर्णन) जीवाभिगमसूत्र में कहे अनुसार यावत् 'उन विमानों का उल्लंघन नहीं किया जा सकता, हे गौतम ! वे विमान इतने महान् (बड़े) कहे गये हैं;' यहाँ तक कहना चाहिए।

[संग्रहणी गाथा का अर्थ–योनिसंग्रह, लेश्या, दृष्टि, ज्ञान, योग, उपयोग, उपपात, स्थिति, समुद्घात, च्यवन और जाति–कुलकोटि।]

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरने लगे।

1. In the city of Rajagriha... and so on up to... Gautam Swami asked Shraman Bhagavan Mahavir as follows :

2. [Q.] *Bhante* ! How many ways of birth (*yoni samgraha*) do aerial five-sensed animals or birds (*khechar panchendriya tiryanch*) have ?

[Ans.] Gautam ! They have three kinds of ways of birth (*yoni samgraha*)—(1) *Andaj* (birth from an egg), (2) *Potaj* (birth as fully

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

formed infants) and (3) *Sammoorchchhim* (birth from asexual origin). This way the whole description should be excerpted from *Jivabhigam Sutra* up to 'so expansive are those *vimaans* (celestial vehicles) said to be that they cannot be crossed through'.

[Collative verse—Ways of birth (*yoni samgraha*), soul complexion (*leshya*), outlook or perception (*drishti*), knowledge (*jnana*), association (yoga), cognition (*upayoga*), genesis (*upapat*), life-span (*sthiti*), bursting forth (*samudghat*), descent (*chyavan*), and caste-lineage (*jaati-kulakoti*).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : खेचर पंचेन्द्रिय जीवों के योनिसंग्रह के प्रकार–उत्पत्ति के हेतु को **योनि** कहते हैं, तथा अनेक का कथन एक शब्द द्वारा कर दिया जाये, उसे **संग्रह** कहते हैं। खेचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय अनेक प्रकार के होते हुए भी उक्त तीन प्रकार के योनिसंग्रह द्वारा उनका कथन किया गया है। **अण्डज**–अण्डे से उत्पन्न होने वाले मोर, कबूतर, हंस आदि। **पोतज**–जरायु (जड़–जेर) बिना उत्पन्न होने वाले चिमगादड़ आदि। **सम्मूर्छिम**–माता–पिता के संयोग के बिना उत्पन्न होने वाले।

जीवाभिगमसूत्रानुसार खेचर पंचेन्द्रिय तिर्यंच में लेश्या ६, दृष्टि–३, ज्ञान–३ (भजना से), अज्ञान–३ (भजना से), योग–३, उपयोग–२ पाये जाते हैं। सामान्यतः ये चारों गति से आते हैं, और चारों गतियों में जाते हैं। इनकी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पल्योपम के असंख्यातवें भाग है। केवलीसमुद्घात और आहारसमुद्घात को छोड़कर इनमें पाँच समुद्घात पाये जाते हैं। इनकी बारह लाख कुलकोड़ी है।

इस प्रकरण में अन्तिम सूत्र विजय, वैजयन्त, जयन्त और अपराजित विमान का है। इन चारों विमानों का विस्तार इतना है कि यदि कोई देव नौ आकाशान्तर प्रमाण (८,५०,७४० $\frac{१८}{६०}$ योजन) का एक डग भरता हुआ छह महीने तक चले तो किसी विमान के अन्त को प्राप्त करता है, किसी विमान के अन्त को नहीं। जीवाभिगम से विस्तृत वर्णन जान लेना चाहिए।

॥ सप्तम शतक : पंचम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—Ways of birth of birds—Place or way of birth is called *yoni*. *Samgraha* means collection, here it is used as suffix for making the plural form. Although birds are of many kinds they can be put into aforesaid three classes in context of way of birth. *Andaj*, or born from an egg, as are peacock, pigeon, swan etc. *Potaj* or born as fully formed infants, as are bats. *Sammoorchchhim*, or produced from asexual origin.

According to Jivabhigam Sutra birds or *khechar panchendriya tiryanch* have six types of soul-complexions (leshya), three perceptions (*drishti*), three types of knowledge (sometimes and sometimes not), three types of ignorance (sometimes and sometimes not), three types of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

associations (*yoga*), and two types of cognitions. Generally speaking these beings come from four genuses and go also to four genuses. Their life span is minimum *Antar-muhurt* (less than forty eight minutes) and maximum innumerable fraction of a *Palyopam*. Leaving aside *Kevali Samudghat* and *Ahaar Samudghat*, they have five types of *Samudghat*. They have 1.2 million caste-lineages or species.

In this section of *Jivabhigam Sutra* the last aphorism is about Vijaya, Viajayant, Jayant and Aparajit celestial vehicles. The expanse of these celestial vehicles is so large that if a divine being walks for six months with one step covering 8,50,740 $\frac{18}{60}$ *Yojans*, he may cross some *vimaan* and not others. For more details refer to *Jivabhigam Sutra*.

● END OF THE FIFTH LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : छठा उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : SIXTH LESSON

आयु AYU (LIFE-SPAN)

आयुष्य का बन्ध और वेदन **BONDAGE AND EXPERIENCING OF AYUSHYA**

१. रायगिहे जाव एवं वयासी–

२. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं इहगते नेरइयाउयं पकरेति ? उववज्जमाणए नेरइयाउयं पकरेति ? उववन्ने नेरइयाउयं पकरेति ?

[उ.] गोयमा ! इहगते नेरइयाउयं पकरेइ, नो उववज्जमाणे नेरइयाउयं पकरेइ, नो उववन्ने नेरइयाउयं पकरेइ।

३. एवं असुरकुमारेसु वि। ४. एवं जाव वेमाणिएसु।

१. राजगृह नगर में (गौतम स्वामी ने भगवान महावीर से) इस प्रकार पूछा–

२. [प्र.] भगवन् ! जो जीव नारकों (नैरयिकों) में उत्पन्न होने योग्य है वह क्या इस भव में रहता हुआ नारकायुष्य बाँधता है, अथवा वहाँ (नरक में) उत्पन्न होता हुआ नारकायुष्य बाँधता है या फिर (नरक में) उत्पन्न होने पर नारकायुष्य बाँधता है ?

[उ.] गौतम ! वह जीव इस भव में रहता हुआ ही नारकायुष्य बाँध लेता है, परन्तु नरक में उत्पन्न होता हुआ नारकायुष्य नहीं बाँधता और न नरक में उत्पन्न होने पर नारकायुष्य बाँधता है।

३. इसी प्रकार असुरकुमारों के विषय में। ४. इसी प्रकार यावत् वैमानिकपर्यन्त कहना चाहिए।

1. In the city of Rajagriha... and so on up to... Gautam Swami asked Shraman Bhagavan Mahavir as follows :

2. [Q.] *Bhante* ! Does a *jiva* (soul) destined to be born among infernal beings acquires the bondage of *naarakayushya karma* (infernal life-span determining *karma*) right here during this birth, or acquires the bondage of *naarakayushya karma* while he is in the process of being born among infernal beings, or acquires the bondage of *naarakayushya karma* after he is born among infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! That *jiva* (soul) acquires the bondage of *naarakayushya karma* (infernal life-span determining *karma*) right here during this birth. He does not acquire the bondage of *naarakayushya karma* while he is in the process of being born among infernal beings nor does he acquire the bondage of *naarakayushya karma* after he is born among infernal beings.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

3. The same should be repeated for *Asur Kumar* gods. 4. and so on up to... *Vaimaniks*.

५. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं इहगते नेरइयाउयं पडिसंवेदेति ? उववज्जमाणए नेरइयाउयं पडिसंवेदेति ? उववन्ने नेरइयाउयं पडिसंवेदेति ?

[उ.] गोयमा ! णो इहगते नेरइयाउयं पडिसंवेदेइ, उववज्जमाणे नेरइयाउयं पडिसंवेदेति, उववन्ने वि नेरइयाउयं पडिसंवेदेति।

६. एवं जाव वेमाणिएसु।

५. [प्र.] भगवन् ! जो जीव नारकों में उत्पन्न होने वाला है, भगवन् ! क्या वह इस भव में रहता हुआ नरकायुष्य का वेदन (प्रतिसंवेदन) करता है, या वहाँ उत्पन्न होता हुआ नरकायुष्य का वेदन करता है, अथवा वहाँ उत्पन्न होने के पश्चात् नरकायुष्य का वेदन करता है ?

[उ.] गौतम ! वह (नरक में उत्पन्न होने योग्य जीव) इस भव में रहता हुआ नरकायुष्य का वेदन नहीं करता, किन्तु वहाँ उत्पन्न होता हुआ वह नरकायुष्य का वेदन करता है, और उत्पन्न होने के पश्चात् भी नरकायुष्य का वेदन करता है।

६. इसी प्रकार असुर कुमारों से वैमानिक तक चौबीस दण्डकों में (आयुष्यवेदन का) कथन करना चाहिए।

5. [Q.] *Bhante* ! Does a *jiva* (soul) destined to be born among infernal beings experiences *naarakayushya* (infernal life-span) right here during this birth, or experiences *naarakayushya* while he is in the process of being born among infernal beings, or experiences *naarakayushya* after he is born among infernal beings ?

[Ans.] Gautam ! That *jiva* (soul) experiences *naarakayushya* (infernal life-span) not here during this birth. He experiences the *naarakayushya* while he is in the process of being born among infernal beings as well as after he is born among infernal beings.

6. The same should be repeated for *Asur Kumar* gods... and so on up to... *Vaimaniks* (all twenty four *Dandaks*).

विवेचन : इन सूत्रों में आयुष्य निर्धारण का सार्वभौम नियम सूचित किया है कि किसी भी जीव के अगले जन्म के आयुष्य का निर्धारण इसी भव में हो जाता है, उसके पश्चात् ही जीव परलोक की यात्रा प्रारम्भ करता है।

Elaboration—These aphorisms inform about the universal law of determination of life-span. And it is that the life-span of the next birth of any living being is fixed right in this birth. Only then he starts the journey of the next life.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए नेरइएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! किं इहगए महावेदणे, उववज्जमाणे महावेदणे उववन्ने महावेदणे ?

[उ.] गोयमा ! इहगते सिय महावेयणे, सिय अप्पवेदणे; उववज्जमाणे सिय महावेदणे, सिय अप्पवेदणे; अहे णं उववन्ने भवति तओ पच्छा एगंतदुक्खं वेदणं वेदेति, आहच्च सायं।

७. [प्र.] भगवन् ! जो जीव नारकों में उत्पन्न होने वाला है क्या वह यहाँ (इस भव में) रहता हुआ ही महावेदना वाला हो जाता है, या नरक में उत्पन्न होता हुआ महावेदना वाला होता है, अथवा नरक में उत्पन्न होने के पश्चात् महावेदना वाला होता है ?

[उ.] गौतम ! वह (नरक में उत्पन्न होने वाला जीव) इस भव में रहा हुआ कदाचित् महावेदना वाला होता है, कदाचित् अल्पवेदना वाला होता है। नरक में उत्पन्न होता हुआ भी कदाचित् महावेदना वाला और कदाचित् अल्पवेदना वाला होता है; किन्तु जब नरक में उत्पन्न हो जाता है, तब वह एकान्त दुःखरूप वेदना वेदता है, कदाचित् सुख (साता) रूप (वेदना वेदता है)।

7. [Q.] *Bhante* ! Does a *jiva* (soul) destined to be born among infernal beings experiences great pain right here during this birth, or experiences great pain while he is in the process of being born in hell, or experiences great pain after he is born in hell ?

[Ans.] Gautam ! That *jiva* (soul) sometimes experiences great pain and sometimes not during this birth. He sometimes experiences great pain and sometimes not while he is in the process of being born in hell. But after he is born in hell he mostly experiences great pain and very rarely some relief or pleasure.

८. [प्र. १] जीवे णं भंते ! जे भविए असुरकुमारेसु उववज्जित्तए पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! इहगते सिय महावेदणे, सिय अप्पवेदणे; उववज्जमाणे सिय महावेदणे, सिय अप्पवेदणे; अहे णं उववन्ने भवति तओ पच्छा एगंतसातं वेदणं वेदेति, आहच्च असातं।

[२] एवं जाव थणियकुमारेसु।

८. [प्र. १] भगवन् ! जो जीव असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाला है, (उसके सम्बन्ध में भी) यही प्रश्न है।

[उ.] गौतम ! (असुरकुमारों में उत्पन्न होने वाला जीव) यहाँ (इस भव में) रहा हुआ तथा वहाँ उत्पन्न होता हुआ कदाचित् महावेदना वाला और कदाचित् अल्पवेदना वाला होता है, किन्तु जब वह वहाँ उत्पन्न हो जाता है, तब एकान्तसुख (साता) रूप वेदना वेदता है, कदाचित् दुःख (असाता) रूप वेदना वेदता है।

[२] इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

8. [Q. 1] *Bhante* ! What about a *jiva* (soul) destined to be born among *Asur Kumar* gods ?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* (soul) destined to be born among *Asur Kumar* gods experiences sometimes great pain and sometimes little pain during this birth and also while he is in the process of being born in the divine realm. But after he is born there he mostly experiences pleasure (*saata vedana*) and very rarely pain (*asaata vedana*).

[2] The same should be repeated (for divine realms) up to *Stanit Kumars*.

९. [प्र.] जीवे णं भंते ! जे भविए पुढविकाएसु उववज्जित्तए पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! इहगए सिय महावेदणे, सिय अप्पवेदणे; एवं उववज्जमाणे वि; अहे णं उववन्ने भवति तओ पच्छा वेमायाए वेदणं वेदेति।

१०. एवं जाव मणुस्सेसु।

११. वाणमंतर–जोतिसिय–वेमाणिएसु जहा असुरकुमारेसु (सु. ८ [१])

९. [प्र.] भगवन् ! जो जीव पृथ्वीकाय में उत्पन्न होने योग्य है, (उसके सम्बन्ध में भी) यही पृच्छा है।

[उ.] गौतम ! वह (पृथ्वीकाय में उत्पन्न होने योग्य) जीव इस भव में रहा हुआ कदाचित् महावेदनायुक्त और कदाचित् अल्पवेदनायुक्त होता है, इसी प्रकार वहाँ उत्पन्न होता हुआ भी वह कदाचित् महावेदना और कदाचित् अल्पवेदना से युक्त होता है और जब वहाँ उत्पन्न हो जाता है, तत्पश्चात् वह विमात्रा (विविध प्रकार) से वेदना वेदता है।

१०. इसी प्रकार का कथन मनुष्यपर्यन्त करना चाहिए।

११. जिस प्रकार असुरकुमारों के विषय में (अल्पवेदना–महावेदना–सम्बन्धी) कथन किया गया है, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिष्क और वैमानिक देवों के विषय में भी कहना चाहिए।

9. [Q.] *Bhante* ! What about a *jiva* (soul) destined to be born among earth-bodied beings ?

[Ans.] Gautam ! A *jiva* (soul) destined to be born among earth-bodied beings experiences sometimes great pain and sometimes little pain during this birth and also while he is in the process of being born in the divine realm. But after he is born there he has diverse experiences.

10. The same should be repeated (for all beings) up to human beings.

11. As has been stated about *Asur Kumar* gods (in connection with great and little pain) should be repeated for *Vaanavyantar* (interstitial), *Jyotishk* (stellar), and *Vaimanik* (celestial vehicular) gods.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : **निष्कर्ष**–नरकोत्पन्न जीव प्रायः एकान्त दुःख रूप महावेदना ही भोगता है, किन्तु नरकपालादि के संयोग न होने पर या तीर्थंकरों के कल्याणक-अवसरों पर कदाचित् सुख का वेदन भी करता है। दस भवनपति आदि प्रायः एकान्त सुख ही भोगते हैं, किन्तु अकस्मात् प्रहारादि आ पड़ने पर दुःख भी भोगते हैं।

Elaboration—Conclusion—Infernal beings generally suffer great pain in the form of singular misery. However, occasionally at the moments of absence of the guardians of hell or the auspicious events (*kalyanak*) in the lives of Tirthankars they experience pleasure. Ten *Bhavan-pati* (abode dwelling) gods and other divine beings experience singular pleasure. They occasionally experience pain at times of sudden attacks.

अनाभोगनिर्वर्तित आयुष्य LIFE-SPAN BONDAGE UNAWARES

१२. [प्र.] जीवा णं भंते ! किं आभोगनिव्वत्तिताउया ? अणाभोगनिव्वत्तिताउया ?

[उ.] गोयमा ! नो आभोगनिव्वत्तिताउया, अणाभोगनिव्वत्तिताउया।

१३. एवं नेरइया वि।

१४. एवं जाव वेमाणिया।

१२. [प्र.] भगवन् ! जीव आभोगनिर्वर्तित आयुष्य का बंध करते हैं या अनाभोगनिर्वर्तित आयुष्य का बन्ध करते हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव आभोगनिर्वर्तित जानते हुए आयुष्य वाले नहीं हैं, किन्तु अनाभोगनिर्वर्तित (अनजानपने में न जानते हुए) आयुष्य वाले हैं।

१३. इसी प्रकार नैरयिकों के (आयुष्य के) विषय में।

१४. यावत् वैमानिक पर्यन्त इसी तरह कहना चाहिए।

12. [Q.] *Bhante* ! Do *jivas* (souls/living beings) acquire bondage of life-span determining *karma* with awareness (*aabhoganirvartit*) or do they acquire bondage of life-span determining *karma* unawares (*anaabhoganirvartit*) ?

[Ans.] Gautam ! *Jivas* (souls/living beings) do not acquire bondage of life-span determining *karma* with awareness (*aabhoganirvartit*) but they acquire bondage of life-span determining *karma* unawares (*anaabhoganirvartit*).

13. The same should be repeated for (life-span determining *karma* of) infernal beings.

14. ... and so on up to... *Vaimaniks*.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन : समस्त सांसारिक जीव अनाभोगपूर्वक (अनजानपने में = न जानते हुए) आयुष्य बाँधते हैं, वे आभोगपूर्वक (जानपने में = जानते हुए) आयुष्य बन्ध नहीं करते। आयुष्य बंध के नियमों की विस्तृत चर्चा शतक ५, उ. ३ में की जा चुकी है।

Elaboration—All worldly beings acquire bondage of life-span determining *karma* unawares (*anaabhoganirvartit*) or without knowing about it, none acquires this bondage knowingly or with awareness of the process. The rules of bondage of life-span determining *karmas* have already been discussed in detail in Shatak 5 Uddeshak 3.

कर्कश-अकर्कश-वेदनीय HARSH AND MILD SUFFERING

१५. [प्र.] अत्थि णं भंते ! जीवा णं कक्कसवेदणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

१५. [प्र.] भगवन् ! क्या जीवों के कर्कश वेदनीय (अत्यन्त दुःख से भोगने योग्य-कठोर वेदना वाले) कर्म बँधते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! बँधते हैं।

15. [Q.] *Bhante* ! Do *jivas* acquire bondage of *karkash vedaniya karmas* (*karmas* causing harsh suffering or extreme anguish) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

१६. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवा णं कक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! पाणातिवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु गोयमा ! जीवाणं कक्कसवेदणिज्जा कम्मा कज्जंति।

१६. [प्र.] भगवन् ! जीवों के कर्कशवेदनीय कर्म कैसे बँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्राणातिपात से यावत् मिथ्यादर्शन शल्य (१८ पापों के सेवन) से जीवों के कर्कशवेदनीय कर्म बँधते हैं।

16. [Q.] *Bhante* ! How do *jivas* acquire bondage of *karmas* causing harsh suffering or extreme anguish ?

[Ans.] Gautam ! They acquire bondage of such *karmas* by indulging in killing of beings (*pranatipat*)... and so on up to... *mithyadarshan shalya* (the thorn of wrong belief or unrighteousness) [eighteen *paap sthanak* or sources of sin].

१७. [प्र.] अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं कक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] एवं चेव।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-१०

Illustration No. 10

कर्कश वेदनीय कर्म का बंध व भोग

कर्कश वेदनीय कर्म उदय काल में अत्यन्त उग्र व भयानक पीड़ा दायक होता है। (i) जैसे विपाक सूत्र में नन्दीषेण कुमार आदि के उदाहरण हैं। जिन्होंने पूर्वजन्म में घोर हिंसा, चोरी, व्यभिचार आदि का सेवन किया। वे कर्म उदय में आने पर राजपुरुषों ने गाढ़ बंधन में बाँधकर लोहे को गर्म तवे पर उसे बैठाया, सिर पर तपे लोहे की पट्टी बाँधी, भालों, तलवारों से शरीर का छेदन कर उस पर खौलता सीसा नमक आदि डाला। वह घोर वेदना भोगता रहा।

(ii) जिस प्रकार खंधक मुनि के पूर्व में बाँधे कर्कश वेदनीय कर्म का उदय होने पर जल्लादों ने उनके शरीर की चमड़ी उतारी। इस प्रकार की असह्य वेदना का भोग कर्कश वेदनीय का दृष्टान्त है।

कर्कश वेदनीय बँधने के मुख्य कारण हैं-१८ प्रकार के पाप स्थानों का पुनः-पुनः आचरण-सेवन। जैसे-हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, लोभ, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग (परस्त्री से राग) द्वेष, कलह, अभ्याख्यान-झूठा दोषारोपण, चुगली, पर-निन्दा, माया-कपटाचार, झूठे लेख आदि कराना तथा मिथ्यादर्शन-हिंसा आदि में धर्म-पुण्य मानना।

चित्र में क्रोध का प्रतीक-फुँकारता नाग, मान का प्रतीक स्तब्ध हाथी, कपट का प्रतीक मछली पकड़ता बगुला, लोभ का प्रतीक धान्य संग्रह करता चूहा तथा जाति-द्वेष का प्रतीक लड़ते हुए साँप-नेवला दिखाया गया है।

-शतक ७, उ. ६, सूत्र १५, १६

BONDAGE AND EXPERIENCE OF KARKASH VEDANIYA KARMAS

Karkash vedaniya karma causes extremely intense and fierce pain on fruition.

(i) One of the examples of this from Vipaak Sutra is about prince Nandishen Kumar. He indulged in extreme violence, theft and adultery in his previous birth. When the so acquired karmas came to fruition guards shackled him and seated him on a red hot platen, tied a red hot strip of iron on his head, goaded his body with spears and swords and sprinkled molten lead and salt on the wounds. He continued to suffer extreme agony.

(ii) Another example of suffering such grave torments is that of ascetic Khandhak who was skinned by butchers when his Karkash vedaniya karmas came to fruition.

The main causes of acquiring Karkash vedaniya karmas are continued indulgence in the 18 sources of sin—violence, falsity, stealing, adultery, possession, anger, conceit, deceit, greed, attachment (libido), aversion, dispute, blaming falsely, inculpating someone, slandering, indiscipline, betray and wrong belief or unrighteousness.

In the illustrations anger is presented as hissing snake, conceit as mad elephant, deceit as fish catching heron, greed as a mice collecting grains, and aversion as fighting snake and mongoose.

—Shatak-7, lesson-6, Sutra-15, 16

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. एवं जाव वेमाणियाणं।

१७. [प्र.] भगवन् ! क्या नैरयिक जीवों के कर्कशवेदनीय कर्म बँधते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! पहले कहे अनुसार बँधते हैं।

१८. इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए।

17. [Q.] *Bhante* ! Do infernal beings acquire bondage of *karkash vedaniya karmas* (*karmas* causing harsh suffering or extreme anguish) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do as aforesaid.

18. The same should be repeated... and so on up to... *Vaimaniks*.

१९. [प्र.] अत्थि णं भंते ! जीवाणं अकक्कसवेदणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

२०. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवाणं अकक्कसवेदणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! पाणाइवायवेरमणेणं जाव परिग्गहवेरमणेणं कोहविवेगेणं जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगेणं, एवं खलु गोयमा ! जीवाणं अकक्कसवेदणिज्जा कम्मा कज्जंति।

१९. [प्र.] भगवन् ! क्या जीवों के अकर्कशवेदनीय (सुखपूर्वक भोगने योग्य) कर्म बँधते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! बँधते हैं।

२०. [प्र.] भगवन् ! जीवों के अकर्कशवेदनीय कर्म कैसे बँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्राणातिपातविरमण से यावत् परिग्रह-विरमण तक से, इसी तरह क्रोध-विवेक से (लेकर) यावत् मिथ्यादर्शन शल्यविवेक से हे गौतम ! इस प्रकार से जीवों के अकर्कशवेदनीय कर्म बँधते हैं।

19. [Q.] *Bhante* ! Do *jivas* acquire bondage of *akarkash vedaniya karmas* (*karmas* not causing harsh suffering or extreme anguish) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

20. [Q.] *Bhante* ! How do *jivas* acquire bondage of *karmas* not causing harsh suffering or extreme anguish ?

[Ans.] Gautam ! By abstaining from indulging in killing of beings (*pranatipat*)... and so on up to... fondness for possessions and having prudence against anger... and so on up to... *mithyadarshan shalya* (the thorn of wrong belief or unrighteousness). Gautam ! This way beings acquire bondage of *akarkash vedaniya karmas* (*karmas* not causing harsh suffering or extreme anguish).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२१. [प्र.] अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं अकक्कसवेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे।

२२. एवं जाव वेमाणिया। नवरं मणुस्साणं जहा जीवाणं (सु. १९)।

२१. [प्र.] भगवन् ! क्या नैरयिक जीवों के अकर्कशवेदनीय कर्म बँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! (नैरयिकों के अकर्कशवेदनीय कर्मों का बन्ध नहीं होता।)

२२. इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त कहना चाहिए। परन्तु मनुष्यों के विषय में इतना विशेष है कि जैसे औधिक जीवों के विषय में कहा गया है, वैसे ही सारा कथन करना चाहिए।

21. [Q.] *Bhante* ! Do infernal beings acquire bondage of *akarkash vedaniya karmas* (*karmas* causing harsh suffering or extreme anguish) ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct (they do not acquire bondage of *akarkash vedaniya karmas*).

22. The same should be repeated... and so on up to... *Vaimaniks.* However, in case of human beings the statement follows the pattern of *jivas* (in general).

साता-असातावेदनीय कर्म PLEASURE AND PAIN CAUSING VEDANIYA KARMA

२३. [प्र.] अत्थि णं भंते ! जीवाणं सातावेदणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

२३. [प्र.] भगवन् ! क्या जीवों के सातावेदनीय कर्म बँधते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! बँधते हैं।

23. [Q.] *Bhante* ! Do *jivas* acquire bondage of *sata vedaniya karmas* (*karmas* causing pleasant experience) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

२४. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवाणं सातावेदणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! पाणाणुकंपाए भूयाणुकंपाए, जीवाणुकंपाए सत्ताणुकंपाए, बहूणं पाणाणं जाव सत्ताणं अदुक्खणयाए, असोयणयाए, अजूरणयाए, अतिप्पणयाए, अपिट्टणयाए, अपरितावणयाए; एवं खलु गोयमा ! जीवाणं सातावेदणिज्जा कम्मा कज्जंति।

२४. [प्र.] भगवन् ! जीवों के सातावेदनीय कर्म कैसे बँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! प्राणों पर (१) अनुकम्पा करने से, भूतों पर अनुकम्पा करने से, जीवों के प्रति अनुकम्पा करने से और सत्त्वों पर अनुकम्पा करने से; तथा बहुत से प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को (२) दुःख न देने से, (३) उन्हें शोक (दैन्य) उत्पन्न न करने से, (४) (शरीर को सुखा देने वाली) चिन्ता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(विषाद या खेद) उत्पन्न न कराने से, (५) विलाप एवं रुदन कराकर आँसू न बहवाने से, (६) उनको न पीटने से, (७) उन्हें परिताप न देने से इस प्रकार की अनुकम्पा वृत्ति से, (जीवों के सातावेदनीय कर्म बँधते हैं)। गौतम ! इस प्रकार से जीवों के सातावेदनीय कर्म बँधते हैं।

24. [Q.] *Bhante* ! How do *jivas* acquire bondage of *karmas* causing pleasant experience?

[Ans.] Gautam ! They do so by (1) showing compassion (*karuna*) towards numerous *praan* (two to four sensed beings; beings), *bhoot* (plant bodied beings; organisms), *jiva* (five sensed beings; souls), and *sattva* (immobile beings; entities); (2) not causing pain to them; (3) not causing distress to them, (4) not causing anxiety to them (thereby making them physically weak due to grief); (5) by not making them weep and shed tears; (6) by not beating them; and (7) by not tormenting them. Through such compassion (*jivas* acquire bondage of *karmas* causing pleasant experience). Gautam ! This way *jivas* acquire bondage of *karmas* causing pleasant experience.

२५. एवं नेरइयाण वि।

२६. एवं जाव वेमाणियाणं।

२५. इसी प्रकार नैरयिक जीवों के (भी सातावेदनीय कर्मबन्ध के) विषय में कहना चाहिए।

२६. इसी प्रकार यावत् वैमानिकपर्यन्त कहना चाहिए।

25. The same should be repeated for (bondage of *karmas* causing pleasant experience) infernal beings.

26. and so on up to... *Vaimaniks*.

२७. [प्र.] अत्थि णं भंते ! जीवाणं असातावेदणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

२७. [प्र.] भगवन् ! क्या जीवों के असातावेदनीय कर्म बँधते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! बँधते हैं।

27. [Q.] *Bhante* ! Do *jivas* acquire bondage of *asata vedaniya karmas* (*karmas* causing unpleasant experience) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

२८. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवाणं असायावेयणिज्जा कम्मा कज्जंति ?

[उ.] गोयमा ! परदुक्खणयाए, परसोयणयाए, परजूरणयाए, परतिप्पणयाए, परपिट्टणयाए, परपरितावणयाए, बहूणं पाणाणं जाव सत्ताणं दुक्खणयाए सोयणयाए जाव परितावणयाए, एवं खलु गोयमा ! जीवाणं असातावेदणिज्जा कम्मा कज्जंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९. एवं नेरइयाण वि।

३०. एवं जाव वेमाणियाणं।

२८. [प्र.] भगवन् ! जीवों के असातावेदनीय कर्म कैसे बँधते हैं ?

[उ.] गौतम ! (१) दूसरों को दुःख देने से, (२) दूसरे जीवों को शोक उत्पन्न करने से, (३) जीवों को विषाद या चिन्ता उत्पन्न करने से, (४) दूसरों को रुलाने या विलाप कराने से, (५) दूसरों को पीटने से, और (६) जीवों को परिताप देने से तथा बहुत से प्राण, भूत, जीव एवं सत्त्वों को दुःख पहुँचाने से, शोक उत्पन्न करने से यावत् उनको परिताप देने से (इस प्रकार की क्रूर वृत्ति से जीवों के असातावेदनीय कर्मबन्ध होता है)। गौतम ! इस प्रकार से जीवों के असातावेदनीय कर्म बँधते हैं।

२९. इसी प्रकार नैरयिक जीवों के विषय में।

३०. इसी प्रकार यावत् वैमानिकपर्यन्त (असातावेदनीयबन्धविषयक) कथन करना चाहिए।

28. [Q.] *Bhante* ! How do *jivas* acquire bondage of *karmas* causing unpleasant experience ?

[Ans.] Gautam ! They do so by (1) causing pain to living beings; (2) causing distress to them, (3) causing anxiety and grief to them; (4) by making them weep and shed tears; (5) by beating them; (6) by tormenting them and by causing pain... and so on up to... torment to numerous living beings. Through such cruel acts (*jivas* acquire bondage of *karmas* causing unpleasant experience). Gautam ! This way *jivas* acquire bondage of *karmas* causing unpleasant experience.

29. The same should be repeated for (bondage of *karmas* causing unpleasant experience) infernal beings.

30. and so on up to... *Vaimaniks*.

विवेचन : सूत्र १५ से २२ तक में कर्कश वेदनीय अकर्कश वेदनीय का तथा २३ से ३० तक साता-असाता वेदनीय का कथन है। कर्कशवेदनीय का अर्थ है बंध हुआ कर्म उदयकाल में अत्यन्त उग्र व भयानक रूप में पीड़ादायक होता है। कर्कशवेदनीय व असातावेदनीय में अन्तर है। कर्कशवेदनीय का सम्बन्ध अनेक कर्मों के वेदन से हैं, जबकि असातावेदनीय का सम्बन्ध केवल वेदनीय कर्म से है। दूसरी बात-कर्कशवेदनीय बंध के हेतु प्राणातिपात आदि १८ पापस्थानक हैं, जबकि असातावेदनीय कर्म का बंध हेतु दूसरे को दुःख व परिताप देना है। अकर्कशवेदनीय का बंध हेतु १८ पापों से विरमण (संवर) करना, तथा सातावेदनीय का बंध हेतु प्राणियों की अनुकम्पा करना है। उमास्वाति ने साता वेदनीय कर्मबंध के ७ कारण बताये हैं। (तत्त्वार्थ ६/१३) कर्कशवेदनीय उदयकाल में अत्यन्त तीव्र रूप में उदय आते हैं, जैसे स्कन्दक आचार्य के शिष्यों ने पहले किसी भव में कर्कशवेदनीय कर्म बाँधे थे, जो तीव्र रूप में उदय आये। (वृत्ति, पत्रांक ३०५)

Elaboration—Aphorisms 15-22 detail *karmas* causing experiences of extreme pain (*karkash*) and not so extreme pain (*akarkash*) and 23-30

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

असाता वेदनीय और बंधं के कारण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-११

Illustration No. 11

असाता वेदनीय और बंध के कारण

चित्र के मध्य में असाता वेदनीय कर्म भोग के दो दृश्य हैं। इस कर्म के उदय से शरीर में अनेक प्रकार की व्याधियाँ, दुर्बलता, आकस्मिक आघात आदि के रूप में शारीरिक व मानसिक कष्ट भोगने पड़ते हैं।

असाता वेदनीय कर्म बन्ध के मुख्य रूप में छह कारण हैं-

(१) **जीवों को दुःख देना**-जैसे पक्षियों को पिंजरों में बाँधना, गाय आदि मूक पशुओं पर चोट व प्रहार कर उन्हें दुःख पहुँचना अथवा किसी भी प्राणी को दुःख देना।

(२) **दूसरों को शोक उत्पन्न करना**-उदाहरण स्वरूप-किसी ने निर्दयता पूर्वक किसी अनाथ महिला को घर से बेघर कर दिया। उसका सामान तोड़-फोड़ कर सड़क पर फैंक दिया।

(३) **विषाद व चिन्ता उत्पन्न करना**-जैसे रहते घरों में आग लगा देना, शस्त्र आदि से भयाक्रान्त करना।

(४) दूसरों को रुलाना, भयभीत करना।

(५) **दूसरों को पीटना**-जैसे धोबी गधे को व गाड़ी वाला बूढ़े बैलों को पीटता है।

(६) **दूसरों को परिताप देना**-जैसे अज्ञान लोग साधु को दुर्वचन आदि बोलकर संताप पहुँचा रहे हैं। ये उदाहरण किसी भी जीव पर लागू हो सकते हैं।

-शतक ७, उ. ६, सूत्र २८

CAUSES OF ACQUIRING PAIN CAUSING KARMAS

The illustration in the middle has two scenes of pain caused by asaata vedaniya karma. The fruition of this karma causes physical and mental suffering in the form of ailments, weakness, accident etc.

There are six main causes of bondage of these karmas—

(1) Tormenting living beings—to trap and encage birds, to hurt cows and other mute animals by hitting and beating, or to hurt any being in any way.

(2) Causing grief to others—to dispossess a helpless woman of her abode and throw away her belongings.

(3) Causing panic and worry—to set fire to inhabited houses or spread panic by display of weapons etc.

(4) To make others weep and wail by terrorizing them.

(5) To beat others—like a washer-man beats his donkey and a bullock-cart driver beats the bullocks.

(6) To torment others—like heretics torment ascetics with abuses and harsh words. All these examples are applicable to any living being.

—Shatak-7, lesson-6, Sutra 28

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

inform about those causing pleasure and pain. *Karkash vedaniya karma* means the *karma* that causes extremely intense and fierce pain on fruition. There is a difference between *karkash vedaniya* and *asata vedaniya karmas*. *Karkash vedaniya* relates to experience of many species of *karmas* whereas *asata vedaniya* relates only to *vedaniya karmas*. Another thing is that the cause of bondage of *karkash vedaniya karma* is indulgence in the eighteen sinful activities including killing living beings whereas that of *asata vedaniya karma* is causing pain and torment to others. The cause of bondage of *akarkash vedaniya karma* is abstaining from indulgence in the eighteen sinful activities including killing living beings whereas that of *sata vedaniya karma* is compassion towards living beings. Umaswati has mentioned seven causes of bondage of *sata vedaniya karma* (Tattvarth Sutra 6/13). The example of extreme pain caused by fruition of *karkash vedaniya karmas* can been seen in the story of disciples of Skandak Acharya who suffered such intolerable agony due to fruition of bondage of *karmas* acquired in some past birth. (Vritti, leaf 305)

भरत में दुःषम दुःषम काल का प्रभाव EPOCH OF EXTREME SORROW IN BHARAT

३१. [प्र.] जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए दुस्समदुस्समाए समाए उत्तमकट्ठपत्ताए भरहस्स वासस्स केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सइ ?

[उ.] गोयमा ! काले भविस्सति हाहाभूए भंभाभूए कोलाहलभूए, समयाणुभावेणं य णं खरफरुसधूलिमइला दुव्विसहा वाउला भयंकरा वाया संवट्टगा य वाइंति। इह अभिक्खं धूमाहिति य दिसा समंता रयस्सला रेणु-कलुस-तमपडल-निरालोग। समयलुक्खयाए य णं अहियं चंदा सीयं मोच्छंति, अहियं सूरिया तवइस्संति। अदुत्तरं च णं अभिक्खणं बहवे अरसमेहा विरसमेहा खारमेहा खत्तमेहा (खट्टमेहा) अग्गिमेहा विज्जुमेहा विसमेहा असणिमेहा अपिबणिज्जोदगा वाहिरोगवेदणोदीरणापरिणामसलिला अमणुण्णपाणियगा चंडानिलपहयतिक्खधारानिवायपउरं वासं वासिहिंति।

जेणं भारहे वासे गामागरनगर-खेड-कब्बड-मडंब-दोणमुह-पट्टणाऽऽसमगतं जणवयं, चउप्पयगवेलए खहयरे य पक्खिसंघे, गामाऽरण्णपयारनिरए तसे य पाणे बहुप्पगारे, रुक्ख-गुच्छ-गुम्म-लय-वल्लि-तण-पव्वग-हरितोसहि-पवालं-कुरमादीए य तणवणस्सतिकाइए विद्धंसेहिंति। पव्वय-गिरि-डोंगरुत्थल-भट्टिमादीए य वेयड्ढगिरिवज्जे विरावेहिंति। सलिलबिल-गड्डु-दुग्ग-विसमनिण्णुन्नताइं गंगा-सिंधु-वज्जाइं समीकरेहिंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३१. [प्र.] भगवन् ! इस जम्बूद्वीप नामक द्वीप के भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल का दुःषम-दुःषम नामक छठा आरा जब अत्यन्त उत्कट अवस्था को प्राप्त होगा, तब भारतवर्ष का आकारभाव-प्रत्यवतार (आकार = बाह्य स्वरूप। भाव-पर्याय का आविर्भाव) कैसा होगा ?

[उ.] गौतम ! वह काल **हाहाभूत** (मनुष्यों के हाहाकार से युक्त), **भंभाभूत** (दुःखार्त्त पशुओं के भां-भां शब्दरूप आर्त्तनाद से युक्त) और कोलाहल भूत होगा। काल के प्रभाव से अत्यन्त कठोर, धूल से मलिन (धूमिल), असह्य, **व्याकुल** (जीवों को व्याकुल कर देने वाली), भयंकर **वात** (हवाएँ) एवं **संवर्त्तक वायु** चलेंगी। इस काल में यहाँ बार-बार चारों ओर से धूल उड़ने से दिशाएँ धूल से मलिन और रेत से कलुषित, अन्धकारपटल से युक्त एवं आलोक से रहित होंगी। समय (काल) की रूक्षता के कारण चन्द्रमा अत्यन्त शीतलता फैंकेंगे; सूर्य अत्यन्त तपेंगे। इसके अनन्तर बारम्बार बहुत से खराब रस वाले मेघ, विपरीत रस वाले मेघ, खारे जल वाले मेघ, **खत्तमेघ** (खाद के समान पानी वाले मेघ), **विद्युत्मेघ** (बिजली सहित मेघ), **विषमेघ** (जहरीले पानी वाले मेघ,), **अशनिमेघ** (ओले-गड़े बरसाने वाले या वज्र के समान पर्वतादि को चूर-चूर कर देने वाले मेघ), **अपेय** (न पीने योग्य) जल से पूर्ण मेघ (अथवा तृषा शान्त न कर सकने वाले पानी से युक्त मेघ), व्याधि, रोग और वेदना को उत्पन्न करने (उभाड़ने) वाले जल से युक्त तथा अमनोज्ञ जल वाले मेघ, प्रचण्ड वायु के थपेड़ों से आहत होकर तीक्ष्ण धाराओं के साथ गिरते हुए प्रचुर वर्षा बरसायेंगे।

जिससे भारतवर्ष के ग्राम, आकर (खान), नगर, खेड़े, कर्बट, मडम्ब, द्रोणमुख (बन्दरगाह), पट्टण (व्यापारिक मंडियों) और आश्रम में रहने वाले जनसमूह, चतुष्पद (चौपाये जानवर), खग (आकाश-चारी पक्षीगण), ग्रामों और जंगलों में संचार में रस त्रस प्राणी तथा अनेक प्रकार के वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लताएँ, बेलें, घास, दूब, पर्व्वक (गन्ने आदि), हरियाली, शालि आदि धान्य, प्रवाल और अंकुर आदि तृणवनस्पतियाँ, ये सब विनष्ट हो जायेंगी। वैताढ्य पर्वत को छोड़कर शेष सभी पर्वत, छोटे पहाड़, टीले, डूंगर, स्थल, रेगिस्तान बंजर भूमि आदि सबका विनाश हो जायेगा। गंगा और सिन्धु, इन दो नदियों को छोड़कर शेष नदियाँ, पानी के झरने, सरोवर, झील आदि (नष्ट हो जायेंगे), दुर्गम और विषम (ऊँची-नीची) भूमि में रहे हुए सब स्थल समतल क्षेत्र (सपाट मैदान) हो जायेंगे।

31. [Q.] *Bhante* ! In this *Avasarpini kaal* (regressive half-cycle of time) when the *Dukham-dukhama Ara* (epoch of extreme sorrow) will be at its worst, what will be the forms (things and conduct) and appearances (modes or variety of conduct and things) that will evolve in Bharat area (Bharat-varsh or Indian sub-continent) in Jambudveep ?

[Ans.] Gautam ! That period will be replete with wails (*hahabhoot*), bawls (*bhambhabhoot*) and pandemonium (*kolahal*). Due to the impact of times extremely harsh, dusty, intolerable, tormenting and fierce winds and whirlwinds (*samvartak vaat*) will blow. During that period all directions will be dusky, murky, dismal and dark due to continued dust-storms all around. Adverse times will make moon impart extreme cold

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and the sun impart extreme heat (nights will be freezing cold and days will be scorching hot). Besides this, churned by stormy winds, different kinds of menacing clouds will cause repeated torrential rains and cloud burst. These are—clouds bearing bad water, harmful water, acidic water, alkaline water (*khattamegh*), electric charge (*vidyunmegh*) (thundering clouds), toxic water (*vish-megh*), ashanimegh (hail-bearing cloud or rock-smashing cloud), non-potable water, and detestable water capable of causing ailments, disease and pain.

All this will cause destruction of tormented masses of humans, quadrupeds and birds living in villages (*gram*), settlements near mines (*aakar*), cities (*nagar*), kraals (*khet*), markets (*karbat*), boroughs (*madamb*), hamlets (*dronmukh*), harbours (*pattan*), and hermitages (*ashram*); mobile beings as well as various trees, herbs, creepers, plants, grass, hay, canes, paddy and other grains, sprouts and other flora abundant in villages and forests. Leaving aside Vaitadhya mountain all other mountains, hills, mounds, hillocks, plains, deserts, sterile land etc. will be destroyed (submerged). Besides the Ganges and Indus all other rivers, streams, ponds, lakes etc. ditches, tanks will be destroyed (inundated). All the uneven and difficult terrains of the land will be swept level into flat lands.

३२. [प्र.] तीसे णं भंते ! समाए भरहस्स वासस्स भूमीए केरिसए आयारभावपडोयारे भविस्सति ?

[उ.] गोयमा ! भूमि भविस्सइ इंगालभूया मुम्मुरभूया छारियाभूया वेल्लयभूया तत्तसमजोइभूया धूलिबहुला रेणुबहुला पंकबहुला पणगबहुला चलणिबहुला, बहूणं धरणिगोयराणं सत्ताणं दुनिक्कमा यावि भविस्सति।

३२. [प्र.] भगवन् ! उस समय भारतवर्ष की भूमि का आकार और भावों का आविर्भाव (स्वरूप) किस प्रकार का होगा ?

[उ.] गौतम ! उस समय इस भरतक्षेत्र की भूमि अंगारभूत (अंगारों के समान), मुर्मुरभूत (गोबर के उपलों की अग्नि के समान), भस्मीभूत (गर्म राख के समान), तपे हुए लोह के कड़ाह के समान, तप्तप्राय अग्नि के समान, बहुत धूल वाली, बहुत रज वाली, बहुत कीचड़ वाली, बहुत शैवाल (अथवा पाँच रंग की काई) वाली, चलने जितने बहुत कीचड़ वाली होगी, जिस पर पृथ्वीस्थित जीवों का चलना बड़ा ही दुष्कर हो जायेगा।

32. [Q.] *Bhante* ! During that period what will be the forms (things and conduct) and appearances (modes or variety of conduct and things) of the land surface that will evolve in Bharat-varsh ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! During that period the land surface in Bharat-varsh will be ablaze like embers (*angaar-bhoot*), like burning cow-dung cake (*murmur-bhoot*), like scalding ashes (*bhasmibhoot*), like a red hot cauldron, like a burning fire, full of dust, full of dirt, full of mud, full of moss, and slippery to walk. It would be extremely difficult to walk for the living beings inhabiting the earth.

३३. [प्र.] तीसे णं भंते ! समाए भारहे वासे मणुयाणं केरिसए आयारभाव–पडोयारे भविस्सइ ?

[उ.] गोयमा ! मणुया भविस्संति दुरूवा दुव्वण्णा दुगंधा दूरसा दूफासा, अणिट्ठा अकंता जाव अमणामा, हीणस्सरा दीणस्सरा अणिट्ठस्सरा जाव अमणामस्सरा, अणादिज्जवयण–पच्चायाया निल्लज्जा कूड–कवड–कलह–वह–बंध–वेर–निरया मज्जायातिक्कमप्पहाणा अकज्जनिच्चुज्जता गुरुनियोग–विणयरहिया य विकलरूवा परूढनह–केस–मंसुरोमा काला खरफरुसझामवण्णा फुट्टसिरा कविलपलियकेसा बहुण्हारुसंपिणद्धदुद्दंसणिज्जरूवा संकुडियवलीतरंगपरिवेडियंगमंगा जरापरिणतव्व थेर गनरा पविरलपरिसडियदंतसेढी उब्भडघडमुहा विसमनयणा वंकनासा वंकवलीविगतभेसणमुहा कच्छूकसराभिभूता खर–तिक्खनक्ख–कंडूइय–विक्खयतणू दुद्द–किडिभ–सिज्झफुडियफरूसच्छवी चित्तलंगा टोल–गइ–विसम–संधिबंधणउक्कुडु–अट्ठिगविभत्तदुब्बला–कुसंघयणकुप्पमाणकुसंठिता कुरूवा कुट्ठाणासण–कुसेज्ज–कुभोइणो असुइणो अणेगवाहिपरिपीलियंगमंगा खलंतिविब्भलगती निरुच्छाहा सत्तपरिवज्जिया विगयचेट्ठनट्ठतेया अभिक्खणं सीय–उण्ह–खर–फरुस–वायविज्झडियमलिणपंसु–रयग्गुंडितंगमंगा।

बहुकोह–माण–माया बहुलोभा असुहदुक्खभागी ओसन्नं धम्मसण्णा–सम्मत्तपरिब्भट्ठा उक्कोसेणं रयणिपमाणमेत्ता सोलसवीसतिवासपरमाउसा पुत्त–णत्तुपरियालपणयबहुला गंगा–सिंधूओ महानदीओ वेयड्ढं च पव्वयं निस्साए बहुत्तरिं णिगोदा बीयंबीयामेत्ता बिलवासिणो भविस्संति।

३३. [प्र.] भगवन् ! उस समय (दुःषम दुःषम नामक छठे आरे) में भारतवर्ष के मनुष्यों का आकार या आचार और भावों का स्वरूप कैसा होगा ?

[उ.] गौतम ! उस समय में भारतवर्ष के मनुष्य अति कुरूप, कुवर्ण, कुगन्ध, कुरस और कुस्पर्श से युक्त, अनिष्ट, अकान्त (कान्तिहीन या अप्रिय) यावत् अमनोगम, हीन स्वर वाले, दीन स्वर वाले, अनिष्ट स्वर वाले यावत् अमनाम स्वर वाले, अनादेय और अप्रतीतियुक्त वचन वाले, निर्लज्ज, कूट–कपट, कलह, वध (मारपीट), बन्ध और वैर–विरोध में रत, मर्यादा का उल्लंघन करने में प्रधान (प्रमुख), अकार्य करने में नित्य उद्यत, गुरुजनों (माता–पिता आदि पूज्यजनों) के आदेशपालन और विनय से रहित, विकलरूप (बेडौल सूरत शक्ल) वाले; बढ़े हुए नख, केश, दाढ़ी, मूँछ और रोम वाले, कालेकलूटे, अत्यन्त कठोर श्यामवर्ण के बिखरे हुए बालों वाले, पीले और सफेद केशों वाले, बहुत–सी नसों (स्नायुओं) से शरीर बँधा हुआ होने से दुर्दर्शनीय रूप वाले, संकुचित (सिकुड़े हुए) और वलीतरंगों (झुर्रियों) से परिवेष्टित, टेढ़े–मेढ़े अंगोपांग वाले, इसलिए जरापरिणत वृद्ध पुरुषों के समान थोड़े-से

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टूटे और सड़े हुए दाँतों वाले, उद्भट घट के समान भयंकर मुख वाले, विषम नेत्रों वाले, टेढ़ी नाक वाले तथा टेढ़े-मेढ़े एवं झुर्रियों से विकृत हुए भयंकर मुख वाले, एक प्रकार की भयंकर खुजली वाले, कठोर एवं तीक्ष्ण नखों से खुजलाने के कारण विकृत बने हुए; दाद, एक प्रकार के कोढ़, **सिध्म** (एक प्रकार के भयंकर कोढ़) वाले, फटी हुई कठोर चमड़ी वाले, विचित्र अंग वाले, ऊँट आदि-सी गति (चाल) वाले (बुरी आकृति वाले), शरीर के जोड़ों के विषम बंधन वाले, ऊँची-नीची विषम हड्डियों एवं पसलियों से युक्त, कुगठनयुक्त, कुसंहनन वाले, कुप्रमाणयुक्त विषम संस्थानयुक्त, कुरूप, कुस्थान में बढ़े हुए शरीर वाले, **कुशय्या** वाले (खराब स्थान में शयन करने वाले), कुभोजन करने वाले, विविध व्याधियों से पीड़ित, स्खलित गति (लड़खड़ाती चाल) वाले, उत्साहरहित, सत्त्वरहित, विकत चेष्टा वाले, तेजोहीन, बार-बार शीत, उष्ण, तीक्ष्ण और कठोर वात से **व्याप्त** (संत्रस्त), रज आदि से मलिन अंग वाले होंगे।

अत्यन्त क्रोध, मान, माया और लोभ से युक्त, अशुभ दुःख के भागी, धर्मसंज्ञा और सम्यक्त्व से प्रायः परिभ्रष्ट होंगे। उनकी अवगाहना उत्कृष्ट एक **रत्निप्रमाण** (एक मुंड हाथ भर) होगी। उनका आयुष्य (प्रायः) सोलह वर्ष का और अधिक से अधिक बीस वर्ष का (परमायुष्य) होगा। वे बहुत से पुत्र-पौत्रादि परिवार वाले होंगे और उन पर उनका अत्यन्त स्नेह (ममत्व या मोहयुक्त) होगा। इनके ७२ कुटुम्ब **बीजभूत** (आगामी मनुष्यजाति के लिए बीजरूप) तथा बीजमात्र होंगे। ये गंगा और सिन्धु महानदियों के बिलों में और वैताढ्य पर्वत की गुफाओं का आश्रय लेकर निवास करेंगे।

33. [Q.] *Bhante* ! During that period what will be the forms (things and conduct) and appearances (modes or variety of conduct and things) of human beings that will evolve in *Bharat-varsh* ?

[Ans.] Gautam ! During that period human beings in *Bharat-varsh* will have bad shape, bad colour, bad smell, bad taste and bad touch. They will be *anisht* (not desirable), *akaant* (not beautiful)... and so on up to... *amanojna* (not attractive). They will have meek, humble, *anisht* (not desirable)... and so on up to... *amanojna* (not attractive) voice. They will have repulsive and offending speech. They will be shameless, deceitful, crafty as well as quarrelsome and will indulge in killing, capturing, animosity and vengeance. They will be ready to violate modesty, indulge in misdeeds, disobey orders of seniors (including parents) and will be devoid of humility. They will be grotesque with grown nails, hair, beard, moustache and body hair. They will be black complexioned with unkempt and untidy hair of black, yellow and white colours. They will have detestable appearance with bunched sinews, contracted and contorted limbs covered with folds and wrinkles. Like ageing persons, they will have few, broken and decayed teeth, repulsive mouth like a deformed pitcher, terrible eyes, curved nose and a wrinkle filled

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

contorted and barbarous face. Their body will be infested with acute eczema, ringworm, leucoderma and leprosy making the skin hard, parched, and broken due to scratching with hard and sharp nails. They will be with strange limbs, with bizarre movements like camel, with peculiar joints and uneven bones and ribs. They will have ugly formation, constitution, proportions, structure, and appearance as well as body growth at unusual places. They will choose bad places and beds to sleep and bad food to eat. They will suffer from a variety of ailments and have limping gait. They will be devoid of enthusiasm, vigour, right intent and radiance. Tormented by continuous cold, hot, sharp and hard winds, they will have bodies made dull be dirt and slime.

They will be filled with intense anger, conceit, deceit and greed. They will suffer agonizing pain and will go astray from the religious and righteous path. Their body size (*avagahana*) will not be more than one cubit (*Ratni*). Their average life-span will be sixteen years going to a maximum of twenty years. They will have large families with numerous sons and grandsons for whom they will have deep attachment. Seventy two of these families will turn into and act as seeds for the future. These families will take shelter in the hollows in the Ganges and Indus rivers and caves in the Vaitadhya mountain.

छठे आरे के मनुष्यों के आहार आदि FOOD OF THE HUMANS OF THE SIXTH EPOCH

३४. [प्र.] ते णं भंते ! मणुया कमाहारमाहारेहिंति ?

[उ.] गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं गंगा-सिंधूओ महानदीओ रहपहवित्थाराओ अक्खसोतप्पमाणमित्तं जलं वोज्झिहिंति, से वि य णं जले बहुमच्छ-कच्छभाइण्णे णो चेव णं आउबहुले भविस्सति। तए णं ते मणुया सूरोग्गमणमुहुत्तंसि य सूरत्थमणमुहुत्तंसि य बिलेहिंतो निद्धाहिंति, बिलेहिंतो निद्धाइत्ता मच्छ-कच्छभे थलाइं गाहेहिंति, मच्छ-कच्छभे थलाइं गाहेत्ता सीतातवतत्तएहिं मच्छ-कच्छएहिं एक्कवीसं वाससहस्साइं वित्तिं कप्पेमाण विहरिस्संति।

३४. [प्र.] भगवन् ! (उस दुःषमदुःषमकाल के) मनुष्य किस प्रकार का आहार करेंगे ?

[उ.] गौतम ! उस काल और उस समय में गंगा और सिन्धु महानदियाँ रथ के मार्ग-प्रमाण (अत्यन्त अल्प) विस्तार वाली होंगी। उनमें **अक्षस्रोतप्रमाण** (रथ की धुरी के प्रवेश करने के छिद्र जितने भाग में आ सके उतना) पानी बहेगा। वह पानी भी अनेक मत्स्य, कच्छप आदि से भरा होगा और उसमें भी पानी बहुत नहीं होगा। वे बिलवासी मनुष्य सूर्योदय के समय एक मुहूर्त्त और सूर्यास्त के समय एक मुहूर्त्त (अपने-अपने) बिलों से बाहर निकलेंगे। बिलों से बाहर निकलकर वे गंगा और सिन्धु नदियों में से मछलियों और कछुओं आदि को पकड़कर जमीन में गाड़ेंगे। इस प्रकार गाड़े हुए मत्स्य-कच्छपादि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(रात की) ठण्ड और (दिन की) धूप से सिक जायेंगे। (तब वे शाम को गाड़े हुए मत्स्य आदि को सुबह और सुबह के गाड़े हुए मत्स्य आदि को शाम को निकालकर खायेंगे)। इस प्रकार शीत और आतप से पके हुए मत्स्य--कच्छपादि से इक्कीस हजार वर्ष तक जीविका चलाते हुए (जीवन-निर्वाह करते हुए) जीवनयापन करेंगे।

34. [Q.] *Bhante* ! What type of food will the humans (of that period) take ?

[Ans.] Gautam ! During that period of time the great rivers, Ganges and Indus, will shrink to the width of a chariot-path. In their beds the flow of water will be no more than the diameter of the axle of a chariot. Even that meager flow and small quantity of water will be filled with numerous fish, tortoise and other animals. Those hole-dwelling humans will come out of their holes for one *Muhurt* at the dawn and one *Muhurt* at the dusk. They will then catch some fish and tortoise from the Ganges and Indus and bury them in the sand. The buried fish etc. will get roasted in the deep chill of the night and scorching sun of the day. (They will eat in the morning the meat buried at the dusk and in the evening the meat buried at dawn.) This way they will subsist on meat roasted in chill and sun and will (the species) survive for twenty one thousand years.

३५. [प्र.] ते णं भंते ! मणुया निस्सीला णिग्गुणा निम्मेरा निप्पच्चक्खाणपोसहोववासा उस्सन्नं मंसाहारा मच्छाहारा खोद्दाहारा कुणिमाहारा कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छहिंति ? कहिं उववज्जिहिंति ?

[उ.] गोयमा ! ओसन्नं नरग-तिरिक्ख-जोणिएसु उववज्जिहिंति।

३५. [प्र.] भगवन् ! वे (उस समय के) शीलरहित, गुणरहित, मर्यादाहीन, प्रत्याख्यान (त्याग-नियम) और पौषधोपवास से रहित, प्रायः माँसाहारी, मत्स्याहारी, क्षुद्राहारी (अथवा मधु का आहार करने वाले अथवा भूमि खोदकर कन्दमूलादि का आहार करने वाले) एवं कुणिमाहारी (मृत शव का माँस खाने वाले) मनुष्य मृत्यु के समय पर (काल) कर कहाँ जायेंगे, कहाँ उत्पन्न होंगे ?

[उ.] गौतम ! वे (पूर्वोक्त प्रकार के) मनुष्य मरकर प्रायः (नरक और तिर्यंचगति में जायेंगे, और) नरक एवं तिर्यंच-योनियों में उत्पन्न होंगे।

35. [Q.] *Bhante* ! Where will these men; devoid of all vows including *sheel-vrats* or *shikshavrats* (instructive or complimentary vows of spiritual discipline), *Gunavrats* (restraints that reinforce the practice of anuvrats), *Viraman-vrats* or *Anuvrats* (five minor vows), *pratyakhyan* (rules of renouncing) and *paushadhopavas* (partial ascetic vow and

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

fasting); mostly subsisting on meat, fish, mean food (like honey and roots) and carrion (*kunimahaari*); go and be born after their death ?

[Ans.] Gautam ! Most of these (aforesaid humans) after their death will go and be born in hell and as animals.

३६. [प्र.] ते णं भंते ! सीहा वग्घा विगा दीविया अच्छा तरच्छा परस्सरा णिस्सीला तहेव जाव कहिं उववज्जिहिंति ?

[उ.] गोयमा ! ओसन्नं नरग–तिरिक्खजोणिएसु उववज्जिहिंति।

३६. [प्र.] भगवन् ! (उस काल और उस समय के) निःशील यावत् कुणिमाहारी सिंह, व्याघ्र, वृक (भेड़िये), द्वीपिक (चीते, अथवा गेंडे), रीछ (भालू), तरक्ष (जरख) और शरभ (गेंडा) आदि (हिंस्र पशु) मृत्यु के समय मरकर कहाँ जायेंगे, कहाँ उत्पन्न होंगे ?

[उ.] गौतम ! वे प्रायः नरक और तिर्यंचयोनि में उत्पन्न होंगे।

36. [Q.] *Bhante* ! Where will these lions, tigers, wolves, leopards, bears, hyenas, rhinos and other animals; devoid of all vows... and so on up to... carrion (*kunimahaari*); go and be born after their death ?

[Ans.] Gautam ! Most of these will go and be born in hell and as animals.

३७. [प्र.] ते णं भंते ! ढंका कंका विलका मद्दुगा सिही णिस्सीला ?

[उ.] तहेव जाव ओसन्नं नरग–तिरिक्खजोणिएसु उववज्जिहिंति।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ सत्तम सए : छट्ठो उद्देसओ समत्तो ॥

३७. [प्र.] भगवन् ! उस समय के निःशील आदि पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त ढंक (द्रोण काक बड़े कौए), कंक, (सफेद कौआ) बिलक, (नील पक्षी) मद्गुक (जलकाक–जलकौए), शिखी (मोर) (आदि पक्षी मरकर कहाँ उत्पन्न होंगे ?)

[उ.] गौतम ! (वे पूर्वोक्त पक्षीगण मरकर) प्रायः नरक एवं तिर्यंच योनियों में उत्पन्न होंगे।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर श्री गौतम स्वामी यावत् विचरण करने लगे।

37. [Q.] *Bhante* ! Where will these birds including raven (*Dhank*), white crows (*kank*), Bilak, Madguk and peacocks; devoid of all vows... and so on up to... carrion (*kunimahaari*); go and be born after their death ?

[Ans.] Gautam ! Most of these will go and be born in hell and as animals.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : निष्कर्ष–उस समय के मनुष्य प्रायः माँस, मत्स्य और मृत कलेवरों का आहार करेंगे। मृत कलेवर खाना अधिक निर्दयता का प्रतीक है। वे शील, गुण, मर्यादा, त्याग–प्रत्याख्यान एवं व्रत–नियम आदि धर्म–पुण्य से नितान्त विमुख होंगे।

उक्त वर्णन में छठे आरे की पर्यावरणीय परिस्थिति का बड़ा रोमांचक वर्णन भी मिलता है। जैसे–

१. प्रलयंकर वायु चलेगी।

२. दिशाएँ धूमिल हो जायेंगी।

३. चन्द्रमा से अधिक ठण्ड निकलेगी।

४. सूर्य अधिक तपेगा।

५. वर्षा वैसी होगी, जिसका पानी व्याधि पैदा करने वाला होगा एवं पीने योग्य नहीं होगा।

६. वर्षा तूफानी हवा के साथ इतनी तेज बरसेगी, जिससे ग्राम, नगर, पशु–पक्षी तथा वनस्पति–जगत् का विध्वंस हो जायेगा।

७. वैताढ्य गिरि को छोड़ शेष पर्वत, डूंगर नष्ट हो जायेंगे।

८. गंगा, सिन्धु को छोड़ शेष नदियाँ समतल बन जायेंगी।

९. भूमि अंगारे की भाँति तप्त, धूलि–बहुल हो जायेगी एवं निवास योग्य नहीं रहेगी।

१०. मनुष्य दया, सौन्दर्य, सदाचार और शक्ति से हीन हो जायेगा।

११. मनुष्य के शरीर की ऊँचाई एक रत्निप्रमाण (मुण्ड हाथ) हो जायेगी।

१२. कषाय (क्रोध, मान, माया और लोभ) प्रबल हो जायेगा।

१३. भोजन पोषणहीन होगा और रोग बढ़ जायेंगे।

१४. आयुष्य का कालमान १६ से २० वर्ष जितना होगा।

॥ सप्तम शतक : छठा उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—The human beings of that period will mostly eat meat, fish and carrion. Eating carrion is a sign of excessive callousness. These people will be devoid of all virtues connected with religion and merit, such as *sheel-vrats* or *shikshavrats* (instructive or complimentary vows of spiritual discipline), *Gunavrats* (restraints that reinforce the practice of *anuvrats*), *Viraman-vrats* or *Anuvrats* (five minor vows), *pratyakhyan* (rules of renouncing) and *paushadhopavas* (partial ascetic vow and fasting).

The aforesaid hair-raising description of the environmental conditions of the sixth epoch of time cycle can be summed up as follows—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

1. Stormy winds will blow.

2. All directions will become dull and dusty.

3. Nights will be very cold.

4. Days will be very hot.

5. Rains will bring harmful, infectious and non-potable water.

6. Cloudburst and stormy rains will destroy villages, cities, animals, birds and vegetation.

7. Except for Vaitadhya mountain all mountains and hills will be destroyed.

8. Except for the Ganges and Indus all rivers will turn into plains.

9. Land will become hot like embers, full of dust and uninhabitable.

10. Humans will be devoid of compassion, beauty, good conduct and strength.

11. The height of humans will be just one cubit.

12. Passions (anger, conceit, deceit and greed) will magnify.

13. Food will be devoid of nutrition and diseases will multiply.

14. The average life-span will be between 16 to 20 years.

● END OF THE SIXTH LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : सप्तम उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : SEVENTH LESSON

अनगार ANAGAAR (HOMELESS-ASCETIC)

संवृत अनगार और क्रिया ACTIVITIES OF A SAMVRIT ASCETIC

१. [प्र. १] संवुडस्स णं भंते अणगारस्स आउत्तं गच्छमाणस्स जाव आउत्तं तुयट्टमाणस्स, आउत्तं वत्थं पडिग्गहं कंबलं पायपुंछणं गिण्हमाणस्स वा निक्खिवमाणस्स वा, तस्स णं भंते ! किं इरियावहिया किरिया कज्जति ? संपराइया किरिया कज्जति ?

[उ.] गोयमा ! संवुडस्स णं अणगारस्स जाव तस्स णं इरियावहिया किरिया कज्जति, णो संपराइया किरिया कज्जति।

१. [प्र. १] भगवन् ! उपयोगपूर्वक चलते-बैठते, यावत् उपयोगपूर्वक करवट बदलते (सोते) तथा उपयोगपूर्वक वस्त्र, पात्र, कम्बल, पादप्रोंछन (रजोहरण) आदि ग्रहण करते और रखते हुए उस संवृत (संवरयुक्त) अनगार को क्या ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है अथवा साम्परायिकी क्रिया लगती है ?

[उ.] गौतम ! उपयोगपूर्वक गमन करते हुए यावत् रखते हुए उस संवृत अनगार को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, किन्तु साम्परायिकी क्रिया नहीं लगती।

1. [Q. 1] *Bhante* ! While walking and sitting... and so on up to... turning in bed carefully as also while accepting and keeping garb carefully, is a *Samvrit Anagaar* (an ascetic who has blocked the inflow of *karmas*) said to be performing *Iryapathiki kriya* (careful activity of an accomplished ascetic) or *Samparayiki kriya* (passion inspired activity) ?

[Ans.] Gautam ! While walking... and so on up to... keeping garb carefully, a *Samvrit Anagaar* is said to be performing *Iryapathiki kriya* (careful activity of an accomplished ascetic) and not *Samparayiki kriya* (passion inspired activity).

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'संवुडस्स णं जाव नो संपराइया किरिया कज्जति' ?

[उ.] गोयमा ! जस्स णं कोह-माण-माया-लोभा वोच्छिन्ना भवंति तस्स णं इरियावहिया किरिया कज्जति तहेव जाव उस्सुत्तं रीयमाणस्स संपराइया किरिया कज्जति, से णं अहासुत्तमेव रीयति; से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव नो संपराइया किरिया कज्जति।

[प्र. २] भगवन् ! यह किस कारण से कहते हैं कि उस संवृत अनगार को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, किन्तु साम्परायिकी क्रिया नहीं लगती ?

[उ.] गौतम ! जिसके क्रोध, मान, माया और लोभ व्यवच्छिन्न (अनुदयप्राप्त अथवा सर्वथा क्षीण) हो गये हैं, उस (११-१२-१३वें गुणस्थानवर्ती अनगार) को ही ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, क्योंकि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वही यथासूत्र (सूत्रों–नियमों के अनुसार) प्रवृत्ति करता है। इस कारण से, हे गौतम ! संवृत अनगार उपयोगयुक्त दशा में चलता है, यावत् उसे साम्परायिकी क्रिया नहीं लगती।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that the said *Samvrit Anagaar* is said to be performing *Iryapathiki kriya* and not *Samparayiki kriya* ?

[Ans.] Gautam ! One whose anger, conceit, deceit and greed have disintegrated (suppressed or destroyed) is said to perform *Iryapathiki kriya* (an ascetic at the 11th, 12th and 13th *Gunasthan*). This is because he alone acts as prescribed in scriptures (*yathasutra*). That is why, Gautam ! *Samvrit Anagaar*, is always in a state of alertness... and so on up to... is said to be not performing *Samparayiki kriya*.

विवेचन : शतक ७, उद्दे. १ के सूत्र १६ के अनुसार उक्त सभी कथन समझें।

Elaboration—Refer to Aphorism 16 of Lesson 1 of Chapter 7 for detailed explanation.

काम–भोग सम्बन्धी विचारण CEREBRAL EXPERIENCES AND PHYSICAL EXPERIENCES

२. [प्र.] रूवी भंते ! कामा ? अरूवी कामा ?

[उ.] गोयमा ! रूवी कामा समणाउसो ! नो अरूवी कामा।

३. [प्र.] सचित्ता भंते ! कामा ? अचित्ता कामा ?

[उ.] गोयमा ! सचित्ता वि कामा, अचित्ता वि कामा।

४. [प्र.] जीवा भंते ! कामा ? अजीवा कामा ?

[उ.] गोयमा ! जीवा वि कामा, अजीवा वि कामा।

५. [प्र.] जीवाणं भंते ! कामा ? अजीवाणं कामा ?

[उ.] गोयमा ! जीवाणं कामा, नो अजीवाणं कामा।

६. [प्र.] कतिविहा णं भंते ! कामा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! दुविहा कामा पण्णत्ता, तं जहा–सद्दा य, रूवा य।

२. [प्र.] भगवन् ! काम रूपी हैं या अरूपी हैं ?

[उ.] गौतम ! काम रूपी हैं, अरूपी नहीं हैं।

३. [प्र.] भगवन् ! काम सचित्त हैं अथवा अचित्त हैं ?

[उ.] गौतम ! काम सचित्त भी हैं और काम अचित्त भी हैं।

४. [प्र.] भगवन् ! काम जीव हैं अथवा अजीव हैं ?

[उ.] गौतम ! काम जीव भी हैं और अजीव भी हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. [प्र.] भगवन् ! काम जीवों के होते हैं या अजीवों के होते हैं ?

[उ.] गौतम ! काम जीवों के होते हैं, अजीवों के नहीं होते।

६. [प्र.] भगवन् ! काम कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! काम दो प्रकार के हैं। यथा-(१) शब्द, और (२) रूप।

2. [Q.] *Bhante* ! Are cerebral experiences (*kaam*) with form or without form ?

[Ans.] Gautam ! Cerebral experiences are with form and not without form.

3. [Q.] *Bhante* ! Are cerebral experiences (*kaam*) with life (*sachitt*) or without life (*achitt*) ?

[Ans.] Gautam ! Cerebral experiences are with life and also without life.

4. [Q.] *Bhante* ! Are cerebral experiences (*kaam*) living (*jiva*) or non-living (*ajiva*) ?

[Ans.] Gautam ! Cerebral experiences are living and also non-living.

5. [Q.] *Bhante* ! Do cerebral experiences effect the living (*jiva*) or the non-living (*ajiva*) ?

[Ans.] Gautam ! Cerebral experiences effect the living (*jiva*) and not the non-living (*ajiva*).

6. [Q.] *Bhante* ! How many kinds of cerebral experiences are there ?

[Ans.] Gautam ! Cerebral experiences are of two kinds—(1) sound (*shabd*) and (2) appearance or form (*rupa*).

७. [प्र.] रूवी भंते ! भोगा ? अरूवी भोगा ?

[उ.] गोयमा ! रूवी भोगा, नो अरूवी भोगा।

८. [प्र.] सचित्ता भंते ! भोगा ? अचित्ता भोगा ?

[उ.] गोयमा ! सचित्ता वि भोगा, अचित्ता वि भोगा।

९. [प्र.] जीवा भंते ! भोगा ?० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! जीवा वि भोगा, अजीवा वि भोगा।

१०. [प्र.] जीवाणं भंते ! भोगा ? अजीवाणं भोगा ?

[उ.] गोयमा ! जीवाणं भोगा, नो अजीवाणं भोगा।

११. [प्र.] कतिविहा णं भंते ! भोगा पण्णत्ता ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! तिविहा भोगा पण्णत्ता, तं जहा–गंधा, रसा, फासा।

७. [प्र.] भगवन् ! भोग रूपी हैं अथवा अरूपी हैं ?

[उ.] गौतम ! भोग रूपी होते हैं, अरूपी नहीं होते।

८. [प्र.] भगवन् ! भोग सचित्त होते हैं या अचित्त होते हैं ?

[उ.] गौतम ! भोग सचित्त भी होते हैं और अचित्त भी होते हैं।

९. [प्र.] भगवन् ! भोग जीव होते हैं या अजीव होते हैं ?

[उ.] गौतम ! भोग जीव भी होते हैं और अजीव भी होते हैं ?

१०. [प्र.] भगवन् ! भोग जीवों के होते हैं या अजीवों के होते हैं ?

[उ.] गौतम ! भोग जीवों के होते हैं, अजीवों के नहीं होते।

११. [प्र.] भगवन् ! भोग कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! भोग तीन प्रकार के हैं। यथा–(१) गन्ध, (२) रस, और (३) स्पर्श।

7. [Q.] *Bhante* ! Are physical experiences (*bhoga*) with form or without form ?

[Ans.] Gautam ! Physical experiences are with form and not without form.

8. [Q.] *Bhante* ! Are physical experiences (*bhoga*) with life (*sachitt*) or without life (*achitt*) ?

[Ans.] Gautam ! Physical experiences are with life and also without life.

9. [Q.] *Bhante* ! Are physical experiences (*bhoga*) living (*jiva*) or non-living (*ajiva*) ?

[Ans.] Gautam ! Physical experiences are living and also non-living.

10. [Q.] *Bhante* ! Do physical experiences effect the living (*jiva*) or the non-living (*ajiva*) ?

[Ans.] Gautam ! Physical experiences effect the living (*jiva*) and not the non-living (*ajiva*).

11. [Q.] *Bhante* ! How many kinds of physical experiences are there ?

[Ans.] Gautam ! Physical experiences are of three kinds—(1) smell (*gandh*), (2) taste (*rasa*) and (3) touch (*sparsh*).

१२. [प्र.] कतिविहा णं भंते ! कामभोगा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहा कामभोगा पण्णत्ता, तं जहा–सद्दा रूवा गंधा रसा फासा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२. [प्र.] भगवन् ! काम-भोग कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! काम-भोग पाँच प्रकार के हैं। यथा-शब्द, रूप, गन्ध, रस और स्पर्श।

12. [Q.] *Bhante* ! How many kinds of *kaam-bhoga* (cerebral-physical experiences) are there ?

[Ans.] Gautam ! Cerebral-physical experiences are of five kinds—(1) sound (*shabd*), (2) appearance or form (*rupa*), (3) smell (*gandh*), (4) taste (*rasa*) and (5) touch (*sparsh*).

१३. [प्र. १] जीवा णं भंते ! किं कामी ? भोगी ?

[उ.] गोयमा ! जीवा कामी वि, भोगी वि।

१३. [प्र. १] भगवन् ! जीव कामी हैं अथवा भोगी हैं ?

[उ.] गौतम ! जीव कामी भी हैं और भोगी भी हैं।

13. [Q. 1] *Bhante* ! Do living beings (*jivas*) have cerebral experience or physical experience ?

[Ans.] Gautam ! Living beings (*jivas*) have cerebral experience as well as physical experience.

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'जीवा कामी वि, भोगी वि' ?

[उ.] गोयमा ! सोइंदिय-चक्खिंदियाइं पडुच्च कामी, घाणिंदिय-जिब्भिंदिय-फासिंदियाइं पडुच्च भोगी। से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव भोगी वि।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा किस अपेक्षा से कहा जाता है कि जीव कामी भी हैं और भोगी भी हैं ?

[उ.] गौतम ! श्रोत्रेन्द्रिय और चक्षुरिन्द्रिय की अपेक्षा से जीव कामी हैं और घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय एवं स्पर्शनेन्द्रिय की अपेक्षा से जीव भोगी हैं। इस अपेक्षा से, हे गौतम ! जीव कामी भी हैं और भोगी भी हैं।

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that living beings (*jivas*) have cerebral experience as well as physical experience ?

[Ans.] Gautam ! In relation to the sense organs of hearing (*shrotrendriya*) and seeing (*chakshurindriya*) living beings have cerebral experience and in relation to the sense organs of smell (*ghranendriya*), taste (*jihvendriya*) and touch (*sparshanendriya*) they have physical experience. That is why, Gautam ! they have cerebral experience as well as physical experience.

१४. [प्र.] नेरइया णं भंते ! किं कामी ? भोगी ?

[उ.] एवं चेव।

१५. एवं जाव थणियकुमारा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१४. [प्र.] भगवन् ! नैरयिक जीव कामी हैं अथवा भोगी हैं ?

[उ.] गौतम ! नैरयिक जीव भी पूर्ववत् कामी भी हैं, भोगी भी हैं।

१५. इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिए।

14. [Q.] *Bhante* ! Do infernal beings (*jivas*) have cerebral experience or physical experience ?

[Ans.] Gautam ! As aforesaid, infernal beings (*jivas*) too have cerebral experience as well as physical experience.

15. The same should be repeated for beings up to *Stanit Kumar* gods.

१६. [प्र. १] पुढविकाइयाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! पुढविकाइया नो कामी, भोगी।

[प्र. २] से केणट्ठेणं जाव भोगी ?

[उ.] गोयमा ! फासिंदियं पडुच्च, से तेणट्ठेणं जाव भोगी।

[३] एवं जाव वणस्सइकाइया।

१६. [प्र. १] भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों के सम्बन्ध में भी यही प्रश्न है ?

[उ.] गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव कामी नहीं हैं, किन्तु भोगी हैं।

[प्र. २] भगवन् ! किस अपेक्षा से ऐसा कहा जाता है कि पृथ्वीकायिक जीव कामी नहीं, किन्तु भोगी हैं ?

[उ.] गौतम ! स्पर्शेन्द्रिय की अपेक्षा से पृथ्वीकायिक जीव भोगी हैं। इस अपेक्षा से, हे गौतम ! पृथ्वीकायकि जीव यावत् भोगी हैं।

[३] इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीवों तक कहना चाहिए।

16. [Q. 1] *Bhante* ! The same question regarding earth-bodied beings (*prithvikayik jivas*) ?

[Ans.] Gautam ! Earth-bodied beings do not have cerebral experience but have physical experience ?

[Q. 2] *Bhante* ! Why is it said that earth-bodied beings do not have cerebral experience but have physical experience ?

[Ans.] In relation to the sense organ of touch (as they have only this organ) earth-bodied beings have physical experience. That is why, Gautam ! It is said that earth-bodied beings have physical experience only.

[3] The same should be repeated for beings up to plant-bodied beings (*vanaspatikaaya jivas*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. [१] बेइंदिया एवं चेव। नवरं जिब्भिंदिय–फासिंदियाइं पडुच्च।

[२] तेइंदिया वि एवं चेव। नवरं घाणिंदिय–जिब्भिंदिय–फासिंदियाइं पडुच्च।

[प्र. ३] चउरिंदियाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! चउरिंदिया कामी वि भोगी वि।

[प्र. ४] से केणट्ठेणं जाव भोगी वि ?

[उ.] गोयमा ! चक्खिंदियं पडुच्च कामी, घाणिंदिय–जिब्भिंदिय–फासिंदियाइं पडुच्च भोगी। से तेणट्ठेणं जाव भोगी वि।

१७. [१] इसी प्रकार द्वीन्द्रिय जीव भी भोगी हैं, किन्तु विशेषता यह है कि वे जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय की अपेक्षा भोगी हैं।

[२] त्रीन्द्रिय जीव भी इसी प्रकार भोगी हैं, किन्तु वे घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय की अपेक्षा से भोगी हैं।

[प्र. ३] भगवन् ! चतुरिन्द्रिय जीवों के सम्बन्ध में प्रश्न हैं ?

[उ.] गौतम ! चतुरिन्द्रिय जीव कामी भी हैं और भोगी भी हैं।

[प्र. ४] भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि चतुरिन्द्रिय जीव कामी भी हैं और भोगी भी हैं ?

[उ.] गौतम ! (चतुरिन्द्रिय जीव) चक्षुरिन्द्रिय की अपेक्षा से कामी हैं और घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय की अपेक्षा से भोगी हैं। इस कारण से हे गौतम ! चतुरिन्द्रिय जीव कामी भी हैं और भोगी भी हैं।

17. [Q. 1] In the same way two-sensed beings (*dvindriya jivas*) also have physical experience only but with the difference that they have physical experience in relation to the sense organs of taste and touch.

[2] In the same way three-sensed beings (*trindriya jivas*) also have physical experience only but with the difference that they have physical experience in relation to the sense organs of smell, taste and touch.

[Q. 3] *Bhante* ! Same question about four-sensed beings ?

[Ans.] Gautam ! Four-sensed beings (*chaturindriya jivas*) have cerebral experience as well as physical experience.

[Q. 4] *Bhante* ! Why is it said that four-sensed beings have cerebral experience as well as physical experience ?

[Ans.] Gautam ! In relation to the sense organ of seeing they (four-sensed beings) have cerebral experience and in relation to the sense

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

organs of smell, taste and touch they have physical experience. That is why, Gautam ! Four-sensed beings have cerebral experience as well as physical experience.

१८. अवसेसा जहा जीवा जाव वेमाणिया।

१८. शेष वैमानिक–पर्यन्त सभी जीवों के विषय में औधिक जीवों की तरह कहना चाहिए कि वे कामी भी हैं, भोगी भी हैं।

18. Rest of the beings up to *Vaimaniks* follow the pattern of the general statement about living beings, i. e. they have cerebral experience as well as physical experience.

१९. [प्र.] एतेसि णं भंते ! जीवाणं कामभोगीणं नोकामीणं, नोभोगीणं, भोगीण य कतरे कतरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा जीवा कामभोगी, नोकामी नोभोगी अणंतगुणा, भोगी अणंतगुणा।

१९. [प्र.] भगवन् ! काम–भोगी, नोकामी नोभोगी और भोगी, इन जीवों में से कौन किनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! काम–भोगी जीव सबसे थोड़े हैं, नोकामी–नोभोगी जीव उनसे अनन्तगुणे हैं और भोगी जीव उनसे अनन्तगुणे हैं।

19. [Q.] *Bhante* ! Of the *kaam-bhogi* (with cerebral and physical experience), *no-kaami-no-bhogi* (without cerebral experience and without physical experience), and *bhogi* (with physical experience) which *jivas* (beings) are comparatively less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gautam ! *Kaam-bhogi jivas* (beings with cerebral experience and with physical experience) are minimum, *no-kaami-no-bhogi jivas* (beings without cerebral experience and without physical experience) are infinite times more than these, and *bhogi jivas* (beings with physical experience) are infinite times more than these.

विवेचन : श्रोत्र, चक्षु, घ्राण, रसन और स्पर्शन ये पाँच इन्द्रियाँ हैं। इनके पाँच विषय हैं–शब्द, रूप, गंध, रस और स्पर्श। श्रोत्र और चक्षु ये दो इन्द्रियाँ कामी हैं, शेष तीन भोगी।

जिन विषयों की कामना–अभिलाषा की जाती है, किन्तु शरीर से भोगे नहीं जाते वे 'काम' कहलाते हैं। जैसे–शब्द और रूप। जिनका विषय संवेदन या अनुभव उत्पन्न करता है। वे भोग हैं, जैसे–गंध, रस और स्पर्श।

काम और भोग पौद्गलिक हैं। इसलिए वे रूपी हैं। चैतन्य युक्त (जीव का) शब्द और रूप सचित्त हैं, तथा चैतन्यरहित (अजीव का) शब्द और रूप अचित्त हैं।

सजीव शरीर के रूप की अपेक्षा तथा जीव शब्द की अपेक्षा 'काम' जीव भी है, तथा चित्र, पुतली आदि के रूप की अपेक्षा एवं अजीव शब्द की अपेक्षा काम अजीव भी है। भोग का विषय भी 'काम' की ही भाँति समझना चाहिए। एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय और त्रीन्द्रिय जीव केवल भोगी होते हैं, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कामी और भोगी दोनों प्रकार के होते हैं। वे सबसे थोड़े हैं। उनसे नोकामी, नोभोगी (सिद्ध जीव) अनन्तगुणे हैं और भोगी जीव एकेन्द्रिय से त्रीन्द्रिय तक उनसे अनन्त गुणे हैं। क्योंकि वनस्पति में भी अनेक जीव होते हैं। इस अपेक्षा से भोगी जीव सिद्धों की अपेक्षा अनन्तगुणा अधिक है। *(वृत्ति, पत्रांक ३१०)*

Elaboration—There are five sense organs, those of hearing, seeing, smelling, tasting and touching. These have five subjects respectively—sound, form or appearance, smell, taste and touch. The medium of activity of the two organs of hearing and seeing is cerebral experience (*kaam*), and that of the remaining three organs is physical experience (*bhog*).

The subjects that can be cerebrally experienced but cannot be physically experienced are called *kaam*—sound and form. The subjects that cause tangible physical sensation and physical experience are called *bhoga*—smell, taste and touch.

Cerebral experience and physical experience both are dependent on matter and thus they have form (*rupa*). Forms and sounds associated with life are *sachitt* and those not associated with life are *achitta*.

In context of the form of a living body and the sound produced by a living being, *kaam* is termed as living (*jiva*) and in context of the form of a non-living thing like picture or image and sound produced by a non-living thing, *kaam* is also non-living (*ajiva*). *Bhog* also follows the same pattern. One-sensed, two-sensed and three-sensed beings exclusively experience *bhog*. Four-sensed and five-sensed beings experience both *kaam* as well as *bhog*. They are minimum in number. *No-kaami* (without cerebral experience) and *no-bhogi* (without physical experience), i. e. *Siddhas* (liberated beings) are infinite times more than these. Exclusively *bhogi* (with physical experience) beings (one to three-sensed beings) are infinite time more than these. As plant life too has vast number of beings, the total of exclusively *bhogi* beings becomes infinite times more than liberated beings. (*Vritti*, leaf 310)

छद्मस्थ एवं केवली CHHADMASTH AND KEVALI

२०. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से जे भविए अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववज्जित्तए, से नूणं भंते ! से खीणभोगी नो पभू उट्ठाणेणं कम्मेणं बलेणं वीरिएणं पुरिसक्कारपरक्कमेणं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए, से नूणं भंते ! एयमट्ठं एवं वयह ?

[उ.] गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे पभू णं से उट्ठाणेण वि कम्मेण वि बलेण वि वीरिएण वि पुरिसक्कारपरक्कमेण वि अन्नयराइं विपुलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए, तम्हा भोगी, भोगे परिच्चयमाणे महानिज्जरे महापज्जवसाणे भवति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२०. [प्र.] भगवन् ! ऐसा छद्मस्थ मनुष्य, जो किसी देवलोक में देव रूप में उत्पन्न होने वाला है, भगवन् ! वास्तव में, **क्षीणभोगी** (दुर्बल शरीर वाला) उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषाकार-पराक्रम के द्वारा विपुल और भोगने योग्य भोगों को भोगता हुआ विहरण (जीवनयापन) करने में समर्थ नहीं है ? भगवन् ! क्या आप इस अर्थ (तथ्य) को इसी तरह कहते हैं ?

[उ.] गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, क्योंकि वह (देवलोक में उत्पत्तियोग्य क्षीण-शरीरी भी) उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषाकार-पराक्रम द्वारा किन्हीं विपुल एवं भोग्य भोगों को (यत्किंचित् रूप में, मन से भी) भोगने में समर्थ है। इसलिए वह भोगी है। वह भोगों का (मन से) परित्याग करता हुआ ही महानिर्जरा और महापर्यवसान वाला होता है।

20. [Q.] *Bhante* ! A *chhadmasth* (one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage), destined to be born as a divine being in some divine realm and with an emaciated body (*ksheen-bhogi*) is, in fact, not capable of leading a life enjoying ample pleasant experiences due to his feeble effort to rise (*utthaan*) and act (*karma*); dwindling physical strength (*bal*); reduced mental capacity (*virya*); wavering intent to act (*purushakar*); and insignificant valour (*parakram*). *Bhante* ! Do you affirm this statement ?

[Ans.] Gautam ! That is not correct because that person (a *chhadmasth* destined to be born as a divine being and with an emaciated body) is, in fact, capable of enjoying ample pleasant experiences with his effort to rise and act; physical strength; mental capacity; intent to act; and valour. That is why he is a *bhogi*. He is able to attain extensive shedding of *karmas* (*maha nirjara*) and a noble end (*mahaparyavasan*) only by voluntary renouncing of pleasant experiences.

२१. [प्र.] आहोहिए णं भंते ! मणुस्से जे भविए अन्नयरेसु देवलोएसु०।

[उ.] एवं चेव जहा छउमत्थे जाव महापज्जवसाणे भवति।

२१. [प्र.] भगवन् ! ऐसा अधोऽवधिक (नियत क्षेत्र का अवधिज्ञानी) मनुष्य, जो किसी देवलोक में उत्पन्न होने योग्य है, क्या वह क्षीणभोगी उत्थान यावत् पुरुषकार-पराक्रम द्वारा विपुल एवं भोग्य भोगों को भोगने में समर्थ है ?

[उ.] (हे गौतम !) इसके विषय में उपर्युक्त छद्मस्थ के समान ही कथन जान लेना चाहिए।

21. [Q.] *Bhante* ! An *adho-avadhik* (a person with limited *avadhi jnana*), destined to be born as a divine being in some divine realm and with an emaciated body... and so on up to... wavering intent to act; and insignificant valour. *Bhante* ! Do you affirm this statement ?

[Ans.] (Gautam !) What has been said about a *chhadmasth* should be repeated here.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. [प्र.] परमाहोहिए णं भंते ! मणुस्से जे भविए तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झित्तए जाव अंतं करेत्तए, से नूणं भंते ! से खीणभोगी०।

[उ.] सेसं जहा छउमत्थस्स।

२२. [प्र.] भगवन् ! परम अवधिज्ञानी मनुष्य जो उसी भव में सिद्ध होने वाला यावत् सर्व-दुःखों को अन्त करने वाला है, क्या वह क्षीणभोगी (दुर्बल शरीर वाला है) यावत् भोगने योग्य विपुल भोगों को भोगने में समर्थ है ?

[उ.] (हे गौतम !) इसका उत्तर भी छद्मस्थ के लिए दिए हुए उत्तर के समान जानना चाहिए। (अर्थात् वह भोगी है। भोगों का परित्याग करता हुआ महानिर्जरा महापर्यवसान को प्राप्त होता है।

22. [Q.] *Bhante* ! A *param-avadhi jnani* (a person with perfect *avadhi jnana*), destined to be liberated in the same birth with an emaciated body... and so on up to... wavering intent to act; and insignificant valour. *Bhante* ! Do you affirm this statement ?

[Ans.] (Gautam !) What has been said about a *chhadmasth* should be repeated here. (Which means that he is a *bhogi* and is able to attain extensive shedding of *karmas* and a noble end only by voluntary renouncing pleasant experiences.)

२३. [प्र.] केवली णं भंते ! मणूसे जे भविए तेणेव भवग्गहणेणं०।

[उ.] एवं चेव जहा परमाहोहिए जाव महापज्जवसाणे भवति।

२३. [प्र.] भगवन् ! केवलज्ञानी मनुष्य भी, जो उसी भव में सिद्ध होने वाला है, यावत् सभी दुःखों का अन्त करने वाला है, क्या वह विपुल और भोग्य भोगों को भोगने में समर्थ है ?

[उ.] (हे गौतम !) इसका कथन भी परमावधिज्ञानी की तरह करना चाहिए, या यावत् वह महानिर्जरा और महापर्यवसान वाला होता है।

23. [Q.] *Bhante* ! A *Keval jnani* (a person with omniscience), destined to be liberated in the same birth... and so on up to... end all miseries, with an emaciated body... and so on up to... wavering intent to act; and insignificant valour. *Bhante* ! Do you affirm this statement ?

[Ans.] (Gautam !) What has been said about a *param-avadhi jnani* should be repeated here... . and so on up to... He is able to attain extensive shedding of *karmas* (*maha nirjara*) and a noble end (*mahaparyavasan*).

विवेचन : सूत्र २१ से २३ तक के वर्णन का निष्कर्ष यह है कि चाहे कोई शरीर से दुर्बल अशक्त होने पर भोग भोगने में असमर्थ हों, किन्तु जब तक वह मन-वचन-काया से भोगों का त्याग नहीं करता है, तब तक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वह भोग त्यागी नहीं है। दुर्बल शरीर वाला भी अध्यवसाय (मानसिक) स्तर पर विषय का भोग कर सकता है, इस अपेक्षा से कहा है–भोग त्याग करने पर ही महानिर्जरा महापर्यवसान होती है।

Elaboration—The message of aphorisms 21-23 is that although a weak person with emaciated body may be unable to enjoy physical pleasures, as long as he does not renounce these desires mentally, vocally and physically he is not a renouncer of pleasures. A person with a weak body can still indulge in pleasant experiences mentally. That is why it is mentioned here that extensive shedding of *karmas* (*maha nirjara*) and a noble end (*mahaparyavasan*) is attained only on complete renunciation.

अकाम वेदना का वेदन **INVOLUNTARY EXPERIENCE OF PAIN**

२४. [प्र.] जे इमे भंते ! असण्णिणो पाणा, तं जहा–पुढविकाइया जाव वणस्सइकाइया छट्ठा य एगइया तसा, एए णं अंधा मूढा तमं पविट्ठा तमपडल–मोहजालपलिच्छन्ना अकामनिकरणं वेदणं वेदेंतीति वत्तव्वं सिया ?

[उ.] हंता, गोयमा ! जे इमे असण्णिणो पाणा जाव वेदणं वेदेंतीति वत्तव्वं सिया।

२४. [प्र.] भगवन् ! ये जो असंज्ञी (मनरहित) प्राणी हैं, यथा–पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक; ये पाँच (स्थावर) तथा छठे कई त्रसकायिक (सम्मूर्च्छिम) जीव हैं, जो अन्ध (अन्धों की तरह अज्ञानान्ध) हैं, मूढ़ (मोहयुक्त होने से तत्त्वश्रद्धान के अयोग्य) हैं, तामस (अज्ञानरूप अन्धकार) में प्रविष्ट की तरह हैं, (ज्ञानावरणरूप) तमःपटल और (मोहनीयरूप) मोहजाल से आच्छादित हैं, वे अकामनिकरण (अज्ञान रूप में या अनिच्छापूर्वक) वेदना वेदते हैं, क्या ऐसा कहा जा सकता है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! जो ये असंज्ञी प्राणी पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक और छठे कई त्रसकायिक (सम्मूर्च्छिम) जीव हैं, यावत्.... ये सब अकामनिकरण वेदना वेदते हैं। (क्योंकि उनमें इच्छा शक्ति का अभाव है)

24. [Q.] There are non-sentient (*asanjni*) beings including five kinds of immobile beings, like earth-bodied beings, water-bodied beings, fire-bodied beings, air-bodied beings, and plant-bodied beings, and, sixth, many mobile beings, which are blind (ignorant), stupid (incapable of observing reality due to stupor of fondness), engulfed in darkness (of ignorance), encumbered by veil of darkness (*jnanavaran*) and web of fondness. Can it be said that they undergo involuntary (*akaam-nikaran*) experience of pain ?

[Ans.] Yes, Gautam ! These non-sentient (*asanjni*) beings including five kinds of immobile beings, like earth-bodied beings... and so on up

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

to... sixth, many mobile beings, ... and so on up to... they all undergo involuntary experience of pain. (This is because they are devoid of will.)

२५. [प्र.] अत्थि णं भंते ! पभू वि अकामनिकरण वेदणं वेदेति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! अत्थि।

२५. [प्र.] भगवन् ! क्या ऐसा होता है कि समर्थ होते हुए भी जीव, अकामनिकरण (अज्ञानपूर्वक-अनिच्छापूर्वक) वेदना को वेदते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वेदते हैं।

25. [**Q.**] *Bhante* ! Is it possible that even when they are capable (endowed with sentience) they undergo involuntary experience of pain ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

२६. [प्र.] कहं णं भंते ! पभू वि अकामनिकरणं वेदणं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! जे णं णो पभू विणा पदीवेणं अंधकारंसि रूवाइं पासित्तए, जे णं नो पभू पुरतो रूवाइं अणिज्झाइत्ता णं पासित्तए, जे णं नो पभू मग्गओ रूवाइं अणवयक्खित्ता णं पासित्तए, जे णं नो पभू पासओ रूवाइं अणवलोएत्ता णं पासित्तए, जे णं नो पभू उड्ढं रूवाइं अणालोएत्ता णं पासित्तए, जे णं नो पभू अहे रूवाइं अणालोएत्ता णं पासित्तए, एस णं गोयमा ! पभू वि अकामनिकरणं वेदणं वेदेंति।

२६. [प्र.] भगवन् ! समर्थ होते हुए भी जीव, अकामनिकरण वेदना को कैसे वेदते हैं ?

[उ.] गौतम ! जो जीव समर्थ होते हुए भी अन्धकार में दीपक के बिना पदार्थों को देखने में समर्थ नहीं होते, जो अवलोकन किये बिना सम्मुख रहे हुए पदार्थों को देख नहीं सकते; अवेक्षण किये बिना पीठ के पीछे के भाग को नहीं देख सकते, अवलोकन किये बिना अगल-बगल के (पार्श्व भाग के दोनों ओर के) रूपों को नहीं देख सकते, आलोकन किये बिना ऊपर के रूपों को नहीं देख सकते और न आलोकन किये बिना नीचे के रूपों को देख सकते हैं, इसी प्रकार गौतम ! ये जीव समर्थ होते हुए भी अकामनिकरण वेदना वेदते हैं।

26. *Bhante* ! In spite of being capable (endowed with sentience) why do they undergo involuntary experience of pain ?

[Ans.] Gautam ! Those beings who, although capable (*prabhu*), are not able to see things in dark without the help of a lamp, who are not able to see things in front without looking (directly) at them, who are not able to see things in the rear without turning, who are not able to see things at their flanks without looking (directly) at them, who are not able to see things above without looking (directly) at them and who are

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

not able to see things below without looking (directly) at them, Gautam ! such beings, although capable, undergo involuntary experience of pain.

२७. [प्र.] अत्थि णं भंते ! पभू वि पकामनिकरणं वेदणं वेदेंति।

[उ.] हंता, अत्थि।

२७. [प्र.] भगवन् ! क्या ऐसा भी होता है कि समर्थ होते हुए भी जीव, प्रकामनिकरण (तीव्र इच्छापूर्वक) वेदना को वेदते हैं ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वेदते हैं।

27. [Q.] *Bhante* ! Is it possible that even when they are capable (endowed with sentience) they undergo experience of pain with intense desire ?

[Ans.] Yes, Gautam ! They do.

२८. [प्र.] कहं णं भंते ! पभू वि पकामनिकरणं वेदणं वेदेंति ?

[उ.] गोयमा ! जे णं नो पभू समुद्दस्स पारं गमित्तए, जे णं नो पभू समुद्दस्स पारगयाइं रूवाइं पासित्तए, जे णं नो पभू देवलोगं गमित्तए, जे णं नो पभू देवलोगगयाइं रूवाइं पासित्तए एस णं गोयमा ! पभू वि पकामनिकरणं वेदणं वेदेंति।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ सत्तम सए : सत्तमो उद्देसओ समत्तो ॥

२८. [प्र.] भगवन् ! समर्थ होते हुए भी जीव, प्रकामनिकरण वेदना को किस प्रकार वेदते हैं ?

[उ.] गौतम ! जो समुद्र के पार जाने में समर्थ नहीं हैं, जो समुद्र के पार रहे हुए रूपों को देखने में समर्थ नहीं हैं, जो देवलोक में जाने में समर्थ नहीं हैं, और जो देवलोक में रहे हुए रूपों को देख नहीं सकते; हे गौतम ! वे समर्थ होते हुए भी प्रकामनिकरण वेदना को वेदते हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।

28. [Q.] *Bhante* ! In spite of being capable (endowed with sentience) why do they undergo experience of pain with intense desire ?

[Ans.] Gautam ! Those beings who are incapable of crossing a sea, who are incapable of seeing things at the other end of the sea, who are incapable of going to divine abodes, and who are incapable of seeing things existing in divine abodes, Gautam ! Such beings, although capable (sentient), undergo experience of pain with intense desire.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : असंज्ञी जीव इच्छा और ज्ञान की शक्ति के अभाव में अनिच्छा से अज्ञानपूर्वक सुख-दुःख वेदते हैं। संज्ञी जीव इच्छा और ज्ञानशक्ति से युक्त होते हुए भी साधन सामग्री के बिना अनिच्छा से और अज्ञानपूर्वक सुख-दुःख वेदते हैं, जैसे अंधकार में दीपक के अभाव में पदार्थों को नहीं देखा जा सकता और ज्ञान एवं इच्छाशक्ति से युक्त होते हुए भी प्राप्तिरूप सामर्थ्य के अभाव में मात्र तीव्र कामनापूर्वक वेदना वेदते हैं। जैसे-समुद्र पार जाने के पदार्थों को देखने की इच्छा होते हुए भी समुद्र पार जाने की शक्ति न होने के कारण उस पार के पदार्थ नहीं देखे जा सकते। (वृत्ति, पत्रांक ३१२)

मनरहित जीवों में भी सुख-दुःख का संवेदन होता है। यह सत्य वर्तमान में पेड़-पौधों पर किये गये वैज्ञानिक प्रयोगों से भी सिद्ध हो गया है। देखें, तीर्थंकर (जनवरी ८६) डॉ. अवधेश शर्मा का लेख)

॥ सप्तम शतक : सप्तम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—In absence of will and intellect the non-sentient beings (*asanjni jivas*) experience pleasure and pain involuntarily and out of ignorance. Although equipped with will and intellect the sentient beings (*sanjni jivas*) too experience pleasure and pain involuntarily and out of ignorance due to absence of facilitating means. An example is inability to see things in absence of light. Thus in absence of facilitating means or capacity they only experience intense desire and the resulting pain in absence of the required ability to acquire the desired. Another example is that the desire to see things across a sea cannot be fulfilled in absence of means to go across the sea. (*Vritti*, leaf 312)

Living organism without mind also experience pleasure and pain. This fact has been corroborated by modern biological research done on plants. (see article by Dr. Avadhesh Sharma in *Tirthankar*, January 1986)

● END OF THE SEVENTH LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : अष्टम उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : EIGHTH LESSON

छद्मस्थ CHHADMASTH (THE UNRIGHTEOUS)

छद्मस्थ सिद्ध नहीं होता UNRIGHTEOUS CANNOT BE SIDDHA

१. [प्र.] छउमत्थे णं भंते ! मणूसे तीयमणंतं सासयं समयं केवलेणं संजमेणं०?

[उ.] एवं जहा पढमसए चउत्थे उद्देसए (सू० १२–१८) तहा भाणियव्वं जाव अलमत्थु।

१. [प्र.] भगवन् ! क्या छद्मस्थ मनुष्य, अनन्त और शाश्वत अतीतकाल में केवल संयम द्वारा, (केवल संवर द्वारा, केवल ब्रह्मचर्य से, तथा केवल अष्ट प्रवचनमाताओं के पालन से सिद्ध हुआ है, बुद्ध हुआ है, यावत् उसने सर्व दुःखों का अन्त किया है ?)

[उ.] गौतम ! यह अर्थ उचित नहीं है। इस विषय में प्रथम शतक के चतुर्थ उद्देशक (सू. १२–१८) में जिस प्रकार कहा है, उसी प्रकार यहाँ यावत् 'अलमत्थु' पाठ तक कहना चाहिए।

1. [Q.] *Bhante* ! In the endless eternal past has a *chhadmasth* person (unrighteous/ one who is short of omniscience due to residual *karmic* bondage) been able to get perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), ... and so on up to... and end all miseries only by ascetic-discipline (*samyam*)... and so on up to... (only by blocking inflow of *karmas*, only by absolute celibacy or only by observing eight *pravachan-mata*) ?

[Ans.] Gautam ! That is not possible. In this regard repeat the statement from Chapter 1, Lesson 1 (Aphorisms 12-18) up to *almastu*.

विवेचन : फलितार्थ–प्रथम शतक के चतुर्थ उद्देशकोक्त पाठ का फलितार्थ यह है कि भूत, वर्तमान और भविष्य में जितने जीव सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए हैं, होते हैं, होंगे, वे सभी उत्पन्न ज्ञान–दर्शन के धारक अरिहंत, जिन, केवली होकर ही हुए हैं, होते हैं, होंगे।

Elaboration—The gist of the statement under reference is that whoever got perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), liberated (*mukta*), they all have first acquired ultimate knowledge and perception to become *Arhant*, *Jina*, or *Kevali* (omniscient). Only they do that and only they will do that.

हाथी और कुंथुए के समान जीव SOUL OF ELEPHANT AND INSECT

२. [प्र.] से णूणं भंते ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे ?

[उ.] हंता, गोयमा ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य एवं जहा रायपसेणइज्जे जाव खुड्डियं वा, महालियं वा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव समे चेव जीवे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. [प्र.] भगवन् ! क्या वास्तव में, हाथी और कुन्थुए का जीव समान है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! हाथी और कुन्थुए का जीव समान है। इस विषय में रायपसेणीय (राजप्रश्नीय) सूत्र में कहे अनुसार यावत् 'खुड्डियं वा महालियं वा' इस पाठ तक कहना चाहिए।

हे गौतम ! इसी कारण से हाथी और कुंथुए का जीव समान है।

2. [**Q.**] *Bhante* ! Is the soul of an elephant, in fact, the same as that of an insect (*kunthu*) ?

[**Ans.**] Yes, Gautam ! The soul of an elephant is the same as that of an insect (*kunthu*). In this regard quote the statement from *Raipaseniya* (*Rajaprashniya*) *Sutra* up to '*khuddyam va mahaliyam*'. Gautam ! That is why souls of elephant and insect are same.

विवेचन : राजप्रश्नीयसूत्र में कहा है–समान जीवत्व की सदृष्टान्त प्ररूपणा–हाथी का शरीर बड़ा और कुंथुए का छोटा होते हुए भी दोनों में मूलतः आत्मा (जीव) समान है, इसे सिद्ध करने के लिए राजप्रश्नीयसूत्र में दीपक का दृष्टान्त दिया गया है। जैसे–एक दीपक का प्रकाश एक कमरे में फैला हुआ है, यदि उसे किसी बर्तन द्वारा ढँक दिया जाये तो उसका प्रकाश बर्तन–परिमित हो जाता है, इसी प्रकार जब जीव हाथी का शरीर धारण करता है तो वह (आत्मा) उतने बड़े शरीर में व्याप्त रहता है और जब कुंथुए का शरीर धारण करता है तो उसके छोटे–से शरीर में (आत्मा) व्याप्त रहता है। इस प्रकार केवल छोटे–बड़े शरीर का ही अन्तर रहता है जीव में कुछ भी अन्तर नहीं है। सभी जीव समान रूप से असंख्यात प्रदेशों वाले हैं। उन प्रदेशों का संकोच–विस्तार मात्र होता है। आत्मा सबमें समान हैं। *(देखें–सचित्र रायपसेणियसूत्र, पृ. ३७८)*

Elaboration—*Rajaprashniya* states : **Similarity of souls explained by example**—In order to establish that although an elephant has a larger body than an insect, their souls are the same, *Rajaprashniya Sutra* gives the example of a lamp. The light of a lamp spreads all around a room. If this lamp is covered by a bowl its light gets confined within the bowl. In the same way when a soul acquires the body of an elephant it encompasses that large body and when it acquires the body of an insect it is confined to that small body. This way the difference of large and small is in the bodies, the souls are same. All souls are same, with infinite space-points, only there is an expansion or contraction of the space occupied by these space-points. (see *Illustrated Raipaseniya Sutra*, p. 378)

चौबीस दण्डकवर्ती जीवों द्वारा कृत पापकर्म दुःखरूप **SINS ARE MISERY**

३. [प्र.] नेरइयाणं भंते ! पावे कम्मे जे य कडे, जे य कज्जति, जे य कज्जिस्सति सव्वे से दुक्खे ? जे निज्जिण्णे से णं सुहे ?

[उ.] हंता, गोयमा ! नेरइयाणं पावे कम्मे जाव सुहे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. एवं जाव वेमाणियाणं।

३. [प्र.] भगवन् ! नैरयिकों द्वारा जो पापकर्म किया गया है, जो किया जाता है और जो किया जायेगा, क्या वह सब दुःखरूप है और (उनके द्वारा) जिसकी निर्जरा की गई है, क्या वह सुख रूप है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! नैरयिकों द्वारा जो पापकर्म किया गया है, वह सब दुःखरूप है और (उनके द्वारा) जिन (पापकर्मों) की निर्जरा की गई है, वह सब सुखरूप है।

3. [Q.] *Bhante* ! Are all the sinful acts done (demeritorious *karmas* acquired) in the past, being done at present and to be done in future by infernal beings are (take the form of) misery ? And all (the *karmas*) that have been shed are (take the form of) happiness ?

[Ans.] Yes, Gautam ! All the sinful acts done by infernal beings are misery. And all that have been shed are happiness.

४. इस प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त चौबीस दण्डकों में जान लेना चाहिए।

4. The same should be repeated for all living beings of twenty four *Dandaks* (places of suffering) up to *Vaimaniks*.

विवेचन : निष्कर्ष–पापकर्म संसार–परिभ्रमण का कारण होने से दुःखरूप है, और पापकर्मों की निर्जरा सुखस्वरूप मोक्ष का हेतु होने से सुखरूप है। यहाँ सुख और दुःख के कारण को ही सुख–दुःख कहा गया है। *(वृत्ति, पत्रांक ३१३)*

Elaboration—Conclusion—Demeritorious *karmas* (*paap karma*) being the cause of continued cycles of rebirth are misery and shedding of these *karmas* being the cause of liberation is happiness. Here the causes of misery and happiness have been mentioned as misery and happiness. (*Vritti*, leaf 313)

संज्ञाओं के दस प्रकार TEN KINDS OF INCLINATIONS

५. [प्र.] कति णं भंते ! सण्णाओ पण्णत्ताओ ?

[उ.] गोयमा ! दस सण्णाओ पण्णत्ताओ, तं जहा–आहारसण्णा १ भयसण्णा २ मेहुणसण्णा ३ परिग्गहसण्णा ४ कोहसण्णा ५ माणसण्णा ६ मायासण्णा ७ लोभसण्णा ८ ओहसण्णा ९ लोगसण्णा १०।

६. एवं जाव वेमाणियाणं।

५. [प्र.] भगवन् ! संज्ञाएँ कितने प्रकार की हैं ?

[उ.] गौतम ! संज्ञाएँ दस प्रकार की हैं। यथा–(१) आहारसंज्ञा, (२) भयसंज्ञा, (३) मैथुनसंज्ञा, (४) परिग्रहसंज्ञा, (५) क्रोधसंज्ञा, (६) मानसंज्ञा, (७) मायासंज्ञा, (८) लोभसंज्ञा, (९) लोकसंज्ञा, और (१०) ओघसंज्ञा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दस संज्ञाएँ

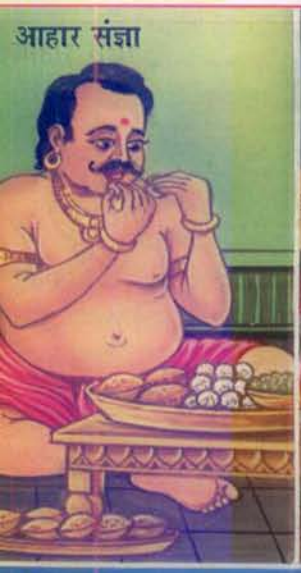

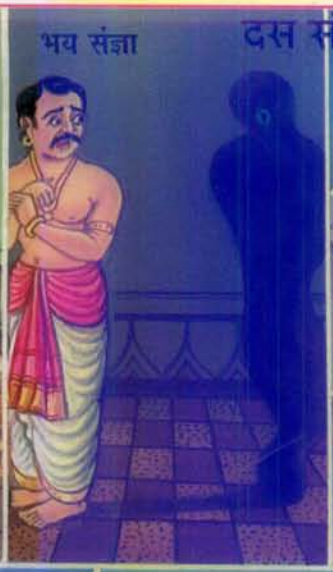

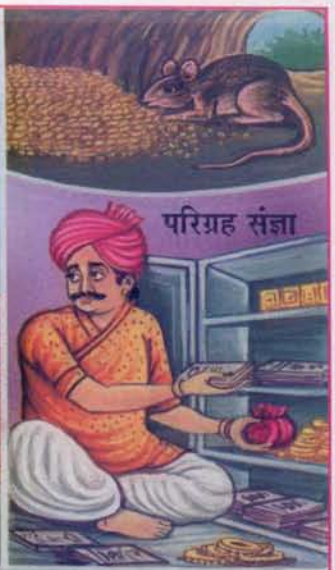

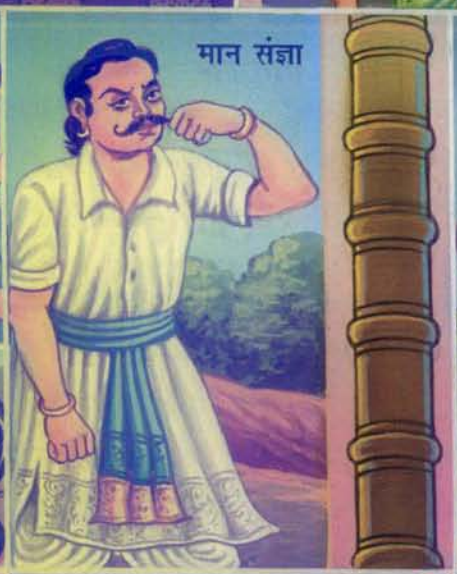

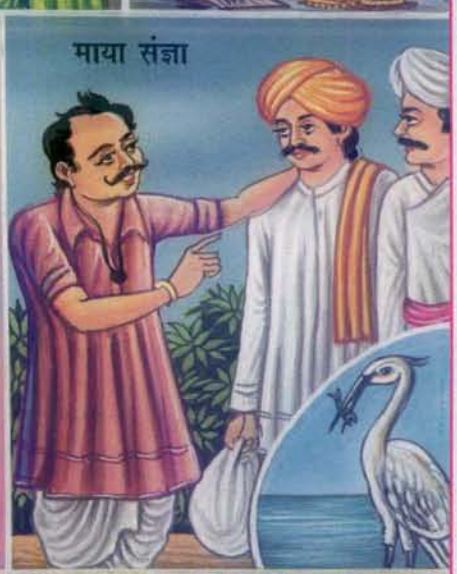

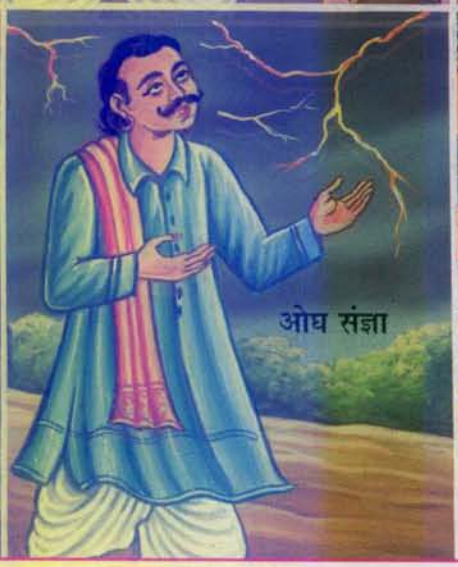

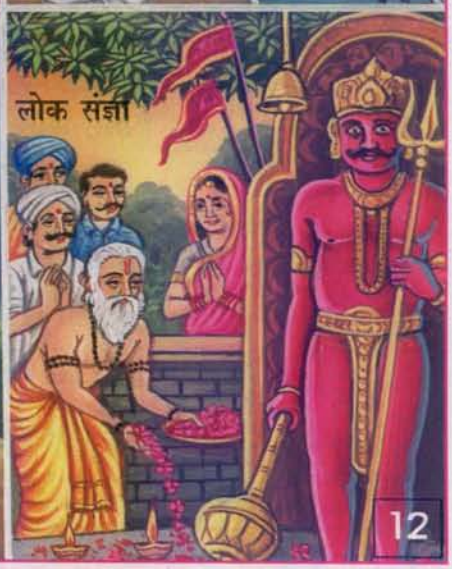

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-१२

Illustration No. 12

दस संज्ञाएँ

वेदनीय तथा मोहनीय कर्म के उदय से भोजन आदि की इच्छा होना 'संज्ञा' है।

१. आहार संज्ञा–भोजन की प्रबल इच्छा। जिसको आहार संज्ञा प्रबल होती है, उसे दिन-रात खाने की इच्छा बनी रहती है।

२. भय संज्ञा–किसी भी कल्पित कारण या आशंका से भयभीत होना–जैसे अपनी ही छाया को भूत समझकर डरना।

३. मैथुन संज्ञा–अपने से विपरीत लिंग के प्रति कामवासना।

४. परिग्रह संज्ञा–मन में धन आदि का संग्रह करने की आसक्ति होना, जैसे चूहे में संग्रह की वृत्ति होती है।

५. क्रोध संज्ञा–मन के विपरीत काम होने पर क्रोध आदि का उदय होना जैसे साँप को छेड़ने पर फुँकारता है।

६. मान संज्ञा–पत्थर के खम्भे की तरह मन में स्तब्धता (अकड़) रूप भान का उदय होना।

७. माया संज्ञा–झूठ, कपट आदि द्वारा दूसरों को ठगना जैसे बगुला वृत्ति।

८. लोभ संज्ञा–धन आदि की प्राप्ति की तीव्र लालसा होना। इसी लालसा वश व्यक्ति भ्रष्ट आचरण करता है।

९. ओघ संज्ञा–बिना विशेष उपयोग के धुन ही धुन में चलते रहना।

१०. लोक संज्ञा–लोक रूढ़ि के वश देखा-देखी प्रवृत्ति करना, जैसे देखा-देखी मिथ्यात्वी देवों की पूजा आदि करना।

–शतक ७, उ. ८, सूत्र ५

TEN INCLINATIONS

Natural desires triggered by fruition of Vedaniya and Mohaniya karmas are called sanjna (inclinations)—

(1) Inclination for food (ahaar sanjna)—a person with intensity of this tends to eat all the time.

(2) Inclination of fear (bhaya sanjna)—to be afraid of some imaginary thing, like one's own shadow, believing it to be a ghost.

(3) Inclination of sex (maithun sanjna)—lust for persons of opposite sex.

(4) Inclination of possession (parigraha sanjna)—craving for accumulating wealth and other possessions, like a mouse.

(5) Inclination of anger (krodh sanjna)—rise of anger when things go against one's wishes, as a snake hisses on disturbing.

(6) Inclination of conceit (maan sanjna)—rise of dogmatic ego, like an unyielding stone pillar.

(7) Inclination of deceit (maaya sanjna)—two cheat others with lies and deceit, like a heron.

(8) Inclination of greed (lobh sanjna)—craving for acquiring wealth and other things, like a corrupt person takes bribe.

(9) Inclination of stupor (ogh sanjna)—to move about purposeless or absentmindedly.

(10) Inclination for social customs (lok sanjna)—to blindly follow social customs, like worship of pagan deities.

–Shatak-7, lesson-8, Sutra-5

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. वैमानिकपर्यन्त चौबीस दण्डकों में ये दस संज्ञाएँ पाई जाती हैं।

5. *Bhante* ! How many kinds of inclinations (*sanjna*) are there ?

[Ans.] Gautam ! Inclinations (*sanjna*) are of ten kinds—(1) inclination for food (*ahaar sanjna*), (2) inclination of fear (*bhaya sanjna*), (3) inclination of sex (*maithun sanjna*), (4) inclination of possession (*parigraha sanjna*), (5) inclination of anger (*krodh sanjna*), (6) inclination of conceit (*maan sanjna*), (7) inclination of deceit (*maaya sanjna*), (8) inclination of greed (*lobh sanjna*), (9) inclination for information in general (*ogh sanjna*), (10) inclination for specific information (*lok sanjna*).

6. The same is true for all twenty four *Dandaks* up to *Vaimaniks*.

विवेचन : संज्ञा की परिभाषाएँ–वेदनीय और मोहनीय कर्मोदय से आहारादि प्राप्ति की इच्छाविशेष को 'संज्ञा' कहा जाता है, अथवा जीव का आहारादि विषयक चिन्तन या मानसिक ज्ञान भी संज्ञा है।

संज्ञाओं की व्याख्या–(१) **आहारसंज्ञा**–कवलादि आहारार्थ पुदगल–ग्रहण की इच्छा;

(२) **भयसंज्ञा**–भयमोहनीय के उदय से व्याकुलचित्त पुरुष का भयभीत होना, काँपना आदि;

(३) **मैथुनसंज्ञा**–स्त्री आदि के अंगों को छूने, देखने आदि की प्रवृत्ति तथा तज्जनित कम्पनादि, जिससे मैथुनेच्छा अभिव्यक्त हो;

(४) **परिग्रहसंज्ञा**–आसक्तिपूर्वक सचित्त–अचित्त द्रव्यों को ग्रहण करने की इच्छा;

(५) **क्रोधसंज्ञा**–क्रोध के उदय से आवेश, दोषरूप परिणाम;

(६) **मानसंज्ञा**–मान के उदय से अहंकारादिरूप परिणाम;

(७) **मायासंज्ञा**–माया के उदय से दुर्भावनावश दूसरों को ठगना आदि;

(८) **लोभसंज्ञा**–लोभ के उदय से सचित्त–अचित्त पदार्थ–प्राप्ति की लालसा;

(९) **ओघसंज्ञा**–मतिज्ञानावरण आदि के क्षयोपशम से शब्द और अर्थ का सामान्यज्ञान; अथवा धुन ही धुन में बिना उपयोग के की गई प्रवृत्ति; और

(१०) **लोकसंज्ञा**–सामान्य रूप से ज्ञात वस्तु को विशेष रूप से जानना, अथवा लोकरूढ़ि या लोकदृष्टि के अनुसार प्रवृत्ति करना। ये दसों संज्ञाएँ न्यूनाधिक रूप से सभी छद्मस्थ संसारी जीवों में पाई जाती हैं। इनमें प्रथम आठ संज्ञाएँ संवेगात्मक हैं तथा अन्तिम दो ज्ञानात्मक हैं। (वृत्ति, पत्रांक ३१४)

Elaboration—Definition of inclination (*sanjna*)—the intrinsic desire or inclination for food etc. caused by fruition of *Vedaniya* (sensation producing) and *Mohaniya* (deluding) *karmas* is called *sanjna*. Thought and awareness of food etc. is also *sanjna*.

Details of *sanjnas*—

(1) **Ahaar Sanjna**—inclination of matter intake as food; like a morsel.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(2) **Bhaya Sanjna**—inclination of fear due to agitated state of mind caused by fruition of *Bhaya Mohaniya karma.*

(3) **Maithun Sanjna**—inclination of sex evident in acts of seeing and touching female body and the consequent excitement.

(4) **Parigraha Sanjna**—inclination of owning living and non-living things with intense attachment.

(5) **Krodh Sanjna**—inclination of anger expressed by agitation and other faults.

(6) **Maan Sanjna**—inclination of conceit evident in expressions of pride and ego.

(7) **Maaya Sanjna**—inclination of deceit expressed by cheating others.

(8) **Lobh Sanjna**—inclination of greed expressed by craving to acquire living and non-living things.

(9) **Ogh Sanjna**—inclination for information (words and meanings) in general. This also means involuntary activities in a state of stupor.

(10) **Lok Sanjna**—inclination for specific information. This also means to act according to common social customs.

All these ten inclinations are found in all mundane unrighteous beings to some extant. The first eight inclinations are intuitive and the last two are intellectual. *(Vritti, leaf 314)*

नैरयिकों की दस वेदनाएँ TEN KINDS OF PAIN OF INFERNAL BEINGS

७. नेरइया दसविहं वेयणं पच्चणुभवमाणा विहरंति, तं जहा–सीतं उसिणं खुहं पिवासं कंडुं परज्झं जरं दाहं भयं सोगं।

७. नैरयिक जीव दस प्रकार की वेदना का अनुभव करते हैं। यथा–(१) शीत, (२) उष्ण, (३) क्षुधा, (४) पिपासा, (५) कण्डू (खुजली), (६) पराधीनता, (७) ज्वर, (८) दाह, (९) भय, और (१०) शोक।

7. Infernal beings experience ten kinds of pain—(1) cold, (2) heat, (3) hunger, (4) thirst, (5) itch, (6) slavery, (7) fever, (8) burn, (9) fear and (10) grief.

अप्रत्याख्यानिकी क्रिया ACTIVITY OF NON-RENUNCIATION

८. [प्र. १] से नूणं भंते ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समा चेव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जति ?

[उ.] हंता, गोयमा ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य जाव कज्जति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव कज्जति?

[उ.] गोयमा ! अविरतिं पडुच्च। से तेणट्ठेणं जाव कज्जति।

८. [प्र. १] भगवन् क्या वास्तव में, हाथी और कुन्थुए के जीव को अप्रत्याख्यानिकी क्रिया समान लगती है?

[उ.] हाँ, गौतम ! हाथी और कुन्थुए के जीव को अप्रत्याख्यानिकी क्रिया समान लगती है।

[२] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि हाथी और कुंथुए के यावत् क्रिया समान लगती है?

[उ.] गौतम ! अविरति की अपेक्षा से हाथी और कुन्थुए के जीव को अप्रत्याख्यानिकी क्रिया समान लगती है।

8. [Q. 1] *Bhante* ! Are soul of an elephant and that of an insect equally liable of involvement in *apratyakhyaniki kriya* (activity of non-renunciation) ?

[Ans.] Yes, Gautam ! Soul of an elephant and that of an insect are equally liable of involvement in *apratyakhyaniki kriya*.

[2] [Q.] *Bhante* ! Why do you say that soul of an elephant and that of an insect are equally liable of involvement in *apratyakhyaniki kriya* (activity of non-renunciation) ?

[Ans.] Gautam ! In context of *avirati* (non-restraint) soul of an elephant and that of an insect are equally liable of involvement in *apratyakhyaniki kriya*. In other words, as they both are unrestrained they both are liable of such involvement.

आधाकर्म का फल CONSEQUENCE OF ADHAAKARMA

९. [प्र.] आहाकम्मं णं भंते ! भुंजमाणे किं बंधति ? किं पकरेति ? किं चिणाति ? किं उवचिणाति ?

[उ.] एवं जहा पढमे सए नवमे उद्देसए (सू. २६) तहा भाणियव्वं जाव सासते पंडिते, पंडितत्तं असासयं।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! ति०।

॥ सत्तम सए : अट्ठमो उद्देसओ समत्तो ॥

९. [प्र. १] भगवन् ! आधाकर्म (साधु के निमित्त बने आहारादि) का उपयोग करने वाला साधु क्या बाँधता है? क्या करता है? किसका चय करता है और किसका उपचय करता है?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! आधाकर्म आहारादि का उपभोग करने वाला साधु आयुष्यकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों की प्रकृतियों को, यदि वे शिथिल बन्ध से बँधी हुई हों तो, गाढ बंध वाली करता है, यावत् बार-बार संसार-परिभ्रमण करता है। इस विषय का सारा वर्णन प्रथम शतक के नौवें उद्देशक (सू. २६) में कहे अनुसार यावत् पण्डित शाश्वत है और पाण्डित्य अशाश्वत है। यहाँ तक कहना चाहिए।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है; यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरण करते हैं।

॥ सप्तम शतक : अष्टम उद्देशक समाप्त ॥

9. [Q.] *Bhante* ! What does an ascetic who indulges in *adhaakarma* (accepting food specifically prepared for an ascetic) bind ? What does he do ? What does he acquire (*chaya*) ? What does he augment (*upachaya*) ?

[Ans.] Gautam ! An ascetic indulging in *adhaakarma* turns the weak bondage of seven species of *karmas* other than *Ayu-karma* (life-span determining *karma*) into strong bondage... and so on up to... and continues to wander in cycles of rebirth ... and so on up to... wise is eternal and wisdom is transitory. All this should be quoted from Chapter 1, Lesson 9 (aphorism 26).

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

● END OF THE EIGHTH LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : नवम उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : NINTH LESSON

असंवृत ASAMVRIT (THE UNRESTRAINED)

असंवृत अनगार **UNRESTRAINED ASCETIC**

१. [प्र.] असंवुडे णं भंते ! अणगारे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू एगवण्णं एगरूवं विउव्वित्तए ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे।

२. [प्र.] असंवुडे णं भंते ! अणगारे बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू एगवण्णं एगरूवं जाव।

[उ.] हंता, पभू।

१. [प्र.] भगवन् ! क्या असंवृत (संवररहित = प्रमत्त) अनगार, बाहर के पुद्गलों को ग्रहण किये बिना, एक वर्ण एक रूप की विकुर्ववणा (निर्माण) करने में समर्थ है ?

[उ.] (गौतम !) यह अर्थ समर्थ नहीं है।

२. [प्र.] भगवन् ! क्या असंवृत अनगार बाहर के पुद्गलों को ग्रहण करके एक वर्ण वाले एक रूप की विकुर्वणा करने में समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! वह ऐसा करने में समर्थ है।

1. [Q.] *Bhante* ! Is an unrestrained ascetic (*asamvrit anagaar*) capable of self-mutation (*vikurvana*) into a body of single colour and single form without acquiring external matter ?

[Ans.] Gautam ! This is not possible.

2. [Q.] *Bhante* ! Is an unrestrained ascetic capable of the said self-mutation (*vikurvana*) by acquiring external matter ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He is capable of doing that.

३. [प्र.] से भंते ! किं इहगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वइ? तत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वइ ? अन्नत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विउव्वइ ?

[उ.] गोयमा ! इहगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ, नो तत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ, नो अन्नत्थगए पोग्गले जाव विकुव्वइ।

३. [प्र.] भगवन् ! वह असंवृत अनगार यहाँ (मनुष्यलोक में) रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है या वहाँ (देवलोक) रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके अथवा इन दोनों से भिन्न अन्यत्र रहे पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! वह यहाँ (मनुष्यलोक में) रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है, किन्तु न तो वहाँ रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है, और न ही अन्यत्र रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है।

3. [Q.] *Bhante* ! Does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from here (the world of humans or adjoining areas) ? Does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from there (the divine realm or adjoining areas) ? Or does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from elsewhere (some area other then the said two areas) ?

[Ans.] Gautam ! He performs the said self-mutation by acquiring matter particles from here. He does not perform the said self-mutation by acquiring matter particles from there (the divine realm). He also does not perform the said self-mutation by acquiring matter particles from elsewhere.

४. एवं एगवण्णं अणेगरूवं चउभंगो जहा छट्ठसए नवमे उद्देसए (सू. ५) तहा इहावि भाणियव्वं।

[प्र.] नवरं अणगारे इहगए चेव पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ। सेसं तं चेव जाव लुक्खपोग्गलं निद्धपोग्गलत्ताए परिणामेत्तए ?

[उ.] हंता, पभू। से भंते ! किं इहगए पोग्गले परियाइत्ता जाव (सू. ३) नो अन्नत्थगए पोग्गले परियाइत्ता विकुव्वइ।

४. इस प्रकार (१) एकवर्ण एकरूप, (२) एकवर्ण अनेकरूप, (३) अनेकवर्ण एकरूप, और (४) अनेकवर्ण अनेकरूप; यों चौभंगी का कथन जिस प्रकार छठे शतक के नौवें उद्देशक (सू. ५) में किया है, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए। किन्तु इतना विशेष है कि यहाँ रहा हुआ मुनि, यहाँ रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके विकुर्वणा करता है। शेष सारा वर्णन उसी के अनुसार यहाँ भी कहना चाहिए।

[प्र.] भगवन् ! क्या रूक्ष पुद्गलों को स्निग्ध पुद्गलों के रूप में परिणत करने में समर्थ है ?

[उ.] हाँ, गौतम ! समर्थ है। भगवन् ! क्या वह यहाँ रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण करके यावत् (सू. ३) अन्यत्र रहे हुए पुद्गलों को ग्रहण किये बिना विकुर्वणा करता है ? यहाँ तक कहना चाहिए।

4. In the same way four alternatives of self-mutation described in the aforesaid statement should be stated as mentioned in Chapter 6, Lesson 9 (aphorism 5)—(1) of single colour and single form (or shape), (2) of single colour and many forms (or shapes), (3) of many colours and single form (or shape), and (4) of many colours and many forms (or shapes). The only difference being that the ascetic here performs self-mutation with the help of matter available here. Rest of the details should be repeated verbatim.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Q.] *Bhante* ! Is he capable of transforming rough particles into smooth particles ?

[Ans.] Yes, Gautam ! He is capable. (Gautam—) Does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from here (the world of humans or adjoining areas) ? ... and so on up to ... Or does he perform the said self-mutation by acquiring matter particles from elsewhere (some area other then the said two areas) ? and the answer should be repeated as in aforesaid aphorism 3.

विवेचन : 'इहगए' आदि का तात्पर्य–जिस स्थान पर रहकर अनगार वैक्रिय करता है, वहाँ के पुद्गल 'इहगत' कहलाते हैं। वैक्रिय शरीर करके जिस स्थान पर जाता है, वहाँ के पुद्गल 'तत्रगत' कहलाते हैं; और इन दोनों स्थानों से भिन्न स्थान के पुद्गल 'अन्यत्रगत' हैं। देव तो 'तत्रगत' (देवलोकगत) पुद्गलों को ग्रहण करके विक्रिया कर सकता है, लेकिन अनगार तो मध्यलोकगत होने के कारण 'इहगत' (मनुष्यलोकगत) पुद्गलों को ही ग्रहण करके विक्रिया कर सकता है। (वृत्ति, पत्रांक ३१५)

Elaboration—The matter particles of the place where the ascetic performs self-mutation are called *'ihagat'*. The matter particles of the place where he goes after transmutation are called *'tatragat'*. A place other than these two is called *'anyatragat'*. Gods can perform self-mutation by acquiring particles from there (divine realm) but ascetics can only do that only by acquiring particles from here (the land of humans) because they dwell in the middle world. (*Vritti*, leaf 315)

महाशिलाकण्टक संग्राम MAHASHILAKANTAK BATTLE

५. [प्र.] णायमेयं अरहता, सुयमेयं अरहया, विण्णायमेयं अरहया, महासिलाकंटए संगामे महासिलाकंटए संगामे। महासिलाकंटए णं भंते ! संगामे वट्टमाणे के जइत्था ? के पराजइत्था ?

[उ.] गोयमा ! वज्जी विदेहपुत्ते जइत्था, नव मल्लई नव लेच्छई कासी–कोसलगा–अट्ठारस वि गणरायाणो पराजइत्था।

५. [प्र.] अर्हन्त भगवान ने यह जाना है, अर्हन्त भगवान ने यह सुना है–अर्थात्–सुनने की तरह प्रत्यक्ष देखा है, तथा अर्हन्त भगवान को यह विशेष रूप से ज्ञात है कि महाशिलाकण्टक संग्राम महाशिलाकण्टक संग्राम ही है। (अतः) भगवन् ! जब महाशिलाकण्टक संग्राम चल रहा (प्रवर्त्तमान) था, तब उसमें कौन जीता और कौन हारा ?

[उ.] गौतम ! वज्जी (वज्जीगण का अथवा वज्री इन्द्र और) विदेहपुत्र कूणिक राजा जीते, नौ मल्लकी और नौ लेच्छकी (लिच्छवी) जो कि काशी और कौशल देश के १८ गण राजा थे, वे पराजित हुए।

5. [Q.] *Arhant Bhagavan* has known about this, *Arhant Bhagavan* has heard about this (directly seen like hearing about this) and *Arhant*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Bhagavan has specially known about this that indeed this is Mahashilakantak battle. (Therefore) *Bhante* ! When Mahashilakantak battle was going on who won and who lost ?

[Ans.] Gautam ! Vajji Videhaputra (King Kunik of Vajji or Indra, the wielder of thunder, and King Kunik) won. Nine Malla chiefs and nine Lichchhavi chiefs, who were the eighteen kings of republics of Kashi and Kaushal countries, lost.

६. तए णं से कूणिए राया महासिलाकंटगं संगामं उद्वितं जाणित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! उदाइं हत्थिरायं परिकप्पेह, हय–गय–रह–जोहकलियं चातुरंगिणिं सेणं सन्नाहेह, सन्नाहेत्ता जाव मम एतमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह।

६. उस समय महाशिलाकण्टक–संग्राम उपस्थित हुआ जानकर कूणिक राजा ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों (आज्ञापालक सेवकों) को बुलाया। बुलाकर उनसे इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही 'उदायी' नामक हस्तिराज (पट्टहस्ती) को तैयार करो और अश्व, हाथी, रथ और योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना सन्नद्ध (शस्त्रास्त्रादि से सुसज्जित) करो और ये सब करके मेरी आज्ञानुसार कार्य करके शीघ्र ही मेरी आज्ञा मुझे वापस सौंपो।

6. At that time, knowing that Mahashilakantak battle was about to begin, King Kunik summoned his attendants (*kautumbik purush*) and instructed them—"Beloved of gods ! At once prepare Udai, the best elephant, and get the four pronged army comprising of cavalry, elephant brigade, chariot brigade and infantry, ready to march. Accomplishing my instructions, report back to me at once."

७. तए णं ते कोडुंबियपुरिसा कूणिएणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठा जाव अंजलिं कट्टु 'एवं सामी ! तह' त्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति, पडिसुणित्ता खिप्पामेव छेयायरियोव–एसमतिकप्पणाविकप्पेहिं सुनिउणेहिं एवं जहा उववातिए जाव भीमं संगामियं अउज्झं उदाइं हत्थिरायं परिकप्पेंति हय–गय–जाव सन्नाहेंति, सन्नाहित्ता जेणेव कूणिए राया तेणेव उवा०, तेणेव २ करयल० कूणियस्स रण्णो तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

७. तत्पश्चात् कूणिक राजा द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर वे कौटुम्बिक पुरुष हृष्ट–तुष्ट हुए, यावत् मस्तक पर अंजलि करके हे स्वामिन् ! 'ऐसा ही होगा, जैसी आज्ञा'; यों कहकर उन्होंने विनयपूर्वक वचन स्वीकार किया। वचन स्वीकार करके निपुण आचार्यों के उपदेश से प्रशिक्षित एवं तीक्ष्ण बुद्धि–कल्पना के सुनिपुण विकल्पों से युक्त तथा औपपातिकसूत्र में कहे गये विशेषणों से युक्त यावत् भीम (भयंकर) संग्राम के योग्य उदार (श्रेष्ठ अथवा योद्धा के बिना अकेले ही टक्कर लेने वाले) उदायी नामक हस्तीराज (पट्टहस्ती) को सुसज्जित किया। साथ ही घोड़े, हाथी, रथ और योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना भी (शस्त्रास्त्रादि) से सुसज्जित की। सुसज्जित करके जहाँ कूणिक राजा था, वहाँ उसके पास आये और करबद्ध होकर उन्होंने कूणिक राजा को आज्ञानुसार कार्य सम्पन्न हो जाने की सूचना दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

7. Being instructed by King Kunik, the attendants were pleased and contented... and so on up to... they touched their foreheads with joined palms and said—"Sire ! Your order will, indeed, be complied with." Saying thus they humbly accepted the order and prepared Udai, the great elephant (having all attributes as mentioned in *Aupapatik Sutra* up to) with terrifying appearance and battle-ready, with the help of expert artisans who had attained all-round expertise under the guidance of accomplished art teachers. After this they also made ready the four pronged army comprising of cavalry, elephant brigade, chariot brigade and infantry, and came to King Kunik. With joined palms they reported him about successfully following his orders.

८. तए णं से कूणिए राया जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छति, २ त्ता मज्जणघरं अणुप्पविसति, मज्जण. २ त्ता ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोतुयमंगलपायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए सन्नद्धबद्धवम्मियकवए उप्पीलियसरासणपट्टिए पिणद्धगेवेज्जविमलवरबद्धचिंधपट्टे गहियायुहप्पहरणे सकोरेंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं चउचामरवालवीइयंगे मंगलजयसद्दकतालोए एवं जहा उववाइए जाव उवागच्छित्ता उदाइं हत्थिरायं दुरूढे।

८. तत्पश्चात् कूणिक राजा जहाँ स्नानगृह था, वहाँ आया, उसने स्नानगृह में प्रवेश किया। फिर स्नान किया, स्नान से सम्बन्धित मर्दनादि बलिकर्म किया, फिर प्रायश्चित्तरूप (विघ्ननाशक) कौतुक तथा मंगल किये। समस्त आभूषणों से विभूषित हुआ, शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित हुआ, लोहकवच को धारण किया, फिर मुड़े हुए धनुर्दण्ड को ग्रहण किया। गले के आभूषण पहने और योद्धा के योग्य उत्तमोत्तम चिह्नपट बाँधे। फिर आयुध (गदा आदि शस्त्र) तथा प्रहरण (भाले आदि शस्त्र) ग्रहण किये। फिर श्वेत कोरण्टक पुष्पों की माला सहित छत्र धारण किया तथा उसके चारों ओर चार चामर ढुलाये जाने लगे। लोगों द्वारा मांगलिक एवं जय-विजय शब्द उच्चारण किये जाने लगे। इस प्रकार कूणिक राजा औपपातिकसूत्र में कहे अनुसार यावत् उदायी नामक प्रधान हाथी पर आरूढ़ हुआ।

8. After that King Kunik approached and entered his bathroom. There he took his bath after massage and then he performed various propitious rites for protection against evil eye and other bad omens. He then embellished his body with ornaments. He equipped himself with weapons, put on his armour and lifted his curved bow. He adorned himself with necklaces and best decorations suited to a warrior of his stature. Now he added weapons like mace and spears to his collection of arms. An umbrella with white Korant flowers was raised over him and four whisks were waved on his four sides. People greeted him with auspicious slogans and hails of victory. This way, as mentioned in *Aupapatik Sutra*, King Kunik rode Udai, his best elephant.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

९. तए णं से कूणिए नरिंदे हारोत्थयसुकयरतियवच्छे जहा उववातिए जाव सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं उद्धुव्वामाणीहिं हय–गय–रह–पवरजोहकलिताए चातुरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे महया भडचडगरवंदपरिक्खित्ते जेणेव महासिलाकंटए संगामे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता महासिलकंटयं संगामं ओयाए, पुरओ य से सक्के देविंदे देवराया एगं महं अभेज्जकवयं वइरपडिरूवगं विउव्वित्ताणं चिट्ठति। एवं खलु दो इंदा संगामं संगामेंति, तं जहा–देविंदे य मणुइंदे य, एगहित्थणा वि णं पभू कूणिए राया पराजिणित्तए।

९. इसके बाद हारों से आच्छादित वक्षःस्थल वाला कूणिक जनमन में रति–प्रीति उत्पन्न करता हुआ औपपातिकसूत्र में कहे अनुसार यावत् श्वेत चामरों से बार–बार बिंजाता हुआ, अश्व, हस्ती, रथ और श्रेष्ठ योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना से संपरिवृत्त महान् सुभटों के विशाल समूह से व्याप्त कूणिक राजा, जहाँ महाशिलाकण्टक संग्राम (होने जा रहा) था, वहाँ आया। वहाँ आकर वह महाशिलाकण्टक संग्राम में (स्वयं) उतरा। उसके आगे देवराज देवेन्द्र शक्र वज्र के समान अभेद्य एक महान् कवच की विकुर्वणा करके खड़ा हुआ। इस प्रकार (उस युद्ध क्षेत्र में मानो) दो इन्द्र संग्राम करने लगे; जैसे कि–एक देवेन्द्र (शक्र) और दूसरा मनुजेन्द्र (कूणिक राजा)। अब कूणिक राजा केवल एक हाथी से भी अथवा (एक उपकरण विशेष जिसके द्वारा कंकड़ आदि फैंके जाते हैं) (शत्रुपक्ष की सेना को) पराजित करने में समर्थ हो गया।

9. Then King Kunik, his chest covered with necklaces, proceeded towards the battle ground. He evoked humble and loving curiosity in masses. As mentioned in *Aupapatik Sutra*, he was continuously fanned with whisks and was surrounded by his four pronged army comprising of cavalry, elephant brigade, chariot brigade and infantry. Accompanied by a large group of great warriors, he arrived at the battle ground and joined the Mahashilakantak battle. Ahead of him stood Shakrendra, the king of gods, after creating a great impenetrable armour. This way it appeared as if two *Indras* (kings), king of gods (Shakra) and king of humans (Kunik), had joined the battle. Now King Kunik became capable of defeating the opposing army just with one elephant (or a special tank-like vehicle that launched a variety of projectiles including stones).

१०. तए णं से कूणिए राया महासिलाकंटकं संगामं संगामेमाणे नव मल्लई, नव लेच्छइ, कासी कोसलगा अट्ठारस वि गणरायाणो हयमहियपवरवीरघातियविवडियचिंधधय–पडागे किच्छप्पाणगते दिसो दिसिं पडिसेहेत्था।

१०. तत्पश्चात् उस कूणिक राजा ने महाशिलाकण्टक संग्राम करते हुए, नौ मल्लकी और नौ लेच्छकी; जो काशी और कौशल देश के अठारह गण राजा थे, उनके प्रवर वीर योद्धाओं को नष्ट किया, घायल किया और मार डाला। उनकी चिह्नांकित ध्वजा–पताकाएँ गिरा दीं। उन वीरों के प्राण संकट में पड़ गये, अतः उन्हें युद्धस्थल से दसों दिशाओं में भगा दिया (तितर–बितर कर दिया)।

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाशिला कंटक संग्राम

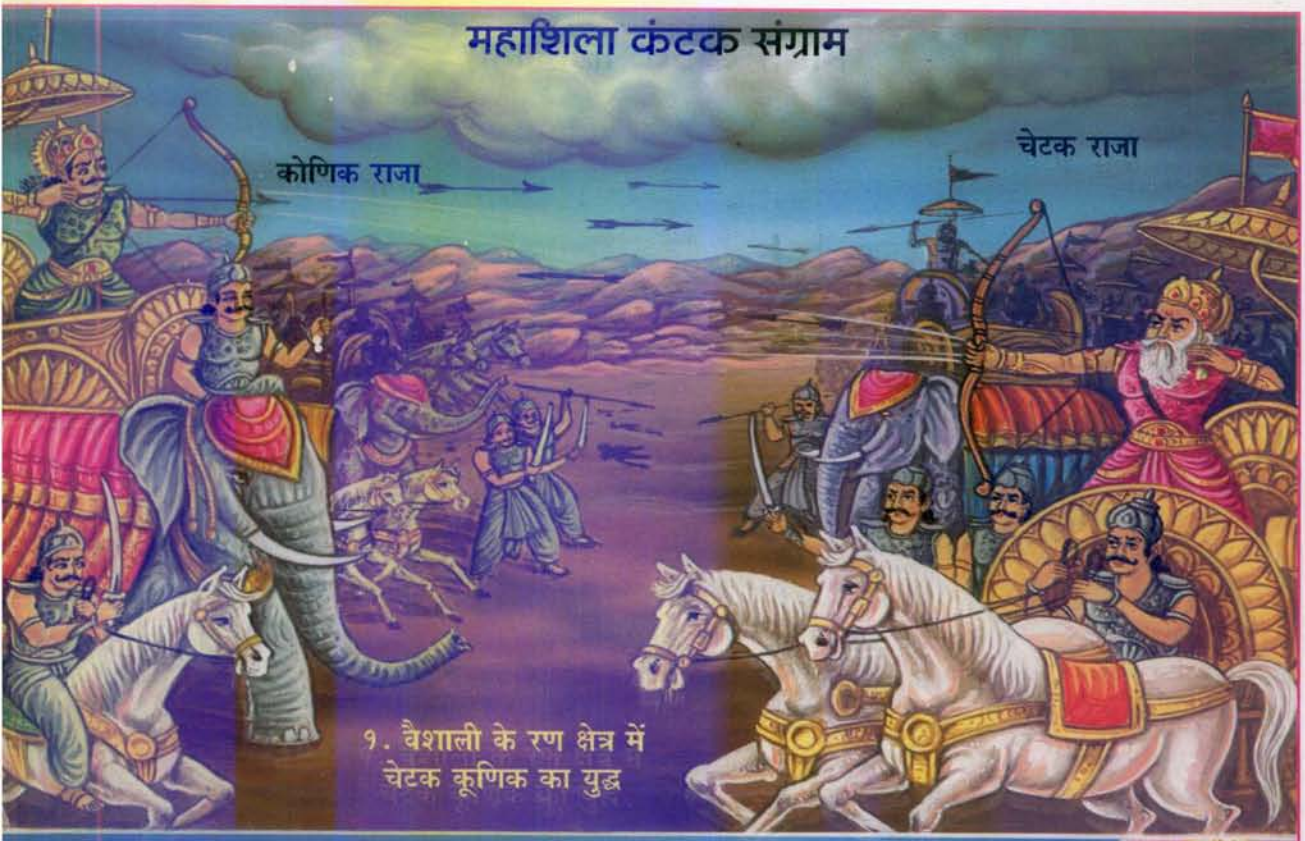

१. वैशाली के रण क्षेत्र में
चेटक कूणिक का युद्ध

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-१३

Illustration No. 13

महाशिला कंटक संग्राम

(१) वैशाली गण राज्य का अध्यक्ष चेटक राजा व्रतधारी श्रावक था। उसने हल्ल-विहल्ल कुमार को शरण दी, जिससे क्रुद्ध होकर मगध नरेश कूणिक अपने कालकुमार आदि दस भाइयों को साथ लेकर युद्ध करने रणभूमि में आ गया। चेटक का बाण कभी निष्फल नहीं जाता था। वह एक दिन में एक ही बाण छोड़ता। एक-एक दिन के युद्ध में उसने कालकुमार आदि दसों भाइयों को परलोक पहुँचा दिया। तब कूणिक घबरा गया। उसकी सेना भी छिन्न-भिन्न व व्याकुल हो उठी।

कूणिक ने अपने पूर्वजन्म के मित्र शक्रेन्द्र और चमरेन्द्र की आराधना कर उनसे युद्ध में सहायता माँगी। शक्रेन्द्र ने कहा-चेटक राजा परम वीर तो है ही, साथ ही श्रावक व्रतधारी है। मैं उसे नहीं मारूँगा। किन्तु मित्रता के नाते युद्ध में तुम्हारी सहायता करूँगा। जिससे तुम विजयी बनोगे।

(२) शक्रेन्द्र ने कूणिक की रक्षा करने के लिए उसे वज्र जैसा अभेद्य कवच दिया, जिस पर शत्रु का कोई प्रहार सफल नहीं होता।

चमरेन्द्र ने महाशिलाकण्टक और रथमूसल-इन दो संग्रामों की विकुर्वणा की। इस देव सहायता से कूणिक की सेना द्वारा फैंके गये बाण तो क्या, तिनका, पत्ता, कंकर भी बड़ी-बड़ी शिला बन जाते और चेटक की सेना पर तीव्र प्रहार करते। जिससे चेटक राजा की सेना का विनाश होने लगा। कूणिक विजयी बन गया।

-शतक ७, उ. ९, सूत्र १०-११

MAHASHILAKANTAK WAR

(1) King Chetak, the president of the Vaishali republic, was a vow-abiding shravak. He gave refuge to prince Hall-vihall and invited displeasure of King Kunik of Magadh, who attacked Vaishali with his ten brothers including Kaal Kumar. Chetak used to shoot only one arrow in a day and he never missed. In ten days he killed Kaal Kumar and his nine brothers. Kunik was in panic and his army was in shambles.

Kunik invoked Shakrendra and Chamarendra, his friends from past birth, and sought their help. Shakrendra declined to kill Chetak because, although a great warrior, he was a devout shravak. However, he offered help to win the war.

(2) Shakrendra gave him a diamond hard impenetrable armour.

Chamarendra created two war machines—Mahashilakantak and Rath Musal. Even pebbles and straws launched through these machines turned into large rocks and killed enemy soldiers. Chetak's army got depleted and Kunik came close to victory.

—Shatak-7, lesson-9, Sutra-10-11

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

10. In the battle King Kunik hurt, wounded and killed great warriors of the Nine Malla chiefs and nine Lichchhavi chiefs, who were the eighteen kings of republics of Kashi and Kaushal countries. The flags and banners bearing their ensigns and colours were brought down. He put the fear of life in their minds and made them flee in all the ten directions.

विवेचन : महाशिलाकण्टक संग्राम का कारण– 'औपपातिक' एवं 'निरयावलिका' आदि सूत्रों में इस युद्ध का कारण इस प्रकार बताया है–चम्पानगरी में कूणिक राजा राज्य करता था। हल्ल और विहल्ल उसके दो छोटे भाई थे। दोनों को उनके पिता श्रेणिक राजा ने अपने जीवनकाल में उनके हिस्से का एक सेचनक गन्धहस्ती और अठारहलड़ा वंकचूड़ हार दिया था। दोनों भाई प्रतिदिन सेचनक गन्धहस्ती पर बैठकर गंगातट पर जलक्रीड़ा और मनोरंजन करते थे। उनके इस आमोद-प्रमोद को देखकर कूणिक की रानी पद्मावती को अत्यन्त ईर्ष्या हुई। उसने कूणिक राजा को हल्ल-विहल्लकुमार से सेचनक हाथी ले लेने के लिए प्रेरित किया। कूणिक ने हल्ल-विहल्लकुमार से सेचनक हाथी माँगा। तब उन्होंने कहा–'यदि आप हाथी लेना चाहते हैं तो हमारे हिस्से का राज्य दे दीजिए।' किन्तु कूणिक उनकी न्यायसंगत बात की परवाह न करके बार-बार हाथी माँगने लगा। इस पर दोनों भाई कूणिक के भय से भागकर अपने हाथी और अन्तःपुर सहित वैशाली नगरी में अपने नाना चेटक राजा की शरण में पहुँचे। कूणिक ने चेटक के पास दूत भेजकर हल्ल-विहल्लकुमार को सौंप देने का सन्देश भेजा। किन्तु चेटक राजा ने हल्ल-विहल्ल को नहीं सौंपा। पुनः कूणिक ने दूत के साथ सन्देश भेजा कि यदि आप दोनों कुमारों को नहीं सौंपते हैं तो युद्ध के लिए तैयार हो जाइये। चेटक राजा ने न्यायसंगत बात कही, उस पर कूणिक ने कोई विचार नहीं किया। सीधा ही युद्ध में उतरने के लिए तैयार हो गया। यह था महाशिलाकण्टक युद्ध का कारण।

इधर जब चेटक राजा ने भी देखा कि कूणिक युद्ध किये बिना नहीं मानेगा। तब उन्होंने भी शरणागत की रक्षा एवं न्याय के लिए अठारह गणराज्यों के अधिपति राजाओं को अपनी-अपनी सेना सहित बुलाया। वे सब ससैन्य एकत्रित हुए। दोनों ओर की सेनाएँ युद्धभूमि में आ डटीं। घोर संग्राम शुरू हुआ। चेटक राजा का ऐसा नियम था कि वे दिन में एक ही बार एक ही बाण छोड़ते, और उनका छोड़ा हुआ बाण कभी निष्फल नहीं जाता था। पहले दिन कूणिक का भाई कालकुमार सेनापति बनकर युद्ध करने लगा, किन्तु चेटक राजा के एक ही बाण से वह मारा गया। इससे कूणिक की सेना भाग गई। इस प्रकार दस दिन में चेटक राजा ने कालकुमार आदि दसों भाइयों को मार गिराया। ग्यारहवें दिन कूणिक की बारी थी। कूणिक ने सोचा–'मैं भी दसों भाइयों की तरह चेटक राजा के आगे टिक न सकूँगा। मुझे भी वे एक ही बाण में मार डालेंगे।' अतः उसने तीन दिन तक युद्ध स्थगित रखकर चेटक राजा को जीतने के लिए अष्टम तप (तेला) करके देवाराधना की। अपने पूर्वभव के मित्र देवों का स्मरण किया, जिससे शक्रेन्द्र और चमरेन्द्र दोनों उसकी सहायता के लिए आये। शक्रेन्द्र ने कूणिक से कहा–चेटक राजा परम श्रावक है, इसलिए उसे मैं मारूँगा नहीं, किन्तु तेरी रक्षा करूँगा। अतः शक्रेन्द्र ने कूणिक की रक्षा करने के लिए वज्र सरीखे अभेद्य कवच की विकुर्वणा की और चमरेन्द्र ने महाशिलाकण्टक और रथमूसल, इन दो संग्रामों की विकुर्वणा की। इन दोनों इन्द्रों की सहायता के कारण कूणिक की शक्ति बढ़ गयी। वास्तव में इन्द्रों की सहायता से ही महाशिलाकण्टक संग्राम में कूणिक की विजय हुई, अन्यथा विजय में सन्देह था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—In scriptures like *Aupapatik* and *Niryavlika Sutras* the cause of this war is detailed as follows—Kunik was the king of Champa city. He had two younger brothers named Halla and Vehalla. When King Shrenik was alive he had given the majestic elephant Sechanak and an eighteen string necklace to these two brothers. They used to ride Sechanak elephant to the banks of river Ganges and entertain themselves. When Queen Padmavati, Kunik's consort, came to know of the enjoyments of the brothers, she was extremely jealous. She beseeched King Kunik to take Sechanak elephant from princes Halla and Vihalla. When Kunik demanded Sechanak from Halla and Vihalla they responded by saying—"If you want the elephant please give us our share of the kingdom." Not heeding to their legitimate demand, Kunik repeatedly asked for the elephant. At this the two brothers, afraid of Kunik, fled with their families and the elephant to Vaishali and took refuge with their maternal grandfather King Chetak. Kunik sent a message to Chetak asking him to hand over Halla and Vihalla. But Chetak refused to do so. Kunik sent another message that Chetak should either return the two princes or be prepared for a war. Chetak tried to convince Kunik about his just decision but Kunik was not prepared even to listen. He straightway launched an attack. This was the cause of Mahashilakantak battle.

When Chetak realized that Kunik will not stop short of a war, he too called chiefs of eighteen republics with their armies in order to lawfully protect the refugees. They all joined Chetak with their armies. The two armies came face to face in the battle ground and a terrible war commenced. Chetak had taken a vow that he would launch only one arrow a day. And that devastating arrow never missed the target. On the first day the commander of Kunik's army was his brother prince Kaal. He was killed by that one arrow of Chetak and his army retreated. This way Chetak killed Kunik's ten brothers in ten days. Eleventh day was for the king himself. Kunik thought—"Like all my brothers I will also not be able to hold Chetak. He will kill me with his single unstoppable arrow." So he announced cease-fire for three days. In order to win the war he commenced a three day fast and evoked divine help. He sought help of two friendly gods from his past birth and Shakrendra and Chamarendra appeared before him. Shakrendra said to Kunik—"Chetak is a devout Jain *shravak*, so I will not kill him. However, I will defend you for sure." Accordingly Shakrendra created an impenetrable

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

diamond-hard armour and Chamarendra created two great war machines called Mahashilakantak and Rath-musal. With the divine help from these two, Kunik's strength increased. In fact, Kunik won the Mahashilakantak only due to this divine help, otherwise his victory was in doubt.

महाशिलाकण्टक संग्राम का स्वरूप DETAILS OF MAHASHILAKANTAK BATTLE

११. [प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'महासिलाकंटए संगामे महासिलाकंटए संगामे' !

[उ.] गोयमा ! महासिलाकंटए णं संगामे वट्टमाणे जे तत्थ आसे वा हत्थी वा जोहे वा सारही वा तणेण वा कट्ठेण वा पत्तेण वा सक्कराए वा अभिहम्मति सव्वे से जाणति 'महासिलाए अहं अभिहते महासिलाए अहं अभिहते'; से तेणट्ठेणं गोयमा ! महासिलाकंटए संगामे महासिलाकंटए संगामे।

११. [प्र.] भगवन् ! इस 'महाशिलाकण्टक' संग्राम को महाशिलाकण्टक संग्राम क्यों कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जब महाशिलाकण्टक संग्राम हो रहा था, तब उस संग्राम में जो भी घोड़ा, हाथी, योद्धा या सारथी आदि तृण से, काष्ठ से, पत्ते से या कंकर आदि से आहत होते, वे सब ऐसा अनुभव करते थे कि हम महाशिला (के प्रहार) से मारे गये हैं। (अर्थात्–महाशिला हमारे ऊपर आ पड़ी है।) हे गौतम ! इस कारण से इस संग्राम को महाशिलाकण्टक संग्राम कहा जाता है।

11. [Q.] *Bhante* ! Why this Mahashilakantak battle is called Mahashilakantak battle ?

[Ans.] Gautam ! When the battle was going on all the horses, elephants, soldiers and charioteers, though hit by straw, wood, leaf or pebble, felt that they were hit by large rocks (*mahashila*). Gautam ! That is why this battle has been called Mahashilakantak battle.

१२. [प्र.] महासिलाकंटए णं भंते ! संगामे वट्टमाणे कति जणसतसाहस्सीओ वहियाओ ?

[उ.] गोयमा ! चउरासीतिं जणसतसाहस्सीओ वहियाओ।

१२. [प्र.] भगवन् ! जब महाशिलाकण्टक संग्राम हो रहा था, तब उसमें कितने लाख मनुष्य मारे गये ?

[उ.] गौतम ! महाशिलाकण्टक संग्राम में चौरासी लाख मनुष्य मारे गये।

12. [Q.] *Bhante* ! How many hundred thousand men were killed in this Mahashilakantak battle ?

[Ans.] Gautam ! Eighty four hundred thousand men were killed in the Mahashilakantak battle.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१३. [प्र.] ते णं भंते ! मणुया निस्सीला जाव निप्पच्चक्खाणपोसहोववासा सारुट्ठा परिकुविया समरवहिया अणुवसंता कालमासे कालं किच्चा कहिं गया ? कहिं उववन्ना ?

[उ.] गोयमा ! ओसन्नं नरग–तिरिक्खजोणिएसु उववन्ना।

१३. [प्र.] भगवन् ! शीलरहित यावत् प्रत्याख्यान एवं पौषधोपवास से रहित, रोष (आवेश) में भरे हुए, परिकुपित, युद्ध में घायल हुए और अनुपशान्त वे युद्ध करने वाले मनुष्य मृत्यु के समय मरकर कहाँ गये, कहाँ उत्पन्न हुए ?

[उ.] गौतम ! ऐसे मनुष्य प्रायः नरक और तिर्यंचयोनियों में उत्पन्न हुए हैं।

13. [Q.] *Bhante* ! Where did these warring men devoid of good conduct... and so on up to... remorse and fasting, full of bitterness, full of anger, wounded and restless, go after death and get reborn ?

[Ans.] Gautam ! Most of these men got reborn among infernal beings or animals.

रथमूसल संग्राम RATH-MUSAL BATTLE

१४. [प्र.] णायमेयं अरहया, सुतमेयं अरहया, विण्णायमेयं अरहया रहमुसले संगामे रहमुसले संगामे। रहमुसले णं भंते ! संगामे वट्टमाणे के जइत्था ? के पराजइत्था ?

[उ.] गोयमा ! वज्जी विदेहपुत्ते चमरे य असुरिंदे असुरकुमारराया जइत्था, नव मल्लई नव लेच्छई पराजइत्था।

१४. [प्र.] भगवन् ! अर्हन्त भगवान ने जाना है, इसे प्रत्यक्ष किया है और विशेष रूप से जाना है कि यह रथमूसल संग्राम है। भगवन् ! यह रथमूसल संग्राम जब हो रहा था, तब कौन जीता, कौन हारा ?

[उ.] हे गौतम (वज्जी गण या वंश का विदेहपुत्र या) वज्री–इन्द्र और विदेहपुत्र (कूणिक) एवं असुरेन्द्र असुरराज चमर जीते और नौ मल्लकी और नौ लिच्छवी (ये अठारह गण) राजा हार गये।

14. [Q.] *Bhante* ! *Arhant Bhagavan* has known about this, heard about this and specially known about this that indeed this is Rath-musal battle. *Bhante* ! When Rath-musal battle was going on who won and who lost ?

[Ans.] Gautam ! Vajji Videhaputra (King Kunik of Vajji or Indra, the wielder of thunder, and King Kunik) and Chamar, the king of *Asurs* won. Nine Malla chiefs and nine Lichchhavi chiefs, who were the eighteen kings of republics of Kashi and Kaushal countries, lost.

१५. तए णं से कूणिए राया रहमुसलं संगामं उवट्ठियं., सेसं जहा महासिलाकंटए नवरं भूताणंदे हत्थिराया जाव रहमुसलं संगामं ओयाए, पुरतो य से सक्के देविंदे देवराया। एवं तहेव जाव चिट्ठति,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

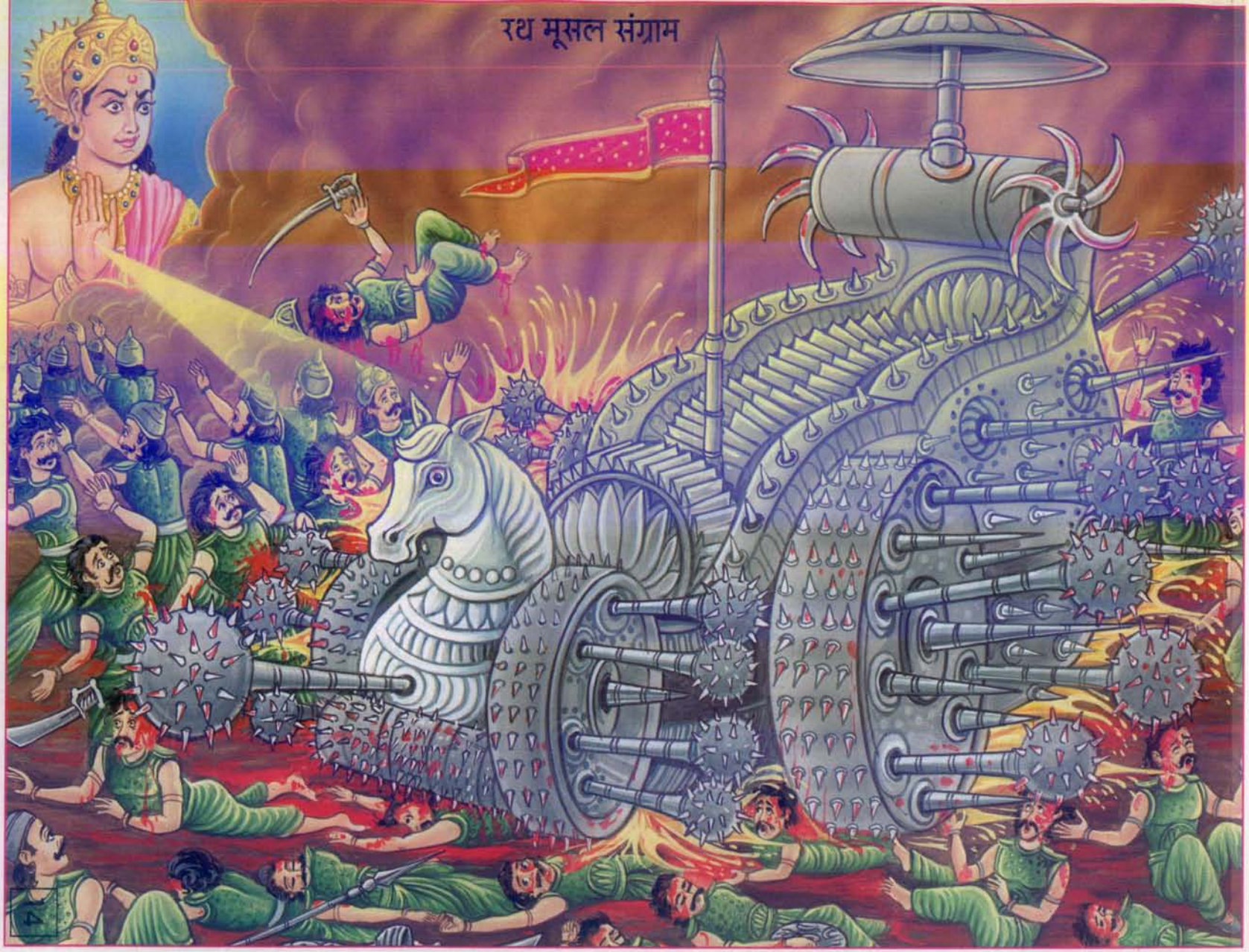

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

卐 卐

चित्र परिचय-१४

Illustration No. 14

रथ-मूसल संग्राम

महाशिला कंटक संग्राम के पश्चात् शत्रु सेना के विनाश के लिए शक्रेन्द्र व चमरेन्द्र की सहायता से रथ-मूसल संग्राम की रचना की गई।

लोहे का एक अत्यन्त भयानक विशाल रथ बनाया गया। इस रथ में न तो घोड़े जुते थे, न कोई सारथि और न ही कोई योद्धा था। सर्वथा अश्व योद्धा-मानव रहित इस रथ के पहियों में तीक्ष्ण मूसल जैसे शस्त्र लगे थे, उनसे भयंकर स्फुलिंग-चिंनगारियाँ निकल रही थीं। युद्ध भूमि में दौड़ता हुआ यह रथ महाकाल की तरह अत्यन्त जन संहार कर रहा था। जिधर निकल जाता उधर ही सैनिकों को मारता हुआ युद्ध भूमि को रक्त कीचड़ से लाल कर देता। उस रथ को रोकने की क्षमता किसी मनुष्य में नहीं थी, अदृश्य देव शक्ति से यह चारों तरफ महाविनाश करता हुआ दौड़ रहा था। चेटक के अमोघ बाण भी इस रथ को नहीं रोक सके। इस कारण वैशाली गणराज्य की सेना ध्वस्त हो गई। कूणिक ने वैशाली का विध्वंस कर डाला। इस एक ही संग्राम में छियानवें लाख मनुष्य मारे गये।

-शतक ७, उ. ९, सूत्र १६-१७

RATH MUSAL BATTLE

After Mahashilakantak battle another battle, Rath Musal battle, was designed with the help of Shakrendra and Chamarendra.

A large chariot-like machine was created. It neither had horses nor a driver or a warrior. On its wheels were fitted pointed mace-like weapons that emitted terrifying sparks. Moving with great speed in the battle field, it killed like the messenger of death. Whichever way it moved it left the land red and slimy with blood. Driven by invisible divine power it could not be stopped by any human effort. Even unfaltering arrows of Chetak could not stop it. Vaishali and its army both were destroyed by Kunik. This war accounted for almost one million human lives.

—Shatak-7, lesson-9, Sutra-16-17

卐 卐

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भग्गतो य से चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया एगं महं आयसं किढिणपडिरूवगं विउव्वित्ताणं चिट्ठति, एवं खलु तओ इंदा संगामं संगामेंति, तं जहा–देविंदे मणुइंदे असुरिंदे य। एगहत्थिणा वि णं पभू कूणिए राया जइत्तए तहेव जाव दिसो दिसिं पडिसेहेत्था।

१५. तदनन्तर रथमूसल संग्राम उपस्थित हुआ जानकर कूणिक राजा ने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया। इसके बाद का सारा वर्णन महाशिलाकण्टक की तरह यहाँ कहना चाहिए। इतना विशेष है कि यहाँ 'भूतानन्द' नामक हस्तिराज (पदहस्ती) है। यावत् वह कूणिक राजा रथमूसल संग्राम में उतरा। उसके आगे देवेन्द्र देवराज शक्र है, यावत् पूर्ववत् सारा वर्णन कहना चाहिए। उसके पीछे असुरेन्द्र असुरराज चमर लोह के बने हुए एक महान् किठिन (बाँस–निर्मित तापस पात्र) जैसे कवच की विकुर्वणा करके खड़ा है। इस प्रकार तीन इन्द्र संग्राम करने के लिए प्रवृत्त हुए हैं। यथा–देवेन्द्र (शक्र), मनुजेन्द्र (कूणिक) और असुरेन्द्र (चमर)। अब कूणिक केवल एक हाथी से सारी शत्रु–सेना को पराजित करने में समर्थ है। यावत् पहले कहे अनुसार उसने शत्रु राजाओं (की सेना) को दसों दिशाओं में भगा दिया।

15. At that time knowing that Rath-musal battle was about to begin, King Kunik summoned his attendants (*kautumbik purush*) and so on as described about Mahashilakantak battle. The difference being that the name of the elephant is Bhootanand... and so on up to... King Kunik joined the Rath-musal battle. Ahead of him stood Shakrendra, the king of gods... and so on as already described. Behind him stood Chamar, the king of *Asurs*, creating an iron armour like a great *Kithin* (hermit-bowl made of bamboo). This way it appeared as if three *Indras* (kings) are ready to fight—king of gods (Shakra), king of humans (Kunik), and king of *Asurs* (Chamar). Now King Kunik became capable of defeating the opposing army just with one elephant... and so on up to... He put the fear of life in the minds of opposing armies and made them flee in all the ten directions (as already described).

१६. [प्र.] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चति 'रहमुसले संगामे रहमुसले संगामे'?

[उ.] गोयमा ! रहमुसले णं संगामे वट्टमाणे एगे रहे अणासए असारहिए अणारोहए समुसले महताजणक्खयं जणवहं जणप्पमद्दं जणसंवट्टकप्पं रुहिरकद्दमं करेमाणे सव्वतो समंता परिधावित्था; से तेणट्ठेणं जाव रहमुसले संगामे।

१६. [प्र.] भगवन् ! इस 'रथमूसल संग्राम' को रथमूसल संग्राम क्यों कहा जाता है ?

[उ.] गौतम ! जिस समय रथमूसल संग्राम हो रहा था, उस समय अश्वरहित, सारथिरहित और योद्धाओं से रहित एक रथ केवल मूसल सहित, अत्यन्त जनसंहार, जनवध, जन–प्रमर्दन और जनप्रलय के समान रक्त का कीचड़ करता हुआ चारों ओर दौड़ता था। इसी कारण से उस संग्राम को 'रथमूसल संग्राम' कहा गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

16. [Q.] *Bhante* ! Why this Rath-musal battle is called Rath-musal battle ?

[Ans.] Gautam ! When the battle was on, a chariot (*rath*) without horses, charioteers or soldiers but equipped only with a mace (*musal*) was moving all around destroying men, killing men, crushing men and causing havoc by making the ground slimy with human blood. Gautam ! That is why this battle has been called Rath-musal battle.

१७. [प्र.] रहमुसले णं भंते ! संगामे वट्टमाणे कति जणसयसाहस्सीओ वहियाओ ?

[उ.] गोयमा ! छण्णउतिं जणसयसाहस्सीओ वहियाओ।

१७. [प्र.] भगवन् ! जब रथमूसल संग्राम हो रहा था, तब उसमें कितने लाख मनुष्य मारे गये ?

[उ.] गौतम ! रथमूसल संग्राम में छियानवे लाख मनुष्य मारे गये।

17. [Q.] *Bhante* ! How many hundred thousand men were killed in this Rath-musal battle ?

[Ans.] Gautam ! Ninety six hundred thousand men were killed in the Rath-musal battle.

१८. [प्र.] ते णं भंते ! मणुया निस्सीला जाव (सु. १३) उववन्ना ?

[उ.] गोयमा ! तत्थ णं दस साहस्सीओ एगाए मच्छियाए कुच्छिंसि उववन्नाओ, एगे देवलोगेसु उववन्ने, एगे सुकुले पच्चायाते, अवसेसा ओसन्नं नरग–तिरिक्खजोणिएसु उववन्ना।

१८. [प्र.] भगवन् ! निःशील (शीलरहित) यावत् वे मनुष्य मृत्यु के समय मरकर कहाँ गये, कहाँ उत्पन्न हुए ?

[उ.] गौतम ! उनमें से दस हजार मनुष्य तो एक मछली के उदर में उत्पन्न हुए, एक मनुष्य देवलोक में उत्पन्न हुआ, एक मनुष्य उत्तम कुल (मनुष्यगति) में उत्पन्न हुआ, और शेष प्रायः नरक और तिर्यंचयोनियों में उत्पन्न हुए हैं। (दोनों युद्धों का विस्तृत वर्णन सचित्र निरयावलिका, अध्ययन १ देखें)

18. [Q.] *Bhante* ! Where did these warring men devoid of good conduct... and so on up to... go after death and get reborn ?

[Ans.] Gautam ! Of these, ten thousand men were reborn in the womb of a fish, one was reborn in divine realm, one was reborn as a human being and most of the remaining got reborn among infernal beings or animals. (for detailed description of the two battles refer to *Illustrated Niryavalika Sutra*, Chapter 1)

शक्र–चमरेन्द्र के सहयोग का हेतु CAUSE OF HELP FROM SHAKRENDRA AND CHAMARENDRA

१९. [प्र.] कम्हा णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया, चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया कूणियस्स रण्णो साहज्जं दलइत्था ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! सक्के देविंदे देवराया पुव्वसंगतिए, चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया परियायसंगतिए, एवं खलु गोयमा ! सक्के देविंदे देवराया, चमरे य असुरिंदे असुरकुमारराया कूणियस्स रण्णो साहज्जं दलइत्था।

१९. [प्र.] भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र और असुरेन्द्र असुरराज चमर, इन दोनों ने कूणिक राजा को किस कारण से सहायता (युद्ध में सहयोग) दी ?

[उ.] गौतम ! देवेन्द्र देवराज शक्र तो कूणिक राजा का पूर्वसंगतिक (पूर्वभव सम्बन्धी–कार्तिक सेठ के भव में मित्र) था, और असुरेन्द्र असुरकुमार राजा चमर, कूणिक राजा का पर्यायसंगतिक (पूरण नामक तापस की अवस्था का साथी तापस) मित्र था। इसीलिए, हे गौतम ! देवेन्द्र देवराज शक्र और असुरेन्द्र असुरराज चमर ने कूणिक राजा को सहायता दी।

19. [Q.] *Bhante* ! Why did Shakrendra and Chamarendra help (assist in the battle) King Kunik ?

[Ans.] Gautam ! Shakrendra was a friend of King Kunik during an earlier birth (a friend during his past birth as merchant Kartik). And Chamarendra, the king of *Asurs* was an associate during an earlier birth (a companion hermit during his past birth as Puran hermit). That is the reason, Gautam ! Shakrendra, the king of gods and Chamarendra, the king of *Asurs* came to the help of King Kunik.

क्या युद्ध करते मरने पर स्वर्ग मिलता है HEAVEN ON DEATH IN WAR ?

२०. [प्र. १] बहुजणे णं भंते ! अन्नमन्नस्स एवमाइक्खति जाव परूवेति–एवं खलु बहवे मणुस्सा अन्नतरेसु उच्चावएसु संगामेसु अभिमुहा चेव पहया समाणा कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भ्वंति। से कहमेयं भंते ! एवं ?

[उ.] गोयमा ! जं णं से बहुजणे अन्नमन्नस्स एवमाइक्खति जाव उववत्तारो भवंति, जे ते एवमाहंसु मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–

[२] एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं वेसाली नामं नगरी होत्था। वण्णओ। तत्थ णं वेसालीए णगरीए वरुणे नामं णागनत्तुए परिवसति अड्ढे जाव अपरिभूते समणोवासाए अभिगतजीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेण तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे विहरति।''

२०. [प्र. १] भगवन् ! बहुत–से लोग परस्पर ऐसा कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि–अनेक प्रकार के छोटे–बड़े संग्रामों में से किसी भी संग्राम में सम्मुख रहकर लड़ते हुए आहत हुए बहुत–से मनुष्य मृत्यु के समय मरकर किसी भी देवलोक में देवरूप में उत्पन्न होते हैं। भगवन् ! ऐसा कैसे हो सकता है ?

[उ.] गौतम ! बहुत–से मनुष्य, जो इस प्रकार कहते हैं, यावत् प्ररूपणा करते हैं कि संग्राम में मारे गये मनुष्य, देवलोकों में उत्पन्न होते हैं, ऐसा कहने वाले मिथ्या कहते हैं। हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ यावत् प्ररूपणा करता हूँ–

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[२] गौतम ! उस काल और उस समय में वैशाली नाम की नगरी थी। उस वैशाली नगरी में 'वरुण' नामक नागनप्तृक (नाग नामक गृहस्थ का नाती = दौहित्र या पौत्र) रहता था। वह धनाढ्य यावत् किसी के आगे न दबने वाला) व्यक्ति था। वह श्रमणोपासक था, और जीवाजीवादि तत्त्वों का ज्ञाता था, वह आहारादि द्वारा श्रमणनिर्ग्रन्थों को प्रतिलाभित करता हुआ तथा निरन्तर छठ-छठ की (बेले की) तपस्या द्वारा अपनी आत्मा को भावित करता हुआ विचरण करता था।

20. [Q. 1] *Bhante* ! Many people say... and so on up to... propagate that—people fighting face to face in some big or small war, and getting injured, when at the time of death abandon this body they are reborn as gods in any of the divine realms. *Bhante* ! Is it possible ?

[Ans.] Gautam ! Many people say... and so on up to... propagate that—people fighting in war are reborn in divine realms. Those who say thus are wrong. Gautam ! I say... and so on up to... propagate that—

[2] Gautam ! During that period of time there was a city named Vaishali. In that city lived Varun, the grandson of householder Naag (Naag-naptrik). He was affluent... and so on up to... could not be subdued. He was a *shramanopasak* (devotee of *shramans*) and had complete knowledge of fundamentals including the living and the non-living. He lived enkindling his soul by serving *Shraman-nirgranths* (Jain ascetics) and observing a series of two day fasts.

[३] तए णं से वरुणे णागनत्तुए अन्नया कयाई रायाभिओगेणं गणाभिओगेणं बलाभिओगेणं रहमुसले संगामे आणत्ते समाणे छट्ठभत्तिए, अट्ठमभत्तं अणुवट्टेति, अट्ठमभत्तं अणुवट्टेत्ता कोडुं बियपुरिसे सद्दावेति, सद्दावेत्ता एवं वयासी–खिप्पामेव भो ! देवाणुप्पिया ! चातुग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठावेह हय-गय-रहपवर जाव सन्नाहेत्ता मम एतमाणत्तियं पच्चप्पिणह।

[४] तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सच्छत्तं सज्झयं जाव उवट्ठावेंति, हय-गय-रह जाव सन्नाहेंति, सन्नाहित्ता जेणेव वरुणे नागनत्तुए जाव पच्चप्पिणंति।

[३] एक बार राजा के आदेश से, गण के अभियोग से तथा बल (बलवान्-व्यक्ति) के अभियोग से वरुण नागनप्तृक को रथमूसल संग्राम में जाने की आज्ञा दी गई। तब उसने षष्ठभक्त को बढ़ाकर अष्टभक्त तप कर लिया। तेले की तपस्या करके उसने अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रियो ! चार घण्टों वाला अश्वरथ, सामग्रीयुक्त तैयार करके शीघ्र उपस्थित करो। साथ ही अश्व, हाथी, रथ और योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना को सुसज्जित करो, यह सब सुसज्जित करके मेरी आज्ञा मुझे वापस सौंपो।

[४] तदनन्तर उन कौटुम्बिक पुरुषों ने उसकी आज्ञा स्वीकार करके यथाशीघ्र छत्रसहित एवं ध्वजासहित चार घण्टाओं वाला अश्वरथ, तैयार करके उपस्थित किया। साथ ही घोड़े, हाथी, रथ एवं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना को यावत् सुसज्जित किया। और ऐसा करके यावत् वरुण नागनत्तुआ को उसकी आज्ञा वापस सौंपी।

[3] Once Varun Naag-naptrik was ordered by the king, the state and the administration, to go to Rath-musal battle. Then he extended his two day fast to three days. After concluding this fast he called his attendants and said—"Beloved of gods ! Bring a four-bell chariot drawn by horses and duly equipped and get the four pronged army comprising of cavalry, elephant brigade, chariot brigade and infantry, ready to march. After doing all this report back to me.

[4] His attendants accepted his order and soon prepared a fully equipped and horse-drawn four-bell chariot and brought it to him. They also got the four pronged army comprising of cavalry, elephant brigade, chariot brigade and infantry, ready to march. After doing all this they reported back to him.

[५] तए णं से वरुणे नागनत्तुए जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छति जहा कूणिओ (सु. ८) जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिते सन्नद्धबद्ध० सकोरेंटमल्लदामेणं जाव धरिज्जमाणेणं अणेगगणनायग जाव दूयसंधिवाल० सद्धिं संपरिवुडे मज्जणघराओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चातुघंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चातुघंटं आसरहं दुरूहइ, दुरूहित्ता हय–गय–रह जाव संपरिवुडे महता भडचडगर० जाव परिक्खित्ते जेणेव रहमुसले संगामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता रहमुसलं संगामं ओयाए।

[५] तत्पश्चात् वह वरुण नागनप्तृक, जहाँ स्नानगृह था, वहाँ आया। इसके पश्चात् यावत् कौतुक और मंगलरूप प्रायश्चित्त (विघ्ननाशक) किया, सर्व अलंकारों से विभूषित हुआ, कवच पहना, कोरंटपुष्पों की मालाओं से युक्त छत्र धारण किया, इत्यादि सारा वर्णन कूणिक राजा की तरह कहना चाहिए। फिर अनेक गणनायकों, दूतों और सन्धिपालों के साथ परिवृत होकर बाहर की उपस्थानशाला में आया और सुसज्जित चातुर्घण्ट अश्वरथ पर आरूढ़ हुआ। रथ पर आरूढ़ होकर अश्व, गज, रथ और योद्धाओं से युक्त चतुरंगिणी सेना के साथ, यावत् महान् सुभटों के समूह से परिवृत होकर रथमूसल संग्राम में आया।

[5] After that Varun Naag-naptrik approached and entered his bathroom... and so on up to... performed various propitious rites for protection against evil eye and other bad omens. He then embellished his body with ornaments. He put on his armour... and so on up to... umbrella with white Korant flowers (as described about King Kunik). Then he came to the outer courtyard surrounded by many chieftains, ambassadors and diplomats and boarded the fully equipped and horse-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

drawn four-bell chariot. Surrounded by his four pronged army comprising of cavalry, elephant brigade, chariot brigade and infantry and accompanied by a large group of great warriors, he arrived at the battle ground to join Rath-musal battle.

[६] तए णं से वरुणे णागनत्तुए रहमुसलं संगामं ओयाए समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ–कप्पति मे रहमुसलं संगामं संगामेमाणस्स जे पुव्विं पहणति से पडिहणित्तए अवसेसे नो कप्पतीति। अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हित्ता रहमुसलं संगामं संगामेति।

[७] तए णं तस्स वरुणस्स नागनत्तुयस्स रहमुसलं संगामं संगामेमाणस्स एगे पुरिसे सरिसए सरिसत्तए सरिसव्वए सरिसभंडमत्तोवगरणे रहेणं पडिरहं हव्वमागए।

[८] तए णं से पुरिसे वरुणं णागणत्तुयं एवं वयासी–पहण भो ! वरुणा ! णागणत्तुया ! पहण भो ! वरुणा ! णागणत्तुया ! तए णं से वरुणे णागणत्तुए तं पुरिसं एवं वदासि–नो खलु मे कप्पति देवाणुप्पिया ! पुव्विं अहयस्स पहणित्तए, तुमं चेव पुव्वं पहणाहि।

[-६] उस समय रथमूसल संग्राम में प्रवृत्त होने के साथ ही वरुण नागनप्तृक ने इस प्रकार का अभिग्रह (नियम) किया–मेरे लिए यही कल्प (उचित नियम) है कि रथमूसल संग्राम में युद्ध करते हुए जो मुझ पर पहले प्रहार करेगा, उसे ही मुझे मारना है, (अन्य) व्यक्तियों को नहीं। इस प्रकार यह अभिग्रह करके वह रथमूसल संग्राम में प्रवृत्त हो गया।

[७] उसी समय रथमूसल संग्राम में जूझते हुए वरुण नागनप्तृक के रथ के सामने प्रतिरथी के रूप में एक पुरुष आया, जो उसी के सदृश, उसी के समान त्वचा वाला था, उसी के समान उम्र का और उसी के समान अस्त्र–शस्त्रादि उपकरणों से युक्त था।

[८] तब उस पुरुष ने वरुण नागनप्तृक को इस प्रकार ललकारते हुए कहा–"हे वरुण नागनत्तुआ ! मुझ पर प्रहार कर, अरे, वरुण नागनत्तुआ ! मुझ पर वार कर !" इस पर वरुण नागनत्तुआ ने उस पुरुष से कहा–"हे देवानुप्रिय ! जो मुझ पर प्रहार न करे, उस पर पहले प्रहार करने का मेरा नियम नहीं है। इसलिए तुम (चाहो तो) पहले मुझ पर प्रहार करो।"

[6] At that time, before joining the Rath-musal battle, Varun Naag-naptrik took a vow that during the Rath-musal battle he would only kill the person who first hits him and none else. After taking this resolve he joined the Rath-musal battle.

[7] While fighting in the Rath-musal battle another charioteer, who was his look-alike with similar skin and similarly equipped, confronted Varun Naag-naptrik.

[8] That warrior challenged Varun Naag-naptrik with these words—"O Varun Naag-naptrik ! Hit me ! O Varun Naag-naptrik ! Hit me !"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Varun Naag-naptrik responded—"Beloved of gods ! As a rule I do not hit a person who has not already hit me. Therefore, hit me first if you want a fight."

[९] तए णं से पुरिसे वरुणेणं णागणत्तुएणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे धणुं परामुसति, परामुसित्ता उसुं परामुसति, उसुं परामुसित्ता ठाणं ठाति, ठाणं ठिच्चा आयतकण्णायतं उसुं करेति, आयतकण्णायतं उसुं करेत्ता वरुणं णागणत्तयं गाढप्पहारीकरेति।

[१०] तए णं से वरुणे णागणत्तुए तेणं पुरिसेणं गाढप्पहारीकए समाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे धणुं परामुसति, धणुं परामुसित्ता उसुं परामुसति, उसुं परामुसित्ता आयतकण्णायतं उसुं करेति, आयतकण्णायतं उसुं करेत्ता तं पुरिसं एगाहच्चं कूडाहच्चं जीवियाओ ववरोवेति।

[९] तदनन्तर वरुण नागनत्तुआ के द्वारा ऐसा कहने पर उस पुरुष ने शीघ्र ही क्रोध से लाल-पीला होकर यावत् दाँत पीसते हुए अपना धनुष उठाया। फिर बाण उठाया। फिर धनुष पर यथास्थान बाण चढ़ाया। फिर अमुक आसन से अमुक स्थान पर स्थित होकर धनुष को कान तक खींचा। ऐसा करके उसने वरुण नागनत्तुआ पर गाढ़ प्रहार किया।

[१०] इसके पश्चात् उस पुरुष द्वारा किये गये गाढ़ प्रहार से घायल हुए वरुण नागनत्तुआ ने शीघ्र कुपित होकर धनुष उठाया। फिर उस पर बाण चढ़ाया और उस पुरुष पर छोड़ा। जैसे एक ही जोरदार चोट से पत्थर के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं, उसी प्रकार वरुण नागनप्तृक ने एक ही गाढ़ प्रहार से उस पुरुष को जीवन से रहित कर दिया।

[9] When Varun Naag-naptrik said this, that person became red with anger and gnashing his teeth he lifted his bow. He then fitted an arrow properly. Doing this, he stood at a specific spot in a specific posture and drew the bow-string up to his ear. At last he launched the arrow at Varun Naag-naptrik with great force.

[10] Wounded by this blow from the adversary Varun Naag-naptrik got enraged. He lifted his bow, set an arrow and launched at his attacker. Like a strong hammer-blow shatters a stone, in the same way Varun Naag-naptrik killed his adversary with just one forceful strike.

[११] तए णं से वरुणे नागणत्तुए तेणं पुरिसेणं गाढप्पहारीकते समाणे अत्थामे अबले अवीरिए अपुरिसक्कारपरक्कमे अधारणिज्जमिति कट्टु तुरए निगिण्हति, तुरण निगिण्हित्ता रहं परावत्तेइ, २ त्ता रहमुसलातो संगामातो पडिनिक्खमति, रहमुसलाओ संगामातो पडिणिक्खमेत्ता एगंतमंतं अवक्कमति, एगंतमंतं अवक्कमित्ता तुरण निगिण्हति, निगिण्हित्ता रहं ठवेति, २ त्ता रहातो पच्चोरुहति, रहातो पच्चोरुहित्ता रहाओ तुरए मोएति, २ तुरए विसज्जेति, विसज्जित्ता दब्भसंथारगं संथरेति, संथरित्ता दब्भसंथारगं दुरुहति, दब्भसं० दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसण्णे करयल जाव कट्टु एवं वयासी-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नमोऽत्थु णं अरहंताणं जाव संपत्ताणं। नमोऽत्थु णं समणस्स भगवओ महावीरस्स आइगरस्स जाव संपाविउकामस्स मम धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स। वंदामि णं भगवंतं तत्थगतं इहगते, पासउ मे से भगवं तत्थगते; जाव वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–पुव्विं पि णं मए समणस्स भगवतो महावीरस्स अंतियं थूलए पाणातिवाते पच्चक्खाए जावज्जीवाए एवं जाव थूलए परिग्गहे पच्चक्खाते जावज्जीवाए, इयाणिं पि णं अहं तस्सेव भगवतो महावीरस्स अंतियं सव्वं पाणातिवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, एवं जहा खंदओ (स० २, उ० १, सु० ५०) जाव एतं पि णं चरिमेहिं उस्साह–णिस्सासेहिं 'वोसिरिस्सामि' त्ति कट्टु सन्नाहपट्टं मुयति, सन्नाहपट्टं मुइत्ता सल्लुद्धरणं करेति, सल्लुद्धरणं करेत्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालगते।

[११] तत्पश्चात् उस पुरुष के गाढ़ प्रहार से घायल हुआ वरुण नागनप्तृक अशक्त, अबल, अवीर्य, पुरुषार्थ एवं पराक्रम से रहित हो गया। अतः 'अब मेरा शरीर टिक नहीं सकेगा' ऐसा समझकर उसने घोड़ों को रोका, घोड़ों को रोककर रथ को वापस फिराया और रथमूसल संग्राम–स्थल से बाहर निकल गया। संग्राम–स्थल से बाहर निकलकर एकान्त स्थान में आकर रथ को खड़ा किया। फिर रथ से नीचे उतरकर उसने घोड़ों को छोड़कर विसर्जित कर दिया। फिर दर्भ (डाभ) का संथारा (बिछौना) बिछाया और पूर्व दिशा की ओर मुँह करके दर्भ के संस्तारक पर पर्यंकासन से बैठा। और दोनों हाथ जोड़कर यावत् इस प्रकार कहा–

अरिहन्त भगवन्तों को, यावत् जो सिद्धगति को प्राप्त हुए हैं, नमस्कार हो। मेरे धर्मगुरु धर्माचार्य श्रमण भगवान महावीर स्वामी को नमस्कार हो, जो धर्म की आदि करने वाले यावत् सिद्धगति प्राप्त करने के इच्छुक हैं। यहाँ रहा हुआ मैं वहाँ रहे हुए भगवान को वन्दन करता हूँ। वहाँ रहे हुए भगवान मुझे देखें। इत्यादि कहकर उसने वन्दन–नमस्कार किया। वन्दन–नमस्कार करके इस प्रकार कहा–पहले मैंने श्रमण भगवान महावीर के पास स्थूल प्राणातिपात का जीवनपर्यन्त प्रत्याख्यान किया था, यावत् स्थूल परिग्रह का जीवनपर्यन्त प्रत्याख्यान किया था, किन्तु अब मैं उन्हीं अरिहन्त भगवान महावीर की साक्षी से सर्व प्राणातिपात का जीवनपर्यन्त प्रत्याख्यान करता हूँ। इस प्रकार स्कन्दक की तरह (अठारह ही पापस्थानों का सर्वथाप्रत्याख्यान कर दिया।) फिर इस शरीर का भी अन्तिम श्वासोच्छ्वास के साथ व्युत्सर्ग (त्याग) करता हूँ, यों कहकर उसने **सन्नाहपट** (कवच) खोल दिया। कवच खोलकर लगे हुए बाण को बाहर खींचा। बाण शरीर से बाहर निकालकर उसने आलोचना की, प्रतिक्रमण किया, और समाधियुक्त होकर मरण प्राप्त किया।

[11] Wounded by the strong blow by that adversary, Varun Naagnaptrik lost his strength, power, potency, will and valour. Realizing that he will not last long, he stopped the horses turned the chariot and left the battle ground. He proceeded to a secluded spot, stopped the chariot, alighted from the chariot and released the horses. Now he made a bed of hay and sat on it in *Paryank* posture facing east. Joining his palms he uttered—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वरुण नाग नत्तुआ की युद्ध में मृत्यु

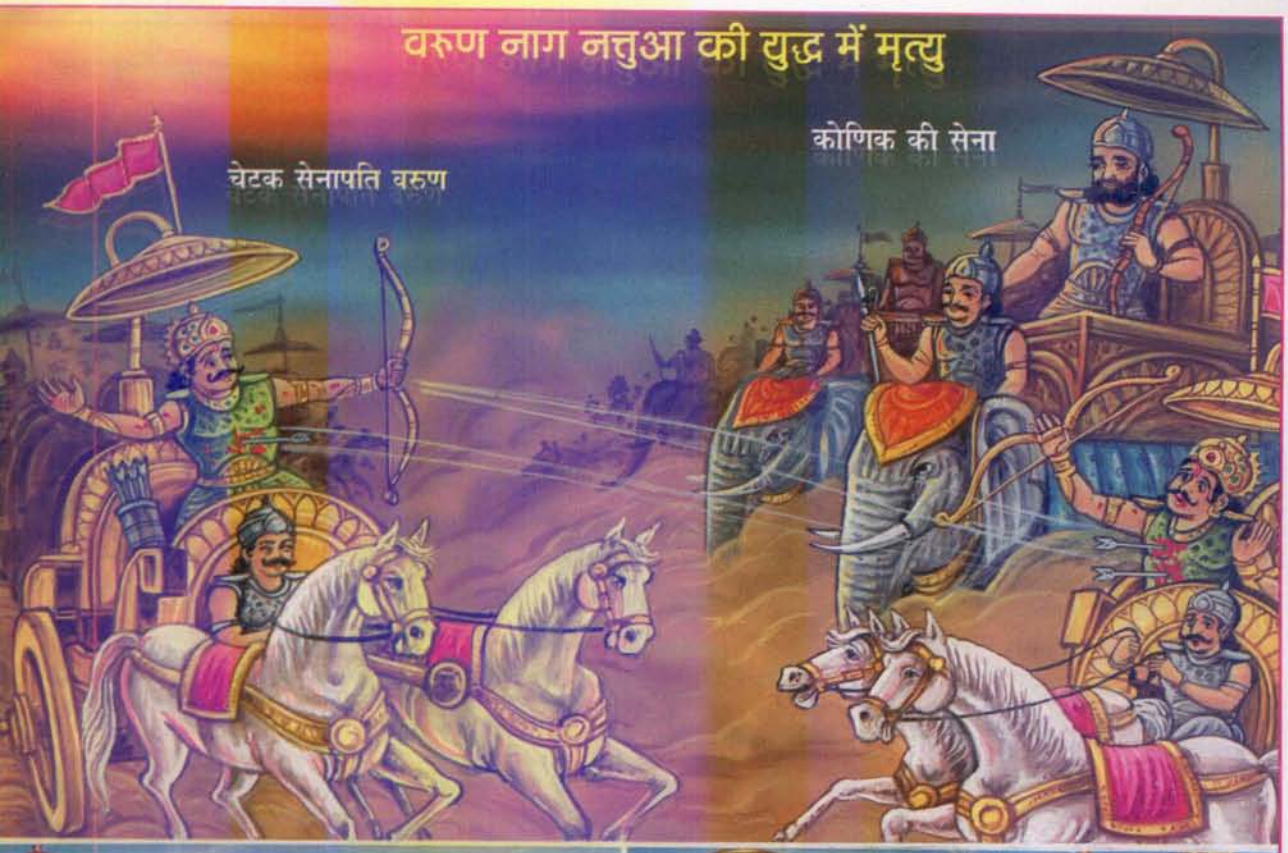

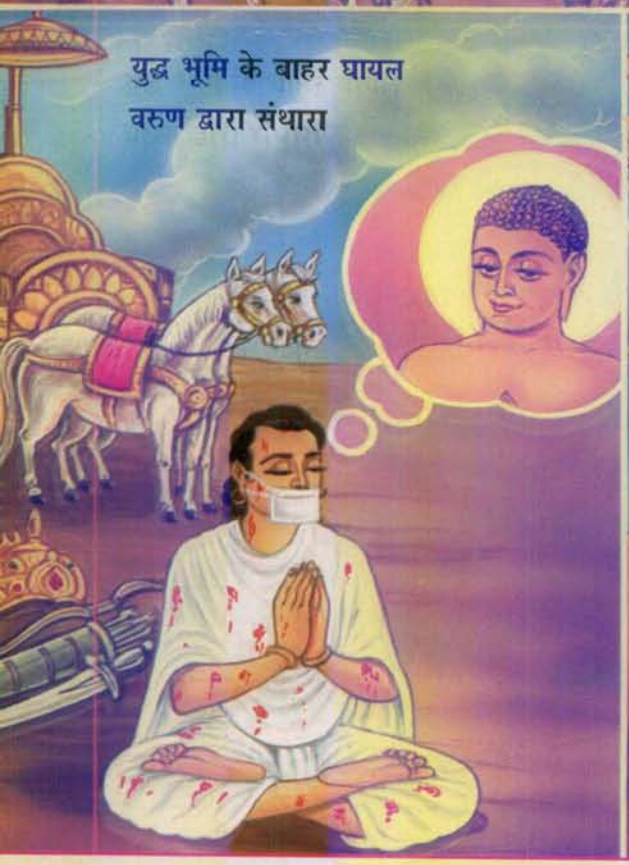

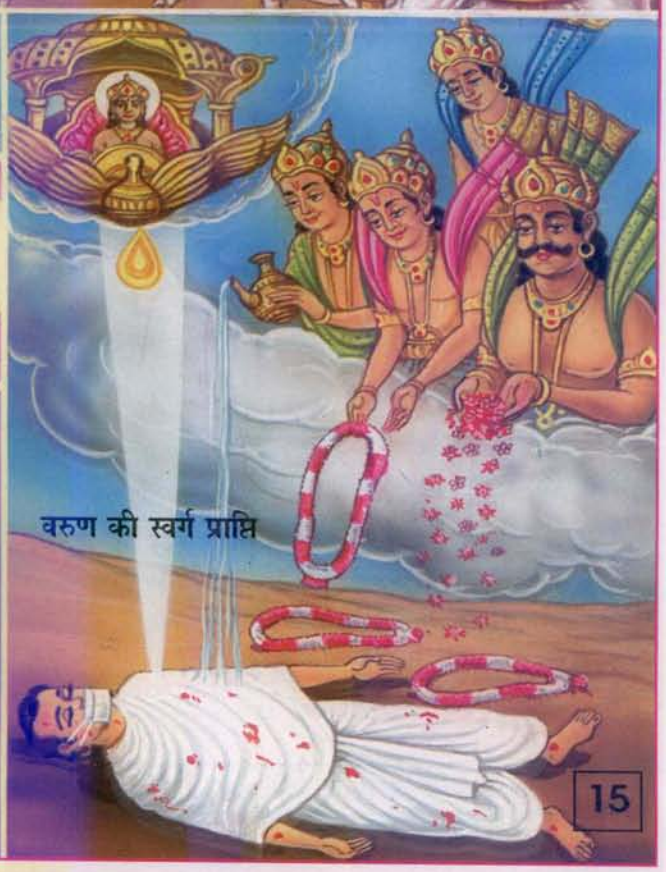

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चित्र परिचय-१५

Illustration No. 15

वरुण नागनत्तुआ की युद्ध में मृत्यु व स्वर्ग प्राप्ति

नाग नामक प्रसिद्ध गृहस्थ का नाती (पौत्र) वरुण नामक वीर योद्धा जिनधर्मानुयायी श्रमणोपासक था। वह महाराज चेटक का प्रधान सेनापति था। कूणिक के साथ जब रथ-मूसलसंग्राम होने लगा तो वरुण सेनापति सेना लेकर कूणिक की सेना के साथ घोर युद्ध करने लगा।

वरुण का नियम था-जो युद्ध में मुझ पर पहले प्रहार करेगा मैं केवल उसी पर प्रहार करूँगा। कूणिक सेना का एक सैनिक वरुण का हम शक्ल था। उसने आकर वरुण पर अचानक प्रहार किया। तीव्र प्रहार से वरुण की छाती में गहरा घाव लगा। उसने भी शत्रु सैनिक पर प्रहार कर मार डाला।

गहरे प्रहार से घायल वरुण जब युद्ध करने में असमर्थ हो गया तो रणभूमि से बाहर एकान्त स्थान में गया। रथ से नीचे उतरा, घोड़ों को छोड़ दिया। धनुष-कवच आदि शस्त्र सब एक ओर रखकर शरीर से बाण निकाला। एक स्वच्छ भूमि पर आसन बिछाया। पूर्व दिशा की तरफ मुख करके अपने धर्म गुरु श्रमण भगवान महावीर को नमस्कार किया और अपने व्रत, प्रत्याख्यान की आलोचना, प्रतिक्रमण करते हुए समाधि पूर्ण अवस्था में प्राण त्यागे।

निकटवर्ती वाणव्यन्तर देवों ने वरुण पर सुगन्धित जल-पुष्प आदि की वृष्टि की।

-शतक ७, उ. ९, सूत्र २०

DEATH OF VARUN NAAG NATTUA IN WAR

The valourous warrior Varun, the grandson of renowned citizen Naag, was a devout Jain. He was the commander-in-chief of king Chetak. When the Rath-musal war commenced, Commander Varun engaged Kunik in a fierce battle.

Varun had taken a vow that in a battle he would fight only with the individual who hit him first. A soldier from Kunik's army, who was Varun's look-alike, suddenly hit Varun and deeply wounded him on the chest. Varun retaliated and killed the attacker.

The fatal wound made it impossible for him to continue fighting and he retreated to a lonely place. He got down from the chariot and released the horses. He then put his bow and armour aside and removed the arrow from his body. Spreading a mattress on a clean spot, he sat down facing east. He paid homage to Shraman Bhagavan Mahavir and did critical review of his vows and other religious conduct. He then commenced meditation and died.

Interstitial gods in the vicinity showered perfumed water and flowers on Varun.

—Shatak-7, lesson-9, Sutra-26

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"I bow and convey my reverence to the worthy ones (*Arhantanam*), ... and so on up to... who have attained the state of ultimate perfection, known as *siddha gati*. I bow and pay homage to my religious teacher and preceptor Shraman Bhagavan Mahavir, the founder of religion... and so on up to... the aspirant of the state of ultimate perfection. From here I pay homage to *Bhagavan* seated there. May *Bhagavan* see me from there." Uttering these words he paid homage and obeisance. After that he uttered further—"Earlier, I had renounced, for life, any harming of beings... and so on up to... possessions in general (gross) before Shraman Bhagavan Mahavir. But now, I once again renounce, for life, any harming of beings (both gross and subtle) before Bhagavan Mahavir." This way, like Skandak (he renounced all the eighteen places of sin). Then uttering—"I dissociate myself from this body till my last breath," he removed his armour. Then he pulled out the arrow from his body. He finally performed critical review (*pratikraman*) and passed away after attaining the state of total tranquillity of mind.

[१२] तए णं तस्स वरुणस्स नागनत्तुयस्स एगे पियबालवयंसए रहमुसलमं संगामं संगामेमाणे एगेणं पुरिसेणं गाढप्पहारीकए समाणे अत्थामे अबले जाव अधारणिज्जमिति कट्टु वरुणं नागनत्तुयं रहमुसलातो संगामातो पडिनिक्खममाणं पासति, पासित्ता तुरए निगिण्हति, तुरए निगिण्हित्ता जहा वरुणे नागनत्तुए जाव तुरए विसज्जेति, विसज्जित्ता दब्भसंथारगं दुरुहति, दब्भसंथारंग दुरुहित्ता पुरत्थाभिमुहे जाव अंजलिं कट्टु एवं वयासी–जाइं णं भंते ! मम पियबालवयंसस्स वरुणस्स नागनत्तुयस्स सीलाइं वताइं गुणाइं वेरमणाइं पच्चक्खाणपोसहोववासाइं ताइं णं ममं पि भवंतु त्ति कट्टु सन्नाहपट्टं मुयइ, सन्नाहपट्टं मुइत्ता सल्लुद्धरणं करेति, सल्लुद्धरणं करेत्ता आणुपुव्वीए कालगते।

[१२] उस वरुण नागनत्तुआ का एक प्रिय बालमित्र भी रथमूसल संग्राम में युद्ध कर रहा था। वह भी एक पुरुष द्वारा प्रबल प्रहार करने से घायल हो गया। इससे अशक्त, अबल, यावत् पुरुषार्थ–पराक्रम से रहित बने हुए उसने सोचा–अब मेरा शरीर टिक नहीं सकेगा। जब उसने वरुण नागनत्तुआ को रथमूसलसंग्राम–स्थल से बाहर निकालते हुए देखा, तो वह भी अपने रथ को वापिस फिरा कर रथमूसलसंग्राम से बाहर निकला, घोड़ों को रोका और जहाँ वरुण नागनत्तुआ ने घोड़ों को रथ से खोलकर विसर्जित किया था, वहाँ उसने भी घोड़ों को विसर्जित कर दिया। फिर दर्भ के संस्तारक को बिछाकर उस पर बैठा। दर्भसंस्तारक पर बैठकर पूर्व दिशा की ओर मुख करके यावत् दोनों हाथ जोड़कर यों बोला–'भगवन् ! मेरे प्रिय बालमित्र वरुण नागनप्तृक के जो शीलव्रत, गुणव्रत, विरमणव्रत, प्रत्याख्यान और पौषधोपवास हैं, वे सब मेरे भी हों', इस प्रकार कहकर उसने कवच खोला। कवच खोलकर शरीर में लगे हुए बाण को बाहर निकाला। इस प्रकार करके वह भी क्रमशः समाधियुक्त होकर कालधर्म को प्राप्त हुआ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[12] A dear childhood friend of Varun Naag-naptrik was also fighting in the Rath-musal battle. He also got wounded by a strong strike from an adversary. He lost his strength, power, potency, will and valour. He too realized that he will not last long. When he saw Varun Naag-naptrik leaving the Rath-musal battle, he also turned the chariot and left the battle ground. He proceeded to the spot where Varun Naag-naptrik had released the horses and stopped his chariot and released the horses. Now he made a bed of hay and sat on it in *Paryank* posture facing east. Joining his palms he uttered—"*Bhante* ! Like my dear friend Varun Naag-naptrik, I too accept the same vows of conduct, ascetic-discipline, renunciation, critical review and fasting. He removed his armour and pulled out the arrow from his body... and so on up to... passed away after attaining the state of total tranquillity of mind.

[१३] तए णं तं वरुणं नागणत्तुयं कालगयं जाणित्ता अहासन्निहितेहिं वाणमंतरेहिं देवेहिं दिव्वे सुरभिगंधोदगवासे वुट्ठे, दसद्धवण्णे कुसुमे निवाडिए, दिव्वे य गीयगंधव्वनिनादे कते यावि होत्था।

[१४] "तए णं तस्स वरुणस्स नागनत्तुयस्स तं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभागं सुणित्ता य पासित्ता य बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेति—एवं खलु देवाणुप्पिया ! बहवे मणुस्सा जाव उववत्तारो भवंति।"

[१३] तदनन्तर उस वरुण नागनत्तुआ को कालधर्म प्राप्त हुआ जानकर निकटवर्ती वाणव्यन्तर देवों ने उस पर सुगन्धित जल की वृष्टि की, पाँच वर्ण के फूल बरसाए और दिव्य गीत एवं गन्धर्व-निनाद भी किया।

[१४] "तब से उस वरुण नागनत्तुआ की उस दिव्य देव ऋद्धि, दिव्य देव द्युति और दिव्य देव-प्रभाव को सुनकर और जानकर बहुत से लोग परस्पर इस प्रकार कहने लगे, यावत् प्ररूपणा करने लगे कि-'देवानुप्रियो ! जो संग्राम करते हुए बहुत से मनुष्य मरते हैं, यावत् वे देवलोकों में उत्पन्न होते हैं।"

[13] Knowing that Varun Naag-naptrik had breathed his last, *Vaanavyantar* gods residing nearby sprinkled perfumed water and five coloured flowers on him. They also sang divine songs and produced sound from divine musical instruments.

[14] Then having seen the divine opulence, radiance and influence of Varun Naag-naptrik, many people started saying... and so on up to... propagating that—"Beloved of gods ! Many people die fighting in some war... and so on up to... they are reborn as gods in any of the divine realms."

२१. [प्र.] वरुणे णं भंते ! नागनत्तुए कालमासे कालं किच्चा कहिं गये ? कहिं उववन्ने ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! सोहम्मे कप्पे अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववन्ने। तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता। तत्थ णं वरुणस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता।

२१. [प्र.] भगवन् ! वरुण नागनत्तुआ मृत्यु के समय में कालधर्म पाकर कहाँ गया, कहाँ उत्पन्न हुआ ?

[उ.] गौतम ! वह सौधर्मकल्प में अरुणाभ नामक विमान में देवरूप में उत्पन्न हुआ है। उस देवलोक में कतिपय देवों की चार पल्योपम की स्थिति (आयु) कही है। अतः वहाँ वरुण–देव की स्थिति भी चार पल्योपम की है।

21. [Q.] *Bhante* ! After leaving this body at the time of death where did Varun Naag-naptrik go. Where was he reborn ?

[Ans.] Gautam ! He has taken rebirth in Arunabh celestial vehicle in Saudharma Kalp. In that divine realm (*Kalp*) the life-span of some gods is said to be four *Palyopam*. Thus the life-span of Varun god is four *Palyopam*.

२२. [प्र.] से णं भंते ! वरुणे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठितिक्खएणं कहिं उववज्जिहिति?

[उ.] जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति।

२३. [प्र.] वरुणस्स णं भंते ! णागणत्तुयस्स पियबालवयंसए कालमासे कालं किच्चा कहिं गते ? कहिं उववन्ने ?

[उ.] गोयमा ! सुकुले पच्चायाते।

२२. [प्र.] भगवन् ! वह वरुण देव उस देवलोक से आयु–क्षय होने पर, भव–क्षय होने पर तथा स्थिति–क्षय होने पर कहाँ जायेगा, कहाँ उत्पन्न होगा ?

[उ.] गौतम ! वह महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध होगा, यावत् सभी दुःखों का अन्त करेगा।

२३. [प्र.] भगवन् ! वरुण नागनत्तुआ का प्रिय बालमित्र काल के अवसर पर कालधर्म पाकर कहाँ गया ? कहाँ उत्पन्न हुआ ?

[उ.] गौतम ! वह मनुष्यलोक में अच्छे कुल में उत्पन्न हुआ है।

22. [Q.] *Bhante* ! After concluding his life-span (*ayu-kshaya*), birth or the *karmas* causing specific birth (*bhava-kshaya*), and the realm-specific state (*sthiti-kshaya*), where will Varun god go descending from the realm of gods (*dev-lok*) ? Where will he reincarnate ?

[Ans.] Gautam ! He will reincarnate in Mahavideh area (a mythical area)... and so on up to... become perfect (*Siddha*)... and so on up to... and end all miseries.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

23. [Q.] *Bhante* ! After leaving this body at the time of death where did Varun Naag-naptrik's dear childhood friend go. Where was he reborn ?

[Ans.] He has taken rebirth in a noble family in the land of humans.

२४. [प्र.] से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उवट्टित्ता कहिं गच्छिहिति ? कहिं उववज्जिहिति ?

[उ.] गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ सत्तम सए : नवमो उद्देसो समत्तो ॥

२४. [प्र.] भगवन् ! वह (वरुण का बालमित्र) वहाँ से (आयु आदि का क्षय होने पर) काल करके कहाँ जायेगा ? कहाँ उत्पन्न होगा ?

[उ.] गौतम ! वह भी महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध होगा, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करेगा।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है', यों कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरने लगे।

24. [Q.] *Bhante* ! After concluding his life-span... and so on up to... where will he (Varun's friend) go ? Where will he reincarnate ?

[Ans.] Gautam ! He will also reincarnate in Mahavideh area... and so on up to... become perfect (*Siddha*)... and so on up to... and end all miseries.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : निष्कर्ष–रथमूसल संग्राम में ९६ लाख मनुष्य मारे गये। उनमें से एक वरुण नागनत्तुआ देवलोक में गया और उसका बालमित्र मनुष्यगति में गया, शेष सभी प्रायः नरक या तिर्यंचगति में उत्पन्न हुए।

॥ सप्तम शतक : नवम उद्देशक समाप्त ॥

Elaboration—In the Rath-musal battle 9.6 million people were killed. Of these only one (Varun) was reborn in divine realm, one (Varun's friend) in the land of humans and most of the remaining were reborn as infernal beings or animals.

● END OF THE NINTH LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सप्तम शतक : दशम उद्देशक
SEVENTH SHATAK (Chapter Seven) : TENTH LESSON

अन्ययूथिक ANYAYUTHIK (HERETICS)

कालोदायी की चर्चा और प्रव्रज्या **DISCUSSIONS AND INITIATION OF KALODAYI**

१. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे होत्था। वण्णओ। गुणसिलए चेइए। वण्णओ। जाव पुढविसिलापट्टए।

२. तस्स णं गुणसिलयस्स चेइयस्स अदूरसामंते बहवे अन्नउत्थिया परिवसंति; तं जहा—कालोदाई सेलोदाई सेवालोदाई उदए णामुदए नम्मुदए अन्नवालए सेलवालए संखवालए सुहत्थी गाहावई।

१. उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर था। उसका वर्णन करना चाहिए। वहाँ गुणशीलक नामक चैत्य था। यावत् (एक) पृथ्वीशिलापट्टक था।....।

२. उस गुणशीलक चैत्य के पास थोड़ी दूर पर बहुत से अन्यतीर्थी रहते थे। यथा—कालोदायी, शैलोदायी, शैवालोदायी, उदय, नामोदय, नर्मोदय, अन्यपालक, शैलपालक, शंखपालक और सुहस्ती गृहपति।

1. During that period of time there was a city called Rajagriha. Description (as before). There was a *Chaitya* called Gunasheelak... and so on up to... There was a slab of stone... .

2. A little distance away from that Gunasheelak Chaitya lived many heretics (*anyatirthi*)—Kalodayi, Shailodayi, Shaivalodayi, Udaya, Naamodaya, Narmodaya, Anyapaalak, Shail-paalak, Shankh-paalak, and Suhasti householder.

३. तए णं तेसिं अन्नउत्थियाणं अन्नया कयाई एगयओ सहियाणं समुवागयाणं सन्निविट्ठाणं सन्निसण्णाणं अयमेयारूवे मिहोकहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था—

"एवं खलु समणे णायपुत्ते पंच अत्थिकाए पण्णवेति, तं जहा—धम्मत्थिकायं जाव आगासत्थिकायं। तत्थ णं समणे णायपुत्ते चत्तारि अत्थिकाए अजीवकाए पण्णवेति, तं०—धम्मत्थिकायं अधम्मत्थिकायं आगासत्थिकायं पोग्गलत्थिकायं। एगं च समणे णायपुत्ते जीवत्थिकायं अरूविकायं जीवकायं पन्नवेति। तत्थ णं समणे णायपुत्ते चत्तारि अत्थिकाए अरूविकाए पन्नवेति, तं जहा—धम्मत्थिकायं अधम्मत्थिकायं आगासत्थिकायं जीवत्थिकायं। एगं च णं समणे णायपुत्ते पोग्गलत्थिकायं रूविकायं अजीवकायं पन्नवेति। से कहमेयं मन्ने एवं ?

३. तत्पश्चात् किसी समय वे सब अन्यतीर्थिक एक स्थान पर आये, एकत्रित हुए और सुखपूर्वक भलीभाँति बैठे। फिर उनमें परस्पर इस प्रकार का वार्तालाप प्रारम्भ हुआ—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'ऐसा (सुना) है कि श्रमण ज्ञातपुत्र पाँच अस्तिकायों का निरूपण करते हैं; यथा–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और जीवास्तिकाय। इनमें से चार अस्तिकायों को श्रमण ज्ञातपुत्र 'अजीव–काय' बताते हैं। जैसे कि–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय। एक जीवास्तिकाय को श्रमण ज्ञातपुत्र 'अरूपी' और जीवकाय बतलाते हैं। उन पाँच अस्तिकायों में से चार अस्तिकायों को श्रमण ज्ञातपुत्र अरूपीकाय बतलाते हैं। जैसे कि–धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और जीवास्तिकाय। केवल एक पुद्गलास्तिकाय को ही श्रमण ज्ञातपुत्र रूपीकाय और अजीवकाय कहते हैं। उनकी यह बात कैसे मानी जाये?

3. One day all these heretics came and sat comfortably together at one place. After that they deliberated among themselves—

"It is said that Shraman Jnataputra (Bhagavan Mahavir) describes five *Astikaaya* (existent conglamorative ontological categories or entities)—*Dharmastikaaya* (motion entity), *Adharmastikaaya* (rest entity), *Akashastikaaya* (space entity), *Pudgalastikaaya* (matter entity), and *Jivastikaaya* (life entity). Of these, Shraman Jnataputra classifies four *Astikaayas* as non-living entities (*ajiva kaaya*)—*Dharmastikaaya* (motion entity), *Adharmastikaaya* (rest entity), *Akashastikaaya* (space entity) and *Pudgalastikaaya* (matter entity). According to Shraman Jnataputra, *Jivastikaaya* (life entity) is the only living entity (*jiva kaaya*) and it is formless (*arupi*). Of these five *Astikaayas* four are formless according to Shraman Jnataputra—*Dharmastikaaya* (motion entity), *Adharmastikaaya* (rest entity), *Akashastikaaya* (space entity) and *Jivastikaaya* (life entity). Only *Pudgalastikaaya* (matter entity) is with form (*rupi*) and non-living entity (*ajiva kaaya*) according to Shraman Jnataputra. How to accept his proposition?

४. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव गुणसिलए समोसढे जाव परिसा पडिगया।

५. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूइ णामं अणगारे गोतमगोत्ते णं जहा बिइयसते नियंठुद्देसए (श० २, उ० ५, सू० २१–२३) जाव भिक्खायरियाए अडमाणे अहापज्जत्तं भत्त–पाणं पडिग्गाहित्ता रायगिहाओ जाव अतुरियमचवलमसंभंते जाव रियं सोहेमाणे सोहेमाणे तेसिं अन्नउत्थियाणं अदूरसामंतेणं वीइवयति।

४. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर गुणशीलक चैत्य में पधारे, वहाँ उनका समवसरण लगा। परिषद् (धर्मोपदेश सुनकर) वापस चली गई।

५. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी गौतमगोत्रीय इन्द्रभूति नामक अनगार, दूसरे शतक के निर्ग्रन्थ उद्देशक में कहे अनुसार भिक्षाचरी के लिए पर्यटन करते हुए यथापर्याप्त आहार–पानी ग्रहण करके राजगृह नगर से यावत् त्वरारहित, चपलतारहित, सम्भ्रान्ततारहित, यावत् ईर्यासमिति का शोधन करते–करते अन्यतीर्थिकों के पास से होकर निकले।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

4. During that period of time Bhagavan Mahavir arrived at Gunasheelak Chaitya and a congregation took place. People came out. *Bhagavan* gave his sermon. People dispersed.

5. During that period of time ascetic Indrabhuti Gautam, the senior disciple of Shraman Bhagavan Mahavir, moved about to seek alms and while returning after collecting available alms and moving without any haste, hurry and eagerness, following the code of care of movement (*irya samiti*), he passed the said heretics.

६. [१] तए णं ते अन्नउत्थिया भगवं गोयमं अदूरसामंतेणं वीइवयमाणं पासंति, पासेत्ता अन्नमन्नं सद्दावेंति, अन्नमन्नं सद्दावेत्ता एवं वयासी–"एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमा कहा अविप्पकडा, अयं च णं गोयमे अम्हं अदूरसामंतेणं वीतीवयति, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं गोयमं एयमट्ठं पुच्छित्तए" त्ति कट्टु अन्नमन्नस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता भगवं गोयमं एवं वयासी–

एवं खलु गोयमा ! तव धम्मायरिए धम्मोवदेसए समणे णायपुत्ते पंच अत्थिकाए पण्णवेति, तं जहा–धम्मत्थिकायं जाव आगासत्थिकायं, तं चेवे रूविकायं अजीवकायं पण्णवेति, से कहमेयं भंते ! गोयमा ! एवं ?

६. [१] तत्पश्चात् उन अन्यतीर्थिकों ने भगवान गौतम को थोड़ी दूर से जाते हुए देखा। देखकर उन्होंने एक-दूसरे को बुलाया। बुलाकर एक-दूसरे से इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रियो ! बात ऐसी है कि पंचास्तिकाय सम्बन्धी बात हमारे लिए अप्रकट-अज्ञात है। (सर्वथा नवीन है) यह (इन्द्रभूति) गौतम हमसे थोड़ी ही दूर पर जा रहे हैं। इसलिए हे देवानुप्रियो ! हमारे लिए गौतम से यह अर्थ पूछना श्रेयस्कर है; ऐसा विचार करके उन्होंने परस्पर (एक-दूसरे से) इस सम्बन्ध में परामर्श किया। परामर्श करके जहाँ भगवान गौतम थे, वहाँ उनके पास आये। पास आकर उन्होंने भगवान गौतम से इस प्रकार पूछा–

हे गौतम ! तुम्हारे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक श्रमण ज्ञातपुत्र पंच अस्तिकाय की प्ररूपणा करते हैं। जैसे कि–धर्मास्तिकाय यावत् आकाशास्तिकाय। यावत् 'एक पुद्गलास्तिकाय को ही श्रमण ज्ञातपुत्र रूपीकाय और अजीवकाय कहते हैं'; यहाँ तक (पहले की हुई) अपनी सारी चर्चा उन्होंने गौतम से कही। फिर पूछा–'हे भदन्त गौतम ! यह बात ऐसे कैसे है ?'

6. [1] When those heretics saw Bhagavan Gautam passing nearby they called each other and said—"Beloved of gods ! We are ignorant on the subject of *Astikaaya* and that (Indrabhuti) Gautam is passing nearby. Therefore, Beloved of gods ! It would be good for us to ask Gautam about this." They consulted among themselves about this idea and approached Gautam. Coming near him they asked—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"O Gautam ! Your religious teacher and preceptor Shraman Jnataputra describes five *Astikaaya* (existent conglamorative ontological categories or entities)—*Dharmastikaaya* (motion entity)... and so on up to... *Akashastikaaya* (space entity)... and so on up to... Only *Pudgalastikaaya* (matter entity) is with form (*rupi*) and non-living entity (*ajiva kaaya*) according to Shraman Jnataputra." They told all about their aforesaid discussions up to this point and then asked—"O *Bhadant* Gautam ! How is it so ?"

[२] तए णं से भगवं गोयमे ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–"नो खलु वयं देवाणुप्पिया ! अत्थिभावं 'नत्थि' त्ति वयामो, नत्थिभावं 'अत्थि' त्ति वयामो। अम्हे णं देवाणुप्पिया ! सव्वं अत्थिभावं 'अत्थी' ति वयामो, सव्वं नत्थिभावं 'नत्थी' ति वयामो। तं चेयसा खलु तुब्भे देवाणुप्पिया ! एयमट्ठं सयमेव पच्चुविक्खह" त्ति कट्टु ते अन्नउत्थिए एवं वयति। एवं वइत्ता जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे एवं जहा नियंठुद्देसए (श० २, उ० ५, सू० २५ [१]) जाव भत्त–पाणं पडिदंसेति, भत्त–पाणं पडिदंसेत्ता समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता नच्चासन्ने जाव पज्जुवासति।

[२] तब भगवान गौतम ने उन अन्यतीर्थिकों से इस प्रकार कहा–'हे देवानुप्रियो ! हम 'अस्तिभाव' (विद्यमान) को 'नास्ति' (नहीं) नहीं कहते, इसी प्रकार 'नास्तिभाव' (अविद्यमान) को 'अस्ति' (है) नहीं कहते। हे देवानुप्रियो ! हम सभी अस्तिभावों को अस्ति (है), और समस्त नास्तिभावों को नास्ति (नहीं है), कहते हैं। अतः हे देवानुप्रियो ! आप स्वयं अपने ज्ञान (अथवा मन) से इस बात पर अनुप्रेक्षण (चिन्तन) करिये।' इस प्रकार कहकर श्री गौतम स्वामी गुणशीलक चैत्य में श्रमण भगवान महावीर के पास आये। और द्वितीय शतक के निर्ग्रन्थ उद्देशक (सू० २५–१) में बताये अनुसार आहार–पानी भगवान को दिखलाया दिखलाकर श्रमण भगवान को वन्दन–नमस्कार किया। वन्दन–नमस्कार करके यथावत् उपासना करने लगे।

[2] Then Bhagavan Gautam replied to those heretics—"Beloved of gods ! We do not call existent state (*astibhaava*) as nonexistent (*naasti*). In the same way we do not call nonexistent state (*naastibhaava*) as existent (*asti*). We call all existent states as existent and all nonexistent states as nonexistent. Therefore O Beloved of gods ! You should apply your own wisdom and ponder over this on your own." Saying thus Gautam Swami returned to Shraman Bhagavan Mahavir in Gunasheelak Chaitya. There (as mentioned in Aphorism 25/1 of Nirgranth lesson of Chapter 2) he showed the collected alms to *Bhagavan* and commenced his worship after due homage and obeisance.

७. तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे महाकहापडिवन्ने यावि होत्था, कालोदाई य तं देसं हव्वमागए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. 'कालोदाई' ति समणे भगवं महावीरे कालोदाइं एवं वयासी–"से नूणं ते कालोदाई ! अन्नया कयाई एगयओ सहियाणं समुवागयाणं सन्निविट्ठाणं तहेव (सू० ३) जाव से कहमेयं मन्ने एवं ? से नूणं कालोदाई ! अत्थे समट्ठे ? हंता, अत्थि।

तं सच्चे णं एसमट्ठे कालोदाई ! अहं पंच अत्थिकाए पण्णवेमि, तं जहा–धम्मत्थिकायं जाव पोग्गलत्थिकायं। तत्थ णं अहं चत्तारि अत्थिकाए अजीवकाए पण्णवेमि तहेव जाव एगं च णं अहं पोग्गलत्थिकायं रूविकायं पण्णवेमि।"

७. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान महावीर महाकथा–प्रतिपन्न (विशाल जन–समूह को धर्मोपदेश देने में प्रवृत्त) थे। उसी समय कालोदायी उस स्थल में आ पहुँचा।

८. 'हे कालोदायी !' इस प्रकार सम्बोधन करके श्रमण भगवान महावीर ने कालोदायी से इस प्रकार पूछा–'हे कालोदायी ! क्या वास्तव में, किसी समय एक जगह सभी साथ आये हुए और एकत्र सुखपूर्वक बैठे हुए तुम सबमें पंचास्तिकाय के सम्बन्ध में इस प्रकार विचार हुआ था कि यावत् 'यह बात कैसे मानी जाये ?' हे कालोदायिन् ! क्या यह बात यथार्थ है ?' (कालोदायी–) 'हाँ, यथार्थ है।'

(भगवन्–) 'हे कालोदायी ! पंचास्तिकाय सम्बन्धी यह बात सत्य है। मैं धर्मास्तिकाय यावत् पुद्गलास्तिकाय–पर्यन्त पंच अस्तिकाय की प्ररूपणा करता हूँ। उनमें से चार अस्तिकायों को मैं अजीवकाय बतलाता हूँ। यावत् पूर्व कथितानुसार एक पुद्गलास्तिकाय को मैं रूपीकाय (अजीवकाय) बतलाता हूँ।'

7. During that period of time Shraman Bhagavan Mahavir was busy giving discourse in a large congregation. At that time Kalodayi arrived there.

8. 'O Kalodayi !' Addressing thus Shraman Bhagavan Mahavir asked Kalodayi—"O Kalodayi ! One day you all came and sat comfortably together at one place and deliberated about five *Astikaayas*... and so on up to... How to accept this proposition ?' Kalodayi ! Is that true ?" (Kalodayi—) 'Yes it is true.'

(*Bhagavan*—) O Kalodayi ! This statement about five *Astikaayas* is true. I propagate five *Astikaayas* including *Dharmastikaaya* (motion entity)... and so on up to... *Pudgalastikaaya* (matter entity). Of these four are non-living... and so on up to... (as aforesaid) Only *Pudgalastikaaya* (matter entity) is with form (*rupi*) and non-living entity (*ajiva kaaya*)."

९. [प्र.] तए णं से कालोदाई समणं भगवं महावीरं एवं वयासी–एयंसि णं भंते ! धम्मत्थिकायंसि अधम्मत्थिकायंसि आगासत्थिकायंसि अरूविकायंसि अजीवकायंसि चक्किया केइ आसइत्तए वा सइत्तए वा चिट्ठित्तए वा निसीदित्तए वा तुयट्टित्तए वा ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे कालोदाई ! एगंसि णं पोग्गलत्थिकायंसि रूविकायंसि अजीवकायंसि चक्किया केइ आसइत्तए वा सइत्तए वा जाव तुयट्टित्तए वा।

९. [प्र.] तब कालोदायी ने श्रमण भगवान महावीर से इस प्रकार पूछा-'भगवन् ! क्या धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय, इन अरूपी अजीवकायों पर कोई बैठने, सोने, खड़े रहने, नीचे बैठने यावत् करवट बदलने आदि क्रियाएँ करने में समर्थ है ?'

[उ.] हे कालोदायिन् ! यह अर्थ (बात) समर्थ नहीं है। एक पुद्गलास्तिकाय ही रूपी अजीवकाय है, जिस पर कोई भी बैठने, सोने या यावत् करवट बदलने आदि क्रियाएँ करने में समर्थ है।

9. [Q.] Then Kalodayi asked Shraman Bhagavan Mahavir—"*Bhante* ! When that is so, then is it possible for someone to perform activities like sitting, sleeping, standing, sitting underneath and rolling on one's sides on the formless non-living entities including *Dharmastikaaya*, *Adharmastikaaya* and *Akashastikaaya* ?

[Ans.] Kalodayi ! That is not correct. Only *Pudgalastikaaya* (matter entity) is that non-living entity with form on which someone is able to perform activities like sitting... and so on up to... rolling on one's sides.

१०. [प्र.] एयंसि णं भंते ! पोग्गलत्थिकायंसि रूविकायंसि अजीवकायंसि जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?

[उ.] णो इणट्ठे समट्ठे कालोदाई !

१०. [प्र.] भगवन् ! जीवों को पापफलविपाक से संयुक्त करने वाले (अशुभफलदायक) पापकर्म, क्या इस रूपीकाय और अजीवकाय को लगते हैं? क्या इस रूपीकाय और अजीवकायरूप पुद्गलास्तिकाय में पापकर्म लगते हैं ?

[उ.] कालोदायिन् ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

10. [Q.] *Bhante* ! Does this *Pudgalastikaaya*, the non-living entity with form, acquire the demeritorious *karmas*, which on fruition associate beings with grave consequences ?

[Ans.] Kalodayi ! That is not correct.

११. [प्र.] एयंसि णं जीवत्थिकायंसि अरूविकायंसि जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?

[उ.] हंता, कज्जंति।

११. [प्र.] (भगवन् !) क्या इस अरूपी (काय) जीवास्तिकाय में जीवों को पापफलविपाक से युक्त पापकर्म लगते हैं ?

[उ.] हाँ (कालोदायिन् !) लगते हैं। (अर्थात्-अरूपी जीवास्तिकाय में ही जीव पापफलकर्म से संयुक्त होते हैं।)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. [Q.] *Bhante* ! Does this *Jivastikaaya*, the living entity without form, acquire the demeritorious *karmas* that on fruition associate beings with grave consequences ?

[Ans.] Yes, it does. (In other words—only this formless *Jivastikaaya* gets associated with the demeritorious *karmas*.)

१२. एत्थ णं से कालोदाई संबुद्धे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए धम्मं निसामित्तए एवं जहा खंदए (श० २, उ० १, सू० ३२–४५) तहेव पव्वइए, तहेव एक्कारस अंगाइं जाव विहरति।

१२. (भगवान द्वारा समाधान पाकर) कालोदायी बोधि को प्राप्त हुआ। फिर उसने श्रमण भगवान महावीर को वन्दन–नमस्कार किया। वन्दन–नमस्कार करके उसने इस प्रकार कहा–'भगवन् ! मैं आपसे धर्म–श्रवण करना चाहता हूँ।' भगवान ने उसे धर्म–श्रवण कराया। फिर जैसे स्कन्दक ने भगवान से प्रव्रज्या अंगीकार की थी (श. २, उ. १, सू. ३२–४५) वैसे ही कालोदायी भगवान के पास प्रव्रजित हुआ। उसी प्रकार उसने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया; ..... यावत् कालोदायी अनगार विचरण करने लगे।

12. (On getting this answer from *Bhagavan*) Kalodayi got enlightened. He then paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir and said—"*Bhante* ! I want to listen to your sermon." *Bhagavan* gave his sermon. After that Kalodayi got initiated by *Bhagavan* as Skandak had got (Chapter 2, Lesson 1, Aphorisms 32-45). Likewise he studied the eleven *Angas*... and so on up to... ascetic Kalodayi continued his itinerant way.

पापकर्म और पुण्य कर्म DEMERITORIOUS KARMAS AND MERITORIOUS KARMAS

१३. तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइं रायगिहाओ णगराओ गुणसिलओ चेइयाओ पडिनिक्खमति, पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

१४. तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नामं नगरे, गुणसिलए चेइए। तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ जाव समोसढे, परिसा जाव पडिगया।

१३. किसी समय श्रमण भगवान महावीर राजगृह नगर के गुणशीलक चैत्य से निकलकर बाहर जनपदों में विहार करते हुए विचरण करने लगे।

१४. उस काल और उस समय में राजगृह नामक नगर था। (नगर के बाहर) गुणशीलक नामक चैत्य था। किसी समय श्रमण भगवान महावीर स्वामी पुनः वहाँ पधारे यावत् उनका समवसरण लगा। यावत् परिषद् धर्मोपदेश सुनकर लौट गई।

13. Once Shraman Bhagavan Mahavir moved out from Gunasheela Chaitya and commenced his wanderings in inhabited areas away from Rajagriha.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

14. During that period of time there was a city called Rajagriha. There was a Chaitya called Gunasheelak. Later once again Bhagavan Mahavir arrived there... and so on up to... a congregation took place... and so on up to... After his sermon people dispersed.

१५. [प्र.] तए णं से कालोदाई अणगारे अन्नया कयाई जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–अत्थि णं भंते ! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

१५. [प्र.] तदनन्तर अन्य किसी समय कालोदायी अनगार, श्रमण भगवान महावीर के पास आये और श्रमण भगवान को वन्दना–नमस्कार करके इस प्रकार पूछा–भगवान ! क्या जीवों को पापफलविपाकसंयुक्त पापकर्म लगते हैं ?

[उ.] हाँ, (कालोदायिन् !) ऐसा ही है।

15. [Q.] Later at some point of time ascetic Kalodayi came to Shraman Bhagavan Mahavir, paid homage and obeisance and asked—*Bhante* ! Do *jivas* (souls) acquire demeritorious *karmas* entailing grave consequences on fruition ?

[Ans.] Yes, Kalodayi ! It is so.

१६. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?

[उ.] कालोदाई ! से जहानामए केइ पुरिसे मणुण्णं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाकुलं विससंमिस्सं भोयणं भुंजेज्जा, तस्स णं भोयणस्स आवाए भद्दए भवति, तओ पच्छा परिणममाणे परिणममाणे दुरूवत्ताए दुग्गंधत्ताए जहा महस्सवए (स० ६, उ० ३, सु० २ [१] जाव भुज्जो भुज्जो परिणमति, एवामेव कालोदाई ! जीवाणं पाणातिवाए जाव मिच्छादंसणसल्ले, तस्स णं आवाए भद्दए भवइ, तओ पच्छा परिणममाणे परिणममाणे दुरूवत्ताए जाव भुज्जो भुज्जो परिणमति, एवं खलु कालोदाई ! जीवाणं पावा कम्मा पावफलविवागसंजुत्ता जाव कज्जंति।

१६. [प्र.] भगवन् ! जीवों को पापफलविपाकसंयुक्त पापकर्म कैसे लगते हैं ?

[उ.] कालोदायिन् ! जैसे कोई पुरुष सुन्दर स्थाली (हांडी) में पकाने से शुद्ध पका हुआ, अठारह प्रकार के दाल, शाक आदि व्यंजनों से युक्त विषमिश्रित भोजन का सेवन करता है। वह भोजन उसे आपात (प्रारम्भ) में अच्छा लगता है, किन्तु उसके पश्चात् वह भोजन परिणमन होता–होता खराब रूप में, दुर्गन्धरूप में यावत् छठे शतक के महास्रव नामक तृतीय उद्देशक (सू. २–१) में कहे अनुसार बार–बार अशुभ परिणाम प्राप्त करता है। हे कालोदायिन् ! इसी प्रकार जीवों को प्राणातिपात से लेकर यावत् मिथ्यादर्शनशल्य तक अठारह पापस्थान का सेवन प्रारम्भ में तो अच्छा लगता है, किन्तु बाद में जब उनके द्वारा बाँधे हुए पापकर्म उदय में आते हैं, तब वे अशुभरूप में परिणत होते–होते, दुरूपपने में,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुर्गन्धरूप में यावत् बार-बार अशुभ परिणाम पाते हैं। हे कालोदायिन् ! इस प्रकार से जीवों के पापकर्म अशुभफलविपाक से युक्त होते हैं।

16. [Q.] *Bhante* ! How do *jivas* (souls) acquire demeritorious *karmas* entailing grave consequences on fruition ?

[Ans.] Kalodayi ! Take for example a person who takes meals including eighteen varieties of dishes of curries, vegetables and other preparations properly cooked in good utensils but adulterated with toxic things. To begin with he finds it good and tasty but with passage of time it transforms and turns into bad, stinking... and so on up to... increasingly harmful; as mentioned in the third lesson (aphorism 2/1), titled Mahasrava, of the sixth chapter. Kalodayi ! In the same way living beings find indulgence in eighteen sources of sin (*paap sthaan*) from killing of beings (*pranatipat*)... and so on up to... *mithyadarshan shalya* (the thorn of wrong belief or unrighteousness) to be pleasant to begin with, but later, when the acquired demeritorious *karmas* come to fruition, that pleasure transforms and turns into bad, stinking... and so on up to... increasingly harmful experience. Kalodayi ! This way *jivas* (souls) acquire demeritorious *karmas* entailing grave consequences on fruition.

१७. [प्र.] अत्थि णं भंते ! जीवाणं कल्लाणा कम्मा कल्लाणफलविवागसंजुत्ता कज्जंति ?

[उ.] हंता, कज्जंति।

१७. [प्र.] भगवन् ! क्या जीवों के कल्याण (शुभ) कर्म कल्याणफलविपाक सहित होते हैं ?

[उ.] हाँ, कालोदायिन् ! होते हैं।

17. [Q.] *Bhante* ! Do jivas (souls) acquire beatific or meritorious *karmas* entailing beatific consequences on fruition ?

[Ans.] Yes, Kalodayi ! It is so.

१८. [प्र.] कहं णं भंते ! जीवाणं कल्लाणा कम्मा जाव कज्जंति ?

[उ.] कालोदाई ! से जहानामए केइ पुरिसे मणुण्णं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाकुलं ओसहसम्मिस्सं भोयणं भुंजेज्जा, तस्स णं भोयणस्स आवाए णो भद्दए भवति, तओ पच्छा परिणममाणे परिणममाणे सुरूवत्ताए सुवण्णत्ताए जाव सुहत्ताए, नो दुक्खत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमति। एवामेव कालोदाई ! जीवाणं पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे कोहविवेगे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे तस्स णं आवाए नो भद्दए भवइ, तओ पच्छा परिणममाणे परिणममाणे सुरूवत्ताए जाव सुहत्ताए, नो दुक्खत्ताए भुज्जो भुज्जो परिणमइ; एवं खलु कालोदाई ! जीवाणं कल्लाणा कम्मा जाव कज्जंति।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१८. [प्र.] भगवन् ! जीवों के कल्याणकर्म, कल्याणफलविपाक से संयुक्त कैसे होते हैं ?

[उ.] कालोदायिन् ! जैसे कोई पुरुष मनोज्ञ (सुन्दर) स्थाली में पकाने से शुद्ध पका हुआ और अठारह प्रकार के दाल, शाक आदि व्यंजनों से युक्त औषधमिश्रित भोजन करता है, तो वह भोजन प्रारम्भ में अच्छा न लगे, परन्तु बाद में परिणत होता-होता जब वह सुरूपत्व रूप में, सुवर्णरूप में यावत् सुख (या शुभ) रूप में बार-बार परिणत होता है, तब वह दुःखरूप में परिणत नहीं होता; इसी प्रकार हे कालोदायिन् ! जीवों के लिए प्राणातिपातविरमण यावत् परिग्रह-विरमण, क्रोधविवेक (क्रोधत्याग) यावत् मिथ्यादर्शनशल्य-विवेक प्रारम्भ में अच्छा नहीं लगता, किन्तु उसके पश्चात् उसका परिणमन होते-होते सुरूपत्व रूप में, सुवर्णरूप में उसका परिणाम यावत् सुखरूप होता है, दुःखरूप नहीं होता। इसी प्रकार हे कालोदायिन् ! जीवों के कल्याण (पुण्य) कर्म कल्याणफलविपाक-संयुक्त होते हैं।

18. [Q.] *Bhante* ! How do *jivas* (souls) acquire beatific or meritorious *karmas* entailing beatific consequences on fruition ?

[Ans.] Kalodayi ! Take for example a person who takes meals including eighteen varieties of dishes of curries, vegetables and other preparations properly cooked in good utensils and mixed with nutrient things (like herbs). To begin with he may not find it good and tasty but with passage of time it transforms and turns into good, gold-like (pure)... and so on up to... increasingly pleasant; it never becomes harmful. Kalodayi ! In the same way living beings find abstaining from indulging in killing of beings (*pranatipat*)... and so on up to... fondness for possessions and having prudence against anger... and so on up to... *mithyadarshan shalya* (the thorn of wrong belief or unrighteousness) to be unpleasant to begin with, but later, that unpleasantness transforms into good, gold-like (pure)... and so on up to... increasingly pleasant experience; it never becomes harmful. Kalodayi ! This way jivas (*souls*) acquire beatific or meritorious *karmas* entailing beatific consequences on fruition.

विवेचन : निष्कर्ष-जिस प्रकार सर्वथा सुसंस्कृत एवं शुद्ध रीति से पकाया हुआ स्वादिष्ट विषमिश्रित भोजन खाते समय बड़ा रुचिकर लगता है, किन्तु जब उसका परिणमन होता है, तब वह अत्यन्त दुःखद और प्राणविनाशकारक होता है। इसी प्रकार प्राणातिपात आदि पापकर्म करते समय जीव को अच्छे लगते हैं, किन्तु उनका फल भोगते समय वे बड़े दुःखदायी होते हैं। जिस प्रकार औषधयुक्त भोजन करना प्रारम्भ में कष्टकर लगता है, किन्तु उसका परिणाम सुखकर और आरोग्यकर होता है। इसी प्रकार प्राणातिपातादि से विरति कष्टकर एवं अरुचिकर लगती है, किन्तु उसका परिणाम अतीव हितकर और सुखकर होता है। *(वृत्ति, पत्रांक ३२६)*

Elaboration—Conclusion—Properly and hygienically cooked tasty but toxic food is enjoyable when eaten but on digestion when it takes its

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

effect, it becomes painful and fatal. In the same way indulgence in killing of beings and other sinful activity appears to be exciting but later, when their consequences are experienced they are grave and painful. Nutrient and herb mixed food is not tasty or enjoyable when eaten but when it takes its effect after digestion it becomes pleasant and healthy. In the same way abstainment from indulgence in killing of beings and other sinful activities appears to be uncomfortable and uninteresting but later, when consequences are experienced they are pleasant and beatific. *(Vritti, leaf 326)*

अग्नि को जलाने और बुझाने की क्रिया **LIGHTING AND EXTINGUISHING FIRE**

१९. [प्र. १] दो भंते ! पुरिसा सरिसया जाव सरिसभंडमत्तोवगरणा अन्नमन्नेणं सद्धिं अगणिकायं समारभंति, तत्थ णं एगे पुरिसे अगणिकायं उज्जालेति, एगे पुरिसे अगणिकायं निव्वावेति। एतेसि णं भंते ! दोण्हं पुरिसाणं कतरे पुरिसे महाकम्मतराए चेव, महाकिरियतराए चेव, महासवतराए चेव, महावेदणतराए चेव ? कतरे वा पुरिसे अप्पकम्मतराए चेव जाव अप्पवेदणतराए चेव ? जे वा से पुरिसे अगिणकायं उज्जालेति, जे वा से पुरिसे अगणिकायं निव्वावेति ?

[उ.] कालोदाई ! तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं उज्जालेति से णं पुरिसे महाकम्मतराए चेव जाव महावेदणतराए चेव। तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं निव्वावेति से णं पुरिसे अप्पकम्मतराए चेव जाव अप्पवेयणतराए चेव।

१९. [प्र. १] भगवन् ! (मान लीजिए) समान उम्र के यावत् समान ही भाण्ड, पात्र और उपकरण वाले दो पुरुष, एक-दूसरे के साथ अग्निकाय का समारम्भ करें; (अर्थात्-) उनमें से एक पुरुष अग्निकाय को जलाये और एक पुरुष अग्निकाय को बुझाए; तो हे भगवन् ! उन दोनों पुरुषों में से कौन-सा पुरुष महाकर्म वाला, महाक्रिया वाला, महाआस्रव वाला और महावेदना (जीवों को महावेदना उत्पन्न करने) वाला है और कौन-सा पुरुष अल्पकर्म वाला, अल्पक्रिया वाला, अल्पआस्रव वाला और अल्पवेदना वाला होता है ?

[उ.] हे कालोदायिन् ! उन दोनों पुरुषों में से जो पुरुष अग्निकाय को जलाता है, वह पुरुष महाकर्म वाला यावत् महावेदना वाला होता है; और जो पुरुष अग्निकाय को बुझाता है, वह अल्पकर्म वाला यावत् अल्पवेदना वाला होता है।

19. [Q. 1] *Bhante* ! (Suppose) two persons of the same age... and so on up to... with same bowls and equipment indulge in sinful acts against fire-bodied beings; (in other words) one of them lights fire and the other extinguishes it; then, *Bhante* ! Of these two which one is with extensive *karma*, extreme activity (sinful), extensive influx of *karmas*, and extreme pain (or causes extreme pain to beings) and which one is with little *karma*, little activity (sinful), little influx of *karmas*, and little pain ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Kalodayi ! Of the aforesaid two persons one who lights fire is with extensive *karma*... and so on up to... extreme pain. And the other who extinguishes fire is with little *karma*... and so on up to... little pain.

[प्र. २] से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ– 'तत्थ णं जे से पुरिसे जाव अप्पवेयणतराए चेव' ?

[उ.] कालोदाई ! तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं उज्जालेति से णं पुरिसे बहुतरागं पुढविकायं समारभति, बहुतरागं आउक्कायं समारभति, अप्पतरागं तेउकायं समारभति, बहुतरागं वाउकायं समारभति, बहुतरागं वणस्सतिकायं समारभति, बहुतरागं तसकायं समारभति।

तत्थ णं जे से पुरिसे अगणिकायं निव्वावेति से णं पुरिसे अप्पतरागं पुढविक्कायं समारभति, अप्प० आउ०, बहुतरागं तेउक्कायं समारभति, अप्पतरागं वाउकायं समारभइ, अप्पतरागं वणस्सतिकायं समारभइ, अप्पतरागं तसकायं समारभइ। से तेणट्ठेणं कालोदाई ! जाव अप्पवेदणतराए चेव।

[प्र. २] भगवन् ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि उन दोनों पुरुषों में से जो पुरुष अग्निकाय को जलाता है, वह महाकर्म वाला और जो अग्निकाय को बुझाता है, वह अल्पकर्म वाला होता है ?

[उ.] कालोदायिन् ! उन दोनों पुरुषों में से जो पुरुष अग्निकाय को जलाता है, वह पृथ्वीकाय का बहुत समारम्भ करता है, अप्काय का बहुत समारम्भ करता है, तेजस्काय का अल्प संमारंभ करता है, वायुकाय का बहुत समारंभ करता है; वनस्पतिकाय का बहुत समारम्भ करता है और त्रसकाय का बहुत समारम्भ करता है।

जो पुरुष अग्निकाय को बुझाता है, वह पृथ्वीकाय का अल्प समारम्भ करता है, अप्काय का अल्प समारम्भ करता है, वायुकाय का अल्प समारम्भ करता है, वनस्पतिकाय का अल्प समारम्भ करता है एवं त्रसकाय का भी अल्प समारम्भ करता है; किन्तु अग्निकाय का बहुत समारम्भ करता है। इसलिए हे कालोदायिन् ! जो पुरुष अग्निकाय को जलाता है, वह पुरुष महाकर्म वाला आदि है और जो पुरुष अग्निकाय को बुझाता है, वह अल्पकर्म वाला आदि है।

19. [Q. 2] *Bhante* ! Why do you say that of the aforesaid two persons one who lights fire is with extensive *karma* and the other who extinguishes fire is with little *karma* ?

[Ans.] Of the aforesaid two persons one who lights fire causes extensive harm to earth-bodied beings (*prithvi-kaaya*), causes extensive harm to water-bodied beings (*ap-kaaya*), causes little harm to fire-bodied beings (*tejas-kaaya*), causes extensive harm to plant-bodied beings (*vanaspati-kaaya*), causes extensive harm to mobile-bodied beings (*tras-kaaya*).

One who extinguishes fire causes little harm to earth-bodied beings, causes little harm to water-bodied beings, causes little harm to plant-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

bodied beings, causes little harm to mobile-bodied beings but causes extensive harm to fire-bodied beings. Therefore, Kalodayi ! One who lights fire is with extensive *karma* (etc.) and the other who extinguishes fire is with little *karma* (etc.) ?

अचित्त पुद्गलों का प्रकाश LIGHT FROM INANIMATE MATTER

२०. [प्र.] अत्थि णं भंते ! अचित्ता वि पोग्गला ओभासेंति उज्जोवेंति तवेंति पभासेंति ?

[उ.] हंता, अत्थि।

२०. [प्र.] भगवन् ! क्या अचित्त पुद्गल भी अवभासित (प्रकाशयुक्त) होते हैं, वे वस्तुओं को उद्योतित करते हैं, ताप करते हैं (या स्वयं तपते) हैं और प्रकाश करते हैं ?

[उ.] हाँ, कालोदायिन् ! अचित्त पुद्गल भी यावत् प्रकाश करते हैं।

20. [Q.] *Bhante* ! Does inanimate matter also glow (have light), make things glow, produce heat or get hot and emit light ?

[Ans.] Yes, Kalodayi ! Inanimate matter also glows... and so on up to... emit light.

२१. [प्र.] कतरे णं भंते ! ते अचित्ता पोग्गला ओभासंति जाव पभासंति ?

[उ.] **कालोदाई ! कुद्धस्स अणगारस्स तेयलेस्सा निसट्ठा समाणी दूरं गंता दूरं निपतति, देसं गंता देसं निपतति, जहिं जहिं च णं सा निपतति तहिं तहिं च णं ते अचित्ता वि पोग्गला ओभासेंति जाव पभासेंति। एते णं कालोदायी ! ते अचित्ता वि पोग्गला ओभासेंति जाव पभासेंति।**

२१. [प्र.] भगवन् ! अचित्त होते हुए भी कौन-से पुद्गल अवभासित होते यावत् प्रकाश करते हैं ?

[उ.] कालोदायिन् ! क्रुद्ध (कुपित) अनगार की निकली हुई तेजोलेश्या दूर जाकर गिरती है, जाने योग्य देश (स्थान) में जाकर उस देश में गिरती है। जहाँ वह गिरती है, वहाँ अचित्त पुद्गल भी अवभासित करते हैं यावत् प्रकाश करते हैं।

21. [Q.] *Bhante* ! Although inanimate, which matter glows... and so on up to... emit light ?

[Ans.] Kalodayi ! The fire-power (*tejoleshya*) emitted by an angry ascetic falls at a distance and it goes to the destined place and falls there. Where it falls inanimate matter also shines there... and so on up to... emits light.

विवेचन : सचित्तवत् अचित्त तेजस्काय के पुद्गल—सचित्त तेजस्काय के पुद्गल तो प्रकाश, ताप, उद्योत आदि करते ही हैं, किन्तु अचित्त पुद्गल भी अवभासित होते एवं प्रकाश, ताप, उद्योत आदि करते हैं, यह इस सूत्र का आशय है। कुपित साधु द्वारा निकाली हुई तेजोलेश्या के पुद्गल अचित्त होते हैं। *(वृत्ति, पत्रांक ३२७)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Elaboration—This aphorism conveys that not only animate matter of fire-bodies radiate light, heat, glow etc. but inanimate matter also does so. The particles of *tejoleshya* emitted by an angry ascetic are inanimate. *(Vritti, leaf 327)*

२२. तए णं से कालोदाई अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता बहूहिं चउत्थ-छट्ठऽट्ठम जाव अप्पाणं भावेमाणे जहा पढमसए कालासवेसियपुत्ते (स० १, उ० ९, सु० २४) जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ सत्तमे सए : दसमो उद्देसओ समत्तो॥

२२. इसके पश्चात् वह कालोदायी अनगार श्रमण भगवान महावीर को वन्दन-नमस्कार करते हैं। वन्दन-नमस्कार करके बहुत-से चतुर्थ (भक्त), षष्ठ (भक्त), अष्टम (भक्त) इत्यादि तप द्वारा यावत् अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करने लगे; यावत् प्रथम शतक के नौवें उद्देशक (सू. २४) में वर्णित कालास्यवेशी पुत्र की तरह सिद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् सब दुःखों से मुक्त हुए।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है।'

॥ सप्तम शतक : दशम उद्देशक समाप्त ॥

॥ सप्तम शतक सम्पूर्ण ॥

22. After that ascetic Kalodayi paid homage and obeisance to Shraman Bhagavan Mahavir. Then he commenced his itinerant way and enkindled his soul with numerous one day, two day, three day fasts and other austerities. And like Kalasyaveshi Putra (Chapter 1, Lesson 9, Aphorism 24) became perfected (*Siddha*), enlightened (*buddha*), ... and so on up to... ended all miseries.

"*Bhante* ! Indeed that is so. Indeed that is so."

● END OF THE TENTH LESSON OF THE SEVENTH CHAPTER ●

● END OF CHAPTER SEVEN ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अष्टम शतक : प्रथम उद्देशक
ASHTAM SHATAK (Chapter Eight) : FIRST LESSON

पुद्गल PUDGALA (MATTER)

- व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र के अष्टम शतक के दस उद्देशक हैं। इनमें पुद्गल, आशीविष, वृक्ष, क्रिया, आजीव, प्रासुक, अदत्त, प्रत्यनीक, बन्ध और आराधना; आदि विषयों का वर्णन है।
- The eighth chapter (*shatak*) of *Vyakhyaprajnapti Sutra* (*Bhagavati Sutra*) has ten lessons (*uddeshak*). The topics discussed include pudgala (matter), *ashivish* (the poisonous), *vriksh* (tree), *kriya* (activities), *aajiva* (Ajivaks), *prasuk* (prescribed food), *adatt* (not given), *pratyaneek* (adversaries), *bandh* (bondage), and *aradhana* (endeavour).

संग्रहणी गाथा **COLLATIVE VERSE**

१. पोग्गल १ आसीविस २ रुक्ख ३ किरिय ४ आजीव ५ फासुगमदत्ते ६–७।
पडिणीय ८ बंध ९ आराहणा य १० दस अट्ठमम्मि सते॥१॥

१. (१) पुद्गल, (२) आशीविष, (३) वृक्ष, (४) क्रिया, (५) आजीव, (६) प्रासुक, (७) अदत्त, (८) प्रत्यनीक, (९) बन्ध, और (१०) आराधना; आठवें शतक में ये दस उद्देशक हैं।

1. The eighth chapter (*shatak*) has the following ten lessons (*uddeshak*)—(1) *Pudgala* (Matter), (2) *Ashivish* (The poisonous), (3) *Vriksh* (Tree), (4) *Kriya* (Activities), (5) *Aajiva* (Ajivaks), (6) *Prasuk* (Prescribed Food), (7) *Adatt* (Not given), (8) *Pratyaneek* (Adversaries), (9) *Bandh* (Bondage) and (10) *Aradhana* (Endeavour).

पुद्गलपरिणामों के तीन प्रकार **THREE KINDS OF MATTER**

२. रायगिहे जाव एवं वयासी–

३. [प्र.] कइविहा णं भंते ! पोग्गला पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! तिविहा पोग्गला पण्णत्ता, तं जहा–पयोगपरिणया मीससापरिणया, वीससापरिणया।

२. राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान महावीन से इस प्रकार पूछा–

३. [प्र.] भगवन् ! पुद्गल कितने प्रकार के कहे हैं ?

[उ.] गौतम ! पुद्गल तीन प्रकार के कहे हैं। वे इस प्रकार हैं–(१) प्रयोग-परिणत, (२) मिश्र-परिणत, और (३) विस्रसा-परिणत।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

2. In Rajagriha city... and so on up to... (Shri Gautam Swami) submitted—

3. [Q.] *Bhante* ! How many types of matter (*pudgala*) is there ?

[Ans.] Gautam ! Matter is said to be of three types—(1) *prayoga parinat* or consciously transformed, (2) *mishra parinat* or jointly transformed and (3) *visrasa parinat* or naturally transformed.

विवेचन : मूलतः पुद्गल समान लक्षण है–गलन, पूरन (मिलन) स्वभाव, अचेतन तथा मूर्तिमंत। किन्तु परिणामों की दृष्टि से उसके तीन भेद होते हैं–(१) **प्रयोग–परिणत**–जीव की प्रवृत्ति (क्रिया) से शरीर आदि के रूप में परिणत पुद्गल। जैसे–एकेन्द्रियादि जीव। (२) **मिश्र–परिणत**–प्रयोग और विस्रसा (स्वभाव) इन दोनों द्वारा परिणत पुद्गल जैसे पंचेन्द्रियादि जीवों का मृत कलेवर। और (३) **विस्रसा–परिणत**–स्वभाव से परिणत पुद्गल जैसे–कृष्णादि वर्ण, गंध आदि के पुद्गल।

मिश्रपरिणत पुद्गलों के दो रूप–(१) प्रयोग-परिणाम को छोड़े बिना स्वभाव से (विस्रसा) परिणामान्तर को प्राप्त मृतकलेवर आदि पुद्गल मिश्र-परिणत कहलाते हैं; अथवा (२) विस्रसा (स्वभाव) से परिणत औदारिक आदि वर्गणाएँ, जब जीव के व्यापार (प्रयोग) से औदारिक आदि शरीर रूप में परिणत होती हैं, तब वे मिश्र-परिणत कहलाती हैं, जब कि उनमें प्रयोग और विस्रसा, दोनों परिणामों की विवक्षा की गई हो। केवल एक प्रकार का परिणमन होने पर प्रयोग-परिणत अथवा विस्रसा परिणत मात्र कहलाएँगी। *(वृत्ति पत्रांक ३२८)*

Elaboration—All matter has same fundamental properties—disintegration (*galan*), integration (*puran* or *milan*), inanimate (*achetan*) and with a form (*murtimant*). However, in terms of transformation it has three types—(1) *prayoga parinat* or consciously transformed matter like soul acquiring matter particles and transforming into bodies with one or more sense organs, (2) *mishra parinat* or jointly (consciously-cum-naturally) transformed matter like dead bodies of five sensed beings and (3) *visrasa parinat* or naturally transformed matter like clusters of particles with varied attributes including colour and smell.

Jointly transformed matter—This is of two types—(1) Naturally transformed matter without disintegration of consciously acquired form, such as a corpse. (2) Naturally transformed species of *karmic* particles, such as those needed to form gross physical body etc., further transformed consciously, such as gross physical body of a being. The transformation that involves both conscious and natural processes is called *mishra parinat* (jointly transformed). Where only single process is involved it is either called *prayoga parinat* (consciously transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed). *(Vritti, leaf 328)*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नौ दण्डकों द्वारा प्रयोग-परिणत पुद्गलों का निरूपण

CONSCIOUS TRANSFORMATION IN LIGHT OF NINE DANDAKS

प्रयोग-परिणत पुद्गलों को विभिन्न पहलुओं से समझाने के लिए शास्त्रकार ने नौ दण्डकों द्वारा निरूपण किया है।

In order to explain various facets of conscious transformation of matter the author has elaborated the process with reference to nine *Dandaks* (places of suffering).

प्रथम दण्डक **FIRST DANDAK**

(यहाँ प्रथम दण्डक में सूक्ष्म एकेन्द्रिय से लेकर सर्वार्थसिद्ध देवों तक के जीवों की विशेषता से प्रयोग परिणत पुद्गलों का कथन है।)

(Included in the first *Dandak* is the discussion about consciously transformed matter with reference to the unique nomenclature of living beings from minute one sensed beings to gods of Sarvarth-siddhi realm.)

४. [प्र.] पयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा-एगिंदियपयोगपरिणया बेइंदियपयोगपरिणया जाव पंचिंदियपयोगपरिणया।

४. [प्र.] भगवन् ! प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! (प्रयोग-परिणत पुद्गल) पाँच प्रकार के हैं। जैसे-(१) एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत, (२) द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत, (३) त्रीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत, (४) चतुरिन्द्रिय-प्रयोग-परिणत, और (५) पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

4. [Q.] *Bhante* ! How many types of *prayoga parinat pudgala* (consciously transformed matter) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of five types—(1) *Ekendriya prayoga parinat pudgala* (consciously transformed as matter or bodies of one-sensed beings), (2) *dvindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of two-sensed beings), (3) *trindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of three-sensed beings), (4) *chaturindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of four-sensed beings), and (5) *panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed beings).

५. [प्र.] एगिंदियपयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहा, तं जहा-पुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया जाव वणस्सइकाइयएगिंदियपयोगपरिणया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! पाँच प्रकार के हैं। जैसे-(१) पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल, यावत् (५) वनस्पतिकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

5. [Q.] *Bhante* ! How many types of *ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of one-sensed beings) are there ?

[Ans.] They are of five types—(1) *prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of one-sensed earth-bodied beings)... and so on up to... (5) *vanaspatikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of one-sensed plant-bodied beings).

६. [प्र. १] पुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-सुहुमपुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया य बादरपुढविक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया य।

६. [प्र. १] भगवन् ! पृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं; जैसे कि-सूक्ष्मपृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल और बादरपृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

6. [Q. 1] *Bhante* ! How many types of *prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of one-sensed earth-bodied beings) are there ?

[Ans.] They are of two types—(1) *sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of minute one-sensed earth-bodied beings) and (2) *baadar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of gross one-sensed earth-bodied beings).

[२] आउक्काइयएगिंदियपयोगपरिणया एवं चेव। [३] एवं दुयओ भेदो जाव वणस्सइकाइया य।

[२] इसी प्रकार अप्कायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल भी दो प्रकार के (सूक्ष्म और बादर रूप से) कहने चाहिए। [३] इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल तक के प्रत्येक के दो-दो भेद (सूक्ष्म और बादर रूप से) कहने चाहिए।

[2] The same should be repeated for *apkaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of one-sensed water-bodied beings). **[3]**... and so on up to... *vanaspati kaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

one-sensed plant-bodied beings). (Which means two types, minute and gross, should be stated for all these).

७. [प्र.] बेइंदियपयोगपरिणयाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! अणेगविहा पण्णत्ता। एवं तेइंदिय–चउरिंदियपयोगपरिणया वि।

७. [प्र.] भगवन् ! अब द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल के प्रकारों के विषय में प्रश्न है।

[उ.] गौतम ! वे (द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल) अनेक प्रकार के हैं। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गलों और चतुरिन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के प्रकार (अनेक विध) के विषय में जानना चाहिए।

7. [Q.] *Bhante* ! How about *dvindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of two-sensed beings), *trindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of three-sensed beings), and *chaturindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of four-sensed beings) ?

[Ans.] Gautam ! They (*dvindriya prayoga parinat pudgala*) are of many types. And the same is true for *trindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of three-sensed beings), and *chaturindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of four-sensed beings).

८. [प्र.] पंचिंदियपयोगपरिणयाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा–नेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया, तिरिक्ख०, एवं मणुस्स०, देवपंचिंदिय०।

८. [प्र.] अब प्रश्न पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के विषय में है।

[उ.] गौतम ! (पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल) चार प्रकार के हैं। यथा-(१) नारक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल, तथा (२) तिर्यञ्च-पंचेन्द्रिय, (३) मनुष्य-पंचेन्द्रिय, और (४) देव-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

8 [Q.] *Bhante* ! Now the question is about *panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed beings) ?

[Ans.] Gautam ! They (*panchendriya prayoga parinat pudgala*) are of four types—(1) *Naarak panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings), (2) *tiryanch panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

transformed as bodies of five-sensed animals), (3) *manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings), and (4) *dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed divine beings).

९. [प्र.] नेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! सत्तविहा पण्णत्ता, तं जहा–रयणप्पभापुढवि–नेरइयपंचिंदिय–पयोगपरिणया वि जाव अहेसत्तमपुढवि–नेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया वि।

९. [प्र.] (सर्वप्रथम) नैरयिक पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के (प्रकार के) विषय में प्रश्न है।

[उ.] गौतम ! वे सात प्रकार के हैं। यथा-रत्नप्रभापृथ्वी-नैरयिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल यावत् अधःसप्तमा (तमस्तमा)-पृथ्वी-नैरयिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग- परिणत पुद्गल।

9. [Q.] Bhante ! Now the question is about *naarak panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings) ?

[Ans.] Gautam ! They are of seven types—*Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell)... and so on up to... *Adhah-saptama prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings of Adhah-saptama or Tamastama hell).

१०. [प्र. १] तिरिक्खजोणिय–पंचिंदियपयोगपरिणयाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तं जहा–जलचरपंचिंदियतिरिक्खजोणिय–पयोगपरिणया थलचरतिरिक्खजोणियपंचिंदिय० खहयरतिरिक्खपंचिंदिय०।

१०. [प्र. १] तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के (प्रकार के) विषय में प्रश्न है।

[उ.] गौतम ! तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणतपुद्गल तीन प्रकार के हैं। जैसे कि-

(१) जलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल, (२) स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल, और (३) खेचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

10. [Q. 1] *Bhante* ! Now the question is about *tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed animals) ?

[Ans.] Gautam ! They are of three types—(1) *jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

as bodies of aquatic five-sensed animals), (2) *sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed animals), and (3) *khechar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aerial five-sensed animals).

[प्र. २] जलयरतिरिक्खजोणिय-पओगपरिणयाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-सम्मुच्छिमजलचरतिरिक्खपओगपरिणया गब्भवक्कंतियजलयर०।

[प्र. २] भगवन् ! जलचर तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। जैसे कि-(१) सम्मूर्च्छिम जलचरतिर्यञ्चयोनिक, और (२) गर्भव्युत्क्रान्तिक (गर्भज) जलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

[Q. 2] *Bhante* ! Now the question is about *jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals) ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—(1) *sammurchhim jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals of asexual origin) and (2) *garbhavyutkrantik jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals born out of womb).

[प्र. ३] थलचरतिरिक्ख० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-चउप्पयथलचर० परिसप्पथलचर०।

[प्र. ३] भगवन् ! स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। यथा-चतुष्पद-स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल और परिसर्पस्थलचर तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

[Q. 3] *Bhante* ! Now the question is about *sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed animals) ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

animals) and *parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed reptilian animals).

[प्र. ४] चउप्पदथलयर० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सम्मुच्छिमचउप्पदथलयर० गब्भवक्कंतियचउप्पयथलयर०।

[प्र. ४] अब प्रश्न है चतुष्पद-स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे (पूर्वोक्त पुद्गल) दो प्रकार के हैं। यथा-सम्मूर्च्छिम चतुष्पद-स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक- पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल और गर्भज-चतुष्पद-स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

[Q. 4] *Bhante* ! Now the question is about *chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals) ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*sammurchhim chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals of asexual origin) and *garbhavyutkrantik chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals born out of womb).

[५] एवं एएणं अभिलावेणं परिसप्पा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–उरपरिसप्पा य, भुयपरिसप्पा य। [६] उरपरिसप्पा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सम्मुच्छिमा य, गब्भवक्कंतिया य। [७] एवं भुयपरिसप्पा वि। [८] एवं खहचरा वि।

[५] इसी अभिलाप (पाठ) द्वारा परिसर्प स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक पंचेन्द्रिय भी दो प्रकार के हैं। यथा-उरःपरिसर्प-स्थलचर तिर्यञ्चयोनिक पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल और भुजपरिसर्प-स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक- पंचेन्द्रिय-प्रयोग- परिणत पुद्गल। [६] (पूर्वोक्त चतुष्पदस्थलचर सम्बन्धी पुद्गलवत्) उरःपरिसर्प (सम्बन्धी प्रयोगपरिणत पुद्गल) भी दो प्रकार के हैं। यथा-सम्मूर्च्छिम (उरःपरिसर्प-सम्बन्धी पुद्गल) और गर्भज (उरःपरिसर्प-सम्बन्धी पुद्गल)। [७] इसी प्रकार भुजपरिसर्प-सम्बन्धी पुद्गल के भी दो भेद समझने चाहिए। [८] इसी तरह खेचर (तिर्यञ्चपंचेन्द्रियसम्बन्धी पुद्गल) के भी पूर्ववत (सम्मूर्च्छिम और गर्भज) दो भेद हैं।

[5] This statement continues to add matter consciously transformed as bodies of two types of *parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya* (terrestrial five-sensed reptilian animals)—*ur-parisarp*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

sthalachar tiryanch-yonik panchendriya (terrestrial five-sensed non-limbed reptilian animals) and *bhuj-parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya* (terrestrial five-sensed limbed reptilian animals). [6] Two types of *ur-parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya* (terrestrial five-sensed non-limbed reptilian animals)—*sammurchhim* (of asexual origin) and *garbhavyutkrantik* (born out of womb). [7] In the same way there are two types of *bhuj-parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya* (terrestrial five-sensed limbed reptilian animals)—*sammurchhim* (of asexual origin) and *garbhavyutkrantik* (born out of womb). [8] The same also holds good for *khechar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aerial five-sensed animals).

११. [प्र.] मणुस्सपंचिंदियपयोग० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—सम्मुच्छिममणुस्स० गब्भवक्कंतियमणुस्स०।

११. [प्र.] भगवन् ! मनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। यथा-सम्मूर्च्छिममनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल और गर्भजमनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

11. [Q.] *Bhante* ! Now the question is about *manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings) ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—(1) *sammurchhim manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings of asexual origin) and (2) *garbhavyutkrantik manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings born out of womb).

१२. [प्र.] देवपंचिंदियपयोग० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! चउव्विहा पण्णत्ता,तं जहा—भवणवासिदेवपंचिंदियपयोग० एवं जाव वेमाणिया।

१२. [प्र.] भगवन् ! देव-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे चार प्रकार के हैं। जैसे कि-भवनवासी-देव० यावत् वैमानिकदेव-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

12. [Q.] *Bhante* ! Now the question is about *dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed divine beings) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! They are of four types—*Bhavan-vaasi dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed abode dwelling divine beings)... and so on up to... *Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed celestial-vehicular divine beings).

१३. [प्र.] भवणवासिदेवपंचिंदिय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दसविहा पण्णत्ता, तं जहा–असुरकुमार० जाव थणियकुमार०।

१३. [प्र.] भगवन् ! भवनवासी-देवपंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] वे दस प्रकार के हैं। यथा–(१) असुरकुमार-देव-प्रयोग-परिणत पुद्गल यावत् (१०) स्तनितकुमार-देव-प्रयोग- परिणत पुद्गल।

13. [Q.] *Bhante* ! Now the question is about *Bhavan-vaasi dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed abode dwelling divine beings) ?

[Ans.] Gautam ! They are of ten types—(1) *Asur Kumar dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed *Asur Kumar* gods)... and so on up to... *Stanit Kumar dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed *Stanit Kumar* gods).

१४. एवं एएणं अभिलावेणं अट्ठविहा वाणमंतरा पिसाया जाव गंधव्वा।

१५. जोइसिया पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा–चंदविमाणजोइसिय० जाव ताराविमाणजोइसियदेवा।

१४. इसी अभिलाप (पाठ) से आठ प्रकार के वाणव्यन्तर देव कहने चाहिए। यथा–पिशाच से यावत् गन्धर्व तक।

१५. (इसी अभिलापवत्) ज्योतिषी देवों के भी पाँच प्रकार हैं। चन्द्रविमानज्योतिष्कदेव यावत् ताराविमान–ज्योतिष्क-देव।

14. This statement continues to add matter consciously transformed as bodies of eight types of *Vanavyantar devs* (interstitial gods)—*Pishaach* gods... and so on up to... *Gandharva* gods.

15. This statement continues to add matter consciously transformed as bodies of five types of *Jyotishk devs* (stellar gods)—*Chandra Vimaan Jyotishk devs* (stellar gods of lunar celestial vehicle) gods... and so on up to... *Tara Vimaan Jyotishk devs* (stellar gods of star celestial vehicle).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१६. [१] वेमाणिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–कप्पोवग० कप्पातीतगवेमाणिय०।

१६. [१] वैमानिकदेव के दो प्रकार हैं। यथा–कल्पोपपन्नक वैमानिकदेव और कल्पातीत वैमानिकदेव।

16. [1] There are two types of *Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods)—*Kalpopapannak Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods belonging to *Kalps* or specific divine realms) and *Kalpateet Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods beyond the *Kalps*).

[२] कप्पोवगा दुवालसविहा पण्णत्ता, तं जहा–सोहम्मकप्पोवग० जाव अच्चुयकप्पोवगवेमाणिया। [३] कप्पाइयगा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–गेवेज्जगकप्पातीयग० अणुत्तरोववाइयकप्पाईयग०। [४] गेवेज्जगकप्पातीतगा नवविहा पण्णत्ता, तं जहा–हेट्ठिमहेट्ठिम–गेवेज्जगकप्पातीतगा जाव उवरिमउवरिम–गेविज्जगकप्पातीतया।

[२] कल्पोपपन्नक वैमानिक देव बारह प्रकार के हैं। यथा–सौधर्म कल्पोपपन्नक से यावत् अच्युतकल्पोपपन्नक देव तक। (इन बारह प्रकार के वैमानिक देवों से सम्बन्धित प्रयोग–परिणत पुद्गल १२ प्रकार के होते हैं।)

[३] कल्पातीत वैमानिकदेव दो प्रकार के कहे हैं। यथा–ग्रैवेयक–कल्पातीत–वैमानिकदेव और अनुत्तरौपपातिक–कल्पातीत–वैमानिकदेव।

[४] ग्रैवेयक कल्पातीत वैमानिकदेवों के नौ प्रकार हैं। यथा–अधस्तन–अधस्तन (सबसे नीचे की त्रिक में नीचे का) ग्रैवेयक कल्पातीत वैमानिक देव यावत् उपरितन–उपरितन (सबसे ऊपर की त्रिक में सबसे ऊपर वाले ग्रैवेयक–कल्पातीत–वैमानिक–देव।

[2] *Kalpopapannak Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods belonging to *Kalps* or specific divine realms) are of twelve types—*Saudharma Kalpopapannak* (belonging to the *Saudharma Kalp*)... and so on up to... *Achyut Kalpopapannak* (belonging to the *Achyut Kalp*)

[3] *Kalpateet Vaimanik devs* (celestial-vehicular gods beyond the *Kalps*) are of two types—*Graiveyak Kalpateet Vaimanik devs* and *Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik devs.*

[4] *Graiveyak Kalpateet Vaimanik devs* are of nine types—*Adhastan-adhastan* (lowest of the lower) *Graiveyak Kalpateet Vaimanik devs*... and so on up to... *Uparitan-uparitan* (highest of the higher) *Graiveyak Kalpateet Vaimanik devs.*

[प्र. ५] अणुत्तरोववाइय–कप्पातीतगवेमाणियदेव–पंचिंदियपयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा–विजयअणुत्तरोववाइय० जाव परिणया जाव सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयदेवपंचिंदिय जाव परिणया। १ दंडगो।

[प्र. ५] भगवन् ! अनुत्तरौपपातिक कल्पातीतवैमानिक-देव-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे पाँच प्रकार के हैं। जैसे कि-विजय-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीतवैमानिकदेव-पंचेन्द्रिय- प्रयोग-परिणत पुद्गल यावत् सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीतवैमानिकदेव-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल। [प्रथम दण्डक पूर्ण हुआ।]

5. [Q.] *Bhante* ! How many types of *Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed *Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps*) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of five types—*Vijaya Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed *Vijaya Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps*)... and so on up to... *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps*). **[First Dandak Concluded]**

दूसरा दण्डक SECOND DANDAK

(इस दण्डक में सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीवों से लेकर सर्वार्थ सिद्ध देवों तक पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से कथन है।)

[This section describes the aforesaid beings from earth-bodied to divine in context of full development (*paryapt*) and partial development (*aparyapt*)]

१७. [प्र. १] सुहुमपुढविकाइय–एगिंदियपयोगपरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता। तं जहा–पज्जत्तगसुहुमपुढविकाइय जाव परिणया य अपज्जत्तगसुहुमपुढविकाइय जाव परिणया य। [केई अपज्जत्तगं पढमं भणंति, पच्छा पज्जत्तगं।] [२] बादरपुढविकाइयएगिंदिय० ? एवं देव।

१८. एवं जाव वणस्सइकाइया। एक्केक्का दुविहा–सुहुमा य बादरा य, पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य भाणियव्वा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१७. [प्र. १] भगवन् ! सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल कितने प्रकार के हैं?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। यथा-पर्याप्तक-सूक्ष्मपृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल और अपर्याप्तक-सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल। [कई आचार्य अपर्याप्तक (वाले प्रकार) को पहले और पर्याप्तक (वाले प्रकार) को बाद में कहते हैं।] [२] इसी प्रकार बादर-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल के भी (उपर्युक्तवत्) दो भेद कहने चाहिए।

१८. इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक (एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल) तक प्रत्येक के सूक्ष्म और बादर ये दो भेद और फिर इन दोनों के पर्याप्तक और अपर्याप्तक भेद कहने चाहिए।

17. [Q. 1] *Bhante* ! How many types of *sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of fully developed minute one-sensed-earth-bodied beings) and *aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of underdeveloped minute one-sensed-earth-bodied beings). (Many commentators state these in reverse order). [2] In the same way two types for *baadar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of gross one-sensed-earth-bodied beings) should be stated.

18. In the same way two types, *paryaptak* and *aparyaptak*, should be stated for two classes, *sukshma* and *baadar*, of matter related to all one-sensed beings up to plant-bodied beings.

१९. [प्र. १] बेंदियपयोगपरिणयाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—पज्जत्तगबेंदियपयोगपरिणया य, अपज्जत्तग जाव परिणया य। [२] एवं तेइंदिया वि। [३] एवं चउरिंदिया वि।

१९. [प्र. १] भगवन् ! द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल कितने प्रकार के हैं?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। जैसे कि-पर्याप्तक द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल और अपर्याप्तक द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गल। [२] इसी प्रकार त्रीन्द्रिय और [३] चतुरिन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्‌गलों के विषय में भी समझ लेना चाहिए।

19. [Q. 1] *Bhante* ! How many types of *dvindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of two-sensed beings) are there ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[**Ans.**] Gautam ! They are of two types—*paryaptak dvindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of fully developed two-sensed beings) and *aparyaptak dvindriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of underdeveloped two-sensed beings). The same should be repeated for matter related to [2] three-sensed and [3] four sensed beings.

२०. [प्र. १] रयणप्पभापुढविनेरइय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—पज्जत्तगरयणप्पभापुढवि जाव परिणया य, अपज्जत्तग जाव परिणया य। [२] एवं जाव अहेसत्तमा।

२०. [प्र. १] भगवन् ! रत्नप्रभापृथ्वी-नैरयिक-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। जैसे-पर्याप्तक रत्नप्रभापृथ्वी नैरयिक-प्रयोग-परिणत पुद्गल और अपर्याप्तक रत्नप्रभा-नैरयिक-प्रयोग-परिणत पुद्गल। [२] इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमीपृथ्वी नैरयिक-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के प्रकार के विषय में जानना चाहिए।

20. [Q. 1] *Bhante* ! How many types of *Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*paryaptak Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of fully developed five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell) and *aparyaptak Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell). [2] The same should be repeated for other hells up to *Adhah-saptami prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings of Adhah-saptami hell).

२१. [प्र. १] सम्मुच्छिमजलयरतिरिक्ख० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—पज्जत्तग० अपज्जत्तग०। एवं गब्भवक्कंतिया वि।

२१. [प्र. १] भगवन् ! सम्मूर्च्छिम-जलचर-तिर्यञ्चयोनिक पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। जैसे कि-पर्याप्तक सम्मूर्च्छिम जलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल और अपर्याप्तक सम्मूर्च्छिम-जलचर-तिर्यञ्चयोनिक पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल। इसी प्रकार गर्भज-जलचरसम्बन्धी प्रयोगपरिणत पुद्गलों के विषय में जान लेना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

21. **[Q. 1]** *Bhante* ! How many types of *sammurchhim jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals of asexual origin) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*paryaptak sammurchhim jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of fully developed aquatic five-sensed animals of asexual origin) and *aparyaptak sammurchhim jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of underdeveloped aquatic five-sensed animals of asexual origin). The same should be repeated for *garbhavyutkrantik jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals born out of womb).

[२] **सम्मुच्छिमचउप्पदथलचर०। एवं चेव। एवं गब्भवक्कंतिया य।**

[३] **एवं जाव सम्मुच्छिमखहयर० गब्भवक्कंतिया य एक्केक्के पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य भाणियव्वा।**

[२] इसी प्रकार सम्मूर्च्छिम चतुष्पदस्थलचरसम्बन्धी प्रयोग-परिणत पुद्गलों के प्रकार के विषय में तथा गर्भज चतुष्पदस्थलचर सम्बन्धी प्रयोग-परिणत पुद्गलों के प्रकार के विषय में भी जानना चाहिए।

[३] इसी प्रकार यावत् सम्मूर्च्छिम खेचर और गर्भज खेचर से सम्बन्धित प्रयोगपरिणत पुद्गलों के प्रत्येक के पर्याप्तक और अपर्याप्तक, ये दो-दो भेद कहने चाहिए।

[2] The same should be repeated for *sammurchhim chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals of asexual origin) and *garbhavyutkrantik chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals born out of womb).

[3] In the same way two types each, *paryaptak* and *aparyaptak*, should be stated for *sammurchhim khechar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aerial five-sensed animals of asexual origin) and *garbhavyutkrantik khechar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of aerial five-sensed animals born out of womb).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२२. [प्र. १] सम्मुच्छिममणुस्सपंचिंदिय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! एगविहा पन्नत्ता—अपज्जत्तगा चेव।

२२. [प्र. १] भगवन् ! सम्मूर्च्छिम-मनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे एक प्रकार के हैं। यथा–अपर्याप्तक-सम्मूर्च्छिम मनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

22. [Q. 1] *Bhante* ! How many types of *sammurchhim manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings of asexual origin) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of just one type—*aparyaptak sammurchhim manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed human beings of asexual origin).

[प्र. २] गब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदिय० पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—पज्जत्तगगब्भवक्कंतिया वि, अपज्जत्तगगब्भवक्कंतिया वि।

[प्र. २] भगवन् ! गर्भज मनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। यथा–पर्याप्तक-गर्भज-मनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल और अपर्याप्तक-गर्भज-मनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल।

[Q. 2] *Bhante* ! How many types of *garbhavyutkrantik manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings born out of womb) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*paryaptak garbhavyutkrantik manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of fully developed five-sensed human beings born out of womb) and *aparyaptak garbhavyutkrantik manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed human beings born out of womb).

२३. [प्र. १] असुरकुमारभवणवासिदेवाणं पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—पज्जत्तगअसुरकुमार० अपज्जत्तगअसुर०। [२] एवं जाव थणियकुमारा पज्जत्तगा अपज्जत्तगा य।

२३. [प्र. १] भगवन् ! असुरकुमार-भवनवासीदेव-प्रयोग-परिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। यथा-पर्याप्तक असुरकुमार-भवनवासीदेव-प्रयोग-परिणत पुद्गल और अपर्याप्तक-असुरकुमार-भवनवासीदेव-प्रयोग-परिणत पुद्गल। [२] इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार भवनवासीदेवों तक के पर्याप्तक और अपर्याप्तक, ये दो-दो भेद कहने चाहिए।

23. [Q. 1] *Bhante* ! Now the question is about *Asur Kumar Bhavan-vaasi dev prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of *Asur Kumar* abode dwelling gods) ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*paryaptak Asur Kumar Bhavan-vaasi dev prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as fully developed bodies of *Asur Kumar* abode dwelling gods) and *aparyaptak Asur Kumar Bhavan-vaasi dev prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as underdeveloped bodies of *Asur Kumar* abode dwelling gods). [2] The same should be repeated for matter related to other abode dwelling gods up to *Stanit Kumar Bhavan-vaasi dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five-sensed *Stanit Kumar* abode dwelling gods).

२४. एवं एएणं अभिलावेणं दुएणं भेदेणं पिसाया य जाव गंधव्वा, चंदा जाव तारविमाणा, सोहम्मकप्पोवगा जाव अच्चुओ, हिट्ठिमहिट्ठिमगेविज्जकप्पातीत जाव उवरिमउवरिमगेविज्ज०, विजयअणुत्तरो० जाव अपराजिय०।

२४. इसी प्रकार इसी अभिलाप से पिशाचों से लेकर यावत् गन्धर्वों तक (आठ प्रकार के वाणव्यन्तर देवों के) तथा चन्द्र से लेकर तारा-पर्यन्त (पाँच प्रकार के ज्योतिष्कदेवों के) एवं सौधर्मकल्पोपपन्नक से यावत् अच्युतकल्पोपपन्नक तक के और अधस्तन-अधस्तन ग्रैवेयककल्पातीत से लेकर उपरितन-उपरितन ग्रैवेयक कल्पातीत देव-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के, एवं विजय-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत से यावत् अपराजित-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत देव-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के प्रत्येक के पर्याप्तक और अपर्याप्तक, ये दो-दो भेद कहने चाहिए।

24. In the same way two types each, *paryaptak* and *aparyaptak*, should be stated for matter consciously transformed as bodies of *Pishaach...* and so on up to... *Gandharva* (eight classes of interstitial gods), *Chandra* to *Taara* (five classes of stellar gods, *Saudharma Kalpopapannak* to *Achyut Kalpopapannak* gods, *Adhastan-adhastan Graiveyak Kalpateet* to *Uparitan-uparitan Graiveyak Kalpateet Vaimanik* gods, and *Vijaya Anuttaraupapatik Kalpateet* to *Aparajit Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik* gods.

२५. [प्र.] सव्वट्ठसिद्धकप्पातीय पुच्छा।

[उ.] गोयमा ! दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-पज्जत्तगसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरो० अपज्जत्तगसव्वट्ठ जाव परिणया वि। २ दंडगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२५. [प्र.] भगवन् ! सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक-कल्पातीतदेव-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के कितने प्रकार हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो प्रकार के हैं। यथा-पर्याप्तक सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक-कल्पातीतदेव-प्रयोग-परिणत पुद्गल और अपर्याप्तक सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक-कल्पातीतदेव-प्रयोग-परिणत पुद्गल। [दूसरा दण्डक पूर्ण हुआ।]

25. [Q.] *Bhante* ! Now the question is about *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps*) ?

[Ans.] Gautam ! They are of two types—*paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as fully developed bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps*) and *aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as underdeveloped bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps*). **[Second Dandak Concluded]**

तृतीय दण्डक THIRD DANDAK

(इस दण्डक में औदारिक, वैक्रिय आदि पाँच शरीरों की अपेक्षा से कथन है।)

[This section describes the aforesaid beings in context of five types of bodies including *audarik* and *vaikriya*.]

२६. जे अपज्जत्ता सुहुमपुढवीकाइय-एगिंदियपयोगपरिणया ते ओरालिय-तेया-कम्मगसरीरप्पयोगपरिणया। जे पज्जत्तसुहुम० जाव परिणया ते ओरालिय-तेया-कम्मगसरीरप्पयोगपरिणया। एवं जाव चउरिंदिया पज्जत्ता।

नवरं जे पज्जत्तगबादरवाउकाइयएगिंदियपयोगपरिणया ते ओरालिय-वेउव्विय-तेया-कम्मसरीर जाव परिणया। सेसं तं चेव।

२६. जो पुद्गल अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकाय-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे औदारिक, तैजस और कार्मण-शरीर-प्रयोग-परिणत हैं। जो पुद्गल पर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकाय-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे भी औदारिक, तैजस और कार्मण-शरीर-प्रयोग-परिणत हैं।

इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रियपर्याप्तक तक के (प्रयोग-परिणत पुद्गलों के विषय में) जानना चाहिए। परन्तु विशेष इतना है कि जो पुद्गल पर्याप्त-बादर-वायुकायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वे औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण-शरीर-प्रयोग-परिणत हैं। (क्योंकि वायुकाय में वैक्रिय शरीर भी पाया जाता है।) शेष सब पूर्वोक्त वक्तव्यतानुसार जानना चाहिए।

26. The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as gross physical (*audarik*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies. The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as fully developed bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) are also consciously transformed as gross physical (*audarik*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies.

The same should be repeated for consciously transformed matter related to beings up to fully developed four-sensed beings. The only difference is that the matter particles that are consciously transformed as fully developed bodies of gross one-sensed-air-bodied beings (*paryaptak baadar vayukaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as gross physical (audarik), transmutable (*vaikriya*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies (This is because air-bodied beings also have transmutable bodies.). About rest of the beings it is as aforesaid.

२७. [१] जे अपज्जत्तरयणप्पभापुढवि-नेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया ते वेउव्विय-तेया-कम्मसरीरप्पयोगपरिणया। एवं पज्जत्तया वि। [२] एवं जाव अहेसत्तमा।

२७. [१] जो पुद्गल अपर्याप्त-रत्नप्रभापृथ्वी-नैरयिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे वैक्रिय, तैजस और कार्मण शरीर-प्रयोग-परिणत हैं। इसी प्रकार पर्याप्तक-नैरयिकों के सम्बन्ध में भी जानना चाहिए। [२] इसी प्रकार यावत् नीचे की सप्तमपृथ्वी-नैरयिक तक के सम्बन्ध में कहना चाहिए।

27. [1] The matter particles (*pudgala*) that are *aparyaptak Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell) are, in fact, consciously transformed as transmutable (*vaikriya*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies. The same is true for *paryaptak Ratnaprabha prithvi nairayiks.* [2] The same is true for infernal beings of lower hells up to the seventh hell.

२८. [१] जे अपज्जत्तगसम्मुच्छिम-जलचर जाव परिणया ते ओरालिय-तेया-कम्मासरीर जाव परिणया। एवं पज्जत्तगा वि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२८. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक-सम्मूर्च्छिम-जलचर-प्रयोग-परिणत हैं, वे औदारिक, तैजस और कार्मणशरीर-प्रयोग-परिणत हैं। इसी प्रकार पर्याप्तक-सम्मूर्च्छिम-जलचर-प्रयोग-परिणत पुद्गलों के सम्बन्ध में जानना चाहिए।

28. **[1]** The matter particles (*pudgala*) that are *aparyaptak sammurchhim jalachar prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as underdeveloped bodies of aquatic animals of asexual origin) are, in fact, consciously transformed as gross physical (*audarik*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies. The same is true for *paryaptak sammurchhim jalachar prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as fully developed bodies of aquatic animals of asexual origin).

[२] गब्भवक्कंतिया अपज्जत्तया एवं चेव। [३] पज्जत्तयाणं एवं चेव, नवरं सरीरगाणि चत्तारि जहा बादरवाउक्काइयाणं पज्जत्तगाणं।

[२] गर्भज-अपर्याप्तक-जलचर के विषय में भी इसी प्रकार कहना चाहिए। [३] गर्भज-पर्याप्तक-जलचर के विषय में भी इसी तरह जानना चाहिए। किन्तु विशेषता यह है कि उनको पर्याप्तक बादर वायुकायिकवत् चार शरीर होते हैं।

[2] The same should be repeated for matter particles related to *aparyaptak garbhavyutkrantik jalachar* (underdeveloped aquatic animals born out of womb). **[3]** The same is also true for *paryaptak garbhavyutkrantik jalachar* (fully developed aquatic animals born out of womb) with a difference that like air-bodied beings they have four kinds of bodies.

[४] एवं जहा जलचरेसु चत्तारि आलावगा भणिया एवं चउप्पय-उरपरिसप्प-भुयपरिसप्पखहयरेसु वि चत्तारि आलावगा भाणियव्वा।

[४] जिस तरह जलचरों के चार आलापक कहे हैं, उसी प्रकार चतुष्पद, उरःपरिसर्प, भुजपरिसर्प एवं खेचरों के भी (१. सम्मूर्च्छिम, २. गर्भज, ३. पर्याप्तक, ४. अपर्याप्तक) चार-चार आलापक कहने चाहिए।

[4] Like the four statements (regarding *sammurchhim*, *garbhaj*, *paryaptak*, and *aparyaptak*) about aquatic animals, repeat four statements each about *chatushpad*, *ur-parisarp*, *bhuj-parisarp* and *khechar* (quadrupeds, non-limbed reptiles, limbed reptiles and aerial animals).

२९. [१] **जे सम्मुच्छिममणुस्सपंचिंदियपयोगपरिणया ते ओरालिय-तेया-कम्मासरीर जाव परिणया। [२] एवं गब्भवक्कंतिया वि अपज्जत्तगा वि। [३] पज्जत्तगा वि एवं चेव, नवरं सरीरगाणि पंच भाणियव्वाणि।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२९. [१] जो पुद्गल सम्मूर्च्छिम-मनुष्य-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे औदारिक, तैजस और कार्मण-शरीर-प्रयोग-परिणत हैं। [२] इसी प्रकार अपर्याप्तक गर्भज-मनुष्य के विषय में भी कहना चाहिए। [३] पर्याप्तक गर्भज-मनुष्य के विषय में भी (सामान्यतया) इसी तरह कहना चाहिए। विशेषता यह है कि इनमें (औदारिक से लेकर कार्मण तक) पाँच शरीर कहना चाहिए।

29. [1] The matter particles (*pudgala*) that are *sammurchhim manushya panchendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as bodies of five sensed human beings of asexual origin) are, in fact, consciously transformed as gross physical (*audarik*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies. [2] The same should be repeated for matter particles related to *aparyaptak garbhavyutkrantik manushya* (underdeveloped human beings born out of womb). [3] The same is also (generally) true for *paryaptak garbhavyutkrantik manushya* (fully developed human beings born out of womb) with a difference that all the five kinds of bodies from *audarik* to *karman* should be mentioned.

३०. [१] जे अपज्जत्तगा असुरकुमारभवणवासि जहा नेरइया तहेव। एवं पज्जत्तगा वि। [२] एवं दुयएणं भेदेणं जाव थणियकुमारा।

३०. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक असुरकुमार-भवनवासीदेव-प्रयोगपरिणत हैं, उनका आलापक नैरयिकों की तरह कहना चाहिए। पर्याप्तक-असुरकुमारदेवों के विषय में और [२] स्तनितकुमारपर्यन्त पर्याप्तक-अपर्याप्तक दोनों में भी इसी तरह कहना चाहिए।

30. [1] The matter particles (*pudgala*) that are *aparyaptak Asur Kumar Bhavan-vaasi dev prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as underdeveloped bodies of *Asur Kumar* abode dwelling gods) should be described like the statement about infernal beings. That about *paryaptak Asur Kumar* gods and [2] *paryaptak* and *aparyaptak* divine beings up to *Stanit Kumar* gods also follows the same pattern.

३१. एवं पिसाया जाव गंधव्वा, चंदा जाव तारविमाणा, सोहम्मो कप्पो जाव अच्चुओ, हेट्ठिमहेट्ठिमगेवेज्ज जाव उवरिमउवरिमगेवेज्ज०, विजय-अणुत्तरोववाइए जाव सव्वट्ठसिद्धअणु०, एक्केक्केणं दुयओ भेदो भाणियव्वो जाव जे पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइया जाव परिणया ते वेउव्विय-तेया-कम्मासरीरपयोगपरिणया। दंडगा ३।

३१. इसी तरह पिशाच से लेकर गन्धर्व वाणव्यन्तर-देव, चन्द्र से लेकर ताराविमान-पर्यन्त, ज्योतिष्क-देव और सौधर्मकल्प से लेकर यावत् अच्युतकल्प-पर्यन्त तथा अधःस्तन-अधःस्तन-ग्रैवेयक कल्पातीतदेव से लेकर उपरितन-उपरितन ग्रैवेयककल्पातीत देव तक एवं विजय-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीतदेव से लेकर यावत् सर्वार्थसिद्ध कल्पातीत वैमानिकदेवों तक पर्याप्तक और अपर्याप्तक दोनों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भेदों में वैक्रिय, तैजस और कार्मण-शरीर-प्रयोग-परिणत पुद्गल कहने चाहिए। [**तीसरा दण्डक पूर्ण हुआ।**]

31. In the same way it should be stated that matter particles that are consciously transformed (*prayoga parinat pudgala*) as fully developed as well as underdeveloped bodies of the following divine beings are, in fact, consciously transformed as transmutable (*vaikriya*), fiery (*taijas*) and *karmic* (*karman*) bodies—*Pishaach*... and so on up to... *Gandharva* (eight classes of interstitial gods), *Chandra* to *Taara* (five classes of stellar gods, *Saudharma Kalpopapannak* to *Achyut Kalpopapannak* gods, *Adhastan-adhastan Graiveyak Kalpateet* to *Uparitan-uparitan Graiveyak Kalpateet Vaimanik* gods, and *Vijaya Anuttaraupapatik Kalpateet* to *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik* gods. **[Third Dandak Concluded]**

चतुर्थ दण्डक FOURTH DANDAK

(इस दण्डक में पाँच इन्द्रियों की अपेक्षा से कथन है।)

[This section describes the aforesaid beings in context of five sense organs.]

३२. [१] जे अपज्जत्तासुहुमपुढविक्काइय-एगिंदिय-पयोगपरिणया ते फासिंदियपयोगपरिणया। [२] जे पज्जत्तासुहुमपुढविकाइया० एवं चेव। [३] जे अपज्जत्तासुहुमपुढविक्काइया० एवं चेव। [४] एवं पज्जत्तगा वि। [५] एवं चउक्कएणं भेदेणं जाव वणस्सइकाइया।

३२. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं। [२] जो पुद्गल पर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे भी स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं। [३] जो अपर्याप्त बादर पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत और [४] पर्याप्तक बादरपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल भी स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत समझने चाहिए। [५] इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक पर्यन्त-प्रत्येक के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्तक और अपर्याप्तक, इन चार-चार भेदों में स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल कहने चाहिए।

32. [1] The matter particles (pudgala) that are consciously transformed as underdeveloped bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as sense organ of touch (*sparshanendriya prayoga parinat*). [2] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as fully developed bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*paryaptak sukshma*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala) are also consciously transformed as sense organ of touch (*sparshanendriya prayoga parinat*). [3] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped bodies of gross one-sensed-earth-bodied beings (*aparyaptak baadar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) and those transformed as fully developed bodies of gross one-sensed-earth-bodied beings (*paryaptak baadar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) are also consciously transformed as sense organ of touch (*sparshanendriya prayoga parinat*). [5] In the same way all the aforesaid four classes (*sukshma, baadar, paryaptak and aparyaptak*) of one-sensed beings up to plant-bodied beings (*vanaspatikaaya*) should be stated to have been consciously transformed as sense organ of touch (*sparshanendriya prayoga parinat*).

३३. [१] जे अपज्जत्ता बेइंदियपयोगपरिणया ते जिब्भिंदिय–फासिंदियपयोगपरिणया। [२] जे पज्जत्ताबेइंदिया एवं चेव। [३] एवं जाव चउरिंदिया, नवरं एक्केक्कं इंदियं वड्ढेयव्वं।

३३. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे जिह्वेन्द्रिय एवं स्पर्शेन्द्रिय प्रयोग-परिणत हैं। [२] इसी प्रकार पर्याप्तक-द्वीन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल भी जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय प्रयोगपरिणत हैं। [३] इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों तक (पर्याप्तक और अपर्याप्तक दोनों में) कहना चाहिए। किन्तु एक-एक इन्द्रिय बढ़ानी चाहिए। (अर्थात्-त्रीन्द्रिय जीवों के स्पर्श-जिह्वा-घ्राणेन्द्रिय हैं और चतुरिन्द्रिय जीवों के स्पर्श-जिह्वा-घ्राण-चक्षुरिन्द्रिय प्रयोगपरिणत हैं।)

33. [1] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped bodies of two-sensed beings (*aparyaptak dvindriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as sense organs of taste and touch (*jihvendriya evam sparshanendriya prayoga parinat*). [2] In the same way the matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as fully developed bodies of two-sensed beings (*paryaptak dvindriya prayoga parinat pudgala*) are also consciously transformed as sense organs of taste and touch. [3] The same should be repeated with regard to other beings (fully and under developed) up to four-sensed beings. The difference is that one sense organ should added to the preceding one (touch, taste and smell for three-sensed beings and touch, taste, smell and vision for four-sensed beings).

३४. [१] जे अपज्जत्तारयणप्पभापुढविनेरइयपंचिंदियपयोगपरिणया ते सोइंदिय–चक्खिंदिय–घाणिंदिय–जिब्भिंदिय– फासिंदियपयोगपरिणया। [२] एवं पज्जत्तगा वि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

३४. [१] जो पुद्गल अपर्याप्त रत्नप्रभा (आदि) पृथ्वी नैरयिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे श्रोत्रेन्द्रिय-चक्षुरिन्द्रिय- घ्राणेन्द्रिय-जिह्वेन्द्रिय-स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोगपरिणत हैं। [२] इसी प्रकार पर्याप्तक (रत्नप्रभादिपृथ्वी नैरयिक-पंचेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत पुद्गल के विषय में भी पूर्ववत् (पंचेन्द्रियप्रयोगपरिणत) कहना चाहिए।

34. [1] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed infernal beings of Ratnaprabha and other hells (*aparyaptak Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as sense organs of hearing, seeing, smelling, taste and touch (*shrotrendriya, chakshurindriya, ghranendriya, jihvendriya evam sparshanendriya prayoga parinat*). [2] The same should be repeated with regard to matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as bodies of fully developed five-sensed infernal beings of Ratnaprabha and other hells (*aparyaptak Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala*). In other words they are also transformed as five sense organs.

३५. एवं सव्वे भाणियव्वा तिरिक्खजोणिय-मणुस्स-देवा, जे पज्जत्तासव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव परिणया ते सोइंदिय-चक्खिदिय जाव परिणया। दंडगा ४।

३५. पंचेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक, मनुष्य और देव, इन सबके विषय में भी इसी प्रकार कहना चाहिए; यावत् जो पुद्गल पर्याप्तसर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिककल्पतीतदेव-प्रयोग-परिणत हैं, वे सब श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं। **[चौथा दण्डक पूर्ण हुआ।]**

35. The same should also be repeated for matter related to five sensed animals, human and divine beings... and so on up to... The matter particles (*pudgala*) that are *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Vaimanik dev prayoga parinat pudgala* (consciously transformed as bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps*) all are, in fact, consciously transformed as sense organs of hearing, seeing... and so on up to... touch (*shrotrendriya, chakshurindriya*, ... and so on up to... *sparshanendriya prayoga parinat*). **[Fourth Dandak Concluded]**

पंचम दण्डक FIFTH DANDAK

(इस दण्डक में शरीर और इन्द्रिय इन दोनों की अपेक्षा से कथन है।)

[This section describes the aforesaid beings in context of both body types and sense organs.]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३६. [१] जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदियओरालिय-तेय-कम्मसरीरप्पयोगपरिणया ते फासिंदियपयोगपरिणया। जे पज्जत्तासुहुम० एवं चेव। [२] बादर० अपज्जत्ता एवं चेव। एवं पज्जत्तगा वि।

३६. [१] जो पुद्गल अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-तैजस-कार्मणशरीर प्रयोग-परिणत हैं, वे स्पर्शेन्द्रियप्रयोगपरिणत हैं। जो पुद्गल पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-तैजस-कार्मण-शरीर-प्रयोग-परिणत हैं, वे भी स्पर्शेन्द्रियप्रयोगपरिणत हैं। [२] अपर्याप्तबादरकायिक एवं पर्याप्तबादर पृथ्वीकायिक-औदारिकादि शरीर तीनों के विषय में भी इस प्रकार कहना चाहिए।

36. [1] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped gross physical, fiery and *karmic* bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as sense organ of touch (*sparshanendriya prayoga parinat*). The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as fully developed gross physical, fiery and *karmic* bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as sense organ of touch (*sparshanendriya prayoga parinat*). [2] The same should be repeated for underdeveloped and fully developed gross physical (etc.) bodies of gross earth-bodied beings.

३७. एवं एएणं अभिलावेणं जस्स जइ इंदियाणि सरीराणि य ताणि भाणियव्वाणि जाव जे पज्जत्तासव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदिय-वेउव्विय-तेया-कम्मासरीरपयोगपरिणया ते सोइंदिय-चक्खिंदिय जाव फासिंदियपयोगपरिणया। दंडगा ५।

३७. इस प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जिस जीव के जितनी इन्द्रियाँ और शरीर हों, उसके उतनी इन्द्रियों तथा उतने शरीरों का कथन करना चाहिए। यावत् जो पुद्गल पर्याप्तसर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीतदेव पंचेन्द्रिय-वैक्रिय-तैजस-कार्मणशरीर-प्रयोग-परिणत हैं, वे श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं। [पाँचवां दण्डक पूर्ण हुआ।]

37. In the same way the aforesaid statement should be repeated for all beings on the basis of the number of sense organs and body types it has... and so on up to... The matter particles (*pudgala*) that are *paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet dev panchendriya vaikriya-taijas-karman sharira prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as five sensed transmutable-fiery-karmic bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* divine beings

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

beyond the *Kalps*) all are, in fact, consciously transformed as sense organs of hearing, seeing... and so on up to... touch (*shrotrendriya, chakshurindriya*, ... and so on up to... *sparshanendriya prayoga parinat*). **[Fifth Dandak Concluded]**

छठा दण्डक **SIXTH DANDAK**

(इस दण्डक में वर्ण, गंध, रस, स्पर्श आदि संस्थान की अपेक्षा से कथन किया है।)

[This section describes the aforesaid beings in context of constitution including appearance (colour), smell, taste and touch.]

३८. [१] जे अपज्जत्तासुहुमपुढविकाइय–एगिंदियपयोगपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि, नील०, लोहिय०, हालिद्द०, सुक्किल०। गंधओ सुब्भिगंधपरिणया वि, दुब्भिगंधपरिणया वि। रसओ तित्तरसपरिणया वि, कडुयरसपरिणया वि, कसायरसपदि, अंबिलरसपदि, महुररसपदि। फासओ कक्खडफासपरि० जाव लुक्खफासपरि०। संठाणओ परिमंडलसंठाणपरिणया वि वट्ट० तंस० चउरंस० आययसंठाणपरिणया वि। [२] जे पज्जत्तासुहुमपुढविकाइया एवं चेव।

३८. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय–प्रयोग–परिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण, नीले, रक्त, पीत (हारिद्र) एवं श्वेतवर्ण रूप से परिणत हैं, गन्ध से सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध रूप से परिणत हैं, रस से तीखे, कटु, काषाय (कसैले), खट्टे और मीठे; इन पाँचों रसरूप में परिणत हैं, स्पर्श से कर्कशस्पर्श यावत् रूक्षस्पर्श के रूप में परिणत हैं और संस्थान से परिमण्डल, वृत्त (गोल), त्र्यंस (तिकोन), चतुरस्र (चौकोर) और आयत (लम्बा); इन पाँचों संस्थानों के रूप में परिणत हैं।

[२] जो पुद्गल पर्याप्तक–सूक्ष्म–पृथ्वीकायिक–एकेन्द्रिय–प्रयोग–परिणत हैं, उन्हें भी इसी प्रकार वर्ण–गन्ध–रस–स्पर्श–संस्थानरूप में परिणत जानना चाहिए।

38. [1] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed as attributes of five colours (black, blue, red, yellow, and white), two smells (good and bad), five tastes (bitter, pungent, astringent, sour and sweet), eight touches (hard, soft, heavy, light, cold, hot, smooth and coarse), and five constitutions (sphere, circle, triangle, square and rectangle).

[2] The matter particles (pudgala) that are consciously transformed as fully developed bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala*) are also consciously transformed as attributes of colour, taste, touch and constitution.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३९. एवं जहाऽऽणुपुव्वीए नेयव्वं जाव जे पज्जत्तासव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव परिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि जाव आयतसंठाणपरिणया वि। दंडगा ६।

३९. इसी प्रकार क्रमशः सभी (पूर्वोक्त) के विषय में जानना चाहिए। यावत् जो पुद्गल पर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक देवपंचेन्द्रिय-प्रयोगपरिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण रूप में यावत् संस्थान से आयत संस्थान तक परिणत हैं। [छठा दण्डक पूर्ण हुआ।]

39. All the remaining (aforesaid) follow the same pattern... and so on up to... The matter particles (*pudgala*) that are *paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet dev panchendriya prayoga parinat pudgala* (consciously transformed as five sensed bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* divine beings beyond the *Kalps*) all are, in fact, consciously transformed as attributes of colour, taste, touch and constitution. **[Sixth Dandak Concluded]**

सप्तम दण्डक SEVENTH DANDAK

(इस दण्डक में औदारिक आदि पाँच शरीर तथा वर्ण-गंध आदि के साथ कथन किया गया है।)

[This section describes the aforesaid beings in context of five types of bodies including *audarik* and constitution including appearance (colour), smell, taste and touch.]

४०. [१] जे अपज्जत्तासुहुमपुढविकाइय एगिंदियओरालिय-तेया-कम्मासरीरप्पओगपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिण्णया वि जाव आययसंठाणपरिण्णया वि। [२] जे पज्जत्तासुहुमपुढविकाइय एवं चेव।

४०. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-तैजस-कार्मणशरीर-प्रयोग परिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण के रूप में भी परिणत हैं, यावत् आयत-संस्थान-रूप में भी परिणत हैं। [२] इसी प्रकार पर्याप्तक-सूक्ष्म- पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-तैजस-कार्मणशरीर-प्रयोग-परिणत हैं, वे भी इसी तरह वर्णादि-परिणत हैं।

40. [1] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped gross physical, fiery and *karmic* bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman sharira prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed also as attributes of black colour... and so on up to... rectangular constitution. [2] In the same way the matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as fully developed gross physical, fiery and *karmic* bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

audarik-taijas-karman prayoga parinat pudgala) are also consciously transformed as attributes including colour.

४१. एवं जहाऽऽणुपुव्वीए नेयव्वं जस्स जइ सरीराणि जाव जे पज्जत्तासव्वट्ठसिद्ध–अणुत्तरोववाइयदेव–पंचिंदियवेउव्विय– तेया–कम्मासरीर जाव परिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि जाव आयतसंठाणपरिणया वि। दंडगा ७।

४१. इस प्रकार यथानुक्रम से (सभी जीवों के विषय में) जानना चाहिए। जिसके जितने शरीर हों, उतने कहने चाहिए; यावत् जो पुद्गल पर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध अनुत्तरौपपातिक देव-पंचेन्द्रिय-वैक्रिय-तैजस-कार्मण-शरीर प्रयोग परिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण के रूप में, यावत् संस्थान से आयतसंस्थानरूप में परिणत हैं। [**सातवां दण्डक पूर्ण हुआ।**]

41. All the remaining (aforesaid) follow the same pattern... and so on up to... The matter particles (*pudgala*) that are *paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet dev panchendriya vaikriya, taijas and karman sharira prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as five sensed transmutable, fiery and karmic bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* divine beings beyond the *Kalps*) all are, in fact, consciously transformed also as attributes of black colour... and so on up to... rectangular constitution. **[Seventh Dandak Concluded]**

अष्टम दण्डक EIGHTH DANDAK

(इस दण्डक में इन्द्रिय तथा वर्णादि के सम्बन्ध में कथन है।)

[This section describes the aforesaid beings in context of sense organs and constitution including colour.]

४२. [१] जे अपज्जत्ता सुहुमपुढविकाइयएगिंदिय–फासिंदियपयोग–परिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया जाव आययसंठाणपरिणया वि। [२] जे पज्जत्तासुहुमपुढवि० एवं चेव।

४२. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग-परिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण के रूप में परिणत हैं, यावत् संस्थान से आयत-संस्थान के रूप में परिणत हैं। [२] जो पुद्गल पर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग परिणत हैं, वे भी इसी प्रकार जानने चाहिए।

42. [1] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped sense organ of touch of bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya sparshanendriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed also as attributes of black colour... and so on up

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

to... rectangular constitution. [2] The same is true for matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as fully developed sense organ of touch of bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (*paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya sparshanendriya prayoga parinat pudgala*).

४३. एवं जहाऽऽणुपुव्वीए जस्स जइ इंदियाणि तस्स तइ भाणियव्वाणि जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियसोइंदिय जाव फासिंदियपयोगपरिणया वि ते वण्णओ कालवण्णपरिणया जाव आययसंठाणपरिणया वि। दंडगा ८।

४३. इसी प्रकार अनुक्रम से सभी आलापक कहने चाहिए। विशेष यह कि जिसके जितनी इन्द्रियाँ हों उतनी कहनी चाहिए। यावत् जो पुद्गल पर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक देव-पंचेन्द्रिय-श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोगपरिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण के रूप में, यावत् संस्थान से आयत संस्थान के रूप में परिणत हैं। **[आठवाँ दण्डक पूर्ण हुआ।]**

43. All the remaining (aforesaid) follow the same pattern on the basis of the number of sense organs it has... and so on up to... The matter particles (*pudgala*) that are *paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik dev panchendriya* (*shrotrendriya* to *sparshanendriya*) *prayoga parinat pudgala* [matter consciously transformed as five sensed (hearing to touching) bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* divine beings beyond the *Kalps*] are, in fact, consciously transformed also as attributes of black colour... and so on up to... rectangular constitution. **[Eighth Dandak Concluded]**

नौवाँ दण्डक NINTH DANDAK

(इस दण्डक में शरीर, इन्द्रिय तथा वर्णादि की अपेक्षा से कथन है।)

[This section describes the aforesaid beings in context of body-types, sense organs and constitution including colour.]

४४. [१] जे अपज्जत्तासुहुमपुढविकाइय-एगिंदियओरालिय-तेया-कम्मासरीरफासिंदियपयोग-परिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि जाव आयतसंठाणपरिणया वि। [२] जे पज्जत्तासुहुमपुढविकाइया एवं चेव।

४४. [१] जो पुद्गल अपर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-तैजस-कार्मणशरीर-स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोग- परिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण के रूप में भी परिणत हैं, यावत् संस्थान से आयत-संस्थान के रूप में परिणत हैं। [२] जो पुद्गल पर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-तैजस-कार्मणशरीर-स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोगपरिणत हैं, वे भी इसी तरह (पूर्ववत्) जानने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

44. [1] The matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as underdeveloped gross physical, fiery and *karmic* bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings with sense organ of touch (*aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman sharira sparshanendriya prayoga parinat pudgala*) are, in fact, consciously transformed also as attributes of black colour... and so on up to... rectangular constitution. [2] The same is true for the matter particles (*pudgala*) that are consciously transformed as fully developed gross physical, fiery and *karmic* bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings with sense organ of touch (*paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman sharira sparshanendriya prayoga parinat pudgala*).

४५. एवं जहाऽऽणुपुव्वीए जस्स जइ सरीराणि इंदियाणि य तस्स तइ भाणियव्वाणि जाव जे पज्जत्ता सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइया जाव देवपंचिंदिय-वेउव्विय-तेया-कम्मासोइंदिय जाव फासिंदिय-पयोगपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया जाव आययसंठाणपरिणया वि। एवं एए नव दंडगा ९।

४५. इसी प्रकार अनुक्रम से सभी आलापक कहने चाहिए। विशेषतया जिसके जितने शरीर और इन्द्रियाँ हों, उसके उतने शरीर और उतनी इन्द्रियों का कथन करना चाहिए; यावत् जो पुद्गल पर्याप्तकसर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिकदेव-पंचेन्द्रिय-वैक्रिय-तैजस-कार्मण-शरीर तथा श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शेन्द्रिय-प्रयोगपरिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण के रूप में यावत् संस्थान से आयत संस्थान के रूपों में परिणत हैं। इस प्रकार ये नौ दण्डक पूर्ण हुए।

45. All the remaining (aforesaid) follow the same pattern on the basis of the number of body-types and sense organs it has... and so on up to... The matter particles (*pudgala*) that are *paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik dev panchendriya vaikriya-taijas-karman sharira and shrotrendriya to sparshanendriya prayoga parinat pudgala* (matter consciously transformed as five sensed transmutable-fiery-*karmic* bodies of *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* divine beings beyond the *Kalps* with sense organs of hearing to touching) are, in fact, consciously transformed also as attributes of black colour... and so on up to... rectangular constitution. **[All Nine Dandaks Concluded]**

मिश्रपरिणत-पुद्गलों के नौ दण्डक JOINT TRANSFORMATION IN LIGHT OF NINE DANDAKS

४६. [प्र.] मीसापरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा—एगिंदियमीसापरिणया जाव पंचिंदियमीसापरिणया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४६. [प्र.] भगवन् ! मिश्रपरिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! पाँच प्रकार के हैं। यथा–एकेन्द्रिय–मिश्रपरिणत पुद्गल यावत् पंचेन्द्रियमिश्रपरिणत पुद्गल।

46. [Q.] *Bhante* ! How many types of *mishra parinat pudgala* (jointly transformed matter) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of five types—*Ekendriya mishra parinat pudgala* (matter jointly transformed or bodies of one-sensed beings)... and so on up to... *panchendriya mishra parinat pudgala* (matter jointly transformed as bodies of five-sensed beings).

४७. [प्र.] एगिंदियमीसापरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

[उ.] गोयमा ! एवं जहा पओगपरिणएहिं नव दंडगा भणिया एवं मीसापरिणएहि वि नव दंडगा भाणियव्वा, तहेव सव्वं निरवसेसं, नवरं अभिलावो 'मीसापरिणया' भाणियव्वं, सेसं तं चेव, जाव जे पज्जत्तासव्वट्ठसिद्धअणुत्तरो० जाव आययसंठाणपरिणया वि।

४७. [प्र.] भगवन् ! एकेन्द्रिय मिश्रपरिणत पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार प्रयोगपरिणत पुद्गलों के विषय में नौ दण्डक कहे हैं, उसी प्रकार मिश्र–परिणत पुद्गलों के विषय में भी नौ दण्डक कहने चाहिए; और सारा वर्णन उसी प्रकार करना चाहिए। विशेषता यह है कि प्रयोग–परिणत के स्थान पर मिश्र–परिणत कहना चाहिए। शेष समस्त वर्णन पूर्ववत् करना चाहिए; यावत् जो पुद्गल पर्याप्त–सर्वार्थसिद्ध–अनुत्तरौपपातिक हैं, वे यावत् आयत–संस्थानरूप से भी परिणत हैं।

47. [Q.] *Bhante* ! How many types of *ekendriya mishra parinat pudgala* (matter jointly transformed as bodies of one-sensed beings) are there ?

[Ans.] Gautam ! Like nine aforesaid sections about consciously transformed matter, nine sections about jointly transformed matter should be stated following the same pattern. The only difference being that instead of 'consciously transformed matter' 'jointly transformed matter' should be stated. All the remaining text is to be repeated as aforesaid up to—The matter particles (pudgala) that are *paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik*... and so on up to... transformed also as attributes of rectangular constitution.

विस्रसापरिणत पुद्गलों के भेद–प्रभेद TYPES OF NATURAL TRANSFORMATION

४८. [प्र.] वीससापरिणया णं भंते ! पोग्गला कइविहा पण्णत्ता ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा–वण्णपरिणया गंधपरिणया रसपरिणया फासपरिणया संठाणपरिणया। जे वण्णपरिणया ते पंचविहा पण्णत्ता, तं जहा–कालवण्णपरिणया जाव सुक्किल्लवण्णपरिणया। जे गंधपरिणया ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–सुब्भिगंधपरिणया वि, दुब्भिगंधपरिणया वि। एवं जहा पण्णवणाए तहेव निरवसेसं जाव जे संठाणओ आयतसंठाणपरिणया ते वण्णओ कालवण्णपरिणया वि जाव लुक्खफासपरिणया वि।

४८. [प्र.] भगवन् ! विस्रसा-परिणत (स्वभाव से परिणाम को प्राप्त) पुद्गल कितने प्रकार के हैं ?

[उ.] गौतम ! पाँच प्रकार के हैं। वे इस प्रकार हैं–(१) वर्णपरिणत, (२) गन्धपरिणत, (३) रसपरिणत, (४) स्पर्शपरिणत, और (५) संस्थानपरिणत। जो पुद्गल वर्ण-परिणत हैं, वे पाँच प्रकार के हैं। यथा–काले वर्ण के रूप में परिणत यावत् शुक्ल वर्ण के रूप में परिणत पुद्गल। जो गन्धपरिणत पुद्गल हैं, वे दो प्रकार के हैं। यथा–सुरभिगन्धपरिणत और दुरभिगन्धपरिणत पुद्गल। इस प्रकार आगे का सारा वर्णन प्रज्ञापनासूत्र के प्रथम पद के अनुसार यहाँ भी करना चाहिए; यावत् जो पुद्गल संस्थान से आयत-संस्थान-परिणत हैं, वे वर्ण से काले वर्ण के रूप में भी परिणत हैं, यावत् (स्पर्श से) रूक्ष-स्पर्शरूप में भी परिणत हैं।

48. [Q.] *Bhante* ! How many types of *visrasa parinat pudgala* (naturally transformed matter) are there ?

[Ans.] Gautam ! They are of five types—(1) *varna parinat* (transformed as attributes of colour), (2) *gandh parinat* (transformed as attributes of smell), (3) *rasa parinat* (transformed as attributes of taste), (4) *sparsh parinat* (transformed as attributes of touch), and (5) *samsthan parinat* (transformed as attributes of constitution). The *varna parinat pudgala* are of five types—transformed as black colour... and so on up to... transformed as white colour. The *gandh parinat pudgala* are of two types—good smell and bad smell. In the same way all the following matter is to be repeated here as mentioned in the first chapter of *Prajnapana Sutra*... and so on up to... the matter that is transformed as rectangular constitution is also transformed as black colour... and so on up to... rough touch.

एक द्रव्य के परिणमन की प्ररूपणा TRANSFORMATION OF ONE SUBSTANCE

४९. [प्र.] एगे भंते ! दव्वे किं पयोगपरिणए ? मीसापरिणए ? वीससापरिणए ?

[उ.] गोयमा ! पयोगपरिणए वा, मीसापरिणए वा, वीससापरिणए वा।

४९. [प्र.] भगवन् ! एक द्रव्य क्या प्रयोग-परिणत होता है, मिश्रपरिणत होता है अथवा विस्रसा-परिणत होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! एक द्रव्य, प्रयोग-परिणत होता है अथवा मिश्रपरिणत होता है, अथवा विस्रसा-परिणत होता है।

49. [Q.] *Bhante* ! Is a single substance *prayoga parinat* (consciously transformed), *mishra parinat* (jointly transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed) ?

[Ans.] Gautam ! A single substance could be *prayoga parinat* (consciously transformed), or *mishra parinat* (jointly transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed).

५०. [प्र.] जइ पयोगपरिणए किं मणप्पयोगपरिणए, वइप्पयोगपरिणए, कायप्पयोगपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! मणप्पयोगपरिणए वा, वइप्पयोगपरिणए वा, कायप्पयोगपरिणए वा।

५०. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य प्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह मनःप्रयोगपरिणत होता है, वचन-प्रयोग-परिणत होता है अथवा कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह मनःप्रयोगपरिणत होता है या वचन-प्रयोग-परिणत होता है अथवा कायप्रयोगपरिणत होता है।

50. [Q.] *Bhante* ! If a substance is *prayoga parinat* (consciously transformed), then is it transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) or conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), or conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) or conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*).

५१. [प्र.] जइ मणप्पयगपरिणए किं सच्चमणप्पओगपरिणए ? मोसमणप्पयोगपरिणए ? सच्चामोसमणप्पयोगपरिणए ? असच्चामोसमणप्पयोगपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! सच्चमणप्पयोगपरिणए वा, मोसमणप्पयोग० वा, सच्चामोसमणप्प०, असच्चामोसमणप्प० वा।

५१. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य मनःप्रयोग-परिणत होता है तो क्या वह सत्यमन-प्रयोग-परिणत होता है, अथवा मृषा-मनःप्रयोगपरिणत होता है, या सत्य-मृषा-मनः प्रयोग-परिणत होता है, या असत्यामृषा-मनःप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है, अथवा मृषामनःप्रयोगपरिणत होता है, या सत्य-मृषामनःप्रयोगपरिणत होता है या फिर असत्यामृषामनःप्रयोग-परिणत होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

51. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), then is it transformed due to truthful conscious activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*), conscious untruthful activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*), truthful-untruthful conscious activity of mind (*satya-mrisha manah-prayoga parinat*), or non-truthful-non-untruthful conscious activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to truthful conscious activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*), or untruthful conscious activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*), or truthful-untruthful conscious activity of mind (*satya-mrisha manah-prayoga parinat*), or non-truthful-non-untruthful conscious activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*).

५२. [प्र.] जइ सच्चमणप्पओगपरिणए किं आरंभसच्चमणप्पओगपरिणए ? अणारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए ? सारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए ? असारंभसच्चमण० ? समारंभसच्चमणप्पयोगपरि० ? असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! आरंभसच्चमणप्पओगपरिणए वा जाव असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणए वा।

५२. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, सत्यमनःप्रयोग-परिणत होता है तो क्या वह आरम्भ-सत्यमनःप्रयोग-परिणत होता है, अनारम्भ-सत्यमनःप्रयोग-परिणत होता है, सारम्भ-सत्यमनः प्रयोग-परिणत होता है, असारम्भ-सत्यमनःप्रयोग-परिणत होता है, समारम्भ-सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है अथवा असमारम्भ-सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह आरम्भ-सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है, अथवा यावत् असमारम्भ-सत्यमनः प्रयोगपरिणत होता है।

52. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to truthful conscious activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*), then is it transformed due to truthful sinning conscious activity of mind (*aarambh satya manah-prayoga parinat*), truthful conscious activity of mind to resolve to sin (*samrambh satya manah-prayoga parinat*), truthful tormenting conscious activity of mind (*samaarambh satya manah-prayoga parinat*), truthful non-sinning conscious activity of mind (*anaarambh satya manah-prayoga parinat*), truthful conscious activity of mind not to resolve to sin (*asamrambh satya manah-prayoga parinat*), or truthful non-tormenting conscious activity of mind (*asamaarambh satya manah-prayoga parinat*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to truthful sinning conscious activity of mind (*aarambh satya manah-prayoga parinat*), or... and so on up to... untruthful non-tormenting conscious activity of mind (*asamaarambh satya manah-prayoga parinat*).

५३. [प्र. १] जइ मोसमणप्पयोगपरिणए किं आरंभमोसमणप्पयोगपरिणए वा ?

[उ.] एवं जहा सच्चेणं तहा मोसेण वि। [२] एवं सच्चामोसमणप्पयोगपरिणए वि। एवं असच्चामोसमणप्पयोगेण वि।

५३. [प्र. १] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, मृषामनःप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह आरम्भ-मृषामनःप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् असमारम्भ-मृषामनःप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार (पूर्वोक्त विशेषणयुक्त) सत्यमनःप्रयोग-परिणत के विषय में कहा है, उसी प्रकार (पूर्वोक्त विशेषणयुक्त) मृषामनःप्रयोग-परिणत के विषय में भी कहना चाहिए। [२] इसी प्रकार (पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त) सत्यमृषा-मनःप्रयोग-परिणत के विषय में भी तथा इसी प्रकार असत्य-मृषामनःप्रयोग-परिणत के विषय में भी कहना चाहिए।

53. [Q. 1] *Bhante* ! If a substance is transformed due to untruthful conscious activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*), then is it transformed due to untruthful sinning conscious activity of mind (*aarambh mrisha manah-prayoga parinat*), ... and so on up to... or untruthful non-tormenting conscious activity of mind (*asamaarambh mrisha manah-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said with regard to truthful conscious activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*) should also be repeated with regard to untruthful conscious activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*). [2] The same pattern holds good for truthful-untruthful conscious activity of mind (*satya-mrisha manah-prayoga parinat*), and non-truthful-non-untruthful conscious activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*).

५४. [प्र.] जइ वइप्पयोगपरिणए किं सच्चवइप्पयोगपरिणए मोसवयप्पयोगपरिणए ?

[उ.] एवं जहा मणप्पयोगपरिणए तहा वयप्पयोगपरिणए वि जाव असमारंभवयप्पयोगपरिणए वा।

५४. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, वचनप्रयोग-परिणत होता है तो, क्या वह सत्यवचन-प्रयोग-परिणत होता है, मृषावचन-प्रयोग-परिणत होता है, सत्यमृषा-वचन-प्रयोग-परिणत होता है अथवा असत्यामृषा-वचन-प्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार मनःप्रयोगपरिणत के विषय में कहा है, उसी प्रकार वचन-प्रयोग-परिणत के विषय में भी कहना चाहिए; यावत् वह असमारम्भ-वचन-प्रयोग-परिणत भी होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

54. [**Q.**] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*), then is it transformed due to truthful conscious activity of speech (*satya vachan-prayoga parinat*), untruthful conscious activity of speech (*mrisha vachan-prayoga parinat*), truthful-untruthful conscious activity of speech (*satya-mrisha vachan-prayoga parinat*), or non-truthful-non-untruthful conscious activity of speech (*asatya-amrisha vachan-prayoga parinat*) ?

[**Ans.**] Gautam ! What has been said with regard to transformation due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*) should also be repeated with regard to transformation due to conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*)... and so on up to... transformed due to untruthful non-tormenting conscious activity of speech (*asamaarambh satya vachan-prayoga parinat*).

विवेचन : प्रयोग की परिभाषा—मन, वचन और काया के व्यापार को 'योग' कहते हैं अथवा वीर्यान्तरायकर्म के क्षय या क्षयोपशम से मनोवर्गणा, वचनवर्गणा और कायवर्गणा के पुद्गलों का आलम्बन लेकर आत्मप्रदेशों में होने वाले परिस्पन्दन (कम्पन या हलचल) को भी योग कहा जाता है, इसी योग को यहाँ 'प्रयोग' कहा गया है।

प्रयोग-परिणत : तीनों योगों द्वारा—काययोग द्वारा मनोवर्गणा के द्रव्यों को ग्रहण करके मनोयोग द्वारा मनोरूप से परिणमाए हुए पुद्गल **'मनःप्रयोगपरिणत'** कहलाते हैं। काययोग द्वारा भाषाद्रव्य को ग्रहण करके वचनयोग द्वारा भाषारूप में परिणत करके बाहर निकाले जाने वाले पुद्गल **'वचन-प्रयोग-परिणत'** कहलाते हैं। औदारिक आदि काययोग द्वारा ग्रहण किये हुए औदारिकादि वर्गणाद्रव्यों को औदारिकादि शरीररूप में परिणमाए हों, उन्हें **'कायप्रयोगपरिणत'** कहते हैं।

योगों के भेद-प्रभेद और उनका स्वरूप—आलम्बन के भेद से प्रयोग के तीन भेद हैं—मनोयोग, वचनयोग और काययोग। ये ही मुख्य तीन योग हैं। फिर इनके अवान्तर भेद क्रमशः ४ मनोयोग के, ४ वचनयोग के और ७ काययोग के हैं।

आरम्भ, संरम्भ और समारम्भ का स्वरूप—जीवों की हिंसा 'आरम्भ' है, हिंसा के लिए मानसिक संकल्प करना संरम्भ (सारम्भ) है। जीवों को परिताप पहुँचाना समारम्भ है। जीवहिंसा के अभाव को अनारम्भ कहते हैं। हिंसा में मनःप्रयोग द्वारा परिणत पुद्गल मनःप्रयोग-परिणत कहलाते हैं। इसी तरह सभी का स्वरूप समझना चाहिए।

Elaboration—Prayoga—Activities associated with mind, speech and body are called *yoga*. The vibration in the soul space-points (*atmapradesh*) taking effect due to association of *karmic* particles of mental category (*manovargana*), vocal category (*vachan-vargana*) and physical category (*kaayavargana*) triggered by destruction or destruction-cum-pacification of *Viryantaraya* (potency hindering) *karma* is also called *yoga*. Here this latter activity is taken as *prayoga*.

Transformation due to conscious activity through three associations (*yoga*)—The matter particles (*pudgala*) of the mental category

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*manovargana*) acquired through physical activity (*kaaya yoga*) and transformed into thoughts through mental activity (*manoyoga*) are called *manah-prayoga parinat* matter particles. The matter particles (*pudgala*) of the speech category (*bhashavargana*) acquired through physical activity (*kaaya yoga*) and transformed into speech through speech activity (*vachan yoga*) are called *vachan-prayoga parinat* matter particles. The matter particles (*pudgala*) of the physical categories (*kaayavargana*) including gross physical (*audarik*) acquired through physical activity (*kaaya yoga*) and transformed into bodies including gross physical are called *kaaya-prayoga parinat* matter particles.

Yoga—With reference to association *prayoga* (activity) has three main categories—mental activity (*manoyoga*), vocal activity (*vachan yoga*) and physical activity (*kaayayoga*). They have various sub-categories as aforesaid—four of mental activity (*manoyoga*), four of vocal activity (*vachan yoga*) and seven of physical activity (*kaayayoga*).

Arambh (etc.)—To indulge in sinful activity that harms or kills some living being is *aarambh*. To think and resolve to indulge in sinful activity is *samrambh*. To torment or torture living beings is *samaarambh*. The opposite of *aarambh* or not to harm beings is *anaarambh*. Matter particles including the minute *karmic* particles transformed due to conscious activity of mind are called *manah-prayoga parinat pudgala*. Other terms related to transformation follow the same pattern.

कायप्रयोग-परिणत TRANSFORMATION DUE TO CONSCIOUS PHYSICAL ACTIVITY

५५. [प्र.] जइ कायप्पयोगपरिणए किं ओरालियसरीर-कायप्पयोगपरिणए १, ओरालियमीसासरीर-कायप्पयोगपरिणए २, वेउव्वियसरीर-कायप्पयोगपरिणए ३, वेउव्वियमीसासरीर-कायप्पयोगपरिणए ४, आहारगसरीर-कायप्पओगपरिणए ५, आहारकमीसासरीर-कायप्पयोगपरिणए ६, कम्मासरीर-कायप्पओगपरिणए ७ ?

[उ.] गोयमा ! ओरालियसरीर-कायप्पओगपरिणए वा जाव कम्मासरीरकायप्पओगपरिणए वा।

५५. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह औदारिक शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, औदारिकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, वैक्रियमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, आहारकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, आहारकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है अथवा कार्मणशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह एक द्रव्य, औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् वह कार्मणशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

55. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body (*audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), gross-cum-mixed physical body (*audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*), transmutable body (*vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*), transmutable-cum-mixed body (*vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*), telemigratory body (*ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat*), telemigratory-cum-mixed body (*ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*), or karmic body (*karman sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... *karmic* body (*karman sharira kaaya-prayoga parinat*).

५६. [प्र.] जइ ओरालियसरीर-कायप्पओगपरिणए किं एगिंदियओरालियसरीर-कायप्पओगपरिणए एवं जाव पंचिंदियओरालिय जाव परिणए ?

[उ.] गोयमा ! एगिंदियओरालियसरीर-कायप्पओगपरिणए वा बेइंदिय जाव परिणए वा जाव पंचिंदिय जाव परिणए वा।

५६. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, औदारिकशरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है, या द्वीन्द्रिय-औदारिक-शरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है अथवा यावत् पंचेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह एक द्रव्य, एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है, या द्वीन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् पञ्चेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

56. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body (*audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of one-sensed being (*ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of two-sensed being (*dvindriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... gross physical body of five-sensed being (*panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of gross physical body of one-sensed being (*ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of two-sensed being (*dvindriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... gross physical body of five-sensed being (*panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५७. [प्र.] जइ एगिंदियओरालियसरीर-कायप्पओगपरिणए किं पुढविक्काइयएगिंदिय जाव परिणए जाव वणस्सइकाइयएगिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए वा ?

[उ.] गोयमा ! पुढविक्काइयएगिंदिय जाव पयोगपरिणए वा जाव वणस्सइकाइयएगिंदिय जाव परिणए वा।

५७. [प्र.] भगवन् ! जो एक द्रव्य, एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है; क्या वह पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् वह वनस्पतिकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] हे गौतम ! वह पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् वनस्पतिकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

57. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body of one-sensed being (*ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of earth-bodied one-sensed being (*prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... gross physical body of plant-bodied one-sensed being (*vanaspatikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of gross physical body of earth-bodied one-sensed being (*prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... gross physical body of plant-bodied one-sensed being (*vanaspatikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*).

५८. [प्र.] जइ पुढविकाइयएगिंदियओरालियसरीर जाव परिणए किं सुहुमपुढविकाइय जाव परिणए, बादरपुढविक्काइयएगिंदिय जाव परिणए ?

[उ.] गोयमा ! सुहुमपुढविक्काइयएगिंदिय जाव परिणए वा, बादरपुढविक्काइय जाव परिणए वा।

५८. [प्र.] भगवन् ! यदि वह एक द्रव्य, पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा बादरपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है अथवा बादरपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

58. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body of earth-bodied one-sensed being

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of minute earth-bodied one-sensed being (*sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of gross earth-bodied one-sensed being (*baadar-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of gross physical body of minute earth-bodied one-sensed being (*sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of gross earth-bodied one-sensed being (*baadar-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*).

५९. [प्र. १] जइ सुहुमपुढविकाइय जाव परिणए किं पज्जत्तसुहुमपुढवि जाव परिणए ? अपज्जत्तसुहुमपुढवी जाव परिणए ?

[उ.] गोयमा ! पज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणए वा, अपज्जत्तसुहुमपुढविकाइय जाव परिणए वा। [२] एवं बादरा वि। [३] एवं जाव वणस्सइकाइयाणं चउक्कओ भेदो।

५९. [प्र. १] भगवन् ! यदि एक द्रव्य सूक्ष्मपृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है तो क्या वह पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! यह पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, या वह अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-कायप्रयोग-परिणत भी होता है। [२] इसी प्रकार बादर-पृथ्वीकायिक (-एकेन्द्रिय-औदारिक-शरीर-काय-प्रयोग-परिणत एक द्रव्य) के विषय में भी (पर्याप्त-अपर्याप्त-प्रकार) समझ लेना चाहिए। [३] इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक तक सभी के चार-चार भेद (सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त) के विषय में (पूर्ववत्) कथन करना चाहिए।

59. [Q. 1] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body of minute earth-bodied one-sensed being (*sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of fully developed minute earth-bodied one-sensed being (*paryaptak sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of underdeveloped minute earth-bodied one-sensed being (*aparyaptak sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of gross physical body of fully developed minute earth-bodied one-sensed being (*paryaptak sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of underdeveloped minute earth-bodied one-sensed being (*aparyaptak sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*). **[2]** The same holds good for gross physical body of gross earth-bodied one-sensed being (*baadar-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*). **[3]** The same should also be repeated for four categories (minute, gross, fully developed and underdeveloped) each of all beings up to plant-bodied one-sensed beings.

६०. बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियाणं दुयओ भेदो-पज्जत्तगा य, अपज्जत्तगा य।

६०. इसी प्रकार द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय के दो-दो भेद-पर्याप्तक और अपर्याप्तक (से सम्बन्धित औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत एक द्रव्य) के विषय में कहना चाहिए।

60. The same should also be repeated for two categories (fully developed and underdeveloped) each of two-sensed, three-sensed, and four-sensed beings.

६१. [प्र.] जइ पंचिंदियओरालियसरीरकायप्पओगपरिणए किं तिरिक्खजोणियपंचिंदियओरालिय-सरीरकायप्पओगपरिणए, मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए ?

[उ.] गोयमा ! तिरिक्खजोणिय जाव परिणए वा, मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए वा।

६१. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोगपरिणत होता है, अथवा मनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर- कायप्रयोगपरिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! या तो वह तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा वह मनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

61. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed being (*panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed animal (*tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of five-sensed human being (*manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of gross physical body of five-sensed animal (*tiryanch-yonik*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat) or gross physical body of five-sensed human being (*manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*).

६२. [प्र.] जइ तिरिक्खजोणिय जाव परिणए किं जलचरतिरिक्खजोणिय जाव परिणए वा, थलचर, खहयर जाव परिणए वा ?

[उ.] एवं चउक्कओ भेदो जाव खहयराणं।

६२. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है तो क्या वह जलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-काय-प्रयोग-परिणत होता है, स्थलचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-काय-प्रयोगपरिणत होता है, अथवा खेचर-तिर्यञ्चयोनिक-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह जलचर, स्थलचर और खेचर; तीनों प्रकार के तिर्यञ्चपंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग से परिणत होता है, अतः यावत् खेचरों तक पूर्ववत् प्रत्येक के चार-चार भेदों (सम्मूर्च्छिम, गर्भज, पर्याप्तक और अपर्याप्तक) (के औदारिकशरीर कायप्रयोग-परिणत) के विषय में कहना चाहिए।

62. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed animal (*tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed aquatic animal (*jalachar tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), gross physical body of five-sensed terrestrial animal (*sthalachar tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), or gross physical body of five-sensed aerial animal (*khechar tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed due to conscious activity of gross physical body of any of the three, aquatic, terrestrial or aerial five-sensed animals (*jalachar, sthalachar, khechar tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*). Therefore repeat four statements each for four categories (regarding *sammurchhim*, *garbhaj*, *paryaptak*, and *aparyaptak*) of each of these (*audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) as aforesaid.

६३. [प्र.] जइ मणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए किं सम्मुच्छिममणुस्सपंचिंदिय जाव परिणए, गब्भवक्कंतियमणुस्स जाव परिणए ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! दोसु वि।

६३. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, मनुष्यपंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह सम्मूर्च्छिममनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा गर्भजमनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर- कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह दोनों प्रकार के (सम्मूर्च्छिम अथवा गर्भज) मनुष्यों के औदारिकशरीर-कायप्रयोग से परिणत होता है।

63. [**Q.**] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed human being (*manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed human being of asexual origin (*sammurchhim manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of five-sensed human being born out of womb (*garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[**Ans.**] Gautam ! It could be transformed due to conscious activity of gross physical body of any of the two (asexual origin or born out of womb).

६४. [प्र.] जइ गब्भवक्कंतियमणुस्स जाव परिणए किं पज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए, अपज्जत्तगब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदियओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! पज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए वा, अपज्जत्तगब्भवक्कंतिय जाव परिणए।१।

६४. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, गर्भजमनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है तो क्या वह पर्याप्त-गर्भजमनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा अपर्याप्त-गर्भज-मनुष्य-पंचेन्द्रिय- औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह पर्याप्त-गर्भजमनुष्य-पंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा अपर्याप्त-गर्भजमनुष्यपंचेन्द्रिय-औदारिकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

64. [**Q.**] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed human being born out of womb (*garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross physical body of fully developed five-sensed human being born out of womb (*paryaptak garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of underdeveloped five-sensed human being born out of womb (*aparyaptak garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! It could be transformed due to conscious activity of either gross physical body of fully developed five-sensed human being born out of womb (*paryaptak garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross physical body of underdeveloped five-sensed human being born out of womb (*aparyaptak garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat*).

६५. [प्र.] जइ ओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए किं एगिंदियओरालियमीसासरीर-कायप्पओगपरिणए ? बेइंदिय जाव परिणए जाव पंचेंदियओरालिय जाव परिणए ?

[उ.] गोयमा ! एगिंदियओरालिय एवं जहा ओरालियसरीरकायप्पयोगपरिणएणं आलावगो भणिओ तहा ओरालियमीसासरीरकायप्पओगपरिणएण वि आलावगो भाणियव्वो। नवरं बायरवाउक्काइय-गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणिय-गब्भवक्कंतियमणुस्साण य एएसि णं पज्जत्तापज्जत्तगाणं, सेसाणं अपज्जत्तगाणं।२।

६५. [प्र.] यदि एक द्रव्य, औदारिकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह एकेन्द्रिय-औदारिकमिश्र-शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, द्वीन्द्रिय-औदारिकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रिय-औदारिक-मिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह एकेन्द्रिय-औदारिकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा द्वीन्द्रिय-औदारिकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रिय-औदारिकमिश्र-शरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है। जिस प्रकार पहले औदारिकशरीर-कायप्रयोगपरिणत के आलापक कहे हैं, उसी प्रकार औदारिकमिश्र-कायप्रयोग-परिणत के भी आलापक कहने चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि बादरवायुकायिक, गर्भज पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चयोनिक और गर्भज मनुष्यों के पर्याप्तक और अपर्याप्तक के विषय में और शेष सभी जीवों के अपर्याप्तक के विषय में कहना चाहिए।

65. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of gross-cum-mixed physical body (*audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of gross-cum-mixed physical body of one-sensed being (*ekendriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross-cum-mixed physical body of two-sensed being (*dvindriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... gross-cum-mixed physical body of five-sensed being (*panchendriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of gross-cum-mixed physical body of one-sensed being (*ekendriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) or gross-cum-mixed

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

physical body of two-sensed being (*dvindriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... gross-cum-mixed physical body of five-sensed being (*panchendriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*). Like the aforesaid statements about transformation due to conscious activity of gross physical body (*audarik sharira kaaya-prayoga parinat*), statements about gross-cum-mixed physical body (*audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) should also be mentioned. The difference being fully developed and underdeveloped states should be included for gross air-bodied, five sensed animals and humans born out of womb. Regarding all other beings only the underdeveloped state should be included.

६६. [प्र.] जइ वेउव्वियसरीरकायप्पयोगपरिणए किं एगिंदियवेउव्वियसरीरकायप्पओगपरिणए जाव पंचिंदियवेउव्वियसरीर जाव परिणए ?

[उ.] गोयमा ! एगिंदिय जाव परिणए वा पंचिंदिय जाव परिणए।

६६. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, वैक्रियशरीर-कायप्रयोगपरिणत होता है तो क्या वह एकेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग प्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह, एकेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोगपरिणत होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

66. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of transmutable body (*vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of transmutable body of one-sensed being (*ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... transmutable body of five-sensed being (*panchendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of transmutable body of one-sensed being (*ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*) or and so on up to... transmutable body of five-sensed being (*panchendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*).

६७. [प्र.] जइ एगिंदिय जाव परिणए किं वाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए, अवाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए ?

[उ.] गोयमा ! वाउक्काइयएगिंदिय जाव परिणए, नो अवाउक्काइय जाव परिणए। एवं एएणं अभिलावेणं जहा ओगाहणसंठाणे वेउव्वियसरीरं भणियं तहा इह वि भाणियव्वं जाव

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयकप्पाइयवेमाणिय- देवपंचिंदियवेउव्वियसरीरकायप्पओगपरिणए वा, अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्ध जाव कायप्पयोगपरिणए वा।३।

६७. [प्र.] भगवन् ! यदि वह एक द्रव्य, एकेन्द्रियवैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह वायुकायिक-एकेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा अवायुकायिक (वायुकायिक जीवों के अतिरिक्त) एकेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह एक द्रव्य, वायुकायिक-एकेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, किन्तु अवायुकायिक-एकेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत नहीं होता। (क्योंकि वायुकाय के सिवाय अन्य किसी एकेन्द्रिय में वैक्रियशरीर नहीं होता।) इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा प्रज्ञापनासूत्र के 'अवगाहना संस्थान' नामक इक्कीसवें पद में वैक्रियशरीर (-कायप्रयोग-परिणत) के विषय में जैसा कहा है, (उसी के अनुसार) यहाँ भी कहना चाहिए; यावत् पर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक-कल्पातीत-वैमानिकदेव-पंचेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा वह अपर्याप्तक-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक-कल्पातीत-वैमानिकदेव-पंचेन्द्रिय-वैक्रियशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है।

67. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of transmutable body of one-sensed being (*ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of transmutable body of one-sensed air-bodied being (*vayukaayik ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*) or transmutable body of other than air-bodied one-sensed being (*avayukaayik ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It is transformed due to conscious activity of transmutable body of one-sensed air-bodied being (*vayukaayik ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*) and not transmutable body of other than air-bodied one-sensed being (*avayukaayik ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat*). (This is because other than air-bodied beings no one-sensed being has transmutable body.) In the same way statements about transmutable body (transformation due to) should be mentioned according to what is stated in the 21st chapter titled Avagahana Samsthan of *Prajnapana Sutra*... and so on up to... it is consciously transformed due to conscious activity of transmutable body of fully developed five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps* (*paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya sharira kaaya prayoga parinat*) or consciously transformed due to conscious activity of transmutable body of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

underdeveloped five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps* (*aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya sharira kaaya prayoga parinat*).

६८. [प्र.] जइ वेउव्वियमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए किं एगिंदियमीसासरीरकायप्पओगपरिणए वा जाव पंचिंदियमीसासरीरकायप्पयोगपरिणए ?

[उ.] एवं जहा वेउव्वियं तहा मीसगं पि, नवरं देव–नेरइयाणं अपज्जत्तगाणं, सेसाणं पज्जत्तगाणं तहेव, जाव नो पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरो जाव प०, अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय–देवपंचिंदियवेउव्वियमीसासरीरकायप्पओग– परिणए।४।

६८. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, वैक्रियमिश्रशरीर–कायप्रयोग–परिणत होता है, तो क्या वह एकेन्द्रिय–वैक्रियमिश्रशरीर–कायप्रयोग–परिणत होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रिय–वैक्रियमिश्रशरीर–कायप्रयोगपरिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार वैक्रियशरीर–कायप्रयोग–परिणत के विषय में कहा है, उसी प्रकार वैक्रियमिश्रशरीर–कायप्रयोग–परिणत के विषय में भी कहना चाहिए। परन्तु इतना विशेष है कि वैक्रियमिश्रशरीर–कायप्रयोग देवों और नैरयिकों के अपर्याप्त के विषय में कहना चाहिए। शेष सभी पर्याप्त जीवों के विषय में कहना चाहिए, यावत् पर्याप्त–सर्वार्थसिद्ध–अनुत्तरौपपातिक–कल्पातीत–वैमानिक–देव–पंचेन्द्रिय–वैक्रियमिश्रशरीर–कायप्रयोग–परिणत नहीं होता, किन्तु अपर्याप्त–सर्वार्थसिद्ध–अनुत्तरौपपातिककल्पातीतवैमानिकदेव–पंचेन्द्रिय–वैक्रियमिश्रशरीर–कायप्रयोग–परिणत होता है; (यहाँ तक कहना चाहिए)।

68. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body (*vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body of one-sensed being (*ekendriya vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... transmutable-cum-mixed body of five-sensed being (*panchendriya vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said with regard to *vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat* should also be repeated for *vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*. The difference being that only underdeveloped state should be included for divine and infernal beings. For all other beings only fully developed state should be included... and so on up to... It is not transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body of fully developed five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

beyond the *Kalps* (*paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya-mishra sharira kaaya prayoga parinat*) but consciously transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body of underdeveloped five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps* (*aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya-mishra sharira kaaya prayoga parinat*).

६९. [प्र.] जइ आहारगसरीरकायप्पओगपरिणए किं मणुस्साहारगसरीरकायप्पओगपरिणए ? अमणुस्साहारग जाव प० ?

[उ.] एवं जहा ओगाहणसंठाणे जाव इड्ढिपत्तपमत्तसंजयसम्मद्दिट्ठिपज्जत्तगसंखेज्जवासाउय जाव परिणए, नो अणिड्ढिपत्तपमत्तसंयमसम्मद्दिट्ठिपज्जत्तगसंखेज्जवासाउय जाव प०।५।

६९. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, आहारकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह मनुष्याहारकशरीर- कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा अमनुष्य-आहारकशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! इस सम्बन्ध में जिस प्रकार प्रज्ञापनासूत्र के अवगाहनासंस्थान नामक (इक्कीसवें) पद में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिए; यावत् ऋद्धि-प्राप्त प्रमत्तसंयत सम्यग्दृष्टि पर्याप्तक संख्येयवर्षायुष्क मनुष्य-आहारकशरीर कायप्रयोगपरिणत होता है, किन्तु अनृद्धि-प्राप्त (आहारकलब्धि को अप्राप्त) -प्रमत्तसंयत-सम्यग्दृष्टि-पर्याप्तक- संख्येयवर्षायुष्क मनुष्याहारक-शरीर-कायप्रयोग-परिणत नहीं होता।

69. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of telemigratory body (*ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of telemigratory body of human beings (*manushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat*) or telemigratory body of beings other than humans (*amanushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! In this regard what is stated in Avagahana Samsthan (the 21st chapter) of *Prajnapana Sutra* should be followed... and so on up to... it is transformed due to conscious activity of telemigratory body of an accomplished (having power of telemigration) negligent-disciplined righteous fully develcped human being having countable years life-span (*Riddhiprapt pramatt-samyat samyagdrishti paryaptak sankhyeyavarshayushk manushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat*) and not due to conscious activity of telemigratory body

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

of a non-accomplished (without power of telemigration) negligent-disciplined righteous fully developed human being having countable years life-span (*Anriddhiprapt pramatt-samyat samyagdrishti paryaptak sankhyeyavarshayushk manushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat*).

७०. [प्र.] जइ आहारगमीसासरीरकायप्पयोगप० किं मणुस्साहारगमीसासरीर० ?

[उ.] एवं जहा आहारगं तहेव मीसगं पि निरवसेसं भाणियव्वं।६।

७०. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य आहारकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह मनुष्याहारकमिश्रशरीरकायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा अमनुष्याहारक-शरीर-कायप्रयोग परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार आहारकशरीरकायप्रयोग-परिणत (एक द्रव्य) के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार आहारकमिश्रशरीर-कायप्रयोग-परिणत के विषय में भी कहना चाहिए।

70. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of telemigratory-cum-mixed body (*ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of telemigratory-cum-mixed body of human beings (*manushya ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) or telemigratory-cum-mixed body of beings other than humans (*amanushya ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! What has been stated with regard to transformation due to conscious activity of telemigratory body (*ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat*) should be repeated for transformation due to conscious activity of telemigratory-cum-mixed body (*ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat*).

७१. [प्र.] जइ कम्मासरीरकायप्पओगप० किं एगिंदियकम्मासरीरकायप्पओगप० जाव पंचिंदियकम्मासरीर जाव प० ?

[उ.] गोयमा ! एगिंदियकम्मासरीरकायप्पओ० एवं जहा ओगाहणसंठाणे कम्मगस्स भेदो तहेव इहावि जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइयदेवपंचिंदियकम्मासरीरकायप्पयोगपरिणए वा, अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणु० जाव परिणए वा।७।

७१. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, कार्मणशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, तो क्या वह एकेन्द्रिय-कार्मणशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रियकार्मणशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] हे गौतम ! वह एकेन्द्रियकार्मणशरीरकायप्रयोग-परिणत होता है, इस सम्बन्ध में जिस प्रकार प्रज्ञापनासूत्र के (इक्कीसवें) अवगाहनासंस्थान-पद में कार्मण के भेद कहे गये हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहने चाहिए; यावत् पर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत वैमानिकदेव-पंचेन्द्रिय-कार्मणशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है, अथवा अपर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक-कल्पातीत-वैमानिकदेव-पंचेन्द्रिय-कार्मणशरीर-कायप्रयोग-परिणत होता है; (यहाँ तक कहना चाहिए)।

71. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to conscious activity of *karmic* body (*karman sharira kaaya-prayoga parinat*), then is it transformed due to conscious activity of *karmic* body of one-sensed being (*ekendriya karman sharira kaaya-prayoga parinat*) or... and so on up to... *karmic* body of five-sensed being (*panchendriya karman sharira kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to conscious activity of *karmic* body of one-sensed being (*ekendriya karman sharira kaaya-prayoga parinat*). In this regard what is stated in Avagahana Samsthan (the 21st chapter) of *Prajnapana Sutra* with regard to types of karmic body should be followed... and so on up to... It is transformed due to conscious activity of *karmic* body of fully developed five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps* (*paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya prayoga parinat*) or transformed due to conscious activity of *karmic* body of underdeveloped five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps* (*aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya prayoga parinat*).

विवेचन : (१) **औदारिकशरीरकाययोग**—औदारिकशरीर, पुद्गलस्कन्धों का समूह होने से 'काय' कहलाता है। इससे होने वाले व्यापार को औदारिकशरीर-काययोग कहते हैं। यह योग मनुष्यों और तिर्यञ्चों में होता है।

(२) **औदारिकमिश्रशरीरकाययोग**—औदारिक के साथ कार्मण, वैक्रिय या आहारक की सहायता से होने वाले वीर्यशक्ति के व्यापार को औदारिकमिश्रकाययोग कहते हैं। यह योग उत्पत्ति के दूसरे समय से लेकर जब तक शरीरपर्याप्ति पूर्ण न हो, तब तक सभी औदारिकशरीरधारी जीवों को होता है। वैक्रियलब्धिधारी मनुष्य और तिर्यञ्च जब वैक्रिय शरीर का त्याग करते हैं, तब भी औदारिकमिश्र शरीर होता है। इसी तरह लब्धिधारी मुनिराज जब आहारक शरीर बनाते हैं, तब आहारकमिश्रकाययोग होता है, किन्तु जब वे आहारक शरीर से निवृत्त होकर मूल शरीरस्थ होते हैं, तब औदारिकमिश्रकाय योग का प्रयोग होता है। केवली भगवान जब केवली समुद्घात करते हैं, तब दूसरे, छठे और सातवें समय में औदारिकमिश्रकाययोग का प्रयोग होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(३) **वैक्रियकाययोग**–वैक्रियशरीर द्वारा होने वाली वीर्यशक्ति का व्यापार। यह मनुष्यों और तिर्यञ्चों के **वैक्रियलब्धिबल** से वैक्रियशरीर धारण कर लेने पर होता है। देवों और नारकों के वैक्रियकाययोग **'भवप्रत्यय'** होता है।

(४) **वैक्रियमिश्रकाययोग**–वैक्रिय और कार्मण, अथवा वैक्रिय और औदारिक, इन दो शरीरों के द्वारा होने वाले वीर्यशक्ति के व्यापार को 'वैक्रियमिश्रकाययोग' कहते हैं। वैक्रिय और कार्मण सम्बन्धी वैक्रियमिश्रकाययोग, देवों तथा नारकों को उत्पत्ति के दूसरे समय से लेकर जब तक शरीरपर्याप्ति पूर्ण न हो, तब तक रहता है। वैक्रिय और औदारिक, इन दो शरीरों सम्बन्धी वैक्रियमिश्रकाययोग, मनुष्यों और तिर्यञ्चों में तभी पाया जाता है, जब वे लब्धिबल से वैक्रिय शरीर का आरम्भ करते हैं। वैक्रियशरीर का त्याग करने में वैक्रियमिश्र नहीं होता, किन्तु औदारिकमिश्र होता है।

(५) **आहारककाययोग**–केवल आहारक शरीर की सहायता से होने वाला वीर्यशक्ति का व्यापार 'आहारककाययोग' होता है।

(६) **आहारकमिश्रकाययोग**–आहारक और औदारिक, इन दो शरीरों के द्वारा होने वाले वीर्यशक्ति के व्यापार को आहारकमिश्रकाययोग कहते हैं। आहारक-शरीर को धारण करने के समय अर्थात्–उसे प्रारम्भ करने के समय तो आहारकमिश्रकाययोग होता है और उसके त्याग के समय औदारिकमिश्रकाययोग होता है।

(७) **कार्मणकाययोग**–केवल कार्मण शरीर की सहायता से वीर्यशक्ति की जो प्रवृत्ति होती है, उसे कार्मणकाययोग कहते हैं। यह योग विग्रहगति में तथा उत्पत्ति के समय अनाहारक अवस्था में सभी जीवों में होता है। केवलीसमुद्घात के तीसरे, चौथे और पाँचवें समय में केवली भगवान के होता है।

Elaboration—(1) *Audarik sharira kaayayoga* (activity of gross physical body)—as it is a cluster of matter particles, *audarik Sharira* is called *kaaya*. The activity it is involved in is called *audarik sharira kaayayoga*. This is related to human beings and animals.

(2) *Audarik mishra sharira kaaya yoga* (activity of gross-cum-mixed physical body)—The potency related activity of *audarik sharira* with the help of *karman*, *vaikriya* or *ahaarak* bodies is called *audarik mishra sharira kaaya yoga*. Every living being with gross physical body is involved in this activity right from the second *Samaya* after its birth up to the point when it attains fully developed state of the body (*sharira paryapti*). Human beings and animals having the power of transmutation have this activity when they abandon the transmutated body (*vaikriya sharira*). In the same way when an accomplished ascetic creates telemigratory body (*ahaarak sharira*) the activity involved is *ahaarak-mishra kaayayoga* (telemigratory-cum-mixed activity of body). However, when they leave the telemigratory body and return to the original body the activity involved is *audarik-mishra kaayayoga* (gross physical-cum-mixed activity of body). When an omniscient undergoes

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Kevali Samudghat (bursting forth of soul space-points), at the second, sixth and seventh *Samayas* the activity involved is *audarik-mishra kaayayoga*.

(3) *Vaikriya kaaya yoga* (activity of transmutable body)—The potency related activity of *vaikriya sharira* is called *Vaikriya kaaya yoga*. This activity is possible in humans and animals when they create a transmutable body with the acquired related special power (*vaikriya labdhi bal*). In divine and infernal beings this *Vaikriya kaaya yoga* is by birth (*bhavapratyaya*).

(4) *Vaikriya-mishra kaaya yoga* (activity of transmutable-cum-mixed body)—The potency related activity of *Vaikriya sharira* with the help of *karman* and *audarik* bodies is called *vaikriya mishra kaaya yoga*. The *vaikriya mishra kaaya yoga* related to *vaikriya* and *karman sharira* commences at the second *Samaya* after birth among divine and infernal beings and it lasts till they attain fully developed body. The *vaikriya mishra kaaya yoga* related to *vaikriya* and *audarik sharira* is found in humans and animals only when they start creating *vaikriya sharira* with the help of special powers. While abandoning *vaikriya sharira* the activity involved is not *vaikriya mishra* but *audarik mishra*.

(5) *Ahaarak kaaya yoga* (activity of telemigratory body)—The potency related activity of *ahaarak sharira* is called *Ahaarak kaaya yoga*.

(6) *Ahaarak-mishra kaaya yoga* (activity of telemigratory-cum-mixed body)—The potency related activity of *ahaarak sharira* with the help of *audarik sharira* is called *Ahaarak-mishra kaaya yoga*. While acquiring *aharak sharira* the activity involved is *Ahaarak-mishra kaaya yoga* but while abandoning it the activity involved is *audarik-mishra kaaya yoga*.

(7) *Karman kaaya yoga* (activity of *karmic* body)—The potency related activity with the help of *karman sharira* is called *karman kaaya yoga*. This activity is found in all beings in the *anahaarak* (no intake) state during the oblique movement before rebirth and at the moment of birth. It is also found at the third, fourth and fifth *Samaya* of *Kevali samudghat* (bursting forth of soul space-points) by an omniscient.

७२. [प्र.] जइ मीसापरिणए किं मणमीसापरिणए, वयमीसापरिणए, कायमीसापरिणए ?

[उ.] गोयमा ! मणमीसापरिणए वा, वयमीसापरिणए वा कायमीसापरिणए वा।

७२. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, मिश्रपरिणत होता है, तो क्या वह मनोमिश्रपरिणत होता है, या वचनमिश्रपरिणत होता है, अथवा कायमिश्रपरिणत होता है ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! वह मनोमिश्रपरिणत भी होता है, वचनमिश्रपरिणत भी होता है, या कायमिश्र-परिणत भी होता है।

72. [Q.] *Bhante* ! If a substance is *mishra parinat* (jointly or consciously-cum-naturally transformed), then is it transformed due to joint activity of mind (*manah-mishra parinat*), joint activity of speech (*vachan-mishra parinat*) or joint activity of body (*kaaya-mishra parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either due to joint activity of mind (*manah-mishra parinat*), or joint activity of speech (*vachan-mishra parinat*) or joint activity of body (*kaaya-mishra parinat*).

७३. [प्र.] जइ मणमीसापरिणए किं सच्चमणमीसापरिणए, मोसमणमीसापरिणए ?

[उ.] जहा पओगपरिणए तहा मीसापरिणए वि भाणियव्वं निरवसेसं जाव पज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइय जाव देवपंचिंदियकम्मासरीरगमीसापरिणए वा, अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धअणु० जाव कम्मासरीरमीसापरिणए वा।

७३. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य मनोमिश्रपरिणत होता है, तो क्या वह सत्यमनोमिश्र-परिणत होता है, मृषामनोमिश्र-परिणत होता है, सत्यमृषामनोमिश्र-परिणत होता है, अथवा असत्यमृषामनोमिश्र-परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार प्रयोग-परिणत एक द्रव्य के सम्बन्ध में कहा गया है, उसी प्रकार मिश्रपरिणत एक द्रव्य के विषय में कहना चाहिए यावत् पर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत वैमानिकदेव पंचेन्द्रिय कार्मण-शरीर-कायमिश्र-परिणत होता है, अथवा अपर्याप्त-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक कल्पातीत वैमानिक देव-पंचेन्द्रियकार्मणशरीर-कायमिश्र-परिणत होता है।

73. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed due to joint activity of mind (*manah-mishra parinat*), then is it transformed due to truthful activity of mind (*satya manah-mishra parinat*), untruthful activity of mind (*mrisha manah-mishra parinat*), truthful-untruthful activity of mind (*satya-mrisha manah-mishra parinat*), or non-truthful-non-untruthful activity of mind (*asatya-amrisha manah-mishra parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! What has been said with regard to conscious transformation (*prayoga parinat*) of a substance should be repeated with regard to joint transformation (*mishra parinat*)... and so on up to... it is transformed due to joint activity of karmic body of fully developed five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik* celestial-vehicular divine beings beyond the *Kalps* (*paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya mishra*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

parinat) or transformed due to joint activity of *karmic* body of underdeveloped five-sensed *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular* divine beings beyond the *Kalps* (*aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya mishra parinat*).

७४. [प्र.] जइ वीससापरिणए किं वण्णपरिणए गंधपरिणए रसपरिणए फासपरिणए संठाणपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! वण्णपरिणए वा गंधपरिणए वा रसपरिणए वा फासपरिणए वा संठाणपरिणए वा।

७४. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, विस्रसा (स्वभाव से) परिणत होता है, तो क्या वह वर्णपरिणत होता है, गन्धपरिणत होता है, रसपरिणत होता है, स्पर्शपरिणत होता है, अथवा संस्थानपरिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह वर्णपरिणत होता है, या गन्धपरिणत होता है, अथवा रसपरिणत होता है, या स्पर्शपरिणत होता है, या वह संस्थानपरिणत होता है।

74. [Q.] *Bhante* ! If a substance is naturally transformed (*visrasa parinat*), then is it transformed as attributes of appearance (colour), attributes of smell, attributes of taste, attributes of touch and attributes of constitution ?

[Ans.] Gautam ! It could be transformed either as attributes of appearance (colour), attributes of smell, attributes of taste, attributes of touch or attributes of constitution.

७५. [प्र.] जइ वण्णपरिणए किं कालवण्णपरिणए नील जाव सुक्किल्लवण्णपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! कालवण्णपरिणए वा जाव सुक्किल्लवण्णपरिणए वा।

७५. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, वर्णपरिणत होता है तो क्या वह काले वर्ण के रूप में परिणत होता है, अथवा नीलवर्ण के रूप में परिणत होता है, अथवा यावत् शुक्लवर्ण के रूप में परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह काले वर्ण के रूप में परिणत होता है, अथवा यावत् शुक्लवर्ण के रूप में परिणत होता है।

75. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed as attributes of appearance (colour), then is it transformed as attributes of black colour, or as attributes of blue colour... and so on up to... as attributes of white colour ?

[Ans.] It could be transformed either as attributes of black colour... and so on up to... as attributes of white colour.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७६. [प्र.] जइ गंधपरिणए किं सुब्भिगंधपरिणए, दुब्भिगंधपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! सुब्भिगंधपरिणए वा, दुब्भिगंधपरिणए वा।

७६. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्यगन्ध-परिणत होता है तो क्या वह सुरभिगन्ध रूप में परिणत होता है, अथवा दुरभिगन्धरूप में परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह सुरभिगन्धरूप में परिणत होता है, अथवा दुरभिगन्धरूप में परिणत होता है।

76. [**Q.**] *Bhante* ! If a substance is transformed as attributes of smell, then is it transformed as attributes of good smell or as attributes of bad smell ?

[**Ans.**] It could be transformed either as attributes of good smell or as attributes of bad smell.

७७. [प्र.] जइ रसपरिणए किं तित्तरसपरिणए ५ पुच्छा ?

[उ.] गोयमा ! तित्तरसपरिणए वा जाव महुररसपरिणए वा।

७७. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, रसरूप में परिणत होता है, तो क्या वह तीखे (चरपरे) रस के रूप में परिणत होता है, अथवा यावत् मधुररस के रूप में परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह तीखे रस के रूप में परिणत होता है, अथवा यावत् मधुररस के रूप में परिणत होता है।

77. [**Q.**] *Bhante* ! If a substance is transformed as attributes of taste, then is it transformed as attributes of bitter taste, or... and so on up to... as attributes of sweet taste ?

[**Ans.**] It could be transformed either as attributes of bitter taste, or... and so on up to... as attributes of sweet taste.

७८. [प्र.] जइ फासपरिणए किं कक्खडफासपरिणए जाव लुक्खफासपरिणए ?

[उ.] गोयमा ! कक्खडफासपरिणए वा जाव लुक्खफासपरिणए वा।

७८. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, स्पर्शपरिणत होता है तो क्या वह कर्कशस्पर्शरूप में परिणत होता है, अथवा यावत् रूक्षस्पर्शरूप में परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह कर्कशस्पर्शरूप में परिणत होता है, अथवा यावत् रूक्षस्पर्शरूप में परिणत होता है।

78. [**Q.**] *Bhante* ! If a substance is transformed as attributes of touch, then is it transformed as attributes of hard touch, or... and so on up to... as attributes of coarse touch ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] It could be transformed either as attributes of hard touch, or... and so on up to... as attributes of coarse touch.

७९. [प्र.] जइ संठाणपरिणए० पुच्छा ?

[उ.] गोयमा ! परिमंडलसंठाणपरिणए वा जाव आययसंठाणपरिणए वा।

७९. [प्र.] भगवन् ! यदि एक द्रव्य, संस्थान-परिणत होता है, तो क्या वह परिमण्डल-संस्थानरूप में परिणत होता है, अथवा यावत् आयत-संस्थानरूप में परिणत होता है ?

[उ.] गौतम ! वह द्रव्य परिमण्डल-संस्थानरूप में परिणत होता है, अथवा यावत् आयत-संस्थानरूप में परिणत होता है।

79. [Q.] *Bhante* ! If a substance is transformed as attributes of constitution, then is it transformed as attributes of spherical constitution, or... and so on up to... as attributes of rectangular constitution ?

[Ans.] It could be transformed either as attributes of spherical constitution, or... and so on up to... as attributes of rectangular constitution.

दो द्रव्य के संयोग से निष्पन्न भंग ALTERNATIVES OF TRANSFORMATION OF TWO SUBSTANCES

८०. [प्र.] दो भंते ! दव्वा किं पयोगपरिणया, मीसापरिणया, वीससापरिणया ?

[उ.] गोयमा ! पओगपरिणया वा १। मीसापरिणया वा २। वीससापरिणया वा ३। अहवेगे पओगपरिणए, एगे मीसापरिणए ४। अहवेगे पओगपरिणए, एगे वीससापरिणए ५। अहवेगे मीसापरिणए, एगे वीससापरिणए, एवं ६।

८०. [प्र.] भगवन् ! क्या दो द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं, मिश्रपरिणत होते हैं, अथवा विस्रसापरिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे प्रयोगपरिणत होते हैं, या मिश्रपरिणत होते हैं, अथवा विस्रसापरिणत होते हैं, अथवा एक द्रव्य प्रयोगपरिणत होता है और दूसरा मिश्रपरिणत होता है; या एक द्रव्य प्रयोगपरिणत होता है और दूसरा द्रव्य विस्रसापरिणत होता है; अथवा एक द्रव्य मिश्रपरिणत होता है और दूसरा विस्रसापरिणत होता है।

80. [Q.] *Bhante* ! Are two substances *prayoga parinat* (consciously transformed), *mishra parinat* (jointly transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed) ?

[Ans.] Gautam ! Two substances could be *prayoga parinat* (consciously transformed), or *mishra parinat* (jointly transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed). Also one of these substances

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and the other *mishra parinat* (jointly transformed), or one could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and the other *visrasa parinat* (naturally transformed), or one could be *mishra parinat* (jointly transformed) and the other *visrasa parinat* (naturally transformed).

८१. [प्र.] जइ पओगपरिणया किं मणप्पयोगपरिणया, वइप्पयोगपरिणया, कायप्पयोगपरिणया ?

[उ.] गोयमा ! मणप्पयोगपरिणता वा १। वइप्पयोगपरिणया वा २। कायप्पयोगपरिणया वा ३। अहवेगे मणप्पयोगपरिणए, एगे वयप्पयोगपरिणए ४। अहवेगे मणप्पयोगपरिणए, एगे कायप्पओगपरिणए ५। अहवेगे वयप्पयोगपरिणए, एगे कायप्पओगपरिणए ६।

८१. [प्र.] भगवन् ! यदि वे दो द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं तो क्या मनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या वचन-प्रयोगपरिणत होते हैं अथवा काय-प्रयोगपरिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे (दो द्रव्य) या तो (१) मनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या (२) वचन-प्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा (३) काय-प्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा (४) उनमें से एक द्रव्य मनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा वचन-प्रयोगपरिणत होता है, अथवा (५) एक द्रव्य मनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा काय-प्रयोगपरिणत होता है, या (६) एक द्रव्य वचन-प्रयोगपरिणत होता है और दूसरा काय-प्रयोगपरिणत होता है।

81. [Q.] *Bhante* ! If two substances are *prayoga parinat* (consciously transformed), then are they transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) or conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! They could be transformed either due to (1) conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), or (2) conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) or (3) conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*). Also (4) one of these substances could be transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*) and the other due to conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*), or (5) one of these substances could be transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*) and the other due to conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*), or (6) one of these substances could be transformed due to conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) and the other due to conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*).

८२. [प्र.] जइ मणप्पयोगपरिणया किं सच्चमणप्पयोगपरिणया, असच्चमणप्पयोगपरिणया, सच्चामोसमणप्पयोगपरिणया, असच्चाऽमोसमणप्पयोगपरिणया ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गोयमा ! सच्चमणप्पयोगपरिणया वा जाव असच्चामोसमणप्पयोगपरिणया वा। अहवेगे सच्चमणप्पयोगपरिणए, एगे मोसमणप्पओगपरिणए १। अहवेगे सच्चमणप्पओगपरिणए, एगे सच्चामोसमणप्पओगपरिणए २। अहवेगे सच्चमणप्पओगपरिणए, एगे असच्चामोसमणप्पओगपरिणए ३। अहवेगे मोसमणप्पयोगपरिणए, एगे सच्चामोसमणप्पयोगपरिणए ४। अहवेगे मोसमणप्पयोगपरिणए, एगे असच्चामोसमणप्पयोगपरिणए ५। अहवेगे सच्चामोसमणप्पओगपरिणए, एगे असच्चामोसमणप्पओगपरिणए ६।

८२. [प्र.] भगवन् ! यदि वे (दो द्रव्य) मनःप्रयोगपरिणत होते हैं तो क्या सत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या असत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा सत्यमृषामनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या असत्यामृषामनःप्रयोगपरिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे (दो द्रव्य) (१-४) सत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, यावत् असत्यामृषामनः प्रयोगपरिणत होते हैं, या (५) उनमें से एक द्रव्य सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा मृषामनः प्रयोगपरिणत होता है, अथवा (६) एक द्रव्य सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा सत्यमृषामनः प्रयोगपरिणत होता है, या (७) एक द्रव्य सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा असत्यामृषामनः प्रयोगपरिणत होता है, अथवा (८) एक द्रव्य मृषामनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा सत्यमृषामनः प्रयोगपरिणत होता है, या (९) एक द्रव्य मृषामनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा असत्यामृषामनः प्रयोगपरिणत होता है, अथवा (१०) एक द्रव्य सत्यमृषामनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा असत्यामृषामनःप्रयोगपरिणत होता है।

82. [Q.] *Bhante* ! If two substances are transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), then are they transformed due to truthful activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*), untruthful activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*), truthful-untruthful activity of mind (*satya-mrisha manah-prayoga parinat*), or non-truthful-non-untruthful activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! They could be transformed either due to (1-4) truthful conscious activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*), or... and so on up to... non-truthful-non-untruthful conscious activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*). Also (5) one of these substances could be transformed due to truthful activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*) and the other due to untruthful activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*), or (6) one of these substances could be transformed due to truthful activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*) and the other due to truthful-untruthful activity of mind (*satya-mrisha manah-prayoga parinat*), or (7) one of these substances could be

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

transformed due to truthful activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*) and the other due to non-truthful-non-untruthful activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*), or (8) one of these substances could be transformed due to untruthful activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*) the other due to truthful-untruthful activity of mind (*satya-mrisha manah-prayoga parinat*), or (9) one of these substances could be transformed due to untruthful activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*) the other due to non-truthful-non-untruthful activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*), or (10) one of these substances could be transformed due to truthful-untruthful activity of mind (*satya-mrisha manah-prayoga parinat*) the other due to non-truthful-non-untruthful activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*).

८३. [प्र.] जइ सच्चमणप्पओगपरिणया किं आरंभसच्चमणप्पयोगपरिणया जाव असमारंभसच्चमणप्पयोगपरिणया ?

[उ.] गोयमा ! आरंभ-सच्चमणप्पयोगपरिणया वा जाव असमारंभ-सच्चमणप्पयोगपरिणया वा। अहवेगे आरंभ-सच्चमणप्पयोगपरिणए, एगे अणारंभ-सच्चमणप्पयोगपरिणए। एवं एएणं गमेणं दुयसंजोएणं नेयव्वं। सव्वे संयोगा जत्थ जत्तिया उट्ठेंति ते भाणियव्वा जाव सव्वट्ठसिद्धग त्ति।

८३. [प्र.] भगवन् ! यदि वे (दो द्रव्य) सत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं तो क्या वे आरम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं या अनारम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा संरम्भ (सारम्भ) सत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या असंरम्भ (असारम्भ) सत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा समारम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं या असमारम्भसत्यमनःप्रयोग परिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे दो द्रव्य (१-६) आरम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा यावत् असमारम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं; अथवा एक द्रव्य आरम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है और दूसरा अनारम्भसत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है; इसी प्रकार इस गम (पाठ) के अनुसार द्विकसंयोगी भंग करने चाहिए। जहाँ जितने भी द्विकसंयोग हो सकें, उतने सभी यहाँ कहने चाहिए यावत् सर्वार्थसिद्ध वैमानिक देव-पर्यन्त कहने चाहिए।

83. [Q.] *Bhante* ! If two substances are transformed due to truthful conscious activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*), then are they transformed due to truthful sinning conscious activity of mind (*aarambh satya manah-prayoga parinat*), truthful conscious activity of mind to resolve to sin (*samrambh satya manah-prayoga parinat*), truthful tormenting conscious activity of mind (*samaarambh satya manah-prayoga parinat*), truthful non-sinning conscious activity of mind

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(*anaarambh satya manah-prayoga parinat*), truthful conscious activity of mind not to resolve to sin (*asamrambh satya manah-prayoga parinat*), or truthful non-tormenting conscious activity of mind (*asamaarambh satya manah-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! They could be transformed either due to (1-6) truthful sinning conscious activity of mind (*aarambh satya manah-prayoga parinat*), or... and so on up to... untruthful non-tormenting conscious activity of mind (*asamaarambh satya manah-prayoga parinat*). Also one of these substances could be transformed due to truthful sinning conscious activity of mind (*aarambh satya manah-prayoga parinat*) and the other due to truthful non-sinning conscious activity of mind (*anaarambh satya manah-prayoga parinat*). In the same way all possible alternatives of combination of two aforesaid alternatives should be stated... and so on up to... *Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Vaimanik dev.*

८४. [प्र.] जइ मीसापरिणया किं मणमीसापरिणया० ?

[उ.] एवं मीसापरिणया वि।

८४. [प्र.] भगवन् ! यदि वे (दो द्रव्य) मिश्रपरिणत होते हैं तो मनोमिश्रपरिणत होते हैं ? (इत्यादि पूर्ववत् प्रयोगपरिणत वाले प्रश्नों की तरह यहाँ भी सभी प्रश्न उपस्थित करने चाहिए।)

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार प्रयोगपरिणत के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार मिश्रपरिणत के सम्बन्ध में भी कहना चाहिए।

84. [Q.] *Bhante* ! If two substances are *mishra parinat* (jointly or consciously and naturally transformed), then are they transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*) ? (include other alternative questions as aforesaid with regard to consciously transformed matter)

[Ans.] Gautam ! As has been stated with regard to consciously transformed (*prayoga parinat*) matter so should be stated with regard to jointly transformed (mishra parinat) matter.

८५. [प्र.] जइ वीससापरिणया किं वण्णपरिणया, गंधपरिणया० ?

[उ.] एवं वीससापरिणया वि जाव अहवेगे चउरंससंठाणपरिणए, एगे आययसंठाणपरिणए वा।

८५. [प्र.] भगवन् ! यदि दो द्रव्य विस्रसापरिणत होते हैं तो क्या वे वर्ण रूप से परिणत होते हैं, गंधरूप से परिणत होते हैं, (अथवा यावत् संस्थानरूप से परिणत होते हैं ?)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[उ.] गौतम ! जिस प्रकार पहले कहा गया है, उसी प्रकार विस्रसापरिणत के विषय में कहना चाहिए, यावत् एक द्रव्य, चतुरस्रसंस्थानरूप से परिणत होता है, एक द्रव्य आयत संस्थान से परिणत होता है।

85. [Q.] *Bhante* ! If two substances are *visrasa parinat* (naturally transformed), then are they transformed as attributes of colour ? (or... and so on up to... as attributes of constitution)

[Ans.] Gautam ! The aforesaid pattern should also be followed for naturally transformed matter (*visrasa parinat pudgala*)... and so on up to... one substance is transformed as attributes of square constitution and the other is transformed as attributes of rectangular constitution.

विवेचन : प्रस्तुत छह सूत्रों (सू. ८० से ८५ तक) में दो द्रव्यों से सम्बन्धित विभिन्न विशेषणयुक्त मनोयोग आदि के संयोग से प्रयोगपरिणत, मिश्रपरिणत और विस्रसापरिणत पदों के विभिन्न भंगों का निरूपण है।

तीन पदों के छह भंग–दो द्रव्यों के सम्बन्ध में प्रयोगपरिणत, मिश्रपरिणत और विस्रसापरिणत; इन तीन पदों के असंयोगी तीन भंग और द्विकसंयोगी तीन भंग, यों कुल छह भंग होते हैं।

मनःप्रयोगपरिणत के पाँच सौ चार भंग–सर्वप्रथम सत्यमनःप्रयोगपरिणत, असत्यमनःप्रयोगपरिणत आदि चार पदों के असंयोगी चार भंग और द्विकसंयोगी छह भंग; इस प्रकार कुल दस भंग होते हैं। फिर आरम्भसत्यमनःप्रयोग आदि छह पदों के असंयोगी छह भंग और द्विकसंयोगी पन्द्रह भंग होते हैं। इस प्रकार आरम्भसत्यमन-प्रयोगपरिणत (द्रव्यद्वय) के ६ + १५ = २१ भंग हुए। इसी प्रकार अनारम्भसत्यमनःप्रयोग आदि शेष पाँच पदों के भी प्रत्येक के इक्कीस-इक्कीस भंग होते हैं। यों सत्यमनःप्रयोगपरिणत के आरम्भ, अनारम्भ, संरम्भ, असंरम्भ, समारम्भ, असमारम्भ; इन छह पदों के साथ कुल २१ × ६ = १२६ भंग हुए।

इसी प्रकार सत्यमनःप्रयोगपरिणत की तरह असत्यमनःप्रयोगपरिणत, सत्यमृषामनःप्रयोगपरिणत, असत्यामृषामनःप्रयोगपरिणत; इन तीन पदों के भी आरम्भ आदि छह पदों के साथ प्रत्येक के पूर्ववत् एक सौ छब्बीस-एक सौ छब्बीस भंग होते हैं। अतः मनःप्रयोगपरिणत के सत्यमनःप्रयोगपरिणत, असत्यमनःप्रयोगपरिणत आदि विशेषणों से चारों पदों के कुल १२६ × ४ = ५०४ भंग होते हैं।

वचनप्रयोगपरिणत के भी पाँच सौ चार भंग–जिस प्रकार मनःप्रयोगपरिणत के उपर्युक्त पाँच सौ चार भंग होते हैं, उसी प्रकार वचनप्रयोगपरिणत के भी पाँच सौ चार भंग होते हैं।

औदारिक आदि कायप्रयोगपरिणत के एक सौ छियानवे भंग–औदारिकशरीरकायप्रयोगपरिणत आदि सात पद हैं, इनके असंयोगी सात भंग और द्विकसंयोगी इक्कीस भंग, यों कुल ७ + २१ = २८ भंग एक पद के होते हैं। सातों पदों के कुल २८ × ७ = १९६ भंग कायप्रयोगपरिणत के होते हैं।

त्रियोगसम्बन्धी मिश्रपरिणत भंग–इस प्रकार मनःप्रयोगपरिणत सम्बन्धी पाँच सौ चार, वचनप्रयोगपरिणत सम्बन्धी पाँच सौ चार और कायप्रयोगपरिणत सम्बन्धी एक सौ छियानवे, यों कुल एक हजार दो सौ चार भंग प्रयोगपरिणत के होते हैं। जिस प्रकार प्रयोगपरिणत दो द्रव्यों के कुल एक हजार दो सौ चार भंग कहे गये हैं, उसी प्रकार मिश्रपरिणत दो द्रव्यों के भी कुल एक हजार दो सौ चार भंग समझने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विस्रसापरिणत द्रव्यों के भंग–जिस रीति से प्रयोगपरिणत दो द्रव्यों के भंग कहे गये हैं, उसी रीति से विस्रसापरिणत दो द्रव्यों के वर्ण, गंध, रस, स्पर्श और संस्थान; इन पाँच पदों के विविध पदों को लेकर असंयोगी और द्विकसंयोगी भंग भी यथायोग्य समझ लेना चाहिए। *(वृत्ति, पत्रांक ३३७-३३८)*

Elaboration—In the aforesaid six aphorisms (80-85) various alternatives (*bhang*) of three kinds of transformations (mental, joint and natural) with varied associations, including that of mind (*manoyoga*), and their progressive sub-categories have been mentioned.

Six alternatives of three basic transformations—With regard to two substances there are six alternatives. Three individually and three with combinations of two each.

Five hundred four alternatives of manah prayoga parinat—First of all there are 10 alternatives of *satya manah prayoga parinat*, *mrisha manah prayoga parinat* (etc.); four individually and six with combinations of two each. Then there are 21 alternatives of *aarambh satya manah prayoga parinat* (etc.); six individually and fifteen with combinations of two each. In the same way there are 21 alternatives each for the remaining five sub-categories including *anaarambh satya manah prayoga parinat*. This way there are total 126 alternatives (21 × 6) for *aarambh*, *anaarambh*, *samrambh*, *asamrambh*, *samaarambh* and *asamaarambh*.

In the same way like *satya manah prayoga parinat* there are also 126 alternatives each for *mrisha manah-prayoga parinat*, *satya-mrisha manah-prayoga parinat*, and *asatya-amrisha manah-prayoga parinat* with six sub-categories including *aarambh*. This way there are 504 (126 × 4) alternatives of transformations for the four basic categories including *satya manah prayoga parinat*.

Five hundred four alternatives of *vachan prayoga parinat*—Like the aforesaid 504 alternatives for *manah prayoga parinat*, there are 504 alternatives for *vachan prayoga parinat* following the same pattern.

One hundred ninety six alternatives of kaaya prayog parinat—There are 7 basic categories of *kaaya prayog parinat* including *audarik sharira kaaya prayog parinat*. For these seven there are 28 alternatives of seven individually and twenty one with combinations of two each. For seven sub-categories the total number of alternatives becomes 28 × 7 = 196.

Alternatives for *mishra parinat* for three activities—As aforesaid with regard to two substances there are 1204 alternatives for *prayog*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

parinat—504 *manah prayoga* + 504 *vachan prayoga* + 196 *kaaya prayog*. In the same way there are 1204 alternatives also for *mishra parinat* with regard to two substances.

Alternatives of visrasa parinat—Following the pattern of *prayoga parinat* (consciously transformed), alternatives for *visrasa parinat* should also be derived with various combinations (individual and combination of two) of activities and the five attributes of colour, smell, taste, touch and constitution. *(Vritti, leaf 337-338)*

तीन द्रव्यों सम्बन्धी भंग **ALTERNATIVES OF TRANSFORMATION OF THREE SUBSTANCES**

८६. [प्र.] तिण्णि भंते ! दव्वा किं पयोगपरिणया, मीसापरिणया, वीससापरिणया ?

[उ.] गोयमा ! पयोगपरिणया वा, मीसापरिणया वा, वीससापरिणया वा १। अहवेगे पयोगपरिणए, दो मीसापरिणया १। अहवेगे पयोगपरिणए, दो वीससापरिणया २। अहवा दो पयोगपरिणया, एगे मीसापरिणए ३। अहवा दो पयोगपरिणया, एगे वीससापरिणए ४। अहवेगे मीसापरिणए, दो वीससापरिणया ५। अहवा दो मीससापरिणया, एगे वीससापरिणए ६। अहवेगे पयोगपरिणए, एगे मीसापरिणए, एगे वीससापरिणए ७।

८६. [प्र.] भगवन् ! क्या तीन द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं, मिश्रपरिणत होते हैं, अथवा विस्रसापरिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! तीन द्रव्य या तो प्रयोगपरिणत होते हैं, या मिश्रपरिणत होते हैं, अथवा विस्रसापरिणत होते हैं, या एक द्रव्य प्रयोगपरिणत होता है और दो द्रव्य मिश्रपरिणत होते हैं, या एक द्रव्य प्रयोगपरिणत होता है और दो द्रव्य विस्रसापरिणत होते हैं; अथवा दो द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं और एक द्रव्य मिश्रपरिणत होता है, अथवा दो द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं और एक द्रव्य विस्रसापरिणत होता है; अथवा एक द्रव्य मिश्रपरिणत होता है और दो द्रव्य विस्रसापरिणत होते हैं, अथवा दो द्रव्य मिश्रपरिणत होते हैं और एक द्रव्य विस्रसापरिणत होता है; या एक द्रव्य प्रयोगपरिणत होता है, एक द्रव्य मिश्रपरिणत होता है और एक द्रव्य विस्रसापरिणत होता है।

86. [Q.] *Bhante* ! Are three substances *prayoga parinat* (consciously transformed), *mishra parinat* (jointly transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed) ?

[Ans.] Gautam ! Three substances could be *prayoga parinat* (consciously transformed), or *mishra parinat* (jointly transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed). Also one of these substances could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and the other two *mishra parinat* (jointly transformed), or one could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and the other two *visrasa parinat* (naturally

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

transformed), or two of these substances could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and the remaining one *mishra parinat* (jointly transformed), or one could be *mishra parinat* (jointly transformed) and the other two *visrasa parinat* (naturally transformed), or two could be *mishra parinat* (jointly transformed) and the remaining one *visrasa parinat* (naturally transformed), or one could be *prayoga parinat* (consciously transformed), one *mishra parinat* (jointly transformed) and one *visrasa parinat* (naturally transformed).

८७. [प्र.] जइ पयोगपरिणया किं मणप्पयोगपरिणया, वइप्पयोगपरिणया, कायप्पयोगपरिणया ?

[उ.] गोयमा ! मणप्पयोगपरिणया वा० एवं एक्कगसंयोगो, दुयसंयोगो तियसंयोगो य भाणियव्वो।

८७. [प्र.] भगवन् ! यदि वे तीनों द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं तो क्या मनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या वचनप्रयोगपरिणत होते हैं अथवा वे कायप्रयोगपरिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे (तीन द्रव्य) या तो मनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या वचनप्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा कायप्रयोगपरिणत होते हैं। इस प्रकार एकसंयोगी (असंयोगी), द्विकसंयोगी और त्रिकसंयोगी भंग कहने चाहिए।

87. [Q.] *Bhante* ! If three substances are *prayoga parinat* (consciously transformed), then are they transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) or conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! They could be transformed either due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), or conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) or conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*). In the same way alternatives with singularity, combinations of two and three should be stated.

८८. [प्र.] जइ मणप्पयोगपरिणया किं सच्चमणप्पयोगपरिणया ४ ?

[उ.] गोयमा ! सच्चमणप्पयोगपरिणया वा जाव असच्चामोसमणप्पयोगपरिणया वा ४। अहवेगे सच्चमणप्पयोगपरिणए, दो मोसमणप्पयोगपरिणया एवं दुयसंयोगो, तियसंयोगो भाणियव्वो। एत्थ वि तहेव जाव अहवा एगे तंससंठाणपरिणए वा एगे चउरंससंठाणपरिणए वा एगे आययसंठाणपरिणए वा।

८८. [प्र.] भगवन् ! यदि तीन द्रव्य मनःप्रयोगपरिणत होते हैं तो क्या वे सत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं ? (असत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं) इत्यादि प्रश्न हैं।

[उ.] गौतम ! वे तीनों द्रव्य सत्यमनःप्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा यावत् असत्यामृषामनः प्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा उनमें से एक द्रव्य सत्यमनःप्रयोगपरिणत होता है और दो द्रव्य मृषामनः प्रयोगपरिणत होते हैं; इत्यादि प्रकार से यहाँ भी द्विकसंयोगी और त्रिक संयोगी भंग कहने चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तीन द्रव्यों के प्रयोगपरिणत की तरह ही मिश्रपरिणत और विस्रसापरिणत के भंग कहने चाहिए– यावत् अथवा एक त्र्यंस (त्रिकोण) संस्थानरूप से परिणत हो, एक समचतुरस्र–संस्थानरूप से परिणत हो और एक आयत–संस्थानरूप से परिणत हो, यहाँ तक कहना चाहिए।

88. *Bhante* ! If three substances are transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), then are they transformed due to truthful activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*) ? (and other questions like *mrisha manah-prayoga parinat* and so on)

[Ans.] Gautam ! They could be transformed either due to truthful conscious activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*), or... and so on up to... non-truthful-non-untruthful conscious activity of mind (*asatya-amrisha manah-prayoga parinat*). Also one of these substances could be transformed due to truthful activity of mind (*satya manah-prayoga parinat*) and the other two due to untruthful activity of mind (*mrisha manah-prayoga parinat*). All other alternatives with various combinations of two and three should be stated here.

Like the alternatives of *prayoga parinat* (consciously transformed), those of *mishra parinat* and *visrasa parinat* should also be stated... and so on up to... or one substance is transformed as attributes of triangular constitution, one is transformed as attributes of square constitution and one is transformed as attributes of rectangular constitution.

विवेचन : प्रयोगपरिणत आदि तीन पदों के असंयोगी तीन भंग, द्विकसंयोगी छह और त्रिकसंयोगी एक भंग होता है। यों कुल दस भंग होते हैं।

सत्यमनःप्रयोगपरिणत आदि चार पद हैं, इनके असंयोगी (एक–एक) चार भंग, द्विकसंयोगी बारह भंग और त्रिकसंयोगी चार भंग होते हैं। यों कुल ४ + १२ + ४ = २० भंग हुए। इसी प्रकार मृषामनःप्रयोगपरिणत के भी चार भंग समझने चाहिए। इसी रीति से वचनप्रयोगपरिणत और कायप्रयोगपरिणत के भंग समझ लेने चाहिए।

प्रयोगपरिणत की तरह मिश्रपरिणत के और विस्रसापरिणत के भी (वर्णादि के भेदों को लेकर) भंग कहने चाहिए।

Elaboration—There are ten alternatives of the said three basic categories including *prayoga parinat* (consciously transformed)—three in singularity, six as combinations of two and one as combination of three.

There are four sub-categories of *manah parinat* including *satya manah prayoga parinat*. For these there are 20 alternatives—four in singularity, twelve as combinations of two and four as combinations of three. The same pattern is applicable to alternatives of *mrisha manah*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

prayoga parinat etc. as well as those of *vachan prayog parinat* and *kaaya prayoga parinat*. Like *prayoga parinat* (consciously transformed), alternatives for *mishra parinat* and *visrasa parinat* should also be stated.

चार आदि द्रव्यों के संयोग से निष्पन्न भंग

ALTERNATIVES OF TRANSFORMATION OF FOUR AND MORE SUBSTANCES

८९. [प्र.] चत्तारि भंते ! दव्वा किं पयोगपरिणया ३ ?

[उ.] गोयमा ! पयोगपरिणया वा, मीसापरिणया वा, वीससापरिणया वा। अहवेगे पओगपरिणए, तिण्णि मीसापरिणया १। अहवा एगे पओगपरिणए, तिण्णि वीससापरिणया २। अहवा दो पयोगपरिणया, दो मीसापरिणया ३। अहवा दो पयोगपरिणया, दो वीससापरिणया ४। अहवा तिण्णि पओगपरिणया, एगे मीससापरिणए ५। अहवा तिण्णि पओगपरिणया, एगे वीससापरिणए ६। अहवा एगे मीससापरिणए, तिण्णि वीससापरिणया ७। अहवा दो मीसापरिणया, दो वीससापरिणया ८। अहवा तिण्णि मीससापरिणया, एगे वीससापरिणए ९। अहवेगे पओगपरिणए एगे मीसापरिणए, दो वीससापरिणया १; अहवेगे पयोगपरिणए, दो मीसापरिणया, एगे वीससापरिणए २; अहवा दो पयोगपरिणया, एगे मीसापरिणए, एगे वीससापरिणए ३।

८९. [प्र.] भगवन् ! चार द्रव्य क्या प्रयोगपरिणत होते हैं, या मिश्रपरिणत होते हैं, अथवा विस्रसापरिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! वे (चार द्रव्य) (१) या तो प्रयोगपरिणत होते हैं, या (२) मिश्रपरिणत होते हैं, अथवा (३) विस्रसापरिणत होते हैं, अथवा (४) एक द्रव्य प्रयोगपरिणत होता है, तीन द्रव्य मिश्रपरिणत होते हैं, या (५) एक द्रव्य प्रयोगपरिणत होता है और तीन विस्रसापरिणत होते हैं, अथवा (६) दो द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं और दो मिश्रपरिणत होते हैं, या (७) दो द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं और दो विस्रसापरिणत होते हैं; अथवा (८) तीन द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं और एक द्रव्य मिश्रपरिणत होता है; अथवा (९) तीन द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं और एक द्रव्य विस्रसापरिणत होता है; अथवा (१०) एक द्रव्य मिश्रपरिणत होता है और तीन द्रव्य विस्रसापरिणत होते हैं, अथवा (११) दो द्रव्य मिश्रपरिणत होते हैं और दो द्रव्य विस्रसापरिणत होते हैं, अथवा (१२) तीन द्रव्य मिश्रपरिणत होते हैं और एक द्रव्य विस्रसापरिणत होता है, अथवा (१३) एक प्रयोगपरिणत होता है, एक मिश्रपरिणत होता है और दो विस्रसापरिणत होते हैं, अथवा (१४) एक प्रयोगपरिणत होता है, दो द्रव्य मिश्रपरिणत होते हैं और एक द्रव्य विस्रसापरिणत होता है, अथवा (१५) दो द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं, एक मिश्रपरिणत होता है और एक विस्रसापरिणत होता है।

89. [Q.] *Bhante* ! Are four substances *prayoga parinat* (consciously transformed), *mishra parinat* (jointly transformed) or *visrasa parinat* (naturally transformed) ?

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

[Ans.] Gautam ! Four substances could be (1) *prayoga parinat* (consciously transformed), or (2) *mishra parinat* (jointly transformed) or (3) *visrasa parinat* (naturally transformed). Also (4) one of these substances could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and the other three *mishra parinat* (jointly transformed), or (5) one could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and the other three *visrasa parinat* (naturally transformed), or (6) two of these substances could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and two *mishra parinat* (jointly transformed), or (7) two could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and two *visrasa parinat* (naturally transformed), or (8) three of these substances could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and one *mishra parinat* (jointly transformed), or (9) three could be *prayoga parinat* (consciously transformed) and one *visrasa parinat* (naturally transformed), or (10) one could be *mishra parinat* (jointly transformed) and three *visrasa parinat* (naturally transformed), or (11) two could be *mishra parinat* (jointly transformed) and two *visrasa parinat* (naturally transformed), or (12) three could be *mishra parinat* (jointly transformed) and one *visrasa parinat* (naturally transformed), or (13) one could be *prayoga parinat* (consciously transformed), one *mishra parinat* (jointly transformed) and two *visrasa parinat* (naturally transformed), or (14) one could be *prayoga parinat* (consciously transformed), two *mishra parinat* (jointly transformed) and one *visrasa parinat* (naturally transformed), or (15) Two could be *prayoga parinat* (consciously transformed), one *mishra parinat* (jointly transformed) and one *visrasa parinat* (naturally transformed).

९०. [प्र.] जइ पयोगपरिणया किं मणप्पयोगपरिणया ३ ?

[उ.] एवं एएणं कमेणं पंच छ सत्त जाव दस संखेज्जा असंखेज्जा अणंता य दव्वा भाणियव्वा। दुयासंजोएणं, तियासंजोएणं जाव दससंजोएणं बारससंजोएणं उवजुंजिऊणं जत्थ जत्तिया संजोगा उट्ठेंति ते सव्वे भाणियव्वा। एए पुण जहा नवमसए पवेसणए भणीहामि तहा उवजुंजिऊणं भाणियव्वा जाव असंखेज्जा। अणंता एवं चेव, नवरं एक्कं पदं अब्भहियं जाव अहवा अणंता परिमंडलसंठाणपरिणया जाव अणंता आययसंठाणपरिणया।

९०. [प्र.] भगवन् ! यदि चार द्रव्य प्रयोगपरिणत होते हैं तो क्या वे मनःप्रयोगपरिणत होते हैं, या वचन-प्रयोगपरिणत होते हैं, अथवा काय-प्रयोगपरिणत होते हैं ?

[उ.] गौतम ! ये सब तथ्य पूर्ववत् कहने चाहिए तथा इस क्रम से पाँच, छह, सात, आठ, नौ, दस, यावत् संख्यात, असंख्यात और अनन्त द्रव्यों के विषय में कहना चाहिए। द्विकसंयोग से, त्रिकसंयोग से,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यावत् दस के संयोग से, बारह के संयोग से; जहाँ जिसके जितने संयोगी भंग बनते हों, उतने सब भंग उपयोगपूर्वक (अपनी बुद्धि से उपयोग लगाकर) कहने चाहिए। ये सभी संयोगी भंग आगे नौवें शतक के बत्तीसवें प्रवेशनक नामक उद्देशक में जिस प्रकार हम कहेंगे, उसी प्रकार उपयोग लगाकर यहाँ भी कहने चाहिए; यावत् अथवा अनन्त द्रव्य परिमण्डल-संस्थानरूप से परिणत होते हैं, यावत् अनन्त द्रव्य आयत-संस्थानरूप से परिणत होते हैं।

90. [Q.] *Bhante* ! If four substances are *prayoga parinat* (consciously transformed), then are they transformed due to conscious activity of mind (*manah-prayoga parinat*), conscious activity of speech (*vachan-prayoga parinat*) or conscious activity of body (*kaaya-prayoga parinat*) ?

[Ans.] Gautam ! All these should be derived following the aforesaid pattern. And this way the progression should be extended to five, six, seven, eight, nine, ten... and so on up to... countable, innumerable and infinite substances. All possible alternatives for combinations of two, three... and so on up to... ten, twelve and so on should be derived using one's own wisdom and application. All these alternatives should be stated here as will be stated in the thirty second lesson titled Praveshanak of the ninth chapter... and so on up to... infinite substances are transformed as spherical constitution... and so on up to... infinite substances are transformed as rectangular constitution.

विवेचन : चार द्रव्यों सम्बन्धी भंग—चार द्रव्यों के प्रयोगपरिणत, मिश्रपरिणत और विस्रसापरिणत आदि तीन पदों के असंयोगी तीन भंग, द्विकसंयोगी नौ भंग और त्रिकसंयोगी तीन भंग होते हैं। इस तरह ये सभी मिलकर ३ + ९ + ३ = १५ भंग होते हैं। पूर्वोक्त पद्धति के अनुसार इनसे आगे के भंगों के लिए पूर्वोक्त क्रम से संस्थानपर्यन्त यथायोग्य भंगों की योजना कर लेनी चाहिए।

पाँच द्रव्यों के असंयोगी तीन भंग, द्विकसंयोगी बारह भंग और त्रिकसंयोगी छह भंग; यों कुल ३ + १२ + ६ = २१ भंग होते हैं। इस प्रकार पाँच, छह, यावत् अनन्त द्रव्यों के भी यथायोग्य भंग बना लेने चाहिए। सूत्र के मूल पाठ में ग्यारह संयोगी भंग नहीं बतलाया गया है; क्योंकि पूर्वोक्त पदों में ग्यारह संयोगी भंग नहीं बनते।

नौवें शतक के बत्तीसवें उद्देशक में गांगेय अनगार के प्रवेशनक सम्बन्धी भंग बताए गये हैं, तदनुसार यहाँ भी उपयोग लगाकर भंगों की योजना कर लेनी चाहिए। *(वृत्ति, पत्रांक ३३९)*

Elaboration—There are fifteen alternatives of the said three basic categories including *prayoga parinat* (consciously transformed) for four substances—three in singularity, nine as combinations of two and three as combination of three. Following the aforesaid pattern other progressive alternatives should be derived up to the sub-category of constitution.

There are fifteen alternatives of the said three basic categories including *prayoga parinat* (consciously transformed) for four

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

substances—three in singularity, twelve as combinations of two and six as combination of three. In the same way alternatives should be derived for five, six... and so on up to... infinite substances. In the original text of the book there is no mention of an alternative of combination of eleven. This is because combination of eleven is not possible here.

In the thirty second lesson titled Praveshanak of the ninth chapter, alternatives in context of ascetic Gangeya have been mentioned. Accordingly these alternatives should be stated here. *(Vritti, leaf 339)*

परिणामों का अल्पबहुत्व COMPARATIVE NUMBERS OF TRANSFORMATIONS

९१. [प्र.] एएसि णं भंते ! पोग्गलाणं पयोगपरिणयाणं मीसापरिणयाणं वीससापरिणयाणं य कयरे कतरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

[उ.] गोयमा ! सव्वत्थोवा पोग्गला पयोगपरिणया, मीसापरिणया, अणंतगुणा, वीससापरिणया अणंतगुणा।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति०।

॥ अट्ठम सए : पढमो उद्देसओ समत्तो ॥

९१. [प्र.] भगवन् ! प्रयोगपरिणत, मिश्रपरिणत और विस्रसापरिणत; इन तीनों प्रकार के पुद्गलों में कौन-से (पुद्गल), किन (पुद्गलों) से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

[उ.] गौतम ! प्रयोगपरिणत पुद्गल सबसे थोड़े हैं, उनसे मिश्रपरिणत पुद्गल अनन्तगुणे हैं और उनसे विस्रसापरिणत पुद्गल अनन्तगुणे हैं।

'हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है, भगवन् ! यह इसी प्रकार है'; ऐसा कहकर यावत् गौतम स्वामी विचरण करने लगे।

91. [Q.] *Bhante* ! Of *prayoga parinat* (consciously transformed), *mishra parinat* (jointly transformed) and *visrasa parinat* (naturally transformed) particles of matter which one are comparatively less, more, equal and much more ?

[Ans.] Gautam ! *prayoga parinat* (consciously transformed) are minimum, *mishra parinat* (jointly transformed) are infinite times more then these, *visrasa parinat* (naturally transformed) are infinite times more than these.

"Bhante ! Indeed that is so. Indeed that is so." With these words... and so on up to... ascetic Gautam resumed his activities.

विवेचन : सबसे कम और सबसे अधिक पुद्गल—मन-वचन-कायरूप योगों से परिणत पुद्गल सबसे थोड़े हैं, क्योंकि जीव और पुद्गल का सम्बन्ध अल्पकालिक है। प्रयोगपरिणत पुद्गलों से मिश्रपरिणत पुद्गल अनन्तगुणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं, क्योंकि प्रयोगपरिणामकृत आकार को न छोड़ते हुए विस्रसापरिणाम द्वारा परिणामान्तर को प्राप्त हुए मृतकलेवरादि अवयवरूप पुद्गल अनन्तानन्त हैं और विस्रसापरिणत तो उनसे भी अनन्तगुणे हैं, क्योंकि जीव द्वारा ग्रहण न किये जा सकने योग्य परमाणु आदि पुद्गल अनन्तगुणे हैं।

॥ अष्टम शतक : प्रथम उद्देशक समाप्त ॥

॥ भगवती सूत्र द्वितीय भाग समाप्त ॥

Elaboration—Maximum and minimum—Matter particles consciously transformed (*prayoga parinat*) due to mental, vocal and physical activities are minimum because the association of soul and matter is of comparatively short duration. Jointly transformed matter particles are infinite times more than consciously transformed (*prayoga parinat*) particles. This is because there are infinite matter particles in various natural transformations without any change in the consciously transformed (*prayoga parinat*) state; for example the constituent particles of dead bodies. Naturally transformed particles are infinite times more than even these because the number of matter particles, ultimate particles, that cannot be acquired by living beings is infinite.

● END OF THE FIRST LESSON OF THE EIGHTH CHAPTER ●

● END OF ILLUSTRATED BHAGAVATI SUTRA PART TWO ●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परिशिष्ट

APPENDIX

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

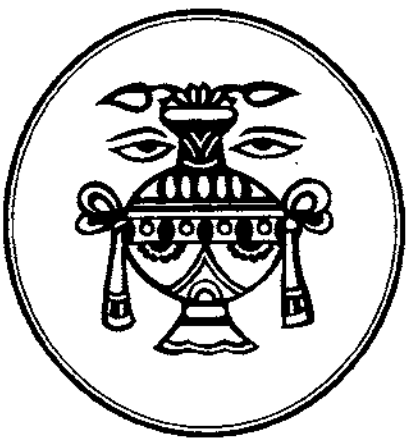

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Appendix-1

Technical Terms

SHRI BHAGAVATI SUTRA (VYAKHYAPRAJNAPTI) Part-2

The alphabetical index of technical terms according to aphorism number. First numeral in Shatak (chapter), second is Uddeshak (lesson) and third is Sutra (aphorism) number.

(A)

A-madhya = without a middle (5/7/9, 10; 5/8/3, 4, 5)

A-pradesh = without sections (5/7/2; 3, 4, 5, 7, 8, 9)

Aabhoganirvartit = with awareness (7/6/12)

Aadaan = sense organs (5/4/34)

Aadhaakarma = food specifically prepared for an ascetic (7/1/20)

Aadhikaraniki = activity of collecting instruments of violence (5/6/10)

Aagati = birth (6/3/9)

Aagneya (6/5/36)

Aajiva = Ajivaks (8/-/-, 1/1)

Aakar = settlements near mines (7/6/31)

Aalaap = communicating (5/4/31)

Aalisandak = a kind of bean (6/7/2)

Aalu = potato (7/3/5)

Aan-paan (5/1/16)

Aan-pran = one exhalation and inhalation (5/1/21)

Aara = spokes or epochs (5/1/21)

Aarambh = sinful activity (5/7/30, 31, 33, 34; 8/1/54, 85)

Aarambh mrisha manah-prayoga parinat = transformed due to untruthful sinning conscious activity of mind (8/1/53)

Aarambh satya manah-prayoga parinat = transformed due to truthful sinning conscious activity of mind (8/1/52, 83, 85)

Aargat = within the range (5/4/3, 4)

Aasakt = obsessed with (7/1/17)

Aasan = seat (5/7/34)

Aayaam = length (6/5/19)

Abaadha kaal = duration of dormant state (6/3/11)

Abhang = no alternative; only one state (6/4/7, 9)

Abhashak jiva = a being not capable of speech (6/3/20, 28)

Abhavasiddhik = not destined to be liberated (6/3/7, 9; 7/3/17, 18; 6/4/8, 9; 6/10/9)

Abhavya (6/3/28; 6/4/9)

Abhavya charam (6/3/28)

Abhinibodhik ajnana = lack of sensory knowledge (6/4/14)

Abhinibodhik jnana = sensory knowledge (6/4/14)

Abhinibodhik jnani = one having sensory knowledge (6/3/22)

Abhisamnvagat = at his command (5/4/36)

Achakshudarshani = one without optical perception (6/3/18)

Acharam jiva = a being not in his final birth (6/3/28, 29)

Acharanga (5/4/16)

Acharya (5/6/19)

Achetan = inanimate (8/1/3)

Achitt = free of living organisms (6/2/1; 7/1/20); pure (7/1/9); without life (7/7/3, 8, 19)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Achyut dev-lok (5/8/19)

Achyut Kalpopapannak = belonging to the Achyut Kalp (8/1/16, 31)

Achyut Kalpopapannak dev (8/1/24)

Adada = 8.4 million Adadanga (5/1/21; 6/7/5)

Adadanga = 8.4 million Trutit (5/1/21; 6/7/5)

Adatt = not given (8/-/-, 1/1)

Adattadaan = taking without being given; stealing (5/9/16)

Addha Palyopam (6/7/8)

Addha-pratyakhyan = abstainment done for specific duration (7/2/7, 8)

Adhaakarma = food specifically prepared for an ascetic (5/6/15, 16, 17, 18; 7/8/9)

Adhah Saptam Prithvi = Tamstamah-prabha; the seventh hell (5/3/5; 6/6/1, 3; 6/8/1)

Adhah-saptama prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings of Adhah-saptama or Tamastama hell (8/1/9, 20)

Adhai Dveep (5/9/13; 6/8/35)

Adhamata = vileness (6/3/2)

Adharmastikaaya = rest entity (7/10/3, 9)

Adhastan-adhastan = lowest of the lower (8/1/16)

Adhastan-adhastan Graiveyak Kalpateet (8/1/31)

Adhastan-adhastan Graiveyak Kalpateet dev (8/1/24)

Adhikarani = anvil (6/1/14); instrument of passions (7/1/6)

Adho-avadhik = a person with limited avadhi jnana (7/7/21)

Adholok = lower world (7/1/5)

Adi-pramaan = the first of all validations (6/7/7)

Aditya Devs (6/5/36, 38, 40)

Agam = scriptural knowledge (5/4/26)

Agneya (6/5/40)

Agneya Kone = south-east (5/1/4, 22, 23, 27, 2/4)

Agni-kaya = fire-bodies (5/6/9)

Agnidhyamit = roasted in fire (5/2/13)

Agnijhushit = loose properties due to fire (5/2/13)

Agniparinamit = transformed by fire (5/2/13)

Agnisevit = cooked in fire (5/2/13)

Ahaar = intake (6/1/1); food intake (7/1/1, 4)

Ahaar Samudghat (7/5/2)

Ahaar sanjna = inclination for food (7/8/5)

Ahaar-aparyapti = underdeveloped faculty of intake (6/4/19)

Ahaar-pad (6/2/1)

Ahaarak (jivas) = living beings with intake (6/3/1; 6/4/7, 10, 20); with food intake (7/1/3, 4)

Ahaarak dvar = port of beings with intake (6/3/28; 6/4/7)

Ahaarak jiva = a being capable of intake (6/3/26, 28)

Ahaarak kaaya yoga = activity of telemigratory body (8/1/71)

Ahaarak sharira = telemigratory body (6/4/18; 8/1/71)

Ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of telemigratory body (8/1/55, 69, 70)

Ahaarak-mishra kaaya yoga = activity of telemigratory-cum-mixed body (8/1/71)

Ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of telemigratory-cum-mixed body (8/1/55, 70)

Ahasuttam = according to Agams (7/1/16)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Ahetu = non-cause (5/7/41, 42, 43); cause-free perception (5/7/44)

Ahoratra = 30 Muhurts; day and night (5/1/16, 21; 5/8/15, 19; 6/7/5)

Airun = anvil (6/1/14)

Airyapathiki kriya = careful movement of an accomplished ascetic or an omniscient with non-vitiating karmas (7/1/16)

Ajiva = non-living thing(5/9/2; 7/7/4, 5, 9, 10)

Ajiva kaaya = non-living entities (7/10/3, 6, 8)

Ajivas = non-souls (7/2/1)

Ajnana (6/4/14)

Akaam-nikaran = involuntary experience of pain (7/7/24)

Akaant = not beautiful (6/3/2; 7/6/33)

Akaaran (7/1/20)

Akamaniya = not adorable (6/3/2)

Akaran = without instrument (6/1/7, 8, 10)

Akarkash vedaniya karmas = karmas not causing harsh suffering or extreme anguish (7/6/19-21)

Akashaayi jivas = beings without passions (6/4/13, 17)

Akashastikaaya = space entity (7/10/3, 6, 9)

Akhyanti = say (5/3/1; 5/5/2; 5/6/13; 6/10/1, 11)

Akritakrit = not bought (7/1/20)

Aksha = Dhanush; Yuga; Nalika; Dand; Musal; 96 Anguls (6/7/7)

Alaapak = statements (5/1/17)

Alasi = linseed; Linum Usitatssium (6/7/3)

Aleshya = without complexion of soul (6/4/10)

Aleshya jivas = beings without soul complexion (6/4/15)

Almastu = perfect (5/5/1; 7/8/1)

Alok = unoccupied space (5/9/14)

Alp-asrava = mild influx of karmas (5/6/9; 6/3/3)

Alp-karma = mild karmic bondage (5/6/9)

Alp-kriya = mild involvement in activities (5/6/9; 6/3/3)

Alp-vedana = mild pain (5/6/9)

Alpabahutva = minimum-maximum (6/3/1, 29)

Alpahaari (7/1/19)

Alpakarma = less karmas (7/3/6, 7, 9)

Alpakarmaa (6/3/3)

Alpanirjara = little shedding of karmas (6/1/13)

Alpavedana (6/1/13; 7/3/3)

Amaayi-samyagdrishti = deceit-free and righteous (5/4/30)

Amanojna = not attractive (6/3/2; 7/6/33)

Amanushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of telemigratory body of beings other than humans (8/1/69)

Amanushya ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of telemigratory-cum-mixed body of beings other than humans (8/1/70)

Amit = infinite (5/4/4, 34)

An-ardh = without halves (5/7/9, 10; 5/8/3, 4, 5)

Anaabhog nivartit = in context of non-voluntary food intake (7/1/4)

Anaabhoganirvartit = unawares (7/6/12)

Anaadi = without a beginning (5/9/14)

Anaahoot = not an outcome of an invitation (7/1/20)

Anaakaar upayoga = perceptive involvement; darshan (6/3/25, 28; 6/4/16)

Anaarambh (5/7/30, 31, 33, 8/1/54)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Anaarambh satya manah-prayoga parinat = transformed due to truthful non-sinning conscious activity of mind (8/1/52, 83, 85)

Anabhidhyetata = abhorrence (6/3/2)

Anagaar = homeless (7/1/1; 7/2/7)

Anagaar-pratyakhyan = austerities done without any relaxations (7/2/8)

Anagat (7/2/7)

Anagat-pratyakhyan = to advance the observation of some austerity resolved to be observed in future (7/2/8)

Anahaarak (jivas) = beings without intake (6/4/7, 19)

Anahaarak = without food intake (7/1/3, 4)

Anahaarak jiva = a being not capable of intake (6/3/26, 28)

Anant = without an end (5/9/14)

Anantakaayik jivas = infinite souls in one body (6/3/29)

Anantar kshetravagadh = an area away from their own body (6/10/12)

Anantar-pashchaatkrit Samaya (Anantar-pachchhakadasamayamsi) = the Samaya preceding the first Samaya of the monsoon season (5/1/15, 21)

Anantar-puraskrit Samaya (Anantar-purakkhadasamayamsi) = the Samaya following the first Samaya of the monsoon season (5/1/14, 21)

Anantaragam = scriptural knowledge acquired in immediate succession (5/4/26, 28)

Anantaropapannak = born continuously without a time gap (5/4/30)

Anarthdanda viraman = abstention from needless and wanton violence (7/2/8)

Anat dev-lok (5/8/19)

Andaj = birth from an egg (7/5/2)

Andhakaar (6/5/14)

Anevambhoot = not according to acquired karmas (5/5/2, 3)

Angaar = ember (5/6/9; 7/1/20)

Angaar dosh (7/1/17, 18, 20)

Angaar-bhoot = ablaze like embers (7/6/32)

Angadesh (5/1/2)

Angas (7/10/12)

Angul (finger-width) = 8 Yavamadhyas (6/7/7)

Anil = wind (5/2/-)

Anisht = undesirable (6/3/2; 7/6/33)

Anivritti-baadar Samparaya = 9th level of purity (6/3/18, 29)

Anivrittikaran (7/1/10)

Anriddhiprapt pramatt-samyat samyagdrishti paryaptak sankhyeyavarshayushk manushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of telemigratory body of a non-accomplished (without power of telemigration) negligent-disciplined righteous fully developed human being having countable years life-span (8/1/69)

Antakar = terminator of the cycles of rebirth (5/4/17, 25, 26, 28)

Antakriddashanga Sutra (5/4/16, 17)

Antar kaal = intervening period (5/7/26)

Antar-muhurt = less than forty eight minutes (6/7/1; 7/1/4)

Antar-muhurt = less than a Muhurt (5/8/18, 19; 6/3/11)

Antaraal gati = transitional movement (7/1/4)

Antaraya = energy hindering (6/3/10, 11)

Anu = particle of matter (6/7/7)

Anubhag-naam-gotra-niyukt-ayu = potency-race-status programme activated life-span (6/8/33)

Anubhag-naam-karma (6/8/34)

Anubhag-naam-nidhatt = potency programming (6/8/29)

Anubhag-naam-nidhatt-ayu = potency programmed life-span (6/8/27)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Anubhag-naam-nidhatt-ayushk = potency programmed life-span (6/8/31)

Anuddisht = not meant for (7/1/20)

Anumaan = inferential knowledge (5/4/26)

Anurdhvata = abjectness (6/3/2)

Anutatika-bhed = splitting into cracks (5/4/36)

Anuttar Vimaan = matchless celestial vehicles or divine realms (5/4/33; 6/6/2; 6/8/26)

Anuttar Vimaan kalps (6/8/25)

Anuttaraupapatik (5/4/31, 32, 33)

Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/16)

Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik devs (8/1/16)

Anuvrats = five minor vows (7/6/35, 37)

Anuyogadvar Sutra (5/4/26; 6/7/8)

Anyapaalak (7/10/2)

Anyatirthi = heretics (7/10/2)

Anyatirthik = people of other faiths or heretics (5/3/1; 5/5/2; 5/6/13; 6/10/1, 11; 7/1/1)

Anyatragat (7/9/4)

Anyatragat = existing elsewhere (6/9/7)

Anyayuthik = heretics (6/1/1)

Ap-kaaya (7/10/19)

Apan = shop or marketplace (5/7/34)

Aparajit (6/6/2)

Aparajit Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev (8/1/24)

Aparajit dev-lok (5/8/19)

Apardha Avamodarika = eating a little less than half Unodari (7/1/19)

Aparigraha (5/7/30, 31, 33)

Aparitta jiva = unlimited in terms of body or cycles of birth (6/3/21)

Aparyapta = underdeveloped (5/4/30)

Aparyaptak (8/1/32, 62)

Aparyaptak Asur Kumar Bhavan-vaasi dev prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as underdeveloped bodies of Asur Kumar abode dwelling gods (8/1/23, 30)

Aparyaptak baadar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as underdeveloped bodies of gross one-sensed-earth-bodied beings (8/1/32)

Aparyaptak dvindriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of underdeveloped two-sensed beings (8/1/19, 33)

Aparyaptak garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of underdeveloped five-sensed human being born out of womb (8/1/64)

Aparyaptak garbhavyutkrantik jalachar = underdeveloped aquatic animals born out of womb (8/1/28)

Aparyaptak garbhavyutkrantik manushya = underdeveloped human beings born out of womb (8/1/29)

Aparyaptak garbhavyutkrantik manushya panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed human beings born out of womb (8/1/22)

Aparyaptak jiva = underdeveloped being (6/3/19, 28)

Aparyaptak Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell (8/1/20, 27, 34)

Aparyaptak sammurchhim jalachar prayoga parinat pudgala = matter

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

consciously transformed as underdeveloped bodies of aquatic animals of asexual origin (8/1/28)

Aparyaptak sammurchhim jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of underdeveloped aquatic five-sensed animals of asexual origin (8/1/21)

Aparyaptak sammurchhim manushya panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of underdeveloped five-sensed human beings of asexual origin (8/1/22)

Aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as underdeveloped bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/25)

Aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya sharira kaaya prayoga parinat = consciously transformed due to conscious activity of transmutable body of underdeveloped five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/67)

Aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya-mishra sharira kaaya prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body of underdeveloped five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/68)

Aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya prayoga parinat = transformed due to conscious activity of karmic body of underdeveloped five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/71)

Aparyaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya mishra parinat = transformed due to joint activity of karmic body of underdeveloped five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/73)

Aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman sharira prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as underdeveloped gross physical, fiery and karmic bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (8/1/36, 40)

Aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman sharira sparshanendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as underdeveloped gross physical, fiery and karmic bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings with sense organ of touch (8/1/44)

Aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as underdeveloped bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (8/1/17, 26. 32, 38)

Aparyaptak sukshma prithvikaayik ekendriya sparshanendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as underdeveloped sense organ of touch of bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (8/1/42)

Aparyaptak sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of underdeveloped minute earth-bodied one-sensed being (8/1/59)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Apashchim = final (7/2/8)

Apashchim maranantik-samlekhana-joshana-aradhana = the practice of acceptance of final ultimate vow till death (7/2/8)

Apkaayik = water-bodied (6/5/43; 7/4/2)

Apkaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of one-sensed water-bodied beings (8/1/6)

Apkaayiks = water-bodied beings (6/4/5)

Apradesh = without sections (6/4/1)

Apradeshi = non-sectional (6/4/-)

Apramaan (7/1/20)

Apramatt chhadmasth sadhu = accomplished ascetic who is short of omniscience due to residual karmic bondage (7/1/6)

Apratihat = devoid of control on sinful indulgence (7/2/1)

Apratyakhyan = non-renunciation of sinful activities (6/4/21-24); devoid of renunciation (7/2/1)

Apratyakhyani = non-renouncer (6/4/21; 7/2/10, 13, 14, 17, 23, 24, 27, 29)

Apratyakhyaniki kriya = activity of non-renunciation (5/6/5, 6, 7; 7/8/8)

Apriya = not lovable (6/3/2)

Apurvakaran = a Gunasthaan (6/3/18; 7/1/10)

Aradhana = spiritual worship (5/6/15, 16, 17, 18); practice (7/2/8); endeavour (8/-/-, 1/1)

Arahar = Satina; a type of pulse; Cajamus indicus (6/7/2)

Aram = pleasure garden (5/7/34)

Arambhiki kriya = sinful activity (5/6/5, 6, 7, 8)

Aran dev-lok (5/8/19)

Archi Vimaan (6/5/32, 33, 37)

Archimali (6/5/32)

Archimali Vimaan (6/5/38)

Ardhamaagadhi (5/4/24)

Ardhapushkar Dveep (5/9/13)

Arhantanam = the worthy ones (7/9/20)

Arthanupura (5/1/19, 21; 6/7/5)

Arthanupuranga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Arunabh (7/9/21)

Arunavar (6/5/2)

Arunodak Samudra (6/5/14)

Arupi = formless (7/10/3)

Asaata vedana = experience of pain (7/6/8)

Asaata = pain (6/10/11)

Asamaarambh mrisha manah-prayoga parinat = transformed due to untruthful non-tormenting conscious activity of mind (8/1/53)

Asamaarambh satya manah-prayoga parinat = transformed due to truthful non-tormenting conscious activity of mind (8/1/52, 83)

Asamaarambh satya vachan-prayoga parinat = transformed due to untruthful non-tormenting conscious activity of speech (8/1/54)

Asamrambh satya manah-prayoga parinat = transformed due to truthful conscious activity of mind not to resolve to sin (8/1/52, 83)

Asamvahat = devoid of application (6/9/13)

Asamvrit = unrestrained (7/1/1); devoid of blockage of inflow of karmas (7/2/1)

Asamvrit anagaar = unrestrained ascetic (7/9/1)

Asamyat = unrestrained or unrighteous (5/4/21; 6/3/14, 18; 7/2/1, 28)

Asamyat jivas = unrestrained beings (6/4/12)

Asanjni = non-sentient (6/3/16, 18; 6/4/9; 7/7/24)

Asanjni jivas = non-sentient beings (6/4/9; 7/7/28)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Asata vedaniya karmas = karmas causing unpleasant experience (7/6/27, 29)

Asatya-amrisha manah-mishra parinat (8/1/73)

Asatya-amrisha manah-prayoga parinat = transformed due to non-truthful-non-untruthful conscious activity of mind (8/1/51, 53, 82, 85)

Asatya-amrisha vachan-prayoga parinat = transformed due to non-truthful-non-untruthful conscious activity of speech (8/1/54)

Ashaashvat = non-eternal (7/3/23)

Ashadh (7/3/1)

Ashan = staple food (5/6/1, 2, 3, 4; 7/1/9, 17)

Ashanimegh = hail-bearing cloud or rock-smashing cloud (7/6/31)

Ashariri jivas = soul without body (6/4/18)

Ashivish = the poisonous (8/-/-, 1/1)

Ashram = hermitage (5/7/34; 7/6/31)

Ashubh = inauspicious or dark (5/9/3, 4, 7); ignoble (6/3/2)

Ashvakarni (7/3/5)

Ashvin (7/3/1)

Asti = existent (7/10/6)

Astibhaava = existent state (7/10/6)

Astikaaya = existent conglamorative ontological categories or entities (7/10/3, 6, 8)

Asur Kumar (5/9/5)

Asur Kumar Bhavan-vaasi dev prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of Asur Kumar abode dwelling gods (8/1/23)

Asur Kumar dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed Asur Kumar gods (8/1/13)

Atata (5/1/19; 6/7/5)

Atatanga (5/1/19; 6/7/5)

Atikrant (7/2/7)

Atikrant-pratyakhyan = to postpone for future the observation of some austerity (7/2/8)

Atimuktak (5/4/17)

Atithi Samvibhag = taking care of the guests or the needy (7/2/8)

Atma kshetravagadh = area occupied by their own body (6/10/12)

Atmagam = self-acquired scriptural knowledge (5/4/26, 28)

Atmapradesh = soul space-points (8/1/54)

Attalak = bastion on a rampart (5/7/34)

Audarik = gross physical (6/8/34; 8/1/26, 28, 29, 54)

Audarik mishra sharira kaaya yoga = activity of gross-cum-mixed physical body (8/1/71)

Audarik sharira = gross physical body (6/1/11; 6/4/18)

Audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body (8/1/55, 56, 62, 65, 85)

Audarik-mishra kaayayoga = gross physical-cum-mixed activity of body (8/1/71)

Audarik-mishra sharira = gross-cum-mixed physical body (8/1/65)

Audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross-cum-mixed physical body (8/1/55, 65)

Aughik = general statement (6/4/8)

Aughik jivas = beings in general (6/4/18)

Aughik jnana = knowledge in general (6/4/14)

Aupapatik Sutra (5/1/2; 7/9/7, 8, 10)

Avaanchhaniya = not covetable (6/3/2)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Avadhi jnani = endowed with extrasensory perception of the physical dimension (5/7/44; 6/3/22)

Avadhi-jnana (5/4/33; 6/4/14)

Avadhidarshani = one with extrasensory perception of the physical dimension (6/3/18)

Avagahana = accommodate (5/7/3, 5); body size (7/6/33)

Avagahana samsthan (8/1/67, 69, 71)

Avagahana-naam-karma (6/8/34)

Avagahana-naam-nidhatt-ayu = space-occupation or form programmed life-span (6/8/27)

Avagahana-sthaan-ayu = period of existence in a shape (5/7/29)

Avakashantar = intervening (6/5/32)

Avalika = innumerable Samayas (5/1, 7-9; 6/7)

Avasarpini = the regressive cycle of time (5/1/20; 5/5/5); ten Kodakodi Sagaropam (5/1/21, 22, 25, 27)

Avasarpini kaal = regressive half-cycle of time (6/7/8, 9; 7/6/31)

Avasarpini Utsarpini kaal-chakra = complete progressive-regressive cycle of time (6/7/8)

Avasthit Kaal = changeless time (5/1/20, 22, 25, 27)

Avava = 8.4 million Avavanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Avavanga = 8.4 million Adada (5/1/19, 21; 6/7/5)

Avayukaayik ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable body of other than air-bodied one-sensed being (8/1/67)

Avedak jivas = non-genderic or gender transcendent beings (6/3/29; 6/4/17)

Avedi = non-genderic or gender transcendent beings (6/3/13, 18)

Avirat = devoid of detachment (7/2/1)

Avirati = non-restraint (7/8/8)

Avishuddha leshya = impure leshya (6/9/13)

Avyabadh (6/5/40)

Avyuchchhitti naya = existent material aspect (7/3/23)

Ayan = solstice or half year (5/1/18, 21); 3 Ritus; 6 months (6/7/5)

Ayogi = one having no association (6/3/24)

Ayogi jivas = beings without association (6/4/15)

Ayogikevali = omniscient without association (6/3/7, 16, 28); 14th level of purity (6/3/18)

Ayu-karma = life-span determining karma (7/8/9)

Ayu-kshaya = concluding his life-span (7/9/22)

Ayushya = life-span (5/3/-; 6/8/34; 7/1/1)

Ayushya karma = life-span determining karma (6/3/11-18, 21-28; 6/8/34; 6/9/1)

Ayushya-bandh = life-span bondage (6/8/27)

Ayut (5/1/19, 21; 6/7/5)

Ayutanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

(B)

Baadar = gross (5/7/19, 26; 6/5/10, 25; 6/8/8; 8/1/32)

Baadar agnikaaya = gross fire-bodies (6/8/26)

Baadar apkaaya = gross water-bodies (6/8/26)

Baadar jiva = gross being (6/3/27, 28)

Baadar prithvikaaya = gross earth-bodies (6/8/26)

Baadar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of gross one-sensed earth-bodied beings (8/1/6)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Baadar vanaspatikaaya = gross plant-bodies (6/8/26)

Baadar vayukaaya = gross air-bodies (6/8/26)

Baadar-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of gross earth-bodied one-sensed being (8/1/58, 59)

Baal = Balor; a bean; Canavalia gladiata and Canavalia ensiformis (6/7/2); a type of corn (6/10/1)

Baalaagra (hair-tip) of humans of Devakuru and Uttarakuru area) = 8 Ratharenu (6/7/7)

Baalaagra (hair-tip) of humans of Haimavat-Hairanyavat area) = 8 Baalaagra (hair-tip) of humans of Harivarsha-Ramyakvarsha area) (6/7/7)

Baalaagra (hair-tip) of humans of Harivarsha-Ramyakvarsha area) = 8 Baalaagra (hair-tip) of humans of Devakuru and Uttarakuru area) (6/7/7)

Baalaagra (hair-tip) of humans of Purva-videh area) = 8 Baalaagra (hair-tip) of humans of Haimavat-Hairanyavat area) (6/7/7)

Baalaagra = hair-tip (6/6/5; 6/7/7)

Baalaagra prithakatva = two to nine Baalaagras (6/6/5)

Badar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of gross one-sensed-earth-bodied beings (8/1/17)

Baddha = captivated (7/1/17)

Bahiddhadaan = material involvements including libido and possessions (5/9/16)

Bahukarma = many karmas (6/3/1)

Bahutva = many forms (5/6/14)

Baint = Vitasti; Bitta; 12 Anguls (6/7/7)

Bal = physical strength (7/7/20)

Baladev (5/2/17; 5/5/5)

Balor = Baal; a bean; Canavalia gladiata and Canavalia ensiformis;

Balukaprabha prithvi (5/8/1[5]; 6/6/1; 6/8/1, 12)

Bandh = bondage (8/-/-; 1/1)

Bandh dvar = ports of influx (6/3/18)

Bandh-sthiti = duration of bondage (6/3/11)

Bandhachhed = destruction of bondage (7/1/13)

Barat = a seed (6/7/3)

Bavadi = rectangular reservoir (5/7/34)

Beej = seed (7/3/3, 4)

Beej-jivas (7/3/3, 4)

Bhaand = earthenware or groceries (5/6/5, 6, 7)

Bhaava = state (7/2/36)

Bhaava-man = mind (5/4/18, 33)

Bhaava-sthaan-ayu = period of existence of properties (5/7/29)

Bhaavadesh = in context of state (5/8/4, 8)

Bhaavit = enkindling (5/8/1, 2,9)

Bhadra = noble (5/8/1, 2)

Bhadra Motha = Naagar Motha; Cyperus rotundus (7/3/5)

Bhadrapad (7/3/1)

Bhagalpur (5/1/2)

Bhagavai Bhashya (5/3/5; 5/4/18)

Bhagavati Vritti (5/3/1)

Bhajana = optional (5/6/7)

Bhambha = a type of drum (5/4/1)

Bhambhabhoot = replete with bawls (7/6/31)

Bhand = earthen pots and grocery (5/7/34)

Bhang = alternatives (6/4/6; 8/1/85)

Bhasha-manah-paryapti (6/4/19)

Bhasha-paryapti (6/4/19)

Bhashak = capable of speech (6/3/1)

Bhashak dvar (6/3/28)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Bhashak jiva = a being capable of speech (6/3/20, 28)

Bhashante = assert (5/3/1)

Bhashavargana (8/1/54)

Bhasmibhoot = ablaze like scalding ashes (7/6/32)

Bhava = birth (5/3/1)

Bhava-kshaya = concluding birth or the karmas causing specific birth (7/9/22)

Bhavan-pati = abode dwelling (6/10/11)

Bhavan-pati Devs = abode dwelling gods (5/8/16; 5/9/9, 11)

Bhavan-vaasi = abode dwelling (5/9/17)

Bhavan-vaasi dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed abode dwelling divine beings (8/1/12, 13)

Bhavapratyaya = by birth (8/1/71)

Bhavasiddhik = destined to be liberated (6/3/7, 9, 17, 18; 6/4/8, 9; 6/10/9)

Bhavasth Keval-darshani = a living omniscient (6/3/18)

Bhavya = worthy (6/4/9, 20); worthy of liberation (6/1/1; 6/3/28; 6/6/-; 7/3/1)

Bhavya dvar = port of the worthy (6/4/8, 9)

Bhaya Mohaniya karma (7/8/6)

Bhaya sanjna = inclination of fear (7/8/5)

Bhedan = cut into many pieces (5/7/3, 8)

Bheri = a large drum (5/4/1)

Bhoga = physical experiences (7/7/7, 8, 9, 19)

Bhogi = with physical experience (7/7/19, 20)

Bhoot = organisms

Bhoot = plant bodied beings; organisms (5/5/2; 5/6/10, 12; 6/5/16; 6/10/11; 7/2/1; 7/6/24)

Bhuj-parisarp (8/1/28)

Bhuj-parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya = terrestrial five-sensed limbed reptilian animals (8/1/10)

Bil-pankti = row of narrow wells or water-pits (5/7/34)

Bilak (7/6/37)

Bitta = Vitasti; Baint; 12 Anguls (6/7/7)

Brahmalok (6/5/43)

Brahmalok dev-lok (5/8/19)

Brahmalok kalp = the fifth heaven (6/5/2, 18)

Brihi = coarse paddy (6/7/1)

Buddha = enlightened (5/5/1; 7/8/1)

Bunty = a seed (6/7/3)

(C)

Chaaran (5/2/17)

Chaaritra Mohaniya karmas = conduct deluding karmas (5/4/6)

Chaaritra-viradhana = fault related to conduct (5/6/18)

Chaaritramoha karma = conduct-disturbing karma (6/4/24)

Chaitra (7/3/1)

Chaitya (5/1/2)

Chakravaal-vishkambh = circumference (5/2/17)

Chakravarti (5/2/17; 5/5/5)

Chakshudarshani = one with optical perception (6/3/18)

Chakshurindriya = sense organs of seeing (5/9/9; 7/7/13; 8/1/35, 37)

Chalan = move (5/7/1)

Chamar (7/9/14, 15)

Chamarendra (7/9/10, 19)

Champa (5/1/1, 2; 5/10/1; 7/9/10)

Champapuri Kalp (5/1/2)

Champaran (5/1/2)

Chand = excruciating (5/6/14)

Chandan-baala (5/1/2)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Chandra (8/1/24, 31)

Chandra Vimaan Jyotishk devs = stellar gods of lunar celestial vehicle (8/1/15)

Chandraabh (6/5/32)

Chandrama (5/10/1)

Charam = final (6/3/1, 29)

Charam dvar (6/3/28)

Charam jiva = a being in his final birth (6/3/28, 29)

Charam karma = last karma (5/4/27, 28)

Charam nirjara = last shedding (5/4/27, 28)

Charam shariri = with terminal body or destined to liberation (5/3/5; 5/4/17, 25, 26)

Charika = an eight cubit wide pathway between moat and rampart (5/7/34)

Chaturdash Purvadhar = scholar of fourteen Purvas (5/4/36)

Chaturindriya (5/8/18)

Chaturindriya jivas (7/7/17)

Chaturindriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of four-sensed beings (8/1/4, 7)

Chaturmukh = a temple with gates on all four sides (5/7/34)

Chaturyam dharma = four limbed religion (5/9/15, 16)

Chatushk = meeting point of four roads (5/7/34)

Chatushpad (8/1/28)

Chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals (8/1/10)

Chatvar = a square, court, circus, or plaza (5/7/34)

Chaya = assimilate (6/3/2); acquire (7/1/10; 7/8/9)

Chayati (7/1/10)

Chetak (7/9/10)

Chhaal = bark (7/3/4)

Chhadmasth = one who is short of omniscience due to residual karmic bondage (5/7/37, 38, 43, 44; 7/1/1; 7/7/20-22; 7/8/1); a person with finite cognition (5/-/-); unrighteous (5/5/-)

Chhadmasth maran = non-omniscient death (5/7/44)

Chhadmasth vitaraag = one who is detached but short of omniscience due to residual karmic bondage (6/3/18, 28)

Chhedan = cut into two (5/7/3, 8)

Chhedan-bhedan = cut and disintegrate (5/7/6)

Chhedopasthapanik Chaaritra = conduct of re-initiation after rectifying faults (6/3/18)

Chhiravidarika (7/3/5)

Chhiriya (7/3/5)

Chikkanikrit = smoothly fixed (6/1/4)

Chillal = a turbid pond (5/7/34)

Chulika (5/1/19, 21; 6/7/5)

Chulikanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Churnika-bhed = crushing or grinding into powder form (5/4/36)

Chyavan = descent (7/5/2)

(D)

Dadhivahan (5/1/2)

Dalik = clusters (6/3/11)

Dand = Dhanush; Yuga; Nalika; Aksha; Musal; 96 Anguls (6/7/7)

Dandaks = places of suffering (5/-/-)

Darshan = perception (5/4/4; 6/3/1)

Darshan-viradhana = fault related to perception/faith (5/6/18)

Darshanavaraniya = perception obscuring (6/3/10, 11)

Darshanavaraniya karma = perception deluding karma (5/4/11, 18)

Dashavaikalik Sutra (5/1/2)

Desh = section (5/7/2, 11, 13)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Desh Uttar-guna pratyakhyan = partial auxiliary-virtue enhancing renunciation (7/2/8)

Desh-mool-guna pratyakhyan = partial basic-virtue enhancing renunciation (7/2/3, 5, 8)

Desh-mool-guna pratyakhyani = partial basic-virtue enhancing renouncers (7/2/17, 23)

Desh-pratyakhyani = partial renouncers (7/2/13)

Desh-uttar-guna pratyakhyan = partial auxiliary-virtue enhancing renunciation (7/2/6)

Desh-uttar-guna pratyakhyani = partial auxiliary-virtue enhancing renouncers (7/2/24, 27)

Desh-virati = partial detachment (6/4/12)

Deshavakashik = limiting area of activity (7/2/8)

Deshi (5/4/24)

Dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed divine beings (8/1/8, 12)

Dev-gan = gods or divine realms (5/9/17)

Dev-lok = realm of gods (7/9/22)

Devakul = temples (5/7/34)

Devananda Brahmani (5/4/16)

Devandhakaar (6/5/14)

Devaparigha = like a gorge impassable even for gods (6/5/14, 29, 31)

Devapratikshobh = matter of disappointment for gods (6/5/14, 29, 31)

Devaranya = terrifying like a forest even for gods (6/5/14)

Devatamisra (6/5/14)

Devavyuha = like a labyrinth impassable even for gods (6/5/14)

Dhaatri = food prepared for a nurse (7/1/20)

Dhank = raven (7/6/37)

Dhanush = Dand; Yuga; Nalika; Aksha; Musal; 96 Anguls (6/7/7)

Dharmastikaaya = motion entity (7/10/3, 6, 8, 9)

Dhataki Khand (5/1/23, 24, 25, 27; 5/9/13)

Dhoom (7/1/20)

Dhoom dosh (7/1/17, 18, 20)

Dhoom-prabha (6/6/1; 6/8/1)

Dhoom-prabha prithvi (5/8/15)

Dhyanantarika = in between courses of meditation (5/4/19)

Digvrat = limiting movement in each direction (7/2/8)

Dirghika = large lake (5/7/34)

Dishaparimaan vrat = limiting movement in each direction (7/2/8)

Dooti = food prepared for a maid (7/1/20)

Draha = lake (5/7/34)

Dravya = entity (7/2/36); substances (5/4/36)

Dravya-man = brain (5/4/18)

Dravya-sthaan-ayu = period of existence as matter (5/7/29)

Dravyadesh = in context of substance (5/8/4, 5, 7, 8)

Dravyarthik naya = existent material aspect (7/2/38); (7/3/23)

Drishti = attitude (6/4/20); outlook or perception (7/5/2)

Drishti dvar = port of attitude (6/4/11)

Dronmukh = hamlets (7/6/31)

Duhkharupa = miserable (5/6/14)

Duhrasata = repulsive taste (6/3/2)

Duhsaha = unbearable (5/6/14)

Duhsparshata = repulsive touch (6/3/2)

Dukham-dukhama Ara = epoch of extreme sorrow (6/7/8; 7/6/31)

Dukham-sukhama Ara = epoch of more sorrow than happiness (6/7/8)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Dukhama Ara = epoch of sorrow (6/7/8)

Dundubhi = a type of drum (5/4/1)

Durahiyasam = unbearable (5/6/14)

Durbhiksh-bhakt = food prepared for distributing to beggars and destitute during a drought (5/6/15)

Durg = gripping (5/6/14)

Durgandhata = repulsive smell (6/3/2)

Durvarnata = repulsive colour (6/3/2)

Dvar = door (5/7/34); port (6/3/1); categories; headings (6/4/6, 20)

Dveep-samudra = island-seas (6/5/2)

Dvibhaag-prapt = eating half the standard quantity (7/1/19)

Dvindriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of two-sensed being (8/1/56)

Dvindriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross-cum-mixed physical body of two-sensed being (8/1/65)

Dvindriya jivas (5/7/33; 5/8/18; 7/7/17)

Dvindriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of two-sensed beings (8/1/4, 7; 19)

Dvipradeshiya skandh = aggregate of two ultimate particles (5/7/2)

(E)

Ejan = vibrate (5/7/1, 2)

Ekaant adand = singular abstinence from violence (7/2/1)

Ekaant baal = completely ignorant (7/2/1)

Ekaant dand = singular indulgence in violence (7/2/1)

Ekaant pundit = completely sagacious (7/2/1)

Ekatva = one form (5/6/14)

Ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of one-sensed being (8/1/56)

Ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of one-sensed being (8/1/57)

Ekendriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross-cum-mixed physical body of one-sensed being (8/1/65)

Ekendriya jivas = one sensed beings like earth-bodied beings (5/8/17; 6/3/28)

Ekendriya karman sharira kaaya-prayoga parinat = transformed either due to conscious activity of karmic body of one-sensed being (8/1/71)

Ekendriya mishra parinat pudgala = matter jointly transformed as bodies of one-sensed beings (8/1/46, 47)

Ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of one-sensed beings (8/1/4, 5)

Ekendriya tiryanch yoni = one-sensed animal genus (5/3/5)

Ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable body of one-sensed being (8/1/66, 67)

Ekendriya vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body of one-sensed being (8/1/68)

Erand = a fruit (7/1/13)

Eshana = exploration (7/1/20)

Eshaniya (Esiyassa) = explored with proper care (7/1/20); faultless (7/1/9); prescribed (7/1/17)

Eshit = suitable for an ascetic (7/1/20)

Evambhoot = according to acquired karmas (5/5/2, 3)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(G)

Gaadhikrit = firmly adhered (6/1/4)

Galan = disintegration (8/1/3)

Ganadhar (5/4/28)

Gandh = smell (7/7/11, 12)

Gandh parinat = transformed as attributes of smell (8/1/48)

Gandh parinat pudgala (8/1/48)

Gandharva (8/1/24, 31)

Gandharva devs (8/1/14)

Gangeya (8/1/90)

Garbhaj = of placental origin (5/3/5; 8/1/62)

Garbhaj manushya = human beings born out of womb (5/8/19)

Garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed human being born out of womb (8/1/63, 64)

Garbhaj panchendriya tiryagyonik jivas = five-sensed animals born out of womb (5/8/19)

Garbhavyutkrantik = born out of womb (8/1/10)

Garbhavyutkrantik chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals born out of womb (8/1/10, 21)

Garbhavyutkrantik jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals born out of womb (8/1/10, 21)

Garbhavyutkrantik khechar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of aerial five-sensed animals born out of womb (8/1/21)

Garbhavyutkrantik manushya panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings born out of womb (8/1/11, 22)

Gardatoya (6/5/36, 40)

Garha = slandering (5/6/3)

Gati = rebirth (6/3/9); movement (6/8/34; 7/1/11)

Gati parinaam = movement orientation (7/1/12, 13)

Gati-naam

Gati-naam-karma (6/8/34)

Gati-naam-nidhatt = genus programming (6/8/29)

Gati-naam-nidhatt-ayu = genus programmed life-span (6/8/27)

Gau = Gavyut; Kosa; 2000 Dhanush (6/7/7)

Gavyut = Gau; Kosa; 2000 Dhanush (6/7/7)

Ghan = gong like solid instruments (5/4/1)

Ghanodadhi = dense water (6/8/26)

Ghar = house (5/7/34)

Ghranendriya = sense organs of smell (7/7/13)

Gilli = howda or a seat on elephant's back (5/7/34)

Glaanabhakt = food meant for the sick (5/6/15)

Godhoom = wheat (6/7/1)

Gopur = main gate of entrance into a town (5/7/34)

Gotirtha = cow-shed (5/2/17)

Gotra = status determining (6/3/11)

Graiveyak (6/8/26)

Graiveyak dev-lok (5/8/19)

Graiveyak Kalpateet Vaimanik devs (8/1/16)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Gram = villages (7/6/31)

Granthika = knot (5/3/-)

Grasaishana = care in eating (7/1/20)

Griddha = infatuated with (7/1/17)

Grihapan = houses or shops (6/5/4, 21; 6/8/2, 15)

Grishma (ritu) = summer (5/1/21; 7/3/1)

Guna = virtues (7/2/8)

Gunamsh = unit of attribute (5/7/21)

Gunasheelak Chaitya (7/10/1, 4)

Gunasthans = levels of spiritual ascendance or level of purity of soul (5/4/28; 6/3/12, 18, 28, 29; 6/4/17; 7/1/16, 7/7/1)

Gunavrats = restraints that reinforce the practice of anuvrats (7/2/8; 7/6/35, 37)

(H)

Haath = 24 Anguls (6/7/7)

Hahabhoot = replete with wails (7/6/31)

Halla (7/9/10)

Hari = a name of Indra (5/4/16)

Harinaigameshi (5/4/15, 16)

Heelana = contempt (5/6/3)

Hemachandracharya (5/1/2)

Hemant (ritu) = cold (5/1/21; 7/3/1)

Hetu = cause/who knows cause (5/7/37, 38, 44)

Hirili (7/3/5)

Horebha = a type of drum (5/4/1)

Huhuka = 8.4 million Huhukanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Huhukanga = 8.4 million Avava (5/1/19, 21; 6/7/5)

Huthihoo (7/3/5)

(I)

Ihagat = existing here (6/9/7; 7/9/4)

Indriya = sense organs (5/4/34)

Indriya-aparyapti (6/4/19)

Indriya-paryapti (6/4/19)

Irya samiti = code of care of movement (7/10/5)

Iryapathik-bandh = bondage due to passionless association (6/3/7)

Iryapathiki kriya = careful activity of an accomplished ascetic (7/1/6; 7/7/1)

Ishaan dev (5/8/19)

Ishaan kalp (6/5/2; 6/8/26)

Ishaan Kone = north-east (5/1/4, 22, 23, 27; 5/2/4)

Ishatpragbhara = Siddhashila (6/8/1)

Ishatpurovaat (5/2/-)

(J)

Jaati-kulakoti = caste-lineage (7/5/2)

Jalachar tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed aquatic animal (8/1/62)

Jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals (8/1/10)

Janai-pasai = knows and sees (5/4/4)

Jati-gotra-nidhatt = race-status programming (6/8/33, 34)

Jati-gotra-nidhatt-ayu = race-status programmed life-span (6/8/33, 34)

Jati-gotra-niyukt = race-status programme activation (6/8/33, 34)

Jati-gotra-niyukt-ayu = race-status programme activated life-span (6/8/33, 34)

Jati-naam-gotra-nidhatt = race-form-status programming (6/8/33, 34)

Jati-naam-gotra-nidhatt-ayu = race-form-status programmed life-span (6/8/33, 34)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jati-naam-gotra-niyukt = race-form-status programme activation (6/8/33, 34)

Jati-naam-gotra-niyukt-ayu = race-form-status programme activated life-span (6/8/33, 34)

Jati-naam-karma (6/8/34)

Jati-naam-nidhati = race programming (6/8/29, 33, 34)

Jati-naam-nidhatt-ayu = race programmed life-span (6/8/27, 33, 34)

Jati-naam-nidhatt-ayushk = race programmed life-span (6/8/31)

Jati-naam-niyukt = race programme activation (6/8/33, 34)

Jati-naam-niyukt-ayu = race programme activated life-span (6/8/33, 34)

Jayant (6/6/2)

Jayant dev-lok (5/8/19)

Jayi = special variety of barley, also called yav-yav (6/7/1)

Jhallari = cymbal (5/4/1)

Jihvendriya = sense organs of taste (7/7/13)

Jihvendriya evam sparshanendriya prayoga parinat = consciously transformed as sense organs of taste and touch (8/1/33)

Jinaprabh Suri (5/1/2)

Jiva = five sensed beings; souls (5/5/2); life force or soul (6/5/16); living beings (7/1/1); sentience (6/10/2)

Jiva dravya = soul entity (5/4/35)

Jiva kaaya = living entity (7/10/3)

Jiva-ghan = clustered life forms (5/9/16)

Jivabhigam Sutra (5/2/17; 5/6/14; 6/5/41, 43; 6/8/35; 7/4/2; 7/5/2)

Jivastikaaya = life entity (7/10/3, 11)

Jnana = knowledge (5/4/4)

Jnana dvar = port of knowledge (6/3/28; 6/4/14)

Jnana Guna-Pramaan (5/4/26)

Jnana-shakti = potency of spiritual knowledge (5/-/-)

Jnana-viradhana = fault related to knowledge (5/6/18)

Jnanavaran = veil of darkness (7/7/24)

Jnanavaraniya karma = knowledge obscuring karma (5/4/18; 5/6/9; 6/3/10-12, 14-28; 6/9/1)

Jnataputra = Bhagavan Mahavir (7/10/3, 6)

Joon = louse (6/6/5; 6/10/1)

Joshana = acceptance (7/2/8)

Jyeshth (7/3/1)

Jyotishk = stellar (5/7/36)

Jyotishk Devs = stellar gods (5/8/19, 5/9/9, 13, 17; 8/1/15)

(K)

Kaaladesh = in context of time (5/8/4, 8); relative to time (6/4/1-5)

Kaalatikrant = transgression related to time (7/1/19)

Kaalatikrant paan-bhojana (7/1/19)

Kaalod (5/1/26)

Kaalodadhi (5/1/26)

Kaam = cerebral experiences (7/7/2-4, 19)

Kaam-bhoga = cerebral-physical experiences (7/7/12)

Kaam-bhogi = with cerebral and physical experience (7/7/19)

Kaangani = a millet; Setaria italica (6/7/3)

Kaaya yoga = physical activity (8/1/54)

Kaaya yogi = one having physical association (6/3/24, 28; 6/4/15)

Kaaya-mishra parinat = transformed due to joint activity of body (8/1/72)

Kaaya-prayog = physical application (6/3/5)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of body (8/1/50, 55, 8/1/81, 85, 87, 88, 90)

Kaayakaran = body-instrument (6/1/6, 7)

Kaayavargana = karmic particles of physical category (8/1/54)

Kaayiki = physical activity (5/6/10, 12)

Kadachi = serving spoons (5/7/34)

Kalaaya (6/7/2)

Kalasyaveshi Putra (7/10/22)

Kalodayi (7/10/2)

Kalp = divine realm (7/9/21)

Kalpa Sutra (5/4/16)

Kalpateet Vaimanik devs = celestial-vehicular gods beyond the Kalps (8/1/16)

Kalpopapannak Vaimanik devs = celestial-vehicular gods belonging to Kalps or specific divine realms (8/1/16)

Kalyanak = auspicious events (7/6/11)

Kanan = jungle near a town or village (5/7/34)

Kand = trunk (7/3/3, 4)

Kand-jivas = living organism of the trunk class (7/3/3, 4)

Kank = white crows (7/6/37)

Kantarabhakt = emergency food packed and taken along while crossing a difficult terrain (5/6/15)

Kapot leshya = pigeon complexion of soul (6/4/10; 7/3/7)

Karan = instrument or means of indulgence (6/1/6-8, 10-12, 14; 7/2/1)

Karbat = markets (7/6/31)

Kardam = slime (6/1/4, 14)

Karkash = harsh (5/6/14)

Karkash vedaniya karmas = karmas causing harsh suffering or extreme anguish (7/6/15, 17, 29)

Karma = act (7/7/20)

Karma prakritis = species of karma (6/3/10; 6/8/34; 6/9/1)

Karma vargana = karmic particles (6/3/5)

Karma-nishesh kaal = duration of experience or effective duration (6/3/11)

Karmakaran = karma-instrument (6/1/6, 7)

Karman = karmic (8/1/26-29, 31)

Karman kaaya yoga = activity of karmic body (8/1/71)

Karman sharira = karmic body (6/4/18)

Karman sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of karmic body (8/1/55, 71)

Karmasthiti = duration of karma (6/3/1)

Karna (5/1/2)

Kartik (7/3/1; 7/9/19)

Karuna = compassion (7/6/24)

Kashaaya = passions (6/4/20; 7/3/22)

Kashaaya dvar = port of passions (6/4/13)

Kashayik = caused by passions (6/3/7)

Kashi (7/9/10)

Katuk = bitter (5/6/14)

Kaushal (7/9/10)

Kautumbik purush = attendants (7/9/6, 15)

Kavalahar = intake of morsel (7/1/4)

Keval-darshani = one with ultimate perception, that of an omniscient (6/3/18)

Keval-jnani = omniscient (5/4/4)

Kevali = omniscient (5/-/-)

Kevali Samudghat = bursting forth and withdrawal of soul-space-points by an omniscient just before his death (6/4/7; 7/1/4; 7/5/2; 8/1/71)

Kevali-pakshik = self-enlightened omniscient (5/4/26)

Khadya = general food (5/6/-; 7/1/9, 17)

Khambh = pillar (5/7/34)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Khand-bhed = breaking into pieces (5/4/36)

Khanjan = dirt of a wheel (6/1/4, 14)

Kharamuhi = small drum (5/4/1)

Khatika = trench or gully (5/7/34)

Khattamegh = alkaline water bearing cloud (7/6/31)

Khechar (8/1/28)

Khechar panchendriya tiryanch = aerial five-sensed animals or birds (7/5/2)

Khechar tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed aerial animal (8/1/62)

Khechar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of aerial five-sensed animals (8/1/10)

Khet = kraals (7/6/31)

Khilibhoot = fully fused (6/1/4)

Khiluda (7/3/5)

Khimsana = reprimanding (5/6/3)

Kithin = hermit-bowl made of bamboo (7/9/15)

Kittika = Varaha-kand; Tacca leontopetaloides (7/3/5)

Kulakars = clan-founders (5/-/-)

Kodakodi Sagaropam = a metaphoric unit of time (6/3/11)

Kodon = Kodrav; Paspalum scrobiculum (6/7/3)

Kodrav = Kodon; Paspalum scrobiculum (6/7/3)

Kolahal = replete with pandemonium (7/6/31)

Kolasthik = berry seed (6/10/1)

Koop = well (5/7/34)

Koot = peak or pinnacle (5/7/34)

Korant (7/9/20)

Kosa = Gavyut; Gau; 2000 Dhanush (6/7/7)

Kotisahit (7/2/7)

Kotisahit-pratyakhyan = where the last day of one abstainment and the first day of the immediate next abstainment become common (7/2/8)

Kreetakrit = purchased for shramans (5/6/15, 16, 17, 18)

Krishna leshya = black complexion of soul (6/4/10; 7/3/6)

Krishna vivar = area of darkness (6/5/16)

Krishna-raji = cluster of darkness or agglomerative entity of earth-derived darkness (6/5/17-32, 43; 6/8/26)

Kriya = act and consequence in terms of karmic bondage (5/6/12); activities (8/-/-; 1/1)

Kriyavaad = doctrine of endeavour (5/-/-)

Krodh sanjna = inclination of anger (7/8/5)

Krodh-kashaayi jivas = beings with anger (6/4/13)

Kshapak shreni = path of destruction of karmas (5/4/33)

Kshayik = due to destruction of karmas (5/4/18)

Kshayopasham = destruction-cum-pacification (5/4/18)

Ksheen moha = destroyed attachment (5/4/33); destroyed deluding karma (6/3/7)

Ksheen-bhogi = with an emaciated body (7/7/20)

Kshetra Palyopam (6/7/8)

Kshetra-sthaan-ayu = period of existence at a place (5/7/29)

Kshetradesh = in context of area (5/8/4, 5, 8)

Kshetratikrant = transgression related to movement of the sun (7/1/19)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Kshetratikrant paan-bhojan (7/1/19)

Kshobh = get agitated (5/7/1)

Kshullak-bhava-grahan = 256 Avalikas (6/7/5)

Kuddalak (6/7/9)

Kukkuti andak = hen's egg (7/1/19, 20)

Kukkuti-and pramaan = equivalent to the size of hen's egg (7/1/20)

Kukshi = 48 Anguls (6/7/7)

Kukuti = filthy body (7/1/20)

Kulath = a kind of gray or black gram; Dolichos biflorus (6/7/2)

Kulmash = Udad; a pulse (5/2/13)

Kumar-shraman = initiated in adolescence (5/4/17)

Kumud = a type of lotus (6/8/36)

Kunik (5/1/2)

Kunimahaari = carrion eaters (7/6/35, 36, 37)

Kunthu = an insect (7/8/2)

Kusumbh = a seed (6/7/3)

(L)

Labdh = acquired (5/4/36)

Lantak dev-lok (5/8/19)

Lava = seven Stoka (5/1/16, 21; 5/9/13; 6/7/4)

Lavan Samudra = Salt Sea (5/1)

Layan = a dugout or cave on a hill (5/7/34)

Leekh = nit (6/6/5; 6/10/1)

Leshya = soul complexion (6/4/10, 20; 6/9/13; 7/5/2)

Leshya-dvar = port of soul-complexion (6/4/10)

Lichchhavi (7/9/5)

Liksha (Leekh) = 8 Baalaagra (hair-tip) of humans of Purva-videh area) (6/7/7)

Loam ahaar = intake through body hair or follicle (7/1/4)

Lobh sanjna = inclination of greed (7/8/5)

Lobh-kashaayi jivas = beings with greed (6/4/13)

Lohakatah = steel cauldron (5/7/34)

Lohi = a steel pan or concave platen (5/7/34)

Lok (5/2/17)

Lok sanjna = inclination for specific information (7/8/5); to act according to common social customs (7/8/6)

Lokaant = edge of the universe (6/5/43; 6/6/5, 8)

Lokandhakaar (6/5/14)

Lokantik Devs = gods of the edge of the universe (6/5/36, 43)

Lokantik Vimaans = celestial vehicles at the edge of the universe (6/5/32, 6/5/36, 41-43)

Lokatamisra (6/5/14)

(M)

Maagadhi (5/4/24)

Maagh (7/3/1)

Maaghavati = intensely dark like the seventh hell (6/5/29, 31)

Maahendra dev-lok (5/8/19)

Maahendra kalp = the fourth heaven (6/5/2; 6/5/18; 6/8/26)

Maan sanjna = inclination of conceit (7/8/5)

Maan-kashaayi jivas = beings with conceit (6/4/13)

Maan-pramaan = comparative measures (5/9/10, 12)

Maargatikrant = transgression related to distance (7/1/19)

Maargatikrant paan-bhojana (7/1/19)

Maas = 30 Ahoratra; month (5/1/16, 21; 6/7/5)

Maaya sanjna = inclination of deceit (7/8/5)

Maaya-kashaayi jivas = beings with deceit (6/4/13)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Maayi-mithyadrishti = deceitful and unrighteous (5/4/30)

Madamb = boroughs (7/6/31)

Madguk (7/6/37)

Magadh (5/1/2; 5/4/24)

Maghaa = dark like the sixth hell named Maghaa (6/5/29, 31)

Maha nirjara = extensive shedding of karmas (7/7/20, 23)

Maha-asrava = intense influx of karmas (5/6/9)

Maha-karma = intense karmic bondage (5/6/9); extensive activity (6/3/2); much karmas (7/3/6, 7, 9)

Maha-kriya = intense involvement in activities (5/6/9)

Maha-vedana = intense pain (5/6/9)

Mahakarmaa (6/3/2)

Mahandhakaar (6/5/14)

Mahanirjara = extensive shedding of karmas (6/1/2, 4, 13)

Mahaparyavasaan = a noble end (6/1/4; 7/7/20, 23)

Mahapath = highway (5/7/34)

Mahapundarik = a type of lotus (6/8/36)

Mahasaaman (5/4/18, 19)

Mahashila = large rocks (7/9/11)

Mahashilakantak (7/9/5)

Mahashukra dev-lok (5/8/19)

Mahashukra Kalp (5/4/18, 19)

Mahasrava = extensive influx (6/1/1; 7/3/2; 7/10/16)

Mahavaat = stormy wind; gale or tempest (5/2/2, 3, 5, 9)

Mahavedana = extensive pain (6/1/2, 4, 13)

Mahavir Charitra (5/1/2)

Maithun = libido (5/9/16)

Maithun sanjna = inclination of sex (7/8/5)

Malla (7/9/5)

Mallak = earthen pot of the shape of a conical tumbler (6/5/3, 16)

Man = mind (5/4/18)

Man-karan = mind-instrument (6/1/6, 7)

Manah parinat (8/1/88)

Manah-mishra parinat = transformed due to joint activity of mind (8/1/72, 73)

Manah-paryapti = fully developed mental faculty (6/3/18; 6/4/19)

Manah-paryav jnana = extrasensory perception and knowledge of thought process and thought-forms of other beings (6/3/22; 6/4/14)

Manah-paryav Jnani (5/7/44)

Manah-prayoga = mental application (6/3/5)

Manah-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of mind (8/1/50, 51, 54, 81, 82, 84, 85, 87, 88, 90)

Manak (5/1/2)

Mandal = orbit (5/1/13)

Mandar = Meru (5/1/23, 24, 25; 6/6/5)

Mandavaat = zephyr or soft and gentle breeze (5/2/2, 3, 5, 9)

Manobhakshya = mental food intake (7/1/4)

Manodravya-vargana = units of mental or neuronic capacity (5/4/32)

Manovargana = karmic particles of mental category (8/1/54)

Manoyoga = mental activity (8/1/54, 85)

Manoyogi = one having mental association (6/3/24, 28); sentient beings (6/4/15)

Manushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of telemigratory body of human beings (8/1/69)

Manushya ahaarak-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

telemigratory-cum-mixed body of human beings (8/1/70)

Manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed human being (8/1/60, 63)

Manushya panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings (8/1/8, 11)

Maranantik = till death (7/2/8)

Maranantik samudghat = bursting forth of some soul-space-points before the moment of death (6/6/3-8)

Margshirsh (7/3/1)

Masoor = a small-grained pulse; Lens esculenta (6/7/2)

Mati-ajnani = one not having sensory knowledge (6/3/23)

Mati-jnani = one having sensory knowledge (6/3/22)

Mayapratyayiki kriya = activity of deceit (5/6/5)

Megh-raji = resembling a row of black clouds (6/5/29, 31)

Meru (5/1/5; 5/2/12)

Milan = integration (8/1/3)

Misbra parinat = jointly or consciously-cum-naturally transformed (8/1/3, 49, 72, 73, 80, 84-86, 88, 89, 91)

Mishra parinat pudgala = jointly transformed matter (8/1/46)

Mit = finite (5/4/4, 34)

Mithyadarshan shalya = the thorn of wrong belief or unrighteousness (7/6/16, 20; 7/10/16, 18)

Mithyadarshan-pratyayiki kriya = activity of perverted faith (5/6/5, 6, 7)

Mithyadrishti = unrighteous (5/7/44; 6/3/15)

Mithyadrishti jivas = unrighteous beings (6/4/11)

Mithyatvakriya = unrighteous activity (7/4/2)

Mithyatvi = unrighteous (6/9/13)

Mohaniya = deluding (6/3/11)

Mohaniya karma = deluding karma (6/9/1)

Mool = root (7/2/8; 7/3/3, 4)

Mool-guna pratyakhyan = basic-virtue enhancing renunciation (7/2/2, 3)

Mool-guna-pratyakhyani = basic-virtue enhancing renouncer (7/2/9, 10, 14)

Mool-jivas = living organism or souls of the root-class (7/3/3)

Moolak beej = a seed (6/7/3)

Moong = green gram (6/7/2; 6/10/1)

Mridang = a two sided drum with bulging middle and unequal ends (7/1/5)

Mrisha manah-mishra parinat (8/1/73)

Mrisha manah-prayoga parinat = transformed due to untruthful conscious activity of mind (8/1/51, 53, 82, 85, 88)

Mrisha vachan-prayoga parinat = transformed due to untruthful conscious activity of speech (8/1/54)

Mrishavaad = falsity (5/9/16)

Mudgakarni (7/3/5)

Muhurt = 77 Lava or 3773 Aan-pran or 48 minutes (5/1/7)

Muhurtantar = slightly less than Muhurt (5/1/9)

Mukta = liberated (5/5/1)

Mula = radish (7/3/4, 5)

Muraj = a tabla-like hand-drum (6/7/9)

Murchhit = fond of (7/1/17)

Murmur = cinder (5/6/9)

Murmur-bhoot = ablaze like burning cow-dung cake (7/6/32)

Murtimant = with a form (8/1/3)

Musal = Dhanush; Yuga; Nalika; Aksha; Dand; 96 Anguls (6/7/7)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Musal = mace (7/9/16)

Musundhi = Syaha Musli; Murdannia scapiflorum (7/3/5)

(N)

Naag Kumar (5/9/5)

Naam = form determining (6/3/11)

Naamodaya (7/10/2)

Naarak panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings (8/1/8, 9)

Naarakayushya = infernal life-span (7/6/5)

Naarakayushya karma = infernal life-span determining karma (7/6/2)

Naasti = nonexistent (7/10/6)

Naastibhaava = nonexistent state (7/10/6)

Nagar = cities (7/6/31)

Naigam = command (5/4/16)

Nairayik = infernal beings (5/5/3)

Nairayik jiva = infernal being (6/4/2, 4; 7/2/10)

Nairitya Kone = south-west (5/1/4; 5/2/4)

Nalika = Dhanush; Yuga; Dand; Aksha; Musal; 96 Anguls (6/7/7)

Nalin = a type of lotus (6/8/36)

Nalina (5/1/19, 21; 6/7/5)

Nalinanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Napumsak-vedak jivas = beings with neuter gender (6/3/29)

Napumsak-vedi = neuter (6/3/12, 18)

Narad-putra (5/8/3, 4, 6)

Narmodaya (7/10/2)

Navakoti vishuddha = having nine purities (7/1/20)

Nayuta (5/1/19, 21; 6/7/5)

Nayutanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Neel leshya = blue complexion of soul (6/4/10; 7/3/6, 7)

Nharu = catgut (5/6/11)

Nidhatt = partially intransigent (6/1/4; 6/8/34)

Nihsangata = non-association (7/1/12, 13)

Nihshvaas = countable Avalikas; time taken for one inhalation (6/7/4)

Nikachit = intransigent (6/1/4)

Niraagata = detachment (7/1/12, 13)

Niranjanata = detachment (7/1/12, 13)

Niravashesh (7/2/7)

Niravashesh-pratyakhyan = abstaining completely from all the four kinds of food (7/2/8)

Nirej = in the state of stillness or non-vibration (5/7/15)

Nirgranthi-putra (5/1/1; 5/8/3, 4, 6)

Nirindhanata = absence of fuel of karmas (7/1/12, 13)

Nirjara = shedding (7/1/15)

Nirjhar = mountain stream (5/7/34)

Nirlepan = cleansing (7/4/2)

Nirupachaya-nirapachaya = without augmentation and de-augmentation (5/8/21, 23, 24, 25, 27, 28)

Nirupahat = intact (7/1/13)

Niryavalika Sutra (7/9/10, 13)

Nishek (6/8/34)

Nishkamp = non-vibrating (5/7/25)

Nishthitkrit = devoid of potency (6/1/4)

Nishthur = cruel (5/6/14)

Niyantrit (7/2/7)

Niyantrit-pratyakhyan = austerity done with complete control (7/2/8)

No-asamyat = non-unrestrained (6/3/14)

No-bhavasiddhik - no-abhavasiddhik = neither worthy of liberation nor unworthy of liberation (6/3/17, 18; 6/4/8)

No-bhogi = without physical experience (7/7/19)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

No-kaami = without cerebral experience (7/7/19)

No-kaami-no-bhogi = without cerebral experience and without physical experience (7/7/19)

No-karma = spent karma particles (7/3/10, 11, 13, 16, 18. 22)

No-napumsak = non-neuter (6/3/12)

No-paritta-no-aparitta jiva = neither limited nor unlimited being (6/3/21, 28)

No-paryaptak-no-aparyaptak jiva = neither developed nor underdeveloped being (6/3/19, 28)

No-purush = non-male (6/3/12)

No-samyat = the non-restrained (5/4/23; 6/3/14)

No-samyatasamyat = non-restrained-unrestrained (6/3/14)

No-sanjni - no-asanjni = neither sentient nor non-sentient (6/3/16, 18; 6/4/9)

No-stree = non-female (6/3/12)

No-sukshma-no-baadar jiva = neither minute nor gross (6/3/27, 28)

Nosamyat - noasamyat - nosamyatasamyat jivas = neither restrained nor unrestrained or restrained-unrestrained beings (6/4/12)

(O)

Odan = rice (5/2/13)

Ogh sanjna = inclination for information in general (7/8/5); involuntary activities in a state of stupor (7/8/6)

Oj ahaar = energy intake (7/1/4)

(P)

Paad (foot) = 6 Anguls (6/7/7)

Paan = liquids (5/6/1, 2, 3, 4; 7/1/9, 17)

Paap sthaan = sources of sin (7/6/16; 7/10/16)

Paap-karma = demeritorious karmas (6/1/4; 7/8/3)

Paargat = beyond the range (5/4/3, 4)

Paaritapaniki = activity of inflicting pain (5/6/10)

Paataal = the underworld (5/1/6)

Padma = a number (5/1/19, 21; 6/7/5); a type of lotus (6/8/36)

Padma leshya = yellow complexion of soul (6/4/10; 6/5/43; 7/3/9)

Padmanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Padmavati (7/9/10)

Paishachi (5/4/24)

Paksha = 15 Ahoratra; a fortnight (5/1/16, 21; 6/7/5)

Pakshi = aerial beings; birds (7/1/1)

Palimanthak = round or black gram (6/7/2)

Pallal = a delightful lake (5/7/34)

Palyopam = a metaphoric unit of time (5/1/19)

Panav = small drum (5/4/1)

Panch Mahavrat = five great vows (5/9/15)

Panch Mahavrat dharma = religion of five great vows (5/9/16)

Panch-samgraha (6/3/11)

Panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed being (8/1/56, 60)

Panchendriya audarik-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross-cum-mixed physical body of five-sensed being (8/1/65)

Panchendriya karman sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of karmic body of five-sensed being (8/1/71)

Panchendriya mishra parinat pudgala = matter jointly transformed as bodies of five-sensed beings (8/1/46)

Panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed beings (8/1/4, 8)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Panchendriya tiryagyonik jivas = five-sensed animals (5/7/34)

Panchendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable body of five-sensed being (8/1/66)

Panchendriya vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body of five-sensed being (8/1/68)

Pandava (5/1/2)

Pankaprabha prithvi (5/8/15; 6/8/1, 13)

Parakram = valour (7/7/20)

Param = ultimate (6/7/7)

Param-avadhi jnani = a person with perfect avadhi jnana (7/7/22, 23)

Paramanu pudgal = ultimate particle of matter (5/7/1, 3, 5, 8, 9, 11; 5/8/5; 6/7/7)

Paramanu vijnana = theory of ultimate particles (5/-/-)

Parampar kshetravagadh = an area far away from their bodies (6/10/12)

Paramparagam = scriptural knowledge acquired through lineage (5/4/26, 28)

Paramparopapannak = born with a gap of time (5/4/30)

Paribhogaishana = care in eating (7/1/20)

Parigraha = acquisition; possession (5/7/-; 5/9/16)

Parigraha sanjna = inclination of possession (7/8/5)

Parigrahan = acquires (7/1/15)

Parigrahiki kriya = activity of possession (5/6/5)

Parihar-vishuddhi Chaaritra = destroying karma through special austerities (6/3/18)

Parikha = a moat or trench with narrow bottom and wide top (5/7/34)

Parikshep = circumference (6/5/4, 19)

Parimanakrit (7/2/7)

Parimanakrit-pratyakhyan = abstainment related to specific quantity or number of things (7/2/8)

Parimit = limited (5/9/14)

Parinaam = consequence; functioning (5/9/9)

Parinam-vaad = theory of evolutionalism (5/2/16)

Paripirita = a Sitar-like instrument with gourds at both ends (5/4/1)

Parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya = terrestrial five-sensed reptilian animals (8/1/10)

Parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed reptilian animals (8/1/10)

Parishisht Parva (5/1/2)

Paritta = limited (6/3/1)

Paritta dvar (6/3/28)

Paritta jiva = limited in terms of body or cycles of birth (6/3/21, 28)

Paritta jiva-ghan = limited group of souls (5/9/16)

Parivrit = surrounded (5/9/14)

Paroksh jnani = one who perceives indirectly (5/7/44)

Parshva Naath (5/9/-)

Parshvapatya = followers of Bhagavan Parshva Naath (5/9/14)

Parush = hard (5/6/14)

Paryank = bed (5/9/14, 20)

Paryapt = fully developed (5/4/30; 6/3/1)

Paryaptak (6/3/28; 8/1/32, 62)

Paryaptak Asur Kumar Bhavan-vaasi dev prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed bodies of Asur Kumar abode dwelling gods (8/1/23)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Paryaptak Asur Kumar dev (8/1/30)

Paryaptak baadar prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter transformed as fully developed bodies of gross one-sensed-earth-bodied beings (8/1/32)

Paryaptak baadar vayukaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed bodies of gross one-sensed-air-bodied beings (8/1/26)

Paryaptak dvar (6/3/28)

Paryaptak dvindriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of fully developed two-sensed beings (8/1/19, 33)

Paryaptak garbhaj manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of fully developed five-sensed human being born out of womb (8/1/64)

Paryaptak garbhavyutkrantik jalachar = fully developed aquatic animals born out of womb (8/1/28)

Paryaptak garbhavyutkrantik manushya = fully developed human beings born out of womb (8/1/29)

Paryaptak garbhavyutkrantik manushya panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of fully developed five-sensed human beings born out of womb (8/1/22)

Paryaptak jiva = fully developed being (6/3/19, 28)

Paryaptak Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of fully developed five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell (8/1/20)

Paryaptak Ratnaprabha prithvi nairayiks (8/1/27)

Paryaptak sammurchhim jalachar prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed bodies of aquatic animals of asexual origin (8/1/28)

Paryaptak sammurchhim jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of fully developed aquatic five-sensed animals of asexual origin (8/1/21)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik (8/1/47)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik dev panchendriya (shrotrendriya to sparshanendriya) prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as five sensed (hearing to touching) bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik divine beings beyond the Kalps (8/1/43)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik dev panchendriya vaikriya-taijas-karman sharira and shrotrendriya to sparshanendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as five sensed transmutable-fiery-karmic bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik divine beings beyond the Kalps with sense organs of hearing to touching (8/1/45)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/25)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya sharira kaaya prayoga parinat = consciously transformed due to conscious activity of transmutable body of fully developed five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet celestial-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/67)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya vaikriya-mishra sharira kaaya prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body of fully developed five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/68)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya prayoga parinat = transformed due to conscious activity of karmic body of fully developed five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/71)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya karman sharira kaaya mishra parinat = transformed due to joint activity of karmic body of fully developed five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/73)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet dev panchendriya vaikriya-taijas-karman sharira prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as five sensed transmutable-fiery-karmic bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik divine beings beyond the Kalps (8/1/37)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet dev panchendriya prayoga parinat pudgala = consciously transformed as five sensed bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik divine beings beyond the Kalps (8/1/39)

Paryaptak Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet dev panchendriya vaikriya, taijas and karman sharira prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as five sensed transmutable, fiery and karmic bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik divine beings beyond the Kalps (8/1/41)

Paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed gross physical, fiery and karmic bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (8/1/36, 40)

Paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya audarik-taijas-karman sharira sparshanendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed gross physical, fiery and karmic bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings with sense organ of touch (8/1/44)

Paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (8/1/17, 26, 32, 38)

Paryaptak sukshma prithvikaayik ekendriya sparshanendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as fully developed sense organ of touch of bodies of minute one-sensed-earth-bodied beings (8/1/42)

Paryaptak sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of fully developed minute earth-bodied one-sensed being (8/1/59)

Paryapti = full development (6/4/20)

Paryapti dvar = door of full development (6/4/19)

Paryaya = mode or state (6/4/6; 7/2/36)

Paryayarthik naya = modal stand point (7/3/23); transformational aspect (7/2/38)

Patah = a large drum (5/4/1)

Patanjali's Yoga Sutra (5/3/1)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Pathyavaat = wind healthy for vegetation (5/2/2, 3, 5, 9)

Patra = feathers (5/6/11); leaf (7/3/4)

Pattan = harbours (7/6/31)

Paush (7/3/1)

Paushadhopavas = partial ascetic vow and fasting (7/2/8; 7/6/35, 37)

Pavas ritu (7/3/1)

Phal = blade or tip (5/6/11); fruit (7/3/4)

Phal-jivas = living organism of fruit (7/3/4)

Phalgun (7/3/1)

Pindaharidra = turmeric (7/3/5)

Pishaach (8/1/24, 31)

Pishaach devs (8/1/14)

Pota = large drum (5/4/1)

Potaj = birth as fully formed infants (7/5/2)

Praadveshiki = activity of harbouring aversion (5/6/10)

Praan = one inhalation and one exhalation (6/7/4)

Praan = two to four sensed beings; beings (5/5/2)

Praanatipaat = killing (5/9/16)

Prabhankar (6/5/32)

Prabhu = capable (7/7/25)

Prachala nidra = sleeping while standing (5/4/10, 11, 12)

Pradesh = ultimate particle of matter (5/7/8)

Pradesh dvar = port of sections (6/4/1)

Pradesh-naam-karma (6/8/34)

Pradesh-naam-nidhatt-ayu = space-point programmed life-span (6/8/27)

Pragadh = deep (5/6/14)

Pragbhar = leaning mountain; mountain with an overhang (5/7/34)

Prajnana = specific awareness (5/9/10, 12)

Prajnapana Sutra (6/2/1; 6/9/1; 7/2/28; 8/1/48, 67, 69, 71)

Prajnapana Vritti (5/4/36)

Prajnapayanti = elaborate (5/3/1)

Prakamarasabhoji = one who eats very sweet and rich food (7/1/19)

Prakampan = quiver (5/7/1)

Prakar = parapet wall (5/7/34)

Prakrit (5/4/24)

Prakshep ahaar = intake of morsel (7/1/4)

Pramaan = validation (5/4/26); size (7/1/20)

Pramaan-prapt = eating standard quantity (7/1/19)

Pramanatikrant = transgression related to quantity (7/1/19)

Pranat dev-lok (5/8/19)

Pranatipat = killing of beings (7/6/16, 20; 7/10/16, 18)

Pranatipatiki kriya = activity of killing a living being (5/6/10, 12)

Prapa = water-hut (5/7/34)

Prapt = possessed with some special power (5/4/36)

Prarupayanti = propagate (5/3/1; 5/5/2; 5/6/13; 6/10/1, 11)

Prasad = palace (5/7/34)

Prastritodak = level water (6/8/35)

Prasuk = prescribed food (8/-/-; 1/1); pure (7/1/17, 20)

Pratar-bhed = breaking into layers (5/4/36)

Pratihat = destroys (7/2/1)

Pratikraman = critical review (5/6/15, 16, 17, 18; 5/9/15, 16; 7/9/20)

Pratimas = special codes and resolutions (6/1/13)

Pratishthaan = situation (6/5/41)

Prativasudevs (5/5/5)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Pratyakhyan = renunciation of sinful activities (6/4/21-25; 7/2/1, 2); rules of renouncing (7/6/35, 37)

Pratyakhyan-apratyakhyan = renunciation - non-renunciation of sinful activities (6/4/21-24)

Pratyakhyani = renouncers (6/4/21; 7/2/29, 33)

Pratyakhyani-apratyakhyani = renouncer-non-unrenouncers or partial renouncers (6/4/21; 7/2/29)

Pratyaksh = direct experience or perceptual cognition (5/4/26)

Pratyaksh jnani = one who perceives directly (5/7/44)

Pratyaneek = adversaries (8/-/-; 1/1)

Pratyek Shariri = individual life forms (5/9/16)

Pravachan-mata (7/8/1)

Praval = sprout (7/3/4)

Praveshanak (8/1/90)

Prayoga = application (6/3/4, 5; 8/1/54)

Prayoga parinat = consciously transformed (8/1/3, 49, 50, 73, 80, 81, 84-91)

Prayoga parinat pudgala = consciously transformed matter (8/1/4, 31)

Prayuta (5/1/19, 21; 6/7/5)

Prayutanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Prithvi = hell (6/1/1, 3; 6/6/1); land (5/9/2); world (6/8/1)

Prithvikaaya = earth-bodied beings (5/7/30)

Prithvikaayik = earth-bodied (6/5/43; 7/4/2)

Prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of earth-bodied one-sensed being (8/1/57, 58)

Prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of one-sensed earth-bodied beings (8/1/5, 6)

Prithvikaayik jivas (6/4/5; 7/7/16)

Pudgala = particle of matter (5/8/3)

Pudgala-bhed (5/4/36)

Pudgalastikaaya = matter entity (7/10/3, 6, 8-10)

Pundarik = a type of lotus (6/8/36)

Puran (7/9/19)

Puran = integration (8/1/3)

Purnabhadra (5/1/2)

Purush-vedak jivas = beings with male gender (6/3/29)

Purush-vedi = male (6/3/18)

Purushadaniya = most respected among men (5/9/14)

Purushakar = intent to act (7/7/20)

Purva = 8.4 million Purvangas (5/1/19, 21; 6/7/5)

Purva prayogata = prior endeavour (7/1/12, 13)

Purva-koti (6/3/11)

Purvanga = 8.4 million Varsh (5/1/19, 21; 6/7/5)

Pushkar-samvartak (5/7/7)

Pushkarardh (5/1/27)

Pushkarini = lake or pond with lotuses (5/7/34)

Pushp = flower (7/3/4)

(R)

Raal = a seed (6/7/3)

Rachitak = made into balls or re-cooked specifically for an ascetic (5/6/15)

Raipaseniya (7/8/2)

Raj-pind = food from the royal kitchen (5/6/15, 16, 17, 18)

Rajagriha (5/1/1)

Rajaprashniya (7/8/2)

Rajju = a very large linear measure (7/1/5)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Rajoharan = ascetic-broom (5/4/17)

Ranasingha = war-horn (5/4/1)

Rasa = taste (7/7/11, 12)

Rasa parinat = transformed as attributes of taste (8/1/48)

Rath = chariot (5/7/34; 7/9/16)

Rath-musal (7/9/10)

Ratharenu = 8 Trasarenus (6/7/7)

Ratnaprabha Prithvi = the first hell (5/3/5)

Ratnaprabha prithvi nairayik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed infernal beings of Ratnaprabha hell (8/1/9, 20)

Ratni = cubit (7/6/33)

Ravi = the sun (5/1/1)

Riddhiprapt pramatt-samyat samyagdrishti paryaptak sankhyeyavarshayushk manushya ahaarak sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of telemigratory body of an accomplished (having power of telemigration) negligent-disciplined righteous fully developed human being having countable years life-span (8/1/69)

Riju gati = straight movement (5/3/5; 7/1/4)

Risht (6/5/18, 36, 40)

Risht Devs (6/5/39)

Risht Vimaan (6/5/34, 39)

Risht Vimaan kalp (6/5/2)

Rishtaabh Vimaan (6/5/32, 35)

Ritu = two months; season (5/1/16, 21; 6/7/5)

Rohini (7/3/5)

Ruksha = coarse (5/7/17)

Rupa = appearance or form (7/7/6, 12, 19)

Rupi = with form (7/10/3, 6, 8)

(S)

Sa-ardh = with halves (5/7/9, 10; 5/8/3, 4, 5)

Sa-eja = in the state of vibration (5/7/15)

Sa-madhya = with a middle (5/7/9, 10; 5/8/3, 4, 5)

Sa-pradesh = with sections (5/7/9, 10; 5/8/3, 4, 5, 7, 8, 9)

Saadhaaran kaaya jiva (6/3/28)

Saadi = with a beginning (6/3/1)

Saakaar upayoga = cognitive involvement; jnana (6/3/25, 28; 6/4/16)

Saamparayik = caused by passions (6/3/7)

Saamudaniya (Samudaaniyassa) = collected from various houses (7/1/20)

Saamudayik = collected from various houses (7/1/20)

Saarasvat Devs (6/5/36, 37, 40)

Saasvadan samyaktva = taste of righteousness (6/4/14)

Saata = happiness (6/10/11)

Saata vedana = experienc of pleasure (7/6/8)

Sabha = assembly hall (5/7/34)

Sachitt = infested with living organisms (6/2/1); with life (7/7/3, 8)

Sada-satat = always and continuously (6/3/2, 3)

Sadharan Shariri = clustered life forms (5/9/16)

Sagaar (7/2/7)

Sagaar-pratyakhyan = austerities done with some predetermined relaxations (7/2/8)

Sagaropam = a metaphoric unit of time (5/1/19, 21; 6/3/11); ten Kotakoti Palyopams (6/7/6, 7)

Sahasrar dev-lok (5/8/19)

Sakamp = vibrating (5/7/24)

Sakashaayi jivas = beings with passions (6/4/13, 17)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sam-chaturasra samsthan = perfect body constitution (6/5/43)

Samaarambh satya manah-prayoga parinat = transformed due to truthful tormenting conscious activity of mind (8/1/52, 83)

Samadhi = equanimous serenity (7/1/9)

Samaarambh = harm or destroy (5/7/30, 31; 8/1/54)

Samavayanga (5/5/5)

Samaya = the smallest indivisible unit of time; something even beyond nanosecond (5/1/14)

Samaya kshetra = area of time (5/9/13)

Samayik = a formal Jain meditational practice (7/1/6; 7/2/8)

Samayik Chaaritra = equanimous conduct (6/3/18)

Samayopayogi = continuous transition of involvement (6/4/16)

Sambhinna-lokanaadi = slightly less then the central spine of the lok (5/4/33)

Samdani (5/1/2)

Samlaap = discussing (5/4/31)

Samlekhana = ultimate vow (7/2/8)

Sammurchchhim = birth from asexual origin (5/3/5; 7/5/2; 8/1/10, 62)

Sammurchhim chatushpad sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed quadruped animals of asexual origin (8/1/10, 21)

Sammurchhim jalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of aquatic five-sensed animals of asexual origin (8/1/10, 21)

Sammurchhim khechar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of aerial five-sensed animals of asexual origin (8/1/21)

Sammurchhim manushya = human beings of asexual origin (5/8/19)

Sammurchhim manushya panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed human being of asexual origin (8/1/63)

Sammurchhim manushya panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed human beings of asexual origin (8/1/11, 22, 29)

Sammurchhim panchendriya tiryagyonik jivas = five-sensed animals of asexual origin (5/8/19)

Samparayik kriya = passion inspired activity (7/1/6, 16; 7/7/1)

Samrambh (8/1/54)

Samrambh satya manah-prayoga parinat = transformed due to truthful conscious activity of mind to resolve to sin (8/1/52,83)

Samsar = cycles of rebirth (6/3/9)

Samsar mandal = the world (5/5/4)

Samsar-samapannak jivas = worldly living beings (7/4/2)

Samsthaan = structure (7/1/5)

Samsthan parinat = transformed as attributes of constitution (8/1/48)

Samsthiti kaal = period of existence (5/7/26)

Samudghat = bursting forth (7/5/2)

Samudghat-prapt Kevali = omniscient undergoing the special process of expanding and contracting sections of soul (6/3/28)

Samutthit = begin (6/5/2)

Samvahat = capable of application (6/9/13)

Samvahat-asamvahat = capable and incapable of application (6/9/13)

Samvartak vaat = whirlwinds (7/6/31)

Samvatsar = year; two Ayans (5/1/19, 21; 6/7/5)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Samvrit = blocks the inflow of karmas (7/2/1)

Samvrit Anagaar = an ascetic who has blocked the inflow of karmas (7/7/1)

Samyag-mithyadrishti jivas = righteous-unrighteous beings (6/4/11)

Samyagdarshan = right perception (7/1/10)

Samyagdrishti = righteous (5/7/44; 6/3/1, 15, 18)

Samyagdrishti jivas = righteous beings (6/4/11)

Samyak-jnana = right knowledge (5/4/30)

Samyak-mithyadrishti = the righteous-unrighteous (6/3/15)

Samyaktvakriya = righteous activity (7/4/2)

Samyam = ascetic-discipline (5/5/1; 7/8/1)

Samyat = restrained (5/4/20; 6/3/1, 14, 29; 6/4/20; 7/2/1, 28)

Samyat dvar = port of the restrained (6/4/12)

Samyat jiva = restrained being (6/3/18; 6/4/12)

Samyat-asamyat = restrained-unrestrained or partially restrained (5/4/22; 6/3/14, 18; 6/4/12; 7/2/28)

Samyat-asamyat jivas = restrained-unrestrained beings (6/4/12)

Samyojana (7/1/20)

Samyojana dosh (7/1/17, 18, 20)

Sanatkumar dev (5/8/19)

Sanatkumar kalp = a divine dimension or the third heaven (6/5/2, 18; 6/8/26)

Sanjna = inclinations (7/8/5)

Sanjni = sentient (6/3/1, 16; 6/4/9, 20)

Sanjni dvar = port of the sentient (6/4/9)

Sanjni jivas = sentient beings (6/4/9, 19; 7/7/28)

Sanket (7/2/7)

Sanket-pratyakhyan = abstainment done with specific signs or indications (7/2/8)

Sankhya (6/10/11)

Sannivesh = temporary settlement (6/5/4, 22; 6/8/4, 21)

Sanskrit (5/4/24)

Sapachaya = with de-augmentation (5/8/21, 23, 25, 27)

Sapradesh = with sections (6/1/1; 6/4/1))

Sapradesh dvar (6/4/6)

Sapradeshi = sectional (6/4/-)

Saptahik Hindustan = a Hindi weekly (6/5/16)

Sar-pankti = row of lakes (5/7/34)

Sar-sar-pankti = row of lakes connected with canals (5/7/34)

Saraag = with attachment (6/3/28)

Saraag ahaarak jiva (6/3/28)

Saraag baadar jivas = gross beings with attachment (6/3/28)

Saraag bhashak (6/3/28)

Saraag Bhavasiddhik = destined to be liberated but having attachment (6/3/18)

Saraag paritta (6/3/28)

Saraag Samyagdrishti = righteous with attachment (6/3/18)

Saran = thatched hut (5/7/34)

Sarason = mustard (6/7/3)

Sarovar = natural lake (5/7/34)

Sarva = whole (5/7/13)

Sarva Adattadan viraman = to abstain completely from taking without being given; to abstain completely from acts of stealing (7/2/4)

Sarva Maithun viraman = to abstain completely from indulgence in sexual activities (7/2/4)

Sarva Mrishavad viraman = to abstain completely from falsity (7/2/4)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sarva Parigraha viraman = to abstain completely from acts of possession of things (7/2/4)

Sarva Pranatipat viraman = to abstain completely from harming or destroying life (7/2/4)

Sarva-mool-guna pratyakhyan = complete basic-virtue enhancing renunciation (7/2/3, 4, 8)

Sarva-mool-guna-pratyakhyani = complete basic-virtue enhancing renouncer (7/2/17, 23)

Sarva-uttar-guna pratyakhyan = complete auxiliary-virtue enhancing renunciation (7/2/6-8)

Sarva-uttar-guna-pratyakhyani = complete auxiliary-virtue enhancing renouncers (7/2/24, 27)

Sarvabhaava = all modes (5/4/4)

Sarvaddha = all time (5/8/14)

Sarvakaal = all periods (5/4/4)

Sarvalpahaarata (7/1/4)

Sarvalpahaari = with minute food intake (7/1/4)

Sarvarth Siddha dev-lok (5/8/19)

Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik (8/1/31)

Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/25)

Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Vaimanik dev (8/1/83)

Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/16)

Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik Vaimanik dev prayoga parinat pudgala = consciously transformed as bodies of Sarvarthasiddha Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/35)

Sarvarthasiddha Vimaan (6/6/2)

Sarvatah = from all angles (5/4/4); every way (6/3/2, 3)

Sasharira jivas = beings with a body (6/4/18)

Sasvadan samyagdrishti jiva = one who had a fleeting taste of righteousness (6/4/11)

Sata vedaniya karmas = karmas causing pleasant experience (6/3/28; 7/6/23, 29)

Satina = Arahar; a type of pulse; Cajamus Indicus (6/7/2)

Satirek = slightly more than Muhurt (5/1/9)

Sattva = immobile beings; entities (5/5/2; 5/6/10, 12; 6/5/16, 31, 41; 6/10/11; 7/2/1; 7/6/24)

Satya manah-prayoga parinat = transformed due to truthful activity of mind (8/1/51-53; 8/1/82, 83, 85, 88)

Satya vachan-prayoga parinat = transformed due to truthful conscious activity of speech (8/1/54)

Satya-mrisha manah-prayoga parinat = transformed due to truthful-untruthful conscious activity of mind (8/1/51, 53, 54, 73, 82, 85)

Satyankaar = advance (5/6/6)

Saudharma dev (5/8/19)

Saudharma kalp (6/5/2; 6/8/26)

Saudharma Kalpopapannak = belonging to the Saudharma Kalp (8/1/16, 31)

Saudharma Kalpopapannak dev (8/1/24)

Savedak jivas = genderic beings (6/4/17)

Sayogi = with association (6/3/28)

Sayogi jivas = beings with association (6/4/15)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sayogi Kevali = omniscient with association or action (6/3/7, 16, 28); an omniscient with non-vitiating karmas (7/1/6)

Sayogikevali Gunasthan (6/3/28)

Sechanak (7/9/10)

Shaali = paddy (6/1/1)

Shaashvat = eternal (7/2/36, 37; 7/3/23)

Shabd = sound (5/1/1; 5/7/20; 7/7/6, 12)

Shail = flat-top mountain (5/7/34; 5/9/2)

Shail-paalak (7/10/2)

Shaileshi = mountain-like (5/4/28)

Shaileshi avastha = rock-like steady state (6/1/13)

Shailodayi (7/10/2)

Shaivalodayi (7/10/2)

Shakat = bullock-cart (5/7/34)

Shakha = branch (7/3/4)

Shakrendra = the king of gods (7/9/10)

Shali = fine paddy (6/7/1, 2)

Shankarpur (5/1/2)

Shankh = conch-shell (5/4/1)

Shankh-paalak (7/10/2)

Shankhika = small conch-shell (5/4/1)

Shar = rod (5/6/11)

Sharad = autumn (5/1/21)

Sharad ritu (7/3/1)

Sharira = body (5/7/36)

Sharira dvar = port of the body (6/4/18)

Sharira paryapti = fully developed state of the body (6/4/19; 8/1/71)

Sharira-aparyapti (6/4/19)

Sharkaraprabha (6/6/1; 6/8/1, 11)

Sharkaraprabha prithvi (5/8/15)

Shastra-parinat = mechanically transformed (5/2/13)

Shastraparinanamit = made life-less (7/1/20)

Shastrateet = processed with implements (5/2/13); cooked in fire (7/1/20)

Shaurseni (5/4/24)

Shayan = bed (5/7/34)

Shayyambhav Suri (5/1/2)

Shayyatar-pind = food offered by the person who has provided place of stay (5/6/15)

Sheel-vrats = instructive or complimentary vows of spiritual discipline (7/6/35, 37)

Sheershaprahelika = 8.4 million Sheershaprahelikanga; a number having 194 digits (5/1/19, 21; 6/7/5)

Sheershaprahelikanga = 8.4 million Chulika (5/1/19, 21)

Shikhari = mountain with a peak (5/7/34)

Shikshavrats = instructive or complimentary vows of spiritual discipline (7/6/35, 37; 7/2/8)

Shishir = winter (5/1/21)

Shithilikrit = loosely adhered (6/1/4)

Shivika = covered palanquin (5/7/34)

Shlakshn-shlakshnika = 8 Uchchhlakshn-shlakshnikas (6/7/7)

Shlisht = assimilated (6/1/4)

Shlisht-krit = assimilated (6/1/4)

Shraman (5/2/17)

Shraman nirgranths = ascetics (6/1/3; 7/9/20)

Shramani (5/2/17)

Shramanopasak = devotee of shramans (7/1/6-8, 10; 7/9/20)

Shravak = male disciple of omniscient (5/2/17; 7/2/8)

Shravan (7/3/1)

Shravika = female disciple of omniscient (5/2/17)

Shreni = matrix (6/5/2)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Shrenik (5/1/2)

Shreya kaal = future (5/4/35)

Shringaber = ginger (7/3/5)

Shringatak = a triangular marketplace (5/7/34)

Shrivatsa (6/8/36)

Shrotrendriya = sense organs of hearing (7/7/13; 8/1/35, 37)

Shrotrendriya, chakshurindriya, ghranendriya, jihvendriya evam sparshanendriya prayoga parinat = consciously transformed as sense organs of hearing, seeing, smelling, taste and touch (8/1/34)

Shrut ajnana = lack of scriptural knowledge (6/4/14)

Shrut ajnani = one not endowed with scriptural knowledge (6/3/23)

Shrut jnana = scriptural knowledge (6/4/14)

Shrut jnani = one endowed with scriptural knowledge (6/3/22)

Shubh = auspicious or bright (5/9/3, 5, 7)

Shukla leshya = white complexion of soul (6/4/10; 7/3/9)

Shukraabh (6/5/32)

Shushir = wind instruments (5/4/1)

Shvasochhavas-aparyapti (6/4/19)

Shvasochhavas-paryapti (6/4/19)

Siddha = perfected (5/5/1)

Siddha gati = state of ultimate perfection (7/9/20)

Siddha Keval-darshani = a liberated omniscient (6/3/18)

Sihandi = a type of cactus (7/3/5)

Simhakarni = Adusa; Adhatoda vasica (7/3/5)

Sirili = Cheed; Pinus roxburghii Sargent (7/3/5)

Sissirili (7/3/5)

Skandak (5/2/12; 7/9/20; 7/10/12)

Skandh = an aggregate (5/7/21); thick branch (7/3/4)

Sopachaya = with augmentation (5/8/21, 23, 25, 27, 28)

Sopachaya-sapachaya = with augmentation and de-augmentation (5/8/21, 23, 25, 27)

Spandan = pulsate (5/7/1)

Sparsh = touch (7/7/11, 12)

Sparsh parinat = transformed as attributes of touch (8/1/48)

Sparshanendriya = sense organs of touch (7/7/13)

Sparshanendriya prayoga parinat = consciously transformed as sense organ of touch (8/1/32, 35, 36, 37)

Sprisht = touched (7/1/15)

Stanit Kumar (5/9/5)

Stanit Kumar Bhavan-vaasi dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed Stanit Kumar abode dwelling gods (8/1/23)

Stanit Kumar dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed Stanit Kumar devs (8/1/13, 30)

Sthalachar tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed terrestrial animal (8/1/62)

Sthalachar tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of terrestrial five-sensed animals (8/1/10)

Sthananga Sutra (5/7/36)

Sthapit = food kept apart for the ascetic (5/6/15)

Sthavar = immobile beings (7/1/1)

Sthavir = senior ascetic (5/4/17)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Sthiti = life-span (7/5/2)

Sthiti-kshaya = concldng the realm-specific state (7/9/22)

Sthiti-naam-karma (6/8/34)

Sthiti-naam-nidhatt-ayu = duration programmed life-span (6/8/27)

Sthula Parigraha viraman = to abstain grossly or partially from acts of possession of things (7/2/5)

Sthula Pranatipat viraman = to abstain grossly or partially from harming or destroying life (7/2/5)

Stoka = seven Aan-pran (5/1/16, 21; 6/7/4)

Streevedak jivas = beings with female gender (6/3/29)

Streevedi = female (6/3/18)

Stupa = a memorial pillar or mound (5/7/34)

Subhadra (5/1/2)

Suhasti (7/10/2)

Sukham-dukhama Ara = epoch of more happiness than sorrow (6/7/8)

Sukham-sukhama Ara = epoch of extreme happiness (6/7/8, 9)

Sukhama Ara = epoch of happiness (6/7/8)

Sukshma = minute (5/7/18, 26; 6/3/1; 8/1/32)

Sukshma Addha Palyopam (6/7/8)

Sukshma dvar (6/3/28)

Sukshma jiva = minute being (6/3/27, 28)

Sukshma Kshetra Palyopam (6/7/8)

Sukshma prithvikaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of minute one-sensed earth-bodied beings (8/1/6, 17)

Sukshma Samparaya = 10th level of purity (6/3/18)

Sukshma samparaya Chaaritra = discipline with residual subtle passions (6/3/18)

Sukshma Samparaya Gunasthan (6/9/1)

Sukshma Uddhar Palyopam (6/7/8; 6/8/36)

Sukshma-prithvikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of minute earth-bodied one-sensed being (8/1/58, 59)

Sunei = hear (5/4/4)

Supratishtaabh (6/5/32)

Supratishthit = an earthen pot of the shape of a wine glass (7/1/5)

Sura = wine (5/2/13)

Suran-kand (7/3/5)

Suryaabh (6/5/32)

Sutra = scriptures (5/4/28); Agam (7/1/16)

Svadya = savoury food (5/6/1, 2, 3, 4; 7/1/9, 17)

Svayambhuraman (6/8/35)

Swastika (6/8/36)

Syandamanika = a palanquin as long as a man (5/7/34)

(T)

Taara (8/1/24, 31)

Tadag = pond (5/7/34)

Taijas = fiery (8/1/26-29, 31)

Taijas sharira = fiery body (6/4/18)

Tam (6/5/14)

Tamah-prabha prithvi (5/8/15; 6/6/1; 6/8/1)

Tamaskaaya = body of darkness or agglomerative entity of water-derived darkness (6/1/1; 6/5/1-16, 28, 43; 6/8/26)

Tamstamah-prabha prithvi (5/8/15; 6/6/1)

Tara Vimaan Jyotishk devs = stellar gods of star celestial vehicle (8/1/15)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Tat = stringed instruments (5/4/1)

Tatharupa = conforming to the description in Agams (5/6/1, 2, 3, 4; 7/1/9, 10)

Tatragat = existing there (6/9/7; 7/9/4)

Tattvarth Rajavartika (7/1/13)

Tattvarth Sutra (7/6/29)

Tejas-kaaya (6/5/10; 7/10/19)

Tejaskayik = fire-bodied (7/4/2)

Tejo = fiery (7/3/8)

Tejoleshya = fiery complexion of soul (6/4/10); fire-power (7/3/9; 7/10/21)

Thilli = a coach driven by two horses (5/7/34)

Thiruga (7/3/5)

Til = sesame seed (6/7/2)

Tiryak Lok = transverse world (7/1/5)

Tiryanch panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed animals (8/1/8)

Tiryanch yoni = animal world (5/3/5)

Tiryanch-yonik panchendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of five-sensed animal (8/1/60, 62)

Tiryanch-yonik panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed animals (8/1/10)

Tivra = violent (5/6/14)

Tras jiva = mobile beings (5/2/15)

Tras-kaaya = mobile beings (5/7/30, 31; 7/10/19)

Tras-naadi = the central spine of the Lok or occupied space where living beings exist (7/1/4)

Trasarenu = 8 Urdhvarenus (6/7/7)

Traskaayik = mobile-bodied (7/4/2)

Trik = meeting point of three roads (5/7/34)

Trinahastak = bundle of hay (6/1/4, 14)

Trindriya (5/8/18)

Trindriya jivas (7/7/17)

Trindriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of three-sensed beings (8/1/4, 7)

Trishala Devi (5/4/16)

Trutit = 8.4 million Trutitanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Trutitanga = 8.4 million Purvas (5/1/21; 6/7/5)

Tushit (6/5/36, 40)

(U)

Uchchhavaas = countable Avalikas; time taken for one inhalation (6/7/4)

Uchchhavaas-Nihshvaas = slightly more than 17 Kshullak-bhava-grahan or 4446-2458/3773 Avalika (6/7/5)

Uchchhlakshn-shlakshnika (6/7/7)

Uchchhritodak = surging water (6/8/35)

Udad = a pulse; Phaseolus mungo (6/7/2; 6/10/1; 7/1/13)

Udaya (7/10/2)

Uddalak (6/7/9)

Uddhar Palyopam (6/7/8)

Udgam = origin (7/1/20)

Udirana = fructify or precipitate (5/2/11; 7/1/15)

Udirna moha = fruited attachment (5/4/33)

Udyan = public parks with a variety of flowering plants and fruit trees (5/7/34)

Udyot = light (5/9/3, 4, 5, 7)

Ujjhar = waterfall (5/7/34)

Ujjval = searing (5/6/14)

Umasvati (6/1/4, (7/6/29)

Unodaarika = eating less than the standard quantity (7/1/19)

Upaasak = male lay worshipper of omniscient (5/4/26)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Upaasika = female lay worshipper of omniscient (5/4/26)

Upabhoga-paribhoga-parimaan = limiting of means of subsistence and comforts (7/2/8)

Upachaya = acquisition (6/3/4-7); augment (6/3/2; 7/8/9)

Upadhi = living and non-living things (5/7/36)

Upadhyaya (5/6/19)

Upamaan = analogical knowledge (5/4/26)

Upapaat = instantaneous birth (6/4/6); genesis (7/5/2)

Uparitan-uparitan = highest of the higher (8/1/16)

Uparitan-uparitan Graiveyak Kalpateet Vaimanik dev (8/1/24, 31)

Upasham shreni = the path of pacification (6/4/13)

Upashant moha = pacified fondness (5/4/33; 6/3/12, 18); 11th level of purity (6/3/18); pacified deluding karma (6/3/7)

Upashraya = place of stay for ascetics (7/1/6)

Upayoga = involvement (6/3/1; 6/4/20); application (6/9/13); careful application of knowledge (7/1/16); cognition (7/5/2)

Upayoga dvar = door of involvement (6/3/28; 6/4/16)

Upayogarahit = without a tendency to use knowledge (5/4/30); devoid of application (6/9/13)

Upayogayukta = with a tendency to use knowledge (5/4/30)

Ur-parisarp (8/1/28)

Ur-parisarp sthalachar tiryanch-yonik panchendriya = terrestrial five-sensed non-limbed reptilian animals (8/1/10)

Urdhvalok = upper world (7/1/5)

Urdhvamridang = upturned drum (5/9/14)

Urdhvarenu = 8 Shlakshn-shlakshnikas (6/7/7)

Ushna-yoni = heat-thriving (7/3/2)

Utkarika-bhed = breaking or disintegrating of matter; natural disintegration (5/4/36)

Utpaadan = production (7/1/20)

Utpal = a type of lotus (6/8/36)

Utpala (5/1/19, 21; 6/7/5)

Utpalanga (5/1/19, 21; 6/7/5)

Utsarpini = progressive cycle of time (5/1/21, 22, 25, 27)

Utsarpini kaal = progressive cycle of time (6/7/8)

Utsarpini-Avasarpini kaal-chakra = progressive and regressive time cycle (5/-/-)

Utsutra = acting contrary to Sutra (7/1/16)

Uttar-guna pratyakhyan = auxiliary-virtue enhancing renunciation (7/2/2, 6)

Uttar-guna pratyakhyani = auxiliary-virtue enhancing renouncer (7/2/9, 10, 14)

Uttar-vaikriya sharira = secondary transmuted body (5/2/10, 12)

Utthaan = rise (7/7/20)

Uu = season (5/1/21)

(V)

Vaanavyantar = interstitial (5/9/17)

Vaasupujya Swami (5/1/2)

Vaat-parigha = dark and impassable like a storm (6/5/29, 31)

Vaat-parikshobh = dark and tormenting like a storm (6/5/29, 31)

Vachan = expression (5/4/29, 30)

Vachan prayoga parinat = transformed due to conscious activity of speech (8/1/81, 85, 87, 88, 90)

Vachan yoga = speech activity (8/1/54)

Vachan-karan = speech-instrument (6/1/6, 7)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Vachan-mishra parinat = transformed due to joint activity of speech (8/1/72)

Vachan-prayog = vocal application (6/3/5)

Vachan-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of speech (8/1/50, 54)

Vachan-vargana = karmic particles of vocal category (8/1/54)

Vachan-yogi = one having vocal association (6/3/24, 29; 6/4/15)

Vahni (6/5/36, 40)

Vaijayant (6/6/2)

Vaijayant dev-lok (5/8/19)

Vaikriya = transmutable (6/8/34; 8/1/26, 27, 31)

Vaikriya kaaya yoga = activity of transmutable body (8/1/71)

Vaikriya labdhi bal (8/1/71)

Vaikriya sharira = transmuted body (6/4/18; 8/1/71)

Vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable body (8/1/55, 66, 68)

Vaikriya-mishra kaaya yoga = activity of transmutable-cum-mixed body (8/1/71)

Vaikriya-mishra sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable-cum-mixed body (8/1/55, 68)

Vaimanik = celestial vehicular (5/3/4)

Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed celestial-vehicular divine beings (8/1/12)

Vaimanik Devs = celestial-vehicular gods (5/8/12)

Vairochan (6/5/32)

Vaishaakh (7/3/1)

Vaishali (7/9/10)

Vajji Videhaputra = King Kunik of Vajji or Indra, the wielder of thunder and King Kunik (7/9/5)

Vajra = thunderbolt (5/9/14)

Vajra-kand (7/3/5)

Vakra gati = oblique movement.

Van = forest away from town or village (5/7/34)

Van-khand = forest with similar flora (5/7/34)

Van-raji = forest with rows upon rows of trees (5/7/34)

Vanaspati kaayik ekendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of one-sensed plant-bodied beings (8/1/5, 6)

Vanaspati-kaaya (7/10/19; 8/1/32)

Vanaspati-kayik jivas = plant-bodied beings (7/3/1)

Vanaspatikaaya jivas (7/7/16)

Vanaspatikaayik ekendriya audarik sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of gross physical body of plant-bodied one-sensed being (8/1/57)

Vanaspatikaayiks = plant-bodied beings (6/4/5)

Vanaspatikaayik = plant-bodied (7/4/2)

Vanavyantar = interstitial (5/7/36; 6/10/11)

Vanavyantar devs = interstitial gods (5/8/19; 5/9/9, 13; 8/1/14)

Vapi = rectangular reservoir (5/7/34)

Vapreen = estuary or a water body with gullies (5/7/34)

Vardalikabhakt = food prepared and kept for distributing during calamities (5/6/15)

Varna parinat = transformed as attributes of colour (8/1/48)

Varna parinat pudgala (8/1/48)

Varsha = monsoon (5/1/21)

Varsha ritu (7/3/1)

Varshasahasra = millennium (5/1/19, 21; 6/7/5)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Varshashat = century (5/1/19, 21; 6/7/5)

Varshashatsahasra = one hundred Varshasahasra (5/1/19, 21; 6/7/5)

Varun (6/5/36)

Varun Naag-nriptak (7/9/20)

Vasant = spring (5/1/21)

Vasant ritu (7/3/1)

Vasudevs (5/5/5)

Vayavya Kone = north-west (5/1/4; 5/2/4)

Vayu Kumar (5/2/11)

Vayu-kaaya = air-bodied beings (5/2/9-11)

Vayukaayik ekendriya vaikriya sharira kaaya-prayoga parinat = transformed due to conscious activity of transmutable body of one-sensed air-bodied being (8/1/67)

Vayukayik = air-bodied (7/4/2)

Veda = gender (6/4/20)

Veda dvar = door of gender (6/4/17)

Vedamohaniya = experienceable attachment (5/4/33)

Vedan = suffers (7/1/15)

Vedana = pain (6/1/1); suffering or experiencing (7/3/10)

Vedaniya karma = karma responsible for mundane experience of pain and pleasure (6/3/11); sensation producing karma (6/3/16, 18, 20, 26, 28; 7/6/29; 7/8/6)

Vehalla (7/9/10)

Vejan = vibrate unusually (5/7/1)

Vibhang jnana = perverse knowledge (6/4/14; 6/9/13)

Vibhang jnani = one endowed with pervert knowledge (6/3/23)

Vibhatsata = grotesqueness (6/3/2)

Vidyadhar (5/2/17)

Vidyunmegh = thundering clouds (7/6/31)

Vigrahagati Samapanna = those undergoing oblique movement (6/3/28; 6/5/10, 25; 6/8/8, 19)

Vijaya (6/6/2)

Vijaya Anuttaraupapatik Kalpateet (8/1/31)

Vijaya Anuttaraupapatik Kalpateet dev (8/1/24)

Vijaya Anuttaraupapatik Kalpateet Vaimanik dev panchendriya prayoga parinat pudgala = matter consciously transformed as bodies of five-sensed Vijaya Anuttaraupapatik celestial-vehicular divine beings beyond the Kalps (8/1/16)

Vijaya dev-lok (5/8/19)

Vikalendriya jivas = two to four-sensed beings (6/1/5, 6)

Vikalendriyas = two to four sensed beings (6/4/9, 11, 14)

Vikurvana = self-mutation (6/9/2, 3, 12; 7/9/1, 2)

Vimaan = celestial vehicle (6/5/18; 7/5/2)

Viparinamit = transformed (6/1/4)

Vipul = great (5/6/14)

Virah kaal = intervening time (6/4/6); the period when there is neither birth nor death (5/8/27)

Viraman-vrats = five minor vows (7/6/35, 37)

Virat = detached (7/2/1)

Virati = renunciation (7/1/1)

Virya = mental capacity (7/7/20)

Virya-pradhaan = potency-predominated (5/4/35)

Viryantaraya = potency hindering (8/1/54)

Vish-megh = toxic water bearing cloud (7/6/31)

Vishkambh = breadth or spread or area (6/5/4, 19)

Visrasa = naturally (6/3/4)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Visrasa parinat = naturally transformed (8/1/3, 49, 74, 80, 85, 86, 88, 89, 91)

Visrasa parinat pudgala = naturally transformed matter (8/1/48, 85)

Vitaraag = detached (6/3/28)

Vitaraag ahaarak jiva (6/3/28)

Vitaraag baadar jivas = detached gross beings (6/3/28)

Vitaraag bhashak (6/3/28)

Vitaraag Bhavasiddhik = detached ones destined to be liberated (6/3/18)

Vitaraag paritta (6/3/28)

Vitaraag Samyagdrishti = righteous without attachment (6/3/18)

Vitasti = Baint; Bitta; 12 Anguls (6/7/7)

Vitat = percussion instruments (5/4/1)

Vriksh = tree (8/-/-; 1/1)

Vyavahar Addha Palyopam (6/7/8)

Vyavahar Kshetra Palyopam (6/7/8)

Vyavahar Uddhar Palyopam (6/7/8)

Vyavaharik Palyopam (6/7/7)

Vyeshaniya (Vesiyassa) = explored with particular care (7/1/20)

Vyeshit = offered due to ascetic garb (7/1/20)

Vyuchchhinn = destroyed (7/1/16)

Vyuchchhitti naya = transformational aspects (7/3/23)

Vyutkranti kaal = the period when there is neither birth nor death (5/8/27)

(Y)

Yan = vehicle (5/7/34)

Yathabaadar = gross (6/1/4)

Yathakhyat chaaritra = conduct conforming to perfect purity (6/3/18; 7/1/16)

Yathasutra = as prescribed in scriptures (7/7/1)

Yav = barley (6/6/5; 6/7/1)

Yav-yav = special variety of barley, also called jayi (6/7/1)

Yavamadhya = 8 Yukas (6/7/7)

Yoga = association (5/4/35); methods (7/2/1)

Yoga dvar = port of association (6/3/28; 6/4/15)

Yojan = 4 Gau (6/7/7)

Yoni = genus (5/3/5); sprouting capacity (6/7/1)

Yoni samgraha = ways of birth (7/5/2)

Yug = five Samvatsars (5/1/19, 21; 6/7/5)

Yuga = Dhanush; Dand; Nalika; Aksha; Musal; 96 Anguls (6/7/7)

Yugya = palanquin (5/7/34)

Yuka = 8 Liksha (6/7/7)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐

परिशिष्ट-२

आगमों का अनध्यायकाल

(स्व. आचार्यप्रवर श्री आत्माराम जी महाराज द्वारा सम्पादित नन्दी सूत्र से उद्धृत)

स्वाध्याय के लिए आगमों में जो समय बताया गया है, उसी समय शास्त्रों का स्वाध्याय करना चाहिए अनध्यायकाल में स्वाध्याय वर्जित है।

मनुस्मृति आदि स्मृतियों में भी अनध्यायकाल का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। वैदिक लोग भी वेद वे अनध्यायों का उल्लेख करते हैं। इसी प्रकार अन्य आर्ष ग्रन्थों का भी अनध्याय माना जाता है। जैनागम भ सर्वज्ञोक्त, देवाधिष्ठित तथा स्वर-विद्या संयुक्त होने के कारण, इनका भी शास्त्रों में अनध्यायकाल वर्णित किय गया है।

स्थानांग सूत्र के अनुसार, दस आकाश से सम्बन्धित, दस औदारिक शरीर से सम्बन्धित, चार महाप्रतिपदा चार महाप्रतिपदा की पूर्णिमा और चार सन्ध्या। इस प्रकार बत्तीस अनध्यायकाल माने गए हैं, जिनका संक्षेप में निम्न प्रकार से वर्णन है-

आकाश सम्बन्धी दस अनध्याय

१. **उल्कापात-तारापतन**-यदि महत् तारापतन हुआ है तो एक प्रहर पर्यन्त शास्त्र-स्वाध्याय नही करना चाहिए।

२. **दिग्दाह**-जब तक दिशा रक्तवर्ण की हो अर्थात् ऐसा मालूम पड़े कि दिशा में आग-सी लगी है, तब भी स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

३. **गर्जित**-बादलों के गर्जन पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

४. **विद्युत्**-बिजली चमकने पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

किन्तु गर्जन और विद्युत् का अस्वाध्याय चातुर्मास में नहीं मानना चाहिए। क्योंकि वह गर्जन और विद्युत् प्रायः ऋतु-स्वभाव से ही होता है। अतः आर्द्रा से स्वाति नक्षत्र पर्यन्त अनध्याय नहीं माना जाता।

५. **निर्घात**-बिना बादल के आकाश में व्यन्तरादिकृत घोर गर्जना होने पर दो प्रहर तक अस्वाध्यायकाल है।

६. **यूपक**-शुक्ल पक्ष में प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया को सन्ध्या की प्रभा और चन्द्रप्रभा के मिलने को यूपक कहा जाता है। इन दिनों प्रहर रात्रि पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

७. **यक्षादीप्त**-कभी किसी दिशा में बिजली चमकने जैसा, थोड़े-थोड़े समय पीछे जो प्रकाश होता है वह यक्षादीप्त कहलाता है। अतः आकाश में जब तक यक्षाकार दीखता रहे तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

८. **धूमिका-कृष्ण**-कार्तिक से लेकर माघ मास तक का समय मेघों का गर्भमास होता है। इसमें धूम्र वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुंध पड़ती है। वह धूमिका-कृष्ण कहलाती है। जब तक वह धुंध पड़ती रहे, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

९. **मिहिकाश्वेत**-शीतकाल में श्वेत वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुंध मिहिका कहलाती है। जब तक यह गिरती रहे, तब तक अस्वाध्यायकाल है।

卐卐卐

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. **रज–उद्‌घात**–वायु के कारण आकाश में चारों ओर धूल छा जाती है। जब तक यह धूल फैली रहती है, स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

औदारिक शरीर सम्बन्धी दस अनध्याय

११–१३. **हड्डी, माँस और रुधिर**–पंचेन्द्रिय, तिर्यंच की हड्डी, माँस और रुधिर यदि सामने दिखाई दें, तो जब तक वहाँ से यह वस्तुएँ उठाई न जाएँ, तब तक अस्वाध्याय है। वृत्तिकार आसपास के ६० हाथ तक इन वस्तुओं के होने पर अस्वाध्याय मानते हैं।

इसी प्रकार मनुष्य सम्बन्धी अस्थि, माँस और रुधिर का भी अनध्याय माना जाता है। विशेषता इतनी है कि इनका अस्वाध्याय सौ हाथ तक तथा एक दिन-रात का होता है। स्त्री के मासिक धर्म का अस्वाध्याय तीन दिन तक तथा बालक एवं बालिका के जन्म का अस्वाध्याय क्रमशः सात एवं आठ दिन पर्यन्त का माना जाता है।

१४. **अशुचि**–मल-मूत्र सामने दिखाई देने तक अस्वाध्याय है।

१५. **श्मशान**–श्मशान भूमि के चारों ओर सौ-सौ हाथ पर्यन्त अस्वाध्याय माना जाता है।

१६. **चन्द्रग्रहण**–चन्द्रग्रहण होने पर जघन्य आठ, मध्यम बारह और उत्कृष्ट सोलह प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

१७. **सूर्यग्रहण**–सूर्यग्रहण होने पर भी क्रमशः आठ, बारह और सोलह प्रहर पर्यन्त अस्वाध्यायकाल माना गया है।

१८. **पतन**–किसी बड़े मान्य राजा अथवा राष्ट्र-पुरुष का निधन होने पर जब तक उसका दाह-संस्कार न हो, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए अथवा जब तक दूसरा अधिकारी सत्तारूढ़ न हो, तब तक शनैः-शनैः स्वाध्याय करना चाहिए।

१९. **राजव्युद्‌ग्रह**–समीपस्थ राजाओं में परस्पर युद्ध होने पर जब तक शान्ति न हो जाए, तब तक और उसके पश्चात् भी एक दिन-रात्रि स्वाध्याय नहीं करे।

२०. **औदारिक शरीर**–उपाश्रय के भीतर पंचेन्द्रिय जीव का वध हो जाने पर जब तक कलेवर पड़ा रहे, तब तक तथा १०० हाथ तक यदि निर्जीव कलेवर पड़ा हो तो स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

२१–२८. **चार महोत्सव और चार महाप्रतिपदा**–आषाढ़-पूर्णिमा, आश्विन-पूर्णिमा, कार्तिक-पूर्णिमा और चैत्र-पूर्णिमा ये चार महोत्सव हैं। इन पूर्णिमाओं के पश्चात् आने वाली प्रतिपदा को महाप्रतिपदा कहते हैं। इनमें स्वाध्याय करने का निषेध है।

२९–३२. **प्रातः, सायं, मध्याह्न और अर्ध-रात्रि**–प्रातः सूर्य उगने से एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे, सूर्यास्त होने से एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे, मध्याह्न अर्थात् दोपहर में एक घड़ी पहले और एक घड़ी पीछे एवं अर्ध-रात्रि में भी एक घड़ी पहले तथा एक घड़ी पीछे स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार अस्वाध्यायकाल टालकर दिन-रात्रि में चार काल का स्वाध्याय करना चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐!

Appendix-2

INAPPROPRIATE TIME FOR STUDY OF AGAMS

(Quoted from Nandi Sutra edited by Late Acharya Pravar Shri Atmaram ji M.)

Scriptures should be studied only at the appropriate time as prescribed in the *Agams*. Study of scriptures at a 'time inappropriate for studies' (*anadhyaya kaal*) is prohibited.

Detailed description of *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) is also included in *Smritis* (the corpus of *Sanatan Dharmashastra*) like *Manusmriti*. Vedic people also mention about the *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) of the *Vedas*. This rule is applicable to other Aryan holy books. As Jain *Agams* are sermons of the Omniscient, ensconced by the *devas*, and phonetically composed, discussion about the *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies) is also included in the scriptures. For example :

According to *Sthananga Sutra* there are thirty two slots of time defined as *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies)—ten related to sky, ten related to the gross physical body (*audarik sharira*), four relating to *mahapratipada* (the date following a specific full moon night), four relating to the date of the said full moon night, and four relating to *sandhya* (the four junctions of parts of the day, viz. morning, noon, evening and midnight). They are briefly described as follows :

RELATING TO SKY

1. Ulkapat or Tarapatan—If a falling star or a comet is visible in the sky, scriptures should not be studied for three hours following the incident.

2. Digdaha—As long as the sky looks crimson in any direction, as if there was a fire, then study of scriptures should not be done.

3. Garjit—For three hours following thunder of clouds such studies are prohibited.

4. Vidyut—For three hours following lightening such studies are prohibited.

However, the prohibition related to thunder and lightening is not applicable during the four months of monsoon. This is because frequent thunder and lightening is an essential attribute of that season. Thus this prohibition is relaxed starting from *Ardra* till *Svati Nakshatra* (lunar mansion or 27/28 divisions of the ecliptic on the path of the moon).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. Nirghat—For six hours following thunder without clouds (demonic or otherwise) such studies are prohibited.

6. Yupak—The conjunction of solar and lunar glows at twilight hour on first, second and third days of the bright half of a month (*Shukla Paksha*) is called *Yupak*. During these dates such studies are prohibited during the first quarter of the night.

7. Yakshadeepti—Some times there is a lightening like intermittent glow visible in the sky. This is called *Yakshadeepti*. As long as such glow is visible in the sky such studies are prohibited.

8. Dhoomika-krishna—The months from *Kartik* to *Maagh* are months of cloud formation. During this period smoky fog of suspended water particles is a frequent phenomenon. This is called *Dhoomika-krishna*. As long as this fog exists such studies are prohibited.

9. Mihikashvet—The white mist during winter season is called *Mihikashvet*. As long as this exists such studies are prohibited.

10. Raj-udghat—High speed wind causes dust storm. This is called *Raj-udghat*. As long as the sky is filled with dust such studies are prohibited.

RELATING TO GROSS PHYSICAL BODY

11-13. Bone, flesh and blood—As long as bone, flesh and blood of five sensed animals are visible and not removed from sight such studies are prohibited. According to the commentator (*Vritti*) if such things are lying up to a distance of 60 yards the prohibition is effective.

This rule is applicable to human bones, flesh and blood with the amendment that the distance is 100 cubits and the effective period is one day and night. The period prohibited for studies is three days in case of a women in menstruation, seven days in case of male-child birth and eight days in case of a female-child birth.

14. Ashuchi—As long as excreta is visible and not removed from sight such studies are prohibited.

15. Smashan—Up to a distance of hundred yards in any direction from a cremation ground such studies are prohibited.

16. Chandra grahan—At the time of lunar eclipse such studies are prohibited for eight, twelve or sixteen hours.

17. Surya grahan—At the time of solar eclipse such studies are prohibited for eight, twelve or sixteen hours.

18. Patan—On the death of a king or some other nationally eminent person such studies are prohibited as long as he is not cremated. Even after that, the period of study is kept limited as long as his successor does not take over.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

19. Raaj-vyudgraha—During a war between neighbouring states such studies are prohibited as long as peace does not prevail. Studies should be resumed only 24 hours after peace is established.

20. Audarik Sharira—In case a five sensed animal dies or is killed in an *upashraya* (place of stay for ascetics) such studies are prohibited as long as the dead body is not removed. This prohibition also applies if a dead body is lying within 100 yards of the place of stay.

21-28. Four Mahotsavas and four Mahapratipada—*Ashadh, Ashvin, Kartik* and *Chaitra purnimas* (the full moon days of these four months) are called great festival days. The days after these festival days are called *Mahapratipada*. On all these days such studies are prohibited.

29-32. Sandhya—During the twenty four minutes preceding and following the four junctions of parts of the day, viz. morning, noon, evening and midnight such studies are prohibited.

Studies of scriptures or other holy books should be done avoiding all these *anadhyaya kaal* (time inappropriate for studies).

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विश्व में पहली बार जैन साहित्य के इतिहास में एक नये ज्ञान युग का शुभारम्भ

(जैन आगम, हिन्दी एवं अंग्रेजी भावार्थ और विवेचन के साथ। शास्त्र के भावों को उद्घाटित करने वाले बहुरंगे चित्रों सहित)

१. **सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र** — **मूल्य ५००/–**

भगवान महावीर की अन्तिम वाणी। आदर्श जीवन विज्ञान तथा तत्त्वज्ञान से युक्त मोक्षमार्ग के सम्पूर्ण अंगों का सारपूर्ण वर्णन। एक ही सूत्र में सम्पूर्ण जैन आचार, दर्शन और सिद्धान्तों का समग्र सद्बोध।

२. **सचित्र दशवैकालिक सूत्र** — **मूल्य ५००/–**

जैन श्रमण की अहिंसा व यतनायुक्त आचार संहिता। जीवन में पद-पद पर काम आने वाले विवेकयुक्त, संयत व्यवहार, भोजन, भाषा, विनय आदि की मार्गदर्शक सूचनाएँ। आचार विधि को रंगीन चित्रों के माध्यम से आकर्षक और सुबोध बनाया गया है।

३. **सचित्र नन्दी सूत्र** — **मूल्य ५००/–**

मतिज्ञान-श्रुतज्ञान आदि पाँचों ज्ञानों का विविध उदाहरणों सहित विस्तृत वर्णन।

४. **सचित्र अनुयोगद्वार सूत्र (भाग १, २)** — **मूल्य १,०००/–**

यह शास्त्र जैनदर्शन और तत्वज्ञान को समझने की कुंजी है। नय, निक्षेप, प्रमाण, जैसे दार्शनिक विषयों के साथ ही गणित, ज्योतिष, संगीतशास्त्र, काव्यशास्त्र, प्राचीन लिपि, नाप-तौल आदि सैकड़ों विषयों का वर्णन है। यह सूत्र गम्भीर भी है और बड़ा भी है। अतः दो भागों में प्रकाशित किया है।

५. **सचित्र आचारांग सूत्र (भाग १, २)** — **मूल्य १,०००/–**

यह ग्यारह अंगों में प्रथम अंग है। भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सम्यक्त्व, संयम, तितिक्षा आदि आधारभूत तत्त्वों का बहुत ही सुन्दर वर्णन है। भगवान महावीर का जीवन-चरित्र, उनकी छद्मस्थ चर्या का आँखों देखा वर्णन तथा जैन श्रमण का आचार-विचार दूसरे भाग में है। दोनों भाग विविध ऐतिहासिक व सांस्कृतिक चित्रों से युक्त।

६. **सचित्र स्थानांग सूत्र (भाग १, २)** — **मूल्य १,२००/–**

यह चौथा अंग सूत्र है। अपनी खास संख्या प्रधान शैली में संकलित यह शास्त्र ज्ञान, विज्ञान, ज्योतिष, भूगोल, गणित, इतिहास, नीति, आचार, मनोविज्ञान, पुरुष-परीक्षा आदि सैकड़ों प्रकार के विषयों का ज्ञान देने वाला बहुत ही विशालकाय शास्त्र है। भावार्थ और विवेचन के कारण प्रत्येक पाठक के लिए समझने में सरल और ज्ञानवर्धक है।

७. **सचित्र ज्ञाताधर्मकथा सूत्र (भाग १, २)** — **मूल्य १,०००/–**

भगवान महावीर द्वारा प्रवचनों में प्रयुक्त धर्मकथाएँ, उद्बोधक, रूपक, दृष्टान्त आदि जिनके माध्यम से तत्त्वज्ञान सहज ही ग्राह्य हो गया है। विविध रोचक रंगीन चित्रों से युक्त। दो भागों में सम्पूर्ण आगम।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. सचित्र उपासकदशा एवं अनुत्तरौपपातिकदशा सूत्र — मूल्य ५००/-

सप्तम अंग उपासकदशा में भगवान महावीर के प्रमुख १० श्रावकों का जीवन-चरित्र तथा उनके श्रावक धर्म का रोचक वर्णन है। नवम अंग अनुत्तरौपपातिकदशा में उत्कृष्ट तपःसाधना करने वाले ३३ श्रमणों की तप ध्यान-साधना का रोमांचक वर्णन है। भावों को स्पष्ट करने वाले कलात्मक रंगीन चित्रों सहित।

९. सचित्र निरयावलिका एवं विपाक सूत्र — मूल्य ६००/-

निरयावलिका में पाँच उपांग हैं। भगवान महावीर के परम भक्त राजा कूणिक के जन्म आदि का वर्णन तथा वैशाली गणतंत्राध्यक्ष चेटक के साथ हुए महाशिलाकंटक युद्ध का रोमांचक सचित्र चित्रण तथा भगवान अरिष्टनेमि एवं भगवान पार्श्वनाथ के शासन में दीक्षित अनेक श्रमण-श्रमणियों का चरित्र इनमें है।

विपाक सूत्र में अशुभ कर्मों के अत्यन्त कटु फल का वर्णन है, जिसे सुनते ही हृदय द्रवित हो जाता है, तथा सुखविपाक में दान, तप आदि शुभ कर्मों के महान् सुखदायी पुण्य फलों का मुँह बोलता वर्णन है। भावपूर्ण रोचक कलापूर्ण चित्रों के साथ।

१०. सचित्र अन्तकृद्दशा सूत्र — मूल्य ५००/-

आठवें अंग अन्तकृद्दशा सूत्र में मोक्षगामी ९० महान् आत्म-साधक श्रमण-श्रमणियों के तपोमय साधना जीवन का प्रेरक वर्णन है। यह सूत्र पर्युषण में विशेष रूप में पठनीय है। विविध चित्र व तपों के चित्रों से समझने में सरल सुबोध है।

११. सचित्र औपपातिक सूत्र — मूल्य ६००/-

यह प्रथम उपांग है। इसमें राजा कूणिक का भगवान महावीर की वन्दनार्थ प्रस्थान, दर्शन-यात्रा तथा भगवान की धर्मदेशना, धर्म प्ररूपणा आदि विषयों का बहुत ही विस्तृत लालित्ययुक्त वर्णन है। इसी में अम्बड़ परिव्राजक आदि अनेक परिव्राजकों की तपःसाधना का वर्णन भी है।

१२. सचित्र रायपसेणिय सूत्र — मूल्य ५००/-

यह द्वितीय उपांग है। धर्मद्वेषी प्रदेशी राजा को धर्मबोध देकर परम धार्मिक बनाने वाले महान् ज्ञानी आचार्य केशीकुमार श्रमण के साथ आत्मा, परलोक, पुनर्जन्म आदि विषयों पर हुई तर्कयुक्त अध्यात्म-चर्चा प्रत्येक जिज्ञासु के लिए पठनीय ज्ञानवर्द्धक है। आत्मा और शरीर की भिन्नता समझाने वाले उदाहरणों के चित्र भी बोधप्रद हैं।

१३. सचित्र कल्प सूत्र — मूल्य ५००/-

कल्प सूत्र का पठन, पर्युषण में विशेष रूप में होता है। इसमें २४ तीर्थंकरों का जीवन-चरित्र है। साथ ही भगवान महावीर का विस्तृत जीवन-चरित्र, श्रमण समाचारी तथा स्थविरावली का वर्णन है। २४ तीर्थंकरों के जीवन से सम्बन्धित सुरम्य चित्रों के कारण सभी के लिए आकर्षक उपयोगी है।

१४. सचित्र छेद सूत्र (दशा-कल्प-व्यवहार) — मूल्य ६००/-

आचार-शुद्धि के लिए जिन आगमों में विशेष विधान है, उन्हें 'छेद सूत्र' कहा गया है। छेद सूत्रों में आचार-शुद्धि के सूक्ष्म से सूक्ष्म नियमों का वर्णन है। चार छेद सूत्रों में दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवहार–ये तीन छेद सूत्र सभी श्रमण–श्रमणियों के लिए विशेष पठनीय हैं। प्रस्तुत भाग में तीनों छेद सूत्रों का भाष्य आदि के आधार पर विवेचन है। अंग्रेजी अनुवाद के साथ १५ रंगीन चित्रों सहित प्रकाशित है।

१५. **सचित्र भगवती सूत्र (भाग १, २)** मूल्य १२००/–

पंचम अंग व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र 'भगवती' के नाम से अधिक प्रसिद्ध है। इसमें जीव, द्रव्य, पुद्गल, परमाणु, लोक आदि चारों अनुयोगों से सम्बन्धित हजारों प्रश्नोत्तर हैं। यह विशाल आगम जैन तत्त्व विद्या का महासागर है। संक्षिप्त और सुबोध अनुवाद व विवेचन के साथ यह आगम लगभग ६ भाग में पूर्ण होने की सम्भावना है। प्रथम भाग १ से ४ शतक तक तथा १५ रंगीन चित्रों सहित प्रकाशित है। द्वितीय भाग में ५ से ७ शतक सम्पूर्ण तथा ८वें शतक का प्रथम उद्देशक लिया गया है। साथ ही सदा की भाँति भाव पूर्ण १५ रंगीन चित्रों से युक्त है।

१६. **सचित्र जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र** मूल्य ६००/–

यह छठा उपांग है। इस सूत्र का मुख्य विषय जम्बूद्वीप का विस्तृत वर्णन हैं। जम्बूद्वीप में आये मानव क्षेत्र, पर्वत, नदियाँ, महाविदेह क्षेत्र, मेरु पर्वत तथा मेरु पर्वत की प्रदक्षिणा करते सूर्य–चन्द्र आदि ग्रह नक्षत्र, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी आदि के विस्तृत वर्णन के साथ ही चौदह कुलकर, प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव का चरित्र, सम्राट् भरत चक्रवर्ती की षट्खण्ड विजय आदि अनेक विषयों का वर्णन भी इस सूत्र में आता है। इसमें दिये रंगीन चित्र जम्बूद्वीप की भौगोलिक स्थिति, सूर्य–चन्द्र आदि ग्रहों की गति समझने में काफी उपयोगी सिद्ध होंगे। भगवान ऋषभदेव के जीवन से जुड़े सुन्दर भावपूर्ण रोचक चित्र पाठकों को मुँह बोलते प्रतीत होंगे। यह सूत्र जैन, भूगोल, खगोल और इतिहास का ज्ञानकोष है।

- ❑ इस प्रकार २१ जिल्दों में २३ आगम तथा कल्प सूत्र प्रकाशित हो चुके हैं। प्राकृत अथवा हिन्दी का साधारण ज्ञान रखने वाले व्यक्ति भी अंग्रेजी माध्यम से जैनशास्त्रों का भाव, उस समय की आचार–विचार प्रणाली आदि को अच्छी प्रकार से समझ सकते हैं। अंग्रेजी शब्द कोष भी दिया गया है।
- ❑ पुस्तकालयों, ज्ञान–भण्डारों तथा संत–सतियों, स्वाध्यायियों के लिए विशेष रूप से संग्रह करने योग्य आगमों का यह प्रकाशन कुछ समय पश्चात् दुर्लभ हो सकता है।
- ❑ इस आगममाला के प्रकाशन में परम श्रद्धेय उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. की अत्यन्त बलवती प्रेरणा रही है। उनके शिष्यरत्न जैन शासन दिवाकर आगमज्ञाता उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि जी म. द्वारा सम्पादित है, इनके सह–सम्पादक हैं प्रसिद्ध विद्वान् श्रीचन्द सुराना। अंग्रेजी अनुवादकर्त्ता हैं श्री सुरेन्द्र बोथरा तथा सुश्रावक श्री राजकुमार जी जैन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

IN THE HISTORY OF JAIN LITERATURE BEGINNING OF A NEW ERA OF KNOWLEDGE FOR THE FIRST TIME IN THE WORLD

(Jain Agams published with free flowing translation in Hind and English. Also included are multicoloured illustrations vividly exemplifying various themes contained in scriptures)

1. **Illustrated Uttaradhyayan Sutra** **Price Rs. 500/-**

   The last sermon of Bhagavan Mahavir. Essence of the ideal way of life and path of liberation based on philosophical knowledge contained in all Angas. The pious discourse encapsulating complete Jain conduct, philosophy and principles.

2. **Illustrated Dashavaikalik Sutra** **Price Rs. 500/-**

   The simple rule book of ahimsa and caution based Shraman conduct rendered vividly with the help of multicoloured illustrations. Useful at every step in life, even of common man, as a guide book of good behaviour, balanced conduct and norms of etiquette, food and speech.

3. **Illustrated Nandi Sutra** **Price Rs. 500/-**

   All enveloping discussion of the five facets of knowledge including Mati-jnana and Shrut-jnana.

4. **Illustrated Anuyogadvar Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

   This scripture is the key to understanding Jain philosophy and metaphysics. Besides philosophical topics like Naya, Nikshep and Praman it contains discussion about hundreds of other subjects including mathematics, astrology, music, poetics, ancient scripts and weights and measures. The complexity and volume of this could be covered only in two volumes.

5. **Illustrated Acharanga Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,000/-**

   This is the first among the eleven Angas. It contains lucid description of ahimsa, samyaktva, samyam, titiksha and other fundamentals propagated by Bhagavan Mahavir. Eye-witness-like description of the life of Bhagavan Mahavir and his pre-omniscience praxis as well as details about ascetic conduct and praxis form the second part. Both parts contain multi-coloured illustrations on a variety of historical and cultural themes.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

6. **Illustrated Sthananga Sutra (Parts 1 and 2)** **Price Rs. 1,200/-**

This is the fourth Anga Sutra. Compiled in its unique numerical placement style, this scripture is a voluminous work containing information about scriptural knowledge, science, astrology, geography, mathematics, history, ethics, conduct, psychology, judging man and hundreds of other topics. The free flowing translation and elaboration make the contents easy to understand and edifying even for common readers.

7. **Illustrated Jnata Dharma Katha Sutra (Parts 1 and 2) Price Rs. 1,000/-**

Famous inspiring and enlightening religious tales, allegories and incidents told by Bhagavan Mahavir presented with attractive colourful illustrations. This works makes the abstract philosophical principles easy to understand. This is the sixth Anga complete in two volumes.

8. **Illustrated Upasak Dasha and Anuttaraupapatik Dasha Sutra Price Rs. 500/-**

This book contains the seventh and the ninth Angas. The seventh Anga, Upasak Dasha, contains the stories of life of ten prominent Shravak disciples of Bhagavan Mahavir with a special emphasis on their religious conduct. The ninth Anga Anuttaraupapatik Dasha contains thrilling description of the lofty austerities and meditation done by thirty three specific ascetics. With colourful illustrations.

9. **Illustrated Niryavalika and Vipaak Sutra** **Price Rs. 600/-**

Niryavalika has five Upangas that contain the story of the birth of king Kunik, a devout disciple of Bhagavan Mahavir. This also contains the thrilling and illustrated description of the famous Mahashilakantak war between Kunik and Chetak, the president of the republic of Vaishali. Besides these it also has life-stories of many Shramans and Shramanis of the lineage of Bhagavan Parshva Naath.

Vipaak Sutra contains the description of the extremely bitter fruits of ignoble deeds. This touching description inspires one towards noble deeds like charity and austerities the fruits of which have been lucidly described in its second section titled Sukha-vipaak. The colourful artistic illustrations add to the attraction.

10. **Illustrated Antakriddasha Sutra** **Price Rs. 500/-**

This eighth Anga contains the inspiring stories of the spiritual pursuits of ninety great men destined to be liberated. This Sutra is specially read during the Paryushan period. The illustrations related to austerities are specially informative.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

11. Illustrated Aupapatik Sutra **Price Rs. 600/-**

This the first Upanga. This contains lucid and poetic description of numerous topics including King Kunik's preparations to go to pay homage to Bhagavan Mahavir, Bhagavan's sermon and establishment of the religious order. This also contains the description of austerities observed by Ambad and many other Parivrajaks.

12. Illustrated Raipaseniya Sutra **Price Rs. 500/-**

This is the third Upanga. It provides an interesting and edifying reading of the discussions between Acharya Keshi Kumar Shraman and the anti-religious king Pradeshi on topics like soul, next life, and rebirth. This dialogue turned him into a great religionist. The illustrations of the examples showing the difference between soul and body are also instructive.

13. Illustrated Kalpa Sutra **Price Rs. 500/-**

Kalpa Sutra is widely read and recited during the Paryushan festival. It contains stories of life of 24 Tirthankars with more details about Bhagavan Mahavir's life. It also contains the disciple lineage of Bhagavan Mahavir and detailed ascetic praxis. The illustrations connected with the 24 Tirthankars add to its attraction as well as utility.

14. Illustrated Chheda Sutra **Price Rs. 600/-**

The Agams that contain special procedures for purity of conduct are called Chheda Sutra. These Sutras enumerate subtle rules for purity of conduct. Of the four Chheda Sutras three should be specially read by all ascetics – Dashashrut-skandh, Brihatkalpa and Vyavahar. This edition contains these three Chhed Sutras with elaboration based on commentaries (Bhashya) and other works. It also includes English translation and 15 multicolour illustrations.

15. Illustrated Bhagavati Sutra (Parts 1 and 2) **Price Rs. 1200/-**

Vyakhyaprajnapti, the fifth Anga, is popularly known as Bhagavati. It contains thousands of questions and answers on various topics from four Anuyogas, such as soul, entities, matter, ultimate particle and universe. This voluminous Agam is an ocean of Jain metaphysics. With simple translation and brief elaboration it is expected to be completed in six volumes. The first volume contains one to four Shataks and 15 illustrations. The second volume contains five to seven Shataks complete

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

and first Uddeshak of the eighth Shatak. As usual 15 colourful illustrations have also been included. These will make the complex topics simple and easy to understand. This is probably for the first time that an English translation of this Agam is being published.

16. Illustrated Jambudveep Prajnapti Sutra **Price Rs. 600/-**

This is the sixth Upanga. The central theme of this Sutra is detailed description of Jambudveep. The list of topics discussed in this include inhabited areas of Jambudveep continent, mountains, rivers, Mahavideh area, Meru mountain, the sun, the moon, planets, and constellations moving around the Meru; regressive and progressive cycles of time; people like the fourteen Kulakars, the first Tirthankar Bhagavan Risabhadeva; and incidents like the conquest of the six divisions of the Bharat area. The colourful illustrations included in this volume will be helpful in understanding the geographical conditions of Jambudveep as well as the movement of the sun, the moon and planets. The readers will find the beautiful multicoloured illustrations of incidents from Bhagavan Risabhadeva's life very lively. This Sutra is a compendium of Jain geography, cosmology and history.

- Till date 23 Agams (including two parts of Bhagavati) and Kalpa Sutra have been published in 21 books. The English translation makes it possible for those with passing knowledge of Prakrit and Hind to understand the content of Jain Agams including the religious practices as prevalent in ancient times. Also included in some of these editions are glossaries of Jain terms with their meaning in English.
- Due to its demand by libraries, Jnana Bhandars, ascetics and lay readers this unique series may soon go out of print.
- The publication of this Agam series has been inspired by Uttar Bharatiya Pravartak Gurudev Bhandari Shri Padmachandra ji M. S. Its editor is his able disciple Uttar Bharatiya Pravartak Shri Amar Muni ji Maharaj. His team includes renowned scholar Shri Shrichand Surana as associate editor, Shri Surendra Bothara and Sushravak Shri Raj Kumar Jain, as English translators.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

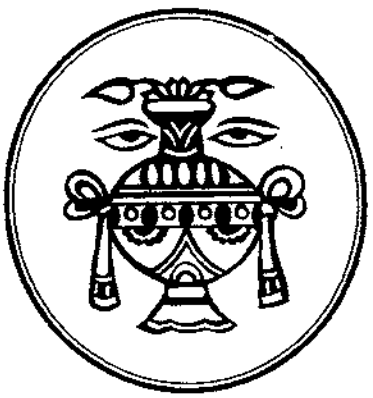

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

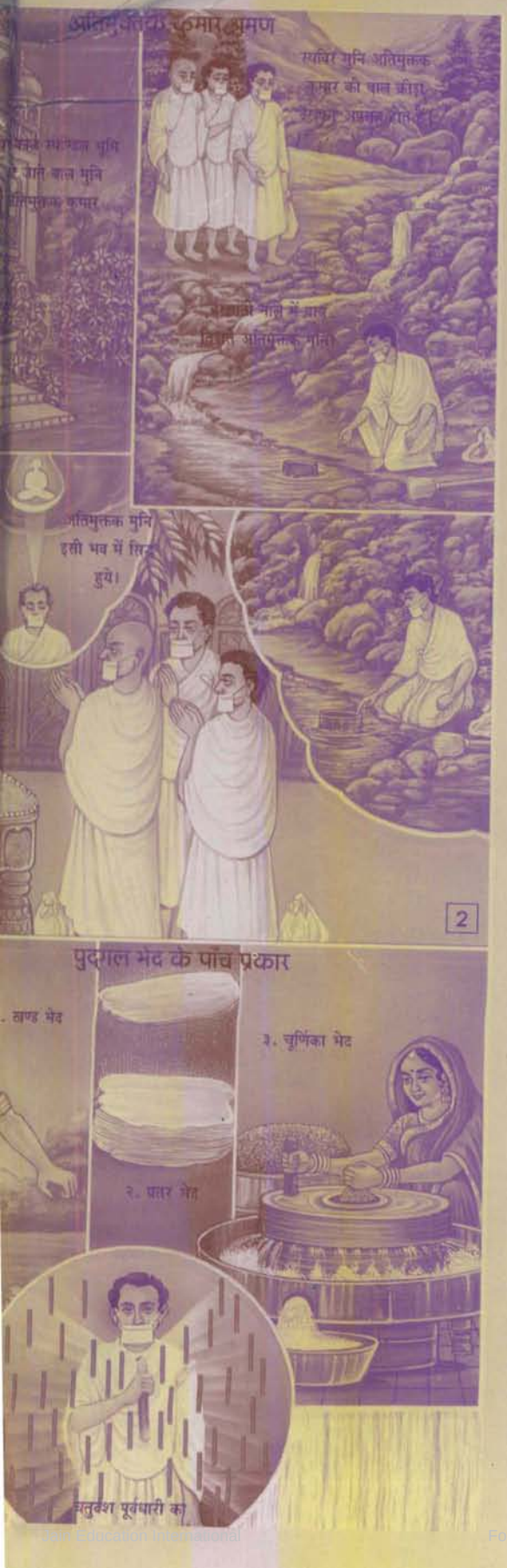

सचित्र श्री भगवती सूत्र

भाग-२

प्रवर्त्तक श्री अमर मु

प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

प्रस्तुत सूत्र के सम्पादक श्री अमर मुनि जी, श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन श्रमणसंघ के एक तेजस्वी संत हैं।

जिनवाणी के परम उपासक गुरुभक्त श्री अमर मुनि जी का जन्म वि. सं. १९९३ भादवा सुदि ५ (सन् १९३६), क्वेटा (बलूचिस्तान) के मल्होत्रा परिवार में हुआ।

११ वर्ष की लघुवय में आप जैनागम रत्नाकर आचार्यसम्राट् श्री आत्माराम जी महाराज की चरण-शरण में आये और आचार्यदेव ने अपने प्रिय शिष्यानुशिष्य भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी महाराज को इस रत्न को तराशने/सँवारने का दायित्व सौंपा। गुरुदेव श्री भण्डारी जी महाराज ने अमर को सचमुच अमरता के पथ पर बढ़ा दिया। आपने संस्कृत-प्राकृत-आगम-व्याकरण-साहित्य आदि का अध्ययन करके एक ओजस्वी प्रवचनकार, तेजस्वी धर्म-प्रचारक तथा जैन आगम साहित्य के अध्येता और व्याख्याता के रूप में जैन समाज में प्रसिद्धि प्राप्त की।

आपश्री ने भगवती सूत्र (४ भाग), प्रश्नव्याकरण सूत्र (२ भाग), सूत्रकृतांग सूत्र (२ भाग) आदि आगमों की सुन्दर विस्तृत व्याख्याएँ की हैं।

Pravartak Shri Amar Muni

The editor-in-chief of this Sutra, is a brilliant ascetic affliated with Shri Vardhaman Sthanakvasi Jain Shraman Sangh.

A great worshiper of the tenets of Jina and a devotee of his Guru, Shri Amar Muni Ji was born in a Malhotra family of Queta (Baluchistan) on Bhadva Sudi 5th in the year 1993 V.

He took refuge with Jainagam Ratnakar Acharya Samrat Shri Atmaram Ji M. at an immature age of eleven years. Acharya Samrat entrusted his dear grand-disciple, Bhandari Shri Padmachandra Ji M. with the responsibility of cutting and polishing this raw gem. Gurudev Shri Bhandari Ji M. indeed, put Amar (immortal) on the path of immortality. He studied Sanskrit, Prakrit, Agams, Grammar and Literature to gain fame in the Jain society as an eloquent orator, an effective religions pr and a scholar and interprete am literature.

He nice and detailed com gavati Sutra (in four pa aran Sutra (in two Sutra (in two parts)

Jain Education International For Private & Personal Use www.jainelibrary.org

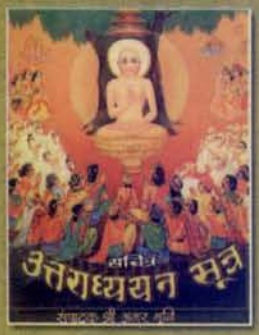

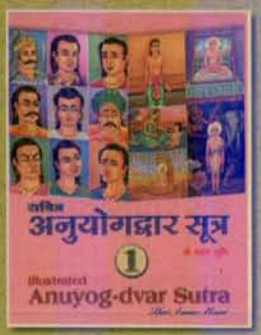

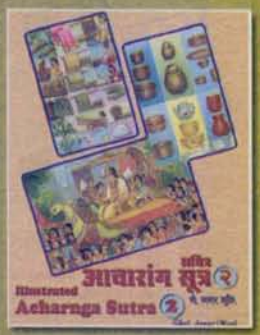

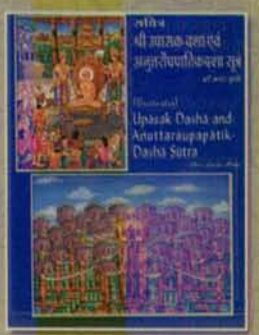

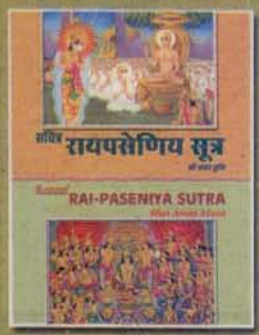

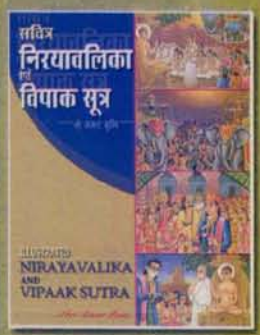

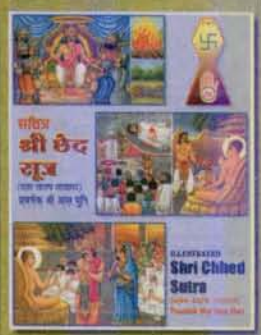

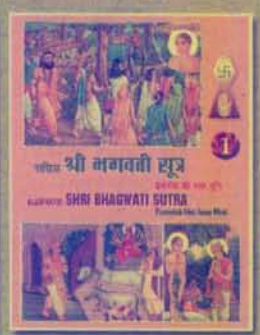

Published by :
Padma Prakashan
Padma Dham, Narela Mandi, Delhi - 110 040
website : /http/jainvision.com
email : padamparkashan@gmail.com

Distributors
Shree Diwakar Prakashan
A-7, Awagarh House, M.G. Road, Agra - 282 002
Phone : 0562-2851165, M- 09319203291

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org